चौखम्बा संस्कृत सीरीज १२९

श्रीव्यासमहर्षिप्रोक्तं

# लिङ्ग महापुराणम्

परिचय, विषय-सूची, संस्कृत मूल, हिन्दी अनुवाद, कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ, श्लोकानुक्रमणी एवं विषयानुक्रमणिका सहित

अनुवादक एवं सम्पादक

पुरस्कृत लेखक

पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र शास्त्री

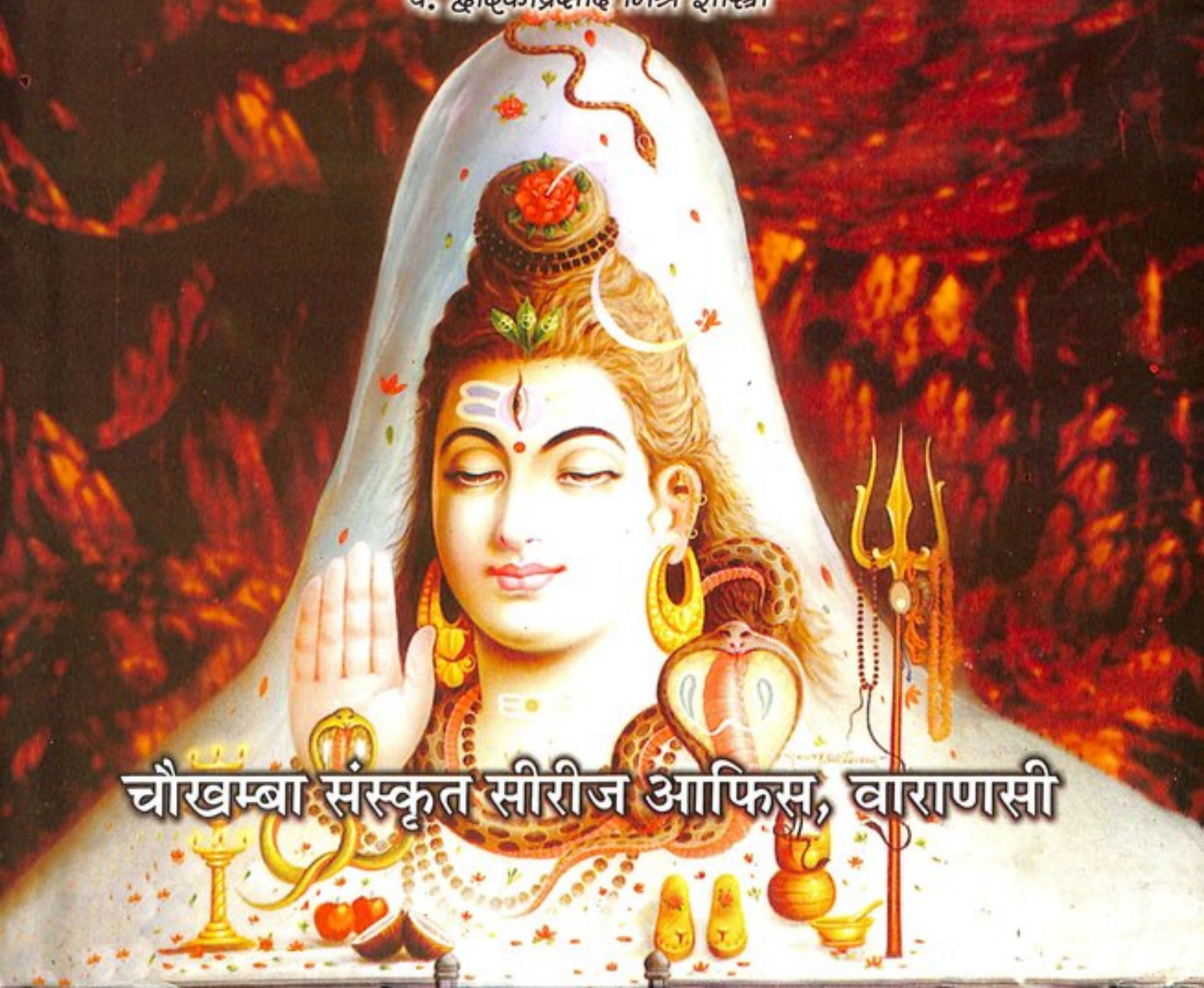

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

118D/H० ए.०9
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान
चन्द्र कान्त
सह निदेशक
2-5-09

चौखम्बा संस्कृत सीरीज
१२९
****

श्रीव्यासमहर्षिप्रोक्तं

# लिङ्ग महापुराणम्

परिचय, विषय-सूची, संस्कृत मूल, हिन्दी अनुवाद, कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ, श्लोकानुक्रमणी एवं विषयानुक्रमणिका सहित

अनुवादक एवं सम्पादक
पुरस्कृत लेखक
**पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र शास्त्री**
पूर्व संग्रहाध्यक्ष
हिन्दी संग्रहालय
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
पूर्व अनुवादक
पुराण विभाग
मानद पुस्तकालय अधिकारी
अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् पुस्तकालय, लखनऊ

Forwarded Free of Cost with the compliments of Rashtriya Sanskrit Sansthan, New Delhi

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

**प्रकाशक** : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
**मुद्रक** : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
**संस्करण** : प्रथम, वि०सं० २०६५, सन् २००८

**ISBN** : 978-81-7080-288-1

**© चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस**

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : (आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice@satyam.net.in

*अपरं च प्राप्तिस्थानम्*
**चौखम्बा कृष्णदास अकादमी**
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३५०२०

❑ **एक सौ तीसरा अध्याय** ५९०

*पार्वती के विवाह का वर्णन*

बहुत धूमधाम से सम्पादित उमा महेश्वर के विवाह का विस्तार से वर्णन तथा विवाह करके शिव का काशी में निवास और उस स्थान के माहात्म्य का वर्णन।

❑ **एक सौ चौथा अध्याय** ५९७

*देव की स्तुति*

गणेश की उत्पत्ति, काम और देवों द्वारा कृत परम शक्तिदायक शिवस्तव राज का वर्णन।

❑ **एक सौ पाँचवाँ अध्याय** ६००

*विनायक का जन्म*

गजानन विघ्नेश का शिव के शरीर से उद्भव तथा शिव से विघ्नेश्वर गणेश को वर प्राप्ति।

❑ **एक सौ छठवाँ अध्याय** ६०३

*शिव ताण्डव कथन*

दारुक असुर के विनाश के लिये देवों द्वारा प्रार्थित शिव के शरीर से काशी के क्षेत्रपाल की उत्पत्ति तथा शिव के ताण्डव से अभिन्न नृत्य प्रसंग का वर्णन।

❑ **एक सौ सातवाँ अध्याय** ६०६

*उपमन्यु चरित*

दूध के लिये माता के कहने से हिमवान पर तप करने वाले द्विज कुमार उपमन्यु की परीक्षा के लिये शिव का इन्द्र रूप धर आना, इन्द्र के मुख से शिव की निन्दा सुनकर अथर्व अस्त्र से शिव निन्दक का वध करने के लिये उद्यत मुनि कुमार को शिव का दर्शन और उपमन्यु को शिव से वर प्राप्ति का कथन।

❑ **एक सौ आठवाँ अध्याय** ६१२

*पाशुपत व्रत माहात्म्य*

वसुदेव के पुत्र श्री कृष्ण का उपमन्यु से दीक्षा ग्रहण करना तथा पाशुपत ज्ञान आदि का वर्णन।

● **लिंगमहापुराण ( उत्तर भाग )** ६१४-८३७

❑ **पहिला अध्याय** ६१५

*कौशिक वृत्त कथन*

सांब प्रिय विष्णु के गान से पर प्रीति कथन तथा भगवत के गुरुगान में रत कौशिक के इतिहास का वर्णन।

❑ **दूसरा अध्याय** ६२२

*विष्णु माहात्म्य*

नारद द्वारा संगीत विद्या की प्राप्ति, नारद का तुम्बुरु के साथ भगवत्कृत समता का वर्णन, भगवत्गुण के माहात्म्य का वर्णन।

❑ **तीसरा अध्याय** ६२३

***वैष्णव गीत कथन***

श्रीकृष्ण की कृपा से बहुत प्रयास से गान बन्धु, सत्या और जाम्बवती आदि से बहुत काल में नारद को गान प्राप्ति का वर्णन।

❑ **चौथा अध्याय** ६३३

***विष्णु भक्त कथन***

वैष्णव लक्षण, वैष्णव माहात्म्य, वैष्णवों से रुद्र भक्तों की श्रेष्ठता का वर्णन।

❑ **पाँचवाँ अध्याय** ६३५

***श्रीमती की कथा***

परम अद्भुत अम्बरीष के चरित में विष्णु की माया के प्रदर्शन से रामावतार के ग्रहण के कारण का कथन।

❑ **छठवाँ अध्याय** ६४८

***अलक्ष्मी का कथानक***

विष के बाद समुद्र से अलक्ष्मी की उत्पत्ति, अलक्ष्मी के वास योग्य स्थान का कथन तथा उसके आवास स्थान का कथन।

❑ **सातवाँ अध्याय** ६५६

***द्वादशाक्षर मन्त्र की प्रशंसा***

विष्णु के अष्टाक्षर, द्वादशाक्षर मन्त्र के जप का माहात्म्य वर्णन के प्रसंग में ऐतरेय द्विज के इतिहास का कथन।

❑ **आठवाँ अध्याय** ६५९

***अष्टाक्षर मन्त्र***

विष्णु मन्त्र की अपेक्षा शिव के मन्त्र की श्रेष्ठता का वर्णन तथा शिव मन्त्र के जप से धुंधमूक ब्राह्मण के पुत्र को गाणपत्य पद के लाभ का कथन।

❑ **नौवाँ अध्याय** ६६२

***पाशुपत संस्कार***

शिव के पशुपतित्व का कथन, तथा पशुपाश मोक्ष का विवरण।

❑ **दसवाँ अध्याय** ६६७

***उमापति का माहात्म्य***

शिव का प्रकृति, पुरुष अहंकार आदि से बंधन के अभाव का वर्णन तथा शिव की आज्ञा से ही सर्ग (सृष्टि) आदि सब कार्यों का प्रवर्त्तन।

❑ **ग्यारहवाँ अध्याय** ६७१

***शिव की विभूतियों का वर्णन***

उमा महेश्वर की श्रेष्ठ विभूतियों का वर्णन। भक्तिवर्द्धक शिव लिंग की पूजा के माहात्म्य का वर्णन।

❑ **बारहवाँ अध्याय** ६७५

***शिव की आठ मूर्त्तियाँ***

शिव की अलग-अलग मूर्त्ति की संज्ञा (नाम) का वर्णन। उनकी स्त्रियों और पुरुषों का वर्णन।

❑ **तेरहवाँ अध्याय** ६७९

***शिव की अष्टमूर्त्ति की महिमा***

शिव की अलग-अलग मूर्त्ति की संज्ञा (नाम) का वर्णन।

❑ **चौदहवाँ अध्याय** ६८२

***पंच ब्रह्म कथन***

पंच ब्रह्मात्मक शिव के सर्वतत्त्वात्मक स्वरूप का वर्णन।

❑ **पंद्रहवाँ अध्याय** ६८५

***शिव का माहात्म्य***

ऋषियों द्वारा बहुधा कहे गये उन-उन संज्ञाओं का निरूपण।

❑ **सोलहवाँ अध्याय** ६८८

***शिव के रूप***

सर्व रूप शिव के बहुत मुनियों द्वारा अलग-अलग कहे गये नामों और रूपों का वर्णन।

❑ **सत्तरहवाँ अध्याय** ६९१

***शिव की महत्ता***

सत्त्व गुण रुद्र के विग्रह से विश्व के उद्भव का वर्णन, तथा रुद्र कृत देवों को उपदेश (शिक्षण)।

❑ **अट्ठारहवाँ अध्याय** ६९४

***पवित्र पाशुपत व्रत***

ब्रह्मा आदि देवों द्वारा कृत महेश की स्तुति का वर्णन, देवताओं द्वारा महेश को प्रसन्न करने वाले पाशुपत व्रत के करने से शिव की कृपा के लाभ का वर्णन।

❑ **उन्नीसवाँ अध्याय** ७००

***शिव की पूजा विधि***

मुनियों द्वारा पूछे गये महेश द्वारा रचित रवि मण्डल में स्थित उमा सहित मण्डल देवता से आवृत शिव की पूजा विधि का वर्णन।

❑ **बीसवाँ अध्याय** ७०५

***शिव पूजा के साधन***

मण्डल में स्थित उमा महेश्वर पूजा में शिव द्वारा प्रोक्त अधिकारी का निरूपण, आग्नेय विधान से शिव दीक्षा का निरूपण।

❑ **इक्कीसवाँ अध्याय** ७१०
*दीक्षा विधि*
तंत्रोक्त दीक्षा विधि का वर्णन, शुभ नियम कथनपूर्वक शिव की पूजा के फल का निरूपण।

❑ **बाईसवाँ अध्याय** ७१७
*तत्त्वों का समर्पण*
सौर स्नान विधि का निरूपण, वाष्कल आदि मुनि द्वारा निरूपित भास्कर की अर्चन विधि का निरूपण।

❑ **तेईसवाँ अध्याय** ७२५
*शिव की पूजा विधि*
अंग मंत्र मूर्ति विद्या सहित मानस श्री शंकर की अर्चन विधि का निरूपण।

❑ **चौबीसवाँ अध्याय** ७२९
*शिव की पूजा की विधि*
तंत्रोक्त विधि से शंकर की अर्चना का निरूपण।

❑ **पच्चीसवाँ अध्याय** ७३६
*शिव से सम्बन्धित पवित्र अग्निहोत्र*
शिव प्रोक्त परम शोभन विविध अग्नि कार्य का विस्तार से प्रतिपादन।

❑ **छब्बीसवाँ अध्याय** ७४६
*अघोर पूजा की विधि*
शिव के लिंग में ध्यान आदि सहित अघोर के अर्चन के फल का निरूपण।

❑ **सत्ताईसवाँ अध्याय** ७४९
*अभिषेक विधि*
स्वयंभुव मनु के तप से सन्तुष्ट शिव द्वारा प्रतिपादित रूप सहस्त्र परिवार देवता युक्त श्री जयअभिषेक का विस्तार से प्रतिपादन।

❑ **अट्ठाईसवाँ अध्याय** ७७०
*तुला पुरुषदान विधि*
स्वयंभुव नामक मनु को सनत्कुमार प्रोक्त राजाओं का धर्म, अर्थ, काम और मोक्षदायक तुला पुरुष दान विधि का निरूपण।

❑ **उन्तीसवाँ अध्याय** ७७९
*हिरण्यगर्भ की दान विधि*
महादानों मे दूसरा हिरण्यगर्भ नामक दान-जो कि शिव को प्रसन्नता दायक है—उसके दान का निरूपण और उसके फल का कथन।

❑ **तीसवाँ अध्याय** ७८१
*तिल पर्वत का दान*
महादानों में तीसरे तिल पर्वत दान विधि का निरूपण।

❑ **इकत्तीसवाँ अध्याय** ७८३
*सूक्ष्म पर्वत की दान विधि*
स्वल्प द्रव्य से अन्य सूक्ष्म तिल पर्वत दान विधि का निरूपण।

❑ **बत्तीसवाँ अध्याय** ७८४
*सुवर्णमेदिनी का दान*
महादानों के मध्य चौथा सुवर्णमेदिनी दान विधि का निरूपण।

❑ **तैतीसवाँ अध्याय** ७८५
*कल्पपादप दान विधि*
महादानों में पाँचवाँ कल्पपादप की दान विधि का निरूपण।

❑ **चौतीसवाँ अध्याय** ७८६
*गणेशेश दान विधि*
महादानों में छठवें पुण्यदायक गणेशेश की दान विधि का निरूपण।

❑ **पैंतीसवाँ अध्याय** ७८७
*सुवर्णधेनु दान विधि*
महादानों में सातवें सुवर्ण धेनु दान की विधि का निरूपण।

❑ **छत्तीसवाँ अध्याय** ७८९
*लक्ष्मीदान विधि*
महादानों में आठवें महान ऐश्वर्यदायक लक्ष्मी दान की विधि का निरूपण।

❑ **सैतीसवाँ अध्याय** ७९०
*तिलधेनु दान विधि*
महादानों में नवें तिलधेनु की विधि का संक्षेप में निरूपण।

❑ **अड़तीसवाँ अध्याय** ७९२
*सहस्त्र धेनु दान विधि*
महादानों में दसवें परम शोभन गो सहस्त्रदान की विधि का संक्षेप में निरूपण।

❑ **उन्तालीसवाँ अध्याय** ७९३
*स्वर्ण अश्व दान विधि*
महादानों में ग्यारहवाँ विजय प्रदायक हिरण्य अश्व दान का निरूपण।

❑ **चालीसवाँ अध्याय** ७९४
*कन्या दान विधि*
महादानों में अति उत्तम बारहवाँ कन्यादान की विधि का निरूपण।

❑ **इकतालीसवाँ अध्याय** ७९५
*स्वर्ण वृषभ दान*
महादानों में तेरहवाँ हिरण्यवृषभदान विधि का निरूपण।

❑ **बयालीसवाँ अध्याय** ७९७

*गजदान विधि*

महादानों में चौदहवाँ गजदान विधि का निरूपण।

❑ **तिरालीसवाँ अध्याय** ७९८

*आठ लोकपालों की दान विधि*

महादानों में पन्द्रहवाँ आठ लोकपालों की दान विधि का निरूपण।

❑ **चौआलीसवाँ अध्याय** ८००

*विष्णु दान विधि*

महादानों में सोलहवें ब्रह्मा, विष्णु महेश की मूर्ति की दान विधि का निरूपण।

❑ **पैंतालीसवाँ अध्याय** ८०१

*जीवत्श्राद्ध संस्कार की विधि*

ब्रह्मा द्वारा मनु आदि के लिये प्रोक्त जीवत्श्राद्ध की शुभ विधि का निरूपण।

❑ **छियालीसवाँ अध्याय** ८०७

*लिंग का स्थापन*

शौनक आदि का रुद्र आदि देवता के स्थापन की विधि के विषय में प्रश्न तथा सूत जी द्वारा उसकी प्रशंसापूर्वक लिंग की श्रेष्ठता का वर्णन।

❑ **सैतालीसवाँ अध्याय** ८०९

*लिंग का संस्थापन*

लिंग संस्थापन विधि और उसके फल का संक्षिप्त वर्णन।

❑ **अड़तालीसवाँ अध्याय** ८१४

*गायत्री के विभिन्न प्रकार*

याग कुण्ड के विन्यासपूर्वक सब देवताओं की स्थापन विधि का निरूपण, शिव आदि देवताओं के गायत्री मन्त्रों का निरूपण तथा संक्षेप में प्रासाद अर्चन निरूपण।

❑ **उन्चासवाँ अध्याय** ८१८

*अघोरेश की प्रतिष्ठा (स्थापना)*

अघोर रूप शिव की प्रतिष्ठा जप और होम के विधान का निरूपण।

❑ **पचासवाँ अध्याय** ८२०

*अघोर मन्त्र की विशेषता*

शुक्राचार्य प्रणीत अघोरेश आराधन से निग्रह विधि का स्पष्ट प्रतिपादन।

❑ **इक्यावनवाँ अध्याय** ८२५

*वज्रवाहनिका विद्या (वज्रेश्वरी विद्या)*

ऋषि के प्रश्न के अनुरोध से शुक्राचार्य द्वारा प्रणीत इतिहास सहित वज्रवाहनिका नाम विद्या का निरूपण।

❑ **बावनवाँ अध्याय** ८२७

***वज्रवाहनिका विद्या का विनियोग***

गायत्री मन्त्र पूर्विका वज्रेश्वरी विद्या का विधान सहित विनियोग का निरूपण।

❑ **तिरपनवाँ अध्याय** ८२९

***मृत्युंजय अनुष्ठान विधि***

रुद्राध्याय से घृत आदि द्रव्यों द्वारा होम से कालमृत्यु महामृत्यु के प्रतीकार का निरूपण तथा मृत्युंजय निरूपण।

❑ **चौवनवाँ अध्याय** ८३०

***त्रिअंबक मन्त्र से पूजा***

पशुपाश मोक्षण तथा मृत्युहर त्रिअंबक महा मन्त्र की विधि का निरूपण।

❑ **पचपनवाँ अध्याय** ८३३

***शिव के ध्यान की विधि***

योगमार्ग से त्रियंबक के ध्यान के प्रकार का निरूपण, लिंगपुराण सुनने के फल का निरूपण।

• **कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ** ८३९

• **श्रीलिङ्गमहापुराण के श्लोकों की अनुक्रमणी** ८४५

(अनुक्रमणी की उपयोग की विधि)

• **विषयानुक्रमणिका** ९३१

(श्रीलिङ्गमहापुराण में वर्णित विषयों की अनुक्रमणिका पृष्ठ संख्या निर्देश सहित)


---

# श्रीलिङ्गमहापुराणम्

## उत्तरभागः

श्री गणेशाय नमः।

प्रथमोऽध्यायः

## कौशिकवृत्तकथनम्

ऋषय ऊचुः

कृष्णस्तुष्यति केनेह सर्वदेवेश्वरेश्वरः। वक्तुमर्हसि चास्माकं सूत सर्वार्थविद्भवान्॥१॥

सूत उवाच

पुरा पृष्टो महातेजा मार्कंडेयो महामुनिः। अंबरीषेण विप्रेंद्रास्तद्वदामि यथातथम्॥२॥

अंबरीष उवाच

मुने! समस्तधर्माणां पारगस्त्वं महामते। मार्कंडेय पुराणोऽसि पुराणार्थविशारदः॥३॥

---

पहिला अध्याय

## कौशिकवृत्त कथन

**ऋषिगण बोले**

सूत जी! देवताओं के देव श्रीकृष्ण कैसे सन्तुष्ट होते हैं? यह आप हम सब को बतावें क्योंकि आप सब विषयों के अर्थ के ज्ञाता हैं।।१।।

**सूत बोले**

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! अम्बरीष ने महान तेजस्वी महामुनि मार्कण्डेय से यही प्रश्न पूछा था। उसका जो उत्तर मार्कण्डेय जी ने दिया वह मैं ज्यों-का-त्यों तुम सब से कहता हूँ।।२।।

**अम्बरीष बोले**

हे महर्षि मार्कण्डेय! आप प्राचीन ऋषि हैं। आप पुराणों के अर्थ के ज्ञाता हैं।।३।। हे महाबुद्धिमान सुव्रत! पवित्र दिव्य धर्मों में कौन-सा धर्म भक्तों के लिए सबसे उत्तम है?

नारायणनां दिव्यानां धर्माणां श्रेष्ठमुत्तमम्। तत्किं ब्रूहि महाप्राज्ञ भक्तानामिह सुव्रत!॥४॥

सूत उवाच

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा समुत्थाय कृतांजलिः। स्मरन्नारायणं देवं कृष्णमच्युतमव्ययम्॥५॥

मार्कंडेय उवाच

शृणु भूप यथान्यायं पुण्यं नारायणात्मकम्। स्मरणं पूजनं चैव प्रणामो भक्तिपूर्वकम्॥६॥
प्रत्येकमश्वमेधस्य यज्ञस्य सममुच्यते। य एकः पुरुषः श्रेष्ठः परमात्मा जनार्दनः॥७॥
यस्माद्ब्रह्मा ततः सर्वं समाश्रित्यैव मुच्यते। धर्ममेकं प्रवक्ष्यामि यद्दृष्टं विदितं मया॥८॥
पुरा त्रेतायुगे कश्चित् कौशिको नाम वै द्विजः। वासुदेवपरो नित्यं सामगानरतः सदा॥९॥
भोजनासनशय्यासु सदा तद्गतमानसः। उदारचरितं विष्णोर्गायमानः पुनः पुनः॥१०॥
विष्णोः स्थलं समासाद्य हरेः क्षेत्रमनुत्तमम्। अगायत हरिं तत्र तालवर्णलयान्वितम्॥११॥
मूर्च्छनास्वरयोगेन श्रुतिभेदेन भेदितम्। भक्तियोगं समापन्नो भिक्षामात्रं हि तत्र वै॥१२॥
तत्रैनं गायमानं च दृष्ट्वा कश्चिद्द्विजस्तदा। पद्माख्य इति विख्यातस्तस्मै चान्नं ददौ तदा॥१३॥
सकुटुंबो महातेजा ह्युष्णमन्नं हि तत्र वै। कौशिको हि तदा हृष्टो गायन्नास्ते हरिं प्रभुम्॥१४॥
शृण्वन्नास्ते स पद्माख्यः काले काले विनिर्गतः। कालयोगेन संप्राप्ताः शिष्या वै कौशिकस्य च॥१५॥
सप्त राजन्यवैश्यानां विप्राणां कुलसंभवाः। ज्ञानविद्याधिकाः शुद्धा वासुदेवपरायणाः॥१६॥

---

## सूत बोले

उनकी यह बात सुनकर मार्कण्डेय ऋषि उठकर खड़े हो गये। उन्होंने हाथ जोड़कर अच्युत नारायण श्री कृष्ण का स्मरण कहते हुए कहा।।४-५।।

## मार्कण्डेय बोले

हे राजन्! भक्तिपूर्वक नारायण का स्मरण, भजन और प्रशंसा करना पुण्यात्मक है। यह प्रत्येक अश्वमेध यज्ञ के समान फलदायक है। श्री कृष्ण जी परमात्मा पुरुषोत्तम हैं। उन्होंने ही ब्रह्मा और सब प्राणियों को उत्पन्न किया है। एक ही धर्म को—जो मैंने देखा और जाना है—वह मैं तुम सब से कहता हूँ।।६-८।। प्राचीन काल में कौशिक नाम का एक श्रेष्ठ ब्राह्मण था। वह सामवेद का ज्ञाता था और श्रीकृष्ण का भक्त था। वह उठते-बैठते, खाते-पीते और विस्तर पर लेटे हुए भी नारायण का नाम जपता रहता था। वह नारायण श्रीकृष्ण के उदार चरित्र को बार-बार जपता था। विष्णु के क्षेत्र में जाकर ताल, वर्ण, लय, मूर्छना एवं स्वर के भेदों के योग से भक्तिपूर्वक भगवान का भजन गाता था। वह भिक्षा माँगकर अपना गुज़ारा करता था।।९-१२।। उसको इस प्रकार गाते हुये देख पद्माक्ष नामक एक व्यक्ति ने उसको भोजन दिया। भोजन करके प्रसन्न आत्मा कौशिक भगवान विष्णु के भजन गाता रहा।।१३-१४।। पद्माक्ष भी उसको सुनता रहता था। कभी-कभी वह घर से बाहर जाकर उसके भजन सुना करता था। कुछ काल बीतने पर कौशिक के सात शिष्य वहाँ आये।।१५-१६।। वे ब्राह्मणों, राजाओं

तेषामपितथान्नाद्यं पद्माक्षः प्रददौ स्वयम्। शिष्यैश्च सहितो नित्यं कौशिका हृष्टमानसः॥१७॥
विष्णुस्थले हरिं तत्र आस्ते गायन्यथाविधि। तत्रैव मालवो नाम वैश्यो विष्णुपरायणः॥१८॥
दीपमालां हरेर्नित्यं करोति प्रीतिमानसः। मालवी नाम भार्या च तस्य नित्यं पतिव्रता॥१९॥
गोमयेन समालिप्य हरेः क्षेत्रं समंततः। भर्त्रा सहास्ते सुप्रीतो शृण्वती गानमुत्तमम्॥२०॥
कुशस्थलात्समापन्ना ब्राह्मणाः शंसितव्रताः। पंचाशद्वै समापन्ना हरेर्गानार्थमुत्तमाः॥२१॥
साधयंतो हि कार्याणि कौशिकस्य महात्मनः। ज्ञानविद्यार्थतत्त्वज्ञाः शृण्वंतो ह्यवसंस्तु ते॥२२॥
ख्यातमासीत्तदा तस्य गानं वै कौशिकस्य तत्। श्रुत्वा राजा समभ्येत्य कलिंगो वाक्यमब्रवीत्॥२३॥
कौशिकाद्य गणैः सार्धं गायस्वेह च मां पुनः। शृणुध्वं च तथा यूयं कुशस्थलजना अपि॥२४॥
तच्छ्रुत्वा कौशिकः प्राह राजानं सांत्वया गिरा। न जिह्वा मे महाराजन् वाणी च मम सर्वदा॥२५॥
हरेरन्यमपींद्रं वा स्तौति नैव च वक्ष्यति। एवमुक्ते तु तच्छिष्यो वासिष्ठो गौतमो हरिः॥२६॥
सारस्वतस्तथा चित्रश्चित्रमाल्यस्तथा शिशुः। ऊचुस्ते पार्थिवं तद्वद्यथा प्राह च कौशिकः॥२७॥
श्रावकास्ते तथा प्रोचुः पार्थिवं विष्णुतत्पराः। श्रोत्राणीमानि शृण्वंति हरेरन्यं न पार्थिव॥२८॥
गानकीर्त्तिं वयं तस्य शृणुमोन्यां न च स्तुतिम्। तच्छ्रुत्वा पार्थिवो रुष्टो गायतामिति चाब्रवीत्॥२९॥
स्वभृत्यान्ब्राह्मणा ह्येते कीर्तिं शृण्वंति मे यथा। न शृण्वंति कथं तस्मात् गायमाने समंततः॥३०॥

---

और वैश्यों के परिवार के थे। वे सब शुद्ध और गानविद्या में दक्ष और भगवान के भक्त थे। पद्माक्ष ने उनको भी भोजन दिया। अपने शिष्यों सहित कौशिक भी बहुत प्रसन्न थे। विष्णु के एक पवित्र क्षेत्र में कौशिक ने विष्णु की प्रशंसा में भजन गाये और वहीं ठहर गये। वहाँ एक मालव नामक वैश्य था। वह विष्णु भक्त था। प्रसन्नतापूर्वक वह दीपों की माला उनको निरन्तर भेंट करता था। आरती करवाता था। उसकी पतिव्रता पत्नी मालवी उस विष्णु क्षेत्र को गाय के गोबर से लीपकर पति के साथ भजन सुना करती थी।।१७-२०।। वहाँ पर कुशस्थल नामक स्थान से पचास पवित्र धार्मिक ब्राह्मण विष्णु की प्रशंसा के भजनों को सुनने के लिए आये।।२१।। वे बुद्धिमान और सुशिक्षित थे। वे ज्ञानविद्या के अर्थ के ज्ञाता थे। वे महात्मा कौशिक के मिशन के प्रशंसक और प्रचारक थे। वे वहीं आकर रहने लगे।।२२।। कौशिक के मधुर भजन की चारों ओर प्रसिद्धि हो गई। उसको सुनकर कलिंग नामक उस देश का राजा वहाँ आया।।२३।। उसने कहा, 'हे कौशिक! अपने शिष्यों के साथ तुम मेरी प्रशंसा में गीत गाओ। उसको कुशस्थल से आये लोग भी सुनें।' राजा की इस आज्ञा को सुनकर कौशिक ने शान्तिपूर्वक कहा 'हे महाराज!' मेरी जीभ और वाणी विष्णु के अतिरिक्त अन्य किसी की प्रशंसा यहाँ तक कि इन्द्र की भी प्रशंसा में नहीं गाती।' कौशिक के इस प्रकार कहने पर उनके शिष्य वाशिष्ठ, गौतम, हरि, सारस्वत और चित्र, चित्रमाल्य तथा शिशु ने भी वैसा ही कहा।।२४।। तथा कुशस्थल से आये हुए विष्णु के भक्तों ने भी उसी प्रकार राजा से कहा, "हे राजा! हम लोगों के कान विष्णु के अतिरिक्त किसी की प्रशंसा में कुछ नहीं सुनने की इच्छा करते हैं। हम उन्हीं की प्रशंसा के भजनों को सुनेंगे और किसी अन्य की स्तुति नहीं सुनेंगे।" इस बात को सुनकर राजा नाराज हो गया और अपने नौकरों से कहा, 'गाओ, जिससे ये ब्राह्मण मेरी कीर्ति को सुनें जबकि मेरी कीर्ति

एव मुक्तास्तदा भृत्या जगुः पार्थिवमुत्तमम्। निरुद्धमार्गा विप्रास्ते गाने वृत्ते तु दुःखिताः॥३१॥
काष्ठशंक्रुभिरन्योन्यं श्रोत्राणि विदधु र्द्विजाः। कौशिकाद्याश्च तां ज्ञात्वा मनोवृत्तिं नृपस्य वै॥३२॥
प्रसह्यस्मांस्तु गायेत स्वगानेसो नृपः स्थितः। इति विप्राःसुनियता जिह्वाग्रं चिच्छिदुः करैः॥३३॥
ततो राजा सुसंक्रुद्धः स्वदेशात्तान्न्यवासयत्। आदाय सर्वं वित्तं च ततस्ते जग्मुरुत्तराम्॥३४॥
दिशमासाद्य कालेन कालधर्मेण योजिताः। तानागतान्यमो दृष्ट्वा किं कर्तव्यमिति स्म ह॥३५॥
चेष्टितं तत्क्षणे राजन् ब्रह्मा प्राह सुराधिपान्। कौशिकादीन् द्विजानद्य वासयध्वं यथासुखम्॥३६॥
गानयोगेन ये नित्यं पूजयंति जनार्दनम्। तानानयत भद्रं वो यदि देवत्वमिच्छथ॥३७॥
इत्युक्ता लोकपालास्ते कौशिकेति पुनःपुनः। मालवेति तथा केचित् पद्माक्षेति तथा परे॥३८॥
क्रोशमानाः समभ्येत्य तानादाय विहायसा। ब्रह्मलोकं गताः शीघ्रं मुहूर्तेनैव ते सुराः॥३९॥
कौशिकादींस्ततो दृष्ट्वा ब्रह्मा लोकपितामहः। प्रत्युद्गम्य यथान्यायं स्वागतेनाभ्यपूजयत्॥४०॥
ततः कोलाहलमभूदतिगौरवमुल्बणम्। ब्रह्मणा चरितं दृष्ट्वा देवानां नृपसत्तम॥४१॥
हिरण्यगर्भो भगवांस्तान्निवार्य सुरोत्तमान्। कौशिकादीन्समादाय मुनीन् देवैः समावृतः॥४२॥

---

चारों ओर गायी जाती है। तो ये लोग उसको क्यों नहीं सुनेंगे'।।२५-३०।। यह आदेश सुनकर नौकरों ने राजा के विषय में उत्तम प्रशंसात्मक गीत गाये। राजा की स्तुति को न सुनते हुए कौशिक और अन्य ब्राह्मणों ने आपस में एक दूसरे के कानों में लकड़ी की छोटी खूँटी से कानों को बन्द कर दिया। "इस राजा ने यहाँ उपस्थित होकर अपने निजी प्रशंसा के गीतों को सुनने के लिए हमें बाध्य किया" ऐसा कहते हुए उन ब्राह्मणों ने अपनी जीभ के सिरों को अपने ही हाथों से काट दिया। तब उस दुष्ट राजा ने उस श्रेष्ठ ब्राह्मण को फटकार कर उसका सब धन आदि लेकर उसको राज्य से निकाल दिया। तब म्लेच्छ लोग भगवान की मूर्ति का हरण करके चले गये। उसके बाद राजा की मृत्यु हो गयी।।३१-३३।। क्रोधित राजा ने अपने राज्य से उन सबका धन अपहरण करके उन सबको अपने राज्य से निकाल दिया। तब वे लोग उत्तर को चले गये। उनको देखकर मृत्यु के देवता यम ने सोचा कि क्या करना चाहिए? उस समय ब्रह्मा ने देवताओं के स्वामियों से कहा, "कौशिक आदि ब्राह्मणों को सुखपूर्वक ठहरावो।।३४-३६।। सबका कल्याण हो। अगर तुम देवत्व चाहते हो तो उन कौशिक आदि को यहाँ ले आओ जो संगीत के द्वारा विष्णु की नित्य पूजा करते रहे"।।३७।। इस प्रकार की आज्ञा पाने पर दिग्पालों ने चिल्ला कर कहा। हे कौशिक! 'हे कौशिक! उनमें से कुछ ने चिल्लाकर कहा हे मालव! हे मालव! अन्यों ने चिल्लाकर कहा हे पद्माक्ष! हे पद्माक्ष! वे उनके पास पहुँचे और उसको पकड़ लिया तथा विमान मार्ग से ब्रह्मलोक को ले आये। वे लोग वहाँ एक मुहूर्त के भीतर पहुँच गये।।३८-३९।। कौशिक तथा अन्य लोगों को देखकर तीनों लोकों के पितामह ब्रह्मा ने उनका स्वागत किया और उनको सम्मानित किया।।४०।। हे श्रेष्ठ राजा! ब्रह्मा ने जो कुछ किया उसको देखकर देवता बहुत गम्भीर हो गये।।४१।। उनमें आपस में कोलाहल हुआ। उन श्रेष्ठ देवताओं को ब्रह्मा ने रोका और शान्त किया। कौशिक तथा अन्य ऋषियों को देवताओं के साथ विष्णुलोक ले गये। स्वामी नारायण ज्ञान के मार्ग के स्वामी श्वेत द्वीप निवासियों सिद्धों विष्णु-भक्तों से शुद्धता

विष्णुलोकं ययौ शीघ्रं वासुदेवपरायणः। तत्र नारायणो देवः श्वेतद्वीपनिवासिभिः॥४३॥
ज्ञानयोगेश्वरैः सिद्धैर्विष्णुभक्तैः समाहितैः। नारायणसमैर्दिव्यैश्चतुर्बाहुधरैः शुभैः॥४४॥
विष्णुचिह्नसमापन्नैर्दीप्यमानैरकल्मषैः । अष्टाशीतिसहस्रैश्च सेव्यमानो महाजनैः॥४५॥
अस्माभिर्नारदाद्यैश्च सनकाद्यैरकल्मषैः। भूतैर्नानाविधैश्चैव दिव्यस्त्रीभिः समंततः॥४६॥
सेव्यमानोथ मध्ये वै सहस्रद्वारसंवृते। सहस्रयोजनायामे दिव्ये मणिमये शुभे॥४७॥
विमाने विमले चित्रे भद्रपीठासने हरिः। लोककार्ये प्रसक्तानां दत्तदृष्टिश्च माधवः॥४८॥
तस्मिन्कालेऽथ भगवान् कौशिकाद्यैश्च संवृत्तः। आगम्य प्रणिपत्याग्रे तुष्टाव गरुडध्वजम्॥४९॥
ततो विलोक्य भगवान् हरिर्नारायणः प्रभुः। कौशिकेत्याह संप्रीत्या तान्सर्वांश्च यथाक्रमम्॥५०॥
जयघोषो महानासीन्महाश्चर्ये समागते। ब्रह्माणमाह विश्वात्मा शृणु ब्रह्मन् मयोदितम्॥५१॥
कौशिकस्य इमे विप्राः साध्यसाधनतत्पराः। हिताय संप्रवृत्ता वै कुशस्थलनिवासिनः॥५२॥
मत्कीर्तिश्रवणे युक्ता ज्ञानतत्त्वार्थकोविदाः। अनन्यदेवताभक्ताः साध्या देवा भवंत्विमे॥५३॥
मत्समीपे तथान्यत्र प्रवेशं देहि सर्वदा। एवमुक्त्वा पुनर्देवः कौशिकं प्राह माधवः॥५४॥
स्वशिष्यैस्त्वं महाप्राज्ञ दिग्बंधो भव मे सदा। गणाधिपत्यमापन्नो यत्राहं त्वं समास्व वै॥५५॥
मालवं मालवीं चैवं प्राह दामोदरो हरिः। मम लोके यथाकामं भार्यया सह मालव॥५६॥

---

और मानसिक शुद्धि के साथ सेवित थे। विष्णु के चार दिव्य भुजाएँ थी। वे नारायण से भी परे थे। वे विष्णु के चिह्नों से युक्त थे। वे दीप्तमान थे और पाप रहित थे। वह विष्णु अस्सी हजार बड़े लोगों द्वारा सेवित थे और हम जैसे लोगों और नारद सनक और अन्य शुद्ध पाप रहित आत्माओं से भी सेवित थे। अनेक प्रकार के प्राणियों और दिव्य स्त्रियों से चारों ओर से सेवित थे। वह एक उत्तम आसन पर एक विमान में बैठे थे। वह विमान लम्बाई में हजार योजन था। वह चमक रहा था। वह मणिमय था। उस विमान में हजार दरवाजे थे। भगवान विष्णु संसारिक कार्यों की ओर ध्यान दिये थे। उन्होंने कौशिक और अन्य लोगों से घिरे ब्रह्मा को देखा। उन्होंने गरुणध्वज विष्णु को प्रणाम करके उनकी स्तुति की। तब भगवान नारायण विष्णु ने कौशिक तथा उन सबको ध्यान से प्रेमपूर्वक देखा। कौशिक कहकर सबको क्रमशः प्रसन्नतापूर्वक सम्बोधित किया।।४२-५०।। जब यह आश्चर्यजनक घटना घटी वहाँ पर महान जय-जयकार घोष हुआ 'ब्रह्मा जो कुछ मैं कहता हूँ उसको सुनो। ये ब्राह्मण जो कुशस्थल के निवासी हैं। इनमें से हर एक कल्याण का अधिकारी है। ये लोग कौशिक द्वारा जो कुछ इष्ट या उसकी प्राप्ति में लगे हुए थे।।५१-५२।। ये ज्ञान के तत्त्व के अर्थ को जानने वाले अन्य देवताओं के नहीं, केवल मेरे भक्त और मेरी कीर्ति को सुनने में तल्लीन रहे हैं। ये सब लोग देवताओं और 'साध्य' नाम से प्रतिष्ठित हैं। मेरे पास इनको स्थान दो। मेरे पास प्रवेश की अनुमति इनको रहे तथा अन्य पवित्र स्थानों में भी इनको प्रवेश करने की अनुमति सदा रहे।' यह कहकर विष्णु भगवान ने कौशिक से कहा।।५३-५४।। 'हे महाबुद्धिमान कौशिक! अपने शिष्यों के साथ सब मेरे अनुचर रहो और हमारे मणों के अधिपति पद को प्राप्त करो। जहाँ मैं रहूँ वहीं तुम भी रहो'।।५५।। भगवान विष्णु ने मालव और मालवी से कहा 'हे मालव! अपनी

दिव्यरूपधरः श्रीमान् शृण्वन्गानमिहाधिपः। आस्व नित्यं यथाकामं यावल्लोका भवंति वै॥५७॥
पद्माक्षमाह भगवान् धनदो भव माधवः। धनानामीश्वरो भूत्वा यथाकालं हि मां पुनः॥५८॥
आगम्य दृष्ट्वा मां नित्यं कुरु राज्यं यथासुखम्। एवमुक्त्वा हरिर्विष्णुर्ब्रह्माणमिदमब्रवीत्॥५९॥
कौशिकस्यास्य गानेन योगनिद्रा च मे गता। विष्णुस्थले च मां स्तौति शिष्यैरेष समन्ततः॥६०॥
राज्ञा निरस्तः क्रूरेण कलिंगेन महीयसा। स जिह्वाच्छेदनं कृत्वा हरेरन्यं कथंचन॥६१॥
न स्तोष्यामीति नियतः प्राप्तोसौ मम लोकताम्। एते च विप्रा नियता मम भक्ता यशस्विनः॥६२॥
श्रोत्रच्छिद्रमथाहत्य शंकुभिर्वै परस्परम्। श्रोष्यामो नैव चान्यद्वै हरेः कीर्तिमिति स्म ह॥६३॥
एते विप्राश्च देवत्वं मम सान्निध्यमेव च। मालवो भार्यया सार्धं मत्क्षेत्रं परिमृज्य वै॥६४॥
दीपमालादिभिर्नित्यमभ्यर्च्य सततं हि माम्। गानं शृणोति नियतो मत्कीर्तिचरितान्वितम्॥६५॥
तेनासौ प्राप्तवाँल्लोकं मम ब्रह्म सनातनम्। पद्माक्षोसौ ददौ भोज्यं कौशिकस्य महात्मनः॥६६॥
धनेशत्वमवाप्तोसौ मम सान्निध्यमेव च। एवमुक्त्वा हरिस्तत्र समाजे लोकपूजितः॥६७॥
तस्मिन् क्षणे समापन्ना मधुराक्षरपेशलैः। विपंचीगुणतत्त्वज्ञैर्वाद्यविद्याविशारदैः॥६८॥
मंदं मंदस्मिता देवी विचित्राभरणान्विता। गायमाना समायाता लक्ष्मीर्विष्णुपरिग्रहा॥६९॥
वृता सहस्रकोटिभिरंगनाभिः समंततः। ततो गणाधिपा दृष्ट्वा भुशुंडीपरिघायुधाः॥७०॥

---

स्त्री के साथ मेरे लोक में इच्छानुसार जब तक यह जगत् रहे तब तक तुम रहो। दिव्य रूप धारण करो। यहाँ मेरी प्रशंसा में गाये गये भजनों को सुनते हुए रहो'।।५६-५७।। विष्णु भगवान ने पद्माक्ष से कहा, 'तुम धन को देने वाले होवो। धन के स्वामी होकर फिर उचित समय पर आकर मुझको देखो और सुखपूर्वक राज्य करो।' यह कहकर भगवान विष्णु ने ब्रह्मा से कहा।।५८-५९।। 'कौशिक के गान से मेरी योगनिद्रा चली गयी। यह अपनी शिष्य मण्डली के साथ विष्णुलोक में मेरी स्तुति करते रहें।।६०।। उन्होंने क्रूर राजा कलिंग ने राजधानी से निकाल दिया। उन्होंने उसकी जीभ को काट दिया। यह विष्णु से अन्य किसी की स्तुति न करूँगा यह संकल्प किया। अतः यह मेरे विष्णुलोक को प्राप्त हो। वे ब्राह्मण जो कि नियमित रूप से अभ्यास करते रहे। जो मेरे भक्त हैं और जिन्होंने अपने कानों के छिद्रों को आपस में शंकुओं से बन्द कर दिया था और कहा था कि विष्णु की कीर्ति के अतिरिक्त अन्य किसी की प्रशंसा नहीं सुनूँगा। ये सब ब्राह्मण देवत्व को और मेरे सानिध्य को प्राप्त करें। मालव ने अपनी स्त्री के साथ मेरे पवित्र केन्द्र को साफ करके दीपमाला आदि से नित्य मेरी पूजा करके और मेरे चरित्र की प्रशंसा को सुना था। इससे उसने मेरे लोक को प्राप्त किया। पद्माक्ष ने कौशिक को भोजन दिया था। इसलिए यह धन का स्वामी हो और मेरा सानिध्य प्राप्त करे और समाज में लोगों द्वारा पूजित हो'।।६१-६७।। उसी क्षण विष्णु की पत्नी रमा धीरे-धीरे मुस्कुराती हुई वहाँ आईं। वह विभिन्न प्रकार के विचित्र आभूषणों से विभूषित थीं। वहाँ संगीत विद्या में विशेषज्ञों के मधुर और आकर्षक शब्दों के उपयोग में दक्ष थे। वे लक्ष्मी की प्रशंसा में गाते थे। लक्ष्मी हजारों और करोड़ों नारियों से चारों ओर से घिरी थीं। उसके बाद उनको आया हुआ देखकर गणों के स्वामी जो पहाड़ों के समान थे और भुशुण्डी के समान गदाधारी थे और परिघों (एक प्रकार की गदा) को धारण किये हुए थे, लक्ष्मी को रास्ता देने के लिए ब्रह्मा और अन्य देवताओं तथा मुनियों को हटा रहे

ब्रह्मादींस्तर्जयंतस्ते मुनीन्देवान्समंततः। उत्सारयंतः संहृष्टा धिष्ठिताः पर्वतोपमाः॥७१॥
सर्वे वयं हि निर्याताः सार्धं वै ब्रह्मणा सुरैः। तस्मिन् क्षणे समाहूतस्तुंबरुर्मुनिसत्तमः॥७२॥
प्रविवेश समीपं वै देव्या देवस्य चैवहि। तत्रासीनो यथायोगं नानामूर्च्छासमन्वितम्॥७३॥
जगौ कलपदं हृष्टो विपंचीं चाभ्यवादयत्। नानारत्नसमायुक्तैर्दिव्यैराभरणोत्तमैः॥७४॥
दिव्यमाल्यैस्तथा शुभ्रैः पूजितो मुनिसत्तमः। निर्गतस्तुंबरुर्हृष्टो अन्ये च ऋषयः सुराः॥७५॥
दृष्ट्वा संपूजितं यांतं यथायोगमरिंदम। नारदोथ मुनिर्दृष्ट्वा तुंबरोः सत्क्रियां हरेः॥७६॥
शोकाविष्टेन मनसा संतप्तहृदयेक्षणः। चिंतामापेदिवांस्तत्र शोकमूर्च्छाकुलात्मक॥७७॥
केनाहं हि हरेर्यास्ये योगं देवीसमीपतः। अहो तुंबरुणा प्राप्तं धिङ्मां मूढं विचेतसम्॥७८॥
योहं हरेः सन्निकाशं भूतैर्निर्यातितः कथम्। जीवन्यास्यामि कुत्राहमहो तुंबरुणा कृतम्॥७९॥
इति संचिंतयन् विप्रस्तप आस्थितवान्मुनिः। दिव्यं वर्षसहस्रं तु निरुच्छ्वासमन्वितः॥८०॥
ध्यायन्विष्णुमथाध्यास्ते तुंबरोः सत्क्रियां स्मरन्। रोदमानो मुहुर्विद्वान् धिङ्मामिति च चिंतयन्॥८१॥
तत्र यत्कृतवान्विष्णुस्तच्छृणुष्व नराधिप॥८२॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे**
**कौशिकवृत्तकथनं नाम प्रथमोध्यायः॥१॥**

---

थे। वे अपने कर्त्तव्य पालन में प्रसिद्ध थे।।६८-६९।। हम सब मार्कण्डेय और अन्य लोग ब्रह्मा और देवताओं के साथ बाहर चले गये। उसी समय श्रेष्ठ तुंबरु नामक मुनि बुलाये गये। वह देवी लक्ष्मी और विष्णु के पास खड़े हो गये।।।७०-७२।। आराम से वहाँ बैठकर उन्होंने प्रसन्नता के साथ अनेक मूर्च्छाओं से युक्त वीणा पर सुन्दर भजन गाये तथा मुनि को दिव्य रत्न जड़ित आभूषणों और शानदार मालाओं से सम्मानित किया गया। वे तथा अन्य मुनि और देवगण बहुत प्रसन्न थे।।७३-७५।। हे शत्रुओं के नाशक राजा!, उच्च सम्मान प्राप्त करके तुंबरु के जाने के बाद विष्णु द्वारा तुंबरु को अतिथिवत् सम्मानित देखकर नारद दुःखी हो गये। उनके आँखों और हृदय पर शोक का प्रभाव पड़ा। शोक और मूर्छा से व्याकुल नारद चिन्ता में डूब गये। शोक की तीव्रता से वह सोचने लगे। देवी की उपस्थिति में विष्णु के पास कैसे पहुँचूँ। हाय! हाय! यह अवसर तो तुंबरु को प्राप्त हुआ। मुझको धिक्कार है। मुझ मूढ़ और चेतनारहित को धिक्कार है। विष्णु के गणों द्वारा उन्हीं के सामने मुझको बाहर कर दिया गया। मैं कहाँ जाऊँ। मैं कैसे जिन्दा रहूँ। ऐसा तुंबरु ने किया। ऐसा विचार करते हुए नारद मुनि ने एक हजार दिव्य वर्ष तपस्या की। यहाँ तक कि उन्होंने तप काल में श्वास तक को रोक लिया। तुंबरु की सत्कार क्रिया को स्मरण करते हुए 'मुझको धिक्कार है' ऐसा सोचते हुए, रोते हुए उन्होंने विष्णु का ध्यान किया। हे राजन्! उसके बाद विष्णु ने जो किया उसको सुनो।।७६-८२।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में कौशिकवृत्तकथन नामक**
**पहला अध्याय समाप्त॥१॥**

द्वितीयोऽध्यायः

# विष्णुमाहात्म्यम्

मार्कंडेय उवाच

ततो नारायणो देवस्तस्मै सर्वंप्रदाय वै। कालयोगेन विश्वात्मा समं चक्रेऽथ तुंबरोः॥१॥
नारदं मुनिशार्दूलमेवं वृत्तमभूत्पुरा। नारायणस्य गीतानां गानं श्रेष्ठं पुनः पुनः॥२॥
गानेनाराधितो विष्णुः सत्कीर्तिं ज्ञानवर्चसी। ददाति तुष्टिं स्थानं च यथाऽसौ कौशिकस्य वै॥३॥
पद्माक्षप्रभृतीनां च संसिद्धिं प्रददौ हरिः। तस्मात्त्वया महाराज विष्णुक्षेत्रे विशेषतः॥४॥
अर्चनं गाननृत्याद्यं वाद्योत्सवसमन्वितम्। कर्तव्यं विष्णुभक्तैर्हि पुरुषैरनिशं नृप॥५॥
श्रोतव्यं च सदा नित्यं श्रोतव्योसौहरिस्तथा। विष्णुक्षेत्रे तु यो विद्वान् कारयेद्भक्तिसंयुतः॥६॥
गाननृत्यादिकं चैव विष्ण्वाख्यानं कथां तथा। जातिस्मृतिं च मेधां च तथैवोपरमे स्मृतिम्॥७॥
प्राप्नोति विष्णुसायुज्यं सत्यमेतन्नृपाधिप। एतत्ते कथितं राजन् यन्मां त्वं परिपृच्छसि॥८॥
किं वदामि च ते भूयो वद धर्मभृतांवर॥९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे विष्णुमाहात्म्यं नाम द्वितीयोऽध्यायः॥२॥**

---

दूसरा अध्याय

# विष्णु माहात्म्य

## मार्कण्डेय बोले

इसके बाद विश्वात्मा महाकाल विष्णु ने नारद को सब-कुछ देकर तुंबरु के समान बना दिया।।१।। इस प्रकार नारद को मुनियों में श्रेष्ठ बना दिया। यह घटना पहिले हुई। नारद द्वारा गीतों का गान पुनः-पुनः श्रेष्ठ वस्तु हो गई।।२।। गान से आराधित भगवान विष्णु उत्तम कीर्ति, बुद्धि, ज्ञान, वर्चस्व, सन्तोष और स्थान देते हैं, जैसा कि कौशिक के साथ हुआ।।३।। विष्णु ने पद्माक्ष और अन्य लोगों को उत्तम सिद्धि दिया। इसलिए हे महाराज! आपको विशेष रूप से विष्णु के पवित्र क्षेत्र में गान, नृत्य और वाद्य यन्त्रों द्वारा संगीत और अन्य उत्सव पूजा करना चाहिए। हे राजन्! यह सदा आपको अकेले या विष्णु के भक्तों के साथ पूर्ण करना चाहिए।।४-५।। यह सदा सुनना चाहिए। विष्णु की सदा प्रशंसा की जानी चाहिए। विष्णु क्षेत्र में जो विद्वान भक्तिपूर्वक गान और नृत्य आदि तथा विष्णु के आख्यान कथा कराता है उसको पूर्व जन्म का ऐश्वर्य और मरण काल में जागरुकता प्राप्त होती है। मृत्यु के बाद वह विष्णु का सायुज्य प्राप्त करता है। हे राजन्! इसमें सन्देह नहीं।

हे राजन्! जो कुछ तुमने पूछा है वह मैंने तुमसे कह दिया। इससे अधिक अब मैं क्या कहूँ? हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ! तुमसे मैं क्या कहूँ? पवित्र कृत्यों को कौन प्राप्त करता है, यह मुझसे कहो।।६-९।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में विष्णुमाहात्म्य नामक दूसरा अध्याय समाप्त॥२॥**

## तृतीयोऽध्यायः

# वैष्णवगीतकथनम्

अम्बरीष उवाच

मार्कंडेय महाप्राज्ञ केन योगेन लब्धवान्। गानविद्यां महाभाग नारदो भगवान्मुनिः॥१॥
तुंबरोश्च समानत्वं कस्मिन्काल उपेयिवान्। एतदाचक्ष्य मे सर्वं सर्वज्ञोसि महामते॥२॥

मार्कंडेय उवाच

श्रुतो मयायमर्थो वै नारदाद्देवदर्शनात्। स्वयमाह महातेजा नारदोऽसौ महामतिः॥३॥
संतप्यमानो भगवान् दिव्यं वर्षसहस्त्रकम्। निरुच्छ्वासेन संयुक्तस्तुंबरोर्गौरवं स्मरन्॥४॥
तताप च महाघोरं तपोराशिस्तपः परम्। अथांतरिक्षे शुश्राव नारदोऽसौ महामुनिः॥५॥
वाणीं दिव्यां महाघोषामद्भुतामशरीरिणीम्। किमर्थं मुनिशार्दूल तपस्तपसि दुश्चरम्॥६॥
उलूकं पश्य गत्वा त्वं यदि गाने रता मतिः। मानसोत्तरशैले तु गानबंधुरिति स्मृतः॥७॥
गच्छ शीघ्रं च पश्यैनं गानवित्त्वं भविष्यसि। इत्युक्तो विस्मयाविष्टो नारदो वाग्विदां वरः॥८॥
मानसोत्तरशैले तु गानबंधुं जगाम वै। गंधर्वाः किन्नरा यक्षास्तथा चाप्सरसां गणाः॥९॥
समासीनास्तु परितो गानबंधुं ततस्ततः। गानविद्यां समापन्नः शिक्षितास्तेन पक्षिणा॥१०॥

---

## तीसरा अध्याय

# वैष्णवगीत कथन

### अम्बरीश बोले

हे महा बुद्धिमान मार्कण्डेय! किस योग से महाभाग नारद मुनि ने गानविद्या प्राप्त की। यह सब मुझको बताइये। हे महामति! तुम सर्वज्ञ हो। इसलिए मुझसे सब कुछ कहो।।१-२।।

### मार्कण्डेय बोले

नारद के दिव्य दर्शन से मैंने यह सुना। महामति, महातेजस्वी नारद ने मुझसे स्वयं बताया।।३।। दुःखित भगवान नारद ने तुंबरु के गौरव को स्मरण करते हुए बिना सांस लिए एक हजार दिव्य वर्षों तक तपस्या की। उसके बाद तपस्याओं को समाप्त कर एक परम कठोर तपस्या की। तब महामुनि नारद ने अन्तरिक्ष में दिव्य ऊँचे स्वर वाली अद्भुत आकाशवाणी को सुना।।४-६अ।। 'मुनियों में श्रेष्ठ किस लिए यह कठिन तपस्या कर रहे हो। यदि तुम्हारी बुद्धि गान विद्या में रत है तो मानस के ऊपर पर्वत पर उलूक को जाकर देखो। वह ज्ञानबंधु के नाम से प्रसिद्ध है। जल्दी जाकर उनको देखो। तुम गान विद्या के ज्ञाता हो जाओगे।' बुद्धिमानों में श्रेष्ठ नारद इस आकाशवाणी को सुनकर आश्चर्यचकित हो गये। उसके बाद वह मानसरोवर झील के ऊपर पर्वत के पास गये। वहाँ उन्होंने देखा कि गन्धर्व, किन्नर, यक्ष तथा अप्सरा गानबन्धु के चारों ओर बैठे हुए हैं। उस पक्षी उलूक

स्त्रिग्धकंठस्वरास्तत्र समासीना मुदान्विताः। ततो नारदमालोक्य गानबंधुरुवाच ह॥११॥
प्रणिपत्य यथान्यायं स्वागतेनाभ्यपूजयत्। किमर्थं भगवानत्र चागतोऽसि महामते॥१२॥
किं कार्यं हि मया ब्रह्मन् बूहि किं करवाणि ते॥

नारद उवाच।

उलकेंद्र महाप्राज्ञ शृणु सर्वं यथातथम्॥१३॥
मम वृत्तं प्रवक्ष्यामि पुरा भूतं महाद्भुतम्। अतीते हि युगे विद्वन्नारायणसमीपगम्॥१४॥
मां विनिर्धूय संहृष्टः समाहूय च तुंबरुम्। लक्ष्मीसमन्वितो विष्णुरशृणोद्गानमुत्तमम्॥१५॥
ब्रह्मादयः सुराः सर्वे निरस्ताः स्थानतोऽच्युताः। कौशिकाद्या समासीना गानयोगेन वै हरिम्॥१६॥
एवमाराध्य संप्राप्ता गाणपत्यं यथासुखम्। तेनाहमतिदुःखार्तस्तपस्तप्तुमिहागतः॥१७॥
यद्दत्तं यद्धुतं चैव यथा वा श्रुतमेव च। यदधीतं मया सर्वं कलां नार्हति षोडशीम्॥१८॥
विष्णोर्माहात्म्ययुक्तस्य गानयोगस्य वै ततः। संचिंत्याहं तपो घोरं तदर्थं तप्तवान् द्विज॥१९॥
दिव्यवर्षसहस्त्रं वै ततो ह्यशृणुवं पुनः। वाणीमाकाशसंभूतां त्वामुद्दिश्य विहंगम॥२०॥
उलूकं गच्छ देवर्षे गानबंधुं मतिर्यदि। गाने चेद्वर्तते ब्रह्मन् तत्र त्वं वेत्स्यसे चिरात्॥२१॥
इत्यहं प्रेरितस्तेन त्वत्समीपमिहागतः। किं करिष्यामि शिष्योहंतव मां पालयाव्यय॥२२॥

---

से वे सदा (उसी ज्ञानबन्धु के द्वारा) गान विद्या में शिक्षित थे। वे लोग प्रसन्न होकर प्रसन्नचित्त मधुर कण्ठ से युक्त बैठे हुए थे। गानबन्धु नारद को देखकर प्रणाम करके उचित स्वागत से पुलकित हुए।।६ब-११अ।। 'हे महामति! भगवान! आप क्यों यहाँ आये हुए हैं। बोलें। मैं आपका क्या कार्य करूँ?'

## नारद बोले

'हे महाबुद्धिमान! मेरी सब बातों को आप यथावत् सुनिए। मैं अपनी सब घटना को सुनाऊँगा। भूतकाल में जो आश्चर्यजनक घटनाएँ मेरे साथ घटी थीं। हे विद्वान! पूर्व युग में लक्ष्मी सहित विष्णु के पास मैं गया था। उन्होंने मुझको एक बगल कर दिया और तुंबरु को बुलाया और उसके उत्तम गीतों को सुना और अन्य देवता उस स्थान से चले गये। कौशिक तथा अन्य गान योग से विष्णु के पास बैठे रहे। मैं दुःखित हुआ। उससे मैं बहुत दुःखी होकर तपस्या करने के लिए यहाँ आया। दान के रूप को मैंने जो कुछ दिया, होम के द्वारा जो कुछ भेंट किया, जो कुछ मैंने सुना पढ़ा, ये सब यह विष्णु के माहात्म्य के साथ सम्बद्ध संगीत के मार्ग की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं है। ऐसा विचार करके हे द्विज। मैंने इसके लिए घोर तपस्या की। एक हजार दिव्य वर्ष तक इसी गान विद्या के उद्देश्य के लिए तप किया। उसके बाद हे उलूक! मैंने आपके पास पहुँचने के लिए आकाशवाणी सुना "हे देवर्षि यदि तुम संगीत में रुचि रखते हो तो उलूक के पास जाओ। हे देवर्षि वहाँ तुम शीघ्र ही गान विद्या जान लोगे।।" इससे प्रेरित होकर मैं तुम्हारे पास आया। मैं क्या करूँगा? हे अव्यय! मैं तुम्हारा शिष्य हूँ। मेरी रक्षा करें"।।१२-२२।।

गानबंधुरुवाच।

शृणु नारद यद्वृत्तं पुरा मम महामते। अत्याश्चर्यसमायुक्तं सर्वपापहरं शुभम्॥२३॥
भुवनेश इति ख्यातो राजाभूद्धार्मिकः पुरा। अश्वमेघसहस्रैश्च वाजपेयायुतेन च॥२४॥
गवां कोट्यर्बुदे चैव सुवर्णस्य तथैव च। वाससां रथहस्तीनां कन्याश्वानां तथैव च॥२५॥
दत्वा स राजा विप्रेभ्यो मेदिनीं प्रतिपालयन्। निवारयन् स्वके राज्ये गेययोगेन केशवम्॥२६॥
अन्यं वा गेययोगेन गायन्यदि स मे भवेत्। वध्यः सर्वात्मना तस्माद्वेदैरीड्यः परः पुमान्॥२७॥
गानयोगेन सर्वत्र स्त्रियो गायंतु नित्यशः। सूतमागधसंघाश्च गीतं ते कारयंतु वै॥२८॥
इत्याज्ञाप्य महातेजा राज्यं वै पर्यपालयत्। तस्य राज्ञः पुराभ्याशे हरिमित्र इति श्रुतः॥२९॥
ब्राह्मणो विष्णुभक्तश्च सर्वद्वंद्वविवर्जितः। नदीपुलिनमासाद्य प्रतिमां च हरेः शुभाम्॥३०॥
अभ्यर्च्य च यथान्यायं घृतदध्युत्तरं बहु। मिष्टान्नं पायसं दत्त्वा हरेरावेद्य पूपकम्॥३१॥
प्रणिपत्य यथान्यायं तत्र विन्यस्तमानसः। अगायत हरिं तत्र तालवर्णलयान्वितम्॥३२॥
अतीव स्नेहसंयुक्तस्तद्गतेनांतरात्मना। ततो राज्ञः समादेशाच्चारास्तत्र समागताः॥३३॥
तदर्चनादि सकलं निर्धूय च समंततः। ब्राह्मणं तं गृहीत्वा ते राज्ञे सम्यङ्न्यवेदयन्॥३४॥
ततो राजा द्विजश्रेष्ठं परिभर्त्स्य सुदुर्मतिः। राज्यान्निर्यातयामास हृत्वा सर्वं धनादिकम्॥३५॥

---

गानबन्धु बोले

'हे महामति नारद! सुनो, जो कुछ पहले मेरे साथ हुआ।।२३।। पहले एक राजा भुवनेश के नाम से प्रसिद्ध था। उसने एक हजार घोड़ों का अश्वमेघ यज्ञ और दस हजार वाजपेय यज्ञों को किया। उस राजा ने लाखों और करोड़ों गायों और सोने के सिक्के, वस्त्र, रथ, हाथी, घोड़े और कन्याओं को ब्राह्मणों को दान दिया। उसने पृथ्वी का पालन करते हुए अपने राज्य में विष्णु की प्रशंसा और अन्य की प्रशंसा में गाना गाने को रोक दिया। उसने घोषणा की—'अगर कोई विष्णु की प्रशंसा में या किसी अन्य की प्रशंसा में भी गाता है, वह मेरे द्वारा मार दिया जायेगा। वेदों द्वारा ही महान व्यक्ति पूजा के योग्य होते हैं। स्त्रियाँ सदा मेरे विषय में गा सकती हैं और सूत और मागध केवल मेरा गीत गाएँ।।२४-२८।।' ऐसी आज्ञा देकर महा तेजस्वी राजा ने राज्य में प्रजा का पालन किया। राजा की राजधानी के पास हरिमित्र नाम से प्रसिद्ध एक ब्राह्मण रहता था। वह विष्णु का भक्त और सर्वद्वन्दों (राग द्वेष आदि) से रहित था। वह नदियों के किनारे पहुँचकर भगवान विष्णु की प्रतिमा की पूजा करता था। वह मिठाई, खीर, घी, दही, मालपुआ आदि नैवेद्य देकर सुचित्त होकर प्रतिमा को प्रणाम करके विष्णु की प्रशंसा में ताल और वर्ण से युक्त भजन गाया करता था। वह अत्यन्त भक्तिभाव से युक्त अन्तःकरण से भजन गाता था। इस प्रकार वह अपना समय बिताता था। एक बार राजा के आदेश से गुप्तचर लोग वहाँ आये।।२९-३३।। उन्होंने पूर्ण रूप से पूजा आदि की सामग्री को नष्ट करके उस ब्राह्मण को पकड़कर राजा के सामने पेश किया।।३४।। तब उस दुर्बुद्धि राजा ने ब्राह्मण को फटकार कर उसका सब धन आदि लेकर अपने राज्य से बाहर कर दिया।।३५।। म्लेच्छों ने भगवान विष्णु की प्रतिमा को वहाँ आकर ले लिया और चले गये। समय बीतने

प्रतिमां च हरेश्चैव म्लेच्छा हृत्वा ययुः पुनः। ततः कालेन महता कालधर्ममुपेयिवान्॥३६॥
स राजा सर्वलोकेषु पूज्यमानः समंततः। क्षुधार्तश्च तथा खिन्नो यममाह सुदुःखितः॥३७॥
क्षुत्तृट् च वर्तते देव स्वर्गतस्यापि मे सदा। मया पापं कृतं किं वा किं करिष्यामि वै यम॥३८॥

यम उवाच

त्वया हि सुमहत्पापं कृतमज्ञानमोहतः। हरिमित्रं प्रति तदा वासुदेवपरायणम्॥३९॥
हरिमित्रे कृतं पापं वासुदेवार्चनादिषु। तेन पापेन संप्राप्तः क्षुद्रोगस्त्वां सदा नृप॥४०॥
दानयज्ञादिकं सर्वं प्रनष्टं ते नराधिप। गीतवाद्यसमोपेतं गायमानं महामतिम्॥४१॥
हरिमित्रं समाहूय हृतवानसि तद्धनम्। उपहारादिकं सर्वं वासुदेवस्य सन्निधौ॥४२॥
तव भृत्यैस्तदा लुप्तं पापं चक्रुस्त्वदाज्ञया। हरेः कीर्तिं विना चान्यद्ब्राह्मणेन नृपोत्तम॥४३॥
न गेययोगे गातव्यं तस्मात्पापं कृतं त्वया। नष्टस्ते सर्वलोकोद्य गच्छ पर्वतकोटरम्॥४४॥
पूर्वोत्सृष्टं स्वदेहं तं खादन्नित्यं निकृत्य वै।
तस्मिन् कोणे त्विमं देहं खादन्नित्यं क्षुधान्वितः॥४५॥
महानिरयसंस्थस्त्वं यावन्मन्वंतरं भवेत्। मन्वंतरे ततोऽतीते भूम्यां त्वं च भविष्यसि॥४६॥
ततः कालेन संप्राप्य मानुष्यमवगच्छसि॥

---

पर विश्व में पूजित वह राजा मृत्यु को प्राप्त हुआ। वह भूख से पीड़ित था और दुःखी था। उसने यम से कहा।।३६-३७।। 'हे यमराज! यद्यपि मैं स्वर्ग में आ गया हूँ। मुझे सदा भूख और प्यास सताती है। मैंने क्या पाप किया है? मैं क्या करूँ?'।।३८।।

## यम बोले

'तुमने हरिमित्र और विष्णु की पूजा के सम्बन्ध में पाप किया है। हे राजा! उस पाप के कारण तुमको क्षुधा रोग प्राप्त हुआ है। यह अज्ञान और मोह वश तुमसे हुआ है। वह महान पाप तुमने भगवान विष्णु भक्त हरिमित्र के साथ किया।।३९-४०।। हे राजा! उस पाप से तुम्हारा दान और यज्ञादि सब नष्ट हो गया। गीत वाद्य सहित भजन करते हुए बुद्धिमान ब्राह्मण हरिमित्र को पकड़वाकर तुमने उसका धन भी अपहरण कर लिया और विष्णु की पूजा में भेंट चढ़ाये गये सब उपहारों को ले लिया। तुम्हारे सिपाहियों द्वारा वे सब वस्तुएँ लूट ली गयीं। तुम्हारी आज्ञा से उन्होंने इन सब पापों को किया। हे राजा! विष्णु की प्रशंसा को छोड़कर एक ब्राह्मण के द्वारा अपने संगीत क्रियाकलाप के दौरान और कुछ नहीं गाना चाहिए। अतः तुम्हारे द्वारा इस बहुत बड़े पाप कर्म से तुम्हारा सब लोक स्वर्ग आदि नष्ट हो गया। अब तुम पहाड़ की गुफा में जाओ।।४१-४४।। तुम निरन्तर अपने शरीर को काटो और काट के खाते हुए अपनी भूख को शान्त करो, जैसा कि पहले तुमने किया था। अपनी भूख मिटाने में तुम अपने शरीर को खाते हुए ऐसा अनुभव करो जैसा कि महानरक में पड़े हो। ऐसा तब तक करो जब तक

गानबंधुरुवाच

एवमुक्त्वा यमो विद्वांस्तत्रैवांतरधीयत॥४७॥
हरिमित्रो विमानेन स्तूयमानो गणाधिपैः। विष्णुलोकं गतः श्रीमान् संगृह्य गणबांधवान्॥४८॥
भुवनेशो नृपो ह्यस्मिन् कोटरे पर्वतस्य वै। खादमानः शवं नित्यमास्ते क्षुत्तृट्समन्वितः॥४९॥
अद्राक्षं तं नृपं सर्वमेतन्ममोक्तवान्। समालोक्याहमाज्ञाय हरिमित्रं समेयिवान्॥५०॥
विमानेनार्कवर्णेन गच्छंतममरैर्वृतम्। इंद्रद्युम्नप्रसादेन प्राप्तं मे ह्यायुरुत्तमम्॥५१॥
तेनाहं हरिमित्रं वै दृष्टवानस्मि सुव्रत। तदैश्वर्यप्रभावेन मनो मे समुपागतम्॥५२॥
गानविद्यां प्रति तदा किन्नरैः समुपाविशम्। षष्टिं वर्षसहस्राणां गानयोगेन मे मुने॥५३॥
जिह्वा प्रसादिता स्पष्टा ततो गानमशिक्षयम्। ततस्तु द्विगुणेनैव कालेनाभूदियं मम॥५४॥
गानयोगसमायुक्ता गता मन्वंतरा दश। गानाचार्योऽभवं तत्र गंधर्वाद्याः समागताः॥५५॥
एते किन्नरसंघा वै मामाचार्यमुपागताः। तपसा नैव शक्या वै गानविद्या तपोधन॥५६॥
तस्माच्छ्रुतेन संयुक्तो मत्तस्त्वं गानमाप्नुहि। एवमुक्तो मुनिस्तं वै प्रणिपत्य जगौ तदा॥५७॥
तच्छृणुष्व मुनिश्रेष्ठ वासुदेवं नमस्य तु॥

---

यह मन्वन्तर समाप्त न हो जाय। जब मन्वन्तर अपने समय पर समाप्त हो तुम पृथ्वी पर फिर मनुष्य शरीर में जन्म लोगे'।।४५-४७।।

## गानबंधु बोले

इस तरह कहकर विद्वान यमराज वहीं पर अन्तर्धान हो गये।। हरिमित्र गण के स्वामियों द्वारा स्तुति किये जाते हुए एक विमान द्वारा अपने बान्धवों सहित विष्णु लोक को गये।।४८।। राजा भुवनेश पहाड़ की गुफा में अपने शरीर को खाते हुए टिके रहे। फिर भी वे भूख-प्यास से पीड़ित रहे।।४९।। मैंने वहाँ राजा को देखा। उसने सब कुछ मुझको बताया। उनको देखकर और सब समझकर मैं हरिमित्र के पास गया। मैंने सूर्य के समान चमकते हुए विमान में अमरों द्वारा घिरे हुए स्वर्ग की ओर बढ़ते हुए उनको देखा। मैंने इन्द्रद्युम्न की कृपा से उत्तम आयु प्राप्त की। हे सुव्रत! उन्हीं की कृपा से मैं हरिमित्र को देख सका। उनकी शक्ति के प्रभाव से मेरा मन संगीत की ओर झुका। हे मुनि! मैं संगीत कला का अभ्यास करते हुए साठ हजार वर्ष किन्नरों के बीच बैठा। मेरी जीभ को आशीर्वाद मिला और वह बहुत स्पष्ट हो गयी। तब मैंने संगीत को सीखा। उसके बाद दुगुने समय में मैंने संगीत कला में पूर्णता प्राप्त की। उस समय तक दस मन्वन्तर बीत गये। मैं संगीत का गुरु हो गया। गन्धर्व और अन्य वही किन्नर लोग अपने गुरु के रूप में मेरे पास पहुँचे थे। हे तपोधन! महान तपस्या के बिना संगीत केवल विद्या के बल से गान विद्या नहीं प्राप्त हो सकती।।५०-५६।। अतः आप मुझसे भलीभाँति सुनकर संगीत का ज्ञान प्राप्त करोगे।" उलूक के ऐसा कहने पर मुनियों में श्रेष्ठ नारद ने उसको नवाजा।।५७।।

मार्कंडेय उवाच

उलूकेनैवमुक्तस्तु नारदो मुनिसत्तमः॥५८॥
शिक्षाक्रमेण संयुक्तस्तत्र गानमशिक्षयत्। गानबंधुस्तदाहेदं त्यक्तलज्जो भवाधुना॥५९॥

उलूक उवाच

स्त्रीसंगमे तथा गीते द्यूते व्याख्यानसंगमे। व्यवहारे तथाहारे त्वर्थानां च समागमे ॥६०॥
आये व्यये तथा नित्यं त्यक्तलज्जस्तु वै भवेत्। न कुंचितेन गूढेन नित्यं प्रावरणादिभिः॥६१॥
हस्तविक्षेपभावेन व्यादितास्येन चैव हि। निर्यातजिह्वायोगेन न गेयं हि कथंचन॥६२॥
न गायेदूर्ध्वबाहुश्च नोर्ध्वदृष्टिः कथंचन। स्वांगं निरीक्षमाणेन परं संप्रेक्षता तथा॥६३॥
संघट्टे च तथोत्थाने कटिस्थानं न शस्यते। हासो रोषस्तथा कंपस्तथान्यत्र स्मृतिः पुनः॥६४॥
नैतानि शस्तरूपाणि गानयोगे महामते। नैकहस्तेन शक्यं स्यात्तालसंघट्टनं मुने॥६५॥
क्षुधार्त्तेन भयार्तेन तृष्णार्तेन तथैव च। गानयोगो न कर्तव्यो नांधकारे कथंचन॥६६॥
एवमादीनि चान्यानि न कर्तव्यानि गायता।

मार्कंडेय उवाच

एवमुक्तः स भगवांस्तेनोक्तैर्विधिलक्षणैः। अशिक्षयत्तथा गीतं दिव्यं वर्षसहस्रकम्॥६७॥

---

**मार्कण्डेय बोले**

उलूक की सलाह सुनकर नारद मुनि ने शिक्षा की प्रक्रिया के अनुसार संगीत कला को सीखा। उस समय उलूक ने कहा—'अब लज्जा को छोड़ दो'।।५८-५९।।

**उलूक बोले**

'स्त्री के साथ संगम (सम्भोग) करते समय, गाते समय, जुआ खेलते समय, सभा में व्याख्यान देते समय, व्यापार करते समय और भोजन करते समय, धन संचय करते समय तथा आय-व्यय का हिसाब करते समय व्यक्ति को लज्जा छोड़ देनी चाहिये। शरीर को झुका कर कभी गाना नहीं चाहिये। न तो लिहाफ आदि को ओढ़कर, हाथ आदि से इशारा करके, मुँह से खूब चिल्लाकर, जीभ को निकालकर, कभी भी नहीं गाना चाहिए। हाथों को ऊपर उठाकर, ऊपर की ओर दृष्टि करके, अपने शरीर के अंगों को देखते हुये और न तो दूसरे आदमी की ओर देखते हुए गाना चाहिये।।६०-६३।। ऊपर उठते समय कमर पर हाथ से पीटना न चाहिये और न तो हँसी, क्रोध और अंगों का हिलना (कंपन) होना चाहिये। ध्यान भी कहीं दूसरी ओर न होना चाहिये।।६४।। हे महामति! संगीत (गान विद्या) के अभ्यास में ये सब प्रवृत्तियाँ उचित नहीं मानी जाती हैं। हे मुनि! एक हाथ से ताल बजाना भी सम्भव नहीं है।।६५।। भूखे, प्यासे, भयभीत व्यक्ति को गाना न चाहिये और न तो अँधेरे में ही गाना चाहिये। संगीत के अभ्यास में ये और इससे मिलती-जुलती गलती गाने वाले को न करनी चाहिये'।।६६।।

**मार्कण्डेय बोले**

उलूक द्वारा इतना सब कहने पर नारद मुनि ने अपने गुरु द्वारा बतायी विधि से एक हजार दिव्य वर्षों तक संगीत विद्या सीखा और अभ्यास किया।।६७।। उसके बाद वह गीत प्रस्तार आदि में तथा वीणा वादन में निपुण

ततः समस्तसंपन्नो गीतप्रस्तारकादिषु। विपंच्यादिषु संपन्नः सर्वस्वरविभागवित्॥६८॥
अयुतानि च षट्त्रिंशत्सहस्राणि शतानि च। स्वराणां भेदयोगेन ज्ञातवान्मुनिसत्तमः॥६९॥
ततो गंधर्वसंघाश्च किन्नराणां तथैव च। मुनिना सह संयुक्ताः प्रीतियुक्ता भवंति ते॥७०॥
गानबंधुं प्राह प्राप्य गानमनुत्तमम्। त्वां समासाद्य संपन्नस्त्वं हि गीतविशारदः॥७१॥
ध्वांक्षशत्रो महाप्राज्ञ किमाचार्य करोमि ते।

गानबंधुरुवाच

ब्रह्मणो दिवसे ब्रह्मन् मनवस्तु चतुर्दश॥७२॥
ततस्त्रैलोक्यसंप्लावो भविष्यति महामुने। तावन्मे त्वायुषो भावस्तावन्मे परमं शुभम्॥७३॥
मनसाध्याहितं मे स्याद्दक्षिणा मुनिसत्तम॥

नारद उवाच

अतीतकल्पसंयोगे गरुडस्त्वं भविष्यसि॥७४॥
स्वस्ति तेऽस्तु महाप्राज्ञ गमिष्यामि प्रसीद माम्॥

मार्कंडेय उवाच

एवमुक्त्वा जगामाथ नारदोपि जनार्दनम्॥७५॥
श्वेतद्वीपे हृषीकेशं गापयामास गीतकान्। तत्र श्रुत्वा तु भगवान्नारदं प्राह माधवः॥७६॥

---

होकर सब स्वरों के विभागों के ज्ञाता हो गये। मुनियों में श्रेष्ठ नारदजी स्वरों के और छत्तीस हजार स्वरों के प्रभेदों के विशेषज्ञ हो गये।।६८-६९।। गंधर्व और किन्नर जो मुनि के साथ संयुक्त थे वे नारद के गायन से बहुत खूब प्रसन्न हुये।।७०।। संगीत कला की शिक्षा के बाद मुनि ने गानबन्धु से कहा है 'आप ज्ञान विशारद हैं। आप के पास आकर मैं संगीत विद्या से सम्पन्न हो गया। हे अज्ञान के नाशक आचार्य! मैं आपके लिये क्या करूँ?'

**गानबन्धु बोले**

'हे ब्राह्मण! ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मनु होते हैं। उनके शासन के बाद तीनो लोकों का विनाश होता है। प्रलय होती है। तब तक मेरी आयु है। तब तक मेरा परम शुभ है। हे मुनिश्रेष्ठ! जो कुछ आप ने मन में निश्चय किया हो वही मेरी गुरुदक्षिणा होगी।'

**नारद बोले**

'हे महाबुद्धिमान गुरु! तुम्हारा कल्याण हो। जब यह कल्प समाप्त होगा और अगला कल्प प्रारम्भ होगा तब तुम गरुड़ होगे। मुझ पर प्रसन्न होओ। अब मैं जाऊँगा'।।७१-७४।।

**मार्कण्डेयं बोले**

ऐसा कहकर नारद विष्णु भगवान के पास गये।।७५।। श्वेत द्वीप में जाकर उन्होंने विष्णु भगवान की प्रशंसा में भजन गाया। उसको सुनकर विष्णु ने कहा। 'अब भी गाने में तुम तुंबुरु से अच्छे गायक नहीं हो।।

तुंबरोर्न विशिष्टोसि गीतैरद्यापि नारद। यदा विशिष्टो भविता तं कालं प्रवदाम्यहम्॥७७॥
गानबंधुं समासाद्य गानार्थज्ञो भवानसि। मनोर्वैवस्वतस्याहमष्टाविंशतिमे युगे॥७८॥
द्वापरांते भविष्यामि यदुवंशकुलोद्भवः। देवक्यां वसुदेवस्य कृष्णो नाम्ना महामते॥७९॥
तदानीं मां समासाद्य स्मारयेथा यथातथम्। तत्र त्वां गीतसंपन्नं करिष्यामि महाव्रतम्॥८०॥
तुंबरोश्च समं चैव तथातिशयसंयुतम्। तावत्कालं यथायोगं देवगंधर्वयोनिषु॥८१॥
शिक्षयस्व यथान्यायमित्युक्त्वांतरधीयत। ततो मुनिः प्रणम्यैनं वीणावादनतत्परः॥८२॥
देवर्षिर्देवसंकाशः सर्वाभरणभूषितः। तपसां निधिरत्यंतं वासुदेवपरायणः॥८३॥
स्कंधं विपंचीमासाद्य सर्वलोकांश्चचार सः। वारुणं याम्यमाग्नेयमैंद्रं कौबेरमेव च॥८४॥
वायव्यं च तथेशानं संसदं प्राप्य धर्मवित्। गायमानो हरिं समयग्वीणावादविचक्षणः॥८५॥
गंधर्वाप्सरसां संघैः पूज्यमानस्ततस्ततः। ब्रह्मलोकं समासाद्य कस्मिंश्चित्कालपर्यये॥८६॥
हाहाहूहूश्च गंधर्वौ गीतवाद्यविशारदौ। ब्रह्मणो गायकौ दिव्यौ नित्यौ गंधर्वसत्तमौ॥८७॥
तत्र ताभ्यां समासाद्य गायामानो हरिं प्रभुम्। ब्रह्मणा च महातेजाः पूजितो मुनिसत्तमः॥८८॥
तं प्रणम्य महात्मानं सर्वलोकपितामहम्। चचार च यथाकामं सर्वलोकेषु नारदः॥८९॥
ततः कालेन महता गृहं प्राप्य च तुंबरोः। वीणामादाय तत्रस्थे ह्यगायत महामुनिः॥९०॥
स्वरकल्पास्तु तत्रस्थाः षड्जाद्याः सप्त वै मताः। क्रीडतो भगवान्दृष्ट्वा निर्गतश्च सुसत्वरम्॥९१॥

---

अब तुम तुंबुरु से विशिष्ट होने वाले काल को मैं तुमसे कहता हूँ। गानबन्धु के पास जाकर तुम संगीत की विद्या से परिचित (ज्ञाता) हो गये हो। हे मुनि वैवस्वत मनु के अठारहवें युग के द्वापर के अन्त में मैं यदुवंश में देवकी के गर्भ में वसुदेव का पुत्र कृष्ण नाम से पैदा हूँगा।।७६-७९।। उस समय मेरे पास आकर मुझको याद दिलाना। तब मैं तुमको संगीत की कला का विशेषज्ञ बना दूँगा।।८०।। तब मैं तुमको तुंबरु के बराबर नहीं बल्कि उससे बढ़कर बनाऊँगा। तब तक गन्धर्वों और देवताओं से इस कला को सीखो और सिखाओ।' यह कहने के बाद विष्णु वहाँ अन्तर्धान हो गये। उसके बाद मुनि उनको प्रणाम करके वीणा बजाने में तत्पर, सब आभूषणों से भूषित देवर्षि और देवताओं के समान विष्णु के भक्त हो गये।।८१-८३।। तप के भण्डार नारद मुनि काँधे पर वीणा रखकर सब लोकों में विचरण करने लगे। वह धर्मवेत्ता वीणा बजाने में दक्ष, नारद जी, वरुण, यम, अग्नि, इन्द्र, कुबेर, वायु और ईशान के लोकों की सभाओं में जाकर विष्णु की प्रशंसा के भजन गाने लगे।।८४-८५।। गन्धर्वों और अप्सराओं के संघों द्वारा पूजित नारद जी किसी समय ब्रह्मलोक पहुँचे। वहाँ ब्रह्मा के दो गन्धर्व हा-हा, हूहू नाम के गायक थे जो कि गान विद्या में विशारद थे। वहाँ पहुँचकर उनके साथ में महामुनि नारद ने विष्णु की प्रशंसा में भजन गाये। तेजस्वी ब्रह्मा ने मुनिश्रेष्ठ नारद की प्रशंसा की।।८६-८८।। सब लोकों के पितामह ब्रह्मा को प्रणाम करके नारद अपनी इच्छानुसार सब लोकों में घूमने लगे।।८९।। बहुत समय के बाद अपनी वीणा को लिए हुए तुंबरु के निवास में पहुँचे। वहाँ बैठे और गाना प्रारम्भ किया।।९०।। षड्ज आदि सात सुरों को वहाँ पर बैठे हुए देखकर नारद मुनि वहाँ से तेजी से बाहर निकल गये।।९१।। महामति ने अलग-अलग

शिक्षयामास बहुशस्स्तत्र तत्र महामतिः। श्रमयोगेन संयुक्तो नारदोपि महामुनिः॥९२॥
सप्तस्वरांगनाः पश्यन् गानविद्याविशारदः। आसीद्वीणा समायोगे न तास्तंत्र्यः प्रपेदिरे॥९३॥
ततो रैवतके कृष्णं प्रणिपत्य महामुनिः। विज्ञापयदशेषं तु श्वेतद्वीपे तु यत् पुरा॥९४॥
नारायणेन कथितं गानयोगमनुत्तमम्। तच्छ्रुत्वा प्रहसन्कृष्णः प्राह जांबवतीं मुदा॥९५॥
एतं मुनिवरं भद्रे शिक्षयस्व यथाविधि। वीणागानसमायोगे तथेत्युक्त्वा च सा हरिम्॥९६॥
प्रहसंती यथायोगं शिक्षयामास तं मुनिम्। ततः संवत्सरे पूर्णे पुनरागम्य माधवम्॥९७॥
प्रणिपत्याग्रतस्तस्थौ पुनराह स केशवः। सत्यां समीपमागच्छ शिक्षयस्व यथाविधि॥९८॥
तथेयुक्त्वा सत्यभामां प्रणिपत्य जगौ मुनिः। तया स शिक्षितो विद्वान् पूर्णे संवत्सरे पुनः॥९९॥
वासुदेवनियुक्तोऽसौ रुक्मिणीसदनं गतः। अंगनाभिस्ततस्ताभिर्दासीभिर्मुनिसत्तमः ॥१००॥
उक्तोऽसौ गायमानोपि न स्वरं वेत्सि वै मुने। ततः श्रमेण महता वत्सरत्रयसंयुतम्॥१०१॥
शिक्षितोसौ तदा देव्या रुक्मिण्यापि जगौ मुनिः। ततः स्वरांगनाः प्राप्य तंत्रीयोगं महामुनेः॥१०२॥
आहूय कृष्णो भगवान् स्वयमेव महामुनिम्। अशिक्षयदमेयात्मा गानयोगमनुत्तमम्॥१०३॥

ततोऽतिशयमापन्नस्तुंबरोर्मुनिसत्तमः ।
ततो ननर्त देवर्षिः प्रणिपत्य जनार्दनम्॥१०४॥
उवाच च हृषीकेशः सर्वज्ञस्त्वं महामुने।
प्रहस्य गानयोगेन गायस्व मम सन्निधौ॥१०५॥

---

स्थानों पर संगीत को सीखा और सिखाया तो नारद मुनि भी बहुत थक गये।।९२।। यद्यपि वह गान विद्या में विशेषज्ञ थे, वह भजन को आदि सात स्वरों की देवियों को देखते हुए वहाँ बैठ गये। लेकिन जब वह वीणा के साथ गाते रहे वे वीणा के तार तक नहीं उतरे।।९३।। उसके बाद रैवतक पर्वत पर जाकर महामुनि नारद ने कृष्ण को प्रणाम किया और उनको बताया जो श्वेत द्वीप में नारायण ने गान विद्या देने के सम्बन्ध में पहले कहा था। यह सुनकर कृष्ण मुस्कुराते हुए और प्रसन्न मुद्रा में जाम्बवती से कहा।।९४-९५।।'' 'हे भद्र महिला! इन श्रेष्ठ मुनि नारद को वीणा पर गाना सिखाओ।' ऐसा कहने पर हँसती हुई जाम्बवती ने नारद मुनि को सिखाया। जब एक वर्ष बीत गये तब फिर नारद मुनि विष्णु के पास गये। उनको प्रणाम करके उनके सामने खड़े हो गये। विष्णु ने कहा। सत्यभामा के पास जाओ और उनसे उचित प्रशिक्षण प्राप्त करो।।९६-९८।। ऐसा कहने पर विष्णु को प्रणाम करके मुनि सत्यभामा के पास गये। सत्यभामा ने पूरे एक साल विद्वान नारद को फिर शिक्षा दी। श्री कृष्ण की प्रेरणा से रुक्मिणी के घर गये। वहाँ महिलाओं और दासियों से घिरी हुई रुक्मिणी ने नारद से कहा। 'आप दीर्घकाल से गाते रहे हैं। लेकिन आप सही तौर से स्वरों को नहीं जानते हैं।' उसके बाद बहुत परिश्रम से रुक्मिणी देवी द्वारा शिक्षित होकर तब मुनि ने गाया। स्वरों की देवियों ने वीणा के तारों पर गानों को सुना।।९९-१०२।। भगवान् कृष्ण ने स्वयं महामुनि नारद को बुलाकर गान योग को सिखाया।।१०३।। तब मुनिश्रेष्ठ नारद तुंबरु से बढ़कर हो गये। तब देवर्षि कृष्ण को प्रणाम करके नाचने लगे।।१०४।। विष्णु जी हँसे

एतत्ते प्रार्थितं प्राप्तं मम लोके तथैव च।
नित्यं तुंबरुणा सार्धं गायस्व च यथातथम्॥१०६॥
एवमुक्तो मुनिस्तत्र यथायोगं चचार सः।
यदा संपूजयन् कृष्णो रुद्रं भुवननायकम्॥१०७॥
तदा जगौ हरेस्तस्य नियोगाच्छंकराय वै।
रुक्मिण्या सह सत्या च जांबवत्या महामुनिः॥१०८॥
कृष्णेन च नृपश्रेष्ठ श्रुतिजातिविशारदः।
एष वो मुनिशार्दूलाः प्रोक्तो गीतक्रमो मुनेः॥१०९॥
ब्राह्मणो वासुदेवाख्यां गायमानो भृशं नृप।
हरेः सालोक्यमाप्नोति रुद्रगानोऽधिको भवेत्॥११०॥
अन्यथा नरकं गच्छेद्गायमानोन्यदेव हि।
कर्मणा मनसा वाचा वासुदेवपरायणः॥१११॥
गायन् शृण्वंस्तमाप्नोति तस्माद्गेयं परं विदुः॥११२॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे**
**वैष्णवगीतकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः॥३॥**

---

और कहा, "हे महामुनि! अब तुम सर्वज्ञ हो। मेरे सामने पुनः गान गाओ।।१०५।। जो तुम खोज रहे थे वह अभीष्ट ज्ञान तुमको प्राप्त हो गया। इसलिए मेरी प्रशंसा में तुंबरु के साथ गाओ"।।१०६।। ऐसा कहने पर उन्होंने तद्नुसार वैसा ही किया। जब कृष्ण ने लोकों के स्वामी शिव की पूजा की, तब विष्णु की आज्ञा से उन्होंने शिव की प्रशंसा में भजन गाये। उन्होंने रुक्मिणी, सत्या और जाम्बवती तथा कृष्ण के साथ में गाना गाया। हे श्रेष्ठ राजा! इस प्रकार काल क्रम से नारद मुनि सातों स्वरों में विशेषज्ञ हो गये। हे श्रेष्ठ मुनियों! इस प्रकार संगीत विद्या की प्राप्ति धीरे-धीरे नारद को हुई और मैंने तुमको बताया।।१०७-१०९।। हे राजन्! वह ब्राह्मण जो कि विष्णु देव की प्रशंसा में गाता है वह विष्णुलोक को प्राप्त करता है। जो रुद्र की प्रशंसा में गाता है वह इसकी अपेक्षा अधिक होगा। विष्णु और शिव के अतिरिक्त अन्य किसी की भी प्रशंसा में गायेगा वह नरक में जायेगा। जो कोई मन से, वाणी से और शरीर से विष्णु का भक्त है, जो उनके विषय में गाता है और जो विष्णु के माहात्म्य को सुनता है वह उनको प्राप्त होता है। अतः वे लोग जानते हैं कि विष्णु सबसे बड़े स्वामी हैं। अतः उनकी प्रशंसा गेय है।।११०-११२।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में वैष्णव गीत कथन**
**( नारद द्वारा संगीत विद्या की प्राप्ति ) नामक तीसरा अध्याय समाप्त॥३॥**

## चतुर्थोऽध्यायः

# विष्णुभक्तकथनम्

ऋषय ऊचुः

वैष्णवा इति ये प्रोक्ता वासुदेवपरायणाः। कानि चिह्नानि तेषां वै तन्नो ब्रूहि महामते॥१॥
तेषा वा किं करोत्येष भगवान् भूतभावनः। एतन्मे सर्वमाचक्ष्व सूत सर्वार्थवित्तम॥२॥

सूत उवाच

अंबरीषेण वै पृष्टो मार्कंडेयः पुरा मुनिः। युष्माभिरद्य यत् प्रोक्तं तद्वदामि यथातथम्॥३॥

मार्कंडेय उवाच

शृणु राजन्यथान्यायं यन्मां त्वं परिपृच्छसि। यत्रास्ते विष्णुभक्तस्तु तत्र नारायणः स्थितिः॥४॥
विष्णुरेव हि सर्वत्र येषां वै देवता स्मृता। कीर्त्यमाने हरौ नित्यं रोमांचो यस्य वर्तते॥५॥
कंपः स्वेदस्तथाक्षेषु दृश्यते जलबिंदवः। विष्णुभक्तिसमायुक्तान् श्रौतस्मार्तप्रवर्तकान्॥६॥
प्रीतो भवति यो दृष्ट्वा वैष्णवोऽसौप्रकीर्तितः। नान्यदाच्छादयेद्वस्त्रं वैष्णवो जगतोऽरणे॥७॥
विष्णुभक्तमथायांतं यो दृष्ट्वा सन्मुखस्थितः। प्रणामादि करोत्येवं वासुदेवे यथा तथा॥८॥
विष्णुभक्तमथायांतं यो दृष्ट्वा सन्मुखस्थितः। रूक्षाक्षराणि शृण्वन्वै तथा भागवतेरितः॥९॥

---

## चौथा अध्याय

# विष्णु भक्त कथन

### ऋषि बोले

हे महामति! जो वासुदेव को समर्पित भक्त हैं और वैष्णव कहे जाते हैं उन वैष्णव भक्तों के कौन चिह्न हैं?।।१।। सब अर्थों को जानने वालों में श्रेष्ठ। हे सूत! सब प्राणियों के स्रष्टा और रक्षक भगवान उन भक्तों के लिए क्या करते हैं।।२।।

### सूत बोले

पहले इसी विषय पर अम्बरीष ने मार्कण्डेय से पूछा था। उन्होंने अम्बरीष को जैसा बताया था वही अब मैं तुमसे कहता हूँ।।३।।

### मार्कण्डेय बोले

हे राजा! सुनो। जो तुम मुझसे पूछते हो यह न्यास संगत है। नारायण वहाँ उपस्थित हैं जहाँ कि विष्णु भक्त रहता है।।४।। जहाँ उनकी मूर्ति स्थित है सर्वत्र विष्णु ही हैं। उनकी स्तुति और कीर्तन करने पर जिसके रोमाँच हो जाते हैं।।५।। शरीर कँपता है। पसीना निकलता है और आँखों में जल की बिन्दु दिखायी देते हैं। जो विष्णु के भक्त को देखकर प्रसन्न होता है और वे जो श्रुति और स्मृति में विष्णु के भक्तों के लिए कहे गये आचरणों से युक्त लोगों को देखकर प्रसन्न होता है उसको वैष्णव कहा जाता है। एक वैष्णव अपनी शरीर की रक्षा के लिए आवश्यक वस्त्रों से अधिक वस्त्र नहीं पहनता है।।६-७।। विष्णु के भक्त को आता देखकर, वैष्णव आमने-सामने खड़ा होकर उसको प्रणाम करता है तो वह स्वयं वैष्णव है। वह प्रणाम, विष्णु को प्रणाम करने के बराबर है।।८।। उसको भक्त

प्रणामपूर्वं क्षांत्या वै यो वदेद्वैष्णवो हि सः। गंधपुष्पादिकं सर्वं शिरसा यो हि धारयेत्॥१०॥
हरेः सर्वमितीत्येवं मत्त्वासौ वैष्णवः स्मृतः। विष्णुक्षेत्रे शुभान्येव करोति स्नेहसंयुतः॥११॥
प्रतिमां च हरेर्नित्यं पूजयेत्प्रयतात्मवान्। विष्णुभक्तः स विज्ञेयः कर्मणा मनसा गिरा॥१२॥
नारायणपरो नित्यं महाभागवतो हि सः। भोजनाराधनं सर्वं यथाशक्त्या करोति यः॥१३॥
विष्णुभक्तस्य च सदा यथान्यायं हि कथ्यते। नारायणपरो विद्वान्यस्यान्नं प्रीतमानसः॥१४॥
अश्नाति तद्धरेरास्यं गतमन्नं न संशयः। स्वार्चनादपि विश्वात्मा प्रीतो भवति माधवः॥१५॥
महाभागवते तच्च दृष्ट्वासौ भक्तवत्सलः। वासुदेवपरं दृष्ट्वा वैष्णवं दग्धकिल्बिषम्॥१६॥
देवापि भीतास्तं यांति प्रणिपत्य यथागतम्। श्रूयतां हि पुरावृत्तं विष्णुभक्तस्य वैभवम्॥१७॥
दृष्ट्वा यमोऽपि वै भक्तं वैष्णवं दग्धकिल्बिषम्। उत्थाय प्रांजलिर्भूत्वा ननाम भृगुनंदनम्॥१८॥
तस्मात्संपूजयेद्भक्त्या वैष्णवान्विष्णुवन्नरः। स याति विष्णुसामीप्यं नात्र कार्या विचारणा॥१९॥
अन्यभक्तसहस्रेभ्यो विष्णुभक्तो विशिष्यते॥
विष्णुभक्तसहस्रेभ्यो रुद्रभक्तो विशिष्यते। रुद्रभक्तात्परतरो नास्ति लोके न संशयः॥२०॥
तस्मात्तु वैष्णवं चापि रुद्रभक्तमथापि वा। पूजयेत्सर्वयत्नेन धर्मकामार्थमुक्तये॥२१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे विष्णुभक्तकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः॥४॥**

---

के रूप में जानना चाहिए। वह तीनों लोकों में विजयी होता है। जो कठोर शब्दों को सुनकर भी सहनशीलता के साथ बोलता है। जो गन्ध, सुगन्धित पुष्प, आदि यह समझकर धारण करता है कि यह सब विष्णु ही है उसको वैष्णव समझना चाहिए।।९-१०।। विष्णु के पवित्र क्षेत्र में जो शुभ कार्यों को प्रेमपूर्वक करता है, वह वैष्णव है। जो पवित्र आत्मा के साथ विष्णु की प्रतिमा का पूजन करेगा वह विष्णु के भक्त के रूप में प्रसिद्ध होगा।।११-१३।। जो यथाशक्ति भोजन देता है और दूसरे विष्णु भक्त की आराधना अपनी योग्यता के अनुसार करता है वह वास्तव में वैष्णव है।।१४।। अगर विष्णु का विद्वान भक्त प्रसन्नचित्त होकर किसी का भोजन स्वीकार करता है, वह भोजन निःसन्देह विष्णु के मुख में जाता है। विष्णु विश्वात्मा हैं। अपने भक्तों के प्रिय हैं।।१५।। वे अपनी पूजा से अधिक प्रसन्न होते हैं जब कि वह देखते हैं कि उनके भक्त की पूजा उसी प्रकार होती है।।१६अ।। विष्णु को समर्पित वैष्णव को देखकर और जिसने अपने पापों को जला दिया है उससे देवता तक डरते हैं। वे अपने ढंग से उसको प्रणाम करके चले जाते हैं। विष्णु के भक्त का प्रभाव दिखाने वाली एक पुरानी घटना को सुनो। भृगु का पुत्र जो विष्णु का भक्त था और अपने पापों को जला दिया था—उसको देखकर यम ने उठकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह वैष्णवों की विष्णुवत् पूजा करे। वह व्यक्ति विष्णु के समीप जाता है। इसमें विचार करने की बात नहीं है। अन्य हजारों भक्तों से विष्णु भक्त विशिष्ट होता है। विष्णु के हजारों भक्तों से रुद्र का भक्त विशिष्ट होता है। संसार में रुद्र भक्त से बढ़कर कोई दूसरा नहीं है। इसलिए वैष्णव को और विष्णु भक्त को सब प्रयत्नों से धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति के लिए पूजा करनी चाहिए।।१६ब-२१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में विष्णु भक्त कथन नामक चौथा अध्याय समाप्त॥४॥**

पंचमोऽध्यायः

# श्रीमत्याख्यानम्

ऋषय ऊचुः

ऐक्ष्वाकुरंबरीषो वै वासुदेवपरायणः। पालयामास पृथिवीं विष्णोराज्ञापुरःसरः॥१॥
श्रुतमेतन्महाबुद्धे तत्सर्वं वक्तुमर्हसि। नित्यं तस्य हरेश्चक्रं शत्रुरोगभयादिकम्॥२॥
हंतीति श्रूयते लोके धार्मिकस्य महात्मनः। अंबरीषस्य चरितं तत्सर्वं ब्रूहि सत्तम॥३॥
माहात्म्यमनुभावं च भक्तियोगमनुत्तमम्। यथावच्छ्रोतुमिच्छामः सूत वक्तुं त्वमर्हसि॥४॥

सूत उवाच

श्रूयतां मुनिशार्दूलाश्चरितं तस्य धीमतः। अंबरीषस्य माहात्म्यं सर्वपापहरं परम्॥५॥
त्रिशंकोर्दयिता भार्या सर्वलक्षणशोभिता। अंबरीषस्य जननी नित्यं शौचसमन्विता॥६॥
योगनिद्रासमारूढं शेषपर्यंकशायिनम्। नारायणं महात्मानं ब्रह्मांडकमलोद्भवम्॥७॥
तमसा कालरुद्राख्यं रजसा कनकांडजम्। सत्त्वेन सर्वगं विष्णुं सर्वदेवनमस्कृतम्॥८॥
अर्चयामाम सततं वाङ्मनःकायकर्मभिः। माल्यदानादिकं सर्वं स्वयमेवमचीकरत्॥९॥
गंधादिपेषणं चैव धूपद्रव्यादिकं तथा। भूमेरालेपनादीनि हविषां पचनं तथा॥१०॥

---

पांचवां अध्याय

# श्रीमती की कथा

ऋषिगण बोले

इदवाकु वंशीय राजा अम्बरीष पृथ्वी पर राज्य करते थे। वह वासुदेव के समर्पित भक्त थे।।१।। वह सदा विष्णु की आज्ञा का अनुसरण करते थे। हे महा बुद्धिमान सूत जी! हम लोगों ने उनके विषय में संक्षेप में सुना है किन्तु विस्तार से अब आप हम लोगों को बताइए। जगत् में ऐसा सुना जाता है कि विष्णु का चक्र शत्रु, रोग और भय आदि को नित्य दूर करता है। धार्मिक राजा अम्बरीष के सब चरित को आप कहिए। हे सूत! हम लोग उनकी महानता, उनकी योग्यता और उत्तम भक्ति को सुनना चाहते हैं। आप इसको सुनाइए।।२-४।।

सूत बोले

हे श्रेष्ठ मुनियों! उस बुद्धिमान राजा अम्बरीष के सब पापों को हरने वाले चरित और माहात्म्य को सुनिए। त्रिशंकु की प्यारी पत्नी अम्बरीष की माता सब उत्तम लक्षणों से युक्त सदा शुद्धता से समन्वित थी।।५।। उसका नाम पद्मावती था। वह योग निद्रा में विराजमान तमस् से काल रुद्र और रजस् से हिरण्य अण्ड से उत्पन्न सब देवताओं द्वारा नमस्कृत, सत्त्व से सर्वव्यापी भगवान विष्णु की वाणी, मन, शरीर और कर्म से पूजा करती थी। वह स्वयं माला गन्ध आदि पेषण, धूप, द्रव्य आदि, भूमि का लेपन होम, आदि स्वयं करती थी। इन सब कार्यों

तत्कौतुकसमाविष्टा स्वयमेव चकार सा। शुभा पद्मावती नित्यं वाचा नारायणेति वै॥११॥
अनंतेत्येव सा नित्यं भाषमाणा पतिव्रता। दशवर्षसहस्राणि तत्परेणांतरात्मना॥१२॥
अर्चयामास गोविंदं गंधपुष्पादिभिः शुचिः। विष्णुभक्तान्महाभागान् सर्वपापविवर्जितान्॥१३॥
दानमानार्चनैर्नित्यं धनरत्नैरतोषयत्। ततः कदाचित्सा देवी द्वादशीं समुपोष्य वै॥१४॥
हरेरग्रे महाभागा सुष्वाप पतिना सह। तत्र नारायणो देवस्तामाह पुरुषोत्तमः॥१५॥
किमिच्छसि वरं भद्रे मत्तस्त्वं ब्रूहि भामिनि। सा दृष्ट्वा तु वरं वव्रे पुत्रो मे वैष्णवो भवेत्॥१६॥
सार्वभौमो महातेजाः स्वकर्मनिरतः शुचिः। तथेत्युक्त्वा ददौ तस्यै फलमेकं जनार्दनः॥१७॥
सा प्रबुद्धा फलं दृष्ट्वा भर्त्रे सर्वं न्यवेदयत्। भक्षयामास संहृष्टा फलं तद्गमानसा॥१८॥
ततः कालेन सा देवी पुत्रं कुलविवर्धनम्। असूत सा सदाचारं वासुदेवपरायणम्॥१९॥
शुभलक्षणसंपन्नं चक्रांकिततनूरुहम्। जातं दृष्ट्वा पिता पुत्रं क्रियाः सर्वाश्चकार वै॥२०॥
अंबरीप इति ख्यातो लोके समभवत्प्रभुः। पितर्युपरते श्रीमानभिषिक्तो महामुनिः॥२१॥
मंत्रिष्वाधाय राज्यं च तप उग्रं चकार सः। संवत्सरसहस्रं वै जपन्नारायणं प्रभुम्॥२२॥
हृत्पुंडरीकमध्यस्थं सूर्यमंडलमध्यतः। शंखचक्रगदापद्मधारयंतं चतुर्भुजम्॥२३॥
शुद्धजांबूनदनिभं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्। सर्वाभरणसंयुक्तं पीतांबरधरं प्रभुम्॥२४॥

---

के करने में वह उत्साह और इच्छा से भरी रहती थी। वह शुभा पतिव्रता पद्मावती नित्य अपनी जिह्वा से सदा नारायण, अनन्त आदि उच्चारण करती रहती थी। वह शुद्ध अन्तरात्मा से विष्णु को समर्पित थी। उसने दस हजार वर्षों तक गन्ध पुष्प आदि से विष्णु की पूजा की।।६-१२।। वह सदा सब पापों से रहित विष्णु भक्त महात्माओं को नित्य दान-मान और पूजा धन और रत्नों को देकर सन्तुष्ट करती थी। इसके बाद वह देवी द्वादशी का व्रत करके पति के साथ सोयी हुई थी। वहाँ पुरुषोत्तम नारायण भगवान ने उससे कहा।।१३-१५।। 'हे भद्र महिला! हे रानी! तुम क्या चाहती हो? मुझसे वर माँगो।' उसने नारायण को देखकर यह वरदान माँगा कि मेरा पुत्र वैष्णव हो। वह सम्राट् हो, तेजस्वी हो, शुद्ध और अपने कर्त्तव्य पालन में सदा लगा रहने वाला हो। विष्णु ने कहा, 'ऐसा ही होगा'। और उसको एक फल दिया।।१६-१७।। जागने पर उसने फल को देखा और प्रत्येक बात को अपने पति से कहा। उसने अपना मन विष्णु की ओर लगाकर प्रसन्न होकर उस फल को खा लिया।।१८।। तब उचित समय आने पर रानी ने अपने कुल को बढ़ाने वाले भगवान विष्णु के भक्त सदाचारी शुभ लक्षणों से युक्त शरीर पर चक्र चिह्नों से अंकित पुत्र को जन्म दिया। पिता ने पुत्र को देखकर उसका यथोचित सब संस्कारों को कराया।।१९-२०।। जगत में वह पुत्र अम्बरीष नाम से प्रसिद्ध हुआ। पिता के मरने के बाद उस श्रीमान् अम्बरीष का अभिषेक किया गया और वह राजा बनाया गया। उसने अपने राज्य को मन्त्रियों की देखभाल में सौंपकर उग्र तपस्या की। वह साधु हो गया। एक हजार वर्ष तक भगवान् नारायण का नाम जपते हुए उग्र तपस्या की।।२१-२२।। उसने हृदय कमल के मध्य में स्थित, सूर्य मण्डल के मध्य से आगत शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये चार भुजा वाले शुद्ध सोने की तरह चमकने वाले, ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक, सब आभरणों से संयुक्त

श्रीवत्सवक्षसं देवं पुरुषं पुरुषोत्तमम्। ततो गरुडमारुह्य सर्वदेवैरभिष्टुतः॥२५॥
आजगाम स विश्वात्मा सर्वलोकनमस्कृतः। ऐरावतमिवाचिंत्यं कृत्वा वै गरुडं हरिः॥२६॥
स्वयं शक्र इवासीनस्तमाह नृपसत्तमम्। इंद्रोऽहमस्मि भद्रं ते किं ददामि वरं च ते॥२७॥
सर्वलोकेश्वरोऽहं त्वां रक्षितुं समुपागतः॥

अंबरीष उवाच

नाहं त्वाममिसंधाय तप आस्थितवानिह॥२८॥
त्वया दत्तं च नेष्यामि गच्छ शक्र यथासुखम्। मम नारायणो नाथस्तं नमामि जगत्पतिम्॥२९॥
गच्छेंद्र माकृथास्त्वत्र मम बुद्धिविलोपनम्। ततः प्रहस्य भगवान् स्वरूपमकरोद्धरिः॥३०॥
शार्ङ्गचक्रगदापाणिः खड्गहस्तो जनार्दनः। गरुडोपरि सर्वात्मा नीलाचल इवापरः॥३१॥
देवगंधर्वसंघैश्च स्तूयमानः समंततः। प्रणम्य स च संतुष्टस्तुष्टाव गरुडध्वजम्॥३२॥
प्रसीद लोकनाथेश मम नाथ जनार्दन। कृष्ण विष्णो जगन्नाथ सर्वलोकनमस्कृत॥३३॥
त्वमादिस्त्वमनादिस्त्वमनंतः पुरुषः प्रभुः। अप्रमेयो विभुर्विष्णुर्गोविंदः कमलेक्षणः॥३४॥
महेश्वरांगजो मध्ये पुष्करः खगमः खगः। कव्यवाहः कपाली त्वं हव्यवाहः प्रभंजनः॥३५॥

---

पीताम्बरधारी, छाती पर श्री वस्त्र चिह्न से युक्त पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु का ध्यान किया। उसके बाद विश्वात्मा, देवताओं द्वारा नमस्कृत सब लोकों से पूजित अप्रतिम ऐरावत की पीठ पर इन्द्र की तरह बैठे हुए भगवान् विष्णु स्वयं वहाँ इन्द्र के वेष में आये और श्रेष्ठ राजा अम्बरीष से कहा।।२३-२६।।

"तुम्हारा कल्याण हो, मैं इन्द्र हूँ। मैं तुम्हें क्या वरदान दूँ? मैं त्रिलोक का स्वामी हूँ। मैं तुम्हारी सहायता के लिए आया हूँ।"

**अम्बरीष बोले**

"मैंने तपस्या करते हुए आपका ध्यान नहीं किया। आपके द्वारा दी गयी किसी वस्तु की मैं कामना नहीं करता हूँ। हे इन्द्र! आप आराम से वापस चले जायें। मेरे स्वामी तो नारायण हैं। मैं उस विश्वात्मा के सामने नतमस्तक हूँ। मेरी बुद्धि को नष्ट करने वाली किसी वस्तु को न दो" इसके बाद भगवान् विष्णु ने हँसकर अपना विष्णुरूप धारण कर लिया।।२७-३०।।

शंख, चक्र, गदा और खड्ग हाथ में लिए गरुड़ पर सवार सब की आत्मा, दूसरे नील पर्वत के तुल्य, देवता गन्धर्व के संघों द्वारा स्तुति किये जाते हुए भगवान विष्णु को प्रणाम करके राजा अम्बरीष सन्तुष्ट हुये और गरुड़ध्वज भगवान् विष्णु की स्तुति की।।३१-३२।।

हे लोकनाथ, मेरे स्वामी, जनार्दन, हे कृष्ण, हे विष्णु, हे जगन्नाथ, हे सब लोकों में नमस्कृत! तुम आदि हो, तुम अनादि हो, तुम अनन्त हो। तुम पुरुष हो। तुम प्रभु हो। तुम अतुलनीय हो। तुम व्यापक हो। तुम विष्णु हो। तुम गोविन्द हो। तुम कमलनयन हो। तुम महेश्वर के शरीर से उत्पन्न हो। आप की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ है। तुम आकाश में व्याप्त हो। तुम हृदय वाहक हो। तुम वायु हो। तुम पवित्र कृत्यों में आनन्दित होने वाले

आदिदेवः क्रियानंदः परमात्मात्मनि स्थितः।
त्वां प्रपन्नोस्मि गोविंद जय देवकिनंदन। जय देव जगन्नाथ पाहि मां पुष्करेक्षण॥३६॥
नान्या गतिस्त्वदन्या मे त्वमेव शरणं मम॥

सूत उवाच

तमाह भगवान्विष्णुः किं ते हृदि चिकीर्षितम्॥३७॥
तत्सर्वं ते प्रदास्यामि भक्तोसि मम सुव्रत। भक्तिप्रियोऽहं सततं तस्माद्दातुमिहागतः॥३८॥

अंबरीष उवाच

लोकनाथ परानंद नित्यं मे वर्तते मतिः। वासुदेवपरो नित्यं वाङ्मनःकायकर्मभिः॥३९॥
यथा त्वं देवदेवस्य भवस्य परमात्मनः। तथा भवाम्यहं विष्णो तव देव जनार्दन॥४०॥
पालयिष्यामि पृथिवीं कृत्वा वै वैष्णवं जगत्। यज्ञहोमार्चनैश्चैव तर्पयामि सुरोत्तमान्॥४१॥
वैष्णवान्पालयिष्यामि निहनिष्यामि शात्रवान्। लोकतापभये भीत इति मे धीयते मतिः॥४२॥

श्रीभगवानुवाच

एवमस्तु यथेच्छं वै चक्रमेतत्सुदर्शनम्। पुरा रुद्रप्रसादेन लब्धं वै दुर्लभं मया॥४३॥
ऋषिशापादिकं दुःखं शत्रुरोगादिकं तथा। निहनिष्यति ते नित्यमित्युक्त्वांतरधीयत॥४४॥

---

हो। तुम आत्मा स्थित परमात्मा हो। तुम गोविन्द हो। हे देवकी नन्दन! हे जगन्नाथ! हे कमलनयन! आप की जय हो। मुझ पर प्रसन्न हो जाओ। मैं तुम्हारी शरण में हूँ। मेरी रक्षा करो। आपसे अन्य मेरी कोई गति नहीं है। तुम्हीं मेरी शरण हो।।३३-३८।।

**सूत बोले**

तब भगवान् विष्णु ने राजा अम्बरीष से कहा "तुम्हारे हृदय में क्या करने की इच्छा है। हे सुव्रत! तुम मेरे भक्त हो। वह सब मैं तुमको दूँगा। मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूँ। तुम मेरे भक्त हो। मैं भक्तिप्रिय हूँ। अतः मैं यहाँ जो कुछ तुम चाहो उसको देने के लिये आया हूँ।"

**अम्बरीष बोले**

"हे लोकनाथ! हे परानन्द! मेरे मन में नित्य सतत यह विचार है कि तुम महान् आत्मा देवेश शिव को समर्पित हो, उसी प्रकार मैं भी सदा वाणी, शरीर और कर्म से तुमको समर्पित हो जाऊँ। हे भगवान! मैं जगत को आप का भक्त वैष्णव बना-बनाकर पृथ्वी का पालन करूँगा। यज्ञ होम और अर्चना आदि से उत्तम देवताओं को तृप्त करूँगा। वैष्णवों का पालन करूँगा और शत्रुओं का नाश करूँगा। मैं सांसारिक दुष्कर्मों के ताप से भयभीत हूँ। अतः मेरा मन आप में ही निवास करता है"।।३९-४२।।

**भगवान् विष्णु बोले**

जैसा तुम चाहते हो वैसा ही होगा। पहिले रुद्र की कृपा से यह दुर्लभ सुदर्शन चक्र मैंने प्राप्त किया है। यह निरन्तर ऋषिओं के श्राप आदि दुःख, शत्रु और रोग आदि को नाश करेगा। ऐसा कहकर भगवान् विष्णु अन्तर्धान हो गये।।४३-४४।।

सूत उवाच

ततः प्रणम्य मुदितो राजा नारायणं प्रभुम्। प्रविश्य नगरीं रम्यामयोध्यां पर्यपालयत्॥४५॥
ब्राह्मणादींश्च वर्णांश्च स्वस्वकर्मण्ययोजत्। नारायणपरो नित्यं विष्णुभक्तानकल्मषान्॥४६॥
पालयामास हृष्टात्मा विशेषेण जनाधिपः। अश्वमेधशतैरिष्ट्वा वाजपेयशतेन च॥४७॥
पालयामास पृथिवीं सागरावरणामिमाम्। गृहेगृहे हरिस्तस्थौ वेदघोषो गृहेगृहे॥४८॥
नामघोषो हरेश्चैव यज्ञघोषस्तथैव च। अभवन्नृपशार्दूले तस्मिन् राज्यं प्रशासति॥४९॥
नासस्या नातृणा भूमिर्न दुर्भिक्षादिभिर्युता। रागहीनाः प्रजा नित्यं सर्वोपद्रववर्जिताः॥५०॥
अंबरीषो महातेजाः पालयामास मेदिनीम्। तस्यैवंवर्तमानस्य कन्या कमललोचना॥५१॥
श्रीमती नाम विख्याता सर्वलक्षणसंयुता। प्रदानसमयं प्राप्ता देवमायेव शोभना॥५२॥
तस्मिन्काले मुनिः श्रीमान्नारदोऽभ्यागतश्च वै। अंबरीषस्य राज्ञो वै पर्वतश्च महामतिः॥५३॥
तावुभवागतौ दृष्ट्वा प्रणिपत्य यथाविधि। अंबरीषो महातेजाः पूजयामास तावृषी॥५४॥
कन्यां तां रममाणां वै मेघमध्ये शतह्रदाम्। प्राह तां प्रेक्ष्य भगवान्नारदः सस्मितस्तदा॥५५॥
केयं राजन्महाभागा कन्या सुरसुतोपमा। ब्रूहि धर्मभृतां श्रेष्ठ सर्वलक्षणशोभिता॥५६॥

---

सूत बोले

तब राजा ने उस दिशा को प्रणाम किया जिधर विष्णु भगवान् गये थे। उसके बाद राजा बहुत प्रसन्न हो अयोध्या नगरी में लौट कर वहाँ पर प्रजा का पालन करने लगे। उन्होंने ब्राह्मणों और अन्य जातियों को उनके अपने-अपने कर्त्तव्यों में लगाया। राजा विष्णु को समर्पित थे। उसने प्रसन्न हृदय होकर पाप रहित वैष्णवों की रक्षा की। उनका पालन किया। उसने सौ अश्वमेध यज्ञ और सौ वाजपेय यज्ञों को करके सागरों से घिरी पृथ्वी का पालन किया। घर-घर में विष्णु स्थापित हुए। प्रत्येक घर में वेद मन्त्रों की ध्वनि गूँजने लगी। भगवन्नाम का घोष और यज्ञ सम्पन्न हुये। राजाओं में सिंह के समान राजा अम्बरीष के शासनकाल में भूमि परती और ऊसर नहीं थी और न तो अकाल आदि से युक्त थी। प्रजा राग-द्वेष से रहित और सब उपद्रवों से वर्जित थी।।४५-५०।। महातेजस्वी राजा अम्बरीष ने इस प्रकार पृथ्वी का पालन किया। ऐसे उस राजा के एक कमल के समान नेत्र वाली सब लक्षणों से युक्त योगमाया के समान सुन्दर कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम श्रीमती रखा गया। धीरे-धीरे बढ़कर वह विवाह के योग्य आयु को प्राप्त हुई।।५१-५२।। उसी समय श्रीमान नारद और महा बुद्धिमान् पर्वत नामक दो ऋषि अम्बरीष के राजभवन में पधारे।।५३।। उन दोनों को आया हुआ देखकर महा तेजस्वी राजा अम्बरीष ने प्रणाम करके उनकी पूजा की।।५४।। बादलों के बीच में बिजली के समान खेलती हुई उस कन्या को देखकर भगवान् नारद ने मुस्कराते हुये पूछा, "हे राजन्! देव कन्याओं से उपमा योग्य यह कौन है? हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ! इस सब लक्षणों से शोभित कन्या के विषय में मुझको बतलाइए"।।५५-५६।।

राजोवाच

दुहितेयं मम विभो श्रीमती नाम नामतः। प्रदानसमयं प्राप्ता वरमन्वेषते शुभा॥५७॥
इत्युक्तो मुनिशार्दूलस्तामैच्छन्नारदो द्विजाः। पर्वतोपि मुनिस्तां वै चकमे मुनिसत्तमाः॥५८॥
अनुज्ञाप्य च राजानं नारदो वाक्यमब्रवीत्। रहस्याहूय धर्मात्मा मम देहि सुतामिमाम्॥५९॥
पर्वतो हि तथा प्राह राजानं रहसि प्रभुः। तावुभौ सह धर्मात्मा प्रणिपत्य भयार्दितः॥६०॥
उभौ भवंतौ कन्यां मे प्रार्थमानौ कथं त्वहम्। करिष्यामि महाप्राज्ञ शृणु नारद मे वचः॥६१॥
त्वं च पर्वत मे वाक्यं शृणु वक्ष्यामि यत्प्रभो। कन्येयं युवयोरेकं वरयिष्यति चेच्छुभा॥६२॥
तस्मै कन्यां प्रयच्छामि नान्यथा शक्तिरस्ति मे। तथेत्युक्त्वा ततो भूयः श्वो यास्याव इति स्म ह॥६३॥
इत्युक्त्वा मुनिशार्दूलौ जग्मतुः प्रीतिमानसौ। वासुदेवपरौ नित्यमुभौ ज्ञानविदांवरौ॥६४॥
विष्णुलोकं ततो गत्वा नारदो मुनिसत्तमः। प्रणिपत्य हृषीकेशं वाक्यमेतदुवाच ह॥६५॥
श्रोतव्यमस्ति भगवन्नाथ नारायण प्रभो। रहसि त्वां प्रवक्ष्यामि नमस्ते भुवनेश्वर॥६६॥
ततः प्रहस्य गोविंदः सर्वानुत्सार्य तं मुनिम्। ब्रूहीत्याह च विश्वात्मा मुनिराह च केशवम्॥६७॥
त्वदीयो नृपतिः श्रीमानंबरीषो महीपतिः। तस्य कन्या विशालाक्षी श्रीमती नाम नामतः॥६८॥
परिणेतुमनास्तत्र गतोऽस्मि वचनं शृणु। पर्वतोऽयं मुनिः श्रीमांस्तवभृत्य स्तमोनिधिः॥६९॥
तामैच्छत्सोपि भगवन्नावामाह जनाधिपः। अंबरीषो महातेजाः कन्येयं युवयोर्वरम्॥७०॥

---

राजा बोले

"हे प्रभो! यह मेरी कन्या श्रीमती है। यह विवाह के आयु को प्राप्त हो गयी है। मैं इसके लिए एक वर की खोज में हूँ।" ऐसा कहने पर नारद मुनि ने उस कन्या को लेने के लिए इच्छा प्रकट की। मुनिवर पर्वत ने भी उसको पाने की इच्छा प्रकट की।।५७-५८।। धर्मात्मा नारद ने राजा को एकान्त में बुलाकर उनसे यह कहा, "इस कन्या को मुझको दे दो।" पर्वत ऋषि ने भी एकान्त में राजा से वैसा ही निवेदन किया। तब धर्मिक राजा भयभीत हो गये। उन दोनों को प्रणाम करके राजा ने कहा, "आप दोनों मेरी कन्या को ग्रहण करना चाहते हैं। मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ? हे महाबुद्धिमान नारद! और हे प्रभु पर्वत! यह कन्या तुम दोनों में से एक को वरण करेगी। मैं उसको यह कन्या दूँगा अन्यथा मैं अशक्त हूँ।" "ऐसा कहने पर उन दोनों ने कहा, "यह ऐसा ही होगा। हम लोग कल फिर आयेंगे।" पर्वत ने भी कहा। ऐसा कहकर दोनों ऋषिवर—जो कि विष्णु के भक्त थे और ज्ञानियों में श्रेष्ठ थे—प्रसन्न हो गये।।५९-६४।। विष्णु लोक में जाकर ऋषियों में श्रेष्ठ नारद ने विष्णु को प्रणाम करके यह कहा।।६५।। "हे जगन्नाथ! नारायण आपसे कुछ कहना है। एकान्त में कहूँगा। हे भुवनेश्वर! पर्वत का मुख बानर के मुँह की तरह लगे। ऐसा आप कर दें।" तब विश्वात्मा भगवान् विष्णु ने मुस्कराते हुए कहा। हे ऋषि कहो! "तब ऋषि ने उनसे कहा। श्रीमान अम्बरीष राजा तुम्हारे भक्त हैं। विशाल नेत्रों वाली उनकी कन्या का नाम श्रीमती है। उससे विवाह करने की इच्छा से मैं उनके पास गया था। अब मेरी बात सुनो। पर्वत ऋषि भी आपके भक्त हैं। वह भी इसको चाहते हैं। महातेजस्वी राजा अम्बरीष ने कहा, "यह कन्या तुम दोनों में जिसको सुन्दर मानकर चुनेगी मैं उसी को यह कन्या दूँगा।" हम दोनों ने राजा से कहा, "ऐसा ही

लावण्ययुक्तं वृणुयाद्यदि तस्मै ददाम्यहम्। इत्याहावां नृपस्तत्र तथेत्युक्त्वाहमागतः॥७१॥
आगमिष्यामि ते राजन् श्वः प्रभाते गृहं त्विति। आगतोहं जगन्नाथ कर्तुमर्हसि मे प्रियम्॥७२॥
वानराननवद्भाति पर्वतस्य मुखं यथा। तथ कुरु जगन्नाथ मम चेदिच्छसि प्रियम्॥७३॥
तथेत्युक्त्वा स गोविंदः प्रहस्य मधुसूदनः। त्वयोक्तं च करिष्यामि गच्छ सौम्य यथागतम्॥७४॥
एवमुक्त्वा मुनिर्हृष्टः प्रणिपत्य जनार्दनम्। मन्यमानः कृतात्मानं तथाऽयोध्यां जगाम सः॥७५॥
गते मुनिवरे तस्मिन्पर्वतोऽपि महामुनिः। प्रणम्य माधवं हृष्टो रहस्येनमुवाच ह॥७६॥
वृत्तं तस्य निवेद्याग्रे नारदस्य जगत्पतेः। गोलांगूलमुखं यद्वन्मुखं भाति तथा कुरु॥७७॥
तच्छ्रुत्वा भगवान्विष्णुस्त्वयोक्तं च करोमि वै। गच्छ शीघ्रमयोध्यां वै मावेदीर्नारदस्य वै॥७८॥
त्वया मे संविदं तत्र तथेत्युक्त्वा जगाम सः। ततो राजा समाज्ञाय प्राप्तौ मुनिवरौ तदा॥७९॥
मांगल्यैर्विविधैः सर्वामयोध्यां ध्वजमालिनीम्। मंडयामास पुष्पैश्च लाजैश्चैव समंततः॥८०॥
अंबुसिक्तगृहद्वारां सिक्तापणमहापथाम्। दिव्यगंधरसोपेतां धूपितां दिव्यधूपकैः॥८१॥
कृत्वा च नगरीं राजा मंडयामास तां सभाम्। दिव्यैर्गंधैस्तथा धूपै रत्नैश्च विविधैस्तथा॥८२॥
अलंकृतांमणिस्तंभैर्नानामाल्योपशोभिताम्। परार्ध्यास्तरणोपेतैर्दिव्यैर्भद्रासनैर्वृताम्॥८३॥
कृत्वा नृपेंद्रस्तां कन्यां ह्यादाय प्रविवेश ह। सर्वाभरणसंपन्नां श्रीरिवायतलोचनाम्॥८४॥
करसंमितमध्यांगीं पंचस्निग्धां शुभाननाम्। स्त्रीभिः परिवृतां दिव्यां श्रीमतीं संश्रितां तदा॥८५॥

---

होगा। उसके बाद मैं यहाँ आया हूँ। कल सबेरे मैं यहाँ फिर आऊँगा। हे जगन्नाथ! जो मुझको अभीष्ट है, प्रिय है, वह आप करें।'' नारद के ऐसा कहने पर गोविन्द मधुसूदन भगवान् विष्णु ने हँसकर कहा, ''तुम्हारा कहना मैं करूँगा। हे सौम्य! अब वापस जाओ।'' विष्णु के ऐसा कहने पर नारद प्रसन्न होकर विष्णु को प्रणाम करके अपने को सफल मानते हुये अयोध्या चले गये।।६६-७५।। नारद मुनि के जाने के बाद महामुनि पर्वत भी आये।।७६।। उन्होंने भगवान् विष्णु को प्रणाम करके प्रसन्न होकर एकान्त में उनसे कान में कहा। ''हे विश्व के आत्मा! कृपया नारद का मुँह ऐसा बना दें कि काले मुँह वाले लंगूर की तरह दिखाई दे।।७७।।'' यह सुनने के बाद भगवान् विष्णु ने कहा। ''जैसी तुम्हारी लालसा है मैं वैसा ही करूँगा। जल्दी अयोध्या चले जाओ! तुम्हारे साथ जो मेरी बात हुई है उसको नारद को मत बताना। ऐसा ही होगा।'' यह कहकर पर्वत मुनि भी चले गये। यह जानकर कि दोनों महामुनि आ गये हैं। राजा ने अयोध्या को ध्वजाओं, मालाओं, फूलों और लाजाओं से सजवा दिया।।७८-८०।। घरों के द्वारों पर जल का छिड़काव किया गया। बाजारों और राजमार्गों (सड़कों) पर भलीभाँति जल का छिड़काव किया गया। अयोध्या नगरी को दिव्य धूप और गन्ध रसों से मण्डित कर दिया गया।।८१।। नगरी को सजाने के बाद राजा ने सभागार को दिव्य गन्धों, धूपों और विविध रत्नों से अलंकृत करवाया।।८२।। मणियों के खम्भों, नाना प्रकार के फूल मालाओं से शोभित, दिव्य आसनों (सीटों) से सुसज्जित कराया।।८३।। यह सब प्रबन्ध और व्यवस्था करने के बाद सब आभूषणों से भूषित अपने विशाल सुन्दर नेत्रों से लक्ष्मी के समान दिखने वाली, अपनी दिव्य रूपवती, हाथ से नापने योग्य कमरवाली, पाँच अंगों से मनोहर, सुन्दर मुखवाली, सहेलियों से घिरी हुई कन्या को साथ लेकर राजा ने सभागार में प्रवेश

सभा च सा भूपपतेः समृद्धा मणिप्रवेकोत्तमरत्नचित्रा।
न्यस्तासना माल्यवती सुबद्धा तामाययुस्ते नरराजवर्गाः॥८६॥
अथापरो ब्रह्मवरात्मजो हि त्रैविद्यविद्यो भगवान्महात्मा।
सपर्वतो ब्रह्मविदां वरिष्ठो महामुनिर्नारद आजगाम॥८७॥
तावागतौ समीक्ष्याथ राजा संभ्रांतमानसः। दिव्यमासनमादाय पूजयामास तावुभौ॥८८॥
उभौ देवर्षिसिद्धौ तावुभौ ज्ञानविदांवरौ। समासीनौ महात्मानौ कन्यार्थं मुनिसत्तमौ॥८९॥
तावुभौ प्रणिपत्याग्रे कन्यां तां श्रीमतीं शुभाम्। सुतां कमलपत्राक्षीं प्राह राजा यशस्विनीम्॥९०॥
अनयोर्यं वरं भद्रे मनसा त्वमिहेच्छसि। तस्मै मालामिमां देहि प्रणिपत्य यथाविधि॥९१॥
एवमुक्ता तु सा कन्या स्त्रीभिः परिवृता तदा। मालां हिरण्मयीं दिव्यामादाय शुभलोचना॥९२॥
यत्रासीनौ महात्मानौ तत्रागम्य स्थिता तदा। वीक्षमाणा मुनिश्रेष्ठौ नारदं पर्वतं तथा॥९३॥
शाखामृगाननं दृष्ट्वा नारदं पर्वतं तथा। गोलांगूलमुखं कन्या किंचित् त्राससमन्विता॥९४॥
संभ्रांतमानसा तत्र प्रवातकदली यथा।
तस्थौ तामाह राजासौ वत्से किं त्वं करिष्यसि॥९५॥
अनयोरेकमुद्दिश्य देहि मालामिमां शुभे। सा प्राह पितरं त्रस्ता इमौ तौ नरवानरौ॥९६॥
मुनिश्रेष्ठं न पश्यामि नारदं पर्वतं तथा। अनयोर्मध्यतस्त्वेकमूनषोडशवार्षिकम्॥९७॥
सर्वाभरणसंपन्नमतसीपुष्पसंनिभम् । दीर्घबाहुं विशालाक्षं तुंगोरस्थलमुत्तमम्॥९८॥

---

किया।।८४-८५।। राजा का सभागार विभिन्न प्रकार के रत्नों और हीरे जवाहरात से समृद्ध था। माला फूल और झालरें खूबसूरती से बँधे थे। राजा लोग उस सभागार में पधारे।।८६।। ब्रह्मा के सौम्य पुत्र, महात्मा, तीन विद्याओं के ज्ञाता, ब्रह्मर्षियों में वरिष्ठ महामुनि नारद, पर्वत मुनि के साथ सभा में पधारे।।८७।। यह देखकर दोनों ऋषि आ गये हैं, राजा मन में घबरा गये। उन्होंने मुनियों को दिव्य आसन देकर बैठाया। उनकी पूजा की। कन्या के इच्छुक दोनों श्रेष्ठ ज्ञानी मुनि आसनों पर विराजमान हुये।।८८-९०।। तब राजा ने अपनी पुत्री से कहा, "हे पुत्री! इन दोनों मुनियों में से जिसको अपना वर मन से चुनो उसको उचित ढंग से प्रणाम करके यह माला दे दो"।।९१।। इस तरह कहे जाने पर स्त्रियों से घिरी हुई सुन्दर नेत्रों वाली वह राजा कन्या सोने की उस दिव्य माला को लेकर जहाँ दोनों महात्मा मुनि बैठे थे वहाँ आयी और खड़ी हो गयी। नारद और पर्वत मुनियों की ओर देखते हुए उसने उनके चेहरे को वानरों की तरह देखा। लंगूरों के समान चेहरे को देखकर कन्या कुछ डर गयी। मन से घबराकर वह आँधी में केले के पेड़ की तरह काँपने लगी। तब राजा ने उससे कहा "हे पुत्री! तुम क्या करोगी? हे शुभे! इन दोनों में किसी एक को यह माला दे दो"।।९२-९६।।

डरी हुई कन्या ने अपने पिता से कहा, "यह दोनों तो नर वानर हैं। नारद या पर्वत श्रेष्ठ मुनियों को मैं नहीं देखती हूँ लेकिन इनके दोनों के बीच में मैं एक सोलह वर्ष से कम, सुन्दर युवक को देखती हूँ। वह सब आभूषणों से भूषित है। वह अलसी के फूल के समान है। उसकी लम्बी भुजाएँ हैं। बड़ी आँखें हैं। चौड़ी छाती है। दो झुकी

रेखांकितकटिग्रीवं रक्तांतायतलोचनम्। नम्रचापानुकरणपटुभ्रूयुगशोभितम्॥९९॥
विभक्तत्रिवलीव्यक्तं नाभिव्यक्तशुभोदरम्।
हिरण्यांबरसंवीतं तुंगरत्ननखं शुभम्।
पद्माकारकरं त्वेनं पद्मास्यं पद्मलोचनम्॥१००॥
सुनासं पद्महृदयं पद्मनाभं श्रिया वृतम्। दंतपंक्तिभिरत्यर्थं कुंदकुड्मलसन्निभैः॥१०१॥
हसंतं मां समालोक्य दक्षिणं च प्रसार्य वै। पाणिं स्थितममुं तत्र पश्यामि शुभमूर्धजम्॥१०२॥
संभ्रांतमानसां तत्र वेपतीं कदलीमिव।
स्थितां तामाह राजासौ वत्से किं त्वं करिष्यसि॥१०३॥
एवमुक्ते मुनिः प्राह नारदः संशयं गतः।
कियन्तो बाहवस्तस्य कन्ये ब्रूहि यथातथम्॥१०४॥
बाहुद्वयं च पश्यामीत्याह कन्या शुचिस्मिता। प्राह तां पर्वतस्तत्र तस्य वक्षःस्थले शुभे॥१०५॥
किं पश्यसि च मे ब्रूहि करे किं वास्यपश्यसि।कन्या तमाह मालां वै पंचरूपामनुत्तमाम्॥१०६॥
वक्षःस्थलेऽस्य पश्यामि करे कार्मुकसायकान्। एवमुक्तौ मुनिश्रेष्ठौ परस्परमनुत्तमौ॥१०७॥
मनसा चिंतयंतौ तौ मायेयं कस्य चिद्भवेत्। मायावी तस्करो नूनं स्वयमेव जनार्दनः॥१०८॥
आगतो न यथा कुर्यात्कथमस्मन्मुखं त्विदम्। गोलागूलत्वमित्येवं चिंतयामास नारदः॥१०९॥
पर्वतोपि यथान्यायं वानरत्वं कथं मम। प्राप्तमित्येव मनसा चिंतामापेदिवांस्तथा॥११०॥

---

हुई धनुष के समान भौहें हैं। तीन भागों में बँटी हुई (त्रिबली) नाभि में से युक्त सुन्दर पेट है। वह सुनहरे रंग का वस्त्र धारण किये हुये है। उनके नाखून रत्नों की तरह ऊँचे हैं। कमल के आकार का उनका हाथ है। कमल के समान उनके मुख और नेत्र हैं। सुन्दर नाक है। कमल के समान हृदय है। कमल के समान श्री से युक्त उनकी नाभि है। कुंद की कली के समान दाँतों की पंक्तियाँ हैं। अच्छे सुन्दर बाल सिर पर हैं। वह मेरी ओर अपने दाहिने हाथ को फैलाकर मुझको देखकर मुस्करा रहे हैं। उनको मैं देखती हूँ।" तब राजा ने उससे कहा जो कि केले के पेड़ के तरह घबरायी हुई काँप रही थी। "हे पुत्री! तुम क्या करोगी?"।।९७-१०३।। जब ऐसा कहा तो नारद को सन्देह हुआ। उन्होंने पूछा, "हे कन्या उनके कितने हाथ हैं? सही-सही मुझको बताओ"।।१०४।। पवित्रता से मुस्कराती हुई कन्या ने कहा। "मैं दो बाहुओं को देखती हूँ।" तब पर्वत ने उससे पूछा, "हे शुभे! उनके वक्षस्थल पर क्या देखती हो? उनके हाथों में तुम क्या देखती हो?" तब उस राज कन्या ने पर्वत से कहा "उनकी छाती पर पाँच पर्त लपेटी हुई अनुपम माला को देखती हूँ। हाथ में धनुष और बाण को देखती हूँ।" इस तरह उत्तर पाने पर दोनों ऋषिवर एक-दूसरे की ओर देखने लगे। उन्होंने अपने मन में सोचा। यह किसी की माया है। निश्चय रूप से विष्णु भगवान् स्वयं मायावी और तस्कर हैं। एक नव आगन्तुक हमारे चेहरों को लंगूर की तरह कैसे बना सकता है?" नारद ने ऐसा सोचा। पर्वत ने भी इस प्रकार मानसिक रूप से सोचा कि मेरा चेहरा वानर की तरह कैसे हुआ?"।।१०५-११०।। तब राजा ने नारद और पर्वत को प्रणाम करके कहा, "आप दोनों

ततो राजा प्रणम्यासौ नारदं पर्वतं तथा।
भवद्भ्यां किमिदं तत्र कृतं बुद्धिविमोहजम्॥१११॥
स्वस्थौ भवंतौ तिष्ठेतां यथा कन्यार्थमुद्यतौ। एवमुक्तौ मुनिश्रेष्ठौ नृपमूचतुरुल्बणौ॥११२॥
त्वमेव मोहं कुरुषे नावामिह कथंचन। आवयोरेकमेषा ते वरयत्वेव मा चिरम्॥११३॥
ततः सा कन्यका भूयः प्रणिपत्येष्टदेवताम्। मायामादाय तिष्ठंतं तयोर्मध्ये समाहितम्॥११४॥
सर्वाभरणसंयुक्तमतसीपुष्पसन्निभम् । दीर्घबाहुं सुपुष्टांगं कर्णांतायतलोचनम्॥११५॥
पूर्ववत्पुरुषं दृष्ट्वा मालां तस्मै ददौ हि सा। अनंतरं हि सा कन्या न दृष्टा मनुजैः पुनः॥११६॥
ततो नादः समभवत् किमेतदिति विस्मितौ।
तामादाय गतो विष्णुः स्वस्थानं पुरुषोत्तमः॥११७॥
पुरा तदर्थमनिशं तपस्तप्त्वा वरांगना।
श्रीमती सा समुत्पन्ना सा गता च तथा हरिम्॥११८॥
तावुभौ मुनिशार्दूलौ धिक्कृतावतिदुःखितौ। वासुदेवं प्रति तदा जग्मतुर्भवनं हरेः॥११९॥
तावागतौ समीक्ष्याह श्रीमतीं भगवान्हरिः। मुनिश्रेष्ठौ समायातौ गूहस्वात्मानमत्र वै॥१२०॥
तथेत्युक्त्वा च सा देवी प्रहसंती चकार ह। नारदः प्रणिपत्याग्रे प्राह दामोदरं हरिम्॥१२१॥
प्रियं हि कृतवानाद्य मम त्वं पर्वतस्य हि। त्वमेव नूनं गोविंद कन्यां तां हृतवानसि॥१२२॥
विमोह्यावां स्वयं बुद्ध्या प्रतार्य सुरसत्तम।
इत्युक्तः पुरुषो विष्णुः पिधाय श्रोत्रमच्युतः।
पाणिभ्यां प्राह भगवान् भवद्भ्यां किमुदीरितम्॥१२३॥

---

को यह क्या बौद्धिक भ्रम हो गया। आप दोनों शान्तिपूर्वक बैठे रहें जो कन्या का हाथ चाहते हैं।'' राजा द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर महामुनियों ने क्रोधित होकर कहा, ''यह माया तुम्हीं करते हो। हम दोनों किसी प्रकार नहीं। इस कन्या को हम दोनों में से किसी को चुनने दो। इसमें विलम्ब न हो।'' इसके बाद कन्या ने इष्ट देवता को प्रणाम करके उन दोनों के बीच में बैठे हुए सब आभूषणों से युक्त, अलसी के फूल के समान सुन्दर, लम्बी भुजाओं, पुष्ट अंग वाले, कान तक फैले हुए नेत्रों वाले पुरुष को पूर्ववत् देखकर उसने वह माला उनको दे दी। उसके बाद वह राजकन्या किसी भी व्यक्ति द्वारा नहीं देखी गयी।।१११-११६।। उसके बाद वहाँ हो हल्ला होने लगा, ''कि यह क्या हुआ? दोनों मुनि आश्चर्य से चकित हो गये। विष्णु उस कन्या को लेकर विष्णुलोक को चले गये।'' पहले जिसके लिए उसने तपस्या की थी उस श्रीमती ने उनको प्राप्त कर लिया। वह विष्णु के साथ चली गयी। वे दोनों श्रेष्ठ मुनि तिरस्कृत और बेहद दुःखी हुये। दुःखित होकर वे विष्णुलोक को गये।।११७-११९।। उन दोनों को आता हुआ देखकर भगवान विष्णु ने श्रीमती से कहा, ''दोनों महामुनि आ गये हैं। तुम अपने को छिपा लो''।।१२०।। ''ऐसा ही होगा'' कहती हुई मुस्कुराते हुए श्रीमती ने वैसा ही किया। नारद ने विष्णु भगवान् के सामने प्रणाम करके उनसे कहा।।१२१।। ''मेरे और पर्वत के लिए आपने प्रिय कार्य किया है। हे गोविन्द! आप ही ने उस कन्या का अपहरण किया है।।१२२।। हम दोनों को मोह में डालकर आपने

कामवानपि भावोयं मुनिवृत्तिरहो किल। एवमुक्तो मुनिः प्राह वासुदेवं स नारदः॥१२४॥
कर्णमूले मम कथं गोलांगूलमुखं त्विति। कर्णमूले तमाहेदं वानरत्वं कृतं मया॥१२५॥
पर्वतस्य मया विद्वन् गोलांगूलमुखं तव। मया तव कृतं तत्र प्रियार्थं नान्यथा त्विति॥१२६॥
पर्वतोऽपि तथा प्राह तस्याप्येवं जगाद सः। शृण्वतोरुभयोस्तत्र प्राह दामोदरो वचः॥१२७॥
प्रियं भवद्भ्यां कृतवान् सत्येनात्मानमालभे।
नारदः प्राह धर्मात्मा आवयोर्मध्यतः स्थितः॥१२८॥
धनुष्मान्पुरुषः कोत्र तां हृत्वा गतवान्किल।
तच्छ्रुत्वा वासुदेवोऽसौ प्राह तौ मुनिसत्तमौ॥१२९॥
मायाविनो महात्मानो बहवः संति सत्तमाः। तत्र सा श्रीमती नूनमदृष्ट्वा मुनिसत्तमौ॥१३०॥
चक्रपाणिरहं नित्यं चतुर्बाहुरिति स्थितः।
तां तथा नाहमैच्छं वै भवद्भ्यां विदितं हि तत्॥१३१॥
इत्युक्तौ प्रणिपत्यैनमूचतुः प्रीतिमानसौ। कोऽत्र दोषस्तव विभो नारायण जगत्पते॥१३२॥
दौरात्म्यं तन्नृपस्यैव मायां हि कृतवानसौ। इत्युक्त्वा जग्मतुस्तस्मान्मुनी नारदपर्वतौ॥१३३॥
अंबरीषं समासाद्य शापेनैनमयोजयत्। नारदः पर्वतश्चैव यस्मादावामिहागतौ॥१३४॥
आहूय पश्चादन्यस्मै कन्यां त्वं दत्तवानसि।
मायायोगेन तस्मात्त्वां तमो ह्यभिभविष्यति॥१३५॥

---

स्वयं बुद्धि से हमको ठग लिया।" ऐसा कहने पर विष्णु ने अपने हाथों से अपने कानों को ढँककर कहा, "तुम दोनों ने यह क्या कहा?।।१२३।। ओह! क्या यह कामवासना का भाव मुनियों की वृत्ति (आचरण) के अनुकूल है।" ऐसा कहने पर नारद ने विष्णु भगवान् के कान में फुसफुसाते हुए कहा, "मेरा मुँह, चेहरा लंगूर की तरह कैसे हो गया? विष्णु भगवान् ने भी नारद के कान में फुसफुसाते हुए कहा। "हे विद्वान ऋषि! मैंने तुम्हारे मुँह को वानर की तरह और पर्वत के मुख को लंगूर की तरह कर दिया था"।।१२४-१२६।। पर्वत ने भी उसी तरह कहा और विष्णु ने उसी ढंग से उत्तर दिया। तब विष्णु ने दोनों ऋषियों को सुनाते हुए कहा।।१२७।। "वहाँ मैंने तुम दोनों के हित के लिए वैसा किया। मैं यह सत्य कहता हूँ।" तब धर्मात्मा नारद ने कहा, "हम दोनों के बीच में वह धनुर्धारी पुरुष कौन था जो उसको हर कर चला गया?" यह सुनकर भगवान् विष्णु ने उन मुनियों से कहा। "हे मुनियों! मायावी बहुत से महात्मा हैं। मैं सदा चक्र को हाथ में धारण करने वाला चार भुजा वाला हूँ। श्रीमती को वहाँ न देखकर यह निश्चित है कि मैं उसको लेना नहीं चाहता था। वह तुम दोनों को विदित है।" ऐसा कहने पर दोनों मुनि मन से प्रसन्न हो गये। उन्होंने विष्णु को प्रणाम करके कहा, "इस विषय में आपकी क्या गलती है? यह राजा की दुष्टता है कि उसकी आज्ञा से उसको अपहरण कर लिया गया। उसने ही आज्ञा की। यह कहकर नारद और पर्वत ने वह स्थान छोड़ दिया। अम्बरीष के पास पहुँचकर उनको शाप दिया। "हम दोनों को वहाँ बुलाकर तुमने क्यों दूसरे व्यक्ति को कन्या दे दी। इस कारण माया के योग से तुम्हारे ऊपर तम

तेन चात्मानमत्यर्थं यथावत्त्वं न वेत्स्यसि। एवं शापे प्रदत्ते तु तमोराशिरथोत्थितः॥१३६॥
नृपं प्रति ततश्चक्रं विष्णोः प्रादुरभूत् क्षणात्। चक्रवित्रासितं घोरं तावुभौ तम अभ्यगात्॥१३७॥
ततः संत्रस्तसर्वांगौ धावमानौ महामुनी। पृष्ठतश्चक्रमालोक्य तमोराशिं दुरासदम्॥१३८॥
कन्यासिद्धिरहो प्राप्ता ह्यावयोरिति वेगितौ।
लोकालोकांतमनिशं धावमानौ भयार्दितौ॥१३९॥
त्राहित्राहीति गोविंदं भाषमाणौ भयार्दितौ। विष्णुलोकं ततो गत्वा नारायण जगत्पते॥१४०॥
वासुदेव हृषीकेश पद्मनाभ जनार्दन। त्राह्यावां पुंडरीकाक्ष नाथोऽसि पुरुषोत्तम॥१४१॥
ततो नारायणश्चित्य श्रीमाञ्छ्रीवत्सलांछनः। निवार्य चक्रं ध्वांतं च भक्तानुग्रहकाम्यया॥१४२॥
अंबरीषश्च मद्भक्तस्तथैतौ मुनिसत्तमौ। अनयोरस्य च तथा हितं कार्यं मयाऽधुना॥१४३॥
आहूय तत्तमः श्रीमान् गिरा प्रह्लादयन् हरिः। प्रोवाच भगवान् विष्णुः शृणुतां म इदं वचः॥१४४॥
ऋषिशापो न चैवासीदन्यथा च वरोमम। दत्तो नृपाय रक्षार्थं नास्ति तस्यान्यथा पुनः॥१४५॥
अंबरीषस्य पुत्रस्य नप्तुः पुत्रो महायशाः। श्रीमान्दशरथो नाम राजा भवति धार्मिकः॥१४६॥
तस्याहमग्रजः पुत्रो रामनामा भवाम्यहम्। तत्र मे दक्षिणो बाहुर्भरतो नाम वै भवेत्॥१४७॥
शत्रुघ्नो नाम सव्यश्च शेषोऽसौ लक्ष्मणः स्मृतः। तत्र मां समुपागच्छ गच्छेदानीं नृपं विना॥१४८॥

---

(अंधेरा) आक्रमण करेगा।।१२८-१३५।। इस कारण तुम स्वयं अपने को जान सकोगे। इस प्रकार शाप के कारण जब अंधकार ने उस राजा पर आक्रमण किया तो तुरन्त विष्णु का चक्र राजा के पक्ष में प्रकट हुआ।।१३६-१३७।। चक्र के भय से अंधकार ने दोनों मुनियों को डरा दिया। डर से काँपते हुये दोनों मुनियों ने भागना प्रारम्भ किया। चक्र को पीछे आता देखकर और अंधकार के ढेर में अपने को ढकता देखकर अपना कदम आगे बढ़ाते हुये उन्होंने कहा। "हम दोनों को कन्या सिद्ध (प्राप्त) हो गई। हम कन्या पा गये।" भय से त्रस्त दुःखी वे लोग लौटकर समुद्रों से घिरी सम्पूर्ण पृथ्वी, पर्वत पर भागे। वे बेहद भय से डरे हुये, चिल्लाकर मुझको बचाओ। मुझको बचाओ (त्राहिमाम्)। हे गोविन्द रक्षा करो" वे विष्णु लोक में गये। उन्होंने कहा। "हे नारायण! हे जगत् के स्वामी! हे वासुदेव! हे जनार्दन! हे हृषीकेश! हे पद्मनाभ! हे पुरुषोत्तम! तुम हमारे स्वामी हो! तब श्रीवत्स चिह्न से युक्त नारायण ने भक्तों के हित के लिये कृपा करके चक्र और अन्धकार को रोक दिया। अम्बरीष मेरा भक्त है। ये दोनों ऋषि भी मेरे भक्त हैं। अब मैं वह करूँगा जो राजा का और इन दोनों ऋषियों के लिए हितकारक हो। श्रीमान् विष्णु ने उनको बुलाकर अपने वचनों से उनको कहते हुये कहा, "तुम दोनों मेरी बातों को सुनो।।१३८-१४४।। मुनियों का शाप अन्यथा नहीं होता है और न मेरा वरदान जो राजा अम्बरीष को रक्षा के लिये दिया था। श्रीमान् धार्मिक राजा अम्बरीष के पुत्र के ज्येष्ठ पौत्र के प्रसिद्ध पुत्र राजा दशरथ होंगे। उनका ज्येष्ठ पुत्र 'राम' मैं पैदा हूँगा। मेरा दाहिना हाथ भरत होंगे। शत्रुघ्न मेरे बायें हाथ होंगे। शेष, लक्ष्मण के रूप में जन्म लेंगे। वहाँ तुम मेरे पास आओ। अब तुम राजा को अकेला छोड़ दो।" ऐसा भगवान विष्णु ने कहा। ऐसा कहने पर अन्धकार का समूह नष्ट हो गया। विष्णु का चक्र भी पूर्ववत विष्णु के पास ठहर गया। तम को

मुनिश्रेष्ठौ च हित्वा त्वमिति स्माह च माधवः। एवमुक्तं तमो नाशं तत्क्षणाच्च जगाम वै॥१४९॥
निवारितं हरेश्चक्रं यथापूर्वमतिष्ठत। मुनिश्रेष्ठौ भयान्मुक्तो प्रणिपत्य जनार्दनम्॥१५०॥
निर्गतौ शौकसंतप्तौ ऊचतुस्तौ परस्परम्। अद्यप्रभृति देहांतमावां कन्यापरिग्रहम्॥१५१॥
न करिष्याव इत्युक्त्वा प्रतिज्ञाय च तावृषी। योगध्यानपरौ शुद्धौ यथापूर्वं व्यवस्थितौ॥१५२॥
अंबरीषश्च राजा सौ परिपाल्य च मेदिनीम्। सभृत्यज्ञातिसंपन्नो विष्णुलोकं जगाम वै॥१५३॥
मानार्थमंबरीषस्य तथैव मुनिसिंहयोः। रामो दाशरथिर्भूत्वा नात्मवेदीश्वरोऽभवत्॥१५४॥

मुनयश्च तथा सर्वे भृग्वाद्या मुनिसत्तमाः।
माया न कार्या विद्वद्भिरित्याहुः प्रेक्ष्य तं हरिम्॥१५५॥

नारदः पर्वतश्चैव चिरं ज्ञात्वा विचेष्टितम्। मायां विष्णोर्विनिर्द्यैव रुद्रभक्तौ बभूवतुः॥१५६॥
एतद्धि कथितं सर्वं मया युष्माकमद्य वै। अंबरीषस्य माहात्म्यं मायावित्वं च वै हरेः॥१५७॥

यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्वापि मानवः।
मायां विसृज्य पुण्यात्मा रुद्रलोकं स गच्छति॥१५८॥
इदं पवित्रं परमं पुण्यं वेदैरुदीरितम्।
सायं प्रातः पठेन्नित्यं विष्णोः सायुज्यमाप्नुयात्॥१५९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे**
**श्रीमत्याख्यानं नाम पंचमोऽध्यायः॥५॥**

---

सम्बोधित कर विष्णु ने कहा तब ऐसा हुआ। अन्धकार तुरन्त नष्ट हो गया।।१४५-१४९।। चक्र को रोकने पर वह पूर्ववत् स्थिर हो गया। दोनों मुनि छुटकारा पा गये। विष्णु को प्रणाम करके शोक से दुःखी आपस में कहने लगे। "अब से मृत्यु तक हम किसी कन्या को ग्रहण (विवाह) नहीं करेंगे।" ऐसी प्रतिज्ञा करके दोनों मुनि शुद्ध मन से पूर्ववत् योग और ध्यान साधना में लग गये।।१५०-१५२।। पृथ्वी पर शासन करने के बाद राजा अम्बरीष अपने अनुचरों, कुटम्बियों के साथ विष्णु लोक को चले गये। अम्बरीष और दोनों मुनियों के मान के लिये राम अपने को ईश्वर न जानते हुये दशरथ के पुत्र रूप में विष्णु ने जन्म लिया। तब भृगु आदि मुनियों ने विष्णु को देखकर कहा, "विद्वानों को माया न करनी चाहिये।" बहुत समय के बाद नारद और पर्वत ने विष्णु की माया का अनुभव किया और वे शिव के भक्त हो गये। इस प्रकार मैंने सब कुछ अम्बरीष की महानता और विष्णु का मायावीपन अच्छी तरह तुम लोगों के सामने कहा। जो मनुष्य इसको पढ़े, या सुने, या सुनावै वह माया से रहित होकर इन्द्र लोक को जाता है। वह परमपवित्र वेदों द्वारा कथित कथानक को जो प्रातः और सायंकाल पढ़ेगा वह विष्णु का सायुज्य प्राप्त करेगा।।१५३-१५९।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में श्रीमती की कथा**
**नामक पाँचवा अध्याय समाप्त॥५॥**

षष्ठोऽध्यायः

# अलक्ष्मीवृत्तम्

ऋषय ऊचुः

मायावित्यं श्रुतं विष्णोर्देवदेवस्य धीमतः। कथं ज्येष्ठासमुत्पत्तिर्देवदेवाज्जनार्दनात्॥१॥
वक्तुमर्हसि चास्माकं लोमहर्षण तत्त्वतः।

सूत उवाच

अनादिनिधनः श्रीमान्धाता नारायणः प्रभुः॥२॥
जगद्द्वैधमिदं चक्रे मोहनाय जगत्पतिः। विष्णुर्वै ब्राह्मणान्वेदान्वेदधर्मान् सनातनान्॥३॥
श्रियं पद्मां तथा श्रेष्ठां भागमेकमकारयत्। ज्येष्ठामलक्ष्मीमशुभां वेदबाह्यान्नराधमान्॥४॥
अधर्मं च महातेजा भागमेकमकल्पयत्। अलक्ष्मीमग्रतः सृष्ट्वा पश्चात्पद्मां जनार्दनः॥५॥
ज्येष्ठा तेन समाख्याता अलक्ष्मीर्द्विजसत्तमाः। अमृतोद्भववेलायां विषानंतरमुल्बणात्॥६॥
अशुभा सा तथोत्पन्ना ज्येष्ठा इति च वै श्रुतम्। ततः श्रीश्च समुत्पन्ना पद्मा विष्णुपरिग्रहः॥७॥
दुःसहो नाम विप्रर्षिरुपयेमेऽशुभां तदा। ज्येष्ठां तां परिपूर्णोऽसौ मनसा वीक्ष्य धिष्ठिताम्॥८॥
लोकं चचार हृष्टात्मा तया सह मुनिस्तदा। यस्मिन् घोषो हरेश्चैव हरस्य च महात्मनः॥९॥

---

## छठवाँ अध्याय

# अलक्ष्मी का कथानक

### ऋषिगण बोले

हे रोमहर्षण! बुद्धिमान और देवताओं के स्वामी विष्णु की माया को हम लोगों ने सुना। देवेश विष्णु से दुर्भाग्य की देवी ज्येष्ठा कैसे उत्पन्न हुई? यह आप हम लोगों को बताएँ।

### सूत बोले

सृष्टि की उत्पत्ति के क्रम में भगवान विष्णु जिनका न आदि है न अन्त और जो विश्व के स्वामी हैं, उन्होंने जगत को दो पर्तों में बनाया। एक सेट में ब्राह्मणों, वेदों, वैदिक गुणों और पद्मा श्री की रचना की। विश्व के शरण दाता विष्णु ने दूसरे सेट में ज्येष्ठा अलक्ष्मी और वैदिक वातावरण से अलग लोगों और पाप को बनाया। अलक्ष्मी की रचना के बाद विष्णु ने पद्मा को बनाया। इसलिए अलक्ष्मी ज्येष्ठा (उससे बड़ी) हैं। भयानक विष के बाद अमृत के निकलने के बाद असुरा ज्येष्ठा पैदा हुई। ऐसा सुना जाता है। उसके बाद श्री पद्मा (लक्ष्मी) उत्पन्न हुई जो बाद में विष्णु की पत्नी बनीं।।१-७।। एक ब्राह्मण मुनि दुःसह ने उस अशुभ ज्येष्ठा को मानसिक रूप से अधिष्ठित देखकर उससे विवाह किया। उसके साथ प्रसन्न वह मुनि संसार के चारों ओर घूमने लगा। हे ब्राह्मणों! जहाँ कहीं भी महान् आत्मा विष्णु और शिव के नामों की उच्चस्वर में ध्वनि हो, जहाँ वैदिक मन्त्रों

वेदघोषस्तथा विप्रा होमधूमस्तथैव च। भस्मांगिनो वा यत्रासंस्तत्र तत्र भयार्दिता॥१०॥
पिधाय कर्णौ संयाति धावमाना इतस्ततः। ज्येष्ठामेवंविधां दृष्ट्वा दुःसहो मोहमागतः॥११॥
तया सह वनं गत्वा चचार स महामुनिः। तपो महद्वने घोरे याति कन्या प्रतिग्रहम्॥१२॥
न करिष्यामि चेत्युक्त्वा प्रतिज्ञाय च तामृषिः। योगज्ञानपरः शुद्धो यत्र योगीश्वरो मुनिः॥१३॥
तत्रायांतं महात्मानं मार्कंडेयमपश्यत। प्रणिपत्य महात्मानं दुःसहो मुनिमब्रवीत्॥१४॥
भार्येयं भगवन्मह्यं न स्थास्यति कथंचन। किं करोमीति विप्रर्षे ह्यनया सह भार्यया॥१५॥
प्रविशामि तथा कुत्र कुतो न प्रविशाम्यहम्॥

मार्कंडेय उवाच

श्रृणु दुःसह सर्वत्र अकीर्तिरशुभान्विता॥१६॥
अलक्ष्मीरतुला चेयं ज्येष्ठा इत्यभिशब्दिता। नारायणपरा यत्र वेदमार्गानुसारिणः॥१७॥
रुद्रभक्ता महात्मानो भस्मोद्धूलितविग्रहाः। स्थिता यत्र जना नित्यं मा विशेथाः कथंचन॥१८॥
नारायण हृषीकेश पुंडरीकाक्ष माधव। अच्युतानंत गोविंद वासुदेव जनार्दन॥१९॥
रुद्र रुद्रेति रुद्रेति शिवाय च नमो नमः। नमः शिवतरायेति शंकरायेति सर्वदा॥२०॥
महादेव महादेव महादेवेति कीर्तयेत्। उमायाः पतये चैव हिरण्यपतये सदा॥२१॥
हिरण्यबाहवे तुभ्यं वृषांकाय नमो नमः। नृसिंह वामनाचिंत्य माधवेति च ये जनाः॥२२॥
वक्ष्यंति सततं हृष्टा ब्राह्मणाः क्षत्रियास्तथा।

---

के उच्च उच्चारण की ध्वनि हो, जहाँ यज्ञों से धुआँ उठ रहा हो और जहाँ लोग अपने शरीर के अंगों पर भस्म चुपड़े हुए हों, वह दुर्भाग्य की देवी हद से ज्यादा डर जाती थी। वह अपने कानों को मूँद लेती थी और इधर-उधर भागने लगती थी। ज्येष्ठा का इस प्रकार व्यवहार देखकर मुनि दुःसह भ्रम में पड़ गये। उसको साथ लेकर वह वन में चले गये। उस भयानक वन में उन्होंने बड़ी तपस्या की। ज्येष्ठा ने कहा, "मैं तपस्या नहीं करूँगी।" और वह एक घर से दूसरे घर को घूमने भटकने लगी। पवित्र मुनि, अग्रणी योगी योगाभ्यास करने लगे। उन्होंने महात्मा मार्कण्डेय को अपनी ओर आते हुए देखा। महामुनि को प्रणाम करके दुःसह ने कहा।।८-१४।। "हे महामुनि! मेरी यह पत्नी मेरे साथ किसी भी तरह नहीं रहती है। हे ब्राह्मण मुनि! इस स्त्री को लेकर मैं क्या करूँगा? कहाँ मैं प्रवेश करूँगा? और कहाँ प्रवेश नहीं करूँगा?

## मार्कण्डेय बोले

हे दुःसह! सुनो, "यह अशुभ स्त्री ऐसी प्रत्येक जगह अकीर्ति (बदनाम), अलक्ष्मी (अभागी), अतुला (न तुलना करने योग्य) और ज्येष्ठा (सबसे बड़ी) कही जाती है। यह किसी भी प्रकार उन स्थानों में प्रवेश नहीं करेगी जहाँ कि उत्तम आत्माओं, विष्णु के भक्त, वैदिक मार्ग के अनुयायी और रुद्र के भक्त जो कि अपने शरीर में भस्म लगाये हुए उपस्थित हों।।१५-१८।। यह किसी प्रकार उद्यानों में, गोशालाओं और प्रसन्न ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों औद शूद्रों के पास या उनके घरों में प्रवेश नहीं करेगी। जो लोग ओं नारायण, ओं ऋषिकेश, ओं पुण्डरीकाक्ष, ओं माधव, ओं अच्युत, ओं अनन्त, ओं आनन्द, ओं गोविन्द, ओं वासुदेव, ओं जनार्दन, ओं

वैश्याः शूद्राश्च ये नित्यं तेषां धनगृहादिषु। आरामे चैव गोष्ठेषु न विशेथाः कथंचन॥२३॥
ज्वालामालाकरालं च सहस्रादित्यसन्निभम्। चक्रं विष्णोरतीवोग्रं तेषां हंति सदाशुभम्॥२४॥
स्वाहाकारो वषट्कारो गृहे यस्मिन् हि वर्तते। तद्धित्वा चान्यमागच्छ सामघोषोथ यत्र वा॥२५॥
वेदाभ्यासरता नित्यं नित्यकर्मपरायणाः। वासुदेवार्चनरता दूरतस्तान्विसर्जयेत्॥२६॥
अग्निहोत्रं गृहे येषां लिंगार्चा वा गृहेषु च। वासुदेवतनुर्वापि चंडिका यत्र तिष्ठति॥२७॥
दूरतो व्रज तान् हित्वा सर्वपापविवर्जितान्। नित्यनैमित्तिकैर्यज्ञैर्यजंति च महेश्वरम्॥२८॥
तान् हित्वा व्रज चान्यत्र दुःसह त्वं सहानया। श्रोत्रिया ब्राह्मणा गावो गुरवोऽतिथयः सदा॥२९॥
रुद्रभक्ताश्च पूज्यंते यैर्नित्यं तान् विवर्जयेत्॥

दुःसह उवाच

यस्मिन्प्रवेशो योग्यो मे तद्ब्रूहि मुनिसत्तम॥३०॥
त्वद्वाक्याद्भयनिर्मुक्तो विशान्मेषां गृहे सदा।

मार्कण्डेय उवाच

न श्रोत्रिया द्विजा गावो गुरवोऽतिथयः सदा। यत्र भर्ता च भार्या च परस्परविरोधिनौ॥३१॥

---

रुद्र, ओं रुद्र, शिव को नमस्कार, शिवतर को, शंकर को नमस्कार, ओं महादेव, ओं उमापति, ओं सोने की भुजाधारी। ओं वृषध्वज, ओं नृसिंह, ओं वामन, ओं अतुलनीय, ओं माधव इन नामों का उच्चारण करते और इनकी स्तुति कहते हों।।१९-२३।। विष्णु का चक्र जो कि ज्वाला की समूह से बहुत काल कराल है और हजारों सूर्य के समान है, ऐसा उग्र चक्र उनके अशुभों को सदा नष्ट करता है।।२४।। जिस घर में स्वाहाकार और वषट्कार होता हो, जहाँ शिव के लिंग की पूजा होती हो और जहाँ वासुदेव की पूजा में लोग लीन हों उस घर को छोड़ देना। जहाँ उच्च स्वर से सामवेद के मन्त्रों का उच्चारण होता हो और जहाँ वैदिक प्रार्थनाओं को दोहराने में लोग लगे हों और प्रतिदिन के धार्मिक कृत्य में लीन हों तथा वासुदेव की पूजा में लीन हों, उन घरों को दूर से ही छोड़ देना।।२५-२६।। जहाँ पर अग्नि होम कार्य पूरा किया जाता हो, जहाँ लिंग की पूजा होती हो, और जहाँ पर बासुदेव की मूर्ति हो या चण्डिका विराजमान हों, उन घरों को बचा देना। पापों से दूर रहने वाले लोगों को भी तरह दे देना। लोग जो कि नित्य और नैमित्तिक यज्ञ द्वारा महेश्वर की पूजा करते हों। हे दुःसह! इस स्त्री के साथ वहाँ न जाकर कहीं और जगह जाना। जिन लोगों के द्वारा वेद पढ़े जाते हों, गायों, गुरुओं और अतिथियों और रुद्र भक्तों की नित्य पूजा की जाती हो उन लोगों को छोड़ देना चाहिए।।२७-२९।।

### दुःसह ने कहा

हे मुनिश्रेष्ठ! जहाँ पर मेरा प्रवेश उचित हो और मैं निडर होकर वहाँ प्रवेश कर सकूँ, उन स्थानों को बताइए।।३०।।

### मार्कण्डेय ने कहा

अपनी पत्नी के साथ निडर होकर वहाँ प्रवेश कर सकोगे जिस घर में पति और पत्नी आपस में विरोधी हों और जहाँ कि वैदिक गीतों में पारंगत ब्राह्मण, गायें, और अतिथि जहाँ पर कभी भी उपस्थित न होते हों, जहाँ

सभार्यस्त्वं गृहं तस्य विशेथा भयवर्जितः। देवदेवो महादेवो रुद्रस्त्रिभुवनेश्वरः॥३२॥
विनिंद्यो यत्र भगवान् विशस्व भयवर्जितः। वासुदेवरतिर्नास्ति यत्र नास्ति सदाशिवः॥३३॥
जपहोमादिकं नास्ति भस्म नास्ति गृहे नृणाम्। पर्वण्यभयर्चनं नास्ति चतुर्दश्यां विशेषतः॥३४॥
कृष्णाष्टम्यां च रुद्रस्य संध्यायां भस्मवर्जिताः। चतुर्दश्यां महादेवं न यजंति च यत्र वै॥३५॥
विष्णोर्नामविहीनां ये संगताश्च दुरात्मभिः। नमः कृष्णाय शर्वाय शिवाय परमेष्ठिने॥३६॥
ब्राह्मणाश्च नरा मूढा न वदंति दुरात्मकाः। तत्रैव सततं वत्स सभार्यस्त्वं समाविश॥३७॥
वेदघोषो न यत्रास्ति गुरुपूजादयो न च। पितृकर्मविहीनांस्तु सभार्यस्त्वं समाविश॥३८॥
रात्रौ रात्रौ गृहे यस्मिन् कलहो वर्तते मिथः। अनया सार्धमनिशं विश त्वं भयवर्जितः॥३९॥
लिंगार्चनं यस्य नास्ति यस्य नास्ति जपादिकम्। रुद्रभक्तिर्विनिंदा च तत्रैव विश निर्भयः॥४०॥
अतिथिः श्रोत्रियो वापि गुरुर्वा वैष्णवोपि वा। न संति यद्गृहे गावः सभार्यस्त्वं समाविश॥४१॥
बालानां प्रेक्षमाणानां यत्रादत्त्वा त्वभक्षयन्। भक्ष्याणि तत्र संहृष्टः सभार्यस्त्वं समाविश॥४२॥
अनभ्यर्च्य महादेवं वासुदेवमथापि वा। अहुत्वा विधिवद्यत्र तत्र नित्यं समाविश॥४३॥
पापकर्मरता मूढा दयाहीनाः परस्परम्। गृहे यस्मिन्समासंते देशे वा तत्र संविश॥४४॥

---

देवताओं के देवता तीनों लोकों के स्वामी महेश्वर की निन्दा होती हो, उस स्थान पर तुम रंच मात्र भय के बिना प्रवेश करना। अपनी पत्नी के साथ उन घरों में बेहिचक प्रवेश करना। जहाँ वासुदेव की भक्ति न हो, जहाँ सदाशिव उपस्थित न हों, जय होम आदि न किये जाते हों, जिस घर में भस्म न रखी जाती हो, पर्वों पर विशेष रूप से चतुर्दशी और अष्टमी (कृष्ण पक्ष की) में रुद्र की पूजा न की जाती हो, जिन घरों में प्रात; और सायंकाल ब्राह्मण लोग संध्या न करते हों, जहाँ वे चतुर्दशी तिथि को महादेव की पूजा न करते हों। जहाँ पर विष्णु के नामों से लोग रहित हों, जहाँ दुष्ट लोग सम्पर्क रखते हों, वहाँ पर अपनी पत्नी के साथ निरन्तर प्रवेश करो। जहाँ ब्राह्मण लोग दुष्ट हों और कृष्ण को नमस्कार, शिव को नमस्कार, सर्व को नमस्कार, परमेष्ठी को नमस्कार ये मन्त्र न दोहराते हों।।३१-३७।। अपनी पत्नी के पास तुम उन स्थानों में प्रवेश करो जहाँ वेद मन्त्रों का उच्च स्वर से पाठ न होता हो, जहाँ गुरुओं की पूजा न होती हो, और जहाँ लोग पितृकर्म न करते हों।।३८।। इस महिला के साथ निडर होकर सदा प्रवेश करना जिन घरों में हर रात आपस में लोगों में कलह होता हो।।३९।। जहाँ पर लिंग की पूजा न होती हो, जहाँ जप न किया जाता हो और रुद्र की भक्ति जहाँ निन्दित हो, वहाँ निर्भीकता से प्रवेश करना।।४०।। वहाँ अपनी पत्नी के साथ उस घर में प्रवेश करना जहाँ पर अतिथि, श्रोत्रिय ब्राह्मण, गुरु, वैष्णव और गायें उपस्थित न हो।।४१।। तुम प्रसन्नतापूर्वक अपनी पत्नी के साथ उस स्थान में प्रवेश करना जहाँ खाने पीने की चीजों को लोग पाने के लिए निहारते हुए बच्चों को न देकर स्वयं खाते हों।।४२।। जहाँ पर महादेव की पूजा न करके, विधिपूर्वक हवन न करके, लोग रहते हों, वहाँ पर तुम प्रवेश करना।।४३।। जहाँ लोग पापमय क्रिया-कलापों में लगे हुए हों, लोग निर्दयी हों, आपस में सद्भावना न रखते हों, उस घर और देश में तुम प्रवेश करना।।४४।। उस घर में पहुँचना जहाँ घरवालियाँ

प्राकारागारविध्वंसा न चैवेड्या कुटुंबिनी। तद्गृहं तु समासाद्य वस नित्यं हि हृष्टधीः॥४५॥
यत्र कंटकिनो वृक्षा यत्र निष्पाववल्लरी। ब्रह्मवृक्षश्च यत्रास्ति सभार्यस्त्वं समा विश॥४६॥
अगस्त्यार्कादयो वापि बंधुजीवो गृहेषु वै। करवीरो विशेषेण नंद्यावर्तमथापि वा॥४७॥
मल्लिका वा गृहे येषां सभार्यस्त्वंसमाविश। कन्या च यत्र वै वल्ली द्रोही वा च जटी गृहे॥४८॥
बहुला कदली यत्र सभार्यस्त्वं समाविश। तालं तमालं भल्लातं तित्तिडीखंडमेव च॥४९॥
कदंबः खादिरं वापि सभार्यस्त्वं समाविश। न्यग्रोधं वा गृहे येषामश्वत्थं चूतमेव वा॥५०॥
उदुंबरं वा पनसं सभार्यस्त्वं समाविश। यस्य काकगृहं निंबे आरामे वा गृहेपि वा॥५१॥
दंडिनी मुंडिनी वापि सभार्यस्त्वं समाविश। एका दासी गृहे यत्र त्रिगवं पंचमाहिषम्॥५२॥
षडश्वं सप्तमातंगं सभार्यस्त्वं समाविश। यस्य काली गृहे देवी प्रेतरूपा च डाकिनी॥५३॥
क्षेत्रपालोथवा यत्र सभार्यस्त्वं समाविश। भिक्षुबिंबं च वै यस्य गृहे क्षपणकं तथा॥५४॥
बौद्धं वा बिंबमासाद्य तत्र पूर्णं समाविश। शयनासनकालेषु भोजनाटनवृत्तिषु॥५५॥
येषां वदति नो वाणी नामानि च हरेः सदा। तद्गृहं ते समाख्यातं सभार्यस्य निवेशितुम्॥५६॥
पाषंडाचारनिरताः श्रोतस्मार्तबहिष्कृताः। विष्णुभक्तिविनिर्मुक्ता महादेवविनिंदकाः॥५७॥
नास्तिकाश्च शठा यत्र सभार्यस्त्वं समाविश। सर्वस्मादधिकत्वं ये न वदंति पिनाकिनः॥५८॥
साधारणं स्मरंत्येनं सभार्यस्त्वं समाविश। ब्रह्मा च भगवान्विष्णुः शक्रः सर्वसुरेश्वरः॥५९॥
रुद्रप्रसादजाश्चेति न वदंति दुरात्मकाः। ब्रह्मा च भगवान्विष्णुः शक्रश्च सम एव च॥६०॥
वदंति मूढाः खद्योतं भानुं वा मूढचेतसः। तेषां गृहे तथा क्षेत्र आवासे वा सदाऽनया॥६१॥

---

अपने घरों को साफ-सुथरा न रखती हों, जो घर और जिसकी चाहारदिवारी गिरी हो और जहाँ स्त्रियाँ प्रशंसा की पात्र न हों, वहाँ सदा प्रसन्न मन से ठहरना।।४५।। जहाँ पर काँटेदार पेड़ हों, जहाँ पावटा नामक लता हो, जहाँ ब्रह्म वृक्ष (पलाश) हो। अगर घर के भीतर अगस्त्य, मदार, बन्धुजीव, मल्लिका, कन्या लता, तगर, द्रोही (नीम की एक जाति), जटामासी, नील, काला केला, ताल, तमाल, भेल, तित्तिडीखण्ड, करवीर, कदंब, खादिर, बरगद, पीपल, आम, गूलर, कटहल, नीम में कौओं के घोंसले, नीम का पेड़ घर में या पार्क में, दण्डिनी और मुण्डिनी हों।।४६-५१।। जिस घर में अकेली एक दासी (नौकरानी) हो, जहाँ पर तीन गायें, पाँच घोड़े, पाँच हाथियाँ हो, वहाँ तुम अपनी पत्नी के साथ प्रवेश करो। जिस घर में काली देवी के रूप में हो, डाकिनी प्रेत के रूप में हो और जहाँ क्षेत्रपाल (पवित्र केन्द्रों के अभिभावक) जिस घर में बौद्ध भिक्षुओं की मूर्ति या बुद्ध की मूर्ति हो, वहाँ पर बेखटके प्रवेश करो। जिन घरों में सोने के लिए जाते समय, आसन पर बैठते समय, इधर-उधर अपने कामों में लगे रहते समय, जैसे—भोजन करते समय विष्णु का नाम न लिया जाय, वे घर तुम्हारे ही हैं। उनमें तुम सपत्नीक प्रवेश करो।।५२-५६।। जहाँ लोग पाखण्ड आचार में लगे हों और श्रौत और स्मार्त कार्यों को छोड़ दिये हों, विष्णु की भक्ति न करते हों और महादेव के निंदक हों, जहाँ पर नास्तिक और मूर्ख हों, वहाँ पर अपनी पत्नी सहित प्रवेश करो। जो लोग पिनाकधारी शिव को सब से अधिक न मानते हैं और उनको साधारण मूर्ति की तरह समझते हों। वहाँ पर सपत्नीक प्रवेश करो। वे जो केवल ब्रह्म को, विष्णु

विश भुंक्ष्व गृहं तेषां अपि पूर्णमनन्यधीः। येऽश्नंति केवलं मूढाः पक्वमन्नं विचेतसः॥६२॥
स्नानमंगलहीनाश्च तेषां त्वं गृहमाविश। या नारी शौचविभ्रष्टा देहसंस्कारवर्जिता॥६३॥
सर्वभक्षरता नित्यं तस्याः स्थाने समाविश। मलिनास्याः स्वयं मर्त्या मलिनांबरधारिणः॥६४॥
मलदंता गृहस्थाश्च गृहे तेषां समाविश। पादशौचविनिर्मुक्ताः संध्याकाले च शायिनः॥६५॥
संध्यायामश्न ते ये वै गृहं तेषां समाविश। अत्याशनरता मर्त्या अतिपानरता नराः॥६६॥
द्यूतवादक्रियामूढाः गृहे तेषां समाविश। ब्रह्मस्वहारिणो ये चायोग्यांश्चैव यजंति वा॥६७॥
शूद्रान्नभोजिनो वापि गृहं तेषां समाविश। मद्यपानरताः पापा मांसभक्षणतत्पराः॥६८॥
परदाररता मर्त्या गृहं तेषां समाविश। पर्वण्यनर्चाभिरता मैथुने वा दिवा रताः॥६९॥
संध्यायां मैथुनं येषां गृहे तेषां समाविश। पृष्ठतो मैथुनं येषां श्वानवन्मृगवच्च वा॥७०॥
जले वा मैथुनं कुर्यात्सभार्यस्त्वं समाविश। रजस्वलां स्त्रियं गच्छेच्चांडालीं वा नराधमः॥७१॥
कन्यां वा गोगृहे वापि गृहं तेषां समाविश। बहुना किं प्रलापेन नित्यकर्मबहिष्कृताः॥७२॥
रुद्रभक्तिविहीना ये गृहं तेषां समाविश। शृंगैर्दिव्यौषधैः क्षुद्रैः शेफ आलिप्य गच्छति॥७३॥

---

और देवताओं के शासक इन्द्र को यह न मानते हो कि ये रुद्र की कृपा से उत्पन्न हुए हों, मूढ़ लोग ये कहते हैं कि भगवान् विष्णु, इन्द्र, शिव के बराबर हैं, जो जुगुनू और सूर्य दोनों बराबर मानते हों। यहाँ तक कि उनके घर सब प्रकार से समृद्ध भी हैं, तब भी वहाँ बिना डर के अपनी पत्नी के साथ प्रवेश करो और मौज करो।।५७-६१।। उन मूर्ख लोगों के आवास में प्रवेश करो जो पकाये गये भोजन को स्वयं खाते हों तथा जो स्नान और मंगल कार्य से रहित हैं। उनके घरों में प्रवेश करो। उस घर में प्रवेश करो जहाँ स्त्री स्वच्छता की आदतों और देह के संस्कार से रहित हो या जो सब प्रकार अभक्ष्य प्रदार्थ को खाने में लगी हो। उसके घर में प्रवेश करो जिसके मुँह गन्दे हों, जो गन्दे वस्त्र पहनते हों, जिनके दाँत गन्दे हों, ऐसे गृहस्थों के घर में प्रवेश करो। जो अपने घरों को भलीभाँति न धोते हों, संध्याकाल में सोते हों और संध्या के समय भोजन करते हों, इनके घरों में प्रवेश करो।।६२-६५।।

जो लोग बहुत आहारी हों, अधिक पियक्कड़ हों, जो मूर्खता से जुआ खेलने में लगे हों और बकवासी हों, व्यर्थ वाद-विवाद करते हों, उनके घरों में प्रवेश करो। उन लोगों के धरों में प्रवेश करो जो ब्राह्मणों के धन का अपहरण करते हों। जो शूदों द्वारा बनाये भोजन को खाते हों, उनके घरों में प्रवेश करो। जो मद्यपान में रत हों, जो माँस भक्षी हों, जो दूसरों की स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करने में लगे हों, उनके घरों में प्रवेश करो।।६६-६८।। उन लोगों के घरों में प्रवेश करो जो दिन में मैथुन (स्त्री से भोग) करते हों। जो पर्वों पर भी पूजापाठ न करते हों, संध्या काल में अपनी पत्नी से मैथुन करते हों। जो कुत्तों की तरह और पशुओं की भाँति पीठ पर से मैथुन करते हों, या जल में मैथुन करते हों, उनके घरों में पत्नी सहित प्रवेश करो। जो अधम पुरुष रजस्वला स्त्री से, चाण्डाली से मैथुन करता हो, जो कन्या के साथ मैथुन करे या गोशाला में मैथुन करे उसके घर में प्रवेश करो। अधिक कहने का क्या प्रयोजन? उनके घरों में प्रवेश करो जो नित्य कर्म (संध्या पूजा आदि) न करते हों या रुद्र

भगद्रावं करोत्यस्मात्सभार्यस्त्वं समाविश।।

सूत उवाच

इत्युक्त्वा स मुनिः श्रीमान्निर्माज्य नयने तदा।।७४।।

ब्रह्मर्षिर्ब्रह्मसंकाशस्तत्रैवांतर्द्धिमातनोत् । दुःसहश्च तथोक्तानि स्थानानि च समीयिवान्।।७५।।

विशेषाद्देवदेवस्य विष्णोर्निंदारतात्मनाम्।

सभार्यो मुनिशार्दूलः सैषा ज्येष्ठा इति स्मृता।।७६।।

दुःसहस्तामुवाचेदं तडागाश्रममंतरे। आस्व त्वमत्र चाहं वै प्रवेक्ष्यामि रसातलम्।।७७।।

आवयोः स्थानमालोक्य निवासार्थं ततः पुनः। आगमिष्यामि ते पार्श्वमित्युक्ता तमुवाच सा।।७९।।

किमश्नामि महाभाग को मे दास्यति वै बलिम्।

इत्युक्तस्तां मुनिः प्राह याः स्त्रियस्त्वां यजंति वै।।७९।।

बलिभिः पुष्पधूपैश्च न तासां च गृहं विश। इत्युक्त्वा त्वाविशत्तत्र पातालं बिलयोगतः।।८०।।

अद्यापि च विनिर्मग्नो मुनिः स जलसंस्तरे। ग्रामपर्वतबाह्येषु नित्यमास्तेऽशुभा पुनः।।८१।।

प्रसंगाद्देवदेवेशो विष्णुस्त्रिभुवनेश्वरः। लक्ष्म्या दृष्टस्तया लक्ष्मीः सा तमाह जनार्दनम्।।८२।।

भर्ता गतो महाबाहो बिलं त्यक्त्वा स मां प्रभो। अनाथाहं जगन्नाथ वृत्तिं देहि नमोस्तु ते।।८३।।

---

की भक्ति से विहीन हैं, उनके घरों में प्रवेश करो। जो बनावटी (कृत्रिम) लिंग से, साधारण या दिव्य औषधियों को अपने लिंग पर चुपड़कर मैथुन करते हों, उनके घरों में प्रवेश करो।।६९-७५।।

## सूत बोले

ऐसा कहकर श्रीमान मुनि ब्रह्मर्षि अपने नेत्रों को पोंछकर वहीं अन्तर्ध्यान हो गये। दुःसह भी उपरोक्त स्थानों को चले गये। श्रेष्ठ मुनि ज्येष्ठा के साथ विशेष रूप से उन घरों को गये जहाँ पर भगवान विष्णु की निन्दा में लोग लगे हुये थे। यह वह देवी है जिसको ज्येष्ठा के नाम से जाना जाता है।।७६।। एक बार दुःसह ने उससे कहा। तुम इस तालाब के किनारे इस कुटी में रहो। मैं पाताल लोक में प्रवेश करूँगा। वहाँ दोनों के रहने योग्य निवास की तलाश करके फिर तुम्हारे पास लौटूँगा। ऐसा कहने पर ज्येष्ठा ने कहा, "मैं यहाँ क्या खाऊँगी? मुझको यहाँ कौन भोजन देगा?" उसके वैसा कहने पर मुनि ने कहा।।७७-७८।। उन स्त्रियों के घरों में तुम मत प्रवेश करना जो तुमको भोजन के साथ धूप, पुष्प और सुगंधित धूप से पूजा करती हैं। इतना कहकर मुनि एक बिल के रास्ते से पाताल लोक में चले गये। वहाँ पर मुनि आज भी जल के स्तर में रहते हैं। अशुभता की देवी ज्येष्ठा गाँवों और पर्वतों के बाहर नित्य रहती हैं।।७९-८१।। प्रसंग वश अकस्मात् देवेश त्रिलोकीनाथ भगवान् विष्णु लक्ष्मी के साथ थे। उनको उसने (अलक्ष्मी ने) देखा और भगवान् जनार्दन विष्णु से कहा, "हे महाबाहु! मेरे पति मुझको छोड़कर बिल मार्ग से पाताल चले गये। मैं अनाथ हूँ। हे विश्वेश्वर! आप को प्रणाम। आप मुझको वृत्ति (भोजन आदि का साधन) दीजिये"।।८२-८३।।

सूत उवाच

इत्युक्तो भगवान्विष्णुः प्रहस्याह जनार्दनः। ज्येष्ठामलक्ष्मीं देवेशो माधवो मधुसूदनः॥८४॥

श्रीविष्णुरुवाच

ये रुद्रमनघं शर्वं शंकरं नीललोहितम्। अंबां हैमवतीं वापि जनित्रीं जगतामपि॥८५॥
मद्भक्तान्निंदयंत्यत्र तेषां वित्तं तवैव हि। येपि चैव महादेवं विनिंद्यैव यजंति माम्॥८६॥
मूढा ह्यभाग्या मद्भक्ता अपि तेषां धनं तव। यस्याज्ञया ह्यहं ब्रह्मा प्रसादाद्वर्तते सदा॥८७॥
ये यजंति विनिंद्यैव मम विद्वेषकारकाः। मद्भक्ता नैव ते भक्ता इव वर्तंति दुर्मदाः॥८८॥
तेषां गृहं धनं क्षेत्रमिष्टापूर्तं तवैव हि॥

सूत उवाच

इत्युक्त्वा तां परित्यज्य लक्ष्म्याऽलक्ष्मीं जनार्दनः॥८९॥
जजाप भगवान्रुद्रमलक्ष्मीक्षयसिद्धये। तस्मात्प्रदेयस्तस्यै च बलिर्नित्यं मुनीश्वराः॥९०॥
विष्णुभक्तैर्न संदेहः सर्वयत्नेन सर्वदा। अंगनाभिः सदा पूज्या बलिभिर्विविधैर्द्विजाः॥९१॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्वा द्विजोत्तमान्। अलक्ष्मीवृत्तमनघो लक्ष्मीवाँल्लभते गतिम्॥९२॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अलक्ष्मीवृत्तं नाम षष्ठोऽध्याय॥६॥**

---

### विष्णु बोले

"जो निष्पाप रुद्र शर्व, शंकर, नीललोहित, शिव और जगत की माता हैमवती (पर्वती) और मेरे भक्तों की चिन्ता न करते हैं, जो महादेव की निन्दा करके मेरी पूजा करते हैं उनका वित्त तो तुम्हारा ही हैं। जिसकी पूजा से मैं और ब्रह्मा सदा अस्तित्व में हैं। ऐसे अभागे, मूढ़ मेरे भक्तों का धन भी तुम्हारा है। जो मुझसे विद्वेष करके मेरी निन्दा करते हों, मेरी भक्ति न करते हों, मेरी पूजा भक्त की तरह न करते हों वे मेरे भक्त नहीं हैं। उनका धन-धान, खेत-बारी, उनके द्वारा किये गये शुभ कार्य भी तुम्हारा ही है। कूप, तालाब आदि का खनन भी तुम्हारा ही है"॥८४-८८॥

### सूत बोले

ऐसा कहकर भगवान विष्णु लक्ष्मी सहित वहाँ से चले गये। तब विष्णु ने अलक्ष्मी के नाश के लिए भगवान रुद्र का जाप किया। तब से विष्णु भक्तों के द्वारा सदा उस अलक्ष्मी को बलि दी जाती है। हे ब्राह्मणों! स्त्रियों द्वारा अनेक प्रकार की बलि देकर अलक्ष्मी की पूजा करनी चाहिये। वह जो कि इस अलक्ष्मी कथानक को पढ़ता है, सुनता है या उत्तम ब्राह्मणें को सुनाता है वह पाप से निष्पाप होकर लक्ष्मीवान होता है और मोक्ष को प्राप्त करता है॥८९-९२॥

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अलक्ष्मी का कथानक**
**( उत्पत्ति और क्रियाकलाप ) नामक छठवाँ अध्याय समाप्त॥६॥**

सप्तमोऽध्यायः

# द्वादशाक्षरप्रशंसा

ऋषय ऊचुः

किंजपान्मुच्यते जंतुः सर्वलोकभयादिभिः। सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति परमां गतिम्॥१॥
अलक्ष्मीं वाथ संत्यज्य गमिष्यति जपेन वै। लक्ष्मीवासो भवेन्मर्त्यः सूत वक्तुमिहार्हसि॥२॥

सूत उवाच

पुरा पितामहेनोक्तं वसिष्ठाय महात्मने। वक्ष्ये संक्षेपतः सर्वं सर्वलोकहिताय वै॥३॥
शृण्वंतु वचनं सर्वे प्रणिपत्य जनार्दनम्। देवदेवमजं विष्णुं कृष्णमच्युतमव्ययम्॥४॥
सर्वपापहरं शुद्धं मोक्षदं ब्रह्मवादिनम्। मनसा कर्मणा वाचा यो विद्वान्पुण्यकर्मकृत्॥५॥
नारायणं जपेन्नित्यं प्रणम्य पुरुषोत्तमम्। स्वपन्नारायणं देवं गच्छन्नारायणं तथा॥६॥
भुंजन्नारायणं विप्रास्तिष्ठञ्जाग्रत्सनातनम्। उन्मिषन्निमिषन्वापि नमो नारायणेति वै॥७॥
भोज्यं पेयं च लेह्यं च नमो नारायणेति च। अभिमंत्र्य स्पृशन्भुंक्ते स याति परमां गतिम्॥८॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति च सतां गतिम्। अलक्ष्मीश्च मया प्रोक्ता पत्नी या दुःसहस्य च॥९॥

---

सातवाँ अध्याय

# द्वादशाक्षर मंत्र की प्रशंसा

ऋषिगण बोले

प्राणी लोग किस मन्त्र के जपने से सांसारिक भयों से मुक्त हो जाते हैं। वे कैसे पापों से मुक्त होते हैं और मोक्ष प्राप्त करते हैं। किस जप से वह अलक्ष्मी से बच सकता है और कैसे व्यक्ति लक्ष्मी का वास (सौभाग्य) प्राप्त कर सकता है। हे सूत! आप इसको कहने के योग्य हैं।।१-२।।

सूत बोले

सब लोकों के कल्याण के लिए मैं संक्षेप में कहूँगा जो कि पहले ब्रह्मा ने महात्मा वसिष्ठ से इस विषय में कहा था।।३।। विष्णु जो देवताओं के स्वामी हैं, अज हैं, जो कि कृष्ण हैं, अच्युत और सब पापों के हरने वाले, सब ब्रह्मवादियों के मोक्ष देने वाले हैं। सब लोग उनको प्रणाम करके मेरी बातों को सुनो! वह जो कि विद्वान है, वह जो पुण्य कर्म करता और नारायण के नामों को जपता और मन से उनको प्रणाम करके जाते हुए मन से वाणी से और शरीर से उनको स्मरण करता है सोते हुए, चलते हुए, भोजन करते हुए, खड़े हुए, जागते हुए, आँख खोले हुए, नारायण का नाम लेता हैं। हे ब्राह्मणों, नमो नारायण इस शब्दों को जो दोहराता है, जो अन्तरात्मा विष्णु को याद करता है। भोज्य पेय और लेह्य पदार्थों का उपयोग करता है, इस मन्त्र से अभिमन्त्रित उन वस्तुओं को छूते हुए खाता है। वह मोक्ष को प्राप्त करता है।।४-८।। वह सब इन बातों से छुटकारा पाता है और उत्तम

नारायणपदं श्रुत्वा गच्छत्येव न संशयः। या लक्ष्मीर्देवदेवस्य हरेः कृष्णस्य वल्लभा॥१०॥
गृहे क्षेत्रे तथावासे तनौ वसति सुव्रताः।
आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः॥११॥
इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा। किं तस्य बहुभिर्मंत्रैः किं तस्य बहुभिर्व्रतैः॥१२॥
नमो नारायणायेति मंत्रः सर्वार्थसाधकः। तस्मात्सर्वेषु कालेषु नमो नारायणेति च॥१३॥
जपेत्स याति विप्रेंद्रा विष्णुलोकं सबांधवः। अन्यच्च देवदेवस्य शृण्वंतु मुनिसत्तमाः॥१४॥
मंत्रो मया पुराभ्यस्तः सर्ववेदार्थसाधकः। द्वादशाक्षरसंयुक्तो द्वादशात्मा पुरातनः॥१५॥
तस्यैवेह च माहात्म्यं संक्षेपात्प्रवदामि वः। कश्चिद्द्विजो महाप्राज्ञस्तपस्तप्त्वा कथंचन॥१६॥
पुत्रमेकं तयोत्पाद्य संस्कारैश्च यथाक्रमम्। योजयित्वा यथाकालं कृतोपनयनं पुनः॥१७॥
अध्यापयामास तदा स च नोवाच किंचन।
न जिह्वा स्पंदते तस्य दुःखितोऽभूद्द्विजोत्तमः॥१८॥
वासुदेवेति नियतमैतरेयो वदत्यसौ। पिता तस्य तथा चान्यां परिणीय यथाविधि॥१९॥
पुत्रानुत्पादयामास तथैव विधिपूर्वकम्। वेदानधीत्य संपन्ना बभूवुः सर्वसंमताः॥२०॥
ऐतरेयस्य सा माता दुःखिता शोकमूर्च्छिता। उवाच पुत्राः संपन्ना वेदवेदांगपारगाः॥२१॥
ब्राह्मणैः पूज्यमाना वै मोदयंति च मातरम्। मम त्वं भाग्यहीनायाः पुत्रो जातो निराकृतिः॥२२॥
ममात्र निधनं श्रेयो न कथंचन जीवितम्। इत्युक्तः स च निर्गम्य यज्ञावाटं जगाम वै॥२३॥

---

गति को प्राप्त करता है। दुःसह की पत्नी अलक्ष्मी जिसके विषय में मैंने कहा, वह 'नारायण' शब्द को सुनने पर निसन्देह दूर भाग जाती है। हे सुव्रत लोगों! लक्ष्मी, जो विष्णु, कृष्ण और देवेश की प्रिय पत्नी है। वह व्यक्ति के शरीर, आवास, घर तथा क्षेत्र में वास करती है। सब शास्त्रों का मन्थन करके और बार-बार विचार करके यह सारांश निकला है कि सदा नारायण का ध्यान करना चाहिए। बहुत से मन्त्रों के जाने और बहुत से व्रतों के करने से क्या लाभ?।।९-१२।। 'नमो नारायणाय' यह मन्त्र सब अर्थों का साधक है। इसलिए सब अवसर पर नमो नारायणाय मन्त्र को जपना चाहिए। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! ऐसा जप करने वाले अपने बान्धवों सहित विष्णु लोक को जाते हैं। देवेश विष्णु का दूसरा मन्त्र सुनो। पहले मैंने इस मन्त्र का अभ्यास किया है। ये वेदों के तत्त्व को प्राप्त करने का साधन है। यह बारह अक्षरों से युक्त है और बहुत प्राचीन है। संक्षेप में तुम लोगों को उसी मन्त्र का माहात्म्य (महत्त्व) बतलाता हूँ।।१३-१६अ।। कोई महान् बुद्धिमान ब्राह्मण था। उसने तपस्या की और उसने एक पुत्र प्राप्त करके क्रमशः संस्कारों का उचित समय पर करके उसने उस पुत्र का उपनयन संस्कार किया। उसने उसको पढ़ाना प्रारम्भ किया किन्तु वह अपने मुँह से कोई शब्द उच्चारण नहीं कर सका। उसकी जीभ बोलने में हिलती भी नहीं थी। तब वह श्रेष्ठ ब्राह्मण बहुत दुःखी हुआ।।१६ब-१८।। उस ब्राह्मण के पुत्र का नाम ऐतरेय था। वह सदा वासुदेव कहता था। उसके पिता ने विधिपूर्वक दूसरा विवाह कर लिया तथा विधिपूर्वक कई पुत्रों को पैदा किया। उन सबने वेदों को पढ़ा और अपनी विद्या के बल से धनी हो गये।।१९-२०।। ऐतरेय की माता ने दुःखित और शोक से मूर्छित होकर कहा, "मेरी सौत से पैदा हुए पुत्र वेद और वेदांग में पारंगत विद्वान्

तस्मिन्याते द्विजानां तु न मंत्राः प्रतिपेदिरे। ऐतरेये स्थिते तत्र ब्राह्मणा मोहितास्तदा॥२४॥
ततो वाणी समुद्भूता वासुदेवेति कीर्तनात्। ऐतरेयस्य ते विप्राः प्रणिपत्य यथातथम्॥२५॥
पूजां चक्रुस्ततो यज्ञं स्वयमेव समागतम्। ततः समाप्य तं यज्ञमैतरेयो धनादिभिः॥२६॥
सर्ववेदान्सदस्याह स षडंगान् समाहिताः। तुष्टुवुश्च तथा विप्रा ब्रह्माद्याश्च तथा द्विजाः॥२७॥
ससर्जुः पुष्पवर्षाणि खेचराः सिद्धचारणाः। एवं समाप्य वे यज्ञमैतरेयो द्विजोत्तमाः॥२८॥
मातरं पूजयित्वा तु विष्णोः स्थानं जगाम ह। एतद्वै कथितं सर्वं द्वादशाक्षरवैभवम्॥२९॥
पठतां शृण्वतां नित्यं महापातकनाशनम्। जपेद्यः पुरुषो नित्यं द्वादशाक्षरमव्ययम्॥३०॥
स याति दिव्यमतुलं विष्णोस्तत्परमं पदम्। अपि पापसमाचारो द्वादशाक्षरतत्परः॥३१॥
प्राप्नोति परमं स्थानं नात्र कार्या विचारणा। किं पुनर्ये स्वधर्मस्था वासुदेवपरायणाः॥३२॥
दिव्यं स्थानं महात्मानः प्राप्नुवंतीति सुव्रताः॥३३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे**
**द्वादशाक्षरप्रशंसानाम सप्तमोऽध्यायः॥७॥**

---

हैं। वे ब्राह्मणों द्वारा पूजित हैं और अपनी माता को सब प्रकार से प्रसन्न रखते हैं। मुझ अभागी के तुम ऐसे पुत्र पैदा हुए जो कि शून्य हो। (किसी काम के योग्य नहीं हो)। किसी प्रकार जीवित रहना उचित नहीं है।" माता द्वारा ऐसा कहने पर वह पुत्र यज्ञ स्थल को चला गया।।२१-२३।। जब उसने यज्ञशाला में प्रवेश किया तो वहाँ स्थित ब्राह्मणों के मुँह से कोई मन्त्र ही नहीं निकल सके। वे ब्राह्मण ऐतरेय के वहाँ पहुँचने पर मोहित हुए, तो ऐतरेय के मुँह से जबतक ऐतरेय वहाँ रहा ब्राह्मण लोगों का गला बन्द रहा।।२४।। किन्तु जब ऐतरेय ने 'वासुदेव' अपने मुँह से कहा तो उन ब्राह्मणों की वाणी खुल गयी। वे मन्त्रों का उच्चारण करने लगे। तब वे ब्राह्मण ऐतरेय के आगे उसको प्रणाम करके स्वयं आये हुए ऐतरेय की पूजा की। तब यज्ञ कार्य चलता रहा और एतरेय को धन तथा अन्न तथा वस्त्रों को देकर सम्मानित किया गया। अन्त में उसने छः अंगों सहित सब वेदों का उस यज्ञ कर्ता ब्राह्मणों की सभा में उच्चारण किया तो वहाँ स्थित हे ब्राह्मणों! ब्रह्मा और अन्य ब्राह्मणों ने ऐतरेय की स्तुति की।।२५-२७।। सिद्धों और चारणों ने आकाश से फूलों की वर्षा की। हे उत्तम ब्राह्मणों! इस प्रकार यज्ञ की समाप्ति हुई। ऐतरेय अपने घर आया। उसने अपनी माता की पूजा करके विष्णु लोक को प्रस्थान किया। यह द्वादशाक्षर मन्त्र के माहात्म्य को मैंने पूर्ण रूप से कह सुनाया। जो इसको पढ़ता और सुनता है उसके महापाप नष्ट हो जाते हैं। जो पुरुष इस द्वादशाक्षर मन्त्र को जपता है उसका जीवन चाहे पापपूर्ण ही रहा हो वह दिव्य और अतुल विष्णु के परमधाम को प्राप्त करता है। वह जो द्वादशाक्षर मन्त्र में अभिरुचि रखता है वह परम स्थान को प्राप्त करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। हे सुव्रतो! जो अपने धर्म में स्थित हैं, और वासुदेव की भक्ति में लीन हैं, वे महात्मा लोग दिव्य स्थान को प्राप्त करते हैं।।२८-३३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में द्वादशाक्षर मन्त्र की प्रशंसा**
**नामक सातवाँ अध्याय समाप्त॥७॥**

अष्टमोऽध्यायः

# अष्टाक्षरमन्त्रः

सूत उवाच

अष्टाक्षरो द्विजश्रेष्ठा नमो नारायणेति च। द्वादशाक्षरमंत्रश्च परमः परमात्मनः॥१॥
मंत्रः षडक्षरो विप्राः सर्ववेदार्थसंचयः। यश्चोंनमः शिवायेति मंत्रः सर्वार्थसाधकः॥२॥
तथा शिवतरायेति दिव्यः पंचाक्षरः शुभः। मयस्कराय चेत्येवं नमस्ते शंकराय च॥३॥
सप्ताक्षरोयं रुद्रस्य प्रधानपुरुषस्य वै। ब्रह्मा च भगवान्विष्णुः सर्वे देवाः सवासवाः॥४॥
मंत्रैरेतैर्द्विजश्रेष्ठा मुनयश्च यजंति तम्। शंकरं देवदेवेशं मयस्करमजोद्भवम्॥५॥
शिवं च शंकरं रुद्रं देवदेवमुमापतिम्। प्राहुर्नमः शिवायेति नमस्ते शंकराय च॥६॥
मयस्कराय रुद्राय तथा शिवतराय च। जप्त्वा मुच्येत वै विप्रो ब्रह्महत्यादिभिः क्षणात्॥७॥
पुरा कश्चिद्द्विजः शक्तो धुंधुमूक इति श्रुतः। आसीत्तृतीये त्रेतायामावर्त्ते च मनोः प्रभोः॥८॥
मेघवाहनकल्पे वै ब्रह्मणः परमात्मनः। मेघो भूत्वा महादेवं कृत्तिवासमीश्वरम्॥९॥
बहुमानेन वै रुद्रं देवदेवो जनार्दनः। खिन्नोऽतिभाराद्रुद्रस्य निःश्वासोच्छ्वासवर्जितः॥१०॥

---

आठवाँ अध्याय

# अष्टाक्षर मन्त्र

सूत बोले

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! अष्टाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो नरायणाय' और द्वादशाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' ये दोनो मन्त्र परमात्मा के सबसे बड़े मन्त्र हैं। हे ब्राह्मणों! षडक्षर मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' सब अर्थों का साधक है। दिव्य पंचाक्षर मन्त्र शिवतराय बहुत शुभ है। 'मयस्कराय' भी ऐसा ही मन्त्र है। सप्ताक्षर मन्त्र 'नमो शंकराय' प्रधान पुरुष रुद्र का मन्त्र है। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! इन मन्त्रों द्वारा ब्राह्मण, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र सहित सब देवता और ऋषिगण शंकर की पूजा करते हैं। वे शिव, ब्रह्मा के उद्भव के कारण, उमा के पति और देवेश की पूजा इन मन्त्रों से करते हैं। वे निरन्तर नमः शिवाय, नमस्ते शंकराय, मयस्कराय, रुद्राय और शिवतराय इन मन्त्रों के जप से ब्राह्मण ब्रह्महत्या आदि पापों से मुक्त हो जाता है।।१-७।। प्राचीन काल में ब्रह्मा के मेघवाहन कल्प में पहिले तीसरे मन्वन्तर में त्रेता में महान् आत्मा एक शक्तिशाली ब्राह्मण धुंधुमूक ने जन्म लिया। वह कल्प मेघवाहन कहलाता था क्योंकि देवेश विष्णु ने मेघ का रूप धारण किया था। उन्होंने मेघ होकर बहुत श्रद्धा से भगवान महादेव को प्रसन्न करने के लिये यहाँ तक कि श्वास और निःश्वास को भी त्यागकर घोर तपस्या की। वह रुद्र के अतिभार से दुःखी था। उसने नीलकंठ से अपनी समस्या जताकर तपस्या की थी। तब ईशान भगवान शंकर

विज्ञाप्य शितिकंठाय तपश्चक्रेंबुजेक्षणः। तपसा परमैश्वर्यं बलं चैव तथाद्भुतम्॥११॥
लब्धवान्परमेशानाच्छंकरात्परमात्मनः । तस्मात्कल्पस्तदा चासीन्मेघवाहनसंज्ञया॥१२॥
तस्मिन्कल्पे मुनेः शापाद्धुंधुमूकसमुद्भवः। धुंधुमूकात्मजस्तेन दुरात्मा च बभूव सः॥१३॥
धुंधुमूकः पुरासक्तो भार्यया सह मोहितः। तस्यां वै स्थापितो गर्भः कामासक्तेन चेतसा॥१४॥
अमावास्यामहन्येव मुहूर्ते रुद्रदैवते। अंतर्वत्नी तदा भार्या भुक्ता तेन यथासुखम्॥१५॥
असूत सा च तनयं विशल्याख्या प्रयत्नतः। रुद्रे मुहूर्ते मंदेन वीक्षिते मुनिसत्तमाः॥१६॥
मातुः पितुस्तथारिष्टं स संजात स्तथात्मनः। ऋषी तमूचतुर्विप्रा धुंधुमूकं मिथस्तदा॥१७॥
मित्रावरुणनामानौ दुष्पुत्र इति सत्तमौ। वसिष्ठः प्राह नीचोऽपि प्रभावाद्वै बृहस्पतेः॥१८॥
पुत्रस्तवासौ दुर्बुद्धिरपि मुच्यति किल्बिषात्। दुःखितो धुंधुमूकोऽसौ दृष्ट्वा पुत्रमवस्थितम्॥१९॥
जातकर्मादिकं कृत्वा विधिवत्स्वयमेव च। अध्यापयामास च तं विधिनैव द्विजोत्तमाः॥२०॥
तेनाधीतं यथान्यायं धौंधुमूकेन सुव्रताः। कृतोद्वाहस्तदा गत्वा गुरुशुश्रुषणे रतः॥२१॥
अनेनैव मुनिश्रेष्ठा धौंधुमूकेन दुर्मदात्। भुक्त्वान्यां वृषलीं दृष्ट्वा स्वभार्यावद्दिवानिशम्॥२२॥
एकशय्यासनगतो धौंधुमूको द्विजाधमः। तथा चचार दुर्बुद्धिस्त्यक्त्वा धर्मगतिं पराम्॥२३॥
माध्वी पीता तया सार्धं तेन रागविवृद्धये। केनापि कारणेनैव तामुद्दिश्य द्विजोत्तमाः॥२४॥
निहता सा च पापेन वृषली गतमंगला। ततस्तस्यास्तदा तस्य भ्रातृभिर्निहतः पिता॥२५॥

---

से अपने तम से उसको ऐश्वर्य और अद्भुत बल प्राप्त किया। इसी कारण उस कल्प का नाम मेघवहन कल्प हुआ।।८-१२।। मेघवाहन कल्प में एक ऋषि के शाप से धुंधुमूक दुरात्मा दुष्ट हो गया। धुंधुमूक अपनी पत्नी के ऊपर मोहित था। उसने कामासक्त हो उस पत्नी में गर्भ स्थापित किया।।१३-१४।। अमावस्या तिथि में रुद्र देवता के मुहूर्त्त में दिन के समय उसने अपनी गर्भवती पत्नी से सुखपूर्वक सम्भोग किया।।१५।। उसका नाम विशाल्या था। उसने बहुत कष्ट से एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम विशाल रखा गया। शनि ग्रह द्वारा दृष्ट रुद्र मुहूर्त्त में जन्म लेने के कारण वह अपने माता-पिता का तथा अपना भी अरिष्ट हो गया। मित्र और वरुण नामक दो ऋषियों ने धुंधुमूक से गुप्त रूप से कहा कि 'विशाल एक दुष्ट पुत्र है।' वसिष्ठ ने कहा "यद्यपि तुम्हारा पुत्र नीच और दुष्ट है फिर भी बृहस्पति के प्रभाव से वह दुर्बुद्धि अपने पापों से मुक्त हो जायगा।" दुःखी धुंधुमूक ने पुत्र का जातकर्म आदि संस्कार करके उसको स्वयं विधिपूर्वक पढ़ाया। हे सुव्रत! उसने भी धुंधुमूक से सब पूर्ण रीति से पढ़ा। उसका विवाह हुआ और वह पिता की सेवा करने लगा।।१६-२१।। हे श्रेष्ठ मुनियों! इसके बाद उस दुष्ट विशाल ने उदंडता वश एक शूद्र की पत्नी को पटाकर अपनी स्त्री के समान उस शूद्रा के साथ दिन-रात एक ही आसन और एक ही विस्तर पर मौज-मस्ती करने लगा। धंधुमूक के पुत्र उस नीच और दुष्ट ब्राह्मण ने उच्च आचार-विचार छोड़ दिया।।२२-२३।।

उसके साथ अपने काम वासना को बढ़ाने के लिए शराब भी पीता था किन्तु हे उत्तम ब्राह्मणों! किसी कारण से उस पापी ने उस शूद्रा स्त्री को मार डाला। तब उसके सालों ने विशाल के माता-पिता और उसकी वैध

माता च तस्य दुर्बुद्धेर्धौन्धुमूकस्य शोभना।
भार्या च तस्य दुर्बुद्धेः श्यालास्ते चापि सुव्रताः॥२६॥
राज्ञा क्षणादहो नष्टं कुलं तस्याश्च तस्य च। गत्वासौ धौंधुमूकश्च येन केनापि लीलया॥२७॥
दृष्ट्वा तु तं मुनिश्रेष्ठं रुद्रजाप्यपरायणम्। लब्ध्वा पाशुपतं तद्वै पुरा देवान्महेश्वरात्॥२८॥
लब्ध्वा पंचाक्षरं चैव षडक्षरमनुत्तमम्। पुनः पंचाक्षरं चैव जप्त्वा लक्षं पृथक् पृथक्॥२९॥
व्रतं कृत्वा च विधिना दिव्यं द्वादशमासिकम्। कालधर्मं गतः कल्पे पूजितश्च यमेन वै॥३०॥
उद्धृता च तथा माता पिता श्यालाश्च सुव्रताः। पत्नी च सुभगा जाता सुस्मिता च पतिव्रता॥३१॥
ताभिर्विमानमारुह्य देवैः सेंद्रैरभिष्टुतः। गाणपत्यमनुप्राप्य रुद्रस्य दयितोऽभवत्॥३२॥
तस्मादष्टाक्षरान्मंत्रात्तथा वै द्वादशाक्षरात्। भवेत्कोटिगुणं पुण्यं नात्र कार्या विचारणा॥३३॥
तस्माज्जपेद्धि यो नित्यं प्रागुयक्तेनविधानतः। शक्तिबीजसमायुक्तं स याति परमां गतिम्॥३४॥
एतद्वः कथितं सर्वं कथासर्वस्वमुत्तमम्। यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्वा द्विजोत्तमान्॥३५॥
स याति ब्रह्मलोकं तु रुद्रजाप्यमनुत्तमम्॥३६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अष्टमोऽध्यायः॥८॥**

---

पत्नी को मार डाला। हे सुव्रत! वे साले भी राजा के द्वारा मार दिये गये। इस प्रकार उसका और उसके परिवार का नाश हो गया। धुंधुमूक का पुत्र इधर-उधर किसी-न-किसी क्रिया-कलाप में घूमता रहा। किसी तरह उसने एक श्रेष्ठ मुनि को रुद्र जाप में लगे हुए देखा। उस मुनि ने भगवान् महेश्वर से पाशुपत मन्त्र को प्राप्त किया था। पंचाक्षर और षडक्षर मन्त्र को सौ हजार बार अर्थात् एक-एक लाख बार अलग-अलग जप किया उसने बारह मास तक विधिपूर्वक दिव्य व्रत किया। मृत्यु को प्राप्त होने पर यम ने उसकी पूजा की।।२४-३०।। हे सुव्रत! उसने अपने माता-पिता साले प्रथमा पत्नी का उद्धार किया। वह सती पत्नी मुस्कराती रही। वह उन लोगों के साथ विमान पर चढ़कर स्वर्गलोक को गया। वहाँ इन्द्र सहित देवताओं ने उसकी स्तुति की। वह गणों के स्वामी का पद प्राप्त किया और भगवान् रुद्र का प्रिय हो गया। अतः अष्टाक्षर मन्त्र से तथा द्वादशाक्षर मन्त्र से कोटि गुना पुण्य प्राप्त होता है। इसमें कोई संशय नहीं है। अतः पहले कहे गये विधान के साथ जो कोई निरन्तर इन मन्त्रों का जप करता है और शक्ति मन्त्रों के साथ, शक्ति बीज मन्त्रों के साथ मिलाकर जप करता है वह परम गति को प्राप्त होता है। यह सबसे उत्तम कथा मैंने तुम लोगों से कहा जो इसको पढ़े और सुने और उत्तम ब्राह्मणों को सुनाए वह ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है।।३१-३६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अष्टाक्षर मन्त्र नामक**
**आठवाँ अध्याय समाप्त॥८॥**

नवमोऽध्यायः

# पाशुपतसंस्कारः

ऋषय ऊचुः

देवैः पुरा कृतं दिव्यं व्रतं पाशुपतं शुभम्। ब्रह्मणा च स्वयं सूत कृष्णेनाक्लिष्टकर्मणा॥१॥
पतितेन च विप्रेण धौंधुमूकेन वै तथा। कृत्वा जप्त्वा गतिः प्राप्ता कथं पाशुपतं व्रतम्॥२॥
कथं पशुपतिर्देवः शंकरः परमेश्वरः। वक्तुमर्हसि चास्माकं परं कौतूहलं हि नः॥३॥

सूत उवाच

पुरा शापाद्विनिर्मुक्तो ब्रह्मपुत्रो महायशाः। रुद्रस्य देवदेवस्य मरुदेशादिहागतः॥४॥
त्यक्त्वा प्रसादाद्रुद्रस्य उष्ट्रदेहमजाज्ञया। शिलादपुत्रमासाद्य नमस्कृत्य विधानतः॥५॥
मेरुपृष्ठे मुनिवरः श्रुत्वा धर्ममनुत्तमम्। माहेश्वरं मुनिश्रेष्ठा ह्यपृच्छच्च पुनः पुनः॥६॥
नंदिनं प्रणिपत्यैनं कथं पशुपतिः प्रभुः। वक्तुमर्हसि चास्माकं तत्सर्वं च तदाह सः॥७॥
तत्सर्वं श्रुतवान् व्यासः कृष्णद्वैपायनः प्रभुः। तस्मादहमनुश्रुत्य युष्माकं प्रवदामि वै॥८॥
सर्वे शृण्वंतु वचनं नमस्कृत्वा महेश्वरम्।

सनत्कुमार उवाच

कथं पशुपतिर्देवः पशवः के प्रकीर्तिताः॥९॥

---

## नौवाँ अध्याय

# पाशुपत संस्कार

### ऋषिगण बोले

हे सूत! दिव्य और पाशुपत संस्कार पहले देवताओं द्वारा किया गया था। यह स्वयं ब्रह्मा द्वारा किया गया और अनुपमकर्मी कृष्ण द्वारा उसी प्रकार किया गया। पतित ब्राह्मण धुंधुमूक के पुत्र द्वारा भी किया गया था। पाशुपत संस्कार करने के बाद कैसे वे लोग मोक्ष प्राप्त कर सके? किस प्रकार पशुपति पूजा की गयी? यह आप हम लोगों को बताएँ। यह सुनने के लिए हम लोगों को बहुत कौतूहल है।।१-३।।

### सूत बोले

पहले ब्रह्मा के पुत्र महायशस्वी देवताओं के स्वामी रुद्र के श्राप से मुक्त हुए वह मरुस्थल से यहाँ आये थे। ऊँट के शरीर को रुद्र की कृपा से और ब्रह्मा की आज्ञा से त्यागकर शिलादि के पुत्र नन्दी के पास पहुँचकर विधान के अनुसार नमस्कार किया। हे महर्षियों! मेरु की पीठ पर श्रेष्ठ ऋषि उत्तम धर्म की वार्ता को सुना। नन्दी को नमस्कार करने के बाद शिव से सम्बन्धित पवित्र पाशुपत संस्कार के विषय में उसने नन्दी से बार-बार पूछा। पशुपति स्वामी की पूजा का व्रत कैसे किया जाता है? आप हमको ये सब बताएँ? उस समय उन्होंने सब कुछ बताया। कृष्ण द्वैपायन व्यास ने सनत् कुमार से सुना। व्यास से सुनकर मैं तुम लोगों से कहता हूँ। महेश्वर को नमस्कार करके तुम सब सुनो।

कैः पाशैस्ते निबध्यंते विमुच्यंते च ते कथम्॥

शैलादिरुवाच

सनत्कुमार वक्ष्यामि सर्वमेतद्यथातथम्॥१०॥
रुद्रभक्तस्य शांतस्य तव कल्याणचेतसः। ब्रह्माद्याः स्थावरांताश्च देवदेवस्य धीमतः॥११॥
पशवः परिकीर्त्यंते संसारवशवर्तिनः। तेषां पतित्वाद्भगवान् रुद्रः पशुपतिः स्मृतः॥१२॥
अनादिनिधनो धाता भगवान्विष्णुरव्ययः। मायापाशेन बध्नाति पशुवत्परमेश्वरः॥१३॥
स एव मोचकस्तेषां ज्ञानयोगेन सेवितः। अविद्यापाशुबद्धानां नान्यो मोचक इष्यते॥१४॥
तमृते परमात्मानं शंकरं परमेश्वरम्। चतुर्विंशतितत्त्वानि पाशा हि परमेष्ठिनः॥१५॥
तैः पाशैर्मोचयत्येकः शिवो जीवैरुपासितः। निबध्नाति पशूनेकश्चतुर्विंशतिपाशकैः॥१६॥
स एव भगवान्रुद्रो मोचयत्यपि सेवितः। दशेंद्रियमयैः पाशैरंतःकरणसंभवैः॥१७॥
भूततन्मात्रपाशैश्च पशून्मोचयति प्रभुः। इंद्रियार्थमयैः पाशैर्बद्धा विषयिणः प्रभुः॥१८॥
आशु भक्ता भवंत्येव परमेश्वरसेवया। भज इत्येष धातुर्वै सेवायां परिकीर्तितः॥१९॥
तस्मात्सेवा बुधैः प्रोक्ता भक्तिशब्देन भूयसी। ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतं पशून्बद्ध्वा महेश्वरः॥२०॥
त्रिभिर्गुणमयैः पाशैः कार्यं कारयति स्वयम्। दृढेन भक्तियोगेन पशुभिः समुपासितः॥२१॥
मोचयेत्येव तान्सद्यः शंकरः परमेश्वरः। भजनं भक्तिरित्युक्ता वाङ्मनःकायकर्मभिः॥२२॥

---

**सनत्कुमार बोले**

पशुपति देव कैसे हैं? पशु कौन है? किस बन्धनों (पाश) से वे बँधे हुए हैं? वे कैसे मुक्त होते हैं?।।४-१०।।

**शैलादि बोले**

हे सनत्कुमार! यह सब ज्यों-का-त्यों मैं रुद्र का भक्त शान्त और शुद्ध आपसे कहता हूँ। ब्रह्मा से लेकर के स्थावर तक बुद्धिमान देवताओं के देवता पशु कहलाते हैं। वे संसार के वश में रहने वाले हैं। उनके स्वामी होने के कारण वह पशुपति रूप में प्रसिद्ध हैं। अनादि अव्यय और सबके स्रष्टा परमेश्वर पशु की तरह माया के पाश बन्धन में बाँधते हैं। पूर्ण ज्ञान के मार्ग द्वारा सेवा किये जाने पर वे ही मुक्त करने वाले हैं। अविद्या, अज्ञान के पाश से बँधने से बँधे हुए लोगों का दूसरा कोई मुक्त करने वाला नहीं है।।१०ब-१५।। परमेश्वर के चौबीस (२४) तत्त्व पाश (बन्धन) हैं। इन चौबीस पाशों से शिव ही पशुओं को बाँधते हैं। जीवों द्वारा पूजित होने पर केवल शिव ही उस बन्धन से उनको मुक्त करते हैं। अन्तःकरण से उसका दस इन्द्रियों रूपी पाशों से और भूत तन्मात्रा आदि पाशों से शिव ही मुक्त करते हैं। परमेश्वर की सेवा से आत्मायें (जीव) तुरन्त मुक्त हो जाते हैं। 'भज' धातु का अर्थ ही सेवा करना है।।१६-१९।। इसमें भक्ति शब्द द्वारा सबसे बड़ी सेवा के विचार को विद्वानों ने भक्ति कहा है। प्रत्येक जीव को ब्रह्मा से लेकर स्तम्ब के अग्र भाग तक गुणों के रूप के तीन गुण रूपी पाशों के द्वारा बाँधते हैं। और स्वयं कार्य को कराते हैं। पशुओं द्वारा विनम्र भक्ति मार्ग से उपासना किये जाने पर परमेश्वर शंकर तुरन्त उनको पाप से मुक्त कर देते हैं। वाणी, मन और कर्मों से भजन करने को भक्ति कहते हैं। यह भक्ति सब कार्य के कारण होने से पाश को काटने में पूर्णरूप से समर्थ है।।२०-२२।। शिव के गुण

सर्वकार्येणहेतुत्वात्पाशच्छेदपटीयसी । सत्यः सर्वग इत्यादि शिवस्य गुणचिंतना॥२३॥
रूपोपादानचिंता च मानसं भजनं विदुः। वाचिकं भजनं धीराः प्रणवादिजपं विदुः॥२४॥
कायिकं भजनं सद्भिः प्राणायामादि कथ्यते। धर्माधर्ममयैः पाशै र्बंधनं देहिनामिदम्॥२५॥
मोचकः शिव एवैको भगवान्परमेश्वरः। चतुर्विंशतितत्त्वानि मायाकर्मगुणा इति॥२६॥
कीर्त्यंते विषयाश्चेति पाशा जीवनिबंधनात्। तैर्बद्धाः शिवभक्त्यैव मुच्यंते सर्वदेहिनः॥२७॥
पंचक्लेशमयैः पाशैः पशून्बध्नाति शंकरः। स एव मोचकस्तेषां भक्त्या सम्यगुपासितः॥२८॥
अविद्यामस्मितां रागं द्वेषं च द्विपदां वराः। वदंत्यभिनिवेशं च क्लेशान्पाशत्वमागतान्॥२९॥
तमो मोहो महामोहस्तामिस्त्र इति पंडिताः। अंधतामिस्त्र इत्याहुरविद्यां पंचधा स्थिताम्॥३०॥
ताञ्जीवान्मुनिशार्दूलाः सर्वांश्चैवाप्यविद्यया। शिवो मोचयति श्रीमान्नान्यः कश्चिद्विमोचकः॥३१॥
अविद्यां तम इत्याहुरस्मितां मोह इत्यपि। महामोह इति प्राज्ञा रागं योगपरायणाः॥३२॥
द्वेषं तामिस्त्र इत्याहुरंधतामिस्त्र इत्यपि। तथैवाभिनिवेशं च मिथ्याज्ञानं विवेकिनः॥३३॥
तमसोऽष्टविधा भेदा मोहश्चाष्टविधः स्मृतः। महामोहप्रभेदाश्च बुधैर्दश विचिंतिताः॥३४॥
अष्टादशविधं चाहुस्तामिस्त्रं च विचक्षणाः। अंधतामिस्त्रभेदाश्च तथाष्टादशधा स्मृताः॥३५॥
अविद्ययास्य संबंधो नातीतो नास्त्यनागतः। भवेद्रागेण देवस्य शंभोरंगनिवासिनः॥३६॥
कालेषु त्रिषु संबंधस्तस्य द्वेषेण नो भवेत्। मायातीतस्यदेवस्य स्थाणोः पशुपतेर्विभोः॥३७॥
तथैवाभिनिवेशेन संबंधो न कदाचन। शंकरस्य शरण्यस्य शिवस्य परमात्मनः॥३८॥

---

का चिन्तन जैसे—"वह सत्य है, वह सर्वव्यापी है" आदि और उनके रूपों और उपादान का विचार मानसिक भजन हैं। विद्वान लोग प्रणव आदि जप को मौखिक भजन कहते हैं। सज्जनों ने प्राणायाम आदि को शारीरिक (कायिक) भजन कहा है। इस प्रकार धर्म और अधर्म में पाशों द्वारा वह धर्मों का बन्धन है। केवल परमेश्वर ही उनको बन्धन से मुक्त करता है। चौबीस तत्त्व माया के कर्म और गुण हैं। वे विषय कहलाते हैं। उनसे बाँधे गये सब शरीरधारी शिव भक्ति से ही मुक्त होते हैं।।२३-२७।। पंचपर्त पाश बन्धन जिनको क्लेश कहते हैं उन क्लेश रूपी पाशों से शंकर पशुओं को बाँधते हैं। भक्ति से भलीभाँति सेवा किये जाने पर वह ही उनके छोड़ने वाले (मोचक) हैं।।२८।। पंचक्लेश जो कि बन्धन है वे अविद्या (अज्ञान), अस्मिता (अहंकार), राग (लगाव), द्वेष (घृणा), अभिनिवेश संसारिक सुख में लिप्तता है। विद्वान लोग कहते हैं कि अविद्या पाँच रूपों मे होती है। उनके नाम क्रमशः तमस्, मोह, महामोह, तामिस्त्र, अंध्रतामिस्त्र हैं।।२९-३०।। हे श्रेष्ठ मुनियों! उन सब जीवों को अविद्या से शिव ही मुक्त करते हैं। दूसरा कोई मोचक नहीं है।।३१।। यौगिक क्रिया में लगे विद्वान लोग अविद्या को तम (अन्धकार), अस्मिता को मोह (माया), राग (लगाव) जैसे—महामोह (महामाया), द्वेष (घृणा), तामिस्त्र (अन्धकार), अभिनिवेश और मिथ्याज्ञान अन्ध्रतामिस्त्र।।३२-३३।। तमस् आठ प्रकार का होता है। मोह भी आठ प्रकार का होता है। माया मोह के दस विभाग होते हैं।।३४।। विद्वानों ने कहा है कि, तामिस्त्र और अन्ध्रतामिस्त्र के अट्ठारह विभाग होते हैं।।३५।। शिव का अविद्या से सम्बन्ध न कोई अतीत है न भविष्य से हैं। शिव से राग का भी सम्बन्ध नहीं है। उनका द्वेष से तीनों कालों में सम्बन्ध नहीं है क्योंकि वे मायातीत (माया

कुशलाकुशलैस्तस्य संबंधो नैव कर्मभिः। भवेत्कालत्रये शंभोरविद्यामतिवर्तिनः॥३९॥
विपाकैः कर्मणां वापि न भवेदेव संगमः। कालेषु त्रिषु सर्वस्य शिवस्य शिवदायिनः॥४०॥
सुखदुखैरसंस्पृश्यः कालत्रितयवर्तिभिः। स तैर्विनश्वरैः शंभुर्बोधानंदात्मकः परः॥४१॥
आशयैरपरामृष्टः कालत्रितयगोचरैः। धियां पतिः स्वभूरेष महादेवो महेश्वरः॥४२॥
अस्पृश्यः कर्मसंस्कारैः कालत्रितयवर्तिभिः। तथैव भोगसंस्कारैर्भगवानंतकांतकः॥४३॥
पुंविशेषपरो देवो भगवान्परमेश्वरः। चेतनाचेतानयुक्तप्रपंचादखिलात्परः॥४४॥
लोके सातिशयत्वेन ज्ञानैश्वर्यं विलोक्यते। शिवेनातिशयत्वेन शिवं प्राहुर्मनीषिणः॥४५॥
प्रतिसर्गं प्रसूतानां ब्रह्मणां शास्त्रविस्तरम्। उपदेष्टा स एवादौ कालावच्छेदवर्तिनाम्॥४६॥
कालावच्छेदयुक्तानां गुरूणामप्यसौ गुरुः। सर्वेषामेव सर्वेशः कालावच्छेदवर्जितः॥४७॥
अनादिरेष संबंधो विज्ञानोत्कर्षयोः परः। स्थितयोरीदृशः सर्वः परिशुद्धः स्वभावतः॥४८॥
आत्मप्रयोजनाभावे परानुग्रह एव हि। प्रयोजनं समस्तानां कार्याणां परमेश्वरः॥४९॥
प्रणवो वाचकस्तस्य शिवस्य परमात्मनः। शिवरुद्रादिशब्दानां प्रणवोपि परः स्मृतः॥५०॥
शंभोः प्रणववाच्यस्य भावना तज्जपादपि। या सिद्धिः स्वपराप्राप्या भवत्येव न संशयः॥५१॥
ज्ञानतत्त्वं प्रयत्नेन योगः पाशुपतः परः। उक्तस्तु देवदेवेन सर्वेषामनुकंपया॥५२॥

---

से परे) हैं। उसी प्रकार शरण लेने के योग्य परमात्मा शंकर का कभी भी अभिनिवेश (संसारिक सुख में लिप्तता) का सम्बन्ध नहीं है।।३६-३८।। त्रिकाल में शम्भु का अविद्या से और कोई सम्बन्ध नहीं है। और कर्म के चाहे वह अच्छा हो या बुरा उनका सम्बन्ध नहीं है।।३९।। शिवदायक शिव का माया से भी कोई सम्पर्क नहीं है क्योंकि माया द्वारा किये गये कर्मों के विपाक से वे सर्वथा अलग हैं।।४०।। तीनों कालों में होने वाले सुखों और दुःखों से वे अछूते हैं क्योंकि वे सुख और दुःख से परे हैं। क्योकि शिव बोध और आनन्द स्वरूप हैं अतः वे सुख और दुःख से अप्रभावित हैं।।४१।। बुद्धि के स्वयम् स्वामी महेश्वर तीनों कालों में दिखायी देने वाले भाग्यों और सुखों से अप्रभावित रहते हैं।।४२।। मृत्यु के देवता यमराज को मारने वाले भगवान् शिव तीनों कालों को संस्कारों के भोग से भी अछूते हैं, अर्थात् उन पर कर्म और उसके फल के भोग का स्पर्श नहीं होता है।।४३।। भगवान् परमेश्वर विशेष पुरुष से भी बड़े हैं। वह चेतन और अचेतन से युक्त समकोण प्रपंच से परे हैं। वह सम्पूर्ण विश्व से परे हैं। (बाहर) हैं।।४४।। जगत में ज्ञान और ऐश्वर्य दिखायी देते हैं जो एक दूसरे से अतिशय आगे होना चाहते हैं। विद्वान लोग कहते हैं कि दूसरे से आगे बढ़ने वाले में शिव सबसे आगे हैं।।४५।। वे प्रत्येक सृष्टि में उत्पन्न होने वाले ब्रह्माओं और पूरे काल तक रहने वाले ब्रह्माओं को शास्त्रों के उपदेश देने वाले हैं।।४६।। जो काल द्वारा सीमित और वे घिरे हुए हैं, वे उन सब गुरुओं के भी गुरु हैं। वे काल की सीमा से बाहर और सबके स्वामी हैं।।४७।। यह सम्बन्ध अनादि है। वह पूर्ण ज्ञान और उत्कर्ष से ऊपर हैं। वह स्वभावतः पूर्ण रूप से शुद्ध हैं।।४८।। क्योंकि उनका अपना कोई प्रयोजन नहीं है, परमेश्वर के सब क्रिया-कलापों का सही प्रयोजन दूसरों के ऊपर अनुग्रह करना ही है। परमात्मा शिव प्रणव शब्द, परमात्मा शिव का वाचक है अर्थात् शिव को प्रगट करता है। शिव और रुद्र आदि शब्दों से प्रणव शब्द उच्चतर है।।४९-५०।। इसमें कोई सन्देह

स होवाचैव याज्ञवल्क्यो यदक्षरं गार्ग्ययोगिनः।
अभिवदंति स्थूलमनंतं महाश्चर्यमदीर्धमलोहितममस्तकमा-
सायमत एवो पुनारसमसंमगंधमरसमचक्षुष्कम-
श्रोत्रमवाङ्मनोतेजस्कमप्रमाणमनुसुखमनामगोत्र-
ममरमजरमनामयममृतमोंशब्दममृतमसंवृतमपूर्वमन
परमनंतमबाह्यं तदश्नाति किंचन न तदाश्नाति किंचन॥५३॥
एतत्कालव्यये ज्ञात्वा परं पाशुपतं प्रभुम्। योगे पाशुपते चास्मिन् यस्यार्थः किल उत्तमे॥५४॥
कृत्वोंकारं प्रदीपं मृगय गृहपतिं सूक्ष्ममाद्यंतरस्थं
संयम्य द्वारवासं पवनपटुतरं नायकं चेंद्रियाणाम्।
वाग्जालैः कस्य हेतोर्विभटसि तु भयं दृश्यते नैवकिंचिद्
देहस्थं पश्य शंभुं भ्रमसि किमु परे शास्त्रजालेन्धकारे॥५५॥
एवं सम्यग्बुधैर्ज्ञात्वा मुनीनामथ चोक्तं शिवेन। असमरसं पंचधा कृत्वाभयं चात्मनि योजयेत्॥५६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे नवमोऽध्यायः॥९॥**

---

नहीं कि प्रणव शब्द से वाच्य शिव की भावना प्रगट होती है और प्रणव के जप से भी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पूर्णतः यह सिद्धि प्राप्त होती है। वही पूर्णता शब्द सिद्धि प्राप्त होती है जबकि लोग प्रणव को दोहराते हैं। यहाँ तक कि जब वे प्रणव मन्त्र का और उस पर ध्यान लगाते है जो प्रणव मन्त्र द्वारा व्यक्त किया हुआ है। देवताओं के देवता पशुपति ने सब लोगों पर अनुग्रह करके श्रेष्ठ पूर्ण ज्ञान के आधार महान् पशुपति योग को बताया है।।५१-५२।। याज्ञवल्क्य हे गार्गी! यह सर्वोच्च है जिसको योगियों ने गार्ग्य कहा है। वास्तव में वह स्थूल अनन्त महा आश्चर्य, जो लम्बा नहीं है, लाल नहीं है, जो मस्तक हीन है, जो बैठा हुआ नहीं है। अतएव जो रसहीन है, जो सम्पर्क हीन है, जिसमें गंध नहीं, रस नहीं, नेत्र नहीं, कान नहीं, जिह्वा नहीं, मन नहीं, वाणी नहीं, तेज नहीं, कोई प्रमाण नहीं, सुख नहीं, अनाम गोत्र, अजर, अमर, जाति नहीं, मृत्यु नहीं, जो अमृतमय है वह ओम् शब्द द्वारा व्यक्त किया गया है, वह अमर है। जिसका न कोई पूर्ववर्ती है, न परवर्ती है, वह अन्तहीन वह बाहर भी नहीं यह कुछ खाता है और कोई वस्तु नहीं खाता है। कोई भी व्यक्ति पशुपति योग द्वारा ही पशुपति को प्राप्त करता है। पशुपति को उत्तम अवसर अनुभव करने के लिए है।।५३-५४।। ओंकार द्वीप को जलाकर गृहपति पशुपति को ढूँढ़ो जो सूक्ष्म हैं भीतर बाहर स्थित हैं। जो इन्द्रियों का स्वामी है। इन्द्रियों के द्वार की वायु को रोको। शास्त्रों के जाल रूपी अँधेरे में क्यों भटकते हो? किस लिए भ्रम में पड़ते हो। कोई भय नहीं है। अपने देह के भीतर विरजमान सिन्धु को देखो।।५५।। यह विद्वानों के द्वारा पूर्णरूप से यह जानकर उन पंचाकृति को असम रस को फ़ाड़कर आत्मा में निर्भीकता प्राप्त होगी।।५६।।

**श्रीलिंगमहापुराण उत्तर भाग में पाशुपत संस्कार**
**नामक नौवां अध्याय समाप्त॥९॥**

दसमोऽध्यायः

# उमापतिमाहात्म्यम्

सनत्कुमार उवाच

भूय एव ममाचक्ष्व महिमानमुमापतेः। भवभक्त महाप्राज्ञ भगवन्नंदिकेश्वर॥१॥

शैलादिरुवाच

सनत्कुमार! संक्षेपात्तव वक्ष्याम्यशेषतः। महिमानं महेशस्य भवस्य परमेष्ठिनः॥२॥
नास्य प्रकृतिबंधोऽभूद्बुद्धिबंधो न कश्चन। न चाहंकारबंधश्च मनोबंधश्च नोऽभवत्॥३॥
चित्तबन्धो न तस्याभूच्छ्रोत्रबंधो न चाभवत्। न त्वचां चक्षुषां वापि बंधो जज्ञे कदाचन॥४॥
जिह्वाबंधो न तस्याभूद्घ्राणबंधो न कश्चन। पादबंधः पाणिबंधो वाग्बंधश्चैव सुव्रत॥५॥
उपस्थेंद्रियबंधश्च भूततन्मात्रबंधनम्। नित्यशुद्धस्वभावेन नित्यबुद्धो निसर्गतः॥६॥
नित्यमुक्त इति प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्ववेदिभिः। अनादिमध्यनिष्ठस्य शिवस्य परमेष्ठिनः॥७॥
बुद्धिं सूते नियोगेन प्रकृतिः पुरुषस्य च। अहंकारं प्रसूतेऽस्या बुद्धिस्तस्य नियोगतः॥८॥
अंतर्यामीति देहेषु प्रसिद्धस्य स्वयंभुवः। इंद्रियाणि दशैकं च तन्मात्राणि च शासनात्॥९॥
अहंकारोऽतिसंसूते शिवस्य परमेष्ठिनः। तन्मात्राणि नियोगेन तस्य संसुवते प्रभो॥१०॥
महाभूतान्यशेषेण महादेवस्य धीमतः। ब्रह्मादीनां तृणांतं हि देहिनां देवसंगतिम्॥११॥

---

दसवाँ अध्याय

# उमापति का माहात्म्य

**सनत्कुमार बोले·**

हे शिवजी के भक्त! महान् बुद्धिमान् भगवन् नन्दिकेश्वर! आप फिर उमापति की महिमा मुझसे कहो।।१।।

**शैलादि बोले**

हे सनत्कुमार! मैं महेश, भव, परमेष्ठी की सम्पूर्ण महिमा को तुमसे संक्षेप में कहता हूँ।।२।। उमापति शिव को प्रकृति से कोई लगाव नहीं है। न बुद्धि से, अहंकार, मन, चित्त, कान, नेत्र, जीभ, नाक, पैर, हाथ, वाणी, जननेंद्रिय और पंचमहाभूतों से भी कोई बन्धन नहीं है। उमापति स्वभाव से नित्य शुद्ध हैं, और अन्तःकरण से नित्य प्रबुद्ध हैं।।३-६।। तत्त्वज्ञानियों ने उनको नित्य मुक्त कहा है। शिव परमेष्ठी का आदि मध्य और अन्त नहीं है। उनके आदेश से पुरुष की प्रकृति बुद्धि को उत्पन्न करती है। उनकी आज्ञा से बुद्धि अहंकार को उत्पन्न करती है। शिव स्वयम्भू हैं। वे सब की देहों में अन्तर्यामी हैं। इनकी आज्ञा से बुद्धि अहंकार को जन्म देती है। उनकी आज्ञा से अहंकार ग्यारह ज्ञानेन्द्रिय और तन्मात्राओं को जन्म देता है। बुद्धिमान् महादेव की आज्ञा से सम्पूर्ण महाभूत और ब्रह्मा आदि से लेकर तृण के अन्त भाग तक शरीर धारण करते हैं। उन्हीं की आज्ञा से बुद्धि सब

महाभूतान्यशेषाणि जनयंति शिवाज्ञया।
अध्यवस्यति सर्वार्थान्बुद्धिस्तस्याज्ञया विभोः॥१२॥
अंतर्यामीति देहेषु प्रसिद्धस्य स्वयंभुवः। स्वभावसिद्धमैश्वर्यं स्वभावादेव भूतयः॥१३॥
तस्याज्ञया समस्तार्थानहंकारोऽतिमन्यते। चित्तं चेतयते चापि मनः संकल्पयत्यपि॥१४॥
श्रोत्रं शृणोति तच्छक्त्या शब्दस्पर्शादिकं च यत्।
शंभोराज्ञाबलेनैव भवस्य परमेष्ठिनः॥१५॥
वचनं कुरुते वाक्यं नादानादि कदाचन। शरीराणामशेषाणां तस्य देवस्य शासनात्॥१६॥
करोति पाणिरादानं न गत्यादि कदाचन। सर्वेषामेव जंतूनां नियमादेव वेधसः॥१७॥
विहारं कुरुते पादो नोत्सर्गादि कदाचन। समस्तदेहिवृंदानां शिवस्यैव नियोगतः॥१८॥
उत्सर्गं कुरुते पायुर्न वदेत कदाचन। जंतोर्जातस्य सर्वस्व परमेश्वरशासनात्॥१९॥
आनंदं कुरुते शश्वदुपस्थं वचनाद्विभोः। सर्वेषामेव भूतानामीश्वरस्यैव शासनात्॥२०॥
अवकाशमशेषाणां भूतानां संप्रयच्छति। आकाशं सर्वदा तस्य परमस्यैव शासनात्॥२१॥
निर्देशेन शिवस्यैव भेदैः प्राणादिभिर्निजैः। बिभर्ति सर्वभूतानां शरीराणि प्रभंजनः॥२२॥
निर्देशाद्देवदेवस्य सप्तस्कंधगतो मरुत्। लोकयात्रां वहत्येव भेदैः स्वैरावहादिभिः॥२३॥
नागाद्यैः पंचभिर्भेदैः शरीरेषु प्रवर्तते। अपदेशेन देवस्य परमस्य समीरणः॥२४॥
हव्यं वहति देवानां कव्यं कव्याशिनामपि। पाकं च कुरुते वह्निः शंकरस्यैव शासनात्॥२५॥

---

अर्थों को निश्चित करती है। अर्थात् व्यवस्थित करती है।।७-१२।। समृद्धि शक्ति और धन दौलत आदि शिव द्वारा ही प्राप्त होती है। शिव की आज्ञा से ही अहंकार सब पदार्थों में आत्मसम्मान पैदा करता है। उन्हीं के आदेश से चित्त चेतता है। मन संकल्प करता है। मस्तिष्क सब पदार्थों और वस्तुओं में चेतना (जागृति) पैदा करता है। उन्हीं उमापति शिव की शक्ति से कान ध्वनि को सुनता है। शरीर स्पर्श का अनुभव करता है। उन्हीं भव परमेष्ठी की आज्ञा से कुछ वस्तुओं को ग्रहण नहीं करती हैं। उसी स्रष्टा के शासन से हाथ वस्तुओं को ग्रहण करता है। गति आदि नहीं करता। शिव के आदेश से ही पैर चलता है उत्सर्ग (मलादि त्याग) नहीं करता है। गुदा (मल रूप) उत्सर्ग करती है किन्तु बोलती नहीं है अर्थात् उसका काम नहीं करती। शिव की प्रेरणा से सब प्राणियों में जननेन्द्रियाँ सन्तान उत्पन्न करती हैं। शिव के निर्देश से आकाश सब प्राणियों के लिए पर्याप्त अवकाश देता है।।१३-२१।। शरीरों को शिव के निर्देश से आकाश सब प्राणियों के लिए पर्याप्त अवकाश देता है।।२२।। शरीरों को शिव के निर्देश से ही वायु सब प्राणियों को अपने प्राणवायु आदि सात भेदों से धारण पोषण करता है और लोक यात्रा में सहायक होता है। शिव के निर्देश से वायु नाग आदि पाँच भेदों से हमारे शरीर के भीतर कार्य करती है।।२३।। शंकर के ही आज्ञा से अग्नि देवताओं के हव्य और पितरों के लिए कव्य तथा अन्यपाक कर्म करती है। शरीरधारियों के शरीर में स्थित अग्नि चबाये हुए भेजन को पचाती हैं। शिव की आज्ञा से प्राणियों के भीतर जल विद्यमान रहकर उन सब को जीवित रखता है। शिव की आज्ञा से अन्न पचता है। देवताओं के देव

भुक्तमाहारजातं यत्पचते देहिनां तथा। उदरस्थः सदा वह्निर्विश्वेश्वरनियोगतः॥२६॥
संजीवयंत्यशेषाणि भूतान्यापस्तदाज्ञया। अविलंघ्या हि सर्वेषामाज्ञा तस्य गरीयसी॥२७॥
चराचराणि भूतानि बिभर्त्येव तदाज्ञया। आज्ञया तस्य देवस्य देवदेवः पुरंदरः॥२८॥
जीवतां व्याधिभिः पीडां मृतानां यातनाशतैः। विश्वंभरः सदाकालं लोकैः सर्वैरलंघ्यया॥२९॥
देवान्पात्यसुरान् हंति त्रैलोक्यमखिलं स्थितः। अधार्मिकाणां वै नाशं करोति शिवशासनात्॥३०॥
वरुणः सलिलैर्लोकान्संभावयति शासनात्। मज्जयत्याज्ञया तस्य पाशैर्बध्नाति चासुरान्॥३१॥
पुण्यानुरूपं सर्वेषां प्राणिनां संप्रयच्छति। वित्तं वित्तेश्वरस्तस्य शासनात्परमेष्ठिनः॥३२॥
उदयास्तमये कुर्वन्कुरुते कालमाज्ञया। आदित्यस्तस्य नित्यस्य सत्यस्य परमात्मनः॥३३॥
पुष्पाण्यौषधिजातानि प्रह्लादयति च प्रजाः।
अमृतांशुः कलाधारः कालकालस्य शासनात्॥३४॥
आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ मरुतस्तथा। अन्याश्च देवताः सर्वास्तच्छासनविनिर्मिताः॥३५॥
गंधर्वा देवसंघाश्च सिद्धाः साध्याश्च चारणाः। यक्षरक्षःपिशाचाश्च स्थिताः शास्त्रेषु वेधसः॥३६॥
ग्रहनक्षत्रताराश्च यज्ञा वेदास्तपांसि च। ऋषीणां च गणाः सर्वे शासनं तस्य धिष्ठिताः॥३७॥
कव्याशिनां गणाः सप्तसमुद्रा गिरिसिंधवः। शासने तस्य वर्तन्ते काननानि सरांसि च॥३८॥
कलाः काष्ठा निमेषाश्च मुहूर्ता दिवसाः क्षपाः। ऋत्वब्दपक्षमासाश्च नियोगात्तस्य धिष्ठिताः॥३९॥

---

इन्द्र, शिव की आज्ञा का तथा सभी चर और अचर का पालन करता है। शिव के आदेश से विस्तृत जीवित प्राणियों की व्याधि आदि से उत्पन्न पीड़ा को और नरक में पड़े पापों को सहने वाले मृत जीवों के पापों को दूर करते हैं। इनकी आज्ञा अलंघ्य है।।२४-२९।। शिव की आज्ञा से विष्णु देवताओं की रक्षा करते हैं और असुरों का संहार करते हैं। वह तीनों लोकों में स्थित (व्याप्त) हैं। वे पापियों (अभागियों) का नाश करते हैं।।३०।। शिव के आदेश से वरुण जल के द्वारा सब का पालन करते हैं। उन्हीं की आज्ञा से सब को जलमग्न कर देते हैं और असुरों को अपने पाश से बाँधते हैं।।३१।। उन्हीं परमेष्ठी शिव के आदेश से कुबेर सब प्राणियों को उनके गुणकर्म के अनुसार धन देते हैं।।३२।।

आन्तरिक सत्यपूर्ण महान् उस आत्मा के आदेश से सूर्य सूर्योदय और सूर्यास्त करके समय (काल) करता है।।३३।। काल के काल (महाकाल) की आज्ञा से चन्द्रमा अपने अमृतमयी किरणों से सम्पूर्ण औषधियों को प्रफुल्लित करता है और सम्पूर्ण इकाइयों को फूलों और लताओं को खिलाता है।।३४।। आदित्य, वसुगण, रुद्रगण, अश्विन, मरुतगण, सब अन्य देवता उन्हीं शिव के शासन से निर्मित हुए हैं।।३५।। गन्धर्व, देव, सिद्ध, साध्य, चारण, यक्ष, रक्ष, पिशाच गण उन्हीं शिव के शासन में स्थित हैं।।३६।। ग्रह, नक्षत्र, तारा, यज्ञ, वेद, तत्त्व तथा ऋषिगण सब उन्हीं शिव के शासन में स्थित हैं।।३७।। पितृगण, सातों समुद्र, सातों पहाड़, सातों नदियाँ, वन और तालाब सब उन्हीं शिव के शासन में रहते हैं।।३८।। काल की अनेक इकाइयाँ कला, काष्ठा, निमेष, मूहूर्त, दिन-रात्रि, ऋतुएँ, वर्ष, पक्ष और महीनें ये सब उन्हीं शिव की आज्ञा से अधिष्ठित हैं।।३९।। उन्हीं शिव

युगमन्वंतराण्यस्य शंभोस्तिष्ठंति शासनात्। पराश्चैव परार्धाश्च कालभेदास्तथापरे॥४०॥
देवानां जातयश्चाष्टौ तिरश्चां पंच जातयः। मनुष्याश्च प्रवर्तंते देवदेवस्य धीमतः॥४१॥
जातानि भूतवृंदानि चतुर्दशसु योनिषु। सर्वलोकनिषण्णानि तिष्ठंत्यस्यैव शासनात्॥४२॥
चतुर्दशसु लोकेषु स्थिता जाताः प्रजाः प्रभोः। सर्वेश्वरस्य तस्यैव नियोगवशवर्तिनः ॥४३॥
पातालानि समस्तानि भुवानन्यस्य शासनात्। ब्रह्मांडानि च शेषाणि तथा सावरणानि च॥४४॥
वर्तमानानि सर्वाणि ब्रह्मांडानि तदाज्ञया। वर्तंते सर्वभूताद्यैः समेतानि समंततः॥४५॥
अतीतान्यप्यसंख्यानि ब्रह्मांडानि तदाज्ञया। प्रवृत्तानि पदार्थौघैः सहितानि समंततः॥४६॥
ब्रह्मंडानि भविष्यंति सह वस्तुभिरात्मकैः। करिष्यंति शिवस्याज्ञां सर्वैरावरणैः सह॥४७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे दशमोऽध्यायः॥१०॥**

---

के शासन से मन्वन्तर, पर, परार्ध तथा अन्य काल भेद की इकाइयाँ, देवताओं की आठ जातियाँ, पशु-पक्षियों की पाँच जातियाँ तथा मनुष्य गण उन्हीं देवताओं के स्वामी के शासन में रहते हैं।।४०।। चौदह योनियों में पैदा हुए सब प्राणी और सब लोक में रहने वाले उन्हीं शिव के शासन में रहते हैं।।४१।। चौदह लोकों में जन्म लिए हुए और रहने वाले सब प्रजा उन्हीं सर्वेश्वर प्रभु की आज्ञा के वश में रहते हैं। पाताल और सब भुवन उन्हीं के अन्तर्गत हैं।।४२।। सब ब्रह्माण्ड और शेष सब उन्हीं शिव के आवरण के अन्तर्गत हैं। वर्तमान सब ब्रह्माण्ड सम्पूर्ण जीव गण सहित उन्हीं के द्वारा चारों ओर से घिरे हुए हैं। असंख्य अतीत ब्रह्माण्ड अपने में स्थित सब भूतों सहित उन्हीं की आज्ञा में स्थित हैं। भविष्य के ब्रह्माण्ड अपने में स्थित वस्तुओं के साथ सब आवरणों के सहित शिव की आज्ञा का पालन करेंगे।।४३-४७।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में उमापति का माहात्म्य**
**नामक दसवाँ अध्याय समाप्त॥१०॥**

एकादशोऽध्यायः

# शिवस्य विभूतयः

सनत्कुमार उवाच

विभूतीः शिवयोर्मह्यमाचक्ष्व त्वं गणाधिप। परापरविदां श्रेष्ठ परमेश्वरभावित॥१॥

नंदिकेश्वर उवाच

हंत ते कथयिष्यामि विभूतीः शिवयोरहम्। सनत्कुमार योगींद्र ब्रह्मणस्तनयोत्तम॥२॥
परमात्मा शिवः प्रोक्तः शिवा सा च प्रकीर्तिता। शिवमेवेश्वरं प्राहुर्मायां गौरीं विदुर्बुधाः॥३॥
पुरुषं शंकरं प्राहुर्गौरीं च प्रकृतिं द्विजाः। अर्थः शंभुः शिवा वाणी दिवसोऽजः शिवा निशा॥४॥
सप्ततंतुर्महादेवो रुद्राणी दक्षिणा स्मृता। आकाशं शंकरो देवः पृथिवी शंकरप्रिया॥५॥
समुद्रो भगवान् रुद्रो वेला शैलेन्द्रकन्यका। वृक्षः शूलायुधो देवः शूलप्राणिप्रिया लता॥६॥
ब्रह्मा हरोपि सावित्री शंकरार्धशरीरिणी। विष्णु र्महेश्वरो लक्ष्मीर्भवानी परमेश्वरी॥७॥
वज्रपाणिर्महादेवः शची शैलेंद्रकन्यका। जातवेदाः स्वयं रुद्रः स्वाहा शर्वार्धकायिनी॥८॥
यमस्त्रियंबको देवस्तत्प्रिया गिरिकन्यका। वरुणो भगवान् रुद्रो गौरी सर्वार्थदायिनी॥९॥

---

ग्यारहवाँ अध्याय

# शिव की विभूतियों का वर्णन

**सनत्कुमार बोले**

हे गणों के स्वामी! पर और अपर को जानने वालों में श्रेष्ठ महादेव के भक्त! मुझसे शिव और शिवा के विभूतियों को कहो।।१।।

**नन्दकेश्वर बोले**

हे सनत्कुमार योगियों में श्रेष्ठ, ब्रह्मा के पुत्रों में उत्तम! मैं तुमसे शिव और शिवा की विभूतियों को कहता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनो।।२।।

परमात्मा शिव कहा गया है और शिवा भी शिव ही है। बुद्धिमानों ने शिव को ईश्वर और शिवा को माया कहा है। (परमात्मा) पुरुष और स्त्री के दो रूपों में एक ही शरीर में अर्धनारीश्वर रूप में हैं। ब्राह्मण लोग शंकर को पुरुष और शिवा को प्रकृति कहते हैं। शिवा बाणी और शिव अर्थ है। शिव दिन है और शिवा रात्रि है।।३।। यज्ञ श्राद्ध के देवता शिव हैं और शिवा उस यज्ञ कि दक्षिणा हैं। शिवजी आकाश हैं और उनकी प्रिया पृथ्वी हैं।।४-५।। भगवान् रुद्र समुद्र हैं और पार्वती उस समुद्र की बेला हैं।।६।। शूलपाणि शिव वृक्ष और उनकी अर्धांगिनी लता हैं। शिव विष्णु हैं और शिवा भवानी लक्ष्मी हैं।।७।। शिव वज्रपाणि इन्द्र हैं और पर्वतराज की कन्या पार्वती शची हैं, शिवजी अग्नि हैं। उनकी अर्धांगिनी शिवा अग्नि की पत्नी स्वाहा हैं।।८।। शिवजी यम हैं और पार्वती यमी हैं, शिव वरुण हैं और शिवा उनकी पत्नी वरुणानी, सब अर्थ को देने वाली हैं।।९।।

बालेंदुशेखरो वायुः शिवा शिवमनोरमा। चंद्रार्थमौलिर्यक्षेंद्रः स्वयमृद्धिः शिवा स्मृता॥१०॥
चंद्रार्धशेखरश्चंद्रो रोहिणी रुद्रवल्लभा। सप्तसप्तिः शिवः कांता उमादेवी सुवर्चला॥११॥
षण्मुखस्त्रिपुरध्वंसी देवसेना हरप्रिया। उमा प्रसूतीर्वै ज्ञेया दक्षो देवो महेश्वरः॥१२॥
पुरुषाख्यो मनुः शंभुः शतरूपा शिवप्रिया। विदुर्भवानीमाकूतिं रुचिं च परमेश्वरम्॥१३॥
भृगुर्भगाक्षिहा देवः ख्यातिस्त्रिनयनप्रियः। मरीचिर्भगवान्रुद्रः संभूतिर्वल्लभा विभोः॥१४॥
विदुर्भवानीं रुचिरां कविं च परमेश्वरम्। गंगाधरोंगिरा ज्ञेयः स्मृतिः साक्षादुमा स्मृता॥१५॥
पुलस्त्यः शशभृन्मौलिः प्रीतिः कांता पिनाकिनः।
पुलहस्त्रिपुरध्वंसी दया कालरिपुप्रिया॥१६॥
क्रतुर्दक्षक्रतुध्वंसी संनतिर्दयिता विभोः। त्रिनेत्रोऽत्रिरुमा साक्षादनसूया स्मृता बुधैः॥१७॥
ऊर्जामाहुरुमां वृद्धां वसिष्ठं च महेश्वरम्। शंकरः पुरुषाः सर्वे स्त्रियः सर्वा महेश्वरी॥१८॥
पुल्लिंगशब्दवाच्या ये ते च रुद्राः प्रकीर्तिताः।
स्त्रीलिंगशब्दवाच्या याः सर्वा गौर्या विभूतयः॥१९॥
सर्वे स्त्रीपुरुषाः प्रोक्तास्तयोरेव विभूतयः। पदार्थशक्तयो यायास्ता गौरीति विदुर्बुधाः॥२०॥
सासा विश्वेश्वरी देवी स च सर्वोमहेश्वरः। शक्तिमंतः पदार्था ये स च सर्वो महेश्वरः॥२१॥
अष्टौ प्रकृतयो देव्या मूर्तयः परिकीर्तिताः। तथा विकृतयस्तस्या देहबद्धविभूतयः॥२२॥

---

शिव वायु हैं और शिवा वायु की पत्नी हैं, बालेन्दु शिव यक्ष हैं शिवा ऋद्धि हैं।।१०।। चन्द्रशेखर शिव चन्द्र हैं तो उनकी प्रिया रोहिणी हैं। शिव सूर्य हैं तो उनकी प्रिया उमा देवी वर्चला हैं।।११।। त्रिपुर को ध्वंस करने वाले शिव आदि कार्तिकेय हैं तो उनकी प्रिया शिवा देवसेना हैं। शिव दक्ष हैं तो उनकी प्रिया उमा प्रसूति हैं।।१२।। शिव मनु (पुरुष) हैं तो उनकी प्रिया शिवा शतरूपा हैं, शिव जी रुचि हैं तो भवानी आकूति हैं।।१३।। भगाक्षि के हन्ता शिव ये जो भृगु हैं तो त्रिनयन प्रिय शिव की पत्नी ख्याति हैं। भगवान् रुद्र मरीच हैं तो उनकी प्रिया शिवा संभूति हैं।।१४।। शिव जी कवि हैं तो पत्नी भवानी को लोग रुचिरा जानते हैं। गंगाधर शिव अंगिरा है तो उनकी प्रिया उमा स्मृति हैं।।१५।। शशिधारी शिव पुलस्त्य हैं तो पिनाकधारी शिव की प्रिया प्रीति हैं। त्रिपुरारि पुलह है तो काल के हन्ता शिव की प्रिया शिवा दया है।।१६।। दक्ष यज्ञ के विध्वंस करने वाले शिव क्रतु हैं तो उनकी प्रिया शिवा संनति हैं। त्रिनेत्रधारी शिव अत्रि हैं तो उनकी पत्नी उमा स्वयं अनुसूया हैं।।१७।। महेश्वर शिव वसिष्ठ हैं तो उनकी पत्नी उमा वृद्धा ऊर्जा हैं। सब मनुष्य शिव और सब स्त्रियाँ शिवा हैं।।१८।। पुलिंग शब्द से जो वाच्य हैं वे शिव के रूप हैं, स्त्रीलिंग शब्दों से जो वाच्य हैं वे सब शिवा की विभूतियाँ हैं।।१९।। सब स्त्रियाँ और सब पुरुष उन्हीं शिव और शिवा की विभूतियाँ हैं। विद्वान लोग जानते हैं कि गौरी पदार्थों की शक्ति है।।२०।। वह विश्व की देवी हैं और वह सब के स्वामी (सर्वेश्वर) हैं। शक्तिमान् जितने भी पदार्थ हैं वह सब महेश्वर हैं।।२१।। अतः प्रकृतियाँ देवी की मूर्तियाँ, शारीरिक रूप हैं। विकृतियाँ देवी की देहबद्ध विभूतियाँ हैं।।२२।। जैसे आग से अनेक प्रकार की चिनगारी निकलती है उसी प्रकार शिव से

विस्फुलिंगा यथा तावदग्नौ च बहुधा स्मृताः। जीवाः सर्वे तथा शर्वो द्वंद्वसत्त्वमुपागतः॥२३॥
गौरीरूपाणि सर्वाणि शरीराणि शरीरिणाम्। शरीरिणस्तथा सर्वे शंकरांशा व्यवस्थितः॥२४॥
श्राव्यं सर्वमुमारूपं श्रोता देवो महेश्वरः। विषयित्वं विभुर्धत्ते विषयात्मकतामुमा॥२५॥
स्रष्टव्यं वस्तुजातं तु धत्ते शंकरवल्लभा। स्रष्टा स एव विश्वात्मा बालचंद्रार्धशेखरः॥२६॥
दृश्यवस्तु प्रजारूपं बिभर्ति भुवनेश्वरी। द्रष्टा विश्वेश्वरो देवः शशिखंडशिखामणिः॥२७॥
रसजातमुमारूपं प्रेयजातं च सर्वशः। देवो रसयिता शंभु घ्राता च भुवनेश्वरः॥२८॥
मंतव्यवस्तुतां धत्ते महादेवी महेश्वरी। मंता स एव विश्वात्मा महादेवो महेश्वरः॥२९॥
बोद्धव्यं वस्तु रूपं च बिभर्ति भववल्लभा। देवः स एव भगवान् बोद्धा बालेन्दुशेखरः॥३०॥
पीठाकृतिरुमा देवी लिंगरूपश्च शंकरः। प्रतिष्ठाप्य प्रयत्नेन पूजयंति सुरासुराः॥३१॥
येये पदार्था लिंगांकास्तेते शर्वविभूतयः। अर्था भगांकिता येये तेते गौर्या विभूतयः॥३२॥
स्वर्गपातालललोकांतब्रह्मांडावरणाष्टकम् । ज्ञेयं सर्वमुमारूपं ज्ञाता देवो महेश्वरः॥३३॥
बिभर्ति क्षेत्रतां देवी त्रिपुरांतकवल्लभा। क्षेत्रज्ञत्वमथो धत्ते भगवानंधकांतकः॥३४॥
शिवलिंगं समुत्सुज्य यजन्ते चान्यदेवताः। स नृपः सह देशेन रौरवं नरकं व्रजेत्॥३५॥
शिवभक्तो न यो राजा भक्तोऽन्येषु सुरेषु यः। स्वपतिं युवतिस्त्यक्त्वा यथा जारेषु राजते॥३६॥
ब्रह्मादयः सुराः सर्वे राजानश्च महर्द्धिकाः। मानवा मुनयश्चैव सर्वे लिंगं यजंति च॥३७॥

---

सब जीव उत्पन्न होते हैं। शरीरधारियों के सब शरीर गौरी रूप हैं या सब शरीर शंकर के अंश से व्यवस्थित हुये हैं। सब श्रव्य (सुनने योग्य) उमा का रूप है और श्रोता भगवान शिव हैं। उमा स्वयं विषय है और शिव विषय का आस्वाद करने वाले हैं।।२३-२५।। शंकरप्रिया पार्वती सब स्रष्टव्य पदार्थ वस्तु समूह को धारण करती हैं। बालचन्द्रधारी विश्वात्मा शिव स्वयं स्रष्टा हैं।।२६।। दृश्य (दिखाई देने योग्य) वस्तुओं को भुवनेश्वरी शिवा धारण करती हैं। चन्द्रशेखर स्वयं द्रष्टा (दर्शक) हैं।।२७।। सब रस (स्वाद) और गंध उमा का रूप है। उस रस के भोक्ता (आस्वादक) और घ्राता भुवनेश्वर शिव हैं।।२८।। महादेवी शिवा सब मन्तव्य (विचार योग्य विषय) को धारण करती हैं तो विश्व के आत्मा महादेव मंता (विचारक) हैं। शिव शिवा बोधक वस्तु के स्वरूप हैं तो बालचन्द्रधारी शिव बोद्धा (समझने वाले) हैं।।२९-३०।। उमा देवी वेदी रूप हैं। शिव जी लिंग रूप हैं। अग्नि यत्नपूर्वक स्थापित करके देवता और राक्षस पूजा करते हैं।।३१।। लिंग के आकार की जो-जो वस्तुएँ हैं वे सब शिव की विभूतियाँ हैं तथा भग के आकार की जितनी वस्तुएँ या पदार्थ हैं वे सब शिवा की विभूतियाँ हैं।।३२-३३।। स्वर्ग और पाताल के अन्त तक ब्रह्माण्ड को आच्छादित करने वाले आठ आवरण ज्ञेय (जानने योग्य) उमा के रूप हैं तो उसके ज्ञाता महेश्वर शिव हैं। यदि लोग शिव की लिंग पूजा को छोड़कर अन्य देवताओं (मूर्तियों) की पूजा करते हैं तो वे लोग अपने राजा सहित रौरव नरक में जाते हैं।।३४-३५।। जो राजा शिव का भक्त नहीं है, अन्य देवताओं का भक्त होता है। वह उस युवती के समान है जो अपने पति को छोड़कर जारों (अन्य पुरुषों) के साथ रमण करती है।।३६।। ब्रह्मा आदि सब देवता, धनपति राजा, प्रजा और मुनिगण सब

**विष्णुना रावणं हत्वा ससैन्यं ब्रह्मणः सुतम्। स्थापितं विधिवद्भक्त्या लिंगं तीरे नदीपतेः॥३८॥**
**कृत्वा पापसहस्राणि हत्वा विप्रशतं तथा। भावात्समाश्रितो रुद्रं मुच्यते नात्र संशयः॥३९॥**
**सर्वे लिंगमया लोकाः सर्वे लिंगे प्रतिष्ठिताः। तस्मादभ्यर्चयेल्लिंगे यदीच्छेच्छाश्वतं पदम्॥४०॥**
**सर्वाकारौ स्थितावेतौ नरैः श्रेयोऽर्थिभिः शिवौ। पूजनीयौ नमस्कार्यौ चिंतनीयौ च सर्वदा॥४१॥**

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकादशोऽध्यायः॥११॥**

---

लिंग की पूजा करते हैं।।३७।। रावण का वध करने के पश्चात् राम ने ब्रह्मा के पुत्र विष्णु द्वारा समुद्र तट पर स्थापित शिव लिंग की विधिवत् पूजा सेना सहित पहले की थी।।३८।। हजारों पाप करके और सैकड़ों ब्राह्मणों की हत्या करके जो व्यक्ति लगनपूर्वक शिव की भक्ति करता है निःसन्देह मोक्ष को प्राप्त होता है।।३९।। सब लोक लिंगमय हैं। वे सब लिंग में प्रतिष्ठित हैं। इसलिये यदि कोई शाश्वत पद (अन्तःकरण की स्थायी शान्ति या मोक्ष) चाहे तो उसको लिंग की पूजा करनी चाहिये।।४०।। शिव और शिवा सब में विराजमान हैं। अपने कल्याण चाहने वालों को सदा शिव और शिवा पूजनीय, नमस्कार्य और चिन्तनीय हैं।।४१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की विभूतियों का वर्णन नामक ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त॥११॥**

द्वादशोऽध्यायः

# शिवस्याष्टमूर्त्तयः

सनत्कुमार उवाच

मूर्तयोऽष्टौ ममाचक्ष्व शंकरस्य महात्मनः। विश्वरूपस्य देवस्य गणेश्वर महामते॥१॥

नंदिकेश्वर उवाच

हंत ते कथयिष्यामि महिमानमुमापतेः। विश्वरूपस्य देवस्य सरोजभवसंभव॥२॥
भूरापोग्निर्मरुद्व्योम भास्करो दीक्षितः शशी। भवस्य मूर्तयः प्रोक्ताः शिवस्य परमेष्ठिनः॥३॥
खात्मेंदुवह्निसूर्याभोधराः पवन इत्यपि। तस्याष्ट मूर्तयः प्रोक्ता देवदेवस्य धीमतः॥४॥
अग्निहोत्रेर्पिते तेन सूर्यात्मनि महात्मनि। तद्विभूतीस्तथा सर्वे देवास्तृप्यंति सर्वदाः॥५॥
वृक्षस्य मूलसेकेन यथा शाखोपशाखिकाः। तथा तस्यार्चया देवास्तथा स्युस्तद्विभूतयः॥६॥
तस्य द्वादशधा भिन्नं रूपं सूर्यात्मकं प्रभोः। सर्वदेवात्मकं याज्यं यजंति मुनिपुंगवाः॥७॥
अमृताख्या कला तस्य सर्वस्यादित्यरूपिणः। भूतसंजीवनी चेष्टा लोकोस्मिन् पीयते सदा॥८॥
चंद्राख्यकिरणास्तस्य धूर्जटेर्भास्करात्मनः। ओषधीनां विवृद्ध्यर्थं हिमवृष्टिं वितन्वते॥९॥

---

बारहवाँ अध्याय

# शिव की आठ मूर्तियाँ

**सनत्कुमार बोले**

हे गणों के नेता! महाबुद्धिमान् नंदिकेश्वर! मुझसे महान् आत्मा शंकर के आठ ब्रह्माण्ड स्वरूप कहो।।१।।

**नंदिकेश्वर बोले**

हे ब्रह्मा के पुत्र! मैं तुमसे विश्वरूप शिवजी के महिमा को कहूँगा।।२।। भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, दीक्षित (आत्मा) ये परमेष्ठी शिव की आठ मूर्तियाँ हैं।।३।। आकाश, आत्मा, चन्द्रमा, अग्नि, सूर्य जल, भूमि और वायु ये भी बुद्धिमान् देवताओं के देवता शिव की आठ मूर्तियाँ कही गयी हैं।।४।। इसलिए सूर्य के प्रकृति के महान् आत्मा को अग्निहोत्र अर्पित किये जाने पर तो उनकी विभूतियों और सब देवता सर्वदा तृप्त होते हैं।।५।। जैसे वृक्ष की जड़ सींचने से उसकी शाखाएँ और उपशाखाएँ सन्तुष्ट होती हैं। उसी प्रकार देवगण और शिव की विभूतियाँ भी शिव की पूजा और अर्चना से तृप्त होती हैं।।६।। श्रेष्ठ मुनि लोग बारह प्रकार सूर्यात्मक प्रभु शिव के पूज्य रूप की पूजा करते हैं।।७।। सब सूर्यरूपी उनकी अमृत रूप में प्रसिद्ध कला—जो इस लोक में सम्पूर्ण प्राणियों की संजीवनी है लोक के लिए लाभकारी है—उसको लोग हमेशा पीते हैं।।८।। भास्करात्मा उन शिव की चन्द्र नामक किरणें औषधियों के बढ़ने के लिए हिम की वृष्टि करती हैं।।९।।

शुक्लाख्या रश्मयस्तस्य शंभोर्मार्तंडरूपिणः। घर्मं वितन्वते लोके सस्यपाकादिकारणम्॥१०॥
दिवाकरात्मनस्तस्य हरिकेशाह्वयः करः। नक्षत्रपोषकश्चैव प्रसिद्धः परमेष्ठिनः॥११॥
विश्वकर्माह्वयस्तस्य किरणो बुधपोषकः। सर्वेश्वरस्य देवस्य सप्तसप्तिस्वरूपिणः॥१२॥
विश्वव्यच इति ख्यातः किरणस्तस्य शूलिनः। शुक्रपोषकभावेन प्रतीतः सूर्यरूपिणः॥१३॥
संयद्वसुरिति ख्यातो यस्य रश्मिस्त्रिशूलिनः। लोहितांगं प्रपुष्णाति सहस्त्रकिरणात्मनः॥१४॥
अर्वावसुरिति ख्यातो रश्मिस्तस्य पिनाकिनः। बृहस्पतिं प्रपुष्णाति सर्वदा तपनात्मनः॥१५॥
स्वराडिति समाख्यातः शिवस्यांशुःशनैश्चरम्। हरिदश्वात्मनस्तस्य प्रपुष्णाति दिवानिशम्॥१६॥
सूर्यात्मकस्य देवस्य विश्वयोनेरुमापतेः।
सुषुम्णाख्यः सदा रश्मिः पुष्णाति शिशिरद्युतिम्॥१७॥
सौम्यानां वसुजातानां प्रकृतित्वमुपागता। तस्य सोमाह्वया मूर्तिः शंकरस्य जगद्गुरोः॥१८॥
तस्य सोमात्मक रूप शुक्रत्वेनव्यवस्थितम्। शरीरभाजां सर्वेषां देवस्यांतकशासिनः॥१९॥
शरीरिणामशेषाणां मनस्येव व्यवस्थितम्। वपुः सोमात्मकं शंभोस्तस्य सर्वजगद्गुरोः॥२०॥
शंभोः षोडशधा भिन्ना स्थितामृतकलात्मनः। सर्वभूतशरीरेषु सोमाख्या मूर्तिरुत्तमा॥२१॥
देवान्पितॄंश्च पुष्णाति सुधयामृतया सदा। मूर्तिः सोमाह्वया तस्य देवदेवस्य शासितुः॥२२॥
पुष्णात्योषधिजातानि देहिनामात्मशुद्धये। सोमाह्वया तनुस्तस्य भवानीमिति निर्दिशेत्॥२३॥

---

शिव की सूर्यात्मक शुक्ल किरणें गर्मी (धूप) पैदा करती हैं जिनसे पीछे और अन्न पकते हैं।।१०।। प्रसिद्ध परमेष्ठी के सूर्यात्मक रूप से हरिकेश नामक किरण ऐसी है जो नक्षत्रों की पोषक हैं।।११।। शिव के सूर्यात्मक रूप के सम्बन्ध रखने वाली विश्वकर्मा नामक किरण बुध की पोषक है।।१२।। शिव की सूर्य रूपी विश्वव्यच नाम की किरण शुक्र की पोषक है।।१३।। सूर्यात्मक शिव की संयतवसु नाम से प्रसिद्ध लोहितांग को पोषित करती है।।१४।। उन पिनाकी शिव की सूर्यात्मक अर्वावसु नाम की किरण सदा बृहस्पति को विकसित करती है।।१५।। शिव की सूर्यात्मक स्वराट् नामक किरण रात और दिन के द्वारा शनिश्चर को पुष्ट करती है।।१६।। उमापति विश्व की उत्पत्ति के स्रोत की सूर्यात्मक सुषुम्ना नाम से प्रसिद्ध किरण शिशिर को पुष्ट करती है।।१७।। शिव से सम्बन्ध रखने वाली सोम नामक मूर्ति विश्व के भौतिक पदार्थों की पोषक है।।१८।। अन्तकहन्ता उन शिवजी का सोमात्मक रूप सब शरीरधारियों में शुक्र (वीर्य) रूप में रहता है।।१९।। जगद्गुरु उन शिव का सोमात्मक शरीर सब शरीरधारियों के मन में विराजमान है।।२०।। शिव का भौतिक रूप सोम नाम है जो सब प्राणियों के शरीर में स्थित है। यह अमृत कलात्मक के सोलह रूप में विभक्त सब प्राणियों के शरीर में उत्तम मूर्ति रूप में स्थित रहता है।।२१।। चन्द्र की सोलह कलाएँ शिव के सोलह शरीर के रूप में कही गयी हैं।।२२।। देवताओं के देवता शंकर का सोमरूप अमृत के द्वारा देवताओं और पितरों को तृप्त करता है। शिव का भौतिक रूप सोम सब शरीरधारियों के आत्मा की शुद्धि के लिए औषधियों के पादपों का पोषण करता है। शिव के इस रूप को भवानी कहा जाता है।।२३।। शिव जी का प्रसिद्ध सोमात्मक रूप जीवों और यज्ञों के पति रूप में प्रसिद्ध

यज्ञानां पतिभावेन जीवानां तपसामपि। प्रसिद्धरूपमेतद्वै सोमात्मकमुमापतेः॥२४॥
जलानामोषधीनां च पतिभावेन विश्रुतम्। सोमात्मकं वपुस्तस्य शंभोर्भगवतः प्रभोः॥२५॥
देवो हिरण्मयो मृष्टः परस्परविवेकिनः। करणानामशेषाणां देवतानां निराकृतिः॥२६॥
जीवत्वेन स्थिते तस्मिञ्छिवे सोमात्मके प्रभौ। मधुरा विलयं याति सर्वलोकैकरक्षिणी॥२७॥
यजमानाह्वया मूर्तिः शैवी हव्यैरहर्निशम्। पुष्णाति देवताः सर्वाः कव्यैः पितृगणानपि॥२८॥
यजमानाह्वया या सा तनुश्चाहुतिजा तया। वृष्ट्या भावयति स्पष्टं सर्वमेव परापरम्॥२९॥
अंतःस्थं च बहिःस्थं च ब्रह्मांडानां स्थितं जलम्।
भूतानां च शरीरस्थं शंभोर्मूर्तिर्गरीयसी॥३०॥
नदीनाममृतं साक्षान्नदानामपि सर्वदा। समुद्राणां च सर्वत्र व्यापी सर्वमुमापतिः॥३१॥
संजीविनी समस्तानां भूतानामेव पाविनी। अंबिका प्राणसंस्था या मूर्तिरंबुमयी परा॥३२॥
अंतःस्थश्च बहिःस्थश्च ब्रह्मांडानां विभावसुः। यज्ञानां च शरीरस्थः शंभोर्मूर्तिर्गरीयसी॥३३॥
शरीरस्था च भूतानां श्रेयसी मूर्तिरैश्वरी। मूर्तिः पावकसंस्था या शंभोरत्यंतपूजिता॥३४॥
भेदा एकोनपंचाशद्वेदविद्भिरुदाहृताः। हव्यं वहति देवानां शंभोर्यज्ञात्मकं वपुः॥३५॥
कव्यं पितृगणानां च हूयमानं द्विजातिभिः। सर्वदेवमयं शंभोः श्रेष्ठमग्न्यात्मकं वपुः॥३६॥
वदंति वेदशास्त्रज्ञा यजंति च यथाविधि। अंतःस्थो जगदंडानां बहिःस्थश्च समीरणः॥३७॥

---

है।।२४।। शिव जी का सोमात्मक रूप जलों का और औषधियों के पति रूप में जाना जाता है।।२५।। हिरण्यमय देवता शिवजी विचारशील पुरुषों की सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियों की पहुँच से बाहर हैं और उन सब देवताओं के साधन पहुँच से भी बाहर हैं। वह प्रत्येक आत्मा में जीव रूप में स्थित है। सब जगत की रक्षा करने वाली मधुर माया (प्रकृति) स्वयं दूर हट जाती है।।२६-२७।।

शिवजी की यजमान नामक मूर्ति सब देवताओं को दिन-रात सब हव्य और सब पितरों को कव्य के द्वारा पोषण करती है। यजमान रूपी वह मूर्ति सम्पूर्ण चर और अचर को अपने आहुति से उत्पन्न वृष्टि से पुष्ट करती है।।२८-२९।।

जल जो ब्रह्माण्ड के भीतर और बाहर स्थित है, और जल जो कि सब प्राणियों के भीतर स्थित है। यह जल शिव जी की ही मूर्ति है।।३०।।

नदियों और नदी का अमृतमय जल तथा समुद्रों का जल उमापति शिव का भौतिक रूप है।।३१।। सब प्राणियों को पवित्र करने वाली जो संजीवनी है वह प्राणवायु में स्थित है वह सोम का रूप (मूर्त्ति) है।।३२।। विश्व के भीतर-बाहर स्थित अग्नि और यज्ञों में स्थित अग्नि उन्हीं शिव की श्रेष्ठ मूर्त्ति है।।३३।।

शिव का भौतिक रूप, वह जो अत्यन्त सम्मत और पूजित है, वह प्राणियों के कल्याण के लिए उनके देह में स्थित है।।३४।। वेदज्ञों द्वारा उनचास (४९) भेदों में कही गई सबसे श्रेष्ठ अग्नि शंभु का रूप है। जिस अग्नि से ब्राह्मणों द्वारा हवा से देवताओं को हव्य और पितरों को कव्य प्राप्त होता है।।३५-३६।। वेदों और शास्त्रों

शरीरस्थश्च भूतानां शैवी मूर्तिः पटीयसी। प्राणाद्या नागकूर्माद्या आवहाद्याश्च वायवः॥३८॥
ईशानमूर्तेरेकस्य भेदाः सर्वे प्रकीर्तिताः। अंतःस्थं जगदंडानां बहिःस्थं च वियद्विभोः॥३९॥
शरीरस्थं च भूतानां शंभोमूर्तिर्गरीयसी। शंभोर्विश्वंभरा मूर्तिः सर्वब्रह्माधिदेवता॥४०॥
चराचराणां भूतानां सर्वेषां धारणे मता। चराचराणां भूतानां शरीराणि विदुर्बुधाः॥४१॥
पंचकेनेशमूर्तीनां समारब्धानि सर्वथा। पंचभूतानि चंद्रार्कावात्मेति मुनिपुंगवाः॥४२॥
मूर्तयोऽष्टौ शिवस्याहुर्देवदेवस्य धीमतः। आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिर्यजमानाह्वया परा॥४३॥
चराचरशरीरेषु सर्वेष्वेव स्थिता तदा। दीक्षितं ब्राह्मणं प्राहुरात्मानं च मुनीश्वराः॥४४॥
यजमानाह्वया मूर्तिःशिवस्य शिवदायिनः। मूर्तयोष्टौ शिवस्यैता वंदनीयाः प्रयत्नतः॥४५॥
श्रेयोर्थिभिर्नरैर्नित्यं श्रेयसामेकहेतवः॥४६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्वादशोऽध्यायः॥१२॥**

---

के ज्ञाता यथाविहित जिसको पूजते हैं वह जगत के बाहर और भीतर स्थित है और प्राणियों के शरीर में स्थित है। वह वायु शिव का शक्तिमान रूप है। वह वायु अनेक प्रकार की है जैसे प्राण आदि, नाग, कूर्म आदि, आवह आदि ये सब ईशान (शिव) के विभिन्न रूप हैं। ये सब ईशान मूर्ति के भेद कहे गये हैं।।३७-३८।। जगत के भीतर और बाहर जो आकाश स्थित है और प्राणियों के शरीर में स्थित है वह सब शिव की शान्त मूर्ति है। सब ब्रह्मा और देवता शिव की दिशामय मूर्ति हैं। सब चर और अचर को धारण करने में सक्षम विद्वान लोग कहते हैं कि ये सब चर और अचर शरीर शिव के रूप हैं। हे श्रेष्ठ मुनियों! ईश के पाँच भक्ति के रूप मूर्ति से पाँच भूत विकसित हुये हैं। चन्द्र, सूर्य और आत्मा शिव के आठ ब्रह्माण्ड रूप कहे जाते हैं। उनकी आठवीं मूर्ति आत्मा है। इसका दूसरा नाम यजमान है।।३९-४३।। यह आत्मा सब चर और अचर में विद्यमान है। मुनीश्वर लोग आत्मा को दीक्षित कहते हैं। यह शिवदायक शरीर है। इसको यजमान भी कहते हैं। ये आठों शिव की मूर्तियाँ यत्नपूर्वक वन्दनीय हैं। जो लोग अपना कल्याण चाहते हैं उनको सदैव यत्नपूर्वक इनकी पूजा करनी चाहिए।।४४-४६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की आठ मूर्तियाँ नामक बारहवाँ अध्याय समाप्त॥१२॥**

## त्रयोदशोऽध्यायः

# शिवस्याष्टमूर्त्तेः महिमा

सनत्कुमार उवाच

भूयोऽपि वद मे नंदिन् महिमानमुमापते। अष्टमूर्तेर्महेशस्य शिवस्य परमेष्ठिनः॥१॥

नंदिकेश्वर उवाच

वक्ष्यामि ते महेशस्य महिमानमुमापतेः। अष्टमूर्तेर्जगद्व्याप्य स्थितस्य परमेष्ठिनः॥२॥
चराचराणां भूतानां धाता विश्वंभरात्मकः। शर्व इत्युच्यते देवः सर्वशास्त्रार्थपारगैः॥३॥
विश्वंभरात्मनस्तस्य सर्वस्य परमेष्ठिनः। विकेशी कथ्यते पत्नी तनयोंगारकः स्मृतः॥४॥
भव इत्युच्यते देवो भगवान्वेदवादिभिः। संजीवनस्य लोकानां भवस्य परमात्मनः॥५॥
उमा संकीर्तिता देवी सुतः शुक्रश्च सूरिभिः। सप्तलोकांडकव्यापी सर्वलोकैकरक्षिता॥६॥
वह्न्यात्मा भगवान्देवः स्मृतः पशुपतिर्बुधैः। स्वाहा पत्न्यात्मनस्तस्य प्रोक्ता पशुपतेः प्रिया॥७॥
षण्मुखो भगवान्देवो बुधैः पुत्र उदाहृतः। समस्तभुवनव्यापी भर्ता सर्वशरीरिणाम्॥८॥
पवनात्मा बुधैर्देव ईशान इति कीर्त्यते। ईशानस्य जगत्कर्तुर्देवस्य पवनात्मनः॥९॥

---

## तेरहवाँ अध्याय

# शिव की अष्टमूर्ति की महिमा

### सनत्कुमार बोले

हे नन्दीश्वर! इसके आगे उमापति शिव जी की महानता को कहो, उस शिव के जिनकी आठ मूर्तियाँ हैं।।१।।

### नन्दिकेश्वर बोले

मैं जगत् में व्याप्त परमेष्ठी की अष्टमूर्ति उमापति की महिमा को कहूँगा।।२।। सब चर प्राणियों के स्रष्टा (उत्पन्न करने वाले) तथा विश्व के पालक को सब शास्त्रों के अर्थ परगामी विद्वान जिनको शर्व कहते हैं।।३।। सर्व की पत्नी विकेशी हैं। शिव परमेष्ठी विश्वम्भर के रूप में हैं। अंगारक उनका पुत्र है।।४।। वेदवादियों द्वारा भगवान् शिव भव कहे जाते हैं। महान् आत्मा जो विश्व का पालन करती है। उनकी पत्नी उमा देवी और पुत्र शुक्र विद्वानों द्वारा कहा गया है। वह शिव सातों लोकों में व्यापक हैं और सब लोकों के एक मात्र रक्षक हैं। विद्वानों द्वारा वे अग्नि के रूप में, पशुपति के रूप में स्मरण किये गये हैं। उस अग्नि रूप पशुपति की पत्नी स्वाहा है, विद्वानों ने षड्मुख (षडानन) पुत्र कहा है। वह सब लोकों में व्याप्त हैं और सब शरीरधारियों के भरण पोषण करने वाले हैं। पण्डित लोग वायु रूप में (पवनात्मा) शिव ईशान कहे जाते हैं। वे सब जगत् के कर्त्ता हैं। उनकी पत्नी शिवा है और पुत्र कामदेव हैं। वह चर अचर सब की कामना को पूरा करते हैं।।५-९।।

शिवा देवी बुधैरुक्ता पुत्रश्चास्य मनोजवः। चराचराणां भूतानां सर्वेषां सर्वकामदः॥१०॥
व्योमात्मा भगवान्देवो भीम इत्युच्यते बुधैः। महामहिम्नो देवस्य भीमस्य गगनात्मनः॥११॥
दिशा दश स्मृता देव्यः सुतः सर्गश्चसूरिभिः। सूर्यात्मा भगवान्देवः सर्वेषां च विभूतिदः॥१२॥
रुद्र इत्युच्यते देवैर्भगवान् भुक्तिमुक्तिदः। सूर्यात्मकस्य रुद्रस्य भक्तानां भक्तिदायिनः॥१३॥
सुवर्चला स्मृता देवी सुतश्चास्य शनैश्चरः। समस्तसौम्यवस्तूनां प्रकृतित्वेन विश्रुतः॥१४॥
सोमात्मको बुधैर्देवो महादेव इति स्मृतः। सोमात्मकस्य देवस्य महादेवस्य सूरिभिः॥१५॥
दयिता रोहिणी प्रोक्ता बुधश्चैव शरीरजः।
हव्यकव्यस्थितिं कुर्वन् हव्यकव्याशिनां तदा॥१६॥
यजमानात्मको देवो महोदेवो बुधैः प्रभुः। उग्र इत्युच्यते सद्भिरीशानश्चेति चापरैः॥१७॥
उग्राह्वयस्य देवस्य यजमानात्मनः प्रभोः। दीक्षा पत्नी बुधैरुक्ता संतानाख्यः सुतस्तथा॥१८॥
शरीरिणां शरीरेषु कठिनं कोंकणादिवत्। पार्थिवं तद्वपुर्ज्ञेयं शर्वतत्त्वं बुभुत्सुभिः॥१९॥
देहेदेहे तु देवेशो देहभाजां यदव्ययम्। वस्तुद्रव्यात्मकं तस्य भवस्य परमात्मनः॥२०॥
ज्ञेयं च तत्त्वविद्भिर्वै सर्ववेदार्थपारगैः। आग्नेयः परिणामो यो विग्रहेषु शरीरिणाम्॥२१॥
मूर्तिः पशुपतिर्ज्ञेया सा तत्त्वं वेत्तुमिच्छुभिः। वायव्यः परिणामो यः शरीरेषु शरीरिणाम्॥२२॥
बुधैरीशेति सा तस्य तनुर्ज्ञेया न संशयः। सुषिरं यच्छरीरस्थमशेषाणां शरीरिणाम्॥२३॥
भीमस्य सा तनुर्ज्ञेया तत्त्वविज्ञानकांक्षिभिः। चक्षुरादिगतं तेजो यच्छरीरस्थमंगिनाम्॥२४॥

---

आकाश के रूप में भगवान् शिव विद्वानों द्वारा भीम कहे गये हैं। वे सब प्राणियों की कामनाओं की पूर्ति कर्त्ता हैं। विद्वानों द्वारा दस दिशा उनकी देवियाँ हैं। सर्ग उनके पुत्र हैं। भगवान शिव सूर्य के रूप में सब को विभूति देने वाले और भुक्ति मुक्ति देने वाले हैं, जो देवताओं द्वारा रुद्र कहे जाते हैं। सूर्यात्मा रुद्र भक्तों को भक्ति और मुक्ति देते हैं। रुद्र की पत्नी सवर्चला देवी है और शनैश्चर उनका पुत्र है। चन्द्रमा की पत्नी रोहिणी है और उनका पुत्र बुध है। भगवान महादेव यजमान के रूप में विद्वानों द्वारा उग्र कहे गये हैं। अन्य लोगों द्वारा वे ईशान भी कहे जाते हैं। वह देवताओं को देय हव्य और पितरों को देय कव्य देते हैं।।१०-१७।। यजमान आत्मा उग्र की पत्नी दीक्षा और पुत्र संतान कहा गया है।।१८।। आत्माओं का शरीर के कठिन भाग कोंकण आदि शिव का पार्थिव शरीर है।।१९।।

प्रत्येक शरीर में देवताओं के स्वामी शिव विद्यमान हैं। जो विद्वान सब वेदों के अर्थों के विशेषज्ञ हैं और तत्त्वों के ज्ञाता हैं, वे कहते हैं कि आत्माओं के शरीर में जो अपरिवर्तनीय (अव्यय) ठोस द्रव्य हैं वह उस महान् आत्मा भव का अंश हैं। शरीरधारियों के शरीर में जो आग्नेय तत्त्व है वह पशुपति के भौतिक रूप में जाना जाता है। ऐसा तत्त्ववेत्ता कहते हैं। शरीरधारियों के शरीर में जो वायव्य परिमाण है निःसन्देह वह ईश का शरीर है, ऐसा विद्वानों का कथन है। तत्त्व के खोजों में इच्छुक लोगों का मानना है कि सब शरीरधारियों के शरीर में जो तेज स्थित है वह भीम का तनु है। शरीरधारियों के नेत्रों आदि में विद्यमान जो चन्द्रात्मक मन है वह विद्वानों द्वारा रुद्र का बहुरूप मान्य है।

रुद्रस्यापि तनुर्ज्ञेया परमार्थं बुभुत्सुभिः। सर्वभूतशरीरेषु मनश्चंद्रात्मकं हि यत्॥२५॥
महादेवस्य सा मूर्ति बोद्धव्या तत्त्वचिंतकैः। आत्मा यो यजमानाख्यः सर्वभूतशरीरगः॥२६॥
मूर्तिरुग्रस्य सा ज्ञेया परमात्मबुभुत्सुभिः। जातानां सर्वभूतानां चतुर्दशसु योनिषु॥२७॥
अष्टमूर्तेरनन्यत्वं वदंति परमर्षयः। सप्तमूर्तिमयान्याहुरीशस्यांगानि देहिनाम्॥२८॥
आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिः सर्वभूतशरीरगा। अष्टमूर्तिममुं देवं सर्वलोकात्मकं विभुम्॥२९॥
भजस्व सर्वभावेन श्रेयः प्राप्तुं यदीच्छसि। प्राणिनो यस्य कस्यापि क्रियते यद्यनुग्रहः॥३०॥
अष्टमूर्तेर्महेशस्य कृतमाराधनं भवेत्।
निग्रहश्चेत् कृतो लोके देहिनो यस्य कस्यचित्॥३१॥
अष्टमूर्तेर्महेशस्य स एव विहितो भवेत्। यद्यवज्ञा कृता लोके यस्य कस्यचिदंगिनः॥३२॥
अष्टमूर्तेर्महेशस्य विहिता सा भवेद्विभेः। अभयं यत् प्रदत्तं स्यादंगिनो यस्य कस्यचित्॥३३॥
आराधनं कृतं तस्मादष्टमूर्तेर्न संशयः। सर्वोपकारकरणं प्रदानमभयस्य च॥३४॥
आराधनं तु देवस्य अष्टमूर्तेर्न संशयः। सर्वोपकारकरणं सर्वानुग्रह एव च॥३५॥
तदर्चनं परं प्राहुरष्टमूर्तेर्मुनीश्वराः। अनुग्रहणमन्येषां विधातव्यं त्वयांगिनाम्॥३६॥
सर्वाभयप्रदानं च शिवाराधनमिच्छता॥३७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रयोदशोऽध्यायः॥१३॥**

---

शरीरधरियों के शरीर का जो वायव्य परिमाण है वह निःसन्देह ईश का शरीर है। ऐसा विद्वानों का कथन है। तत्त्व की खोज में इच्छुक लोगों का मानना है कि सब शरीरधारियों के शरीर में जो सुषिर स्थित है, वह भीम का तनु है। शरीरधारियों के नेत्रों आदि में विद्यमान जो तेज है तत्त्वज्ञानियों के द्वारा रुद्र का एक रूप मान्य है। सब शरीरधारियों में सब प्राणियों के शरीर में स्थित मन जो चन्द्रमा रूप में स्थित है वह महादेव की मूर्ति है। सब प्राणियों के शरीर में जो यजमान नामक आत्मा विद्यमान है। वह आत्मतत्त्वविदों द्वारा शिव की मूर्ति कहा जाता है।।२०-२६।। महान् ऋषिगण कहते हैं कि चौदहों योनियों में उत्पन्न सब प्राणियों में अष्टमूर्ति से पृथक् नहीं है। अर्थात् सब प्राणी अष्टमूर्ति में ही समाहित हैं। वे कहते हैं कि देहधरियों के अंग ईश के अष्टमूर्तिमय हैं। सब प्राणियों के शरीर में आत्मा आठवीं मूर्ति है। यदि तुम कल्याण चाहते हो तो सब लोक में व्याप्त विभु शिव की अष्टमूर्ति की सेवा करो।।२७-२९।। अष्टमूर्ति शिव की आराधना यदि की जाय तो जिस किसी भी व्यक्ति पर उनकी कृपा हो सकती है। यदि लोक में कोई शिव की अष्टमूर्तियों में किसी एक मूर्ति का निग्रह, विघ्न या उपेक्षा करता है तो वह शिव का ही अनादर होगा। जिस किसी भी अंगी (देही) की जोखिम या भय से रक्षा की जाय निश्चित रूप से वह अष्टमूर्ति शिव की ही रक्षा के समान है।।३०-३३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की अष्टमूर्ति की महिमा नामक तेरहवाँ अध्याय समाप्त॥१३॥**

## चतुर्दशोऽध्यायः

# पंचब्रह्मकथनम्

सनत्कुमार उवाच

पंच ब्रह्माणि मे नंदिन्नाचक्ष्व गणसत्तम। श्रेयः करणभूतानि पवित्राणि शरीरिणाम्॥१॥

नंदिकेश्वर उवाच

शिवस्यैव स्वरूपाणि पंच ब्रह्माह्वयानि ते। कथयामि यथातत्त्वं पद्मयोनेः सुतोत्तम॥२॥
सर्वलोकैकसंहर्ता सर्वलोकैकरक्षिता। सर्वलोकैकनिर्माता पंचब्रह्मात्मकः शिवः॥३॥
सर्वेषामेव लोकानां यदुपादानकारणम्। निमित्तकारणं चाहुस्स शिवः पंचधा स्मृतः॥४॥
मूर्तयः पंच विख्याताः पंच ब्रह्माह्वयाः पराः। सर्वलोकशरण्यस्य शिवस्य परमात्मनः॥५॥
क्षेत्रज्ञः प्रथमा मूर्तिः शिवस्य परमेष्ठिनः। भोक्ता प्रकृतिवर्गस्य भोग्यस्येशानसंज्ञितः॥६॥
स्थाणोस्तत्पुरुषाख्या च द्वितीयामूर्तिरुच्यते। प्रकृतिः सा हि विज्ञेया परमात्मगुहात्मिका॥७॥
अघोराख्या तृतीया च शंभोर्मूर्तिरीयसी। बुद्धेः सा मूर्तिरित्युक्ता धर्माद्यष्टांगसंयुता॥८॥
चतुर्थी वामदेवाख्या मूर्तिः शंभोर्गरीयसी। अहंकारात्मकत्वेन व्याप्य सर्वं व्यवस्थिता॥९॥
सद्योजाताह्वया शंभोः पंचमी मूर्तिरुच्यते। मनस्तत्त्वात्मकत्वेन स्थिता सर्वशरीरिषु॥१०॥

---

## चौदहवाँ अध्याय

# पंच ब्रह्म कथन

### सनत्कुमार बोले

हे गणों में श्रेष्ठ, हे नन्दिकेश्वर! मुझसे पंचब्रह्मों के विषय में कहो जो कि शरीरधारियों को पवित्र करने वाले और कल्याण करने वाले हैं।।१।।

### नन्दिकेश्वर बोले

पंचब्रह्म कहे जाने वाले वे शिव के ही स्वरूप हैं। हे ब्रह्मा के उत्तम पुत्र! मैं तुमसे उनके विषय में कहता हूँ। शिव स्वयं ही पंच ब्रह्म हैं।।२।। पंच ब्रह्म के रूप में शिव सब संसार के निर्माता, संहर्त्ता और एक मात्र रक्षक हैं। शिव लोकों के उपादान कारण और निमित्त कारण दोनों है। वह शिव पंचब्रह्म कहे जाते हैं।।३-४।। सब लोक को शरण देने के योग्य परमात्मा शिव की पाँच मूर्तियाँ हैं। वह क्षेत्र के ज्ञाता क्षेत्रज्ञ हैं और प्रकृति के भोग करने वाले (भोक्ता) हैं।।५-६।। शिव की द्वितीय मूर्ति तत्पुरुष कहलाती है। वह परमात्मा में स्थित प्रकृति है।।७।। शिव की तृतीय उत्तम मूर्ति अघोर नाम से प्रसिद्ध है। यह बुद्धिरूपा मूर्ति है जो कि धर्म आदि आठ अंगों से युक्त है।।८।। शिव की चौथी मूर्त्ति वामदेव है। यह अहंकार के रूप में सबकुछ प्रदान करती है।।९।। शिव की पाँचवीं मूर्ति का नाम सद्योजात है। वह सब शरीरधारियों में मन के रूप में स्थित है।।१०।। परमेष्ठी महान्

ईशानः परमो देवः परमेष्ठी सनातनः। श्रोत्रेंद्रियात्मकत्वेन सर्वभूतेष्ववस्थितः॥११॥
स्थितस्तत्पुरुषो देवः शरीरेषु शरीरिणाम्। त्वगिंद्रियात्मकत्वेन तत्त्वविद्भिरुदाहृतः॥१२॥
अघोरोपि महादेवश्चक्षुरात्मतया बुधैः। कीर्तितः सर्वभूतानां शरीरेषु व्यवस्थितः॥१३॥
जिह्वेंद्रियात्मकत्वेन वामदेवोपि विश्रुतः। अंगभाजामशेषाणामंगेषु परिधिष्ठितः॥१४॥
घ्राणेंद्रियात्मकत्वेन सद्योजातः स्मृतो बुधैः। प्राणभाजां समस्तानां विग्रहेषु व्यवस्थितः॥१५॥
सर्वेष्वेव शरीरषु प्राणभाजां प्रतिष्ठितः। वागिंद्रियात्मकत्वेन बुधैरीशान उच्यते॥१६॥
पाणींद्रियात्मकत्वेन स्थितस्तत्पुरुषो बुधैः। उच्यते विग्रहेष्वेव सर्वविग्रहधारिणाम्॥१७॥
सर्वविग्रहिणां देहे ह्यघोरोपि व्यवस्थितः। पादेंद्रियात्मकत्वेन कीर्तितस्तत्त्ववेदिभिः॥१८॥
पाय्विंद्रात्मकत्वेन वामदेवो व्यवस्थितः। सर्वभूतानिकायानां कायेषु मुनिभिः स्मृतः॥१९॥
उपस्थात्मतया देवः सद्योजातः स्थितः प्रभुः। इष्यते वेदशास्त्रज्ञैर्देहेषु प्राणधारिणाम्॥२०॥
ईशानं प्राणिनां देवं शब्दतन्मात्ररूपिणम्। आकाशजनकं प्राहुर्मुनिवृंदारकप्रजाः॥२१॥
प्राहुस्तत्पुरुषं देवं स्पर्शतन्मात्रकात्मकम्। समीरजनकं प्राहुर्भगवंतं मुनीश्वराः॥२२॥
रूपतन्मात्रं देवमघोरमपि घोरकम्। प्राहुर्वेदविदो मुख्या जनकं जातवेदसः॥२३॥
रसतन्मात्ररूपत्वात् प्रथितं तत्त्ववेदिनः। वामदेवमपां प्राहुर्जनकत्वेन संस्थितम्॥२४॥
सद्योजातं महादेवं गंधतन्मात्ररूपिणम्। भूम्यात्मानं प्रशंसंति सर्वतत्त्वार्थवेदिनः॥२५॥
आकाशात्मानमीशानमादिदेवं मुनीश्वराः। परमेण महत्त्वेन संभूतं प्राहुरद्भुतम्॥२६॥

---

देव शिव ईशान, वह सब प्राणियों में श्रोत इन्द्रिय (कान) के रूप में स्थित हैं।।११।। शरीरधारियों के शरीर में तत्पुरुष नाम से स्थित स्पर्श रूप ज्ञानेन्द्रिय है।।१२।। सब प्राणियों के शरीर में आँखों के भीतर विराजमान शिव के रूप को विद्वानों ने अघोर नाम दिया है।।१३।। शरीरधारियों के अंग में जिह्वा ज्ञानेन्द्रिय के रूप में वामदेव नाम से प्रसिद्ध है।।१४।। सब प्राणधारियों के शरीर में घ्राणेन्द्रिय (नाक) ज्ञानेन्द्रिय सद्योजात नाम से स्थित है।।१५।। सब प्रणधारियों के शरीर में वाक्य रूप ज्ञानेन्द्रिय स्थित है इसको ईशान कहा गया है।।१६।। सब शरीरधारियों के शरीर में हाथ के रूप में स्थित कर्मेन्द्रिय को विद्वानों ने तत्पुरुष कहा है।।१७।। तत्त्व वेत्ताओं सब शरीरधारियों के देह में पैर के रूप में स्थित कर्मेन्द्रिय को अघोर कहा है।।१८।। मुनियों ने सब शरीरधारियों के शरीर में गुदा नामक इन्द्रिय के रूप में स्थित को वामदेव कहा है।।१९।। सद्योजात रूप में प्राणधारियों के जननेन्द्रिय को वेद शास्त्रज्ञों ने सद्योजात नाम दिया है।।२०।। देवता और ऋषि कहते हैं कि देव ईशान प्राणियों के स्वामी हैं, आकाश के जनक हैं और शब्द तन्मात्र रूप हैं।।२१।। स्पर्श तन्मात्र को तत्पुरुष कहा गया है। मुनीश्वर लोग उनको वायु का जनक कहते हैं।।२२।। वेदज्ञ लोग कहते हैं, भयानक अघोर देव का तन्मात्र रूप में स्थित है जो कि अग्नि का जनक (उत्पादक) है।।२३।। तत्त्ववेदी लोगों द्वारा रस के रूप में वामदेव कहे जाते हैं जो कि जल के जनक हैं।।२४।। वे लोग जो मूल तत्त्वों के ज्ञाता हैं। वे गन्ध तन्मात्र रूप सद्योजात को पृथ्वी का स्वामी कहते हैं।।२५।। मुनीश्वर लोग कहते है कि ईशान परमात्र से युक्त आकाशात्मा हैं।।२६।। विद्वान

प्रभुं तत्पुरुषं देवं पवनं पवनात्मकम्। समस्तलोकव्यापित्वात्प्रथितं सूरयो विदुः॥२७॥
अथार्चिततया ख्यातमघोरं दहनात्मकम्। कथयंति महात्मानं वेदवाक्यार्थवेदिनः॥२८॥
तोयात्मकं महादेवं वामदेवं मनोरमम्। जगत्संजीवनत्वेन कथितं मुनयो विदुः॥२९॥
विश्वंभरात्मकं देवं सद्योजातं जगद्गुरुम्। चराचरैकभर्तारं परं कविवरा विदुः॥३०॥
पंचब्रह्मात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्। शिवानंदं तदित्याहुर्मुनयस्तत्त्वदर्शिनः॥३१॥
पंचविंशतितत्त्वात्मा प्रपंचे यः प्रदृश्यते। पंचब्रह्मात्मकत्वेन स शिवो नान्यतां गतः॥३२॥
पंचविंशतितत्त्वात्मा पंचब्रह्मात्मकः शिवः। श्रेयोर्थिभिरतो नित्यं चिंतनीयः प्रयत्नतः॥३३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचब्रह्मकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥१४॥**

---

लोग समस्त लोकों में व्याप्त होने के कारण प्रसिद्ध पवनात्मा को तत्पुरुष कहते हैं।।२७।। वे जो लोग वेदों के अर्थ को जानते हैं वे उत्तमात्मा अघोर को अग्नि का रूप कहते हैं, जो कि सब लोगों द्वारा पूज्य हैं।।२८।। मुनि लोग सारे संसार को जीवन देने वाले सुन्दर देवता वामदेव को जल का रूप मानते हैं। वे मन को प्रसन्न करने वाले हैं।।२९।। बुद्धिमान लोग जानते हैं कि सद्योजात देव जगत गुरु, चर-अचर के स्वामी पृथ्वी के रूप में हैं। वे विश्व के रक्षक हैं। सम्पूर्ण चर और अचर संसार पंचब्रह्मात्मक हैं। तत्त्व के ज्ञाता मुनियों ने इसको शिव का प्रसाद कहा है। विश्व में पच्चीस तत्त्वों के रूप में केवल शिव हैं और कोई नहीं; वह यह अनुभव करता है, कि शिव ही पंच ब्रह्मात्मक रूप में व्याप्त हैं। अतः जो लोग कल्याण की खोज करते हैं, उनको पच्चीस तत्त्वों के आत्मा और पंच ब्रह्मात्म शिव के विषय में सदा प्रयत्नपूर्वक चिन्तन करना चाहिए।।३०-३३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में पंचब्रह्म कथन नामक चौदहवाँ अध्याय समाप्त॥१४॥**

पंचदशोऽध्यायः

# शिवमाहात्म्यम्

सनत्कुमार उवाच

भूयोऽपि शिवमाहात्म्यं समाचक्ष्व महामते। सर्वज्ञो ह्यसि भूतानामधिनाथ महागुण॥१॥

शैलादिरुवाच

शिवमाहात्म्यमेकाग्रः शृणु वक्ष्यामि ते मुने। बहुभिर्बहुधा शब्दैः कीर्तितं मुनिसत्तमैः॥२॥
सदसद्रूपमित्याहुः सदसत्पतिरित्यपि। तं शिवं मुनयः केचित्प्रवदंति च सूरयः॥३॥
भूतभावविकारेण द्वितीयेन स उच्यते। व्यक्तं तेन विहीनत्वादव्यक्तमसदित्यपि॥४॥
उभे ते शिवरूपे हि शिवादन्यं न विद्यते। तयोः पतित्वाच्च शिवः सदसत्पतिरुच्यते॥५॥
क्षराक्षरात्मकं प्राहुः क्षराक्षरपरं तथा। शिवं महेश्वरं केचिन्मुनयस्तत्त्वचिंतकाः॥६॥
उक्तमक्षरमव्यक्तं व्यक्तं क्षरमुदाहृतम्। रूपे ते शंकरस्यैव तस्मान्न पर उच्यते॥७॥
तयोः परः शिवः शांतः क्षराक्षरपरो बुधैः। उच्यते परमार्थेन महादेवो महेश्वरः॥८॥
समस्तव्यक्तरूपं तु ततः स्मृत्वा स मुच्यते। समष्टिव्यष्टिरूपं तु समष्टिव्यष्टिकारणम्॥९॥

---

पन्द्रहवाँ अध्याय

# शिव का माहात्म्य

**सनत्कुमार बोले**

हे शैलादि! तुम महान् गुणी और सर्वज्ञ हो, तुम मुझसे शिवजी के माहात्म्य को फिर कहो।।१।।

**शैलादि बोले**

हे मुनि! मैं तुमसे शिवजी के माहात्म्य को कहूँगा जिस माहात्म्य को मुझसे पहले भी अनेक उत्तम मुनियों ने विभिन्न प्रकार से वर्णन किया है। तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो।।२।। कुछ बुद्धिमान ऋषि शिव को "सत्" और "असत्" और उनको सत्-असत् पति भी कहते हैं।।३।। भूत भाव के विकार से उनको व्यक्त कहा जाता है, और भूत भाव के हीन होने से अव्यक्त और असत् भी कहा जाता है।।४।।

इस प्रकार शिव के व्यक्त और अव्यक्त दोनों रूप हैं। शिव के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। चूँकि सत् और असत् दोनों के शिव स्वामी हैं, इसीलिए ये सत् असत् पति कहलाते हैं।।५।। कुछ तत्त्वचिंतक मुनि लोग शिव को क्षर और अक्षर कहते हैं। उनको क्षर और अक्षर से परे (बाहर) कहते हैं।।६।। अव्यक्त को अक्षर (अनश्वर) और व्यक्त को क्षर (नश्वर) कहते हैं। ये दोनों शिव के ही रूप हैं। उनसे आगे कोई नहीं है।।७।। शिव क्षर और अक्षर दोनों से बड़े (बृहत्तर) हैं। इसलिए वे महादेव महेश्वर हैं। विद्वानों द्वारा वे क्षर अक्षर पर कहे जाते हैं।।८।। समस्त व्यक्त रूप शिव का समष्टि और व्यष्टि दो रूप हैं। शिव समष्टि और व्यष्टि के कारण भी

वदंति केचिदाचार्याः शिवं परमकारणम्। समष्टिं विदुरव्यक्तं व्यष्टिं व्यक्तं मुनीश्वराः॥१०॥
रूपे ते गदिते शंभोर्नास्त्यन्यद्वस्तुसंभवम्। तयोः कारणभावेन शिवो हि परमेश्वरः॥११॥
उच्यते योगशास्त्रज्ञैः समष्टिव्यष्टिकारणम्। क्षेत्रक्षेत्रज्ञरूपी च शिवः कैश्चिदुदाहृतः॥१२॥
परमात्मा परं ज्योति र्भगवान्परमेश्वरः। चतुर्विंशतितत्त्वानि क्षेत्रशब्देन सूरयः॥१३॥
प्राहुः क्षेत्रज्ञशब्देन भोक्तारं पुरुषं तथा। क्षेत्रक्षेत्रविदावेते रूपे तस्य स्वयंभुवः॥१४॥
न किंचिच्च शिवादन्यदिति प्राहुर्मनीषिणः। अपरब्रह्मरूपं तं परब्रह्मात्मकं शिवम्॥१५॥
केचिदाहुर्महादेवमनादिनिधनं प्रभुम्। भूतेंद्रियांतःकरणप्रधानविषयात्मकम्॥१६॥
अपरं ब्रह्म निर्दिष्टं परं ब्रह्म चिदात्मकम्। ब्रह्मणी ते महेशस्य शिवस्यास्य स्वयंभुवः॥१७॥
शंकरस्य परस्यैव शिवादन्यन्न विद्यते। विद्याविद्यास्वरूपी च शंकरः कैश्चिदुच्यते॥१८॥
धाता विधाता लोकानामादिदेवो महेश्वरः। विद्येति च तमेवाहुरविद्येति मुनीश्वरा॥१९॥
प्रपंचजातमखिलं ते स्वरूपे स्वयंभुवः। भ्रांतिर्विद्या परं चेति शिवरूपमनुत्तमम्॥२०॥
अवापुर्मुनयो योगात्केचिदागमवेदिनः। अर्थेषु बहुरूपेषु विज्ञानं भ्रांतिरुच्यते॥२१॥
आत्माकारेण संवित्तिर्बुधैर्विद्येति कीर्त्यते। विकल्परहितं तत्त्वं परमित्यभिधीयते॥२२॥
तृतीयरूपमीशस्य नान्यत्किंचन सर्वतः। व्यक्ताव्यक्तज्ञरूपीति शिवः कैश्चिन्निगद्यते।२३॥

---

हैं।।९।। मुनीश्वर लोग समष्टि को अव्यक्त व्यष्टि को व्यक्त कहते हैं। कुछ आचार्य लोग शिव को परम कारण भी कहते हैं।।१०।। शिव के ये दो रूप कहे गये हैं। उन दोनों का उद्गम किसी दूसरे स्रोत से सम्भव नहीं है। उन दोनों के समष्टि और व्यष्टि कारण भाव होने से शिव परमेश्वर रूप में कहे जाते हैं।।११।। शिव समष्टि और व्यष्टि दोनों के कारण हैं, ऐसा योग दर्शन के ज्ञाताओं द्वारा कहा गया है। कुछ मुनियों ने शिव को क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ (शरीर और आत्मा) के रूप में भी कहा है।।१२।। शिव, परमेश्वर, महत्तम आत्मा, और महत्तम ज्योति हैं। विद्वान लोग कहते हैं कि शरीर चौबीस तत्त्वों से बना है और क्षेत्रज्ञ शब्द के द्वारा भोक्ता को पुरुष कहते हैं। उस स्वयं शिव के क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ ये दोनों रूप हैं।।१३-१४।। शिव के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ऐसा विद्वान लोग कहते हैं। शिव ब्रह्म परब्रह्म महादेव अनादि हैं। भूत, सांसारिक पदार्थ, ज्ञानेन्द्रिय और आन्तरिक इन्द्रिय अन्तःकरण (इच्छा आदि) को प्रधान आदि कहते हैं। यह अपर ब्रह्म का रूप है, शब्द ब्रह्मादि रूप हैं— कुछ लोग कहते हैं कि शिव परमब्रह्म हैं। परमब्रह्म चित् रूप हैं। वस्तुतः महेश, स्वयं शिव ब्रह्म हैं। शंकर के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। कुछ विद्वान कहते हैं कि शंकर के विद्या और अविद्या दो रूप हैं।।१५-१८।।

आदि देव महेश्वर जगत के उत्पन्नकर्त्ता और पालनकर्त्ता हैं। उन्हीं शिव को मुनीश्वर लोग विद्या और अविद्या भी कहते हैं।।१९।। उस अज शिव को सम्पूर्ण जगत इन दोनों कारणों विद्या और अविद्या से बना हुआ है। विश्व का उत्तम रूप भ्रान्ति विद्या और प्राण है। पवित्र वेदों के ज्ञाता विज्ञान योग द्वारा शिव के उत्तम रूप को प्राप्त करते हैं। सब रूपों में विज्ञान को भ्रान्ति कहते हैं। अविद्या के रूप में संवित्ति (संज्ञाबोध) को विद्वान लोग विद्या कहते हैं। विकल्प रहित (असंदिग्ध) तत्त्व को 'परम' कहते हैं। वह ईश का तीसरा रूप है।

विधाता सर्वलोकानां धाता च परमेश्वरः। त्रयोविंशतितत्त्वानि व्यक्तशब्देन सूरयः॥२४॥
वदंत्यव्यक्तशब्देन प्रकृतिं च परां तथा। कथयंति ज्ञशब्देन पुरुषं गुणभोगिनम्॥२५॥
तत्त्रयं शांकरं रूपं नान्यत्किंचिदशांकरम्॥२६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचदशोऽध्याय॥१५॥**

---

इन तीनों रूपों के परे (अतिरिक्त) कुछ भी नहीं है। कुछ विद्वान शिव जी को व्यक्ताव्यक्तज्ञ (व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ) रूप कहते हैं। परमेश्वर सब लोगों का रचयिता और पालनकर्त्ता है। विद्वान लोग व्यक्त शब्द से तैंतीस तत्त्व सोचते हैं और अव्यक्त शब्द से परा प्रकृति को मानते हैं। गुण के भोक्ता पुरुष का ज्ञ शब्द से ग्रहण करते हैं। शिव के ये तीन रूप व्यक्त, अव्यक्त (प्रकृति) और ज्ञ हैं। इस प्रकार शिव के परे कुछ नहीं है।।२०-२६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव का माहात्म्य**
**नामक पन्द्रहवाँ अध्याय समाप्त॥१५॥**

षोडशोऽध्यायः

# शिवस्य रूपाणि

सनत्कुमार उवाच

पुनरेव महाबुद्धे श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः। बहुभिर्बहुधा शब्दैः शब्दितानि मुनीश्वरैः॥१॥

शैलादिरुवाच

पुनः पुनः प्रवक्ष्यामि शिवरूपाणि ते मुने।
बहुभिर्बहुधा शब्दैः शब्दितानि मुनीश्वरैः॥२॥

क्षेत्रज्ञः प्रकृतिर्व्यक्तं कालात्मेति मुनीश्वरैः। उच्यते कैश्चिदाचार्यैरागमार्णवपारगैः॥३॥
क्षेत्रज्ञं पुरुषं प्राहुः प्रधानं प्रकृतिं बुधाः। विकारजातं निःशेषं प्रकृतेर्व्यक्तमित्यपि॥४॥
प्रधानव्यक्तयोः कालः परिणामैककारणम्। तच्चतुष्टयमीशस्य रूपाणां हि चतुष्टयम्॥५॥
हिरण्यगर्भं पुरुषं प्रधानं व्यक्तरूपिणम्। कथयंति शिवं केचिदाचार्याः परमेश्वरम्॥६॥
हिरण्यगर्भः कर्तास्य भोक्ता विश्वस्य पूरुषः। विकारजातं व्यक्ताख्यं प्रधानं कारणं परम्॥७॥
तेषां चतुष्टयं बुद्धेः शिवरूपचतुष्टयम्। प्रोच्यते शंकरादन्यदस्ति वस्तु न किंचन॥८॥
पिंडजातिस्वरूपी तु कथ्यते कैश्चिदीश्वरः। चराचरशरीराणि पिंडाख्यान्यखिलान्यपि॥९॥

---

## सोलहवाँ अध्याय

# शिव के रूप

### सनत्कुमार बोले

हे महान, बुद्धिमान शैलादि! मुनीश्वरों द्वारा अनेक प्रकार से वर्णित शिव के रूप को सत्य रूप में पुनः सुनना चाहता है।।१।।

### शैलादि बोले

महर्षियों द्वारा विभिन्न शब्दों द्वारा वर्णित शिव के रूप को पुनः-पुनः कहना चाहता है।।२।। आगमरूपी समुद्र के पारगामी विद्वानों द्वारा शिव को क्षेत्रज्ञ, प्रकृति, व्यक्त, और कालात्मा (काल की आत्मा) कहा गया है।।३।। वे विद्वान पुरुष को क्षेत्रज्ञ शब्द से प्रधान को प्रकृति शब्द से पुकारते हैं। प्रकृति के सम्पूर्ण विकार से उत्पन्न को व्यक्त काल प्रधान और व्यक्त दोनों का मुख्य कारण है। ये चारों के सेट से ईश (शिव) के चार रूप बने हैं।।४-५।। कुछ आचार्य परमेश्वर शिव को हिरण्यगर्भ, पुरुष, प्रधान और व्यक्त कहते हैं।।६।। हिरण्यगर्भ जगत का रचयिता (स्रष्टा) है। प्रणव भोक्ता है। प्रधान का विकार व्यक्त है और प्रधान महत्तम कारण है।।७।। इन चारों को शिव रूप जानो। शिव के परे कोई भी वस्तु नहीं है।।८।। कुछ विद्वान शिव को पिण्ड और जाति के रूप में कहते है। चर और अचर के भौतिक शरीर पिण्ड हैं। समस्त सामान्य और असामान्य जाति है। वे पिण्ड और

सामान्यानि समस्तानि महासामान्यमेव च। कथ्यंते जातिशब्देन तानि रूपाणि धीमतः॥१०॥
विराट् हिरण्यगर्भात्मा कैश्चिदीशो निगद्यते। हिरण्यगर्भो लोकानां हेतुर्लोकात्मको विराट्॥११॥
सूत्राव्याकृतरूपं तं शिवं शंसंति केचन। अव्याकृतं प्रधानं हि तद्रूपं परमेष्ठिनः॥१२॥
लोका येनैव तिष्ठंति सूत्रे मणिगणा इव। तत्सूत्रमिति विज्ञेयं रूपमद्भुतविक्रमम्॥१३॥
अंतर्यामी परः कैश्चित्कैश्चिदीशः प्रकीर्त्यते। स्वयंज्योतिः स्वयंवेद्यः शिवः शंभुर्महेश्वरः॥१४॥
सर्वेषामेव भूतानामंतर्यामी शिवः स्मृतः। सर्वेषामेव भूतानां परत्वात्पर उच्यते॥१५॥
परमात्मा शिवः शंभुः शंकरः परमेश्वरः। प्राज्ञतैजसविश्वाख्यं तस्य रूपत्रयं विदुः॥१६॥
सुषुप्तिस्वप्नजाग्रंतमवस्थात्रयमेव तत्। विराट् हिरण्यगर्भाख्यमव्याकृतपदाह्वयम्॥१७॥
तुरीयस्य शिवस्यास्य अवस्थात्रयगामिनः। हिरण्यगर्भः पुरुषः काल इत्येव कीर्तिताः॥१८॥
तिस्त्रोऽवस्था जगत्सृष्टिस्थितिसंहारहेतवः। भवविष्णुविरिंचाख्यमवस्थात्रयमीशितुः॥१९॥
आराध्य भक्त्या मुक्तिं च प्राप्नुवंति शरीरिणः। कर्ता क्रिया च कार्यं च करणं चेति सूरिभिः॥२०॥
शंभोश्चत्वारि रूपाणि कीर्त्यंते परमेष्ठिनः। प्रमाता च प्रमाणं च प्रमेयं प्रमितिस्तथा॥२१॥
चत्वार्येतानि रूपाणि शिवस्यैव न संशयः। ईश्वराव्याकृतप्राणविराट्भूतेंद्रियात्मकम्॥२२॥
शिवस्यैव विकारोऽयं समुद्रस्येव वीचयः। ईश्वरं जगतामाहुर्निमित्तं कारणं तथा॥२३॥

---

जाति भी शिव के रूप हैं।।९-१०।। कुछ विद्वान शिव को विराट् हिरण्यगर्भ रूप में कहते है। हिरण्यगर्भ जगत का हेतु (कारण) है और जगत (लोक) की आत्मा है। लोक के साथ मय है। कुछ विद्वान शिव को सूत्र और अव्यक्त कहते है। वास्तव में अव्यक्त प्रधान है और परमेष्ठी का रूप है जिससे जैसे एक सूत्र में मणियाँ गुँथी रहती है उसी प्रकार परमेष्ठी रूप सूत्र में सब लोक गुँथे हुए (नत्थी) हैं। शिव के उस अद्भूत विषम रूप को सूत्र समझना चाहिए। शिव को कोई अन्तर्यामी और कोई ईश कहते हैं। शिव स्वयं वेद्य और स्वयं ज्योति परमेश्वर है।।११-१३।। शिव सब प्राणियों के अन्तर्यामी हैं, सब के भीतर विराजमान हैं। वह प्राणियों के यंता हैं। अतः वह सब प्राणियों के ऊपर (पर) हैं। अतः उनको परात्पर कहा जाता है। वे परमात्मा, शिव, शंकर और परमेश्वर हैं। उनको विद्वान लोग प्राज्ञ, तैजस् और विश्वरूप रूपत्रय (तिहरे रूप) में मानते है।।१४-१६।। प्रज्ञान आदि में सुषुप्ति, स्वप्न और जाग्रत ये तीन अवस्थाएँ होती हैं। विराट् और हिरण्यगर्भ ये अव्याकृत पद से वाच्य है।

ये तीनों अवस्थाओं से गुजरते हुये शिव की अवस्था बतलाते हैं। हिरण्यगर्भ और विराट् के काल के तौर पर वर्णित है। उक्त तीनों अवस्थायें जगत की सृष्टि और संहार की कारण हैं। शिव की इन अवस्थाओं को जो विष्णु और बिरिंच पद वाच्य है, भव कहते है। ये शरीरधारी लोग भक्तिपूर्वक उनकी आराधना करके मुक्ति प्राप्त करते हैं। विद्वान लोग परमेश्वर शिव के कर्त्ता, क्रिया, कर्म और कारण ये चार रूप कहते हैं।।१७-२०।। परमेश्वर शिव के चार अन्य रूप प्रमाता, प्राण, प्रमेय और प्रमिति होते हैं।।२१-२२(अ)।। समुद्र की लहरों की तरह चार अन्य रूप भी शिव के होते हैं। वे रूप है—ईश्वर, अव्याकृत, प्राण और भूत और ज्ञानेन्द्रियाँ। ये शिव के विकार हैं। इस जगत का कारण है। वेदज्ञों द्वारा स्वयं प्रधान, अव्याकृत कहा गया है। हिरण्यगर्भ को प्राण नाम दिया गया है और विराट् लोकात्मा है। लोकों से एकाकार है।

अव्याकृतं प्रधानं हि तदुक्तं वेदवादिभिः। हिरण्यगर्भः प्राणाख्यो विराट् लोकात्मकः स्मृतः॥२४॥
महाभूतानि भूतानि कार्याणि इन्द्रियाणि च। शिवस्यैतानि रूपाणि शंसंति मुनिसत्तमाः॥२५॥
परमात्मा शिवादन्यो नास्तीति कवयो विदुः। शिवजातानि तत्त्वानि पंचविंशन्मनीषिभिः॥२६॥
उक्तानि न तदन्यानि सलिलादूर्मिवृंदवत्। पंचविंशत्पदार्थेभ्यः शिवतत्त्वं परं विदुः॥२७॥
तानि तस्मादनन्यानि सुवर्णकटकादिवत्। सदाशिवेश्वराद्यानि तत्त्वानि शिवतत्त्वतः॥२८॥
जातानि न तदन्यानि मृद्द्रव्यं कुंभभेदवत्।
माया विद्या क्रिया शक्तिर्ज्ञानशक्तिः क्रियामयी॥२९॥
जाताः शिवान्न संदेहः किरणा इव सूर्यतः। सर्वात्मकं शिवं देवं सर्वाश्रयविधायिनम्॥३०॥
भजस्व सर्वभावेन श्रेयश्चेत्प्राप्तुमिच्छसि॥३१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षोडशोऽध्यायः॥१६॥**

---

भूत शब्द महाभूतों को बताता है ज्ञानेन्द्रियाँ उसके प्रभाव हैं। उस पर मुनीश्वर लोग इसको शिव का रूप बताते हैं।।२२(ब)-२५।। बुद्धिमान लोग कहते हैं कि सर्वोच्च आत्मा शिव से अलग दूसरा कोई नहीं है। चौबीस सिद्धान्त (तत्त्व) शिव द्वारा ही उद्भूत हुए हैं। वे शिव से अलग नहीं हैं। जैसे कि तरंगों की शृंखलाएँ जलों से अलग नहीं हैं। बुद्धिमान लोग जानते हैं कि शिव का तत्त्व पच्चीस श्रेणियों से महत्तर है। अतः ये सिद्धान्त (तत्त्व) भी उसी तरह शिव से पृथक् नहीं हैं। जैसे कि हाथ का कंगन स्वर्ण से पृथक् नहीं है।

सब तत्त्व सदाशिव, ईश्वर आदि शिव तत्त्व से उत्पन्न हुए हैं। इसलिए ये उससे पृथक् नहीं हैं। जैसे कि विभिन्न प्रकार के घट गीली मिट्टी से पृथक् नहीं हैं जिससे ये बनाए जाते हैं।

माया, अविद्या, क्रियाशक्ति, ज्ञानशक्ति और क्रियामयी ये पाँचों शिव से असंदिग्ध रूप में पैदा हुईं जो कि सब की आत्मा हैं और एक-दूसरे को आश्रय प्रदान करती हैं, सहारा देती हैं।।२६-३१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव के रूप**
**नामक सोलहवाँ अध्याय समाप्त॥१६॥**

## सप्तदशोऽध्यायः

# शिवस्य महत्ता

सनत्कुमार उवाच

भूयो देवगणश्रेष्ठ शिवमाहात्म्यमुत्तमम्। शृण्वतो नास्ति मे तृप्तिस्त्वद्वाक्यामृतपानतः॥१॥
कथं शरीरी भगवान् कस्माद्रुद्रः प्रतापवान्। सर्वात्मा च कथं शम्भुः कथं पाशुपतं व्रतम्॥२॥
कथं वा देवमुख्यैश्च श्रुतो दृष्टश्च शंकरः।

शैलादिरुवाच

अव्यक्तादभवत्स्थाणुः शिवः परमकारणम्॥३॥
स सर्वकारणोपेत ऋषिर्विश्वाधिकः प्रभुः। देवानां प्रथमं देवं जायमानं मुखाम्बुजात्॥४॥
ददर्श चाग्रे ब्रह्माणं चाज्ञया तमवैक्षत। दृष्टो रुद्रेण देवेशः ससर्ज सकलं च सः॥५॥
वर्णाश्रमव्यवस्थाश्च स्थापयामास वै विराट्। सोमं ससर्ज यज्ञार्थं सोमादिदमजायत॥६॥
चरुश्च वह्निर्यज्ञश्च वज्रपाणिः शचीपतिः। विष्णुर्नारायणः श्रीमान् सर्वं सोममयं जगत्॥७॥
रुद्राध्यायेन ते देवा रुद्रं तुष्टुवुरीश्वरम्। प्रसन्नवदनस्तस्थौ देवानां मध्यतः प्रभुः॥८॥

---

## सतरहवाँ अध्याय

# शिव की महत्ता

### सनत्कुमार बोले

हे गणों में श्रेष्ठ शैलादि! आप के अमृत तुल्य मधुर वचन सुनकर मुझको तृप्ति नहीं हुई। अतः उत्तम शिव के माहात्म्य को पुनः आगे कहो।

शिव जी कैसे शरीरधारी हुये? कैसे रुद्र प्रतापवान और शक्ति सम्पन्न हैं? शिव कैसे सब की आत्मा है, पवित्र पाशुपत व्रत किस प्रकार किया जाय; प्रमुख देवताओं द्वारा कैसे देखे गये? वे शिव कैसे प्रसन्न हुये?

### शैलादि बोले

स्थाणु, शिव जो महान आत्मा हैं वे अव्यक्त से उत्पन्न हुये।।१-३।। वह विश्व के आदि ऋषि में सब कारणों से युक्त हैं। उनके मुख कमल से पूर्व में प्रधान देव ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई उनको उन्होंने देखा। उन देवों के स्वामी, ब्रह्मा को देखने के बाद उनकी आज्ञा से उन्होंने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की। विराट् ने वर्णाश्रम व्यवस्था को स्थापित किया। यज्ञ के लिए उन्होंने सोम रस को उत्पन्न किया। चरु, अग्नि, यज्ञ हाथ में वज्रधारी शचीपति इन्द्र, विष्णु और नारायण और स्वर्ग और सम्पूर्ण सोममय जगत् ये सब सोम रस से उत्पन्न हुये।।४-७।। देवताओं ने रुद्राध्याय द्वारा रुद्र की (रुद्र देवता की) स्तुति की। तब प्रभु रुद्र (शिव) प्रसन्न मुख हो देवताओं के मध्य में विराजमान हुये। तब महेश्वर शिव जी ने सब देवताओं के अज्ञान को दूर कर बुद्धि को जागृत किया।

अपहृत्य च विज्ञानमेषामेव महेश्वरः। देवा ह्यपृच्छंस्तं देवं को भवानिति शंकरम्॥९॥
अब्रवीद्भगवान्रुद्रो ह्यहमेकः पुरातनः। आसं प्रथम एवाहं वर्तामि च सुरोत्तमाः॥१०॥
भविष्यामि च लोकेऽस्मिन्मत्तो नान्यः कुतश्चन।
व्यतिरिक्तं न मत्तोऽस्ति नान्यत्किंचित्सुरोत्तमाः॥११॥
नित्योऽनित्योऽहमनद्यो ब्रह्माहं ब्रह्मणस्पतिः। दिशश्च विदिशश्चाहं प्रकृतिश्च पुमानहम्॥१२॥
त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप् च च्छंदोहं तन्मयः शिवः। सत्योहं सर्वगः शांतस्त्रेताग्निर्गौरवं गुरुः॥१३॥
गौरहं गह्वरश्चाहं नित्यं गहनगोचरः। ज्येष्ठोहं सर्वतत्त्वानां वरिष्ठोहमपांपतिः॥१४॥
आपोहं भगवानीशस्तेजोहं वेदिरप्यहम्। ऋग्वेदोहं यजुर्वेदः सामवेदोहमात्मभूः॥१५॥
अथर्वणोहं मंत्रोहं तथा चांगिरसां वरः। इतिहासपुराणानि कल्पोहं कल्पनाप्यहम्॥१६॥
अक्षरं च क्षरं चाहं क्षांतिः शांतिरहं क्षमा।
गुह्योहं सर्ववेदेषु वरेण्योहमजोप्यहम्॥१६॥
अक्षरं च क्षरं चाहं क्षांतिः शांतिरहं क्षमा। गुह्योहं सर्ववेदेषु वरेण्योहमजोप्यहम्॥१७॥
पुष्करं च पवित्रं च मध्यं चाहं ततः परम्। बहिश्चाहं तथा चांतः पुरस्तादहमव्ययः॥१८॥
ज्योतिश्चाहं तमश्चाहं ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरः। बुद्धिश्चामहंकारस्तन्मात्राणींद्रियाणि च॥१९॥
एवं सर्वं च मामेव यो वेद सुरसत्तमाः। स एव सर्ववित्सर्वं सर्वात्मा परमेश्वरः॥२०॥
गां गोभिर्ब्राह्मणान्सर्वान्ब्राह्मण्येन हवींषि च। आयुषायुस्तथा सत्यं सत्येन सुरसत्तमाः॥२१॥

---

तब देवताओं ने भगवान शिव से पूछा। आप कौन हैं?।।८-९।। रुद्र देव ने कहा, "हे उत्तम देवताओं! मैं एक आदि पुरातन पहिले भी था और अब भी हूँ। मैं भविष्य में भी रहूँगा। मुझसे भिन्न (अलग) कुछ भी नहीं है।।१०-११।। मैं नित्य हूँ अनित्य हूँ। मैं अनघ (पाप रहित) ब्रह्म हूँ और ब्रह्मा का स्वामी भी हूँ। मैं दिशा हूँ। विदिशा (दिशाओं के कोण) हूँ। मैं प्रकृति हूँ। मैं पुरुष हूँ।।१२।। छन्द शास्त्र का अनुष्टुप्, जगती और अनुष्टप् हूँ। छन्द हूँ। मैं सर्व व्यापक सत्य हूँ। त्रेताग्नि (त्रयाग्नि) हूँ। मैं गरिमा हूँ, मैं गुरु हूँ।।१३।। मैं गौ हूँ, मैं गुफा हूँ, मैं गहन गोचर हूँ। मैं सब तत्त्वों में ज्येष्ठ (सब से बड़ा) हूँ और उत्तम हूँ। मैं जल का स्वामी हूँ।।१४।। मैं जल हूँ, भगवान ईश हूँ। मैं तेज अग्नि हूँ। मैं यज्ञ की वेदी भी हूँ। मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद हूँ। मैं स्वयंभू (अपने आप उत्पन्न) हूँ।।१५।। मैं अथर्ववेद हूँ। मैं मंत्र हूँ। अंगिरों में सर्वेसर्वा हूँ। मैं इतिहास और पुराण हूँ। मैं कल्प (कर्म प्रयोग विज्ञान) हूँ और कल्पना भी हूँ।।१६।। क्षर (विनाशी) और अक्षर (अविनाशी) हूँ। मैं क्षान्ति, शान्ति और क्षमा हूँ। सब वेदों में गुह्य (गुप्त) हूँ। उत्तम (श्रेष्ठ) और अज हूँ।।१७।। मैं पवित्र पुष्कर हूँ। मैं मध्य हूँ और उससे परे भी हूँ। मैं बाहर और भीतर हूँ। सामने मैं अपरिवर्तनीय हूँ।।१८।। मैं ज्योति हूँ। मैं अन्धकार हूँ। मैं ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर हूँ। मैं बुद्धि, अहंकार, तन्मात्राएँ और ज्ञानेन्द्रिय हूँ।।१९।। हे श्रेष्ठ देवतागण! जो मुझको सब कुछ समझता है वही सर्वविद है। वह ब्रह्मविद है। वह सब की आत्मा और परमेश्वर है।।२०।। हे श्रेष्ठ देवगण! मैं अपने तेज से गायों द्वारा गायों को, ब्राह्मणीय तेज से ब्राह्मणों को, आयु को

धर्मं धर्मेण सर्वांश्च तर्पयामि स्वतेजसा। इत्यादौ भगवानुक्त्वा तत्रैवांतरधीयत॥२२॥
नापश्यंत ततो देवं रुद्रं परमकारणम्। ते देवाः परमात्मानं रुद्रं ध्यायंति शंकरम्॥२३॥
सनारायणका देवाः सेंद्राश्च मुनयस्तथा। तथोर्ध्वबाहवो देवा रुद्रं स्तुन्वंति शंकरम्॥२४॥

**इति श्रीलिंगमहापुराणे उत्तरभागे सप्तदशोऽध्यायः॥१७॥**

---

आयुष द्वारा तथा सत्य से तथा धर्म से धर्म को इस प्रकार अपने तेज से सब को तृष्ट करता हूँ।'' ऐसा कहकर भगवान रुद्र वहीं पर स्वयं अन्तर्ध्यान (अलक्षित अदृश्य) हो गये।।२१।। देवगण परम कारण भगवान रुद्र को न देखने पर नारायण और इन्द्र सहित सब देवगण तथा मुनिगण ध्यान करने लगे। अपनें हाथों को ऊपर की ओर उठा भगवान शंकर की स्तुति करने लगे।।२२-२४।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की महत्ता**
**नामक सतरहवाँ अध्याय समाप्त॥१७॥**

अष्टादशोऽध्यायः

# पवित्रपाशुपतव्रतम्

देवा ऊचः

य एष भगवान् रुद्रो ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।
स्कंदश्चापि तथा चेंद्रो भुवनानि चतुर्दश। अश्विनौ ग्रहताराश्च नक्षत्राणि च खं दिशः॥१॥
भूतानि च तथा सूर्यः सोमश्चाष्टौ ग्रहास्तथा। प्राणः कालो यमो मृत्युरमृतः परमेश्वरः॥२॥
भूतं भव्यं भविष्यच्च वर्तमानं महेश्वरः। विश्वं कृत्स्नं जगत्सर्वं सत्यं तस्मै नमोनमः॥३॥
त्वमादौ च तथा भूतो भूर्भुवः स्वस्तथैव च। अंते त्वं विश्वरूपोऽसि शीर्षं तु जगतः सदा॥४॥
ब्रह्मैकस्त्वं द्वित्रिधार्थमधश्च त्वं सुरेश्वरः। शांतिश्च त्वं तथा पुष्टिस्तुष्टिश्चाप्यहुतं हुतम्॥५॥
विश्वं चैव तथाविश्वं दत्तं वादत्तमीश्वरम्॥
कृतं चाप्यकृतं देवं परमप्यपरं ध्रुवम्। परायणं सतां चैव ह्यसतामपि शंकरम्॥६॥
अपामसोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान्।
कि नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य॥७॥
एतज्जगद्धितं दिव्यमक्षरं सूक्ष्ममव्ययम्॥८॥

---

अठारहवाँ अध्याय

# पवित्र पाशुपत व्रत

देवगण बोले

भगवान रुद्र ही अकेले ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं। वह स्कन्ध हैं, वह इन्द्र हैं, वह चौदहों लोक, अश्विनी, ग्रह और तारा, नक्षत्र, आकाश, दशों दिशाएँ, भूत गण, सूर्य, चन्द्रमा, और आठों ग्रह हैं। वह प्राण, काल और मृत्यु हैं। वे भूत वर्तमान और भविष्य का निर्माण करते हैं। वह विश्व और सत्य हैं, उनको नमस्कार है।।१-३।। हे भगवान! तुम विश्व के आदि, तुम भूर्भुवः और स्वः हो। अन्त में तुम विश्वरूप हो और जगत के सदा शीर्ष स्थान हो।।४।। तुम पूर्ण ब्रह्म हो, तुम दो रूपों में हो और तीन रूपों में हो। तुम नीचे हो, तुम देवताओं के स्वामी हो, तुम शान्ति पुष्टि और तुष्टि हो, अग्नि में किये गये होम में जो हवन किया गया है और नहीं किया गया है वह भी तुम हो, तुम दृश्य हो और अदृश्य हो। तुम दत्त भी हो अदत्त भी हो, तुम ईश्वर हो तुम जो कृत है वह भी हो और अकृत भी हो। तुम निश्चित रूप से पर भी हो, अपर भी हो अर्थात् देवों से महान् और छोटे भी हो। तुम अच्छों और बुरों के अन्तिम लक्ष्य हो। तुम शंकर हो।।५-६।। हम लोग सोम रस पीते हैं और अमर हो सकते हैं। हम लोग ज्योति तक पहुँच सकते हैं। देवताओं तक नहीं पहुँच सकते। वास्तव में शत्रु हमारा क्या कर सकेंगे? क्या मृत्यु अमरता का पर्याय है। शिव का यह रूप विश्व के लिए हितकर है। यह दिव्य अनश्वर

प्राजापत्यं पवित्रं च सौम्यमग्राह्यमव्ययम्। अग्राह्यणापि वा ग्राह्यं वायव्येन समीरणः॥९॥
सौम्येन सौम्यं ग्रसति तेजसा स्वेन लीलया। तस्मै नमोऽपसंहर्त्रे महाग्रासाय शूलिने॥१०॥
हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणे प्रतिष्ठिताः।
हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः॥११॥
शिरश्चोत्तरतश्चैव पादौ दक्षिणतस्था। यो वै चोत्तरतः साक्षात्स ओंकारः सनातनः॥१२॥
ओंकारो यः स एवेह प्रणवो व्याप्य तिष्ठति। अनंतस्तारसूक्ष्मं च शुक्लं वैद्युतमेव च॥१३॥
परं ब्रह्म स ईशान एको रुद्रः स एव च। भवान्महेश्वरः साक्षान्महादेवो न संशयः॥१४॥
ऊर्ध्वमुन्नामयत्येव स ओंकारः प्रकीर्तितः। प्राणानवति यस्तस्मात् प्रणवः परिकीर्तितः॥१५॥
सर्वं व्याप्नोति यस्तस्मात्सर्वव्यापी सनातनः। ब्रह्मा हरिश्च भगवानाद्यंतं नोपालब्धवान्॥१६॥
तथान्ये च ततोऽनंतो रुद्रः परमकारणम्। यस्तारयति संसारात्तार इत्यभिधीयते॥१७॥
सूक्ष्मो भूत्वा शरीराणि सर्वदा ह्यधितिष्ठति। तस्मात्सूक्ष्मः समाख्यातो भगवान्नीललोहितः॥१८॥
नीलश्च लोहितश्चैव प्रधानपुरुषान्वयात्। स्कंदतेऽस्य यतः शुक्रं तथा शुक्रमपैति च॥१९॥
विद्योतयति यस्तस्माद्वैद्युतः परिगीयते। बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च बृहते च परापरे॥२०॥
तस्माद्बृंहति यस्माद्धि परं ब्रह्मेतिकीर्तितम्। अद्वितीयोऽथ भगवांस्तुरीयः परमेश्वरः॥२१॥
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशां चक्षुरीश्वरम्। ईशानमिंद्रसूरयः सर्वेषामपि सर्वदा॥२२॥

---

सूक्ष्म और अपरिवर्तनीय अव्यय है।।७-८।। यह पवित्र है। यह सौम्य है। यह ग्राह्य नहीं है जैसे कि वायु किसी वस्तु के पकड़ के बाहर है। सौम्य के द्वारा सौम्य को अपनी लीला से पकड़ लेता है। उस महान् ग्रहण करने वाले और अपसंहार करने वाले रुद्र को नमस्कार है।।९-१०।। देवता गण हृदय में स्थित हैं, वे प्राण में प्रतिष्ठित हैं। तुम तीन मात्रा के रूप में हृदय में सदा विराजमान हो। तुम उनसे परे हो, तुम्हारे सिर उत्तर की ओर हैं और पैर दक्षिण की ओर हैं। तुम उत्तर से साक्षात् संलग्न हो। तुम अन्तस्थ ऊँकार हो।।११-१२।। जो ॐकार है वह प्रणव है, वह प्रत्येक वस्तु में विराजमान है। अनन्त (तार) सूक्ष्म और शुक्ल वैद्युत (प्रकाश) परब्रह्म है, वही एक ईशान वही रुद्र है। आप साक्षात् महेश्वर और महादेव हैं। इसमें सन्देह नहीं।।१३-१४।। वह जो ऊपर को उठाता है, वह ॐकार है। प्रणव ॐकार है, क्योंकि वह प्राणों की रक्षा करता है इसीलिए उसको प्रणव कहा गया है।।१५।। जो सब में व्याप्त है वह सर्वव्यापी सनातन रुद्र है। उसका आदि अन्त ब्रह्मा हरि और भगवान भी नहीं पा सके। अनन्त रुद्र संसार के परम कारण हैं। जो संसार से तारता है, इसीलिए उस रुद्र को 'तार' कहा जाता है।।१६-१७।। नीललोहित भगवान सूक्ष्म होकर सब शरीरों में सदा विद्यमान रहते हैं। इसीलिए उनको 'सूक्ष्म' कहा जाता है।।१८।। वह नील और लोहित दोनों हैं, इसलिए प्रधान और पुरुष दोनों उसमें लीन हो जाते हैं। शुक्र उसमें से बहता है। इसीलिए उसको शुक्र नाम दिया गया है। जो प्रकाश (विद्युत) देता है। इसीलिए उसको वैद्युत कहा गया है। वह परम ब्रह्म हैं क्योंकि वह बृहत तत्त्व है। भगवान अद्वितीय हैं, यह चतुर्थ अवस्था है। वह परमेश्वर हैं।।१९-२१।। विद्वान लोग उनको ईशान कहते हैं क्योंकि वह विश्व के दिव्य चक्षु हैं। इन्द्र आदि

ईशानः सर्वविद्यानां यत्तदीशान उच्यते। यदीक्षते च भगवान्निरीक्ष्यमिति चाज्ञया॥२३॥
आत्मज्ञानं महोदेवो योगं गमयति स्वयम्। भगवांश्चोच्यते देवो देवदेवो महेश्वरः॥२४॥
सर्वाँल्लोकान्क्रमेणैव यो गृह्णाति महेश्वरः। विसृजत्येप देवेशो वासयत्यपि लीलया॥२५॥
एषो हि देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अंतः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्मुखास्तिष्ठति सर्वतोमुखः॥२६॥
उपासितव्यं यत्नेन तदेतत्सद्भिरुच्यम्। यतो वाचो निवर्तंते ह्यप्राप्य मनसा सह॥२७॥
तदग्रहणमेवेह यद्वाग्वदति यत्नतः। अपरं च परं वेति परायणमिति स्वयम्॥२८॥
वदंति वाचः सर्वज्ञं शंकरं नीललोहितम्। एष सर्वो नमस्तस्मै पुरुषः पिंगलः शिवः॥२९॥
स एष स महारुद्रो विश्वं भूतं भविष्यति। भुवनं बहुधा जातं जायमानमितस्ततः॥३०॥
हिरण्यबाहुर्भगवान् हिरण्यपतिरीश्वरः। अंबिकापतिरीशानो हेमरेता वृषध्वजः॥३१॥
उमापतिर्विरूपाक्षो विश्वसृग्विश्ववाहनः। ब्रह्माणं विदधे योऽसौ पुत्रमग्रे सनातनम्॥३२॥
प्रहिणोति स्म तस्यैव ज्ञानमात्मप्रकाशकम्। तमेकं पुरुषं रुद्रं पुरुहूतं पुरुष्टुतम्॥३३॥
बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं वह्निरूपं वरेण्यम्।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यंति धीरास्तेषां शांतिः शाश्वती नेतरेषाम्॥३४॥

---

तथा अन्य विद्वान सब अवसरों पर ईशान की पूजा करते हैं। सब विद्वानों का ईशान होने से उनको ईशान कहा जाता है। भगवान जो देखता है और अपनी आज्ञा से दूसरों को देखने को प्रेरित करता है, और देखने पर वह आत्मज्ञान है। महादेव स्वयं योग को प्राप्त करने को प्रेरित करते हैं। देवताओं के देवता इसीलिए 'भगवान' कहे जाते हैं।।२२-२४।। यह महेश्वर हैं जो सम्पूर्ण जगत् को क्रम से ग्रहण करते हैं और सब प्रत्येक वस्तु की रक्षा करते हैं, तथा उसमें विकास करते हैं। यह वह है जो सब विदिशाओं में विद्यमान हैं। वह सबसे प्रथम उत्पन्न हुये और गर्भ में प्रविष्ट हुये। वह उत्पन्न हुये और वह उत्पन्न होंगे। वह प्रत्यङ् मुख हैं फिरसर्वत्र मुख हैं अर्थात् चारों ओर मुख किये हुए हैं।।२५।। वह महेश्वर सज्जनों द्वारा यत्नपूर्वक उपासना के योग्य हैं, जिनको मन सहित वाणी बिना कुछ प्राप्त किये वापस लौट आती है। अर्थात् वे मन और वाणी की पहुँच से परे हैं।।२६-२७।। वाणी उनको अग्रहण, अपने द्वारा कुछ कहने के अयोग्य कहती है। वह स्वयं पर हैं या अपर किन्तु सबसे बड़े शरणदाता हैं।।२८।। वाणी (वाक्) उनको सर्वज्ञ, नीललोहित और शंकर कहती है। वह पुरुष, सर्व, पिंगल, शिव हैं। उनको नमस्कार।।२९।। वह महान् रुद्र हैं। वह सम्पूर्ण जगत् (विश्व) हैं। वह अनेक प्रकार से यहाँ-वहाँ और सर्वत्र हैं।।३०।। वह भगवान स्वर्ण की भुजावाले हैं। स्वर्ण के स्वामी हैं। वे उनके ईश्वर हैं। वे वृषभध्वज (जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है) और स्वर्ण वीर्य है (जिनका वीर्य स्वर्ण के रूप में है)।।३१।। वे विरुपाक्ष हैं। वह उमापति विश्व के सृष्टिकर्त्ता हैं। विश्व उनका वाहन है। उन्होंने सबसे प्रथम पुत्र ब्रह्मा को उत्पन्न किया। उनको ही शिव ने आत्मा को प्रकाशित करने वाला ज्ञान प्रदान किया। उस पुरुष को पुरुहूत पुरुष्टुत पुरा काल के अग्रभाग में उत्तम अग्नि रूप में आत्मा में स्थित को जो धीर लोग देखते हैं, अनुभव करते हैं उन्हीं को स्थायी

महतो यो महीयांश्च ह्यणोरप्यणुरव्ययः। गुहायां निहितश्चात्मा जंतोरस्य महेश्वरः॥३५॥
वेश्मभूतोऽस्य विश्वस्य कमलस्थो हृदि स्वयम्। गह्वरं गहनं तत्स्थं तस्यांतश्चोर्ध्वतः स्थितः॥३६॥
तत्रापि दहं गगनमोंकारं परमेश्वरम्। बालाग्रमात्रं तन्मध्ये ऋतं परमकारणम्॥३७॥
सत्यं ब्रह्म महादेवं पुरुषं कृष्णपिंगलम्। ऊर्ध्वरेतसमीशानं विरूपाक्षमजोद्भवम्॥३८॥
अधितिष्ठति योनिं यो योनिं वाचैक ईश्वरः। देहं पंचविधं येन तमीशानं पुरातनम्॥३९॥
प्राणेष्वंतर्मनसो लिंगमाहुर्यस्मिन्क्रोधो या च तृष्णा क्षमा च।
तृष्णां छित्त्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्याचिंत्यं स्थापयित्वा च रुद्रे॥४०॥
एकं तमाहुर्वै रुद्रं शाश्वतं परमेश्वरम्। परात्परतरं वापि परात्परतरं ध्रुवम्॥४१॥
ब्रह्मणो जनकं विष्णो र्वह्नेर्वायोः सदाशिवम्।
ध्यात्वाग्निना च शोध्यांगं विशोध्य च पृथक्पृथक्॥४२॥
पंचभूतानि संयम्य मात्राविधिगुणक्रमात्। मात्राः पंच चतस्रश्च त्रिमात्रादिस्ततः परम्॥४३॥
एकमात्रममात्रं हि द्वादशांते व्यवस्थितम्।
स्थित्वा स्थाप्यामृतो भूत्वा व्रतं पाशुपतं चरेत्॥४४॥
एतद्व्रतं पाशुपतं चरिष्यामि समासतः। अग्निमाधाय विधिवदृग्युजः सामसंभवैः॥४५॥

---

शान्ति प्राप्त होती है अन्य को नहीं।।३२-३४।। वह महीयान (सबसे बड़े) से भी बड़े महत्तर हैं। वह सबसे छोटे अणु से भी सूक्ष्म अणु हैं। जो अव्यय हैं प्राणधारियों के हृदय की गुफा में स्थित आत्मा हैं।।३५।। ॐकार, परमेश्वर बालों के अग्रभाग के आकार में हैं। हृदय की गुफा के मध्य में स्थित है। यह शक्त हैं यह परम कारण है।।३६-३७।। वह शत ब्रह्म हैं, वह काले और पिंगल वर्ण (कृष्ण पिंगल) हैं। वह विरूपाक्ष हैं, वह ईशान उर्ध्वरिता, वह महादेव और वह ब्रह्मा की उत्पत्ति के स्रोत हैं।।३८।। वह पुरातन ईशान हैं जो कि पाँच पर्त वाले भौतिक शरीर में विराजमान हैं। वह पूर्ण ईश्वर हैं जो कि योनि में स्थित हैं।।३९।। वह प्राणो में हैं, उसको मन का लिंग (चिह्न) कहते हैं जिसमें क्रोध, तृष्णा, क्षमा विद्यमान रहती है। तृष्णा को काटकर, जो कि संसारिक लगाव की जड़ है, और उसको रुद्र में स्थापित करके बुद्धि से उसका ध्यान करना चाहिए।।४०।। विद्वान लोग उसको रुद्र कहते हैं वे उसको स्थायी (शाश्वत) परमेश्वर कहते हैं वह निश्चित् रूप से महत्तम से भी महत्तर हैं। अर्थात् सबसे बड़े से भी बड़े हैं।।४१।। ब्रह्मा को विष्णु, अग्निदेवता और वायु देवता उत्पन्न करने वाले उस पशुपति का ध्यान करना चाहिए। साधक को स्वयं अपने को अग्नि से शुद्ध करना चाहिए। उसको अपने अंगों को अलग से शुद्ध करना चाहिए। पंचभूतों को संयम में लेकर उनके मात्रा विधि और गुण के क्रम से पाँच मात्राओं, चार, त्रिमात्रा आदि को उसके बाद एक मात्रा और आदि मात्रा को क्रमशः संयमित करना चाहिए। तब स्थापित देव का ध्यान बिना मात्रा के करना चाहिए। इस प्रकार अमृत (अमर) होकर पाशुपत करना चाहिए।।४२-४४।। अब मैं पाशुपत व्रत को संक्षेप में कहूँगा। साधक ऋक्, यजुः और साम मंत्रों को पढ़ते हुये पवित्र अग्नि स्थापित करे।।४५।। साधक व्रत करे। स्नान करके शुद्ध हो जाय। सफेद वस्त्र, सफेद जनेऊ पहने। सफेद माला पहने और सफेद चन्दन लगा ले।।४६।। रजोगुण से मुक्त होकर साधक होम करे। इस प्रकार वह पापों से मुक्त होगा तब भक्त नीचे लिखे

उपोषितः शुचितः स्नातः शुक्लांबरधरः स्वयम्।
शुक्लयज्ञोपवीती च शुक्लमाल्यानुलेपनः॥४६॥
जुहुयाद्विरजो विद्वान् विरजाश्च भविष्यति। वायवः पंच शुध्यंतां वाङ्मनश्चरणादयः॥४७॥
श्रोत्रं जिह्वा ततः प्राणस्तथा बुद्धिस्तथैव च। शिरः पाणिस्तथा पार्श्वं पृष्ठोदरमनंतरम्॥४८॥
जंघे शिश्नमुपस्थं च पायुर्मेढ्रं तथैव च। त्वचा मांसं च रुधिरं मेदोऽस्थीनि तथैव च॥४९॥
शब्दः स्पर्शं च रूपं च रसो गंधस्तथैव च। भूतानि चैव शुध्यंतां देहे मेदादयस्तथा॥५०॥
अन्नं प्राणे मनो ज्ञानं शुध्यंतां वै शिवेच्छया। हुत्वाज्येन समिद्भिश्च चरुणा च यथाक्रमम्॥५१॥
उपसंहृत्य रुद्राग्निं गृहीत्वा भस्म यत्नतः।
अग्निरित्यादिना धीमान् विमृज्यांगानि संस्पृशेत्॥५२॥
एतत्पाशुपतं दिव्यं व्रतं पाशविमोचनम्। ब्राह्मणानां हितं प्रोक्तं क्षत्रियाणां तथैव च॥५३॥
वैश्यानामपि योग्यानां यतीनां तु विशेषतः। वानप्रस्थाश्रमस्थानां गृहस्थानां सतामपि॥५४॥
विमुक्तिर्विधिनानेन दृष्टा वै ब्रह्मचारिणाम्। अग्निरित्यादिना भस्म गृहीत्वा ह्याग्निहोत्रजम्॥५५॥
सोऽपि पाशुपतो विप्रा विमृज्यांगानि संस्पृशेत्।
भस्मच्छन्नो द्विजो विद्वान् महापातकसंभवैः॥५६॥
पापैर्विमुच्यते सद्यो मुच्यते च न संशयः। वीर्यमग्नेर्यतो भस्म वीर्यवान्भस्मसंयुतः॥५७॥
भस्मस्नानरतो विप्रो भस्मशायी जितेंन्द्रियः। सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवसायुज्यमाप्नुयात्॥५८॥

---

मन्त्रों को पढ़े। पाँचों वायु शुद्ध हो। वाणी मन चरण आदि शुद्ध हो, यह सब शुद्ध हो। कान, जिह्वा, प्राण, बुद्धि, सिर, हाथ, बगल, पीठ, पेट, जाँघें, लिंग, गुदा, माँस, रुधिर मेद (चर्बी), अस्थि, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध तथा देह में विद्यमान मेद आदि ये सब शुद्ध हो। शिव की आज्ञा से अन्न, प्राण, मन और ज्ञान शुद्ध हो। क्रमशः घी समिधा और चरु हवन करके तब उस रुद्र अग्नि को बुझाकर भस्म लेकर यत्नपूर्वक अग्नि इत्यादि मन्त्र को पढ़ते हुए बुद्धिमान भक्त अपने अंगों पर भस्म लगावे और सब अंगों का स्पर्श करे।।४७-५२।।

यह पाशुपत व्रत दिव्य है और बंधन से मुक्त करने वाला (मोक्ष) है। यह ब्राह्मणों और क्षत्रियों के लिए हितकारी कहा गया है।।५३।। यह योग्य वैश्यों के लिए तथा विशेष रूप से यतियों (ऋषियों) के लिए, वानप्रस्थ आश्रम और गृहस्थ आश्रम में स्थित भले लोगों के लिए हितकारी है।।५४।। ब्रह्मचारियों की इस पवित्र विधि से मुक्ति होती है। अग्नि इत्यादि मन्त्र पढ़कर यज्ञ कुण्ड से अग्निहोत्र की भस्म लगाकर लोगों को छूना चाहिये। वह ब्राह्मण भी पशुपति का भक्त हो जाता है। एक विद्वान ब्राह्मण भक्त भस्म से पुते शरीर वाला महान पातकों से उत्पन्न पापों से तुरन्त मुक्त हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं है। भस्म अग्नि का वीर्य है। अतः जो भस्म को शरीर में चुपड़ता है वह वीर्यवान होता है।।५५-५७।। भस्म से स्नान किये पूरे शरीर में भस्म लगाये, भस्मशायी जितेन्द्रिय ब्राह्मण सब पापों से मुक्त हो कर शिव का सायुज्य प्राप्त करता है।।५८।।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन भूत्यंगं पूजयेद्बुधः। रेरेकारो न कर्तव्यस्तुंतुंकारस्तथैव च॥५९॥
न तत्क्षमति देवेशो ब्रह्मा वा यदि केशवः। मम पुत्रो भस्मधारी गणेशश्च वरानने॥६०॥
तेषां विरुद्धं यत्त्याज्यं स याति नरकार्णवम्। गृहस्थो ब्रह्महीनोपि त्रिपुंड्रं यो न कारयेत्॥६१॥
पूजा कर्म क्रिया तस्य दानं स्नानं तथैव च। निष्फलं जायते सर्वं यथा भस्मनि वै हुतम्॥६२॥
तस्माच्च सर्वकार्येषु त्रिपुंड्रं धारयेद्बुधः।
इत्युक्त्वा भगवानब्रह्मा स्तुत्वा देवैः समं प्रभुः॥६३॥
भस्मच्छन्नैः स्वयं छन्नो विरराम विशांपते। अथ तेषां प्रसादार्थं पशूनां पतिरीश्वरः॥६४॥
सगणश्चांबया सार्धं सान्निध्यमकरोत्प्रभुः। अथ संनिहितं रुद्रं तुष्टुवुः सुरपुंगवम्॥६५॥
रुद्राध्यायेन सर्वेशं देवदेवमुमापतिम्। देवोपि देवानालोक्य घृणया वृषभध्वजः॥६६॥
तुष्टोस्मीत्याह देवेभ्यो वरं दातुं सुरारिहा॥६७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अष्टादशोऽध्याय॥१८॥**

---

इसलिए सब प्रकार से विद्वान् व्यक्ति को अपने शरीर को भस्म से पवित्र करना चाहिए। 'रे' शब्द को या तू तू शब्द को नहीं बोलना चाहिए। बोलने में व्यक्ति को कठोर या कर्कश नहीं होना चाहिए।।५९।। महादेव चाहे ब्रह्मा हों या विष्णु हों, उसको क्षमा नहीं करते हैं। सुमुख कोई व्यक्ति जो भस्म को धारण करता है वो मेरे पुत्र गणेश के समान है। उसके विरुद्ध जो होता है वह त्याज्य है। गृहस्थ जो कि वैदिक ज्ञान से शुन्य है और त्रिपुण्ड को नहीं धारण करता है। वह नरक की गहराई (सागर) में गिरता है। उसके द्वारा किया गया पूजा कर्म क्रिया दान और स्नान इसी तरह विफल हो जाता है, जैसे कि राख में किया गया होम।।६०-६२।। इसलिए सब पवित्र व्रतों में विद्वानों को त्रिपुण्ड धारण करना चाहिए। ऐसा कहकर भगवान ब्रह्मा ने भस्म लगाए हुए देवों के साथ शिव, जो स्वयं भस्म लगाये थे, उनकी स्तुति करके अपने वक्तव्य को समाप्त किया। हे राजन! उसके बाद उनको प्रसन्न करने के लिए भगवान पशुपति अपने गणों और उमा के साथ उस स्थान को शोभित किया। इसके बाद देवों ने देवताओं के देवता, सबके स्वामी रुद्र उमापति को रुद्राध्याय द्वारा स्तुति की। भगवान उमापति ने देवताओं को कृपापूर्ण दृष्टि से देखकर वरदान देने के लिए देखा। देवताओं के शत्रुओं को नाश करने वाले रुद्र ने देवताओं से कहा, 'मैं प्रसन्न हूँ'।।६३-६७।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में पवित्र पाशुपात व्रत नामक अठारहवाँ अध्याय समाप्त॥१८॥**

एकोनविंशोऽध्यायः

# शिवस्य पूजाविधिः

शैलादिरुवाच

तं प्रभु प्रीतमनसं प्रणिपत्य वृषध्वजम्। अपृच्छन्मुनयो देवाः प्रीतिकंटकितत्वचः॥१॥

देवा ऊचुः

भगवन् केन मार्गेण पूजनीयो द्विजातिभिः। कुत्र वा केन रूपेण वक्तुमर्हसि शंकर॥२॥
कस्याधिकारः पूजायां ब्राह्मणस्य कथं प्रभो। क्षत्रियाणां कथं देव वैश्यानां वृषभध्वज॥३॥
स्त्रीशूद्राणां कथं वापि कुंडगोलादिनां तु वा। हिताय जगतां सर्वमस्माकं वक्तुमर्हसि॥४॥

सूत उवाच

तेषां भावं समालोक्य मुनीनां नीललोहितः। प्राह गंभीरया वाचा मंडलस्थः सदाशिवः॥५॥
मंडले चाग्रतो पश्यन्देवदेवं सहोमया। देवाश्च मुनयः सर्वे विद्युत्कोटिसमप्रभम्॥६॥
अष्टबाहुं चतुर्वक्त्रं द्वादशाक्षं महाभुजम्। अर्धनारीश्वरं देवं जटामुकुटधारिणम्॥७॥
सर्वाभरणसंयुक्तं रक्तमाल्यानुलेपनम्। रक्तांबरधरं सृष्टिस्थितिसंहारकारकम्॥८॥
तस्य पूर्वमुखं पीतं प्रसन्नं पुरुषात्मकम्। अघोरं दक्षिणं वक्त्रं नीलांजनचयोपमम्॥९॥

---

## उन्नीसवाँ अध्याय

# शिव की पूजा विधि

**शैलादि बोले**

प्रेम से रोमांचित मुनियों और देवताओं ने प्रसन्न मन वाले वृषध्वज शिव को प्रणाम करके कहा।।१।।

**देवगण बोले**

हे भगवान शंकर! आप हम लोगों को यह बताएँ द्विजों द्वारा किस विधि से आप की पूजा की जाय? कब? और किस रूप में।।२।। आप की पूजा में किस ब्राह्मण का अधिकार है? हे भगवन क्षत्रिय लोग और वैश्य लोग कैसे आपकी पूजा के लिए अधिकृत हैं।।३।। स्त्री, शूद्र, कुंड, गोल आदि कैसे अधिकृत हैं? संसार के कल्याण के हेतु हम लोगों को प्रत्येक बात आप बताएँ।।४।।

**सूत बोले**

सूत ने उन मुनियों के भाव को समझकर नील मण्डल घेरे में स्थित हुए जादुई वाणी में कहा। उमा के साथ देवताओं के देवता को देव और मुनियों ने अपने सम्मुख देखा, जो बिजली की करोड़ो किरणों की प्रभा के समान उनकी आठ भुजाएँ थी, उनका आधा शरीर नारी रूप में था। वे जटा मुकुट धारण किये हुए थे। सब प्रकार के आभूषण पहने हुए लाल माला और लाल चन्दन लगाए लाल वस्त्र धारण किये सृष्टि, स्थिति और संहार (विश्व के रचयिता, पालक और विनाशक) थे।।५-८।। उनका पूर्व की ओर मुख देखने में प्रसन्न और

दंष्ट्राकरालमत्युग्रं ज्वालामालासमावृतम्। रक्तश्मश्रुं जटायुक्तं चोत्तरे विद्रुमप्रभुम्॥१०॥
प्रसन्नं वामदेवाख्यं वरदं विश्वरूपिणम्। पश्चिमं वदनं तस्य गोक्षीरधवलं शुभम्॥११॥
मुक्ताफलमयैर्हारैर्भूषितं तिलकोज्जवलम्। सद्योजातमुखं दिव्यं भास्करस्य स्मरारिणः॥१२॥
आदित्यमग्रतो पश्यन्पूर्ववच्चतुराननम्। भास्करं पुरतो देवं चतुर्वक्त्रं च पूर्ववत्॥१३॥
भानुं दक्षिणतो देवं चतुर्वक्त्रं च पूर्ववत्।
रविमुत्तरतोऽपश्यन्पूर्ववच्चतुराननम् ॥१४॥
विस्तारां मंडले पूर्वे उत्तरां दक्षिणे स्थिताम्। बोधनीं पश्चिमे भागे मंडलस्य प्रजापतेः॥१५॥
अध्यायनीं च कौबेर्यामेकवक्त्रां चतुर्भुजाम्। सर्वाभरणसंपन्नाः शक्तयः सर्वसंमताः॥१६॥
ब्रह्माणं दक्षिणे भागे विष्णुं वामे जनार्दनम्। ऋग्यजुःसाममार्गेण मूर्तित्रयमयं शिवम्॥१७॥
ईशानं वरदं देवमीशानं परमेश्वरम्। ब्रह्मासनस्थं वरदं धर्मज्ञानासनोपरि॥१८॥
वैराग्यैश्वर्यसंयुक्ते प्रभूते विमले तथा। सारं सर्वेश्वरं देवमाराध्यं परमं सुखम्॥१९॥
सितपंकजमध्यस्थं दीप्ताद्यैरभिसंवृतम्।
दीप्तां दीपशिखाकारां सूक्ष्मां विद्युत्प्रभां शुभाम्॥२०॥
जयामग्निशिखाकारां प्रभां कनकसप्रभाम्। विभूतिं विद्रुमप्रख्यां विमलां पद्मसन्निभाम्॥२१॥
अमोघां कर्णिकाकारां विद्युतं विश्ववर्णिनीम्। चतुर्वक्त्रां चतुर्वर्णां देवीं वै सर्वतोमुखीम्॥२२॥

---

रंग में पीला था वह तत्पुरुष के रूप में था। उनका दाहिने ओर का दक्षिण मुख अघोर रूप में नीले अंजन के समान था।।९।। उनका उत्तर मुख वामदेव नामक लाल रंग की दाढ़ी, ज्वाला माला युक्त कराल दाँतों वाला विद्रुम मणि की प्रभायुक्त था। यह मुख इस रूप में विश्व को प्रसन्न करने वाला था और वरदान देने वाला था।।१०-१२।। वामदेव का उनका पश्चिम मुख शानदार और श्वेत था जैसे की गाय का दूध। उनका सद्योजात नामक दिव्य मुख सूर्य की शानदार किरणों से चमक रहा था, जैसे मस्तक पर लगा हुआ त्रिपुण्ड। वह मोतियों की मालाओं से भूषित था।। उन्होंने मण्डल के पूर्व में आदित्य को, पश्चिम में भास्कर को, दक्षिण में भानु को और उत्तर में रवि को पूर्ववत चार मुखों को देखा (ये सब सूर्य अलग-अलग रूप थे)।।१३-१४।। उन्होंने मण्डल में पूर्व शक्ति विस्तारा, दक्षिण में उत्तरा, पश्चिम में बोधिनी और उत्तर में अध्यायनी को देखा। ये सब शक्तियाँ एक मुख और चार भुजाओं वाली थीं। ये सब प्रकार के आभूषणों से युक्त और देवताओं द्वारा सम्मत थीं।।१५-१६।। उन्होंने दक्षिण भाग में ब्रह्मा, वाम भाग में विष्णु और ऋग्, यजु और साममय तीन मूर्तियों सहित शिव को देखा है।।१७।। उन्होंने वर देने वाले परमेश्वर ईशान को देखा जो ब्रह्मा के आसन के ऊपर बैठे थे।।१८।। उन्होंने सर्वेश्वर को एक आसन पर बैठे देखा जो कि वैराग्य और ऐश्वर्य से संयुक्त शुद्ध और उनके लिए सर्वथा सुखदायक था।।१९।। शिव सफेद कमल के मध्य में बैठे थे वो दीप्ता आदि देवियों से घिरे थे। दीप्ता दीप की शिखा के आकार वाली सूक्ष्म विद्युत की प्रभा के समान, जया अग्नि शिखा के आकार वाली सोने की प्रभा के समान, विभूति विद्रुम मणि के समान, विमला कमल के समान अमोघ अमिलतास के फल के समान, विद्युत विश्व के वर्ण के समान और सर्वतोमुखी चार मुखों वाली और चार रंगों वाली थी।।२०-२२।।

सोममंगारकं देवं बुधं बुद्धिमतां वरम्। बृहस्पतिं बृहद्बुद्धिं भार्गवं तेजसां निधिम्॥२३॥
मंदं मंदगतिं चैव समंतात्तस्य ते सदा। सूर्यः शिवो जगन्नाथः सोमः साक्षादुमा स्वयम्॥२४॥
पंचभूतानि शेषाणि तन्मयं च चराचरम्। दृष्ट्वैव मुनयः सर्वे देवदेवमुमापतिम्॥२५॥
कुतांजलिपुटाः सर्वे मुनयो देवतास्तथा। अस्तुवन्वाग्भिरिष्टाभिर्वरदं नीललोहितम्॥२६॥

ऋषयः ऊचुः

नमः शिवाय रुद्राय कद्रुद्राय प्रचेतसे। मीढुष्टमाय सर्वाय शिपिविष्टाय रंहसे॥२७॥
प्रभूते विमले सारे ह्यधारे परमे सुखे। नवशक्त्यावृतं देवं पद्मस्थं भास्करं प्रभुम्॥२८॥
आदित्यं भास्करं भानुं रविं देवं दिवाकरम्। उमां प्रभां तथा प्रज्ञां संध्यां सावित्रिकामपि॥२९॥
विस्तारामुत्तरां देवीं बोधनीं प्रणमाम्यहम्। आप्यायनीं च वरदां ब्रह्माणं केशवं हरम्॥३०॥
सोमादिवृंदं च यथाक्रमेण संपूज्य मंत्रैर्विहितक्रमेण।
स्मरामि देवं रविमंडलस्थं सदाशिवं शंकरमादिदेवम्॥३१॥
इंद्रादिदेवांश्च तथेश्वरांश्च नारायणं पद्मजमादिदेवम्।
प्रागाद्यधोर्ध्वं च यथाक्रमेण वज्रादिपद्मं च तथा स्मरामि॥३२॥
सिंदूरवर्णाय समंडलाय सुवर्णवज्राभरणाय तुभ्यम्।
पद्माभनेत्राय सपंकजाय ब्रह्मेंद्रनारायणकारणाय॥३३॥

---

उन्होंने ग्रहों को शिव के चारों ओर बैठे देखा। चन्द्रमा, मंगल, बुध, बुद्धिमानों में सर्वश्रेष्ठ बृहस्पति, तेज के भंडार शुक्र, बुद्धिवाले सूक्ष्म महान तम के भण्डार और मंदगति शनि को देखा। जगत् के स्वामी शिव, सूर्य और स्वयं साक्षात चन्द्रमा के समान हो।।२३-२४।।

पाँचों भूत उनके साथ विश्व के सब चर-अचर देखे गये। देवों के देव उमापति को देखकर मुनियों और देवताओं ने दोनों हाथ जोड़कर वरदायक भगवान नीललोहित की स्तुति की।।२५-२६।।

**ऋषिगण बोले**

शिव, रुद्र कद्रूद्र, प्रचेतस, मीढुष्टम, सर्व, शिपिविष्ट और वेग को नमस्कार। मैं शक्तियों से घिरे हुये कमल पर बैठे हुये भगवान भास्कर को प्रणाम करता हूँ। आधार पर स्थित नव विमल परम सुखदायक आदित्य, भास्कर, भानु, रवि और भगवान दिवाकर को प्रणाम करता हूँ। मैं उमा, प्रभा, प्रज्ञा, सन्ध्या, सावित्री, विस्तारा, उत्तरा और बोधिनी तथा वरदायिनी आप्यायनी को प्रणाम करता हूँ। मैं ब्रह्मा, विष्णु और शिव को प्रणाम करता हूँ। सोम आदि समूह को विहित मन्त्रों द्वारा पूजा करके रवि मण्डल में स्थित आदि देव शंकर सदाशिव का स्मरण करता हूँ।

मैं इन्द्र और अन्य देवों, ईश्वर नारायण एवं पद्मज आदि देव ब्रह्मा को यथाक्रम (पूर्व आदि अधः ऊर्द्ध्व से) स्मरण करता हूँ। सिन्दूरवर्ण वाले आपको नमस्कार। स्वर्ण और हीरे आभूषणधारी आप को नमस्कार। कमल की आभा के समान वाले आप को नमस्कार। कमलधारण करने वाले आपको नमस्कार। ब्रह्मा, इन्द्र और नारायण के कारण (उत्पन्न करने वाले को) को नमस्कार। सात घोड़ों वाले अनूरु सारथी वाले रथ को नमस्कार।।२७-३३।।

रथं च सप्ताश्वमनूरुवीरं गणं तथा सप्तविधं क्रमेण।
ऋतुप्रवाहेण च वालखिल्यान्स्मरामि मंदेहगणक्षयं च॥३४॥
हुत्वा तिलाद्यैर्विविधैस्तथाग्नौ पुनः समाप्यैव तथैव सर्वम्।
उद्वास्य हृत्पंकजमध्यसंस्थं स्मरामि बिंबं तव देवदेव॥३५॥
स्मरामि बिंबानि यथाक्रमेण रक्तानि पद्मामललोचनानि।
पद्मं च सव्ये वरदं च वामे करे तथा भूषितभूषणानि॥३६॥
दंष्ट्राकरालं तव दिव्यवक्त्रं विद्युत्प्रभं दैत्यभयंकरं च।
स्मरामि रक्षाभिरतं द्विजानां मंदेहरक्षोगणभर्त्सनं च॥३७॥
सोमं सितं भूमिजमग्निवर्णं चामीकराभं बुधमिंदुसुनूम्।
बृहस्पतिं कांचनसन्निकाशं शुक्रं सितं कृष्णतरं च मंदम्॥३८॥
स्मरामि सव्यमभयं वाममूरुगतं वरम्।
सर्वेषां मंदपर्यंतं महादेवं च भास्करम्॥३९॥
पूर्णेंदुवर्णेन च पुष्पगंधप्रस्थेन तोयेन शुभेन पूर्णम्।
पात्रं दृढं ताम्रमयं प्रकल्प्य दास्ये तवार्घ्यं भगवन्प्रसीद॥४०॥
नमः शिवाय देवाय ईश्वराय कपर्दिने।
रुद्राय विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मणे सूर्यमूर्तये॥४१॥

---

मैं उचित निरन्तर प्रवाह के बहने वाली ऋतुएँ सहित सात गणों आदित्य नाग गन्धर्व आदि को नमस्कार करता हूँ। मैं वालखिल्य ब्रह्मा के पुत्र ऋषियों को नमस्कार करता हूँ, मन्देह राक्षसों के समूह को नष्ट करने वाले स्वामी को नमस्कार करता हूँ।।३४।। हे देवगणों के देवता! तिल आदि विभिन्न सामग्री का हवन करके हृदय कमल के मध्य में स्थित तुम्हारे बिम्ब को मैं स्मरण करता हूँ।।३५।। मैं उचित क्रम में स्मरण करता हूँ, मैं लाल रंग के शुद्ध कमल समान नेत्रों को स्मरण करता हूँ। मैं दाहिने हाथ में वरदायक कमल बाएँ हाथ में वरदान को स्मरण करता हूँ। आपने जो आभूषणों को धारण किया उसको मैं नमस्कार करता हूँ।।३६।। मैं आपके दिव्य मुख का स्मरण करता हूँ। कराल दाँतों युक्त बिजली की तरह चमकने वाले, दैत्यों को भय देने वाले, द्विजों की रक्षा करने वाले और राक्षसों के दल को डराने वाले मुख को स्मरण करता हूँ।।३७।। मैं सफेद रंग से चन्द्रमा का स्मरण करता हूँ, और अग्नि के समान रंग वाले मंगल को, और चन्द्र के पुत्र सुनहरे रंग वाले बुध को, सोने के समान चमकने वाले बृहस्पति को, सफेद रंग वाले शुक्र को, और अति काले रंग वाले शनिश्चर को स्मरण करता हूँ। मैं शनि से अन्त होने वाले सब ग्रहों को स्मरण करता हूँ। मैं भास्कर और महादेव को स्मरण करता हूँ। हे भगवान! आप प्रसन्न हो जाएँ, मैं ताँबे से बने हुए शुद्ध जल से भरे हुए पूर्ण चन्द्रमा के समान सफेद रंग पुष्प, फूल और गंध से युक्त जल से आपको अर्घ्य दूँगा। शिव, ईश्वर, कपर्दी, रुद्र, विष्णु को नमस्कार। सूर्य की मूर्ति स्वरूप ब्रह्मा को नमस्कार।।३८-४१।।

सूत उवाच

**यः शिवं मंडले देवं संपूज्यैवं समाहितः। प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने पठेत्स्तवमनुत्तमम्॥४२॥**
**इत्थं शिवेन सायुज्यं लभते नात्र संशयः॥४३॥**
**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकोनविंशोऽध्यायः॥१९॥**

---

**सूत बोले**

जो मानसिक शुद्ध और एकाग्रचित्त होकर मण्डल में स्थित शिव की पूजा करके इस उत्तम स्तुति को सुबह, दोपहर और सायंकाल पढ़ता है वह शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं।।४२-४३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा विधि**
**नामक उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त॥१९॥**

विंशोऽध्यायः

# शिवस्य पूजायाः साधनानि

सूत उवाच।

अथ रुद्रो महादेवो मंडलस्थः पितामहः। पूज्यो वै ब्राह्मणानां च क्षत्रियाणां विशेषतः॥१॥
वैश्यानां नैव शूद्राणां शुश्रूषां पूजकस्य च। स्त्रीणां नैवाधिकारोऽस्ति पूजादिषु न संशयः॥२॥
स्त्रीशूद्राणां द्विजेन्द्रैश्च पूजया तत्फलं भवेत्। नृपाणामुपकरार्थं ब्राह्मणद्यैर्विशेषतः॥३॥
एवं संपूजयेयुर्वै ब्राह्मणाद्याः सदाशिवम्। इत्युक्त्वा भगवान् रुद्रस्तत्रैवांतरधात्स्वयम्॥४॥
ते देवा मुनयः सर्वे शिवमुद्दिश्य शंकरम्। प्रणेमुश्च महात्मानो रुद्रध्यानेन विह्वलाः॥५॥
जग्मुर्यथागतं देवा मुनयश्च तपोधनाः। तस्मादभ्यर्चयेन्नित्यमादित्यं शिवरूपिणम्॥६॥
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं मनसा कर्मणा गिरा।

ऋषय ऊचुः।

रोमहर्षण सर्वज्ञ सर्वशास्त्रभृतां वर॥७॥
व्यासशिष्य महाभाग वाह्नेयं वद सांप्रतम्। शिवेन देवदेवेन भक्तानां हितकाम्यया॥८॥
वेदात् षडंगादुद्धृत्य सांख्ययोगाच्च सर्वतः। तपश्च विपुलं तप्त्वा देवदानवदुश्चरम्॥९॥

---

## बीसवाँ अध्याय

# शिव की पूजा के साधन

### सूत बोले

रूद्र, महादेव, पितामह मण्डल में स्थित हैं, वे ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों द्वारा पूज्य हैं।।१।। शूद्रों के लिए केवल पुजारी के द्वारा ही सेवा प्रर्याप्त है। स्त्रियाँ शिव की पूजा करने के लिए अधिकृत नहीं हैं इसमें सन्देह नहीं।।२।। श्रेष्ठ ब्राह्मणों द्वारा करायी गयी पूजा से वही स्त्रियों और शूद्रों को फल प्राप्त होता है। ब्राह्मणों तथा अन्य द्वारा राजाओं के उपकार के लिए विशेष पूजा करायी जानी चाहिए।।३।। इस प्रकार ब्राह्मण आदि द्वारा सदा शिव की पूजा की जानी चाहिए। ऐसा कहकर भगवान रुद्र वहीं पर अन्तर्धान हो गये।।४।। उन सब देवताओं और मुनियों ने भगवान रुद्र को ध्यान से विह्वल होकर उनको प्रणाम किया।।५।। उसके बाद देवता और तपोधन मुनि लोग जैसे आये थे और वैसे ही वापस चले गये। इसलिए शिव के स्वरूप आदित्य देवता की धन, धर्म, काम और मुक्ति के लिए निरन्तर पूजा करनी चाहिए।।६।।

### ऋषिगण बोले

हे रोम हर्षण सब शास्त्रधारियों में श्रेष्ठ और सर्वज्ञ वेदव्यास शिष्य! अब अग्नि के पवित्र सिद्धान्त को और शिव के द्वारा भक्तों के हित की कामना से छः अंगों वाले वेदों और सांख्य दर्शन से योग से उद्धृत करके और

अर्थदेशादिसंयुक्तं गूढमज्ञाननिंदितम्। वर्णाश्रमकृतैर्धर्मैर्विपरीतं क्वचित्समम्॥१०।
शिवेन कथितं शास्त्रं धर्मकामार्थमुक्तये। शतकोटिप्रमाणेन तत्र पूजा कथं विभोः॥११।
स्नानयोगादयो वापि श्रोतुं कौतूहलं हि नः।

सूत उवाच

पुरा सनत्कुमारेण मेरुपृष्ठे सुशोभने॥१२॥
पृष्टो नंदीश्वरो देवः शैलादिः शिवसंमतः। पृष्टोयं प्रणिपत्यैवं मुनिमुख्यैश्च सर्वतः॥१३॥
तस्मै सनत्कुमाराय नंदिना कुलनंदिना। कथितं यच्छिवज्ञानं शृण्वंतु मुनिपुंगवाः॥१४॥
शैवं संक्षिप्य वेदोक्तं शिवेन परिभाषितम्। स्तुतिनिन्दादिरहितं सद्यः प्रत्ययकारकम्॥१५॥
गुरुप्रसादजं दिव्यमनायासेन मुक्तिदम्।

सनत्कुमार उवाच

भगवन्सर्वभूतेश नंदीश्वर महेश्वर॥१६॥
कथं पूजादयः शंभोर्धर्मकामार्थमुक्तये। वक्तुमर्हसि शैलादे विनयेनागताय मे॥१७॥

सूत उवाच

संप्रेक्ष्य भगवान्नंदी निशम्य वचनं पुनः। कालवेलाधिकाराद्यवदद्वदतां वरः॥१८॥

---

देवता और राक्षसों द्वारा दुश्चर, विपुल तप करके प्राप्त जो महान् गूढ़ रहस्य हैं वे अज्ञान को दूर करते हैं। यह चारों वर्ण और आश्रम के लिए कथित सिद्धान्तों के कहीं सम्मत और कहीं विपरीत, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए शिव द्वारा कथित शास्त्र कथन जो शत कोटि प्रमाणों से युक्त हैं। उस सिद्धान्त में शिव की पूजा विधि किस प्रकार बताई गई है। स्नान और योग कैसे हैं? हम लोग उसको सुनने को उत्सुक हैं।।७-१२।।

## सूत बोले

पूर्वकाल में शिलाद के पुत्र गणों के स्वामी और शिव के प्रिय नन्दिकेश्वर से सनत्कुमार ने मेरुगिरि की चोटी पर यह प्रश्न पूछा था। उसके बाद श्रेष्ठ मुनियों ने प्रणाम करके यही प्रश्न पूछा। हे श्रेष्ठ मुनियों! अपने कुल के दीपक नन्दीश्वर ने जो कुछ सनत्कुमार से कहा था, वह मुझसे तुम सब ध्यानपूर्वक सुनो।।१३-१४।। शिव सम्बन्धी यह सिद्धान्त (ज्ञान) शिव द्वारा भाषित है। वेदों में वर्णित ज्ञान का सारा संक्षेप है। यह स्तुति और निन्दा से रहित है। यह तुरन्त विश्वास कराने वाला है। गुरुओं की कृपा से यह अनायास अल्प प्रयास से मुक्ति देने लायक है।।१५-१६।।

## सनत्कुमार बोले

हे शैलादि! धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति को पाने के लिए शिव की पूजा कैसे की जाय? आप के सामने विनयपूर्वक आये हुये मुझसे यह आप कहने के योग्य हैं।।१७।।

## सूत बोले

उनके विनम्र वचन को सुनकर भगवान वक्ताओं में श्रेष्ठ नन्दीश्वर ने शिव पूजा की काल बेला और अधिकार आदि को कहना प्रारम्भ किया।।१८।।

शैलादिरुवाच

गुरुतः शास्त्रश्चैवमधिकारं ब्रवीम्यहम्। गौरवादेव संज्ञैषा शिवाचार्यस्य नान्यथा॥१९॥
स्वयमाचरते यस्तु आचारे स्थापयत्यापि। आचिनोति च शास्त्रार्थानाचार्यस्तेन चोच्यते॥२०॥
तस्माद्वेदार्थतत्त्वज्ञमाचार्यं भस्मशायिनम्। गुरुमन्वेषयेद्भक्तः सुभगं प्रियदर्शनम्॥२१॥
प्रतिपन्नं जनानंदं श्रुतिस्मृतिपथानुगम्। विद्ययाभयदातारं लौल्यचापल्यवर्जितम्॥२२॥
आचारपालकं धीरं समयेषु कृतास्पदम्। तं दृष्ट्वा सर्वभावेन पूजयेच्छिववद्गुरुम्॥२३॥
आत्मना च धनेनैव श्रद्धावित्तानुसारतः। तावदाराधयेच्छिष्यः प्रसन्नोऽसौ यथा भवेत्॥२४॥
सुप्रसन्ने महाभागे सद्यः पाशक्षयो भवेत्। गुरुर्मान्यो गुरुः पूज्यो गुरुरेव सदाशिवः॥२५॥
संवत्सरत्रयं वाथ शिष्यान्विप्रान्परीक्षयेत्। प्राणद्रव्यप्रदानेन आदेशैश्च इतस्ततः॥२६॥
उत्तमश्चाधमे योज्यो नीच उत्तमवस्तुषु। आकृष्टास्ताडिता वापि ये विषादं न यांति वै॥२७॥
ते योग्याः शिवधर्मिष्ठाः शिवधर्मपरायणाः। संयता धर्मसंपन्नाः श्रुतिस्मृतिपथानुगाः॥२८॥
सर्वद्वंद्वसहा धीरा नित्यमुद्युतचेतसः। परोपकारनिरता गुरुशुश्रूषेण रताः॥२९॥

---

शैलादि बोले

मैं गुरु से प्राप्त और शास्त्र द्वारा प्रतिपादित शिव पूजन की विधि को गौरव से बताता हूँ।।१९।। शिव आचार्य का नाम उनके गम्भीरता पर आधारित है, अन्य किसी पर नहीं जो स्वयं आचरण करता और दूसरे को उस आचरण में स्थापित करता है। इसलिए उसको आचार्य कहा जाता है। जो शास्त्र के अर्थों को समझता और दूसरों से उसकी व्याख्या करता है। इस कारण उसको आचार्य कहते हैं।।२०।।

एक निष्ठ भक्त को ऐसे आचार्य की खोज करनी चाहिए जिसमें निम्नलिखित गुण हों। जो वेदों के अर्थों के तत्त्व को जानता हो, जो भस्म पर लेटने वाला हो, वह वेद तथा स्मृति के मार्ग का अनुयायी हो, जो अपनी विद्या से अभय करने वाला हो, जो चंचलता और चपलता से रहित हो, जो आचार को पालन करने वाला धैर्यवान सदाचारी और शैव रीति, रिवाज (प्रथा) का जानकार हो, ऐसे गुरु को देखकर पूर्ण भक्ति-भाव के साथ शिव के समान उसकी पूजा करनी चाहिए।।२१।। भक्त द्वारा अपने वित्तीय सामर्थ्य और श्रद्धा के अनुसार उतनी उसकी आराधना करनी चाहिए, जितने से वह प्रसन्न हो जाय।।२२।। ऐसे महाभाग गुरु के प्रसन्न हो जाने पर शिष्य के बन्धन का नाश हो जाता है। गुरु मान्य हैं, गुरु पूज्य हैं और गुरु ही सदाशिव हैं।।२३।।

गुरु ब्राह्मण शिष्यों के प्राण रक्षक वस्तु द्रव्य देने और आज्ञाओं से इधर-उधर तीन वर्ष तक भेजकर उसकी परीक्षा करे।।२४।। उत्तम पुरुषों को निकृष्ट कामों में लगाएँ और नीच को उत्तम वस्तुओं में। यदि वे उनकी ओर आकृष्ट न हो तो उनको प्रताड़ित करे। इस पर भी वे विचलित न हो तो उनको योग्य शिष्य समझे। योग्य ब्राह्मण भक्तों में निम्नलिखित गुण होते हैं।।२५-२६।। वे जो शैव धर्म में पूर्ण आस्थावान हों, जो अपने में धर्म से संयत हों, श्रुति और स्मृति के मार्ग के अनुयायी हों, सब प्रकार के द्वन्द (सुख, दुःख) आदि सहने में धैर्यवान हों, सदैव प्रसन्न चित्त हों, परोपकार मे लगे हों, गुरु की सेवा में तल्लीन हों, जो कोमल हृदय वाले, स्वस्थ सीधे-सीधे,

आर्जवा मार्दवाः स्वस्था अनुकूलाः प्रियंवदाः।
अमानिनो बुद्धिमंतस्त्यक्तस्पर्धा गतस्पृहाः॥३०॥
शौचाचारगुणोपेता दम्भमात्सर्यवर्जिताः। योग्या एवं द्विजाः सर्वे शिवभक्तिपरायणाः॥३१॥
एवंवृत्तसमोपेता वाङ्मनःकायकर्मभिः। शोध्या एवंविधाश्चैव तत्त्वानां च विशुद्धये॥३२॥
शुद्धो विनयसंपन्नो मिथ्याकटुकवर्जितः। गुर्वाज्ञापालकश्चैव शिष्योऽनुग्रहमर्हति॥३३॥
गुरुश्च शास्त्रवित्प्राज्ञस्तपस्वी जनवत्सलः। लोकाचाररतो ह्येवं तत्त्वविन्मोक्षदः स्मृतः॥३४॥
सर्वलक्षणसंपन्नः सर्वशास्त्रविशारदः। सर्वोपायविधानज्ञस्तत्त्वहीनस्य निष्फलम्॥३५॥
स्वसंवेद्ये परे तत्त्वे निश्चयो यस्य नात्मनि। आत्मनोऽनुग्रहो नास्ति परस्यानुग्रहः कथम्॥३६॥
प्रबद्धस्तु द्विजो यस्तु स शुद्ध साधयत्यपि। तत्त्वहीने कुतो बोधः कुतो ह्यात्मपरिग्रहः॥३७॥
परिग्रहविनिर्मुक्तास्ते सर्वे पशवोदिताः। पशुभिः प्रेरिता ये तु सर्वे ते पशवः स्मृताः॥३८॥
तस्मात्तत्त्वविदो ये तु ते मुक्ता मोचयंत्यपि। संवित्तिजननं तत्त्वं परानंदसमुद्भवम्॥ ३९॥
तत्त्वं तु विदितं येन स एवानंददर्शकः। न पुनर्नाममात्रेण संवित्तिरहितस्तु यः॥४०॥
अन्योऽन्यं तारयेन्नैव किं शिला तारयेच्छिलाम्। येषां तन्नाममात्रेण मुक्तिर्वै नाममात्रिका॥४१॥
योगिनां दर्शनाद्वापि स्पर्शनाद्भाषणादपि। सद्यः संजायते चाज्ञा पाशोपक्षयकारिणी॥४२॥

---

वफादार मृदुभाषी हों जो अहंकारी न हों, बुद्धिमान हों। उनमें स्पर्धा और कपट भाव न हो, शुद्ध आचार-विचार और गुणों से युक्त हों। जिनमें ईर्ष्या द्वेष और पाखण्ड न हों। ऐसे द्विज योग्य शिव भक्त परायण होते हैं। ऐसे वाणी, मन और कर्म से शुद्ध आचरण वाले शिष्यों को आगे पुनः तत्त्वों की शुद्धता के लिए शोधन करना चाहिए।।२७-३२।। शुद्ध, विनयी, मिथ्या और कटु व्यवहार से दूर गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला शिष्य गुरु की कृपा का पात्र होता है।।३३।। गुरु शास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान, तपस्वी, जनसाधारण को प्रेमी, लोक व्यवहार में तल्लीन तत्त्वों का ज्ञाता हो, वह मोक्ष देने वाला होता है।।३४।। सब लक्षणों से युक्त, सब शास्त्रों में पारंगत, सब उपाय और विधान को जानने वाला होने पर भी यदि वास्तविक तत्त्व से रहित हो, तो उसके अन्य गुण निष्फल हो जाते हैं।।३५।। अगर ऐसे गुरु में स्वयं अनुभूति तत्त्व आत्मा में जिसका निश्चय नहीं है, जिसमे स्वयं आत्मज्ञान नहीं है, वह दूसरों को आत्मज्ञान कैसे दे सकता है।।३६।। वह ब्राह्मण जो कि स्वयं प्रबुद्ध है, शुद्ध है वह स्वयं साधना में समर्थ होता है। लेकिन जो स्वयं तत्त्व का ज्ञाता नहीं है उसको आत्मज्ञान कहाँ से होगा।।३७।। वे सब आत्म परिग्रह से रहित हैं। वे सब पशु हैं, और वे जो पशु से प्रेरित हैं वे सब पशु कहे गये हैं।।३८।। इसलिए जो तत्त्वविद मुक्त हैं वे दूसरों को मुक्त कर सकते हैं, तत्त्व जो कि संवित्ति (ज्ञान) का जनक है वह पर आनन्द से उत्पन्न है।।३९।। केवल वह जिसने तत्त्व सत्य को समझ लिया है वही आनन्द को दिखलाने वाला है जो कि संवित्ति रहित है वह तो नाम मात्र का तत्त्वज्ञानी है।।४०।। क्या एक शिला दूसरे शिला को तार सकती है? जिनको कि पूर्ण ज्ञान केवल नाम मात्र में है, उनकी मुक्ति भी नाम मात्र में है।।४१।। योगियों के दर्शन से स्पर्श और भाषण से भी पाप क्षय करने वाली आज्ञा उत्पन्न होती है।।४२।। अथवा योग मार्ग से

अथवा योगमार्गेण शिष्यदेहं प्रविश्य च। बोधयेदेव योगेन सर्वतत्त्वानि शोध्य च॥४३॥
षडर्धशुद्धिर्विहिता ज्ञानयोगेन योगिनाम्। शिष्यं परीक्ष्य धर्मज्ञं धार्मिकं वेदपारगम्॥४४॥
ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं बहुदोषविवर्जितम्। ज्ञानेन ज्ञेयमालोक्य कर्णात् कर्णागतेन तु॥४५॥
दीपाद्दीपो यथा चान्यः संचरेद्विधिवद्गुरुः। भौवनं च पदं चैव वर्णाख्यं मात्रमुत्तमम्॥४६॥
कालाध्वरं महाभाग तत्त्वाख्यं सर्वसंमतम्। भिद्यते यस्य सामर्थ्यादाज्ञामात्रेण सर्वतः॥४७॥
तस्य सिद्धिश्च मुक्तिश्च गुरुकारुण्यसंभवा। पृथिव्यादीनि भूतानि आविशंति च भौवने॥४८॥
शब्दः स्पर्शस्तथा रूपं रसो गंधश्च भावतः। पदं वर्णाख्यं विप्र बुद्धींद्रियविकल्पनम्॥४९॥
कर्मेन्द्रियाणि मात्रं हि मनो बुद्धिरतः परम्। अहंकारमथाव्यक्तं कालाध्वरमिति स्मृतम्॥५०॥
पुरुषादिविरिंच्यंतमुन्मनत्वं परात्परम्। तथेशत्वमिति प्रोक्तं सर्वतत्त्वार्थबोधकम्॥५१॥
अयोगी नैव जानाति तत्त्वशुद्धिं शिवात्मिकाम्॥५२॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे विंशोऽध्यायः॥२०॥**

---

शिष्य के शरीर में प्रवेश करके योग से सब तत्त्वों का शोधन करके अपने योगिक पावर से अपने शिष्य को तत्त्व ज्ञान का बोध कराते हैं।।४३।। योगियों के ज्ञानयोग से मानसिक, वाचिक और कायिक शुद्धि ज्ञानमार्ग से मिलती है। गुरु को धर्मज्ञ, धार्मिक, वेदज्ञ, निर्दोष, शिष्य की परीक्षा करके ज्ञान से ज्ञान को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य गुरु शिष्य के गुणधर्म और ज्ञान की परीक्षा करे, वह इस बात की जाँच करे कि शिष्य में दोष तो नहीं है। वह ब्राह्मण है, क्षत्रिय है या वैश्य है गुरु कान से कान में और वह ज्ञान दे जो कि उसको स्वयं प्राप्त है। जैसे एक दीपक से दूसरा दीपक प्रज्वलित होता है उसी तरह गुरु भी शिष्य को अपने स्वयं प्राप्त ज्ञान से ज्ञानबोध कराए। जिसको तत्त्व कहते हैं वह ज्ञान से बना है। महाभाग, भौवन, पद, वर्णाख्य, तत्त्व मात्रम्, कालाध्वर यह सर्व सम्मत तत्त्व है। गुरु की दया (अनुग्रह) से शिष्य अपनी ज्ञान शक्ति के द्वारा ज्ञान मात्र से सिद्धि और मुक्ति प्राप्त कर लेता है।।४४-४७।। पृथ्वी आदि पंचभूत भौवनम् में सम्मिलित हैं। शब्द, स्पर्श, रंग, रस और गंध ये पद हैं। अपने सामान्य गुणों के कारण। हे ब्राह्मण! ज्ञानेन्द्रियों के विभिन्नता वर्णाख्यम कहे जाते हैं। मात्रम् कर्मेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहंकार अव्यक्त को कालाध्वर कहा गया है। पुरुष से लेकर और ब्रह्म सहित तत्त्व उन्मन कहा गया है। सब तत्त्व के अर्थ को बोध करने वाले को ईश कहा गया है। ईश महत्तम से भी महत्तर है। सब तत्त्वों का यही अर्थ है। जो योगी नहीं है वह तत्त्वों के असली प्रकृति की शुद्धि को नहीं जानता है जो स्वयं शिव की प्रकृति है।।४८-५२।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा के साधन नामक बीसवाँ अध्याय समाप्त॥२०॥**

एकविंशतितमोऽध्यायः

# दीक्षाविधिः

सूत उवाच

परीक्ष्य भूमिं विधिवद्गंधवर्णरसादिभिः। अलंकृत्य वितानाद्यैरीश्वरावाहनक्षमाम्॥१॥
एकहस्तप्रमाणेन मंडलं परिकल्पयेत्। आलिखेत्कमलं मध्ये पंचरत्नसमन्वितम्॥२॥
चूर्णैरष्टदलं वृत्तं सितं वा रक्तमेव च। परिवारेण संयुक्तं बहुशोभासमन्वितम्॥३॥
आवाह्य कर्णिकायां तु शिवं परमकारणम्। अर्चयेत्सर्वयत्नेन यथाविभवविस्तरम्॥४॥
दलेषु सिद्धयः प्रोक्ताः कर्णिकायां महामुने। वैराग्यज्ञाननालं च धर्मकंदं मनोरमम्॥५॥
वामा ज्येष्ठा च रौद्री च काली विकरणी तथा। बलविकरणी चैव बलप्रमथिनी क्रमात्॥६॥
सर्वभूतस्य दमनी केसरेषु च शक्तयः। मनोन्मनी महामाया कर्णिकायां शिवासने॥७॥
वामदेवादिभिः सार्धं द्वंद्वन्यायेन विन्यसेत्। मनोन्मनं महादेवं मनोन्मन्याथ मध्यतः॥८॥
सूर्यसोमाग्निसंबंधात्प्रणवाख्यंशिवात्मकम्। पुरुषं विन्यसेद्वक्त्रं पूर्वे पत्रे रविप्रभम्॥९॥
अघोरं दक्षिणे पत्रे नीलांजनचयोपमम्। उत्तरे वामदेवाख्यं जपाकुसुमसन्निभम्॥१०॥
सद्यं पश्चिमपत्रे तु गोक्षीरधवलं न्यसेत्। ईशानं कर्णिकायां तु शुद्धस्फटिकसन्निभम्॥११॥

---

## इक्कीसवाँ अध्याय

# दीक्षाविधि

### सूत बोले

दीक्षा के लिए चुनी हुई भूमि की परीक्षा करके विधिवत् गंध, रंग, रस आदि से सजाएँ। वितान (चाँदनी) आदि से शिव को आह्वान के योग्य एक हाथ का मण्डल बनाएँ। पंच रत्नों से युक्त कमल को बीच में चूर्ण (आटा) से बनाएँ। सफेद और लाल अष्टगन्ध घेरा (वृत्त) यह सफेद या लाल रंग में हो। यह चमकीला और भव्य हो। यह शिव और उनके अनुचरों से संयुक्त हो। सृष्टि के परम कारण शिव का कर्णिका में आह्वान करके अपने समृद्धि की सीमा के अनुसार भक्त पूजा करे।।१-४।। हे महामुनि! दलों में सिद्धियाँ कही गयी हैं। इसकी नाल में वैराग्य और ज्ञान और सुन्दर धर्म कंद में कहे गये हैं, केसरों में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, विकरणी, बलविकरणी, बल प्रमथनी सब भूतों की दमनी शक्तियाँ केसरों में और शिव के आसन में कर्णिका में मनोन्मनी महामाया इन शक्तियों की वामदेव और अन्य के साथ जोड़ो में स्थापित करे। महादेव जो मनोन्मन हैं उनको मनोन्मनी के साथ मध्य में स्थापित करें।।५-८।। पूर्व दल (पत्र) में पुरुष को स्थापित करे। सूर्य के समान तेज मुख वाले सूर्य, सोम, अग्नि के सम्बन्ध से प्रणव नामक शिवात्मा पुरुष को स्थापित करे। दक्षिण पत्र पर नीलांजन के समान अघोर को उत्तर में जपा के फूल के समान वामदेव को स्थापित करे।।९-१०।। पश्चिम दल

चंद्रमंडलसंकाशं हृदययायेति मंत्रतः। वाह्नेये रुद्रदिग्भागे शिरसे धूम्रवर्चसे॥१२॥
शिखायै च नमश्चेति रक्ताभे नैर्ऋते दले। कवचायांजनाभाय इति वायुदले न्यसेत्॥१३॥
अस्त्रायाग्निशिखाभाय इति दिक्षु प्रविन्यसेत्। नेत्रेभ्यश्चेति चैशान्यां पिंगलेभ्यः प्रविन्येसत्॥१४॥
शिवं सदाशिवं देवं महेश्वरमतः परम्। रुद्रं विष्णुं विरिंचिं च सृष्टिन्यायेन भावयेत्॥१५॥
शिवाय रुद्ररूपाय शांत्यतीताय शंभवे। शांताय शांतदैत्याय नमश्चंद्रमसे तथा॥१६॥
वेद्याय विद्याधराय वह्नये वह्निवर्चसे। कालायै च प्रतिष्ठायै तारकायांतकाय च॥१७॥
निवृत्त्यै धनदेवाय धारायै धारणाय च। मंत्रैरेतैर्महाभूतविग्रहं च सदाशिवम्॥१८॥
ईशानमुकुटं देवं पुरुषास्यं पुरातनम्। अघोरहृदयं हृष्टं वामगुह्यं महेश्वरम्॥१९॥
सद्यमूर्तिं स्मरद्देवं सदसद्व्यक्तिकारणम्। पंचवक्त्रं दशभुजमष्टत्रिंशत्कलामयम्॥२०॥
सद्यमष्टप्रकारेण प्रभिद्य च कलामयम्। वामं त्रयोदशविद्यैर्विभिद्य विततं प्रभुम्॥२१॥
अघोरमष्टधा कृत्वा कलारूपेण संस्थितम्। पुरुषं च चतुर्धा वै विभज्य च कलामयम्॥२२॥
ईशानं पंचधा कृत्वा पंचमूर्त्या व्यवस्थितम्। हंसहंसेति मंत्रेण शिवभक्त्या समन्वितम्॥२३॥

---

पर भक्त सद्य को स्थापित करे जो कि गाय के दूध के समान है। शुद्ध स्फटिक के समान ईशान को कर्णिका में स्थापित करे। 'हृदयाय' शब्द से प्रारम्भ होने वाले मन्त्र को पढ़ते हुए दक्षिण-पूर्व कोण में देव को स्थापित करे जो कि शुद्ध स्फटिक के समान हैं। धुएँ के समान रंग वाले देव को 'शिरसे' शब्द से प्रारम्भ होने वाले मन्त्र को पढ़ते हुए उत्तर-पूर्व में स्थापित करें। दक्षिण पश्चिम कोण में लाल रंग के साथ 'शिखायै च नमः' शब्द को पढ़ते हुए मूर्त स्थापित करें। अँजन के समान आभा वाले 'कवचाय' शब्द को पढ़ते हुए उत्तर-पूर्व कोण में स्थापित करें। अग्निशिखा की आभा वाले मूर्त्ति को अस्त्र को नमः पढ़ते हुए सब दिशा में स्थापित करें। उत्तर-पूर्व कोण में पिंगल वर्ण के नेत्रों को नमः कहकर स्थापित करें। भक्त शिव, सदाशिव और महेश्वर का स्मरण करे उसके बाद वह रुद्र विष्णु और विरिंचि को सृष्टि के क्रम मे ध्यान करें।।११-१५।। रुद्र के रूप में शिव को नमः शंभु को नमस्कार जो शान्ति से बाहर है। चन्द्र को नमस्कार, चन्द्रमा जिन्होंने दैत्यों का नाश किया।।१६।। विद्या के धारण करने वाले विद्याधर को नमस्कार, तेज के देव उस अग्नि को नमस्कार, काल को नमस्कार और प्रतिष्ठा को नमस्कार, तारक और यम को नमस्कार।।१७।। निवृत्ति को नमस्कार, धन देव को नमस्कार, धारा को नमस्कार, धारण को नमस्कार इन मन्त्रों के द्वारा भक्त निम्नलिखित देवताओं को स्मरण करे। महाभूत शरीरधारी सदाशिव को, पुरातन देव पुरुष देव को, मुकुटधारी ईशान को, उनके हृदय के लिए अघोर को, अपने गुप्त अंगों के लिए वामदेव महेश्वर को, 'सत्' और 'असत्' के व्यक्ति के कारण शब्द की मूर्ति को और पाँच मुखों, दस भुजाओं और अड़तीस कलाओं वाले महादेव का स्मरण करें।।१८-२०।। तब कलामय सद्य को आठ भाग में बाँटकर, व्यापक वाम को १३ भाग, कलारूप में स्थित अघोर को आठ प्रकार, कलामय पुरुष को चार प्रकार, पंचमूर्ति रूप स्थित ईशान को पाँच प्रकार विभक्त करके हंस हंस इस मन्त्र से एक मंत्र ओम् का, समान रूप में 'अ' अक्षर को दोहराते हुए आ, ई, ऊ, ए और अंबा उचित क्रम से आत्मा के रूप भगवान शिव का स्मरण

ओंकारमात्रमोंकारमकारं समरूपिणम्। आ ई ऊ ए तथा अंबानुक्रमेणात्मरूपिणम्॥२४॥
प्रधानसहितं देवं प्रलयोत्पत्तिवर्जितम्। अणोरणीयांसमजं महतोऽपि महत्तमम्॥२५॥
उर्ध्वरेतसमीशानं विरूपाक्षमुमापतिम्। सहस्त्रशिरसं देवं सहस्त्राक्षं सनातनम्॥२६॥
सहस्त्रहस्तचरणं नादांतं नादविग्रहम्। खद्योतसदृशाकारं चंद्ररेखाकृतिं प्रभुम्॥२७॥
द्वादशांते भ्रुवोर्मध्ये तालुमध्ये गले क्रमात्। हृद्देशेऽवस्थितं देवं स्वानंदममृतं शिवम्॥२८॥
विद्युद्वलयसंकाशं विद्युत्कोटिसमप्रभम्। श्यामं रक्तं कलाकारं शक्तित्रयकृतासनम्॥२९॥
सदाशिवं स्मरेद्देवं तत्त्वत्रयसमन्वितम्। विद्यामूर्तिमयं देवं पूजयेच्च यथाक्रमात्॥३०॥
लोकपालांस्तथास्त्रेण पूर्वाद्यान्पूजयेत् पृथक्। चरुं च विधिनासाद्य शिवाय विनिवेदयेत्॥३१॥
अर्धं शिवाय दत्त्वैव शेषार्धेन तु होमयेत्। अघोरेणाथ शिष्याय दापयेद्भोक्तुमुत्तमम्॥३२॥
उपस्पृश्य शुचिर्भूत्वा पुरुषं विधिना यजेत्। पंचगव्यं ततः प्राश्य ईशानेनाभिमंत्रितम्॥३३॥
वामदेवेन भस्मांगी भस्मनोद्धूलयेत्क्रमात्। कर्णयोश्च जपेद्देवीं गायत्रीं रुद्रदेवताम्॥३४॥
ससूत्रं सपिधानं च वस्त्रयुग्मेन वेष्टितम्। तत्पूर्वं हेमरत्नौघैर्वासितं वै हिरण्मयम्॥३५॥
कलशान्विन्यसेत्पंच पंचभिर्ब्राह्मणैस्ततः। होमं च चरुणा कुर्याद्यथाविभवविस्तरम्॥३६॥
शिष्यं च वासयेद्भक्तं दक्षिणे मंडलस्य तु। दर्भशय्यासमारूढं शिवध्यानपरायणम्॥३७॥

---

करे। उनका निम्नलिखित रूप में स्मरण करे, वह प्रलय और उत्पत्ति से वर्जित (रहित) प्रधान सहित हैं। वह अन्न हैं, वह महत्तम से महत्तर और सूक्ष्मतम से भी सूक्ष्मतर हैं। वह ब्रह्मचारी ईशान हैं। वह विरूपाक्ष हैं। उमा के पति हैं। वह हजार शिर वाले, हजार नेत्र वाले, हजार हाथ और पैर वाले हैं। वह अन्तिम नाद (ध्वनि) और भौतिक रूप में नाद हैं। उनका रूप जुगनू के समान है। वह चन्द्र की रेखा के समान है। वह बारह नाड़ियों में, भौंहों के मध्य में, तालु, गला और हृदय में यथाक्रम से स्थित हैं। वह स्वयं आनन्द अमृत हैं, शिव हैं। वह विद्युत वलय के समान और कोटि विद्युत की प्रभा के समान हैं। वह श्याम रंग के और लाल रंग के हैं। वह कला के रूप हैं। वह तीन शक्तियों के साथ बैठे हुए हैं। वह सदाशिव हैं। वह तीन तत्त्वों से युक्त हैं। ऐसे विद्यामूर्ति सदाशिव की यथाविधि पूजा करनी चाहिये।।२१-३०।। पूर्व से प्रारम्भ करके आठों दिशाओं की उनके अस्त्रों सहित पूजा करनी चाहिये।।३१।। शिव को अर्घ्य देकर शेष अर्घ्य से अघोर मन्त्र पढ़ते हुये होम करना चाहिये। शिष्य को उनके लिए उत्तम भोजन देना चाहिये।।३२।। तब उसे आचमन करके शुद्ध कर विधिपूर्वक पूजन करना चाहिये। ईशान कोण से अभिमन्त्रित पंचगव्य को रखाकर वामदेव के मन्त्रों का स्मरण करते हुए शरीर में भस्म लगावे तथा गुरु शिष्य के कान में गायत्री मन्त्र का जप करे जिसके देवता रुद्र हैं।।३३-३४।। तब सोने के पाँच कलश ढक्कन से ढके दो धागों से बँधे हुए पात्र को रखना चाहिये। सोने के टुकड़े और रत्नद्रव्य घड़ों में पहिले ही डाल देना चाहिये। तब उसके बाद पाँच ब्राह्मणों द्वारा अपनी सामर्थ्य के अनुसार धन से होम करना चाहिये। शिष्य को दक्षिण में कुशासन पर बैठाये। शिव के ध्यान में लीन हो मण्डल के दक्षिण भाग में शिष्य

अघोरेण यथान्यायमष्टोत्तरशतं पुनः।
घृतेन हुत्वा दुःस्वप्नं प्रभाते शोधयेन्मलम्॥३८॥
एवं चोपोषितं शिष्यं स्नातं भूषितविग्रहम्। नववस्त्रोत्तरीयं च सोष्णीषं कृतमंगलम्॥३९॥
दुकूलाद्येन वस्त्रेण नेत्रं बद्ध्वा प्रवेशयेत्। सुवर्णपुष्पसंमिश्रं यथाविभवविस्तरम्॥४०॥
ईशानेन च मंत्रेण कुर्यात्पुष्पांजलिं प्रभोः। प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा रुद्राध्यायेन वा पुनः॥४१॥
केवलं प्रणवेनाथ शिवध्यानपरायणः। ध्यात्वा तु देवदेवेशमीशाने संक्षिपेत्स्वयम्॥४२॥
यस्मिन्मंत्रे पतेत्पुष्पं तन्मंत्रस्तस्य सिध्यति। शिवांभसा तु संस्पृश्य अघोरेण च भस्मना॥४३॥
शिष्यमूर्धनि विन्यस्य गंधाद्यैःशिष्यमर्चयेत्। वारुणं परमं श्रेष्ठं द्वारं वै सर्ववर्णिनाम्॥४४॥
क्षत्रियाणां विशेषेण द्वारं वै पश्चिमं स्मृतम्। नेत्रावरणमुन्मुच्य मंडलं दर्शयेत्ततः॥४५॥
कुशासने तु संस्थाप्य दक्षिणामूर्तिमास्थितः। तत्त्वशुद्धिं ततः कुर्यात्पंचतत्त्वप्रकारतः॥४६॥
निवृत्त्या रुद्रपर्यंतमंडमंडोद्भवात्मज। प्रतिष्ठया तदूर्ध्वं च यावदव्यक्तगोचरम्॥४७॥
विश्वेश्वरांतं वै विद्या कलामात्रेण सुव्रत। तदूर्ध्वमार्गं संशोध्य शिवभक्त्या शिवं नयेत्॥४८॥
समर्चनाय तत्त्वस्य तस्य भोगेश्वरस्य वै। तत्त्वत्रयप्रभेदेन चतुर्भिरुत वा तथा॥४९॥
होमयेदंगमंत्रेण शांत्यतीतं सदाशिवम्। सद्यादिभिस्तु शांत्यंतं चतुर्भिः कलया पृथक्॥५०॥

---

भक्तों को बैठाना चाहिये। भक्त प्रातःकाल अघोर मन्त्र से १०८ बाद घी से होम करके बुरे सपनों (दुःस्वप्न) के दोष को नष्ट करे।।३५-३८।। उसके बाद स्नान किये हुए अलंकृत शरीर नये अधोवस्त्र (धोती) ऊपरी वस्त्र (कुर्ता) उत्तरीय (चादर), शिर पर पगड़ी या गमछा लपेटे भक्त की आँखों को रेशमी वस्त्र से ढककर भीतर लिवा लावे। भक्त अपनी सामर्थ्य के अनुसार स्वर्ण निर्मित फल और फूलों को ईशान मन्त्र पढ़ते हुए शिवजी को भेंट करे। भक्त तीन प्रदक्षिणा करके रुद्राध्याय को पढ़ते हुए केवल प्रणव का उच्चरण करते हुए शिव के ध्यान में लीन हो जाय। देवों के देवेश को ध्यान करके भक्त स्वयं ईशान पर फूलों को चढ़ा दे।।३९-४२।। ईशान पर जिस मन्त्र से पढ़ते हुए भक्त फूल चढ़ाता है उसको वह मन्त्र सिद्ध होता है। उसके बाद गुरु शिव के शिर पर भस्म लगाते हुए पवित्र जल से अघोर मन्त्र से भक्त को स्पर्श करता है। उसके बाद सुगन्ध द्रव्य से शिष्य की अर्चना करे। सब वर्णों (जातियों) के शिष्यों के प्रवेश के लिए पश्चिम का द्वार सबसे श्रेष्ठ होता है। यह क्षत्रिय के लिए विशेष रूप से श्रेष्ठ है। उसके बाद आँखों पर ढके कपड़े को हटाकर भक्त को मण्डल दिखावे।।४३-४५।। तब भक्त को कुशासन पर दक्षिण की ओर मुख करके बैठावे। उसके बाद पंच तत्त्व प्रकार से तत्त्व शुद्धि करना चाहिये।।४६।। हे ब्रह्मा के पुत्र! प्रतिष्ठा के द्वारा अव्यक्त जब तक न हो, हे शुभ पवित्र व्रत (सुव्रत)! विश्वेश्वर के अन्त तक कलाओं के द्वारा उसके ऊपरी भाग को संशोधित करके शिव भक्त गुरु शिष्य को शिव तत्त्व (शान्ति) की ओर ले जाये।।४७-४८।। तब उस भोगेश्वर की पूजा के लिए तीनों तत्त्वों अथवा चारों तत्त्व का शान्ति को शामिल करते हुए या छोड़ते हुए तत्त्व की पूजा के लिए ले जाए।।४९।। वह सदाशिव के

शांत्यतीतं मुनिश्रेष्ठ ईशानेनाथवा पुनः। प्रत्येकमष्टोत्तरशतं दिशाहोमं तु कारयेत्॥५१॥
ईशान्यां पंचमेनाथ प्रधानं परिगीयते। समिदाज्यचरूँल्लाजान्सर्षपांश्च यवांस्तिलान्॥५२॥
द्रव्याणि सप्त होतव्यं स्वाहांतंप्रणवादिकम्। तेषां पूर्णाहुतिर्विप्र ईशानेन विधीयते॥५३॥
सहंसेन यथान्यायं प्रणवाद्येन सुव्रत। अघोरेण च मंत्रेण प्रायश्चितं विधीयते॥५४॥
जयादिस्विष्टपर्यंतमग्निकार्यं क्रमेण तु। गुणसंख्याप्रकारेण प्रधानेन च योजयेत्॥५५॥
भूतानि ब्रह्मभिर्वापि मौनीबीजादिभिस्तथा। अथ प्रधानमात्रेण प्राणापानौ नियम्य च॥५६॥
षष्ठेन भेदयेदात्मप्रणवांतं कुलाकुलम्। अन्योऽन्यमुपसंहृत्य ब्रह्माणं केशवं हरम्॥५७॥
रुद्रे रुद्रं तमीशाने शिवे देवं महेश्वरम्। तस्मात्सृष्टिप्रकारेण भावयेद्भवनाशनम्॥५८॥
स्थाप्यात्मानममुं जीवं ताडनं द्वारदर्शनम्। दीपनं ग्रहणं चैव बंधनं पूजया सह॥५९॥
अमृतीकरणं चैव कारयेद्विधिपूर्वकम्। षष्ठांतं सद्यसंयुक्तं तृतीयेन समन्वितम्॥६०॥
फडंतं संहृतिः प्रोक्ता पंचभूतप्रकारतः। सद्याद्यपष्ठसहितं शिखांतं सफडंतकम्॥६१॥
ताडनं कथितं द्वारं तत्त्वानामपि योगिनः। प्रधानं संपुटीकृत्य तृतीयेन च दीपनम्॥६२॥

---

लिए जो कि शान्त से अतीत कला अंग मन्त्र के द्वारा और पहले के चार तत्त्वों शान्ति के साथ, कला से अलग से, सद्य मन्त्र के द्वारा होम करेगा। हे महामुनि! शान्त्यातीत कला ईशान मन्त्र के द्वारा होम करे।।५०-५१।। ईशान कोण में प्रधान पंचम स्वर से गाया गया है। इसके बाद समिधा घी, चरु, लाजा, सरसों, जौ, तिल ये सात चीजों द्वारा अग्नि में ओम् को उच्चारण करते हुए और अग्नि में स्वाहा शब्द बोलते हुए होम करे। हे ब्राह्मण! उनकी ईशान मन्त्र से पूर्णाहुति की जाय।।५२-५३।। हे सुव्रत! तब प्रायश्चित्त होम ओम् हंस से प्रारम्भ करके अघोर मन्त्र के द्वारा किया जाना चाहिये।।५४।। तब पवित्र अग्नि में 'जया' मे प्रारम्भ करते हुए और स्विष्ट अन्त में 'स्वाहा' से होम को पूर्ण करना चाहिए। प्रधान से तीन बार उनको जोड़ देना चाहिए।।५५।। ब्रह्मनिर्वापि और मौनीबीज आदि के द्वारा प्रधान से संयुक्त भूतों को प्रधान मन्त्र मात्र द्वारा प्राण और अपान वायु को वश में करके छठवें बीज से आत्मा और प्रणव के साथ कुलाकुल से अन्त करते हुए भेदन करे। ब्रह्मा केशव और रुद्र इनको आपस में मिला कर रुद्र में रक्खे। रुद्र में ईशान को और महेश्वर (ईशान) को शिव में रक्खे। तब सृष्टि के विनाशक सृष्टि प्रकार के क्रम में सृष्टि संहारक शिव का ध्यान करे।।५६-५८।। आत्मा (जीव) को स्थापित करके, तांडन, द्वार दर्शन, दीपन, ग्रहण और बन्धन, पूजा के साथ अमृतीकरण विधि को करे। तीसरें के सहित छठवाँ सद्य के साथ होगा। संहृति प्रकार (संहार का क्रम) पंचभूत के क्रम में और छठवें के अन्त में होगा। 'फट' के साथ शिखा सहित अन्त होने वाले को तांडन कहा जाता है। द्वार दर्शन योगी के तत्त्वों का सूचक है। दीपन विधि तृतीय बीज द्वारा प्रधान का संपुष्टिकरण है। बन्धनम् विधि प्रथम पूर्ण बीज द्वारा प्रधान का संपुटीकरण अमृतीकरण अमृत से परिपूर्ण कर देना है। संहार के क्रम में कलाओं का संक्रमण शान्त्यातीत, शान्ति, विद्या, अमला, प्रतिष्ठा और निवृत्ति है। कलाओं का यह संक्रमण तत्त्व, वर्ण, कला और भुवन से है। यथाविधि संक्षिप्त मन्त्रों और पादों, छन्दों के पादों द्वारा प्रथम योनि बीज मंत्र से स्तुति की जानी चाहिये।

आद्येन संपुटीकृत्य प्रधानं ग्रहणं स्मृतम्। प्रधानं प्रथमेनैव संपुटीकृत्य पूर्ववत्॥६३॥
बंधनं परिपूर्णेन प्लावनं चामृतेन च। शांत्यतीता ततः शांतिर्विद्या नाम कलामला॥६४॥
प्रतिष्ठा च निवृत्तिश्च कलासंक्रमणं स्मृता। तत्त्ववर्णकलायुक्तं भुवनेन यथाक्रमम्॥६५॥
मंत्रैः पादैः स्तवं कुर्याद्विशोध्य च यथाविधि। आद्येन योनिबीजेन कल्पयित्वा च पूर्ववत्॥६६॥
पूजासंप्रोक्षणं विद्धि ताडनं हरणं तथा। संहतस्य च संयोगं विक्षेपं च यथाक्रमम्॥६७॥
अर्चना च तथा गर्भधारणं जननं पुनः। अधिकारो भवेद्भानोर्लयश्चैव विशेषतः॥६८॥
उत्तमाद्यं तथांत्येन योनिबीजेन सुव्रत। उद्धारे प्रोक्षणे चैव ताडने च महामुने॥६९॥
अघोरेण फडंतेन संसृतिश्च न संशयः। प्रतितत्त्वं क्रमो ह्येष योगमार्गेण सुव्रत॥७०॥
मुष्टिनां चैव यावच्च तावत्कालं नयेत्क्रमात्। विषुवेण तु योगेन निवृत्त्यादि शिवांतिकम्॥७१॥
एकत्र समतां याति नान्यथा तु पृथक्पृथक्। नासाग्रे द्वादशांतेन पृष्ठेन सह योगिनाम्॥७२॥
क्षंतव्यमिति विप्रेंद्र देवदेवस्य शासनम्। हेमराजतताम्राद्यैर्विधिना कल्पितेन च॥७३॥
सकूर्चेन सवस्त्रेण तंतुना वेष्टितेन च। तीर्थांबुपूरितेनैव रत्नगर्भेण सुव्रत॥७४॥
संहितामंत्रितेनैव रुद्राध्यायस्तुतेन च।
सेचयेच्च ततः शिष्यं शिवभक्तं च धार्मिकम्॥७५॥

---

बन्धनम् विधि प्रथमपूर्ण मंत्र द्वारा प्रधान का संपुटीकरण से अमृतीकरण अमृत के परिपूर्ण कर देना है। संहार के क्रम में कलाओं का वैभव से शान्त्यातीत शान्ति विद्या, अमला, प्रतिष्ठा और निवृत्ति है। कलाओं का यह संकमण तत्त्व, वर्ण, कला और मौन का अंग है। यथानिधि शंधि मंत्रों और पादों छन्दों के पादों द्वारा योनि बीज के द्वारा से पूर्ववत् विकसित करते हुये स्तुति की जानी चाहिये।।५९-६६।। पूजा और संप्रोक्षण ताडन, हरण, संहत का संयोग, विक्षेप, क्रम के अनुसार किया जाना चाहिये। अर्चना, गर्भधारण और जनन और अभिचार की विधियों का विधान है। तत्पश्चात् भानु ज्ञान और उसका लय विशेष रूप से पूर्ण करना चाहिये। हे सुव्रत! योनि बीज के साथ प्रथम मंत्र ईशान का वर्णन पहले किया गया है। हे महामुनि! निःसन्देह उद्धार, प्रोक्षण और ताडन, अघोर मंत्र से आरम्भ करके फट् से अंत से किया जाना चाहिये। हे सुव्रत! प्रत्येक तत्त्व के सम्बन्ध में सब शेष मार्ग में यही प्रक्रिया होती है।।६७-७०।। गुरु अपने भक्त को अपनी मुष्टि (मुट्ठी) तब तक उसकी मुष्टि से पकड़े हुये क्रिया करावे जब तक कि विषय तक पूरा न हो। यह निवृत्ति से विषय कलाओं तक की क्रिया शिव के पास एक ही स्थान पर हो। अन्यथा पृथक्-पृथक् स्थान पर होने से सम्पन्न नहीं होती है। हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! नाक के अग्रभाग में शिव के ऊपरी स्थान और पीठ पर योगी को दीक्षित भक्त को सुख-दुःख आदि द्वन्द को क्षमा करना चाहिये। ऐसी शिव की आज्ञा है।।७१-७२।। संपन्न धार्मिक शिव भक्त शिष्य के ऊपर गुरु सोना, चाँदी ताँबे तथा अन्य तीर्थजल से भरे रत्न पड़े हुये बर्तन वस्त्र से ढके तागे से बंधे कुश से जल छिड़के अभिसिंचित करे। वह पवित्र जल संहिता मंत्र और रुद्राध्याय की स्तुति से प्रेरित हो। हे सुव्रत! दीक्षित शिवभक्त शिव के गुरु और अग्नि के आगे (उपस्थिति में) दीक्षा ग्रहण करे। गुरु की आज्ञा के साथ विधिपूर्वक दीक्षा ग्रहण

सोऽपि शिष्यः शिवस्याग्रे गुरोरग्रे च सादरम्। वह्नेश्च दीक्षां कुर्वीत दीक्षितश्च तथाचरेत्॥७६॥
वरं प्राणपरित्यागश्छेदनं शिरसोऽपि वा।
न त्वनभ्यर्च्य भुंजीयाद्भगवंतं सदाशिवम्॥७७॥
एवं दीक्षा प्रकर्तव्या पूजा चैव यथाक्रमम्। त्रिकालमेककालं वा पूजयेत्परमेश्वरम्॥७८॥
अग्निहोत्रं च वेदाश्च यज्ञाश्च बहुदक्षिणाः। शिवलिंगार्चनस्यैते कलांशेनापि नो समाः॥७९॥
सदा यजति यज्ञेन सदा दानं प्रयच्छति। सदा च वायुभक्षश्च सकृद्योऽभ्यर्चयेच्छिवम्॥८०॥
एककालं द्विकालं वा त्रिकालं नित्यमेव वा। येऽर्चयंति महादेवं ते रुद्रा नात्र संशयः॥८१॥
नारुद्रस्तु स्पृशेद्रुद्रं नारुद्रो रुद्रमर्चयेत्। नारुद्रः कीर्तयेद्रुद्रं नारुद्रो रुद्रमाप्नुयात्॥८२॥
एवं संक्षेपतः प्रोक्तो ह्यधिकारिविधिक्रमः। शिवार्चनार्थं धर्मार्थकाममोक्षफलप्रदः॥८३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे दीक्षाविधिर्नामैक विंशतितमोऽध्यायः॥२१॥**

---

करने के बाद भगवान सदाशिव की पूजा अर्चना के बिना चाहे प्राण चला जाये, या सिर कट जाय भक्त को भोजन न करना चाहिये। इस प्रकार दीक्षा विधि और पूजा करनी चाहिये। परमेश्वर पूजा प्रत्येक दिन तीन बार, दो बार या कम से कम एक बार करनी चाहिये।।७३-७८।। अभिषेक वैदिक मंत्रों का पाठ और बहुत धन की दान-दक्षिणा ये सब शिवलिंग की पूजा अर्चना के आधे भाग के बराबर नहीं हैं।।७९।। यदि कोई एक बार भी शिव की पूजा करता है वह उस व्यक्ति के बराबर है जो कि सदा यज्ञ करता है। सदा दान देता है। सदा शुभ यज्ञ करता है।।८०।। वे जो महेश्वर के एक बार, दो बार, तीन बार या निरन्तर से महादेव की पूजा करते हैं वे रुद्र हैं। इसमें सन्देह नहीं।।८१।। रुद्र न तो अरुद्र को छुये, न उसकी पूजा करे और न तो उसका गुणगान करे। न अरुद्र के सम्पर्क में रहे।।८२।।

इस प्रकार शिव की पूजा के लिये जो व्यक्ति योग्य है और संबंधित दीक्षा विधि को संक्षेप में मैंने आपको बताया। यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को फलदायक है।।८३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में दीक्षाविधि नामक इक्कीसवाँ अध्याय समाप्त॥२१॥**

द्वाविंशतितमोऽध्यायः

# तत्त्वानाम् समर्पणम्

शैलादिरुवाच

स्नानयागादिकर्माणि कृत्वा वै भास्करस्य च। शिवस्नानं ततः कुर्याद्भस्मस्नानं शिवार्चनम्॥१॥
षष्ठेन मृदमादाय भक्त्या भूमौ न्यसेन्मृदम्। द्वितीयेन तथाभ्युक्ष्य तृतीयेन च शोधयेत्॥२॥
चतुर्थेनैव विभजेन्मलमेकेन शोधयेत्। स्नात्वा षष्ठेन तच्छेषां मृदं हस्तगतां पुनः॥३॥
त्रिधा विभज्य सर्वं च चतुर्भिर्मध्यमं पुनः।
षष्ठेन सप्तवाराणि वामं मूलेन चालभेत्। दशवारं च षष्ठेन दिशो बंधः प्रकीर्तितः॥४॥
वामेन तीर्थं सव्येन शरीरमनुलिप्य च। स्नात्वा सर्वैः स्मरन् भानुमभिषेकं समाचरेत्॥५॥
शृंगेण पर्णपुटकैः पालाशेन दलेन वा। सौरै रेभिश्च विविधैः सर्वसिद्धिकरैः शुभैः॥६॥
सौराणि च प्रवक्ष्यामि बाष्कलाद्यानि सुव्रत। अंगानि सर्वदेवेषु सारभूतानि सर्वतः॥७॥
ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म।
नवाक्षरमयं मंत्रं बाष्कलं परिकीर्तितम्।
न क्षरतीति लोकानि ऋतमक्षरमुच्यते। सत्यमक्षरमित्युक्तं प्रणवादिनमोंतकम्॥८॥

---

## बाईसवाँ अध्याय

# तत्त्वों का समर्पण

### शैलादि बोले

स्नान, यज्ञ आदि कर्मों को करके तथा सूर्य के अन्य पवित्र धर्मिक कृत्य को करके शिव स्नान और भस्म स्नान तथा शिव की पूजा करे।।१।। छठवाँ बीज मन्त्र पढ़ते हुए कुछ मिट्टी लें और उसको भक्तिपूर्वक पृथ्वी पर रख दे।।२।। द्वितीय बीज मन्त्र द्वारा उस मिट्टी पर जल छिड़के और तीसरे बीज मन्त्र को पढ़ते हुए उससे इसको पवित्र करे।।३।। चौथे बीज मन्त्र को पढ़ते हुए उस मिट्टी को दो भागों में बाँटे। एक भाग का मल दूर करे। उसके बाद वह स्नान करे। छठवें बीज मन्त्र को पढ़ते हुए वह मिट्टी के बचे हुए भाग को हाथ में ले ले। उसको तीन भागों में बाँटकर बीच वाले भाग मिट्टी को चौथा बीज मन्त्र पढ़ते हुए मिट्टी को शरीर के मध्य भाग के ऊपर सात बार लगावे। मूल मन्त्र पढ़ते हुए बाँए बगल को छुए। षष्ठ बीज मन्त्र को दस बार पढ़ते हुए दिशाबन्ध करे।।४।। मिट्टी को पवित्र जल से गीला करके शरीर के बाँए या दाहिने भाग पर चुपड़े। इस प्रकार करने के बाद सब बीज मन्त्रों को पढ़ते हुए सूर्य का स्मरण करते हुए स्नान करे। उसके बाद वह सींग से पत्तों के दोनों से या पलाश (छियूल) के दलों से शिव सम्बन्धी मन्त्रों को पूरा करे। वे मन्त्र सिद्धि देने वाले हैं।।५-६।। हे सुव्रत! मैं सूर्य सम्बन्धी मन्त्रों को बताता हूँ। वे भास्कर और अन्य हैं जो कि सब वेदांगों से बने हैं। ॐ भूः

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ नमः सूर्याय खखोल्काय नमः॥९॥
मूलमंत्रमिदं प्रोक्तं भास्करस्य महात्मनः। नवाक्षरेण दीप्तास्यं मूलमंत्रेण भास्करम्॥१०॥
पूजयेदंगमंत्राणि कथयामि यथाक्रमम्। वेदादिभिः प्रभूताद्यं प्रणवेन च मध्यमम्॥११॥
ॐ भूः ब्रह्म हृदयाय ॐ भुवः विष्णुशिरसे ॐ स्वः रुद्रशिखायै
ॐ भूर्भुवः स्वः ज्वालामालिनीशिखायै ॐ महः महेश्वराय कवचाय
ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यः ॐ तपः तापकाय अस्त्राय फट्।
मंत्राणि कथितान्येवं सौराणि विविधानि च। एतैः शृंगादिभिः पात्रैः स्वात्मानमभिषेचयेत्॥१२॥
ताम्रकुंभेन वा विप्रः क्षत्रियो वैश्य एव च। सकुशेन सपुष्पेण मंत्रैः सर्वैः समाहितः॥१३॥
रक्तवस्त्रपरीधानः स्वाचामेद्विधिपूर्वकम्। सूर्यश्चेति दिवा रात्रौ चाग्निश्चेति द्विजोत्तमः॥१४॥
आपः पुनंतु मध्याह्ने मंत्राचमनमुच्यते। षष्ठेन शुद्धिं कृत्वैव जपेदाद्यमनुत्तमम्॥१५॥
वौषडंतं तथा मूलं नवाक्षरमनुत्तमम्। करशाखां तथांगुष्ठमध्यमानामिकां न्यसेत्॥१६॥
तले च तर्जन्यंगुष्ठं मुष्टिभागानि विन्यसेत्। नवाक्षरमयं देहं कृत्वांगैरपि पावितम्॥१७॥
सूर्योऽहमिति संचिंत्य मंत्रैरेतैर्यथाक्रमम्। वामहस्तगतैरद्भिर्गंधसिद्धार्थकान्वितैः॥१८॥
कुशपुंजेन चाभ्युक्ष्य मूलाग्रैरष्टधा स्थितैः। आपो हिष्ठादिभिश्चैव शेषमाघ्राय वै जलम्॥१९॥

---

ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म। इस नौ अक्षरमय को बाष्कल कहते हैं। ऋत् शब्द का अर्थ अक्षर है। अक्षर का अर्थ नष्ट न होने वाला (अविनाशी)। ॐ आदि में और अन्त में नमः लगता है। महान् आत्मा सूर्य का मूल मन्त्र इस प्रकार है ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। हम सूर्य के उस श्रेष्ठ तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को शुद्ध करे। भक्त नौ मूल मन्त्रों के द्वारा दिव्य मुख वाले सूर्य की पूजा करे। मैं क्रम से कहता हूँ। ॐ लगाकर इनको पढ़ा जाता है। ॐ भूः ब्रह्म हृदयाय, ॐ भुवः विष्णुशिरसे ॐ स्वः रुद्रशिखायै ॐ भूर्भुवः स्वः ज्वालामालिनी शिखायै ॐ महः महेश्वराय कवचाय ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यः ॐ तपः तापकाय अस्त्राय फट्। सूर्य सम्बन्धी इन विविध मन्त्रों को मैंने कहा। इनको श्रृंग आदि पात्रों से इन मन्त्रों द्वारा अपने ऊपर जल छिड़के (अभिषेचन करे)।।७-१२।। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को ताँबे के पात्र में रक्खे जल—जिसमें फूल पड़े हों—इन मन्त्रों को पढ़ते हुए कुश से अपने शरीर पर जल छिड़के।।१३।। हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! भक्त तब लाल वस्त्र धारण करके आचमन करे। दिन में 'सूर्यश्च' और रात में 'अग्निश्च' और दोपहर में 'आपः पुनंतु' मन्त्रों को पढ़ते हुए आचमन करें। इसको मन्त्र आचमन कहा जाता है। छठवें बीज मन्त्र से शुद्धि करके प्रथम बीज मन्त्र पढ़े।।१४-१५।। तब उत्तम मूल मन्त्रों को वौषट् से अन्त करके पढ़े। तब वह अँगूठा सहित अँगुलियों से अंगन्यास करें।।१६।। तब वह हथेली, तर्जनी, अँगूठा, करतल और करपृष्ठ का न्यास करे। उसके बाद नवाक्षर मन्त्रों और अंग मन्त्रों से देह को पवित्र करे। 'मैं सूर्य हूँ' ऐसा विचार करते हुए तब वह गंध, चन्दन और सफेद सरसों

वामनासापुटेनैव देहे संभावयेच्छिवम्। अर्घ्यमादाय देहस्थं सव्यनासापुटेन च॥२०॥
कृष्णवर्णेन बाह्यस्थं भावयेच्च शिलागतम्। तर्पयेत्सर्वदेवेभ्य ऋषिभ्यश्च विशेषतः॥२१॥
भूतेभ्यश्च पितृभ्यश्च विधिनार्घ्यं च दापयेत्।
व्यापिनीं च परां ज्योत्स्नां संध्यां सम्यगुपासयेत्॥२२॥
प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने अर्घ्यं चैव निवेदयेत्। रक्तचंदनतोयेन हस्तमात्रेण मंडलम्॥२३॥
सुवृत्तं कल्पयेद्भूमौ प्रार्थयेत द्विजोत्तमाः। प्राङ्मुखस्ताम्रपात्रं च सगंधं प्रस्थपूरितम्॥२४॥
पूरयेद्गंधतोयेन रक्तचंदनकेन च। रक्तपुष्पैस्तिलैश्चैव कुशाक्षतसमन्वितैः॥२५॥
दूर्वापामार्गगव्येन केवलेन घृतेन च।
आपूर्य मूलमंत्रेण नवाक्षरमयेन च। जानुभ्यां धरणीं गत्वा देवदेवं नमस्य च॥२६॥
कृत्वा शिरसि तत्पात्रमर्घ्यं मूलेन दापयेत्। अश्वमेधायुतं कृत्वा यत्फलं परिकीर्तितम्॥२७॥
तत्फलं लभते दत्त्वा सौरार्घ्यं सर्वसंमतम्। दत्त्वैवार्घ्यं यजेद्भक्त्या देवदेवं त्रियंबकम्॥२८॥
अथवा भास्करं चेष्ट्वा आग्नेयं स्नानमाचरेत्। पूर्ववद्वै शिवस्नानं मंत्रमात्रेण भेदितम्॥२९॥
दंतधावनपूर्वं च स्नानं सौरं च शांकरम्। विघ्नेशं वरुणं चैव गुरुं तीर्थे समर्चयेत्॥३०॥
बद्ध्वा पद्मासनं तीर्थे तथा तीर्थं समर्चयेत्। तीर्थं संगृह्य विधिना पूजास्थानं प्रविश्य च॥३१॥
मार्गेणार्घ्यपवित्रेण तदाक्रम्य च पादुकम्। पूर्ववत्करविन्यासं देहविन्यासमाचरेत्॥३२॥

---

पड़े हुए जल को अपने बायें हाथ की हथेली में भरकर कुश के बंडल से यथाक्रम मंत्र पढ़ते हुए अपने शरीर पर जल छिड़कें 'आपो हिष्टा' मंत्र को आठ बार पढ़ते हुए वैसा करे। बचे हुए जल को नाक के बायें छेद से सूंघे। तब वह ऐसी धारणा करे कि शिव बाहर शिला पर काले रंग में विराजमान हैं। उसके बाद देवों और ऋषिओं का तर्पण करे।।१७-२१।। वह मण्डल में लाल चन्दन मिले हुए जल से अँजुली में भरकर सवेरे, दोपहर और सायंकाल अर्घ्य दे। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! वह पृथ्वी पर पूर्व की ओर एक गोल वृत्त खींचे और पूर्व की ओर मुख करके प्रार्थना करे। एक ताँबे के बर्तन में एक प्रस्थ सुगंधित जल, लाल चन्दन और सुगन्ध से लाल फूलों और तिलों, कुश और अक्षत से मिलाकर जल से भर दे।।२२।। इसमें गोमूत्र, दूब, अपामार्ग या केवल घी मिला दे। भक्त घुटनों के बल जमीन पर बैठ कर देवताओं को नमस्कार करे। उस वक्त अपने सिर पर रख कर देवताओं को नमस्कार करे। उस पात्र को अपने सिर पर रख कर मूल मन्त्र को पढ़ते हुए अर्घ्य दे। उस भक्त को दश अश्वमेघ यज्ञ करके प्राप्त होने वाला जो फल है उसके बराबर फल प्राप्त होगा। अर्घ्य देने के बाद देवताओं के देवता त्रिनेत्रधारी शिव की भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए।।२३-२८।। सूर्य की पूजा करने के बाद अपने शरीर पर भस्म लगानी चाहिए। पहले कहे हुए मन्त्र से भिन्न मन्त्र द्वारा पूर्ववत् स्नान करना चाहिए।।२९।। दातून करके सूर्य और शंकर स्नान करने के बाद भक्त गणेश वरुण और गुरु की पवित्र जल में पूजा करे। वह तीर्थ के किनारे पद्मासन में बैठे और तीर्थ की पूजा करे। वह एक पात्र में पवित्र जल ले ले और पूजा स्थल की ओर प्रवेश करे। वह पूजा स्थल में जाकर अपने पैर में खड़ाऊँ पहनकर अर्घ्य के जल से मार्ग को पवित्र करे।

अर्घ्यस्य सादनं चैव समासात्परिकीर्तितम्। बद्ध्वा पद्मासनं योगी प्राणायामं समभ्यसेत्॥३३॥
रक्तपुष्पाणि संगृह्य कमलाद्यानि भावयेत्। आत्मनो दक्षिणे स्थाप्य जलभांडं च वामतः॥३४॥
ताम्रपात्राणि सौराणि सर्वकामार्थसिद्धये। अर्घ्यपात्रं समादाय प्रक्षाल्य च यथाविधि॥३५॥
पूर्वोक्तेनांबुना सार्धं जलभांडे तथैव च। अस्त्रोदकेन चैवार्घ्यमर्घ्यद्रव्यसमन्वितम्॥३६॥
संहितामंत्रितं कृत्वा संपूज्य प्रथमेन च। तुरीयेणावगुंठ्यैव स्थापयेदात्मनोपरि॥३७॥
पाद्यमाचमनीयं च गंधपुष्पसमन्वितम्।
अंभसा शोधिते पात्रे स्थापयेत्पूर्ववत्पृथक्। संहितां चैव विन्यस्य कवचेनावगुंठ्य च॥३८॥
अर्घ्यांबुना समभ्युक्ष्य द्रव्याणि च विशेषतः। आदित्यं च जपेद्देवं सर्वदेवनमस्कृतम्॥३९॥
आदित्यो वै तेज ऊर्जो बलं यशो विवर्धति। इत्यादिना नमस्कृत्य कल्पयेदासनं प्रभोः॥४०॥
प्रभूतं विमलं सारमाराध्यं परमं सुखम्। आग्नेय्यादिषु कोणेषु मध्यमांतं हृदा न्यसेत्॥४१॥
अंगं प्रविन्यसेच्चैव बीजमंकुरमेव च। नालं सुषिरसंयुक्तं सूत्रकंटकसंयुतम्॥४२॥
दलं दलाग्रं सुश्वेतं हेमाभं रक्तमेव च। कर्णिकाकेसरोपेतं दीपाद्यैः शक्तिभिर्वृतम्॥४३॥
दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला क्रमात्। अघोरा विकृता चैव दीप्ताद्याश्चाष्टशक्तयः॥४४॥

---

वह पूर्ववत् करन्यास और अंगन्यास करे।।३०-३२।। इस प्रकार अर्घ्य की सामग्री और विधि संक्षेप में कही है। इसके बाद योगी पद्मासन में बैठे और प्राणायाम करे।।३३।। वह कमल तथा अन्य लाल फूलों को एकत्र करे और अपने दाहिनी ओर रखे। वह जल पात्र को अपने बायीं ओर रखे। ताँबे के पात्र सूर्य की पूजा के लिए पवित्र माने जाते हैं। वे सब कामनाओं की सिद्धिदायक है, इस अर्घ्य के पात्र को लेकर विधिपूर्वक माँज-धोकर रखना चाहिये। उसे बड़े बर्तन में जल को भर ले। अर्घ्य जल में अर्घ्य के लिए अपेक्षित सामग्री को डाल दे। अष्ट मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके रखे जल के साथ इस अर्घ्य पात्र को रख लेना चाहिये। यह संहिता मन्त्र से मन्त्रित करके और प्रथम बीज मन्त्र से युक्त हो। चतुर्थ बीज मन्त्र को पढ़ते हुए भक्त पात्र के मुख को ढक दे और वहाँ रख दे।।३४-३७।। जल से शोभित पात्र में पूर्ववत् पाद्य और आचमनीय (पैर धोने और आचमन करने के लिए) जल से शुद्ध किये हुए अलग-अलग पात्रों में रख देना चाहिए। पात्र और आचमनीय जल में सुगन्धित पुष्प पड़े हों। संहिता मन्त्रों से न्यस करके और कवच मन्त्र से इसको सम्पुट करके अर्घ्य जल के साथ पूजा की सामग्री को जल छिड़ककर सब देवताओं द्वारा नमस्कृत सूर्य देव का जप करना चाहिये।।३८-३९।। सूर्य देवता तेज, ऊर्जा, बल और यश को बढ़ाते हैं। इस मन्त्र को दोहराते हुए सूर्य की ओर उनको नमस्कार करके एकासन दे।।४०।। सूर्य को दिया गया आसन उत्तम हो, स्वच्छ हो, सुदृढ़ हो और सुखदायक तथा आराध्य देव के लिए सर्वथा उपयुक्त हो। अग्नि आदि कोणों में बीच की उँगली से हृदयन्यास करे और करन्यास, अंगन्यास करे।।४१।। कमल के भागों को (बीज अंकुर नाल आदि) काँटों सहित सूत्र सुषिर जो रंग में बहुत सफेद, सुनहरे, या लाल हो कर्णिका के केसर से युक्त हो। वह दीप्त हो और शक्ति से युक्त, दीपा और अन्य शक्तियों से घिरा हुआ हो।।४२-४३।। दीप्ता, सुषमा, जया, भद्रा, विभूति विमला, अघोरा और विकृता ये आठ शक्तियाँ

भास्कराभिमुखाः सर्वाः कृतांजलिपुटाः शुभाः।
अथवा पद्महस्ता वा सर्वाभरणभूषिताः॥४५॥

मध्यतो वरदां देवीं स्थापयेत्सर्वतोमुखीम्। आवाहयेत्ततो देवीं भास्करं परमेश्वरम्॥४६॥
नवाक्षरेण मंत्रेण बाष्कलोक्तेन भास्करम्। आवाहने च सान्निध्यमनेनैव विधीयते॥४७॥
मुद्रा च पद्ममुद्राख्या भास्करस्य महात्मनः। मूलेनार्घ्यं ततो दद्यात्पाद्यमाचमनं पृथक्॥४८॥
पुनरर्घ्यप्रदानेन बाष्कलेन यथाविधि। रक्तपद्मानि पुष्पाणि रक्तचंदनमेव च॥४९॥
दीपधूपादिनैवेद्यं मुखवासादिरेव च। तांबूलवर्तिदीपाद्यं बाष्कलेन विधीयते॥५०॥
आग्नेय्यां च तथैशान्यां नैर्ऋत्यं वायुगोचरे। पूर्वस्यां पश्चिमे चैव षट्प्रकारं विधीयते॥५१॥
नेत्रांतं विधिनाऽभ्यर्च्य प्रणवादिनमोंतकम्। कर्णिकायां प्रविन्यस्य रूपकध्यानमचारेत्॥५२॥
सर्वे विद्युत्प्रभाः शांता रौद्रमस्त्रं प्रकीर्तितम्। दंष्ट्राकरालवदनं ह्यष्टमूर्तिं भयंकरम्॥५३॥
वरदं दक्षिणं हस्तं वामं पद्मविभूषितम्। सर्वाभरणसंपन्ना रक्तस्त्रगनुलेपनाः॥५४॥
रक्तांबरधराः सर्वा मूर्तयस्तस्य संस्थिताः। समंडलो महादेवः सिंदूरारुणविग्रहः॥५५॥
पद्महस्तोऽमृतास्यश्च द्विहस्तनयनः प्रभुः। रक्ताभरणसंयुक्तो रक्तस्त्रगनुलेपनः॥५६॥
इत्थंरूपधरं ध्यायेद्भास्करं भुवनेश्वरम्। पद्मबाह्ये शुभं चात्र मंडलेषु समंततः॥५७॥

---

होती हैं।।४४।। हाथ जोड़े हुए ये सब शक्तियाँ सूर्य की ओर मुख किये हों अथवा हाथ में कमल लिए सब आभूषणों से विभूषित हों।।४५।। वर देने वाली सर्वतोमुखी देवी को मध्य में स्थापित करे। उसके बाद परमेश्वर भास्कर को तथा देवी का आवाहन करे।।४६।। नवाक्षर मन्त्र (बाष्कल के रूप में कथित) को दोहराते हुए सूर्य का आह्वान करे। केवल इसी मन्त्र के द्वारा आह्वान और सान्निध्य होता है।।४७।। महान् आत्मा शिव की मुद्रा पद्म मुद्रा कहलाती है। उसके बाद अर्घ्य, पाद्य और आचमन मूल मन्त्र को पढ़ते हुए देना चाहिये।।४८।। भास्कर मन्त्र को पढ़ते हुए पुनः अर्घ्य यथाविधि द्वारा देना चाहिये। लाल फूलों और लाल चन्दन भी भेंट किया जाय। दीप, धूप, नैवेद्य, मुखवास, ताम्बूल, बत्ती का दीपक आदि वाष्कल (भास्कर) मन्त्र को पढ़ते हुए दी जाय। अग्नि कोण, ईशान कोण, नैऋत्य, वायव्य कोण पूर्व और पश्चिम ये छः ओर धूप दीप आदि किया जाय।।४९-५०।। प्रणव (ओम्) लगाकर और नमः अन्त में बोलकर मन्त्रों को पढ़ते हुए अंगन्यास और करन्यास करके और कर्णिका में (आँख, पुतली में) सूर्य के रूप का ध्यान करे।।५१-५२।। सब मूर्तियाँ विद्युत की प्रभा वाली और शान्त हैं। सब मूर्ति भयंकर हैं यह टेढ़े दाँतों वाली अतः भयंकर मुख वाली हैं।।५३।। दाहिना हाथ वरदान देने का प्रतीक दिखलाता है। बाएँ हाथ कमल से सुशोभित हैं। सब मूर्तियाँ सब प्रकार के आभूषणों से सजी हुई लाल मालाएँ और लाल वस्त्र पहने हुए और अपने शरीर पर लाल चन्दन लपेटे हुए हैं। इस प्रकार रूप धारण किये हुए भुवनेश्वर सूर्य का ध्यान करना चाहिये। महादेव अपने अनुचरों की मण्डली के साथ हैं। उनका शरीर सिन्दूर के समान रंग में है। वह अपने हाथ में कमल लिए हुये हैं। उनके मुख से अमृत निकल रहा है। उनके दो हाथ और दो नेत्र हैं। वे लाल आभूषण को धारण किये हैं। वे लाल मालाएँ पहने हैं

सोममंगारकं चैव बुधं बुद्धिमतांवरम्। बृहस्पतिं महाबुद्धिं रुद्रपुत्रं च भार्गवम्॥५८॥
शनैश्चरं तथा राहुं केतुं धूम्रं प्रकीर्तितम्। सर्वे द्विनेत्रा द्विभुजा राहुश्चोर्ध्वशरीरधृक्॥५९॥
विवृत्तास्योंजलिं कृत्वा भ्रुकुटीकुटिलेक्षणः। शनैश्चरश्च दंष्ट्रास्यो वरदाभयहस्तधृक्॥६०॥
स्वैःस्वैर्भावैः स्वनाम्ना च प्रणवादिनमोंतकम्। पूजनीयाः प्रयत्नेन धर्मकामार्थसिद्धये॥६१॥
सप्तसप्तगणांश्चैव बहिर्देवस्य पूजयेत्। ऋषयो देवगंधर्वाः पन्नगाप्सरसां गणाः॥६२॥
ग्रामण्यो यातुधानाश्च तथा यक्षाश्च मुख्यतः।
सप्ताश्वान् पूजयेदग्रे सप्तच्छंदोमयान् विभोः॥६३॥
वालखिल्यगणं चैव निर्माल्यग्रहणं विभोः। पूजयेदासनं मूर्तेर्देवतामपि पूजयेत्॥६४॥
अर्घ्यं च दापयेत्तेषां पृथगेव विधानतः। आवाहने च पूजांते तेषामुद्वासने तथा॥६५॥
सहस्रं वा तदर्धं वा शतमष्टोत्तरं तु वा। बाष्कलं च जपेदग्रे दशांशेन च योजयेत्॥६६॥
कुंडं च पश्चिमे कुर्याद्वर्तुलं चैव मेखलम्। चतुरंगुलमानेन चोत्सेधाद्विस्तरादपि॥६७॥
एकहस्तप्रमाणेन नित्ये नैमित्तिके तथा। कृत्वाश्वत्थदलाकारं नाभिं कुंडे दशांगुलम्॥६८॥
तदर्धेन पुरस्तात्तु गजोष्ठसदृशं स्मृतम्। गलमेकांगुलं चैव शेषं द्विगुणविस्तरम्॥६९॥
तत्प्रमाणेन कुंडस्य त्यक्त्वा कुर्वीत मेखलाम्। यत्नेन साधयित्वैव पश्चाद्धोमं च कारयेत्॥७०॥

---

और लाल चन्दन लगाए हैं।।५४-५६।। लोकों के स्वामी सूर्य का ध्यान इस रूप में करें। मण्डल में कमल के बाहर की ओर वह चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु के साथ विराजमान हैं। इन सबके दो नेत्र और दो हाथ हैं किन्तु राहु केवल शरीर के ऊपरी भाग धड़ को धारण किए है। उसका चेहरा गोला है। मुँह खुला हुआ है। अँजुली बाँधे हुये है। शनिश्चर दृष्टि वाले के मुख में वक्र दन्तावली है। टेढ़ी भृकुटि और कुटिल दृष्टि वाले शनिदेव के हाथ भय से मुक्त और वरदान देने का संकेत करते हैं। धर्म, काम और अर्थ की सिद्धि के लिए इनके स्वभाव उनके नामों के अनुसार ओम् आदि में नमः अन्त में लगाकर यत्नपूर्वक उनकी पूजा की जानी चाहिये। उनकी पूजा उनके स्वभाव के अनुसार की जाय।।५७-६१।। भक्त को मण्डल के बाहर गणों के सात समूह (गणों), मुनियों, देवताओं, गन्धर्वों, सर्पों, अप्सराओं, ग्रामणियों, यातुधानों और प्रधान यक्षों की पूजा करनी चाहिए। भक्त को वेद के सात छन्दों द्वारा सूर्य के सात घोड़ों की पूजा करनी चाहिए।।६२-६३।। बालखिल्य गण की पूजा की जाय। तब विभु का निर्माल्य ग्रहण करे। उसके बाद मूर्ति के आसन को और देवता की भी पूजा करे।।६४।। देवताओं के आह्वान, पूजा के अन्त में धार्मिक कृत्य के विसर्जन के समय विधान के अनुसार उनको अर्घ्य दिया जाना चाहिए।।६५।। तत्पश्चात् भास्कर मन्त्रों का हजार बार जप करे या पाँच सौ बार या एक सौ आठ बार। उसके बाद जप की संख्या का दसवाँ भाग से हवन करे।।६६।। गोलाकार हवन कुंड पश्चिम दिशा में खोदना चाहिए। उसके चारों ओर मेखला भी हो। कुंड की लम्बाई और चौड़ाई चार अंगुल हो।।६७।। नित्य और नैमित्तिक कृत्यों में कुंड का बाहरी ढाई मीटर एक हाथ विस्तार में हो। कुंड में पीपल के पत्ते के आकार की दश अंगुल की नाभि करे।।६८।। गला की लम्बाई पाँच अंगुल और चौड़ाई एक अंगुल हो।

षष्ठेनोल्लेखनं कुर्यात्प्रोक्षयेद्वारिणा पुनः। आसनं कल्पयेन्मध्ये प्रथमेन समाहितः॥७१॥
प्रभावतीं ततः शक्तिमाद्येनैव तु विन्यसेत्। बाष्कलेनैव संपूज्य गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥७२॥
बाष्कलेनैव मंत्रेण क्रियां प्रति यजेत्पृथक्। मूलमंत्रेण विधिना पश्चात्पूर्णाहुतिर्भवेत्॥७३॥
क्रमादेवं विधानेन सूर्याग्निर्जनितो भवेत्। पूर्वोक्तेन विधानेन प्रागुक्तं कमलं न्यसेत्॥७४॥
मुखोपरि समभ्यर्च्य पूर्ववद्भास्करं प्रभुम्। दशैवाहुतयो देया बाष्कलेन महामुने॥७५॥
अंगानां च तथैकैकं संहिताभिः पृथक्पुनः। जयादिस्विष्टपर्यंतमिध्मप्रक्षेपमेव च॥७६॥
सामान्यं सर्वमार्गेषु पारंपर्यक्रमेण च। निवेद्य देवदेवाय भास्करायामितात्मने॥७७॥
पूजाहोमादिकं सर्वं दत्त्वार्घ्यं च प्रदक्षिणम्। अंगैः संपूज्य संक्षिप्य हृद्युद्वास्य नमस्य च॥७८॥
शिवपूजां ततः कुर्याद्धर्मकामार्थसिद्धये। एवं संक्षेपतः प्रोक्तं यजनं भास्करस्य च॥७९॥
यः सकृद्वा यजेद्देवं देवदेवं जगद्गुरुम्। भास्करं परमात्मानं स याति परमां गतिम्॥८०॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वपापविवर्जितः। सर्वैश्वर्यसमोपेतस्तेजसाप्रतिमश्च सः॥८१॥
पुत्रपौत्रादिमित्रैश्च बांधवैश्च समंततः।
भुक्त्वैव विपुलान् भोगानिहैव धनधान्यवान्॥८२॥

---

यह हाथी के ओठ के आकार का हो। शेष भाग चौड़ाई में दो अंगुल हो।।६९।। कुंड की मेखला (बाहरी घेरा) दो अंगुल का हाशिया (मार्जिन) छोड़कर बनाया जाय। यह सब यत्नपूर्वक पूरा करके उसके बाद हवन करना चाहिये।।७०।। भक्त को उल्लेख कृत्य पूरा करना चाहिये। छठवाँ बीज मन्त्र पढ़ते हुए इसको जल से छिड़कना (सीचना) चाहिये। एकाग्रचित्त होकर प्रथम बीज मन्त्र पढ़ते हुए मध्य में आसन देना चाहिये।।७१-७२।। उसके बाद प्रथम बीज मन्त्र को पढ़ते हुऐ प्रभावती नामक शक्ति का न्यास करना चाहिये। उसके बाद बाष्कल (भास्कर) मन्त्र को पढ़ते हुए गंध, पुष्प आदि से पूजा करके फिर भास्कर मन्त्र को पढ़ते हुए क्रिया यज्ञ को पूरा करे। उसके बाद केवल मूल मन्त्र से पूर्णाहुति करे।।७३-७४।। इस प्रकार विधि विधान के क्रम से होमादि करने के बाद सूर्याग्नि उत्पादित हो। भक्त न्यास करके पूर्वोक्त (पहले कही गई) विधान से पूर्वोक्त विधि से कमल को स्थापित करे। मुख के ऊपर सूर्य की पूर्ववत् पूजा करने के बाद भास्कर मन्त्रों से दस आहुति दी जाय।।७५-७६।। सब होमों में 'जया' होम से प्रारम्भ करते हुए तथा 'स्विष्ट' होम पर्यन्त प्रत्येक के लिए अलग अंगन्यास संहिता मन्त्रों द्वारा करे। पूजा करने वालों के सब सम्प्रदायों 'मार्गों' के लिए परम्परा के रूप में अर्घ्य देना सामान्य नियम है। अमित आत्मा देवों के स्वामी भगवान सूर्य को अन्त में नैवेद्य (भोजन) देना चाहिए। पूज, होम, अर्घ्य, अंगों की पूजा, विसर्जन और नमस्कार ये सब करने के बाद धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि के लिए शिव की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार सूर्य देव की पूजा विधि संक्षेप में कही गयी है।।७७-७९।। वह जो कि एक बार भी पूजा करता है वह परमगति (मुक्ति) को प्राप्त करता है।।८०।। वह पापों से मुक्त हो जाता है, सब पापों से रहित होता है, वह सब ऐश्वर्य से युक्त होता है, वह अनुपम तेजस्वी होता है। वह इस संसार में अपने पुत्रों, पौत्रों और प्रपौत्रों और बान्धवों सहित विपुल भोगों को भोग करता है। वह धनवान, धान्यवान होता है।।८१-८२।। यान

यानवाहनसंपन्नो भूषणैर्विविधैरपि। कालं गतोपि सूर्येण मोदते कालमक्षयम्॥८३॥
पुनस्तस्मादिहागत्य राजा भवति धार्मिकः। वेदवेदांगसम्पन्नो ब्राह्मणो वात्र जायते॥८४॥
पुनः प्राग्वासनायोगाद्धार्मिको वेदपारगः। सूर्यमेव समभ्यर्च्य सूर्यसायुज्यमाप्नुयात्॥८५॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्वाविंशतितमोऽध्याय॥२२॥**

---

और वाहन से और अनेक प्रकार के आभूषणों से युक्त होगा। वह मरने पर सूर्य के साथ अक्षय काल तक वास करेगा।।८३।। फिर वह इस लोक में जन्म लेकर धर्मिक राजा होगा। वह वेदों और वेदांगों से सम्पन्न ब्राह्मण का जन्म पायेगा। वह अपने पूर्व जन्म के वासना के योग से धार्मिक और वेदों का महान् विद्वान होगा। सूर्य देव की पूजा करके वह सूर्य का सायुज्य प्राप्त करेगा।।८४-८५।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तत्त्वों का समर्पण**
**नामक बाईसवाँ अध्याय समाप्त॥२२॥**

त्रयोविंशतितमोऽध्यायः

# शिवस्य पूजाविधिः

शैलादिरुवाच

अथ ते संप्रवक्ष्यामि शिवार्चनमनुत्तमम्। त्रिसंध्यमर्चयेदीशमग्निकार्यं च शक्तितः॥१॥
शिवस्नानं पुरा कृत्वा तत्त्वशुद्धिं च पूर्ववत्। पुष्पहस्तः प्रविश्याथ पूजास्थानं समाहितः॥२॥
प्राणायामत्रयं कृत्वा दाहनाप्लावनानि च। गंधादिवासितकरो महामुद्रां प्रविन्यसेत्॥३॥
विज्ञानेन तनुं कृत्वा ब्रह्माग्नेरपि यत्नतः। अव्यक्तबुद्ध्यहंकारतन्मात्रासंभवां तनुम्॥४॥
शिवामृतेन संपूतं शिवस्य च यथातथम्। अधोनिष्ठ्या वितस्त्यां तु नाभ्यामुपरि तिष्ठति॥५॥
हृदयं तद्विजानीयाद्विश्वस्यायतनं महत्। हृत्पद्मकर्णिकायां तु देवं साक्षात्सदाशिवम्॥६॥
पंचवक्त्रं दशभुजं सर्वाभरणभूषितम्। प्रतिवक्त्रं त्रिनेत्रं च शशांककृतशेखरम्॥७॥
बद्धपद्मासनासीनं शुद्धस्फटिकसन्निभम्। ऊर्ध्वं वक्त्रं सितं ध्यायेत्पूर्वं कुंकुमसन्निभम्॥८॥
नीलाभं दक्षिणं वक्त्रमतिरक्तं तथोत्तरम्। गोक्षीरधवलं दिव्यं पश्चिमं परमेष्ठिनः॥९॥
शूलं परशुखड्गं च वज्रं शक्तिं च दक्षिणे। वामे पाशांकुशं घंटां नागं नाराचमुत्तमम्॥१०॥

---

## तेईसवाँ अध्याय

# शिव की पूजा की विधि

शैलादि बोले

अब आगे मैं शिव की अनुपम पूजा विधि (शिवार्चन) को कहता हूँ। अपनी शक्ति के अनुसार त्रिकाल संध्या और अग्नि कार्य करके ईश शिव की पूजा करनी चाहिए।।१।। भक्त शिव स्नान को और तत्त्व सिद्धि को करे। वह एकाग्रचित्त और शुद्ध मन से हाथ में फूलों को लेकर पूजा स्थल में प्रवेश करे। वह तीन बार प्राणायाम करे और दाहन और आप्लावन कृत्य करे। गन्ध से सुगन्धित हाथ से वह महामुद्रा का न्यास कृत्य पूरा करे।।२-३।। ब्रह्म अग्नि, शिव ज्ञान और तन्मात्रा से उत्पन्न अपने शरीर अव्यक्त, बुद्धि, अहंकार और तन्मात्रा से उत्पन्न अपने शरीर को पूर्ण ज्ञान द्वारा शुद्ध करे। नाभि के नीचे बारह अंगुल पर स्थित है, यह विश्व का महान् आयतन है। भक्त इसको बड़ा निवास के रूप में पहचाने, वह हृदय कमल में स्थित सदाशिव का निम्नलिखित रूप में ध्यान करे। उनके पाँच मुख, दस भुजाएँ, प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं। वे सब आभूषणों से युक्त हैं। उनके मस्तक पर अर्धचन्द्र विराजमान है, वे कमलासन पर पद्मासन बाँधकर बैठे हैं। वे शुद्ध स्फटिक के समान हैं उनका ऊपरी मुख श्वेत है। वह कुमकुम के समान है और पूर्वामुख नीलाभ है।।४-८।। दाहिना मुख नीले रंग का है, उनका मुख बहुत लाल है और पश्चिम मुख गाय के दूध के समान सफेद है।।९।। उनके दाहिने त्रिशूल, फरसा, ब्रज

वरदाभयहस्तं वा शेषं पूर्ववदेव तु। सर्वाभरणसंयुक्तं चित्रांबरधरं शिवम्॥११॥
ब्रह्मांगविग्रहं देवं सर्वदेवोत्तमोत्तमम्। पूजयेत्सर्वभावेन ब्रह्मांगैर्ब्रह्मणः पतिम्॥१२॥
उक्तानि पंच ब्रह्माणि शिवांगानि शृणुष्व मे। शक्ति भूतानि च तथा हृदयादीनि सुव्रत॥१३॥

ॐ ईशानः सर्वविद्यानां हृदयाय शक्तिबीजाय नमः।
ॐ ईश्वरः सर्वभूतानाममृताय शिरसे नमः॥१४॥
ॐ ब्रह्माधिपतये कालाग्निरूपाय शिखायै नमः।
ॐ ब्रह्मणोधिपतये कालचंडमारुताय कवचाय नमः॥१५॥
ॐ ब्रह्मणे बृंहणाय ज्ञानमूर्तये नेत्राय नमः।
ॐ शिवाय सदाशिवाय पाशुपतास्त्राय अप्रतिहताय फट्फट्॥१६॥

ॐ सद्योजाताय भवेभवेनातिभवे भवस्य मां भवोद्भवाय शिवमूर्तये नमः।
ॐ हंसशिखाय विद्यादेहाय आत्मस्वरूपाय परापराय शिवाय शिवतमाय नमः॥१७॥
कथितानि शिवांगानि मूर्तिविद्या च तस्य वै। ब्रह्मांगमूर्तिं विद्यांगसहितां शिवशासने॥१८॥
सौराणि च प्रवक्ष्यामि बाष्कलाद्यानि सुव्रत। अंगानि सर्ववेदेषु सारभूतानि सुव्रत॥१९॥
ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म।

---

और शक्ति है। बाँए हाथ में पाश, अंकुश, घण्टा और बाण है। उनके हाथ भय से मुक्त और वर देने का संकेत करते हैं। शेष पूर्ववत् है। वह विविध प्रकार के आभूषणों को धारण किये हुए हैं। विविध रंग की पोशाक को पहने हुए हैं। वह भक्त उस शिव की पूजा करे जिसका रूप वेदांग है, वह सब उत्तम देवों में उत्तम हैं जो ब्रह्मा के भी स्वामी हैं। ऐसे शिव की सब भाव से पूजा करनी चाहिए।।१०-१२।। पंच ब्रह्म को मैंने पहले ही कहा था। अब शिवांगों को मुझसे सुनिए। हृदय आदि को भी सुनो जो कि शक्तियाँ हैं।। ओम् सब विद्याओं का स्वामी ईशान है। शक्ति बीज को नमस्कार, सब प्राणियों का स्वामी ओम् ईश्वर है उनको नमस्कार। अमृत को धारण किये हुए, ब्रह्मा के अधिपति कालाग्नि रूप शिखा के लिए नमस्कार, ओम् कवच ब्रह्मा के अधिपति के लिए नमस्कार, काल वायु के लिए नमस्कार, ओम् नेत्र को नमस्कार, ब्रह्मा को नमस्कार, बृहण ज्ञान मूर्ति नेत्र के लिए नमस्कार, ओम् शिव, सदाशिव, पाशुपत अस्त्रधारी, अप्रतिहत के लिए फट्-फट्। सद्योजात ओम् भव, भवेन, अतिभव मुझको भवोद्भव शिवमूर्त्ति को नमस्कार, हंसशिख को, विद्या देह को नमस्कार। आत्मास्वरूप पर, अपर शिव, शिवतम के लिए नमस्कार, जब मुझपर कोई सांसारिक आक्रमण हो तो मेरी रक्षा करो। शिव के उस रूप को नमस्कार जो पूर्ण सृष्टि के उत्पत्ति का स्रोत है। शिव के अंगों का वर्णन मैंने किया। उनकी मूर्ति विद्या जो कि वेदों के अंग हैं, वह भी शिव के शासन में है। हे सुव्रत! बाष्कल आदि सम्बन्धित मन्त्रों को कहूँगा। अंगों को जो सब वेदों के सार रूप हैं। ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म। इस नवाक्षर मन्त्र को बाष्कल कहते हैं। यह अक्षर कहा जाता है क्योंकि जगत में यह नष्ट नहीं होता। सत्यम् को अक्षर कहा गया है। इसके पहिले प्रणव (ॐ) लगता है। (ॐ सत्यम्) और अन्त में नमः लगता

नवाक्षरमयं मंत्रं बाष्कलं परिकीर्तितम्।
न क्षरतीति लोकेऽस्मिंस्ततो ह्यक्षरमुच्यते। सत्यमक्षरमित्युक्तं प्रणवादिनमोंतकम्॥२०॥
ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि॥
धियो यो नः प्रयोदयात्। नमः सूर्याय खखोल्काय नमः॥२१॥
मूलमंत्रमिति प्रोक्तं भास्करस्य महात्मनः। नवाक्षरेण दीप्ताद्या मूलमंत्रेण भास्करम्॥२२॥
पूजयेदंगमंत्राणि कथयामि समासतः। वेदादिभिः प्रभूताद्यं प्रणवेन तु मध्यमम्॥२३॥
ॐ महः महेश्वराय कवचाय नमः। ॐ भुवः विष्णवे शिरसे नमः॥
ॐ स्वः रुद्राय शिखायै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः
ज्वालामालिन्यै देवाय नमः ॐ महः महेश्वराय कवचाय नमः।
ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यो नमः। ॐ तपस्तापनाय अस्त्राय नमः॥
एवं प्रसंगादेवेह सौराणि कथितानि ह। शैवानि च समासेन न्यासयोगेन सुव्रत॥२४॥
इत्थं मंत्रमयं देवं पूजयेद्धृदयांबुजे। नाभौ होमं तु कर्तव्यं जनयित्वा यथाक्रमम्॥२५॥
मनसा सर्वकार्याणि शिवाग्नौ देवमीश्वरम्। पंचब्रह्मांगसंभूतं शिवमूर्तिं सदाशिवम्॥२६॥
रक्तपद्मासनासीनं सकलीकृत्य यत्नतः। मूलेन मूर्तिमंत्रेण ब्रह्मांगाद्यैस्तु सुव्रत॥२७॥
समिदाज्याहुतीर्हुत्वा मनसा चंद्रमंडलात्। चंद्रस्थानात्समुत्पन्नां पूर्णधारामनुस्मरेत्॥२८॥

---

है। ॐ सत्यम् नमः।।१३-२०।। ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। हम सूर्य के उस उत्तम तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को (सन्मार्ग की ओर जाने को) प्रेरित करे। आकाश में महत्तम ग्रह सूर्य को नमस्कार।।२१।। इस प्रकार महान् आत्मा भास्कर के मूल मन्त्र को मैंने कहा। भक्त मूल मन्त्र के साथ नवाक्षर मन्त्र सहित दीप्ता आदि तथा अन्य शक्तियों की पूजा नवाक्षर मंत्रों से और सूर्य की पूजा मूल मंत्रों से करे। अब मैं संक्षेप में अङ्ग मन्त्रों को कहता हूँ। उनमें का प्रथम अधिकांश वैदिक मन्त्रों से आवृत है और मध्यम (बीच का) प्रणव से युक्त है। ॐ भूः नमः हृदय को, ब्रह्मा को, ॐ भुवः नमः शिर को, विष्णु को ॐ स्वः नमः शिखा को, रुद्र को, ॐ भूर्भुवः स्वः नमः ज्वालामाला को, ॐ महः कवच को, महेश्वर को, ॐ जनः नमः नेत्रों को, शिव को, ॐ तपः नमः तापन को, अस्त्र को। इस प्रकार प्रसंग वश यहाँ सूर्य से सम्बन्धित मन्त्रों को मैंने बताया। हे सुव्रत! शिव के सम्बन्धित न्यास विधि के संक्षेप में वर्णन किया गया है।।२२-२४।। इस प्रकार हृदय कमल में स्थित सूर्य देव की मन्त्रों से पूजा करे। यथाक्रम मन से शिवाग्नि में होम करना चाहिये। सब पवित्र कृत्य शिवाग्नि से पूर्ण किया जाय। शिव का ध्यान करें। वह पंच ब्रह्म के अंगों से उत्पन्न लाल कमल शिव की मूर्ति विराजमान है। वह सकल के रूप में परिवर्तित है। हे सुव्रत! मूल मन्त्रों और वेदांग मन्त्रों से मूर्ति पर ध्यान केन्द्रित किया जाय।। समिधा और घी से मनसा होम किया जाय। तब भक्त चन्द्र मण्डल से चन्द्र स्थल उत्पन्न पूर्णधारा (अमृत धारा) का स्मरण करे। शिवासन में पूर्णाहुति के बाद शिव को प्राण रक्षक के रूप में मानकर शिव शंकर का ध्यान करे। उसके बाद वह ललाट में या भौंहों के बीच में भक्त पुनः

पूर्णाहुतिविधानेन ज्ञानिनां शिवशासने। शिवं वक्त्रगतं ध्यायेत्तेजोमात्रं च शांकरम्॥२९॥
ललाटे देवदेवेशं भ्रूमध्ये वा स्मरेत्पुनः। यच्च हृत्कमले सर्वं समाप्य विधिविस्तरम्॥३०॥
शुद्धदीपशिखाकारं भावयेद्भवनाशनम्। लिंगे च पूजयेद्देवं स्थंडिले वा सदाशिवम्॥३१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रयोविंशतितमोऽध्यायः॥२३॥**

---

शिव का ध्यान करे। इस प्रकार हृदय कमल में विधिपूर्वक विस्तृत पूजा को समाप्त करके शुद्ध दीप की शिखा के आकार (रूप) जगत् के संहर्त्ता शिव का ध्यान करे। वह लिंग पर या भूमि पर शिव की पूजा करे।।२५-३१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा की विधि नामक तेईसवाँ अध्याय समाप्त॥२३॥**

## चतुर्विंशोऽध्यायः

# शिवस्य पूजाविधिः

शैलादिरुवाच

व्याख्यां पूजाविधानस्य प्रवदामि समासतः।
शिवशास्त्रोक्तमार्गेण शिवेन कथितं पुरा॥१॥
अथोभौ चंदनचर्चितौ हस्तौ वौषडंतेनाद्यंजलिं कृत्वा
मूर्तिविद्याशिवादीनि जप्त्वा अंगुष्ठादिकनिष्ठिकांत ईशानाद्यं
कनिष्ठिकादिमध्यमांतं हृदयादितृतीयांतं तुरीयमंगुष्ठेनानामिकया
पंचमं तलद्वयेन षष्ठं तर्जन्यंगुष्ठाभ्यां नाराचास्त्रप्रयोगेण
पुनरपि मूलं जप्त्वा तुरीयेनावगुंठ्य शिवहस्तमित्युच्यते॥२॥
शिवार्चना तेन हस्तेन कार्या॥३॥
तत्त्वगतमात्मानं व्यवस्थाप्य तत्त्वशुद्धिं पूर्ववत्॥४॥
क्ष्माम्भोग्निवायुव्योमांतं पंचचतुः शुद्धकोट्यंते।
धारासहितेन व्यवस्थाप्य तत्त्वशुद्धिं पूर्वं कुर्यात्॥५॥

---

## चौबीसवाँ अध्याय

# शिव की पूजा की विधि

**शैलादि बोले**

शिव द्वारा पहिले कही गई और शिवसंहिता में वर्णन की गई शिव की पूजा की विधि को संक्षिप्त में कहता हूँ।।१।। दोनों हाथ घिसे हुए चन्दन के लेप से चुपड़े हों। वौषट् से अन्त होने वाले मन्त्र से पुष्पों से भरी अंजलि से भेंट क्रिया को करे। वह मूर्तिविद्या और शिव के मन्त्रों को जपे। अँगूठे से लेकर कनिष्ठका अँगुली तक जपे। ईशान आदि अन्य मूर्तियों को कनिष्ठा से प्रारम्भ करके मध्यमा अँगुली से कहते हुए इनके द्वारा हृदय आदि को स्थापित करे। चौथी अँगुली को अँगूठे के साथ लगाकर और कनिष्ठिका से मध्यमा अँगुली लगावे। दोनों हाथों की हथेलियाँ छठवीं को खड़ी करे। तर्जनी और अँगूठा से नाराच अस्त्र का प्रयोग करे। तब वह फिर मूल मन्त्र का जप करे और चतुर्थ बीज से प्रत्येक वस्तु को ढक दे। इसको शिवहस्त (शिव का हाथ) कहते हैं।।२।। इसी शिवहस्त से शिव की पूजा की जानी चाहिये। भक्त तत्त्वों में आत्मा को स्थापित करके तत्त्वों की पूर्ववत् शुद्धि करे। इस प्रकार भूमि, जल, वायु, अग्नि और आकाश इन पाँच तत्त्व की स्थापना के बाद अहंकार, बुद्धि, प्रकृति और ब्रह्म पाँच तत्त्व में केवल ब्रह्म धारा के साथ शुद्ध हैं। भक्त तत्त्वों की शुद्धि पूर्व कथित विधि से करे। भूमि तत्त्व की शुद्धि सद्य से तथा तृतीय बीज मन्त्र से होती है। जिसके अन्त में फट् लगे। वारि तत्त्व

तत्त्वशुद्धिः षष्ठेन सद्येन तृतीयेन फडंताद्धराशुद्धिः॥६॥
षष्ठसहितेन सद्येन तृतीयेन फडन्तेन वारितत्त्वशुद्धिः॥७॥
वाह्नेयतृतीयेन फडंतेनाग्निशुद्धिः॥८॥
वायव्यचतुर्थेन षष्ठसहितेन फडंतेन वायुशुद्धिः॥९॥
षष्ठेन ससद्येन तृतीयेन फडंतेनाकाशशुद्धिः॥१०॥
उपसंहृत्यैवं सद्यषष्ठेन तृतीयेन मूलेन फडंतेन ताडनं तृतीयेन
संपुटीकृत्य ग्रहणं मूलमेव योनिबीजेन संपुटीकृत्वा बंधनं बंधः॥११॥
एवं क्षांतातीतादिनिवृत्तिपर्यंतं पूर्ववत्कुत्वा प्रणवेन तत्त्वत्रयकमनुध्याय आत्मानं दीपशिखाकारं पुर्यष्टकसहितं त्रयातीतं शक्तिक्षोभेणामृतधारां सुषुम्णायां ध्यात्वा॥१२॥
शांत्यतीतादिनिवृत्तिपर्यंतानां चांतर्नादबिंद्वकारोकारमकारांतं शिवं सदाशिवं रुद्रविष्णुब्रह्मांतं सृष्टिक्रमेणामृतीकरणं ब्रह्मन्यासं कृत्वा पंचवक्त्रेषु पंचदशनयनं विन्यस्य मूलेन पादादिकेशांतं महामुद्रामपि बद्धवा शिवोहमिति ध्यात्वा शक्त्यादीनि विन्यस्य हृदि शक्त्याबीजांकुरानंतरात्ससुषिरसूत्रकंटकपत्रकेसरधर्मज्ञान-वैराग्यैश्वर्यसूर्यसोमाग्निवामाज्येष्ठारौद्रीकालीकलविकरणीबलविकरणीबल-प्रथमनीसर्वभूतदमनीः केसरेषु कर्णिकायां मनोन्मनीमपि ध्यात्वा॥१३॥

---

की शुद्धि सद्य और छठवें बीज मन्त्र के साथ फट् को अन्त में लगाकर होती है। अग्नि तत्त्व की शुद्धि तृतीय बीज मन्त्र अग्नि से सम्बन्धित और फट् अन्त में लगाकर होती है। वायु तत्त्व की शुद्धि चतुर्थ बीज मन्त्र वायु से सम्बन्धित, छठवें बीज मन्त्र के साथ और अन्त में फट् शब्द से होती है। आकाश तत्त्व की शुद्धि सद्य के साथ छठवें बीज मन्त्र और तृतीय बीज मन्त्र से फट् शब्द अन्त में लगने से होती है।।३-१०।। यह सब करने के बाद ताडन कृत्य को छठवें बीज मन्त्र सद्य के साथ, तृतीय बीज मन्त्र और मूल मन्त्र फट् शब्द के अन्त लगने से होती है। ग्रहण कृत्य तृतीय बीज मन्त्र सम्पुटीकरण बीज मन्त्र द्वारा होता है। बन्धन कृत्य योनि बीज द्वारा मूल मन्त्र से सम्पुटीकरण होता है।।११।। इसके बाद एक के बाद दूसरे निम्नलिखित कृत्य किये जाते हैं। कलाएँ शान्त्यतीत आदि और निवृत्ति से अन्त होने वाली को पूर्ववत् करके, प्रणव के द्वारा तीन तत्त्वों का ध्यान करे। आठ पुरियों के साथ आत्मा का दीपशिखा के आकार तीनों से बाहर स्थित रूप में ध्यान करना चाहिए। सुषुम्ना में शक्ति के छोर से अमृत धारा बहती है।।१२।। शान्त्यतीत निवृत्ति पर्यन्त, नाद, बिन्दु, अकार, उकार, मकार (अ उ म) शिव, सदाशिव, त्रिमूर्ति, रुद्र, विष्णु और ब्रह्मा का सृष्टि क्रम में ध्यान किया जाय। इस कृत्य को ब्रह्मन्यास कहते हैं जो अमृतीकरण सृष्टि के क्रम है। तब पाँच मुख और पन्द्रह नेत्र वाले शिव को स्थापित करके मूल मन्त्र को दोहराते हुए पाद आदि केश अन्त महामुद्रा को बाँधकर 'मैं शिव हूँ' ऐसा ध्यान करें। शक्तियों को हृदय में स्थापित करके शक्ति के साथ निम्नलिखित पर ध्यान करे—बीज, अंकुर, कमल नाल सहित, कंटक, सूत्र, पत्र, केसर, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि, शक्तियाँ—वामा ज्येष्ठा, रौद्री, काली,

आसनं परिकल्प्यैवं सर्वोपचारसहितं बहिर्योगोपचारेणांतःकरणं कृत्वा नाभौ वह्निकुंडे पूर्ववदासनं परिकल्प्य सदाशिवं ध्यात्वा बिंदुतोऽमृतधारां शिवमंडले निपतितां ध्यात्वा ललाटे महेश्वरं दीपशिखाकारं ध्यात्वा आत्मशुद्धिरित्थं प्राणापानौ संयम्य सुषुम्णया वायुं व्यवस्थाप्य षष्ठेन तालुमुद्रां कृत्वा दिग्बंधं कृत्वा षष्ठेन स्थानशुद्धिर्वस्त्रादि पूतांतरर्घ्यपात्रादिषु प्रणवेन तत्त्वत्रयं विन्यस्य तदुपरि बिंदुं ध्यात्वा त्वंभसा विपूर्य द्रव्याणि च विधाय अमृतप्लावनं कृत्वा पाद्यपात्रादिषु तेषामर्घ्यवदासनं परिकल्प्य संहितयाभिमंत्र्याद्येनाभ्यर्च्य द्वितीयेनामृतीकृत्वा तृतीयेन विशोध्यचतुर्थेनावगुंठ्य पंचमेनावलोक्य षष्ठेन रक्षां विधाय चतुर्थेन कुशपुंजेनार्घ्यांभसाभ्युक्ष्य आत्मानमपि द्रव्याणि पुनरर्घ्यांभसाभ्युक्ष्य सपुष्पेण सर्वद्रव्याणि पृथक्पृथक् शोधयेत्॥१४॥

सद्येन गंधं वामेन वस्त्रम्।
अघोरेण आभरणं पुरुषेण नैवेद्यम्। ईशानेन पुष्पाणि अथाभिमंत्रयेत्॥१५॥
शिवगायत्र्या शेषं प्रोक्षयेत्॥१६॥
पंचामृतपंचगव्यादीनि ब्रह्मांगमूलाद्यैरभिमंत्रयेत्॥१७॥

---

कालविकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथनी सर्वभूतदमनी केसर में, कर्णिका में मनोन्मनी को ध्यान करे।।१३।। आत्मशुद्धि, स्थान शुद्धि, द्रव्य शुद्धि कृत्य निम्नलिखित रूप में करे। आसन रखकर यौगिक उपचार के द्वारा बाहर की चीजों से इच्छा शक्ति को अन्दर की ओर लगावे। शिव का आसन अग्नि कुंड के नाभि में सामने पूर्ववत् कल्पना करके बिंदु से शिव मण्डल पर गिरती हुई अमृत धारा को ध्यान करते हुए सदाशिव का ध्यान करे। ललाट पर दीपशिखा के आकार वाले शिव का ध्यान करे यह आत्मशुद्धि है। स्थान शुद्धि इस प्रकार है। भक्त प्राण और अपान वायु का संयम करके सुषुम्ना द्वारा वायु को रोके, तब छठवें ताल मुद्रा और दिग्बन्ध छठवाँ बीज से मन्त्र से पूरा किया जाय। दिग्बन्ध कृत्य पूजा की सामग्री द्रव्यशुद्धि कहलाती है। वह इस प्रकार है। अर्घ्य पात्र आदि में ओम् के द्वारा तीन तत्त्वों को रखकर उसके बिंदु का ध्यान करके उनके ऊपर बिन्दु का ध्यान करे कि वे जल से पूर्ण है, तब पूजा सामग्री को क्रम से रखकर पाद्य के लिए रखे गये पात्रों में अमृतप्लावन के सामने (जल छिड़ककर) अर्घ्य पात्रवत् आसन की कल्पना करके संहिता मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके प्रथम बीज मन्त्र द्वारा पूजा की जाय। द्वितीय बीज मन्त्र द्वारा उसको अमृत रूप में करे, तृतीय बीज मन्त्र द्वारा यह शुद्ध की जाय, चतुर्थ बीज मन्त्र द्वारा ढककर पंचम बीज द्वारा इसका अवलोकन करे। छठवें बीज मन्त्र द्वारा रक्षा करके चौथे बीज मन्त्र को पढ़ते हुए कुश के पुंज से अर्घ्य जल पूजा सामग्री पर छिड़के। उसके बाद फूल के साथ अर्घ्य जल से भक्त अपने ऊपर और पूजा सामग्री पर पुनः जल छिड़के।।१४।। तब भक्त निम्नलिखित मन्त्रों से वस्तुओं को अभिमन्त्रित करे—सद्य मन्त्र से गंध को, वाम मन्त्र से वस्त्र को अघोर मन्त्र से आभूषण को, तत्पुरुष मन्त्र से नैवेद्य को और ईशान मन्त्र से पुष्पों को अभिमन्त्रित करे। शिव गायत्री मन्त्र को दोहराते हुए शेष सामग्री पर जल छिड़के। वह वेदांगों मूल मन्त्रों और अन्य मन्त्रों द्वारा पंचामृत पंचगव्य और अन्य वस्तुओं को अभिमन्त्रित करे। तब वह मूल मन्त्र को दोहराते हुए अर्घ्य धूप और आचमनीय देते हुए

पृथकपृथङ्मूलेनार्घ्यं धूपं दत्त्वाचमनीयं च तेषामपि धेनुमुद्रा च दर्शयित्वा कवचेनावगुंठ्यास्त्रेण रक्षां च विधाय द्रव्यशुद्धिं कुर्यात्॥१८॥
अर्घ्योदकमग्रे हृदा गंधमादाय द्रव्याणि विशोध्य पूजाप्रभृतिकरणं रक्षांतं कृत्वैवं द्रव्यशुद्धिं पूजासमर्पणांतं मौनमास्थाय पुष्पांजलिं दत्त्वा सर्वमंत्राणि प्रणवादिनमोंताज्जपित्वा पुष्पांजलिं त्यजेन्मंत्रशुद्धिरित्थम्॥१९॥
अग्रे सामान्यार्घ्यपात्रं पयसापूर्य गंधपुष्पादिना संहितयाभिमंत्र्य धेनुमुद्रां दत्त्वां कवचेनावगुंठ्यास्त्रेण रक्षयेत्। पूजां पर्युषितां गायत्र्या समभ्यर्च्य सामान्यार्घ्यं दत्त्वां गंधपुष्पधूपाचमनीयं स्वधांतं नमोंतं वा दत्त्वा ब्रह्मभिः पृथक्पृथक्पुष्पांजलिं दत्त्वा फडंतास्त्रेण निर्माल्यं व्यपेह्य ईशान्यां चंडमभ्यर्चासनमूर्तिं चंडं सामान्यास्त्रेण लिंगपीठं शिवं पाशुपतास्त्रेण विशोध्य मूर्ध्नि पुष्पं निधाय पूजयेल्लिंगशुद्धिः॥२०॥
आसनं कूर्माशिलायां बीजांकुरं तदुपरि ब्रह्मशिलायामनंतनालसुषिरे सूत्रपत्रकंटककर्णिकाकेसरधर्मज्ञानवैराग्यैश्वर्यसूर्यसोमाग्निकेसरशक्तिं मनोन्मनीं कर्णिकायां मनोन्मनेनानंतासनायेति समासेनासनं परिकल्प्य तदुपरि निवृत्त्यादिकलामयं षड्विधसहितं कर्मकलांगदेहं सदाशिवं भावयेत्॥२१॥

---

सामग्री को शुद्ध करे। उनको धेनुमुद्रा दिखावे। कवच मन्त्र के द्वारा वस्तुओं को ढककर अस्त्र मन्त्र से उनकी रक्षा करके द्रव्य शुद्धि करना चाहिए।।१५-१८।। मन्त्र शुद्धि इस प्रकार है—आगे अर्घ्य जल दिया जाय हृदय द्वारा गंध लेकर, अस्त्र मन्त्र द्वारा शुद्ध करके, पूजा आदि रक्षा पर्यन्त करके, पूजा द्रव्य की शुद्धि समर्पण के अन्त तक मौन रूप से पुष्पांजलि देकर, सब मन्त्रों प्रणव आदि में और नमः अन्त में लगाकर दोहराते हुए, और पुष्पांजलि दी जाय।।१९।। लिंग शुद्धि इस प्रकार है—सामान्य अर्घ्य पात्र जल से भरकर सामने रखें, गंध और सुगन्धित फूल आदि इसको संहिता मन्त्रों से अभिमन्त्रित करे। धेनुमुद्रा दिखाये, कवच मन्त्र से उसको ढके और अस्त्र मन्त्र द्वारा उसकी रक्षा की जाय। पूजा जो पहले की गयी है पुनः गायत्री मन्त्र द्वारा की जाय। सामान्य अर्घ्य देकर गंध पुष्प आचमनीय स्वाहा या नमः अन्त में लगे मन्त्रों से दी जाय। वैदिक मन्त्रों द्वारा पुष्पांजलि दी जाय। फट् अन्त में लगाकर अस्त्र मन्त्र द्वारा निर्माल्य को हटा दिया जाय। उत्तर पूर्व में चन्द्रमा की पूजा की जाय। सामान्य अस्त्र मन्त्र द्वारा चन्द्र की पूजा की जाय। पाशुपत अस्त्र द्वारा लिंग पीठ और शिव को शुद्ध करके उनके सिर पर पुष्प रखकर उसकी पूजा की जानी चाहिये।।२०।।

भक्त सदाशिव का ध्यान करे जो निवृत्ति के साथ कलामय है। जो कि छः कलाओं सहित है, और जिनका भौतिक शरीर कर्म कला का अंग है। कूर्म शिला पर उनका आसन है। उस पर बीज और अंकुर है। ब्रह्म शिला पर अनन्त नाल कमल, सूत्र, पत्र, कटक, कर्णिका, केसर, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, सूर्य, सोम, अग्नि, केसर, शक्ति, मनोन्मनी की मनोन्मन के साथ अनन्त आसन के लिए कहते हुए कल्पना करके उस पर पूर्व कथित

उभाभ्यां सपुष्पाभ्यां हस्ताभ्यामंगुष्ठेन पुष्पमापीड्य आवाहनमुद्रया शनैःशनैः हृदयादिमस्तकांतमारोप्य हृदा सह मूलं प्लुतमुच्चार्य सद्येन बिंदुस्थानादभ्यधिकं दीपशिखाकारं सर्वतोमुखहस्तं व्याप्यव्यापकमावाह्य स्थापयेत्॥२२॥

पूर्वहृदा शिवशक्तिसमवायेन परमीकरणममृतीकरणं हृदयादिमूलेन सद्येनावाहनं हृदा मूलोपरि वामेन स्थापनं हृदा मूलोपरि अघोरेण सन्निरोधं हृदा मूलोपरि पुरुषेण सान्निध्यं हृदा मूलेन ईशानेन पूजयेदिति उपदेशः॥२३॥ पंचमंत्रसहितेन यथापूर्वमात्मनो देहनिर्माणं तथा देवस्यापि वह्नेश्चैवमुपदेशः॥२४॥ रूपकध्यानं कृत्वा मूलेन नमस्कारांतमापाद्य स्वधांतमाचमनीयं सर्वं नमस्कारांतं वा स्वाहाकारांतमर्घ्यं मूलेन पुष्पांजलिं वौषडंतेन सर्वं नमस्कारांतं हृदा वा ईशानेन वा रुद्रगायत्र्या ॐ नमः शिवायेति मूलमंत्रेण वा पूजयेत्॥२५॥ पुष्पांजलिं दत्त्वा पुनर्धूपाचमनीयं षष्ठेन पुष्पावसारणं विसर्जनं मंत्रोदकेन मूलेन संस्नाप्य सर्वद्रव्याभिषेकमीशानेन प्रतिद्रव्यमष्टपुष्पं दत्त्वैवमर्घ्यं च गधं पुष्पधूपाचमनीयं फडंतास्त्रेण पूजापसरणं शुद्धोदकेन मूलेन संस्नाप्य पिष्टामलकादिभिः॥२६॥

---

विधि से सदाशिव का ध्यान करना चाहिये।।२१।। दोनों हाथों में पुष्पों को ले ले। उनको दबा दें। आह्वान मुद्रा से, उनको धीरे-धीरे हृदय से सिर तक ले जाय। हृदय मंत्र के साथ मूल मंत्र को प्लुत स्वर में उच्चारण करके बिन्दु स्थान से ऊपर मूर्त दीप शिखा के आकार के और जिसके मुख और हाथ चारों ओर फैले हैं और व्याप्य व्यापक भाव में है, उनका आह्वान करके स्थापित करना चाहिये।।२२।। परमीकरण कृत्य हृदय मन्त्र से और अविभाज्य शिव और शक्ति, अमृतीकरण कृत्य हृदय मन्त्र से प्रारम्भ करके मूल मन्त्र द्वारा किया जाय। सद्य मन्त्र द्वारा आह्वान कृत्य, स्थापन कृत्य हृदय मन्त्र से तथा अन्त में मूल मन्त्र से तथा वाम मन्त्र से, सन्निरोध हृदय मन्त्र अघोर मन्त्र और मूल मन्त्र से, सान्निध्य कृत्य तत्पुरुष मन्त्र, मूल मन्त्र और हृदय मन्त्र द्वारा, भक्ति को मूर्ति की पूजा हृदय मन्त्र, मूल मन्त्र और ईशान मन्त्र से करनी चाहिये, ऐसा उपदेश है।।२३।। तब भक्त को देह निर्माण कृत्य अपने लिए पूर्ववत् तथा शिव के लिए अग्नि पंच मन्त्र चहित बीज मन्त्र द्वारा करना चाहिये।।२४।। मूल मन्त्र से रूपक ध्यान करके नमस्कार के अन्त, और आचमनीय स्वधा बोलकर भेंट कर दे। उसके बाद भक्त अर्घ्य तथा अन्य वस्तुएँ मन्त्र पर स्वाहा बोलते हुए दे। वौषट् से अन्त होने वाले मूल मन्त्र द्वारा भेंट करे। हृदय मन्त्र या मूल मन्त्र रुद्र गायत्री मन्त्र से प्रत्येक कृत्य किया जाना चाहिये। या वह मूल मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' से पूजा करे।।२५।। भक्त पुनः पुष्पाँजलि देकर धूप आचमनीय दे। छठवें बीज मन्त्र से पुष्पों को हटाये और विसर्जन करे। मूल मन्त्र को दोहराते हुए मन्त्रों से अभिमंत्रित पूजा की सब सामग्री को शुद्ध करे। ईशान मन्त्र से अभिषेक कृत्य किया जाय। प्रत्येक वस्तु के लिए आठ फूल भेंट किये जायँ। उसके बाद उसी भाँति अर्घ्य दिया जाय। गंध, सुगन्धित पुष्प, आचमनीय फट् के अन्त होने वाले अस्त्र से भेंट कर दे। पूजा की समाप्ति इसी प्रकार

उष्णोदकेन हरिद्राद्येन लिंगमूर्तिं पीठसहितां विशोध्य
गंधोदकहिण्योदकमंत्रोदकेन रुद्राध्यायं पठमानः नीलरुद्र-
त्वरितरुद्रपंचब्रह्मादिभिः नमः शिवायोति स्नापयेत्॥२७॥
मूर्ध्नि पुष्पं निधायैवं न शून्यं लिंगमस्तकं कुर्यादत्र श्लोकः॥२८॥
यस्य राष्ट्रे तु लिंगस्य मस्तकं शून्यलक्षणम्। तस्यालक्ष्मीर्महारोगो दुर्भिक्षं वाहनक्षयः॥२९॥
तस्मात्परिहरेद्राजा धर्मकामार्थमुक्तये। शून्यं लिंगे स्वयं राजा राष्ट्रं चैव प्रणश्यति॥३०॥
एवं सुस्नाप्यार्घ्यं च दत्त्वा संमृज्य वस्त्रेण गंधपुष्पवस्त्रालंकारादींश्च मूलेन दद्यात्॥३१॥
धूपाचमनीयदीपनैवेद्यादींश्च मूलेन प्रधानेनोपरि पूजनं पवित्रीकरणमित्युक्तम्॥३२॥
आरार्तिदीपादींश्चैव धेनुमुद्रामुद्रितानि कवचेनावगुंठिनानि षष्ठेन
रक्षितानि लिंगोपरि लिंगे च लिंगास्याधः साधारणं च दर्शयेत्॥३३॥
मूलेन नमस्कारं विज्ञाप्यावाहनस्थापनसन्निराधसान्निध्यपाद्याचमनीयार्घ्यगंधपुष्प-
धूपनैवेद्याचमनीयहस्तोद्धतनमुखवासाद्युपचारयुक्तं ब्रह्मांगभोगमार्गेण पूजयेत्॥३४॥

---

की जानी चाहिए। लिंग पीठ सहित मूर्ति को मूल मन्त्र को दोहराते हुए शुद्ध जल से स्नान कराना चाहिये। इसमें हल्दी आँवले आदि पड़े हुए हों। या तेल हल्दी आदि मिश्रित गरम जल से स्नान कराकर शुद्ध करें। भक्त तब रुद्राध्याय पढ़ते हुये स्वर्ण पड़े हुये शुद्ध मन्त्रोक्त अभिमन्त्रित जल से लिंग मूर्ति का स्नान नमः शिवाय के साथ नील रुद्र, त्वरित रुद्र, पंच ब्रह्म और अन्य मन्त्रों को सस्वर पढ़े।।२६-२७।। लिंग को स्नान कराते समय उसके शिर पर एक फूल रखे। लिंग का शिर नंगा न रखा जाय। इस सम्बन्ध में एक श्लोक है। जिस राजा के राज्य में शिवलिंग का मस्तक नंगा रहता है उस राज्य में दरिद्रता, महारोग, अकाल और वाहनों का क्षय होता है।।२८-२९।। इसलिए राजा इससे बचे और धर्म, अर्थ, काम और मुक्ति के लिए इसका ध्यान रखे। जिस राजा के राज्य में शिवलिंग नंगा रहता है, उस राजा और राज्य का नाश हो जाता है।।३०।। स्नान करने के बाद भक्त अर्घ्य दे और कपड़े से लिंग को पोंछे। मूल मन्त्र से गंध, पुष्प, वस्त्र, अलंकार आदि भेंट करके भक्त मूल मन्त्र पढ़ते हुए धूप, आचमनीय, दीप, नैवेद्य आदि भेंट करे। मूल मन्त्र से उक्त कृत्य को पवित्रीकरण कहते हैं।।३१-३२।। भक्त आरती दीप दिखावे। लिंग के ऊपर, लिंग पर, लिंग के निचले भाग पर और सामान्य रूप से चारों ओर घूमकर आरती करे। वह आरती दीप धेनुमुद्रा से (अभिमन्त्रित) कवच मुद्रा से अवगुंठित (ढका हुआ) और छठवें बीज मन्त्र से रक्षित होना चाहिये।।३३।। इसके बाद भक्त मूल मन्त्र से नमस्कार करके ब्रह्मा की पूजा के लिए निर्धारित विधि ब्रह्माग्नि भोग मार्ग से सेवा के निम्नलिखित कार्यों को करे। आह्वान, स्थापन, संनिरोध, पाद्य, आचमनीय, अर्घ्य, गंध पुष्प, नैवेद्य, द्वितीय आचमनीय, हस्तोद्वर्तन (हाथ धोना), मुखवास आदि उपचार से युक्त क्रियाओं को करे।।३४।। विधि पूर्वक निम्नलिखित कृत्य को करे। सकल में शिव का ध्यान तब निष्कल रूप में स्मरण, पर और अपर देवताओं का ध्यान मूल मन्त्र का जप और ब्रह्मांग मन्त्रों का जप आत्म समर्पण का

सकलध्यानं निष्कलस्मरणं परावरध्यानं मूलमंत्रजपः।
दशांशं ब्रह्मांगजपसमर्पणमात्मनिवेदनस्तुतिनमस्कारादयश्च
गुरुपूजा च पूर्वतो दक्षिणे विनायकस्य॥३५॥
आदौ चांते च संपूज्यो विघ्नेशो जगदीश्वरः। दैवतैश्च द्विजैश्चैव सर्वकर्मार्थसिद्धये॥३६॥
यः शिवं पूजयेदेवं लिंगे वा स्थंडिलेपि व। स याति शिवसायुज्यं वर्षमात्रेण कर्मणा॥३७॥
लिंगार्चकश्च षण्मासान्नात्र कार्या विचारणा॥
लिंगार्चकश्च षण्मासान्नात्र कार्या विचारणा। सप्त प्रदक्षिणाः कृत्वा दंडवत्प्रणमेद्बुधः॥३८॥
प्रदक्षिणक्रमपादेन अश्वमेधफलं शतम्। तस्मात्संपूजयेन्नित्यं सर्वकर्मार्थसिद्धये॥३९॥
भोगार्थी भोगमाप्नोति राज्यार्थी राज्यमाप्नुयात्।
पुत्रार्थी तनयं श्रेष्ठं रोगी रोगात्प्रमुच्यते॥४०॥
यान्यांश्चितयते कामांस्तास्तांन्प्राप्नोति मानवः॥४१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे चतुर्विंशोऽध्यायः॥२४॥**

---

दशमांश पूर्व समर्पण, स्तुति, नमस्कार आदि पूर्व में गुरु की पूजा और दक्षिण में विनायक की पूजा करनी चाहिए।।३५।। सब कामना की सिद्धि के लिए गणेश जगदीश्वर की पूजा ब्राह्मणों और देवताओं द्वारा आदि और अन्त में करनी चाहिए।।३६।। जो व्यक्ति लिंग या भूमि पर शिव की इस विधि से एक वर्ष मात्र पूजा करता है वह शिव का सायुज्य प्राप्त करता है।।३७।। लिंग की अर्चना करने वाला छः मास में शिव का सायुज्य प्राप्त करता है। इससे सन्देह नहीं। विद्वान भक्त सात प्रदक्षिणा करके साष्टांग प्रणाम करे।।३८।। प्रदक्षिणा में प्रत्येक पद के लिए सौ अश्वमेघ का फल प्राप्त करता है, अतः धर्म, अर्थ और मोक्ष की प्राप्ति के लिए नित्य शिव की पूजा करनी चाहिए। भोग चाहने वाला भोग (आनन्द) को प्राप्त करेगा। राज्य चाहने वाले को राज्य मिलता है। पुत्रार्थी को पुत्र प्राप्त होता है। रोगी रोग मुक्त हो जाता है। भक्त मनुष्य अपनी चाही हुई सब कामनाओं को प्राप्त कर लेता है।।३९-४१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव की पूजा की विधि नामक चौबीसवाँ अध्याय समाप्त॥२४॥**

पंचविंशतितमोऽध्यायः

# शिवसम्बन्धिनः पवित्रमग्निहोत्रम्

शैलादिरुवाच

शिवाग्निकार्यं वक्ष्यामि शिवेन परिभाषितम्। जनयित्वाग्रतः प्राचीं शुभे देशे सुसंस्कृते॥१॥
पूर्वाग्रमुत्तराग्रं च कुर्यात्सूत्रत्रयं शुभम्। चतुस्त्रीकृते क्षेत्रे कुर्यात्कुंडानि यत्नतः॥२॥
नित्यहोमाग्निकुंडं च त्रिमेखलसमायुतम्। चतुस्त्रीव्यंगुलायामा मेखला हस्तमात्रतः॥३॥
हस्तमात्रं भवेत्कुंडं योनिः प्रादेशमात्रतः। अश्वत्थपत्रवद्योनिं मेखलोपरि कल्पयेत्॥४॥
कुंडमध्ये तु नाभिः स्यादष्टपत्रं सकर्णिकम्। प्रादेशमात्रं विधिना कारयेद्ब्रह्मणः सुत॥५॥
षष्ठेनोल्लेखनं प्रोक्तं प्रोक्षणं वर्मणा स्मृतम्। नेत्रेणालोक्य वै कुंडं षड्रेखाः कारयेद्बुधः॥६॥
प्रागायतेन विप्रेंद्र ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। उत्तराग्राः शिवा रेखाः प्रोक्षयेद्वर्मणा पुनः॥७॥
शमीपिप्पलसंभूतामरणीं षोडशांगुलाम्। मथित्वा वह्निबीजेन शक्तिन्यासं हृदैव तु॥८॥
प्रक्षिपेद्विधिना वह्निमन्वाधाय यथाविधि। तूष्णीं प्रादेशमात्रैस्तु याज्ञिकैः शकलैः शुभैः॥९॥
परिसंमोहनं कुर्याज्जलेनाष्टसु दिक्षु वै। परिस्तीर्य विधानेन प्रागाद्येवमनुक्रमात्॥१०॥

---

पच्चीसवाँ अध्याय

# शिव से सम्बन्धित पवित्र अग्निहोत्र

**शैलादि बोले**

मैं शिव द्वारा कहे गये शिवाग्नि कार्य को कहूँगा। प्रार्थी सुन्दर साफ सुथरे स्थान पर चौकोर रूप में शुभ मुहूर्त में खोदकर गड्ढा करे। तब वह पूर्व की ओर संकेत करती हुई तीन रेखाएँ और उत्तर की ओर तीन रेखाएँ बनावे।।१-२।। वह यज्ञ की पवित्र अग्नि की वेदी के चारों ओर तीन मेखला हों। बाहिरी मेखला में चार अंगुल, मध्य में तीन अंगुल, भीतर में दो अंगुल हो। कुंड की चौड़ाई दो हाथ मात्र हो। मध्य भाग जहाँ हवन सामग्री रखी जाय, लगभग नौ इंच हो, योनि पीपल के पत्ते के समान रूप में मेखला के ऊपर बनाई जाय।।३-४।। कुंड के मध्य में नाभि कमल के रूप में बनाई जाय, यह आठ पत्र और कर्णिका से युक्त हो और चौड़ाई एक प्रादेश[1] हो।।५।। छठवे अस्त्र मन्त्र से उल्लेखन कृत्य किया जाय और कवच मन्त्र से प्रोक्षण (जल से सिंचन) किया जाय। कुंड को नेत्रों से देखते हुए छः रेखा खीचे। हे विप्रेन्द्र! पूर्व की ओर तीन रेखाएँ ब्रह्मा, विष्णु और महेश का प्रतिनिधित्व करती हैं। भक्त उत्तर की ओर शिव रेखाओं पर वर्मन मन्त्र के द्वारा जल को छिड़के।।६-७।। होम में लगायी जाने वाली लकड़ी शमी या पीपल की हो। १६ अंगुल लम्बी हो। इसको साफ करके रखे उसके बाद हृदय मन्त्र से शक्ति न्यास कृत्य पूरा करते हुए और वह्नि बीज मन्त्र को दोहराते हुए अग्नि उत्पन्न की जाय। यज्ञ की लकड़ियों के टुकड़े लम्बाई में प्रावेश मात्र हो। उनको अग्नि में मौन होकर रखे। क्रम से पूर्व दिशा

---

१. प्रादेश = अंगूठे और तर्जनी के बीच के बराबर स्थान।

उत्तराग्रं पुरस्ताद्धि प्रागग्रं दक्षिणे पुनः। पश्चिमे चोत्तराग्रं तु सौम्यं पूर्वाग्रमेव तु॥११॥
ऐन्द्रे चैन्द्राग्नमावाह्य याम्य एवं विधीयते। सौम्यस्योपरि चांद्राग्नं वारुणाग्नमधस्ततः॥१२॥
द्वंद्वरूपेण पात्राणि बर्हिःष्वासाद्य सुव्रत। अधोमुखानि सर्वाणि द्रव्याणि च तथोत्तरे॥१३॥
तस्योपरि न्यसेद्दर्भाञ्छिवं दक्षिणतोन्यसेत्। पूजयेन्मूलमंत्रेण पश्चाद्धोमं समाचरेत्॥१४॥
प्रोक्षणीपात्रमादाय पूरयेदंबुना पुनः। प्रादेशमात्रौ तु कुशौ स्थापयेदुदकोपरि॥१५॥
प्लावयेच्च कुशाग्रं तु वसोः सूर्यस्य रश्मिभिः। विकीर्य सर्वपात्राणि सुसंप्रोक्ष्य विधानतः॥१६॥
प्रणीतापात्रमादाय पूरयेदंबुना पुनः। अन्योदककुशाग्रैस्तु सम्यगाच्छाद्य सुव्रत॥१७॥
हस्ताभ्यां नासिकं पात्रमैशान्यां दिशि विन्यसेत्। आज्याधिश्रयणं कुर्यात्पश्चिमोत्तरतः शुभम्॥१८॥
भस्ममिश्रांस्तथांगारान् ग्राहयेत्सकलेन वै। पश्चिमोत्तरतो नीत्वा तत्र चाज्यं प्रतापयेत्॥१९॥
कुशानग्नौ तु प्रज्वाल्य पर्यग्निं त्रिभिराचरेत्। तान्सर्वांस्तत्र निःक्षिप्य चाग्रे चाज्यं निधापयेत्॥२०॥
अंगुष्ठमात्रौ तु कुशौ प्रक्षाल्य विधिनैव तु। पर्यग्निं च ततः कुर्यात्तैरेव नवभिः पुनः॥२१॥
पर्यग्निं च पुनः कुर्यात्तदाज्यमवरोपयेत्। अथापकर्षयेत् पात्रं क्रमेणोत्तरपश्चिमे॥२२॥
संयुज्य चाग्निं काष्ठेन प्रक्षाल्यारोप्य पश्चिमे। आज्यस्योत्पवनं कुर्यात्पवित्राभ्यां सहैव तु॥२३॥

---

से प्रारम्भ करके आठों दिशाओं में जल के छिड़काव के द्वारा परिसम्मोहन कृत्य किया जाय।।८-१०।। पवित्र यज्ञ के कुश को उसके अग्रभाग सहित पूर्व दिशा में रखे। उसी प्रकार कुशाग्र को पूर्व की ओर करके दक्षिण दिशा में रखे, उसी प्रकार कुशाग्र उत्तर की ओर करके पश्चिम दिशा में रखे और उसी तरह कुशाग्र को पूर्व की ओर करके उत्तर दिशा में रखे।।११।।

इन्द्र के पात्र में दो देवताओं इन्द्र और अग्नि को स्थापित करे। अग्नि के पात्र में यम और अग्नि को, सोम के पात्र में सोम और अग्नि देवता को स्थापित करे। इसके नीचे दो देवता वरुण और अग्नि को स्थापित करके आह्वान करे। हे सुव्रत! पात्रों को दो कुशों पर नीचे की ओर मुँह करके उल्टा करके कुण्ड की ऊपर की ओर उत्तर की दिशा में रखे। उन पर पुष्प फैला दे। शिव के पात्र को दक्षिण में रखे। भक्त मूल से उनकी पूजा करे। उसके बाद होम करे।।१२-१४।। तब प्रोक्षणी पात्र लेकर जल भर दे। उस जल के ऊपर प्रादेश लम्बे दो कुश रख दे।।१५।। 'वसोः सूर्यस्य' मंत्र पढ़ते हुये कुश के अग्र भाग के जल में रखे। विधान के अनुसार सब पात्रों का मुख ऊपर की ओर कर ऊपर जल छिड़के। उसके बाद प्रणीता पात्र को जल से उसको भर दे। हे सुव्रत! अन्य जल को कुश से ढक दे। हाथों और नाक में पात्रों को उठाकर ईशान कोण में रख दे।।१६-१८।। फिर राख सहित कुछ जलते हुये कोयले के अंगारों को पश्चिम से पात्र लेकर उत्तर की ओर लाकर घी को गरम करे।।१९-२०।।

तब वह कुश के दो टुकड़े ले। उसको धोकर फिर उनको घुमाते हुए उनके अग्र भाग को अग्नि में जला दे। नौ कुश के टुकड़ों से अग्नि को प्रज्ज्वलित करे। तब घी के पात्र को अग्नि पर से हटा ले। अग्नि को उत्तर से दक्षिण की ओर रख दे।।२१-२२।।

तब भक्त समिधा की एक टहनी आग पर छुआ कर पश्चिम में रख दे। फिर घी आग पर डालकर उसको उत्पवन कृत्य करे। कुश का छल्ला-सा बनाकर अंगूठा और अनामिका में पहिन ले। दोनों हाथ से घी का पात्र

पृथगादाय हस्ताभ्यां प्रवाहेण यथाक्रमम्। अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु उभाभ्यां मूलविद्यया॥२४॥
अभ्युक्ष्य दापयेदग्नौ पवित्रे घृतपंकिते। सौवर्णं स्रुक्स्रुवं कुर्याद्रत्निमात्रेण सुव्रत॥२५॥
राजतं वा यथान्यायं सर्वलक्षणसंयुतम्। अथवा याज्ञिकैर्वृक्षैः कर्तव्यौ स्रुक्स्रुवावुभौ॥२६॥
अरत्निमात्रमायामं तत्पात्रे तु बिलं भवेत्। षडंगुलपरीणाहं दंडमूलं महामुने॥२७॥
तदर्धं कंठनालं स्यात्पुष्करं मूलवद्भवेत्। गोवालसदृशं दंडं स्रुवाग्रं नासिकासमम्॥२८॥
पुटद्वयसमायुक्तं मुक्ताद्येन प्रपूरितम्। षट्त्रिंशदंगुलायाममष्टांगुलसविस्तरम्॥२९॥
उत्सेधस्तु तदर्धं स्यात्सूत्रेण समितं ततः। सप्तांगुलं भवेदास्यं विस्तरायामतः पुनः॥३०॥
त्रिभागैकं भवेदग्रं कृत्वा शेषं परित्यजेत्। कंठं च द्व्यंगुलायामं विस्तरं चतुरंगुलम्॥३१॥
वेदिरष्टांगुलायामा विस्तारस्तत्प्रमाणतः। तस्य मध्ये बिलं कुर्याच्चतुरंगुलमानतः॥३२॥
बिलं सुवर्तितं कुर्यादष्टपत्रं सुकर्णिकम्। परितो बिलबाह्ये तु पट्टिकार्धांगुलेन तु॥३३॥
तद्बाह्ये च विनिद्रं तु पद्मपत्रविचित्रितम्। यवद्वयप्रमाणेन तद्बाह्ये पट्टिका भवेत्॥३४॥
वेदिकामध्यतो रंध्रं कनिष्ठांगुलमानतः। खातं यावन्मुखांतः स्याद्बिलमानं तु निम्नगम्॥३५॥
दंडं षडंगुलं नालं दंडाग्रे दंडिकात्रयम्। अर्धांगुलविवृद्ध्या तु कर्तव्यं चतुरंगुलम्॥३६॥
त्रयोदशांगुलायामं दंडमूले घटं भवेत्। द्व्यंगुलस्तु भवेत्कुंभो नाभिं विद्याद्दशांगुलम्॥३७॥
वेदिमध्ये तथा कृत्वा पादं कुर्याच्च द्व्यंगुलम्। पद्मपृष्ठसमाकारं पादं वै कर्णिकाकृतिम्॥३८॥

---

ले ले। कुश की छल्लानुमा अंगूठी (पवित्री) को घी में डुबा ले। तब उसको आग पर डाल दे। हे सुव्रत! एक हाथ लम्बा सोने, चाँदी या यज्ञ में प्रयोग किये जाने वाले पेड़ की लकड़ी का बना हुआ स्रुवा होना चाहिए।।२३-२६।। हे महामुनि! स्रुवा की लम्बाई एक हाथ हो और हैंडिल में एक छेद होना चाहिए।।२७।।

उसका गला तीन अंगुल हो, उसकी जीभ मूल (जड़) की तरह हो। स्रुवा दंड गाय की पूँछ-सा हो। स्रुवा का अग्रभाग नाक के समान हो, उसमें मोती जड़े दो छेद हों। अगर लम्बाई ३६ अंगुल हो तो चौड़ाई ८ अंगुल होनी चाहिए। ऊँचाई उसकी आधी हो वह धागे से युक्त हो। मुख की लम्बाई और चौड़ाई ७ अंगुल हो। सिर का एक तिहाई भाग छोड़कर शेष भाग खुला हुआ रहे। गला लम्बाई में २ अंगुल हो और उसका फैलाव ४ अंगुल हो। वेदी लम्बाई और विस्तार में (फैलाव) आठ अंगुल हो। उसके बीच चार अंगुल चौड़ाई में बिल खोद देना चाहिए।।२८-३२।। बिल पूर्णरूप से गोलाकार हो, वह सुन्दर कर्णिका सहित अष्टदल युक्त हो। बिल के चारों ओर आधा अँगुल की चौड़ाई में बायीं ओर एक पट्टिका होनी चाहिए। उसमें बाहर पद्म पत्र से युक्त खिले हुए कमल हों। उसके बाहर दो जौ बराबर चौड़ाई में पट्टिका होनी चाहिए।।३३-३४।। वेदिका के मध्य में कनिष्ठा ऊँगली के बराबर एक हाथ मुख के अन्त तक हो। बिल नीचे की ओर ढालदार हो।।३५।। दण्ड लम्बाई में छः अंगुल हो और खोखला हो। दण्ड के सिरे पर तीन दंडिका वाली लाइन एक सिरीज में बनाई जाय। उनमें से बाद वाली लाइन पहले से आधा अंगुल बड़ी हो और आखिरी लाइन लम्बाई में चार अंगुल हो। दण्ड के मूल में लम्बाई में तेरह अंगुल एक घड़ा हो। वह घड़ा ऊँचाई में दो अंगुल हो और उसकी नाभि दस अंगुल हो।। वेदी के मध्य बीच में नाभि को इस प्रकार बनाकर दो अंगुल का फैलाव में उसका पैर (पाद) बनावे। कमल के

गजोष्ठसदृशाकारं तस्य पृष्ठाकृतिर्भवेत् अभिचारादिकार्येषु कुर्यात्कृष्णायसेन तु॥३९॥
पंचविंशत्कुशेनैव स्रुक्स्रुवौ मार्जयेत्पुनः। अग्रमग्रेण संशोध्य मध्यं मध्येन सुव्रत॥४०॥
मूलं मूलेन विधिना अग्नौ ताप्य हृदा पुनः। आज्यस्थाली प्रणीता च प्रोक्षणी तिस्र एव च॥४१॥
सौवर्णी राजती वापि ताम्री वा मृन्मयी तु वा। अन्यथा नैव कर्तव्यं शांतिके पौष्टिके शुभे॥४२॥
आयसी त्वभिचारे तु शांतिके मृन्मयी तु वा। षडंगुलं सुविस्तीर्णं पात्राणां मुखमुच्यते॥४३॥
प्रोक्षणी द्वयंगुलोत्सेधा प्रणीता द्व्यंगुलाधिका।
आज्यस्थाली ततस्तस्या उत्सेधो द्व्यंगुलाधिकः॥४४॥
यैः समिद्भिर्हुतं प्रोक्तं तैरेव परिधिर्भवेत्। मध्यांगुलपरीणाहा अवक्रा निर्व्रणाः समाः॥४५॥
द्वात्रिंशदंगुलायामास्तिस्रः परिधयः स्मृताः। द्वात्रिंशदंगुलायामैस्त्रिंशद्दर्भैः परिस्तरेत्॥४६॥
चतुरंगुलमध्ये तु ग्रथितं तु प्रदक्षिणम्। अभिचारादिकार्येषु शिवाग्न्याधानवर्जितम्॥४७॥
अकोमलाः स्थिरा विप्र संग्राह्यास्त्वाभिचारिके।
समग्राः सुसमाः स्थूलाः कनिष्ठांगुलसंमिताः॥४८॥
अवक्रा निर्व्रणाः स्निग्धा द्वादशांगुलसंमिताः। समिधस्थं प्रमाणं हि सर्वकार्येषु सुव्रत॥४९॥
गव्यं घृतं ततः श्रेष्ठं कापिलं तु ततोऽधिकम्। आहुतीनां प्रमाणं तु स्रुवं पूर्णं यथा भवेत्॥५०॥
अन्नमक्षप्रमाणं स्याच्छुक्तिमात्रेण वै तिलः। यवानां च तदर्धं स्यात्फलानां स्वप्रमाणतः॥५१॥

---

पीठ के समान आकार का दो और पद कर्णिका के आकार का हो। पाद के पीठ वाला भाग हाथी के ओठ के समान हो। अभिचार (काला जादू) आदि कृत्य में यह काले लौह दण्ड से बनाया जाय।।३६-३९।। भक्त उसके बाद पच्चीस कुशों के बण्डल से स्रुव, स्रुवा दोनों को पोंछे। हे सुव्रत! कुशों के सिरे से दण्ड के सिर को मध्य भाग को मध्य से और जड़ भाग को कुशे के जड़ भाग से पीछे हृदय मन्त्र पढ़ते हुए अग्नि में उसको तपाया जाय। तीन पात्र, घृत पात्र, प्रणीता और प्रोक्षणी का पात्र सोने, चाँदी, ताँबा या मिट्टी का बना हो। शान्ति और पौष्टिक कार्य में अन्य धातुओं से यह न बनाया जाय। अभिचार कृत्य में वे पात्र लोहे से बनाये जायँ। ये मिट्टी से बने हुए हों। इन पात्रों का मुख चौड़ाई में छः अंगुल हो।।४०-४३।। प्रोक्षणी पात्र ऊँचाई में दो अंगुल हो। प्रणीता पात्र की ऊँचाई चार अंगुल हो। घृत पात्र (आज्य स्थाली) की उँचाई छः अंगुल हो।।४४।। जिन लकड़ियों से किनारा खींचा गया उन्हीं लकड़ियों का होम में प्रयोग किया जाय। लकड़ी के वे टुकड़े बीच के ऊँगली के बराबर सीधे हों और उनमें छेद न हो। लम्बाई में एक समान हों।।४५-४६।। तीन परिधि वाले प्रत्येक बत्तीस अंगुल लम्बाई में है, तीस कुश प्रत्येक बत्तीस अंगुल नाप में चारों ओर फैलाना चाहिए।।४७।। हे ब्राह्मण! अभिचार कृत्य में कड़ी मजबूत टहनियाँ प्रयोग की जानी चाहिए। वे समूची मुलायम और मजबूत न हो। छोटी ऊँगली के बराबर लम्बाई में टुकड़े इकट्ठा करना चाहिए। हे सुव्रत! अन्य कृत्यों में बारह अंगुल की लम्बाई वाले चिकनी और बिना छिद्र समिधा को इकट्ठा किया जाना चाहिए।।४८-४९।। गाय के दूध का बना हुआ घी शुद्ध होता है। कपिला गाय के दूध का घी उससे भी अच्छा होता है। प्रत्येक आहुति के लिए घी स्रुवा भरकर होना चाहिए।।५०।। अन्न (चावल) अक्ष के बराबर और तिल शुक्ति (सीप) के बराबर हो, जौ के दाने परिमाण

क्षीरस्य मधुनो दध्नः प्रमाणं घृतवद्भवेत्। चतुः स्रुवप्रमाणेन स्रुवा पूर्णाहुतिर्भवेत्॥५२।
तदर्धं स्विष्टकृत्प्रोक्तं शेषं सर्वमथापि वा। शांतिकं पौष्टिकं चैव शिवाग्नौ जुहुयात्सदा॥५३॥
लौकिकाग्नौ महाभाग मोहनोच्चाटनादयः। शिवाग्निं जनयित्वा तु सर्वकर्मणि सुव्रत॥५४॥
सप्त जिह्वाः प्रकल्प्यैव सर्वकार्याणि कारयेत्। अथवा सर्वकार्याणि जिह्वामात्रेण सिध्यति॥५५॥
शिवाग्निरिति विप्रेंद्रा जिह्वामात्रेण साधकः॥५६॥
ॐ बहुरूपायै मध्यजिह्वायै अनेकवर्णायै दक्षिणोत्तरमध्यगा
कपौष्टिकमोक्षादिफलप्रदायै स्वाहा॥५७॥
ॐ हिरण्यायै चामीकराभायै ईशानजिह्वायै ज्ञानप्रदायै स्वाहा॥५८॥
ॐ कनकायै कनकनिभायै रम्यायै ऐंद्राजिह्वायै स्वाहा॥५९॥
ॐ रक्तायै रक्तवर्णायै आग्नेयजिह्वायै
अनेकवर्णायै विद्वेषणमोहनायै स्वाहा॥६०॥
ॐ कृष्णायै नैर्ऋतजिह्वायै मारणायै स्वाहा॥६१॥
ॐ सुप्रभायै पश्चिमजिह्वायै मुक्ताफलायै शांतिकायै पौष्टिकायै स्वाहा॥६२॥
ॐ अभिव्यक्तायै वायव्यजिह्वायै शत्रूच्चाटनायै स्वाहा॥६३॥
ॐ वह्नये तेजस्विने स्वाहा॥६४॥
एतावद्वह्निसंस्कारमथवा वह्निकर्मसु। नैमित्तिके च विधिना शिवाग्निं कारयेत्पुनः॥६५॥
निरीक्षणं प्रोक्षणं ताडनं च षष्ठेन फडंतेन अभ्युक्षणं चतुर्थेन
खननोत्किरणं षष्ठेन पूरणं समीकरणमाद्येन सेचनं वौषडंतेन कुट्टनं षष्ठेन
संमार्जनोपलेपने तुरीयेण कुंडपरिकल्पनं निवृत्त्या त्रिभिरेव कुंडपरिधानं

---

में उसके आधे में, फल अपने प्रमाण में हो।।५१।। दूध का परिमाण, मधु और दही घी के परिमाण के समान हो, चार स्रुवा के नाप के बराबर स्रुवा से पूर्णाहुति दी जाय।।५२।। उसका आधा शेष स्विष्ट कृत्य कहलाता है जो कि पूर्णाहुति के बाद यज्ञ की अग्निकुंड में डाल दिया जाता है। शान्ति और पौष्टिक कृत्य के निमित्त होम सदा शिवाग्नि में करना चाहिए।।५३।। हे महाभाग! मोहन उच्चाटन आदि के निमित्त होम लौकिक अग्नि में किया जाना चाहिए। हे सुव्रत! प्रत्येक कृत्य में शिवाग्नि उत्पन्न करनी चाहिए। सात जिह्वाओं को बनाकर सब कृत्यों को पूरा करना चाहिए अथवा एक जिह्वा मात्र वाली अग्नि से सब कार्य सिद्ध होते हैं। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! साधक जिह्वा मात्र के द्वारा शिवाग्नि प्राप्त कर सकता है।।५४-५६।।

इसके बाद मूल संस्कृत में लिखित श्लोक ५७ से ६४ के मंत्रों से हवन करे।।५७-६४।।

यहाँ तक अग्नि के संस्कार (शुद्धि) का वर्णन किया गया। भक्त शिवाग्नि को नैमित्तिक कृत्य के लिए निर्धारित विधि से उत्पन्न करे।।६५।। प्रोक्षण (जल का छिड़काव) और ताडन छठवें बीज मन्त्र के द्वारा फट् अन्त से समाप्त करते हुए पूरा करे। प्रोक्षण कृत्य चौथे बीज मन्त्र द्वारा, खनन और उत्किरण कृत्य छठवें बीज मन्त्र द्वारा, पूरण (भरना) और समतल करना प्रथम बीज मन्त्र द्वारा, सेचन वौषट् मंत्र के द्वारा, कूटना छठवे बीज मन्त्र

चतुर्थेन कुंडार्चनमाद्येन रेखाचतुष्टयसंपादनं षष्ठेन फडंतेन वज्रीकरणं चतुष्पदापादनमाद्येन एवं कुंडसंस्कारमष्टादशविधम्॥६६॥

कुंडसंस्कारानंतरमक्षपाटनं षष्ठेन विष्टरन्यासमाद्येन वज्रासने वागीश्वर्यावाहनम्॥६७॥

ॐ ह्रीं वागीश्वरीं श्यामवर्णां विशालाक्षीं यौवनोन्मत्तविग्रहाम्।
ऋतुमतीं वागीश्वरशक्तिमावाहयामि॥६८॥

वागीश्वरीं पूजयामि॥६९॥

पुनर्वागीश्वरावाहनम् ॥७०॥

एकवक्त्रं चतुर्भुजं शुद्धस्फटिकाभं वरदाभयहस्तं परशुमृगधरं जटामुकुटमंडितं सर्वाभरणभूषितमावाहयामि॥७१॥

ॐ ईं वागीश्वराय नमः। आवाहनस्थापनसन्निधानसन्निरोध-पूजांतं वागीश्वरीं संभाव्य गर्भाधानवह्निसंस्कारम्॥७२॥

अरणीजनितं कांतोद्भवं वा अग्निहोत्रजं वा ताम्रपात्रे शरावे वा आनीय निरीक्षणताडनाभ्युक्षणप्रक्षालनमाद्येनक्रव्यादाशिवपरित्यागोपि प्रथमेन वह्नेस्त्रैकारणं जठरभ्रूमध्यादावाह्याग्निं वैकारणमूर्तावाग्रेयेन उद्दीपनमाद्येन पुरुषेण संहितया धारणा धेनुमुद्रां तुरीयेणावगुंठ्य जानुभ्यामवनिं गत्वा शरावोत्थापनं कुंडोपरि निधाय प्रदक्षिणमावर्त्य तुरीयेणात्मसम्मुखां वागीश्वरीं गर्भनाड्यां गर्भाधानांतरीयेण कमलप्रदानमाद्येन वौषडंतेन कुशार्घ्यं दत्त्वा इंधनप्रदानमाद्येन प्रज्वालनं

---

द्वारा, सम्मार्जन (बुहारना) चौथे बीज मन्त्र द्वारा, यज्ञ कुंड का परिकल्पन निवृत्त से प्रारम्भ करते हुए तीन कलाओं के द्वारा, चौथे बीज मन्त्र द्वारा कुंड परिधान, कुंड की अर्चना प्रथम बीज मन्त्र द्वारा, चार रेखाओं का सम्पादन फट् के अन्त सहित छठवें बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। इस प्रकार यज्ञ कुंड का संस्कार अट्ठारह प्रकार से होता है।।६६।। यज्ञ के संस्कार के बाद अक्षपाटन (फाड़ना) कृत्य छठवे बीज मन्त्र द्वारा, विष्टर (आसन) देना प्रथम बीज मन्त्र द्वारा किया जाय, तब वागीश्वरी देवी का आह्वान वज्र आसन पर किया जाय।।६७।। ओम् ह्रीं वागीश्वराय नमः। बागेश्वरी का ध्यान करते हुए आह्वान, स्थापन, संविधान, संनिरोध संस्कार पूरा किया जाय।।६८-७२।। लकड़ी से या कान्त (एक प्रकार के लोह) से अथवा अग्नि होत्र से अग्नि उत्पन्न करके ताम्र पात्र या मिट्टी के प्याले में ले आवे। इसके बाद प्रथम बीज मन्त्र द्वारा निरीक्षण तांडन अभ्युक्षण और प्रक्षालन कृत्य किया जाय। दैत्य (दानव) और अशिव (असुर) वस्तुओं का दूरीकरण प्रथम बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। अग्नि को तीन भागों में विभक्त करे। जठर (पेट) और भौहों के मध्य से अग्नि का आह्वान करे। विश्व के कारण, लिंग में उद्दीपन कृत्य अग्नि से सम्बन्धित प्रथम बीज मन्त्र द्वारा किया जाय। धारणा और धेनुमुद्रा कृत्य को पुरुष मन्त्र और संहिता मन्त्र द्वारा पूर्ण किया जाय। पात्र को चौथे बीज मन्त्र द्वारा ढक दिया जाय। भक्त घुटने के बल

गर्भाधानं चसद्येनाद्येन पूजनं पुंसवनं वामेन पूजनं द्वितीयेन सीमंतोन्नयनमघोरेण तृतीयेन पूजनम्॥७३॥
अवयवव्याप्तिवक्त्रोद्घाटनं वक्त्रनिष्कृतिरिति तृतीयेन गर्भजातकर्मपुरुषेण पूजनं तुरीयेण षष्ठेन प्रोक्षणं सूतकशुद्धये चाग्निसूनुरक्षाकुशास्त्रेण वक्त्रेणाऽग्नौ मूलमीशाग्रं नैर्ऋतिमूलं वायव्याग्रं वायव्यमूलमीशाग्रमिति कुशास्तरणमितिपूर्वोक्त
मिध्ममग्रमूलघृताक्तं लालापनोदाय षष्ठेन जुहुयात्॥७४॥
पंचपूर्वातिक्रमेण परिधिविष्टरन्यासोऽपि आद्येन विष्टरोपरि हिरण्यगर्भहरनारायणानपि पूजयेत्॥७५॥
इंद्रादिलोकपालांश्च पूजयेत्॥७६॥
वज्रावर्तपर्यंतानपि पूजयेत्॥७७॥
वागीश्वरवागीश्वरीपूजाद्येनमुद्वास्य हुतं विसर्जयेत्॥७८॥
स्रुक्स्रुवसंस्कारमथो निरीक्षणप्रोक्षणताडनाभ्युक्षणादीनि पूर्ववत् स्रुक् स्रुवं च हस्तद्वये गृहीत्वा संस्थापनमाद्येन ताडनमपि

---

झुककर शराव (प्याला) को उठाकर यज्ञ कुण्ड पर रखे। उसके बाद चौथे बीज मन्त्र द्वारा, अग्नि के चारों ओर प्रदक्षिणा करे। इसके बाद भक्त स्वयं अपने सामने बागेश्वरी देवी का ध्यान करे। गर्भ नाड़ी में गर्भाधान कृत्य करे। प्रथम बीज मन्त्र वौषट् से अन्त होने वाले के द्वारा कमल भेंट करे। तब भक्त कुश द्वारा अर्घ्य करे। प्रथम बीज मन्त्र द्वारा अग्नि को ईंधन प्रदान करे। अग्नि का प्रज्ज्वलन और गर्भाधान सद्य मन्त्र द्वारा, पूजा कृत्य प्रथम बीज मन्त्र द्वारा, पुंसवन कृत्य वाम मन्त्र द्वारा, पूजा कृत्य द्वितीय बीज मन्त्र द्वारा, सीमंतोन्नयन अघोर मन्त्र द्वारा और पूजा तृतीय मन्त्र द्वारा की जाय।।७३।।

अवयवों (अंगों) की व्याप्ति मुख का उद्घाटन और मुख की विकृति (हटाने का) कार्य तृतीय बीज मंत्र द्वारा किया जाय। गर्भजात कर्म पुरुष मंत्र द्वारा, पूजा कृत्य चतुर्थ बीज मंत्र द्वारा की जाय। सूतक शुद्धि पुष्कर कृत्य छठवें बीज मंत्र द्वारा किया जाय। वक्त्र मंत्र द्वारा कुश मिलाकर रक्षाकृत्य किया जाय। कुशों को इस प्रकार बिछाया जाय। कुश का सिरा उत्तर-पूर्व की ओर, उसकी जड़ दक्षिण-पूर्व, एक कुश की जड़ दक्षिण-पश्चिम और कुश का सिरा उत्तर की ओर हो। एक कुश की जड़ उत्तर-पश्चिम और उसका सिरा उत्तर पूर्व हो। इस प्रकार कुशास्तरण कृत्य किया जाय। कुश के जड़ और सिरे को दही से भर करके छठवें बीज के मंत्र द्वारा अशुभ दूर करने के लिए पूर्वोक्त विधि से होम करे।।७४।। प्रथम परिधि विष्टर कृत्य पूरा करे। बीज मंत्र के साथ पंचपूर्वा की अतिक्रम के द्वारा विष्टर पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश की भी पूजा करे।।७५।। भक्त रुद्र से प्रारम्भ करके दिग्पालों और उनके वज्र से आवर्त (त्रिशूल) सहित अस्त्रों का भी पूजन करे। वागीश्वर और वागीश्वरी की पूजा इस प्रकार पूरी करे। इसके बाद उनका विसर्जन करे।।७६-७८।।

स्रुकस्रुवोपरि दर्भानुलेखनमूलमध्यामाऽग्रेण त्रित्वेन स्रुक्शक्तिं
स्रुवमपि शंभुं दक्षिणपार्श्वे कुशोपरि शक्तये नमः शंभवे नमः॥७९॥
ततो ह्यन्तिसूत्रेण स्रुकस्रुवौ तुरीयेण वेष्टयेदर्चयेच्च॥८०॥
धेनुमुद्रां दर्शयित्वा तुरीयेणावगुंठ्य षष्ठेन रक्षां विधाय स्रुक्स्रुवसंस्कारः पूर्वमेवोक्तः॥८१॥
पुनराज्यसंस्कारः पूर्वमेवोक्त निरीक्षणप्रोक्षणताडनाभ्युक्षणादीनि पूर्ववत्॥८२॥
आज्यप्रतापनमैशान्यां वा षष्ठेन वेद्युपरि विन्यस्य घृतपात्रं
वितस्तिमात्रं कुशपवित्रं वामहस्तांगुष्ठानामिकाग्रं गृहीत्वा दक्षिणां-
गुष्ठानामिकामूलं गृहीत्वाग्निज्वालोत्पवनं स्वाहांतेन तुरीयेण
पुनः षड् दर्भान् गृहीत्वा पूर्ववत्स्वात्मसंप्लवनं स्वहांतेनाद्येन
कुशद्वयपवित्रबंधनं चाद्येन घृते न्यसेदिति पवित्रीकरणम्॥८३॥
दर्भद्वयं प्रगृह्याग्निप्रज्वालनं घृतं त्रिधा वर्तयेत्। संप्रोक्ष्याग्नौ निधापयेदिति नीराजनम्॥८४॥
पुनर्दर्भान् गृहीत्वा कीटकादि निरीक्ष्यार्घ्येण संप्रोक्ष्य दर्भानग्नौ निधाय इत्यवद्योतनम्॥८५॥
दर्भद्वयं गृहीत्वाग्निज्वालया घृतं निरीक्षयेत्॥८६॥
दर्भेण गृहीत्वा तेनाग्रद्वयेन शुक्लपक्षद्वयेनाद्येनेति कृष्णपक्ष-
संपातनं घृतं त्रिभागेन विभज्य स्रुवेणैकभागेनाज्येनाग्नये स्वाहा

---

इसके आगे सूक्त स्रुव संस्कार कृत्य किया जाय। निरीक्षण, प्रोक्षण, ताडन, अभ्युक्षण आदि कृत्य पूर्ववत् किया जाय। स्रुक् स्रुवों को हाथों में लेकर पकड़े। प्रथम बीज मंत्र द्वारा संस्थापन और ताडन (कृत्य) किया जाय। स्रुव को कुश की जड़ मध्य और सिरे से तीन बार ताडन करे। उसके बाद शक्तये नमः ओम् शंभवे नमः मंत्र पढ़कर शिव के दाहिनी ओर स्रुव को कुश पर रख दे। उसके बाद भक्त स्रुवों को सूत से अपने हाथ से चतुर्थ बीज मंत्र पढ़कर बाँधे और उनकी पूजा करे।।७९-८०।। तब भक्त धेनुमुद्रा दिखाये। चतुर्थ बीज मंत्र से उसको ढके और छठे बीज मंत्र द्वारा रक्षा कृत्य करे। शुद्धिकरण कृत्य को तुमको पहले ही बताया गया है। पूर्वोक्त है। निरीक्षण प्रोक्षण, ताडन और अभ्युक्षण पूर्ववत् होगा।।८१-८२।।

छठवें बीज मंत्र द्वारा उत्तर-पूर्व में धृत के तापन (गर्म करने का संस्कार) घृत के पात्र को वेदी पर रखे। एक लम्बे कुश की गोली अँगूठी की तरह कुंडली बनावे। भक्त उसके सिरे को बाये हाथ के अँगूठे और अनामिका से पकड़े और उसकी जड़ को दायें हाथ के अँगूठे और अनामिका से पकड़े। चतुर्थ बीज मंत्र स्वाहा के मंत्र होने वाले अग्नि की ऊपर ज्वाला (लपक) का उत्पवन (फूँकना) कृत्य पूरा किया जाय। फिर वह छह कुशों को लेकर स्वाहान्त प्रथम बीज मंत्र द्वारा पूर्ववत् आत्म सम्पन्न कृत्य करे। दो कुशों का पवित्र बंधन कृत्य प्रथम बीज मंत्र से किया जाय। दो कुशों के अग्र भाग को आपस में बाँधकर उसकी कुंडली को घी में रख दे। यह पवित्रीकरण है।।८३।। भक्त दो कुशों को लेकर उसके अग्रभाग को जला करके वह वेदी के चारों ओर तीन बार घुमाये। उसके बाद जल छिड़ककर घी से डूबा कर अग्नि में डाल दे। यह नीराजन कृत्य है।।८४।। अब भक्त कुशों को लेकर उसमें कीड़े आदि न हो, यह देखकर अर्घ्य जल से धोकर उनको अग्नि में डाल दें। यह उद्योतन कृत्य है। तब भक्त

द्वितीयेनाज्येन सोमाय स्वाहा आज्येन ॐ अग्नीसोमाभ्यां
स्वाहा आज्येनाग्नये स्विष्टकृते स्वाहा॥८७॥
पुनः कुशेन गृहीत्वा संहिताभिमंत्रेण नमोन्तेनाभिमंत्रयेत्॥८८॥
अभिमंत्र्य धेनुमुद्राप्रदर्शनकवचावगुंठनास्त्रेण रक्षाम्।
अथ संस्कृते निधापयेत् आज्यसंस्कारः॥८९॥
आज्येन स्रुग्वदनेन चक्राभिधारणं शक्तिबीजादीशानमूर्तये
स्वाहा। पूर्ववत्पुरुषवक्त्राय स्वाहा अघोरहृदयाय स्वाहा वामदेवाय
गुह्याय स्वाहा सद्योजातमूर्तये स्वाहा। इति वक्त्रोद्घाटनम्॥९०॥
ईशानमूर्तये तत्पुरुषवक्त्राय स्वाहा तत्पुरुषवक्त्राय अघोरहृदयाय
स्वाहा अघोरहृदयाय
वामगुह्याय सद्योजातमूर्तये स्वाहा इति वक्त्रसंधानम्॥९१॥
ईशानमूर्तये तत्पुरुषाय वक्त्राय अघोरहृदयाय वामदेवाय
गुह्याय सद्योजाताय स्वाहा इति वक्त्रैक्यकरणम्॥९२॥
शिवाग्निं जनयित्वैवं सर्वकर्माणि कारयेत्। केवलं जिह्वया वापि शांतिकाद्यानि सर्वदा॥९३॥
गर्भाधानादिकार्येषु वह्नेःप्रत्येकमव्यय। दश आहुतयो देया योनिबीजेन पंचधा॥९४॥
शिवाग्नौ कल्पयेद्दिव्यं पूर्ववत्परमासनम्। आवाहनं तथा न्यासं यथा देवे तथार्चनम्॥९५॥

---

दो कुशों के सिरे को कुछ घी मिलाकर मुख के दो भाग शुक्ल (सफेद) और एक भाग काला (कृष्ण) रूप में स्मरण करे। वह घृत को ३ भागों में विभक्त करें। स्रुवा के एक भाग को घी को लेकर अग्नये स्वाहा पढ़कर अग्नि में डाले। द्वितीय भाग को धृत से सोमाय स्वाहा पढ़कर अग्नि में डाले। घी के तृतीय भाग को ॐ अग्निसोमाभ्याम् स्वाहा अग्नये स्वाहा स्विष्ट कृते स्वाहा मंत्र को पढ़कर अग्नि में डाले (आहुति करे)।।८५-८७।।

भक्त फिर कुश के अग्रभाग से घी लेकर उसको नमः अन्तयुक्त संहिता मंत्र से अभिमंत्रित करे। कवच मुद्रा और धेनुमुद्रा कृत्यों का प्रदर्शन और कवच मुद्रा से ढके और अस्त्र मंत्र से रक्षा को करे। यह पवित्र घी पर रखे। यह आज्य संस्कार है। तब मुख का उद्घाटन (वक्त्र उद्घाटन) संस्कार करे। स्रुवा के मुख से घी को शक्तिबीज मंत्र से चारों ओर घुमाना (चक्राभिधारण) ईशान मूर्तये स्वाहा, पूर्ववत् पुरुषवक्त्राय स्वाहा, अघोर हृदयाय स्वाहा, वामदेवाय गुह्याय, सद्योजाताय स्वाहा। प्रत्येक स्वाहा मंत्र से घी की आहुति दे। यह तुष्टीकरण या संघान कृत्य है।।८८-९०।। ईशान मूर्तये तत्पुरुषाय वक्त्राय अघोर हृदयाय वामदेवाय प्रणवाय सद्योजाताय स्वाहा। यह वक्त्रैककरण कृत्य है।।९१-९२।।

भक्त शिवाग्नि उत्पन्न करके इस प्रकार सदा सब कार्यों को करे अथवा केवल एक जिह्वा अग्नि से सब शान्तिपुष्टिक आदि कार्य करे।।९३।।

हे अव्यय! गर्भाधान आदि के संस्कार में प्रत्येक के लिए दस आहुति अग्नि में दी जानी चाहिये। योनि बीज मंत्र से शिवाग्नि में पाँच प्रकार से पूर्ववत् परम दिव्य आशा की कल्पना (धारण) करे। पूजा में कथित पूर्वविधि से देव का आह्वान और उद्वासन करे। भक्त एक बार मूल मंत्र का जाप करके देवों के स्वामी को प्रणाम करे।

मूलमंत्रं सकृज्जप्त्वा देवदेवं प्रणम्य च। प्राणायाम त्रयं कृत्वा सगर्भं सर्वसंमतम्॥९६॥
परिषेचनपूर्वं च तदिध्ममाभिधार्य च। जुहुयादग्निमध्ये तु ज्वलितेऽथ महामुने॥९७॥
आघारावपि चाधाय चाज्येनैव तु षण्मुखे। आज्यभागौ तु जुहुयाद्विधिनैव घृतेन च॥९८॥
चक्षुषी चाज्यभागौ तु चाग्नये च तथोत्तरे। आत्मनो दक्षिणे चैव सोमायेति द्विजोत्तम॥९९॥
प्रत्यङ्मुखस्य देवस्य शिवाग्नेर्ब्रह्मणः सुत। अक्षि वै दक्षिणं चैव चोत्तरं चोत्तरं तथा॥१००॥
दक्षिणं तु महाभाग भवत्येव न संशयः। आज्येनाहुतयस्तत्र मूलेनैव तथैव तु॥१०१॥
चरुणा च यथावद्धि समिद्भिश्च तथा स्मृतम्। पूर्णाहुतिं ततो दद्यान्मूलमंत्रेण सुव्रत॥१०२॥
सर्वावरणदेवानां पंचपंचैव पूर्ववत्। ईशानादिक्रमेणैव शक्तिबीजक्रमेण च॥१०३॥
प्रायश्चित्तमघोरेण स्वेष्टांतं पूर्ववत्स्मृतम्। त्रिप्रकारं मया प्रोक्तमग्निकार्यं सुशोभनम्॥१०४॥
यथावसरमेवं हि कुर्यान्नित्यं महामुने। जीवितांते लभेत्स्वर्गं लभते अग्निदीपनम्॥१०५॥
नरकं चैव नाप्नोति यस्य कस्यापि कर्मणः। अहिंसकं चरेद्धोमं साधको मुक्तिकांक्षकः॥१०६॥
हृदिस्थं चिंतयेदग्निं ध्यानयज्ञेन होमयेत्। देहस्थं सर्वभूतानां शिवं सर्वजगत्पतिम्॥१०७॥
तं ज्ञात्वा होमयेद्भक्त्या प्राणायामेन नित्यशः। बाह्यहोमप्रदाता तु पाषाणे दर्दुरो भवेत्॥१०८॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचविंशतितमोऽध्यायः॥२५॥**

---

ओम् को दोहराते हुए सगर्भ प्रकार का तीन प्राणायाम करे जो सब योगियों से सम्मत है। जल छिड़कने के बाद यज्ञ की समिधाओं पर घी डाले। हे महामुनि! तब भक्त प्रज्वलित अग्नि में हवन करे।।९४-९७।।

भक्त पात्रों के साथ घी को ले ले। दो भागों को एक साथ सब छः मुखों में विधान के साथ अग्नि में डाल दे। हे महामुनि! दो भागों को एक साथ दक्षिण-पूर्व में और उत्तर दो आँखें हैं। अपने दक्षिण में सोम के लिए आहुति दे दे।।९८-९९।। तब हे ब्रह्मा के पुत्र! घी के दो भाग शिवाग्नि के पश्चिम मुख बैठे हुए देवता शिव के दो नेत्र दाहिना और बाँया है। निसन्देह ऐसा है। मूल मन्त्र को पढ़ते हुए दस आहुतियाँ दी जानी चाहिए। चरु और समिधाओं से यथावत् आहुति दी जाने चाहिए। हे सुव्रत! तक भक्त को मूल मन्त्र से पूर्ण आहुति देनी चाहिए। शिव के चारों ओर घिरे हुए देवताओं के ईशान आदि क्रम से शक्ति बीज मन्त्र के क्रम से प्रत्येक के लिए पाँच-पाँच आहुतियाँ दी जानी चाहिये। अघोर मन्त्र द्वारा प्रायश्चित किया जाय। इस प्रकार मैंने तीन प्रकार के उत्तम अग्नि कार्यों को बताया। हे महामुनि! जैसा अवसर मिले इनको प्रतिदिन करना चाहिये। मुक्ति की काँक्षा करने वाला साधक भक्त जीवन के अन्त में मुक्ति प्राप्त कर सकता है। वह अग्नदीपन की शक्ति प्राप्त कर सकता है। उसका कर्म कुछ भी हो वह कभी नरक में नहीं जाता है। मुक्ति की काँक्षा करने वाले साधक को अहिंसक होम करना चाहिए। हृदय में स्थित अग्निदेव का ध्यान लगाना चाहिए। ध्यान यज्ञ होम करना चाहिए। सब प्राणियों में विद्यमान शिव का अनुभव करते हुए, विश्व स्वामी को जानकर भक्तिपूर्वक प्रतिदिन प्राणायाम से होम करना चाहिए। वह जो कि बाह्य होम करता है वह पत्थर में मेढक होता है।।१००-१०८।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव सम्बन्धित पवित्र अग्निहोत्र नामक पच्चीसवाँ अध्याय समाप्त॥२५॥**

षड्विंशतितमोऽध्यायः

# अघोरस्य पूजाविधिः

शैलादिरुवाच

अथवा देवमीशानं लिंगे संपूजयेच्छिवम्। ब्राह्मणः शिवभक्तश्च शिवध्यानपरायणः॥१॥
अग्निरित्यादिना भस्म गृहीत्वा ह्यग्निहोत्रजम्। उद्धूलयेद्धि सर्वांगमापादतलमस्तकम्॥२॥
आचामेद्ब्रह्मतीर्थेन ब्रह्मसूत्री ह्युदङ्मुखः। अथोंनमः शिवायेति तनुं कृत्वात्मनः पुनः॥३॥
देवं च तेन मंत्रेण पूजयेत्प्रणवेन च। सर्वस्मादधिका पूजा अघोरेशस्य शूलिनः॥४॥
सामान्यं यजनं सर्वमग्निकार्यं च सुव्रत। मंत्रभेदः प्रभोस्तस्य अघोरध्यानमेव च॥५॥

मंत्रः

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।६॥

अघोरेभ्यः प्रशांतहृदयाय नमः।
अथ घोरेभ्यः सर्वात्मब्रह्मशिरसे स्वाहा।
घोरघोरतरेभ्यः ज्वालामालिनी शिखायै वषट्।
सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यः पिंगलकवचाय हुम्।
नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः नेत्रत्रयाय वषट्।
सहस्राक्षाय दुर्भेदाय पाशुपतास्त्राय हुं फट्।

स्नात्वाचम्य तनुं कृत्वा समभ्युक्ष्याघमर्षणम्। तर्पणं विधिना चार्घ्यं भानवे भानुपूजनम्॥७॥

---

छब्बीसवाँ अध्याय

# अघोर पूजा की विधि

शैलादि बोले

शिव के ध्यान में परायण ब्राह्मण और शिव भक्त लिंग में ईशान भगवान शिव की पूजा करे।।१।। 'अग्नि' इत्यादि मन्त्र को पढ़ते हुए अग्निहोत्र की अग्नि से भस्म को लेकर पैर से लेकर मस्तक तक उस भस्म को लगाये।।२।। वह यज्ञोपवीत धारण करे। उत्तर की ओर मुख करके ब्रह्म तीर्थ के पवित्र जल से आचमन करे। इसके बाद ओम नमः शिवाय पढ़कर के अपने शरीर को अभिमन्त्रित करे।।३।। वह उस मन्त्र से और प्रणव से देव शिव की पूजा करे। अघोरेश शिव की पूजा सबसे अधिक महत्त्व की है।।४।। हे सुव्रत! सही पूजा और आदि निमित्त पवित्र संस्कार सामान्य है। किन्तु अघोर के ध्यान में मन्त्रों में भेद है।।५।। 'अघोरेभ्यः प्रशान्तहृदाय नमः' से आरम्भ करके 'पाशुपतास्त्राय हुं फट्' तक मंत्र पढ़ कर ध्यान करे। स्नान के बाद अघमर्षण का संस्कार पूरे शरीर पर जल छिड़ककर और आचमन करके तर्पण कृत्य सूर्य को अर्घ्य और सूर्य की पूजा करे। अघोर की

समं चाघोरपूजायां मंत्रमात्रेण भेदितम्। मार्गशुद्धिस्तथा द्वारि पूजां वास्त्वधिपस्य च॥८॥
कृत्वा करं विशोध्याग्रे सशुभासनमास्थितः। नासाग्रकमले स्थाप्य दग्धाक्षः क्षुभिकाग्निना॥९॥
वायुना प्रेर्य तद्भस्म विशोध्य च शुभांभसा। शक्त्यामृतमये ब्रह्मकलां तत्र प्रकल्पयेत्॥१०॥
अघोरं पंचधा कृत्वा पंचांगसहितं पुनः। इत्थं ज्ञानक्रियामेवं विन्यस्य च विधानतः॥११॥
न्यासस्त्रिनेत्रसहितो हृदि ध्यात्वा वरासने। नाभौ वह्निगतं स्मृत्वा भ्रूमध्ये दीपवत्प्रभुम्॥१२॥
शांत्या बीजांकुरानंतधर्माद्यैरपि संयुते। सोमसूर्याग्निसंपन्ने मूर्तित्रयसमन्विते॥१३॥
वामादिभिश्च सहिते मनोन्मन्याप्यधिष्ठिते। शिवासनेत्ममूर्तिस्थमक्षयाकाररूपिणम्॥१४॥
अष्टत्रिंशत्कलादेहं त्रितत्त्वसहितं शिवम्। अष्टादशभुजं देवं गजचर्मोत्तरीयकम्॥१५॥
सिंहाजिनांबरघरमघोरं परमेश्वरम्। द्वात्रिंशाक्षररूपेण द्वात्रिंशच्छक्तिभिर्वृतम्॥१६॥
सर्वाभरणसंयुक्तं सर्वदेवनमस्तकृतम्। कपालमालाभरणं सर्पवृश्चिकभूषणम्॥१७॥
पूर्णेंदुवदनं सौम्यं चंद्रकोटिसमप्रभम्। चंद्ररेखाधरं शक्त्या सहितं नीलरूपिणम्॥१८॥
हस्ते खड्गं खेटकं पाशमेके रत्नैश्चित्रं चांकुशं नागकक्षाम्।
शरासनं पाशुपतं तथास्त्रं दंडं च खट्वांगमथापरे च॥१९॥
तंत्रीं च घंटां विपुलं च शूलं तथापरे डामरुकं च दिव्यम्।
वज्रं गदां टंकमेकं च दीप्तं समुद्गरं हस्तमथास्य शंभोः॥२०॥

---

पूजा में सर्व सामान्य है कि केवल पढ़े जाने वाले मन्त्रों में भेद है। मार्ग शुद्धि संस्कार और वास्त्वधिप (निवास के पास रहने वाले देव) की द्वार पूजा को पहले किया जाय।।६-८।। यह पूजा करके भक्त अपने हाथ को धो डाले। शिव आसन पर बैठे कमल के समान नाक के ऊपर भस्म लगावे। क्षुभिका अग्नि से दग्धाक्ष हवा से अपनी आँखों पर से उसको उड़ने दे। उस भस्म को शुद्ध जल से शुद्ध करे। तब शक्ति के द्वारा अमृतमय रस में ब्रह्म कला की कल्पना करे। फिर अघोर मन्त्र को पाँच भागों में विभक्त करके और पाँच अंगों के सहित अंगन्यास करे। इस प्रकार विधान के अनुसार ज्ञान क्रिया को करके इस प्रकार हृदय में स्थित देव को, नाभि पर अग्नि में स्थित और बाहों के बीच में दीप के समान चमकते हुए प्रभु का ध्यान करे। यह त्रिनेत्र न्यास कहलाता है।।९-१२।। तब भक्त अघोर पर निम्नलिखित रूप में ध्यान करे। वह शिवासन पर बैठे जो शान्ति, बीज, अंकुर, अनन्त धर्म और अन्य आदि से संयुक्त हैं, जहाँ चन्द्र, सूर्य और अग्नि उपस्थित हैं, जहाँ त्रिमूर्ति विराजमान है जो वामदेव और आदि अन्य के सहित मनोन्मनी भी उपस्थित है। अघोर आत्ममूर्ति में स्थित है, उनका रूप अक्षय है, उनका शरीर अढ़तीस कलाओं का है, वह तीन तत्त्वों के सहित है उनकी अठारह भुजाएँ हैं, वह अपने उत्तरीय के ऊपर गज चर्म ओढ़े हुए हैं, वह सिंह के चर्म को वस्त्र रूप में धारण किये हुए है। अघोर, परमेश्वर बत्तीस शक्तियों से जो कि बत्तीस अक्षर रूप में हैं उनसे घिरे हुए है। वह सब आभूषणों से भूषित हैं। वह सब देवताओं द्वारा नमस्कृत हैं। कपाल माला धारण किये हुए और साँप और बिच्छुओं को आभूषण रूप में पहने हुए हैं। उनके मुख सौम्य हैं और मुख की प्रभा कोटि चन्द्रमा के समान है वह चन्द्र रेखा को सिर पर धारण किये हुए है। वह नील रूप में है और शक्ति उनके साथ है। अपने दाहिने हाथ में तलवार, खेटक, (ढाल) पाश रत्नों से जड़ा हुआ

वरदाभयहस्तं च वरेण्यं परमेश्वरम्। भावयेत्पूजयेच्चापि वह्नौ होमं च कारयेत्॥२१॥
होमश्च पूर्ववत्सर्वो मंत्रभेदश्च कीर्तितः। अष्टपुष्पादि गंधादि पूजास्तुतिनिवेदनम्॥२२॥
अंतर्बलिं च कुंडस्य वाह्नेयेन विधानतः। मंडलं विधिना कृत्वा मंत्रैरेतैर्यथाक्रमम्॥२३॥
रुद्रेभ्यो भातृगणेभ्यो यक्षेभ्योऽसुरेभ्यो ग्रहेभ्यो राक्षसेभ्यो नागेभ्यो नक्षत्रेभ्यो
विश्वगणेभ्यः क्षेत्रपालेभ्यः अथ वायुवरुणदिग्भागे क्षेत्रपालबलिं क्षिपेत्॥२४॥
विज्ञाप्यैवं विसृज्याथ अष्ट पुष्पैश्च पूजनम्। सर्वसामान्यमेतद्धि पूजायां मुनिपुंगवाः॥२५॥
एवं संक्षेपतः प्रोक्तमघोरार्चादि सुव्रत।
अघोरार्चाविधानं च लिंगे वा स्थंडिलेऽपि वा॥२६॥
स्थंडिलात्कोटिगुणितं लिंगार्चनमनुत्तमम्। लिंगार्चनरतो विप्रो महापातकसंभवैः॥२७॥
पापैरपि न लिप्येत पद्मपत्रमिवांभसा। लिंगस्य दर्शनं पुण्यं दर्शनात्स्पर्शनं वरम्॥२८॥
अर्चनादधिकं नास्ति ब्रह्मपुत्र न संशयः। एवं संक्षेपतः प्रोक्तमघोरार्चनमुत्तमम्॥२९॥
वर्षकोटिशतेनापि विस्तरेण न शक्यते॥३०॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षड्विंशतितमोऽध्यायः॥२६॥**

---

अंकुश और नागकक्ष (एक प्रकार की ढाल), एक धनुष, एक पाशुपत अस्त्र, एक दण्ड और एक खट्वाँग धारण किये हुए हैं। बाएँ हाथ में वीणा, घण्टा, त्रिशूल और दिव्य डमरू, बज्र, गदा, टंक और मुद्गर और लोहे का दंड लिए हुए हैं। उनका हाथ भय से मुक्ति दिलाने और वरदान देने वाला है। भक्त इस रूप में अघोर का ध्यान करे और उनकी पूजा करे। उसके बाद अग्नि में होम करे।।१३-२१।। पूरा होम कार्य पूर्ववत् किया जाय किन्तु मंत्रों के भेद से जैसा कि पहले बताया गया है। पूजा आठ पुष्पों और गंध आदि से की जाय। स्तुति, निवेदन, कुंड में अग्निपुराण से निर्धारण विधि से होम करे। विधि से मंडल बनाकर पाँच बार मन्त्रों द्वारा होम किया जाय। रुद्र, मातृत्व, यक्ष, असुर, ग्रह, राक्षस, नाग, नक्षत्र, विश्वगण, क्षेत्रपाल के लिये होम करे। उसके बाद पश्चिम उत्तर-पश्चिम दिशाओं के क्षेत्रपालों को भक्त बलि प्रदान करे। अर्घ्य, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य मुखवास ताम्बूल आदि यथाविधि भेंट करे। हे सुव्रत! इस प्रकार निवेदन के बाद भक्त आठ फूलों से निवेदन करके विसर्जन करे।।२२-२५।। इस प्रकार अघोर की पूजा की विधिं का वर्णन किया गया। अघोर की यह पूजा लिंग में या शुद्ध भूमि पर की जाय। भूमि पर अघोर की पूजा, लिंग पर की गई पूजा से हजार गुना अधिक फलदायी है। वह ब्राह्मण जो कि लिंगार्चन करता है वह महापातकों से उसी तरह अप्रभावित रहता है जैसे कमल का पत्ता जल से। लिंग का दर्शन पुण्य है। लिंग का स्पर्श उससे अधिक श्रेष्ठ है। हे ब्रह्मपुत्र! लिंग के अर्चना पूजा से बढ़कर कुछ नहीं है। हजार करोड़ वर्षों में भी इसका विस्तार में वर्णन नहीं किया जा सकता है।।२६-३०।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अघोर पूजा की विधि**
**नामक छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त॥२६॥**

## सप्तविंशोऽध्यायः

# अभिषेकविधिः

ऋषय ऊंचुः।

प्रभावो नंदिनश्चैव लिंगपूजाफलं श्रुतम्। श्रुतिभिः संमितं सर्वं रोमहर्षण सुव्रत॥१॥
जयाभिषेक ईशेन कथितो मनवे पुरा। हिताय मेरुशिखरे क्षत्रियाणां त्रिशूलिना॥२॥
तत्कथं षोडशविधं महादानं च शोभनम्। वक्तुमर्हसि चास्माकं सूत बुद्धिमतांवर॥३॥

सूत उवाच

जीवच्छ्राद्धं पुरा कृत्वा मनुः स्वायंभुवः प्रभुः। मेरुमासाद्य देवेशमस्तवीन्नीललोहितम्॥४॥
तपसा च विनीताय प्रहृष्टः प्रददौ भवः। दिव्यं दर्शनमीशानस्तेनापश्यत्तमव्ययम्॥५॥
नत्वा संपूज्य विधिना कृतांजलिपुटः स्थितः। हर्षगद्गदया वाचा प्रोवाच च ननाम च॥६॥
देवदेव जगन्नाथ नमस्ते भुवनेश्वर। जीवच्छ्राद्धं महादेव प्रसादेन विनिर्मितम्॥७॥
पूजितश्च ततो देवो दृष्टश्चैव मयाधुना। शक्राय कथितं पूर्वं धर्मकामार्थमोक्षदम्॥८॥
जयाभिषेकं देवेश वक्तुमर्हसि मे प्रभो।

सूत उवाच

तस्मै देवो महादेवो भगवान्नीललोहितः॥९॥

---

## सत्ताईसवाँ अध्याय

# अभिषेक की विधि

**ऋषिगण बोले**

नन्दी के प्रभाव से हम लोगों ने वेदों से सम्मत लिंग पूजा के फल को आप से सुना। हे लोभहर्षण सुव्रत! पहले ईश शिव जी मेरु के शिखर पर मनु से क्षत्रियो के हित के लिये जय अभिषेक कहा था। वह किस प्रकार है। वह सोलह प्रकार का महादान कैसा है? हे सूत बुद्धिमानों में श्रेष्ठ! वह आप हम लोगों से कहिये।।१-३।।

**सूत बोले**

स्वयंभू मनु ने जीवितश्राद्ध करके मेरु पर पहुँचकर भगवान नीललोहित शिव की स्तुति की।।४।। मनु की तपस्या से प्रसन्न भव, ईशान ने विनीतभक्त मनु को दिव्य दर्शन दिया।।५।। मनु ने शिव को प्रणाम करके विधिपूर्वक पूजा करके हाथ जोड़कर हर्ष से गद्गद वचन से उन्होंने इस प्रकार कहा।।६।।

हे देवताओं के देव, हे जगन्नाथ, हे भुवनेश्वर! आपकी कृपा से मैंने जीवत्श्राद्ध किया। उसके बाद आपकी पूजा की। उसके फलस्वरूप अब आपका दर्शन हुआ। आपने पहले इन्द्र से जयाभिषेक संस्कार को कहा था जो कि धर्म, काम, अर्थ, मोक्ष को देने वाला है। हे प्रभु! वह आप मुझको बताएँ।

**सूत बोले**

महादेव, नीललोहित, परमेश्वर ने मनु को पूर्ण विस्तार में जयाभिषेक संस्कार को बताया।।७-९।।

जयाभिषेकमखिलमवदत्परमेश्वरः ।

श्रीभगवानुवाच

जयाभिषेकं वक्ष्यामि नृपाणां हितकाम्यया॥१०॥

अपमृत्युजयार्थं च सर्व शत्रुजयाय च। युद्धकाले तु संप्राप्ते कृत्वैवमभिषेचनम्॥११॥
स्वपतिं चाभिषिच्यैव गच्छेद्योद्धुं रणाजिरे। विधिना मंडपं कृत्वा प्रपां वा कूटमेव वा॥१२॥
नवधा स्थापयेद्वह्निं ब्राह्मणो वेदपारगः। ततः सर्वाभिषेकार्थं सूत्रपातं च कारयेत्॥१३॥
प्रागाद्यं वर्णसूत्रं च दक्षिणाद्यं तथा पुनः। सहस्राणां द्वयं तत्र शतानां च चतुष्टयम्॥१४॥
शेषमेव शुभं कोष्ठं तेषु कोष्ठं तु संहरेत्। बाह्ये वीथ्यां पदं चैकं समंतादुपसंहरेत्॥१५॥
अंगसूत्राणि संगृह्य विधिना पृथगेव तु। प्रागाद्य वर्णसूत्रं च दक्षिणाद्यं तथा पुनः ॥१६॥
प्रागाद्यं दक्षिणद्यं च षट्त्रिंशत्संहरेत्क्रमात्। प्रागाद्याः पंक्तयः सप्त दक्षिणाद्यास्तथा पुनः॥१७॥
तस्मादेकोनपंचाशत्पंक्तयः परिकीर्तिताः। नव पंक्तीर्हरेन्मध्ये गन्धगोमयवारिणा॥१८॥
कमलं चालिखेत्तत्र हस्तमात्रेण शोभनम्। अष्टपत्रं सितं वृत्तं कर्णिकाकेसरान्वितम्॥१९॥
अष्टांगुलप्रमाणेन कर्णिका हेमसन्निभा। चतुरंगुलमानेन केसरस्थानमुच्यते॥२०॥
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च यथाक्रमम्। आग्नेयादिषु कोणेषु स्थापयेत्प्रणवेन तु॥२१॥
अव्यक्तादीनि वै दिक्षु गात्राकारेण वै न्यसेत्। अव्यक्तं नियतः कालः काली चेति चतुष्टयम्॥२२॥

---

**भगवान बोले**

राजाओं के कल्याण के लिए शत्रुओं के ऊपर विजय प्राप्त करने और अकाल मृत्यु को जीतने के लिए जयाभिषेक को तुमसे कहूँगा। जब युद्ध का समय आवे, तब अभिषेचन को करे, उसके बाद वह युद्ध क्षेत्र में जाय। विधि से मण्डप करके, एक पानी घर (प्याऊ) या कूट निवास-स्थान (आवास) बनाकर, एक वेदज्ञ ब्राह्मण नौ स्थानों में अग्नि स्थापित करे। वहाँ पर अभिषेक के लिए सूत से लाइने खींच दें।।१०-१३।। पहला सूत पूर्व से और पहला सूत दक्षिण से रंग दिया जाय। वहाँ पर दो हजार चार सौ सूत हों। इन सूतों द्वारा चौकोर सीमा बनायी जाय। उनके भीतर चौकोर कोष्ठ (कोठे) बनाया जाय। बाहर की ओर, चारो पूरे गोल, चौड़ाई में एक फुट रास्ता बनाया जाय। अंग सूत्रों को इकट्ठा करके अलग रख लिया जाय। प्रत्येक लाइन के लिए छत्तीस तागों को इकट्ठा दोहरा लिया जाय। वहाँ पर सात छत्तीस चौकोर कोष्ठ हो जायँगे जो पूर्व से पश्चिम की ओर और सात पंक्ति दक्षिण से उत्तर की ओर। अतः वहाँ सात पंक्तियाँ हो गयीं। इस प्रकार ४९ पंक्तियाँ होंगी। मध्य में नौ पंक्तियों को गाय के गोबर में पानी मिलाकर लीप दें।।१४-१८।। वहाँ चौड़ाई में एक हाथ का सफेद आठ पत्तोंवाला कर्णिका और केसर से युक्त डाइग्राम बनावे।।१९।। आठ अंगुल लम्बा सोने के समान चमकदार कर्णिका हो और केसर स्थान चार अंगुल लम्बा हो।।२०।। अग्नि आदि कोणों में दक्षिण अग्नि कोण से प्रारम्भ करके ओम् सहित धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य की स्थापना करनी चाहिए। अव्यक्त आदि को पूर्व से प्रारम्भ करके चारों दिशाओं में उनकी देह रूप में स्थापित करें। अव्यक्त नियत काल और काली ये चार हैं।।२१-२२।।

सितरक्तहिरण्याभकृष्णा धर्मादयः क्रमात्। हंसाकारेण वै गात्रं हेमाभासेन सुव्रताः॥२३॥
आधारशक्तिमध्ये तु कमलं सृष्टिकारणम् बिंदुमात्रं कलामध्ये नादाकारमतः परम्॥२४॥
नादोपरि शिवं ध्यायेदोंकाराख्यं जगद्गुरुम्। मनोन्मनीं च पद्माभं महादेवं च भावयेत्॥२५॥
वामादयः क्रमेणैव प्रागाद्याः केसरेषु वै। वामा ज्येष्ठा तथा रौद्री काली विकरणी तथा॥२६॥
बला प्रमथिनी देवी दमनी च यथाक्रमम्। वामदेवादिभिः सार्धं प्रणवेनैव विन्यसेत्॥२७॥
नमोऽस्तु वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय शूलिने॥२८॥
रुद्राय कालरूपाय कलाविकरणाय च। बलाय च तथा सर्वभूतस्य दमनाय च।२९॥
मनोन्मनाय देवाय मनोन्मन्यै नमोनमः। मंत्रैरेतैर्यथान्यायं पूजयेत्परिमंडलम्॥३०॥
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। द्वितीयावरणे चैव शक्तयः षोडशैव तु॥३१॥
तृतीयावरणे चैव चतुर्विंशदनुक्रमात्। पिशाचवीथिर्वै मध्ये नाभिवीथिः समंततः॥३२॥
मंत्रैरेतैर्यथान्यायं पिशाचानां प्रकीर्तिता। अष्टोत्तरसहस्रं तु पदमष्टारसंयुतम्॥३३॥
तेषु तेषु पृथक्त्वेन पदेषु कमलं क्रमात्। कल्पयेच्छालिनीवारगोधूमैश्च यवादिभिः॥३४॥
तंडुलैश्च तिलैर्वाथ गौरसर्षपसंयुतैः। अथवा कल्पयेदेतैर्यथाकालं विधानतः॥३५॥
अष्टपत्रं लिखेत्तेषु कर्णिकाकेसरान्वितम्। शालीनामाढकं प्रोक्तं कमलानां पृथक् पृथक्॥३६॥
तंडुलानां तदर्धं स्यात्तदर्धं च यवादयः। द्रोणं प्रधानकुंभस्य तदर्धं तंडुलाः स्मृताः॥३७॥

---

धर्म आदि क्रमशः सफेद लाल, सुनहरे और काले रंग में हो। हे सुव्रत! शरीर (गात्र) हंस के आकार का सोने की तरह चमकीला हो।।२३।। आधार शक्ति के मध्य में कमल हो जो कि सृष्टि का कारण है, काल के बीच में, केवल बिन्दु है और उसके बाहर नाद (ध्वनि) का रूप है।।२४।। नाद के ऊपर जगद्गुरु शिव का ध्यान करना चाहिए जो कि ओंकार कहा जाता है। भक्त मनोन्मनी और महादेव जो कि कमल की आभा वाले हैं उनका ध्यान करें।।२५।। वामा आदि का पूर्व आदि दिशाओं के क्रम में ध्यान किया जाय। वे वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, विकरणी, बला, प्रमथिनी और दमिनी हैं। वे सब प्रणव द्वारा वामदेव और अन्य के साथ स्थापित की जाय।।२६-२७।। निम्नलिखित मन्त्रों से विधिपूर्वक परमण्डल की पूजा करे। रुद्राय कालरूपाय, कलाविकरणाय च बलाय च। तथा सर्वभूतस्य दमनाय च। मनोन्मनाय देवाय मनोन्मन्यै नमो मनः।।२८-३०।। प्रथम आवरण मैंने कहा। अब दूसरा आवरण ध्यानपूर्वक सुनो। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं।।३१।। तृतीय आवरण में क्रम से चौबीस शक्तियाँ हैं। पिशाच बीथी मध्य में है। नाभि बीथी चारों ओर है इन मन्त्रों द्वारा पिशाचों की पूजा की जानी चाहिए। पद एक हजार आठ है और प्रत्येक पद के आर (कोने) हैं। भक्त इन पदों के प्रत्येक पद में क्रम से कमल की कल्पना शाली चावल, निवार चावल, गेहूँ, जौ, तिल में सरसों मिले इन अन्नों के द्वारा कल्पना करे। या विधान के अनुसार इनको बनावे जबकि उचित समय आ जाय।।३२-३५।। उनमें कर्णिका और केसर से युक्त अष्टदल कमल को बनाये। प्रत्येक कमल के लिए एक आढक शाली धान का प्रयोग करे। चावल उसका आधा हो। जौ आदि उसका आधा हो। बड़े घड़े में एक द्रोण नाप का और उसका आधा चावल

तिलानामाढकं मध्ये यवानां च तदर्धकम्। अथांभसा समभ्युक्ष्य कमलं प्रणवेन तु॥३८॥
तेषु सर्वेषु विधिना प्रणवं विन्यसेत्क्रमात्। एवं समाप्य चाभ्युक्ष्य पदसाहस्त्रमुत्तमम्॥३९॥
कलशानां सहस्त्राणि हैमानि च शुभानि च। उक्तलक्षणयुक्तानि कारयेद्राजतानि वा॥४०॥
ताम्रजानि यथान्यायं प्रणवेनार्घ्यवारिणा। द्वादशांगुलविस्तारमुदरे समुदाहृतम्॥४१॥
वर्तितं तु तदर्धेन नाभिस्तस्य विधीयते। कंठं तु व्यंगुलोत्सेधं विस्तरं चतुरंगुलम्॥४२॥
ओष्ठं च व्यंगुलोत्सेधं निर्गमं द्व्यंगुलं स्मृतम्। तत्तद्वैद्विगुणं दिव्यं शिवकुंभे प्रकीर्तिमम्॥४३॥
यवमात्रांतरं सम्यक्तंतुना वेष्टयेद्धि वै। अवगुंठ्य तथाभ्युक्ष्य कुशोपरि यथाविधि॥४४॥
पूर्ववत्प्रणवैनैव पूरयेद्गंधवारिणा। स्थापयेच्छिवकुभाढ्यं वर्धनीं च विधानतः॥४५॥
मध्यपद्मस्य मध्यं तु सकूर्चं साक्षतं क्रमात्। आवेष्ट्य वस्त्रयुग्मेन प्रच्छाद्य कमलेन तु॥४६॥
हैमेन चित्ररत्नेन सहस्त्रकलशं पृथक्। शिवकुंभे शिवं स्थाप्य गायत्र्या प्रणवेन च॥४७॥
विद्महे पुरुषायैव महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥४८॥
मंत्रेणानेन रुद्रस्य सान्निध्यं सर्वदा स्मृतम्। वर्धन्यां देविगायत्र्या देवीं संस्थाप्य पूजयेत्॥४९॥
गणांबिकायै विद्महे महातपायै धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥५०॥
प्रथमावरणे चैव वामाद्याः परिकीर्तिताः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥५१॥
शक्तयः षोडशैवात्र पूर्वाद्यंतेषु सुव्रत। ऐंद्रव्यूहस्य मध्ये तु सुभद्रां स्थाप्य पूजयेत्॥५२॥

---

(धान) रखे।।३६-३७।। मध्य में एक आढक तिल रखे। उसका आधा परिमाण में जौ रखे। तब प्रणव को दोहराते हुए जल से कमल को छिड़कें और यथाक्रम उन सब में प्रणव को स्थापित करे। ये सब कार्य करके हजार पदों को छिड़कते हुए सोने चाँदी या ताँबे के हजार कलशों को रखें। वे सब लक्षणों से युक्त हों। प्रणव को दोहराते हुए अर्घ्य जल से उन पर छिड़काव किया जाय। प्रत्येक कलश उदर में बारह अंगुल चौड़ा हो और नीचे की ओर वक्र हो। उसकी नाभि चौड़ाई में छः अंगुल हो। कलश का गला ऊँचाई में दो अंगुल और चौड़ाई में चार अंगुल हो। उसका ओठ ऊँचाई में दो अंगुल हो। उसका निर्गम (टोटी) दो अंगुल हो। शिव कुंभ में इन सबकी दुगुनी माप होनी चाहिए।।३८-४३।। जौ मात्र का स्थान सूत से अच्छी तरह बाँध-कर पात्र को बन्द कर दिया जाय और जल से छिड़ककर कुश पर रख दिया जाय। पहले की तरह प्रणव को दोहराते हुए इसको सुगन्धित जल से भर दें। शिव कुंभ के साथ वर्धनी पात्र को विधान के साथ स्थापित करें। मध्य कमल के बीच में कुश सहित क्रम से और अक्षत सहित स्थापित करें। हजार कलशों में से प्रत्येक को जोड़े वस्त्र से लपेटकर और कमल से ढककर रखे। कमल सोने के हों और उसमें विभिन्न रंग के रत्न जड़े हों। गायत्री और प्रणव के द्वारा शिव कुंभ स्थापित करे। विद्महे पुरुषायैव महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्र प्रचोदायात् इस मन्त्र से रुद्र की उपस्थिति सदैव होती है। वर्धनी में देवी गायत्री मन्त्र द्वारा देवी को स्थापित करे और 'गणाम्बिकायै विद्महे महातपायै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्' इस मन्त्र से पूजा करे।।४४-५०।। प्रथम आवरण में वाम आदि कही गयी हैं। प्रथम आवरण का वर्णन किया गया। अब द्वितीय आवरण को ध्यानपूर्वक सुनो। हे सुव्रत! यहाँ सोलह शक्तियाँ हैं। यह पूर्व से

भद्रामाग्नेयचक्रे तु याम्ये तु कनकांडजाम्। अंबिकां नैर्ऋते व्यूहे मध्यकुंभे तु पूजयेत्॥५३॥
श्रीदेवीं वारुणे भागे वागीशां वायुगोचरे। गोमुखीं सौम्यभागे तु मध्यकुंभे तु पूजयेत्॥५४॥
रुद्रव्यूहस्य मध्ये तु भद्रकर्णां समर्चयेत्। ऐंद्राग्निविदिशोर्मध्ये पूजयेदणिमां शुभाम्॥५५॥
याम्यपावकयोर्मध्ये लघिमां कमले न्यसेत्। राक्षसांतकयोर्मध्ये महिमां मध्यतो यजेत्॥५६॥
वरुणासुरयोर्मध्ये प्राप्तिं वै मध्यतो यजेत्। वरुणानिलयोर्मध्ये प्राकाम्यं कमले न्यसेत्॥५७॥
वित्तेशानिलयोर्मध्ये ईशित्वं स्थाप्य पूजयेत्। वित्तेशेशानयोर्मध्ये वशित्वं स्थाप्य पूजयेत्॥५८॥
ऐंद्रेशेशानयोर्मध्ये यजेत्कामावसायकम्। द्वितीयावरणं प्रोक्तं तृतीयावरणं शृणु॥५९॥
शक्तयस्तु चतुर्विंशत्प्रधानकलशेषु च। पूजयेद्व्यूहमध्ये तु पूर्ववद्विधिपूर्वकम्॥६०॥
दीक्षां दीक्षायिकां चैव चंडांचंडांशुनायिकाम्। सुमतिं सुमत्यायीं च गोपां गोपायिकां तथा॥६१॥
अथ नंदं च नंदायीं पितामहमतः परम्। पितामहायीं पूर्वाद्यं विधिना स्थाप्य पूजयेत्॥६२॥
एवं संपूज्य विधिना तृतीयावरणं शुभम्। सौभद्रं व्यूहमासाद्य प्रथमावरणे क्रमात्॥६३॥
प्रागाद्यं विधिना स्थाप्य शक्त्यष्टकमनुक्रमात्। द्वितीयावरणे चैव प्रागाद्यं शृणु शक्तयः॥६४॥
षोडशैव तु अभ्यर्च्य पद्ममुद्रां तु दर्शयेत्। बिंदुका बिंदुगर्भा च नादिनी नादगर्भजा॥६५॥
शक्तिका शक्तिगर्भा च परा चैव परापरा। प्रथमावरणेऽष्टौ च शक्तयः परिकीर्तिताः॥६६॥

---

आरम्भ करते हुए अंत तक समाप्त होती हुई हैं। पूर्व में व्यूह के मध्य में सुभद्रा को स्थापित करके पूजा करनी चाहिए।।५१-५२।। दक्षिण-पूर्व (अग्नि कोण) के चक्र में भद्रा की पूजा करे। दक्षिण चक्र में कनकांडजा, दक्षिण-पश्चिम कोण के चक्र में मध्य कुंभ में अम्बिका की पूजा करे। पश्चिम भाग में श्री देवी की, उत्तर पश्चिम कोण (वायव्य) में वागीश देवी की पूजा करे। उत्तर में मध्य कुंड गोमुखी की पूजा करनी चाहिए।।५३-५४।। भक्त रुद्र व्यूह के मध्य में भद्रकर्णा की पूजा करे। पूर्व के मध्य में और दक्षिण पूर्व कोण में अणिमा शुभा देवी की पूजा करनी चाहिए।।५५।। दक्षिण के मध्य और दक्षिण-पूर्व दिशा के कमल में लघिमा (प्रकाश हीन) को स्थापित करे। दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम के बीच में महिमा की पूजा करे।।५६।। प्राप्ति की पूजा पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम के बीच में करे। पश्चिम और उत्तर-पश्चिम के कोण पर कमल पर प्राकाम्य को स्थापित करे।।५७।। उत्तर दिशा और उत्तर पश्चिम के कोण में ईशित्व को स्थापित करे और उसकी पूजा करे। उत्तर और उत्तर-पूर्व के कोण में वशित्व को स्थापित करके पूजा करनी चाहिए।।५८।। पूर्व दिशा और उत्तर-पूर्व कोण के मध्य में कामावशायक की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार द्वितीय आवरण का वर्णन किया गया है। अब तृतीय आवरण को ध्यानपूर्वक सुनिए।।५९।। प्रधान कलशों में चौबीस शक्तियाँ हैं। व्यूह के मध्य में पूर्ववत् विधिपूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिए। दीक्षा, दीक्षायिका, चंडा, चण्डाशुंनायिका, सुमति, सुमतित्यायी, गोपा और गोपायिका की पूजा करनी चाहिए।।६०-६१।। तब वह नंद, नंदायी, पितामह, पितामहायी, को पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके क्रमशः स्थापित करके उनकी पूजा करके सौभद्र प्रथम आवरण व्यूह तक जाकर आठ शक्तियों की पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके स्थापित करे। सोलह शक्तियों की पूजा करने के बाद वह पद्ममुद्रा को दिखावे। प्रथम

चंडा चंडमुखी चैव चंडवेगा मनोजवा। चंडाक्षी चंडनिर्घोषा भृकुटी चंडनायिका॥६७॥
मनोत्सेधा मनोध्यक्षा मानसी माननायिका। मनोहरी मनोह्लादी मनः प्रीतिर्महेश्वरी॥६८॥
द्वितीयावरणे चैव षोडशैव प्रकीर्तिताः। सौभद्रः कथितो व्यूहो भद्रं व्यूहं शृणुष्व मे॥६९॥
ऐंद्री हौताशनी याम्या नैर्ऋती वारुणी तथा। वायव्या चैव कौबेरी ऐशानी चाष्टशक्तयः॥७०॥
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। हरिणी च सुवर्णा च कांचनी हाटकी तथा॥७१॥
रुक्मिणी सत्यभामा च सुभगा जंबुनायिका। वागभवा वाक्यथा वाणी भीमा चित्ररथा सुधीः॥७२॥
वेदमाता हरिण्याक्षी द्वितीयावरणे स्मृता।
भद्राख्यः कथितो व्यूहः कनकाख्यं शृणुष्व मे॥७३॥
वज्रं शक्तिं च दंडं च खड्गं पाशं ध्वजं तथा। गदां त्रिशूलं क्रमशः प्रथमावरणे स्मृताः॥७४॥
युद्धा प्रबुद्धा चंडा च मुंडा चैव कपालिनी।
मृत्युहंत्री विरूपाक्षी कपर्दा कमलासना॥७५॥
दंष्ट्रिणी रंगिणी चैव लंबाक्षी कंकभूषणी। संभावा भाविनी चैव षोडशैव प्रकीर्तिताः॥७६॥
कथितः कनकव्यूहो ह्यम्बिकाख्यं शृणुष्व मे। खेचरी चात्मना सा च भवानी वह्निरूपिणी॥७७॥
वह्निनी वह्निनाभा च महिमामृतलालसा। प्रथमावरणे चाष्टौ शक्तयः सर्वसंमताः॥७८॥
क्षमा च शिखरा देवी ऋतुरत्ना शिला तथा। छाया भूतपनी धन्या इंद्रमाता च वैष्णवी॥७९॥
तृष्णा रागवती मोहा कामकोपा महोत्कटा। इंद्रा च बधिरा देवी षोडशैताः प्रकीर्तिताः॥८०॥

---

आवरण में ये आठ शक्तियाँ हैं—बिन्दुका, बिन्दुगर्भा, नादिनी, नादगर्भजा, शक्तिका, शक्तिगर्भा, परा, परापरा द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं। चण्डा, चण्डमुखी, चण्डवेगा, मनोजवा, चंडाक्षी, चण्ड-निर्घोषा भृकुटी, चण्डनायिका, मनोत्सेधा, मनोध्यक्षा, मानसी, माननायिका, मनोहरी, मनोह्लादी मनःप्रीति, महेश्वरी सौमद्र व्यूह का वर्णन इस प्रकार किया गया। अब भद्रव्यूह को ध्यानपूर्वक सुनिये।६२-६९।। प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ हैं। ऐन्द्री, हौताशनी, याम्या, नैर्ऋती, वारुणी, वायव्या, कौबेरी, ऐशानी। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं। हरिणी, सुवर्णा, काँचनी, हाटकी, रुक्मिणी, सत्यभामा, सुभगा, जम्बुनायिका, वाग्मवा, वाक्पथा, वाणी, भीमा, चित्ररथा, सुधी, वेदमाता, हरिण्याक्षी।

इस तरह भद्र व्यूह का वर्णन किया गया। अब कनक व्यूह को मुझसे सुनिये।।७०-७३।।

प्रथम आवरण में ये शक्तियाँ हैं—वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, ध्वज, गदा, त्रिशूल।।७४।।

द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—युद्धा, प्रबुद्धा, चण्डा, मुण्डा, कपालिनी, मृत्यु, हन्त्री, विरूपाक्षी कपर्दा, कमलासना, दंष्ट्रिणी, रंगिणी, लम्बाक्षी, कंकभूषणी, सम्भावा, भावनी।।७५-७६।।

कनक व्यूह का वर्णन किया गया। अब अम्बिका व्यूह का परिचय मुझसे सुनिये। प्रथम अवस्था में आठ शक्तियाँ है—खेचरी, आत्मना, भवानी, वह्निरुपिणी, वाह्निनी, वाह्निनाभा, महिमा और अमृतलालसा।।७७-७८।। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—क्षमा, शिखरा देवी, ऋतुरत्ना, शिला, छाया, भूतपनी, धन्या, इन्द्रमाता, वैष्णवी, तृष्णा, रागवती, मोहा, कामकोपा, महोत्कटा, इन्द्रा, बधिरादेवी।।७९-८०।। इस प्रकार

कथितश्चांबिकाव्यूहः श्रीव्यूहं शृणु सुव्रत। स्पर्शा स्पर्शवती गंधा प्राणापाना समानिका॥८१॥
उदाना व्याननामा च प्रथमावरणे स्मृताः। तमोहता प्रभामोघा तेजिनी दहिनी तथा॥८२॥
भीमास्या जालिनी चोषा शोषिणी रुद्रनायिका। वीरभद्रा गणाध्यक्षा चंद्रहासा च गह्वरा॥८३॥
गणमातांबिका चैव शक्तयः सर्वसंमताः। द्वितीयावरणे प्रोक्ताः षोडशैव यथाक्रमात्॥८४॥
श्रीव्यूहः कथितो भद्रं वागीशं शृणु सुव्रत। धारा वारिधरा चैव वह्निकी नाशकी तथा॥८५॥
मर्त्यातीता महामाया वज्रिणी कामधेनुका। प्रथमावरणेऽप्येवं शक्तयोऽष्टौ प्रकीर्तिताः॥८६॥
पयोष्णी वारुणी शांता जयंती च वरप्रदा। प्लाविनी जलमाता च पयोमाता महांबिका॥८७॥
रक्ता कराली चंडाक्षी महोच्छुष्मा पयस्विनी।
माया विद्येश्वरी काली कालिका च यथाक्रमम्॥८८॥
षोडशैव समाख्याताः शक्तयः सर्वसंमताः। व्यूहो वागीश्वरः प्रोक्तो गोमुखो व्यूह उच्यते॥८९॥
शंकिनी हालिनी चैव लंकावर्णा च कल्किनी। यक्षिणी मालिनी चैव वमनी च रसात्मनी॥९०॥
प्रथमावरणे चैव शक्तयोऽष्टौ प्रकीर्तिताः। चंडा घंटा महानादा सुमुखी दुर्मुखी बला॥९१॥
रेवती प्रथमा घोरा सैन्या लीना महाबला। जया च विजया चैव अपरा चापराजिता॥९२॥
द्वितीयावरणे चैव शक्तयः षोडशैव तु। कथितो गोमुखीव्यूहो भद्रकर्णीं शृणुष्व मे॥९३॥
महाजया विरूपाक्षी शुक्लाभाकाशमातृका। संहारी जातहारी च दंष्ट्राली शुष्करेवती॥९४।
प्रथमावरणे चाष्टौ शक्तयः परिकीर्तिताः। पिपीलिका पुण्यहारी अशनी सर्वहारिणी॥९५॥

---

अम्बिका व्यूह को बताया गया। हे सुव्रत! श्रीव्यूह को सुनो। प्रथम आवरण में हैं—स्पर्शा, स्पर्शवती, गंधा, प्राणापाना, समानिकाः, उदाना, व्याननामा। द्वितीय आवरण में सर्वसम्मत से मान्य सोलह शक्तियाँ हैं—तमोहता, प्रभा, मोघा, तेजिनी, दहिनी, भीमास्या, जालिनी, चोषा, शोषिणी, रुद्रनायिका, वीरभद्रा, गणाध्यक्षा चंद्रहासा, गह्वरा, गणमात, अंबिका।।८१-८४।। इस प्रकार आप को श्रीव्यूह को बताया। हे सुव्रत! अब वागीश व्यूह को ध्यानपूर्वक सुनो। प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ है—धारा, वारिधरा, वह्निकी, नाशकी, मर्त्यातीता, महामाया, वज्रिणी, कामधेनुका।।८५-८६।। सर्वसम्मत सोलह शक्तियाँ द्वितीय आवरण में हैं—पयोष्णी, वारुणी शांता, जयंती, वरप्रदा, प्लाविनी, जलमाता, पयोमाता, महांबिका, रक्ता, कराली, चंडाक्षी, महोच्छुष्मा, पयस्विनी, मायाविद्येश्वरी, कालीकालिका।।८७-८९।। वागीश व्यूह को बताया अब गोमुख व्यूह को कहता हूँ। प्रथम अवरण में आठ शक्तियाँ हैं—शंकिनी, हालिनी, लंकावर्णा, कल्किनी, यक्षिणी, मालिनी, वमनी, रसात्मनी। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—चंडा, घंटा, महानादा, सुमुखी, दुर्मुखी, बला, रेवती, प्रथमा, घोरा, सैन्या, लीना, महाबला, जया, विजया, अपरा, अपराजिता।

गोमुखी व्यूह को कहा! अब मुझसे भद्रकर्णीव्यूह को सुनो।।९०-९३।। प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ हैं—महाजया, विरूपाक्षी, शुक्लाभा, आकाशमातृका,संहारी, जातहारी, दंष्ट्राली, शुष्करेवती। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—पिपीलिका, पुण्यहारी, अशनी, सर्वहारिणी, भद्रहा, विश्वहारी, हिमा, योगेश्वरी, छिद्रा,

भद्रहा विश्वहारी च हिमा योगेश्वरी तथा। छिद्रा भानुमती छिद्रा सैंहिकी सुरभी समा॥९६॥
सर्वभव्या च वेगाख्या शक्तयः षोडशैव तु। महाव्यूहाष्टकं प्रोक्तमुपव्यूहाष्टकं शृणु॥९७॥
अणिमाव्यूहमावेष्ट्य प्रथमावरणे क्रमात्। ऐंद्रा तु चित्रभानुश्च वारुणी दंडिरेव च॥९८॥
प्राणरूपी तथा हंसः स्वात्मशक्तिः पितामहः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीया वरणं शृणु॥९९॥
केशवो भगवान् रुद्रश्चंद्रमा भास्करस्तथा। महात्मा च तथा ह्यंतरात्मा महेश्वरः॥१००॥
परमात्मां ह्यणुर्जीवः पिंगलः पुरुषः पशुः। भोक्ता भूतपतिर्भीमो द्वितीयावरणे स्मृताः॥१०१॥
कथितश्चाणिमाव्यूहो लघिमाख्यं वदामि ते।
श्रीकंठोंतश्च ह्यणुर्जीवः सूक्ष्मश्च त्रिमूर्तिः शशकस्तथा॥१०२॥
अमरेशः स्थितीशश्च दारतश्च तथाष्टमः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१०३॥
स्थाणुर्हरश्च दंडेशो भौक्तीशः सुरपुंगवः। सद्योजातोऽनुग्रहेशः क्रूरसेनः सुरेश्वरः॥१०४॥
क्रोधीशश्च तथा चंडः प्रचंडः शिव एव च। एकरुद्रस्तथाकूर्मश्चैकनेत्रश्चतुर्मुखः॥१०५॥
द्वितीयावरणे रुद्राः षोडशैव प्रकीर्तिताः। कथितो लघिमाव्यूहो महिमां शृणु सुव्रत॥१०६॥
अजेशः क्षेमरुद्रश्च सोमोंऽशो लांगली तथा। दंडारुश्चार्धनारी च एकांतश्चांत एव च॥१०७॥
पाली भुजंगनामा च पिनाकी खड्गिरेव च।
काम ईशस्तथा श्वेतो भृगुः षोडश वै स्मृताः॥१०८॥
कथितो महिमाव्यूहः प्राप्तिव्यूहं शृणुष्व मे। संवर्तो लकुलीशश्च वाडवो हस्तिरेव च॥१०९॥

---

भानुमती छिद्रा, सैंहिकी, सुरभी, समा, सर्वभव्या और वेगाख्या। इस प्रकार आठ महाव्यूहों को मैंने कहा! अब आठ उपव्यूहों को सुनो।।९४-९७।। प्रथम आवरण में अणिमा व्यूह में आवेष्टित आठ शक्तियाँ हैं—ऐंद्रा, चित्रभानु, वारुणी, दंडि, प्राणरूपी, हंस, स्वात्मशक्ति, पितामह। प्रथम आवरण को बताया। अब द्वितीय आवरण को सुनो।।९८-९९।।

द्वितीय आवरण में सोलह हैं—केशव, भगवान रुद्र, चन्द्रमा, भास्कर, महात्मा, अंतरात्मा, महेश्वर, परमात्मा, अणुर्जीव, पिंगल, पुरुष, पशु, भोक्ता, भूतपति, भीम। इस प्रकार अणिमाव्यूह को कहा अब लघिमाव्यूह को कहता हूँ।।१००-१०१।। प्रथम आवरण में श्रीकण्ठ, अन्त (अनन्त), सूक्ष्म, त्रिमूर्ति, शशक, अमरेश, स्थितीश और दारत वे आठ हैं। इस प्रकार प्रथम आवरण बताया गया। अब द्वितीय आवरण को सुनो।।१०२-१०३।। द्वितीय आवरण में सोलह रुद्र हैं—स्थाणु, हर, दंडेश, भौक्तीश, सद्योजात, अनुग्रहेश, क्रूरसेन, सुरेश्वर, क्रोधीश, चंड, प्रचंड, शिव, एकरुद्र, कूर्म, एकनेत्र, चतुर्मुख।।१०४-१०५।। द्वितीय आवरण में सोलह रुद्र कहे गये हैं। इस प्रकार लघिमा व्यूह को कहा। अब महिमा व्यूह को सुनो।।१०६।। महिमा व्यूह में सोलह हैं—अजेश, क्षेमरुद्र, सोमांश, लांगली,दंडारु, अर्धनारी, एकान्त, अन्त, पाली, भुजंगनामा, पिनाकी, खड्गि, काम, ईश, श्वेत, भृगु।।१०७-१०८।। इस प्रकार महिमा व्यूह को बताया गया। अब प्राप्ति व्यूह को ध्यान से सुनो। ये प्रथम आवरण में है—संवर्त, लकुलीश, वाडव, हस्ति, चंडयक्ष, गणपति,

चंडयक्षो गणपतिर्महात्मा भृगुजोऽष्टमः। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥११०॥
त्रिविक्रमो महाजिह्वो ऋक्षः श्रीभद्र एव च। महादेवो दधीचश्च कुमारश्च परावरः॥१११॥
महादंष्ट्रः करालश्च सूचकश्च सुवर्धनः। महाध्वांक्षो महानंदो दंडी गोपालकस्तथा॥११२॥
प्राप्तिव्यूहः समाख्यातः प्राकाम्यं शृणु सुव्रत। पुष्पदंतो महानागो विपुलानंदकारकः॥११३॥
शुक्लो विशालः कमलो बिल्वश्चारुण एव च। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥११४॥
रतिप्रियः सुरेशानश्चित्रांगश्च सुदुर्जयः। विनायकः क्षेत्रपालो महामोहश्च जंगलः॥११५॥
वत्सपुत्रो महापुत्रो ग्रामदेशाधिपस्तथा। सर्वावस्थाधिपो देवो मेघनादः प्रचंडकः॥११६॥
कालदूतश्च कथितो द्वितीयावरणं स्मृतम्। प्राकाम्यः कथितो व्यूह ऐश्वर्यं कथयामि ते॥११७॥
मंगला चर्चिका चैव योगेशा हरदायिका। भासुरा सुरमाता च सुंदरी मातृकाष्टमी॥११८॥
प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणे शृणु। गणाधिपश्च मंत्रज्ञो वरदेवः षडाननः॥११९॥
विदग्धश्च विचित्रश्च अमोघो मोघ एव च। अश्वी रुद्रश्च सोमेशश्चोत्तमोदुंबरस्तथा॥१२०॥
नारसिंहश्च विजयस्तथा इंद्रगुहः प्रभुः। अपांपतिश्च विधिना द्वितीयावरणं स्मृतम्॥१२१॥
ऐश्वर्यः कथितो व्यूहो वशित्वं पुनरुच्यते। गगनो भवनश्चैव विजयो ह्यजयस्तथा॥१२२॥
महाजयस्तथांगारोव्यंगारश्च महायशाः। प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणे शृणु॥१२३॥
सुंदरश्च प्रचंडेशो महावर्णो महासुरः। महारोमा महागर्भः प्रथमः कनकस्तथा॥१२४॥
खरजो गरुडश्चैव मेघनादोऽथ गर्जकः। गजश्च च्छेदको बाहुस्त्रिशिखो मारिरेव च॥१२५॥

---

महात्मा और भृगुज। प्रथम आवरण को बताया। अब द्वितीय आवरण को सुनो।।१०९-११०।। द्वितीय आवरण सोलह से बने हैं—त्रिविक्रम, महाजिह्व, ऋक्ष, श्रीभद्र, महादेव, दधीच, कुमार, परावर, महादंष्ट्र, कराल, सूचक, सुवर्धन, महाध्वांक्ष, महानंद, दंडी, गोपालक।।१११-११२।। प्राप्तिव्यूह को कहा गया। हे सुव्रत! प्राक्रम्य व्यूह को सुनो—पुष्पदंत, महानाग, विमलानन्दकारक, शुक्ल, विशाल, कमल, बिल्व और अरुण ये आठ प्राकाम्य के प्रथम आवरण होते हैं। अब द्वितीय आवरण को सुनो। रतिप्रिय, सुरेशान, चित्रांग, सुदुर्जय, विनायक, क्षेत्रपाल, महामोह, जंगल, वत्सपुत्र, महापुत्र, ग्रामदेशाधिप, सर्वावस्थाधिप, देव, मेघनाद, प्रचंडक और कालदूत द्वितीय आवरण में कहे गये हैं। इस प्रकार प्राकाम्यव्यूह का वर्णन किया गया है। अब ऐश्वर्य व्यूह को कहता हूँ।।११३-११७।। ऐश्वर्य व्यूह के प्रथम आवरण में मंगला, चर्चिका, योगेशा, हरदायिका, भासुरा, सुरमाता, सुंदरी, मातृका ये आठ होते हैं। द्वितीय आवरण को सुनो। गणाधिप, मंत्रज्ञ, वरदेव, षडानन, विदग्ध, विचित्र, अमोघ, मोघ, अश्वीरुद्र, सोमेश, उत्तम, उदुम्बर, नारसिंह, विजय, प्रभु इन्द्रगुह, अपांपति। ऐश्वर्य व्यूह का वर्णन किया गया।।११८-१२२।। अब वशित्व व्यूह को कहता हूँ। वशित्वव्यूह के प्रथम आवरण में गगन, हवन, विजय, अजय, महाजय, अंगार, व्यंगार, महायश प्रथम आवरण में होते हैं। द्वितीय आवरण में सुन्दर, प्रचंडेश, महावर्ण, महासुर, महारोमा, महागर्भ, प्रथम, कनक, खरज, गरुण, मेघनाद, गर्जक, गज, छेदक, बाहु, त्रिशिष, और मारि। वशित्वव्यूह का वर्णन किया गया। अब कामावसायिक व्यूह को ध्यानपूर्वक

वशित्वं कथितो व्यूहः शृणु कामावसायिकम्। विनादो विकटश्चैव वसंतोऽभय एव च॥१२६॥
विद्युन्महाबलश्चैव कमलो दमनस्तथा। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१२७॥
धर्मश्चातिबलः सर्पो महाकायो महाहनुः। सबलश्चैव भस्मांगी दुर्जयो दुरतिक्रमः॥१२८॥
वेतालो रौरवश्चैव दुर्धरो भोग एव च। वज्रः कालाग्निरुद्रश्च सद्योनादो महागुहः॥१२९॥
द्वितीयावरणं प्रोक्तं व्यूहश्चैवावसायिकः। कथितः षोडशो व्यूहो द्वितीयावरणं शृणु॥१३०॥
द्वितीयावरणे चैव दक्षव्यूहे च शक्तयः। प्रथमावरणे चाष्टौ बाह्ये षोडश एव च॥१३१॥
मनोहरा महानादा चित्रा चित्ररथा तथा।
रोहिणी चैव चित्रांगी चित्ररेखा विचित्रिका॥१३२॥
प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणं शृणु।
चित्रा विचित्ररूपा च शुभदा कामदा शुभा॥१३३॥
क्रूरा च पिंगला देवी खड्गिका लंबिकासती।
दंष्ट्राली राक्षसी ध्वंसी लोलुपा लोहितामुखी॥१३४॥
द्वितीयावरणे प्रोक्ताः षोडशैव समासतः। दक्षव्यूहः समाख्यातो दाक्षव्यूहं शृणुष्व मे॥१३५॥
सर्वासती विश्वरूपा लंपटा चामिषप्रिया। दीर्घदंष्ट्रा च वज्रा च लंबोष्ठी प्राणहारिणी॥१३६॥
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। गजकर्णाश्वकर्णा च महाकाली सुभीषणा॥१३७॥
वातवेगरवा घोरा घनाघनरवा तथा। वरघोषा महावर्णा सुघंटा घंटिका तथा॥१३८॥
घंटेश्वरी महाघोरा घोरा चैवातिघोरिका। द्वितीयावरणे चैव षोडशैव प्रकीर्तिताः॥१३९॥
दाक्षव्यूहः समाख्यातश्चंडव्यूहं शृणुष्व मे। अतिघंटा चातिघोरा कराला करभा तथा॥१४०॥

---

सुनो। प्रथम आवरण में विनाद, विकट, वसंत, अभय, विद्युत, महाबल, कमल और दमन होते हैं। अब द्वितीय आवरण को सुनो।।१२३-१२७।। धर्म, अतिबल, सर्प, महाकाय, महाहनु, सबल, भस्मांगी, दुर्जय, दुरतिक्रम, बैताल, रौरव, दुर्धर, भोग, वज्र, कालाग्नि, रुद्र, सद्योनाद, महागुह ये द्वितीय आवरण में हैं। इस प्रकार सोलह व्यूहों का वर्णन किया गया। अब द्वितीय आवरण को ध्यान से सुनो।।१२८-१३०।। दक्ष व्यूह के प्रथम आवरण में आठ और बाह्य आवरण में सोलह शक्तियाँ ही हैं।।१३१।। प्रथम आवरण में मनोहरा, महानादा, चित्रा, चित्ररथा, रोहिणी, चित्रांगी, चित्ररेखा, विचित्रिका।।१३२।। द्वितीय आवरण में चित्रा, विचित्ररूपा, सुभदा, कामदा, शुभा, क्रूरा, पिंगला, देवी, खड्गिका, लंबिका, सती, दंष्ट्राली, राक्षसी, ध्वंसी, लोलुपा, लोहितामुखी संक्षेप में सोलह ही कही गयी हैं। दक्ष व्यूह को कहा गया अब दाक्षव्यूह को सुनो।।१३३-१३५।।

प्रथम आवरण में निम्नलिखित सम्मिलित हैं। सर्वाशती, विश्वरूपा, लम्पटा, आमिषप्रिया, दीर्घदंष्ट्रा, वज्रा, लम्बोष्ठी, प्राणहारिणी में यह प्रथम आवरण मैंने कहा। अब द्वितीय आवरण सुनो। गजकर्णा, अश्वकर्णा महाकाली, सुभीषणा, वातवेगरवा, अघोरा, घनाघनरवा, वरघोषा, महावर्णा, सुघंटा, घंटिका, घंटा, ईश्वरी, महाघोरा, घोरा, अतिघोरिका द्वितीय आवरण में ये सोलह कही गयी हैं।।१३६-१३९।। इस प्रकार दाक्षव्यूह

विभूतिर्भोगदा कांतिः शंखिनी चाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणे प्रोक्ता द्वितीयावरणे शृणु॥१४१॥
पत्रिणी चैव गांधारी योगमाता सुपीवरा। रक्ता मालांशुका वीरा संहारी मांसहारिणी॥१४२॥
फलहारी जीवहारी स्वेच्छाहारी च तुंडिका। रेवती रंगिणी संगा द्वितीये षोडशैव तु॥१४३॥
चंडव्यूहः समाख्याश्चंडाव्यूहस्तथोच्यते। चंडी चंडमुखी चंडा चंडवेगा महारवा॥१४४॥
भ्रुकुटी चंडभूश्चैव चंडरूपाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१४५॥
चंद्रघ्राणा बला चैव बलजिह्वा बलेश्वरी। बलवेगा महाकाया महाकोपा च विद्युता॥१४६॥
कंकाली कलशी चैव विद्युता चंडघोषिका। महाघोषा महारावा चंडभाऽनंगचंडिका॥१४७॥
चंडायाः कथितो व्यूहो हरव्यूहं शृणुष्व मे। चंडाक्षी कामदा देवी सूकरी कुक्कुटानना॥१४८॥
गांधारी दंदुभी दुर्गा सौमित्रा चाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१४९॥
मृतोद्भवा महालक्ष्मीर्वर्णदा जीवरक्षिणी। हरिणी क्षीणजीवा च दंडवक्त्रा चतुर्भुजा॥१५०॥
व्योमचारी व्योमरूपा व्योमव्यापी शुभोदया। गृहचारी सुचारी च विषाहारी विषार्तिहा॥१५१॥
हरव्यूहः समाख्यातो हराया व्यूह उच्यते। जंभाच्युता च कंकारी देविका दुर्धरावहा॥१५२॥
चंडिका चपला चेति प्रथमावरणे स्मृताः। चंडिका चामरी चैव भंडिका च शुभानना॥१५३॥
पिंडिका मुंडिनी मुंडा शाकिनी शाङ्करी तथा। कर्तरी भर्तरी चैव भागिनी यज्ञदायिनी॥१५४॥
यमदंष्ट्रा महादंष्ट्रा कराला चेति शक्तयः। हरायाः कथितो व्यूहः शौंडव्यूहं शृणुष्व मे॥१५५॥
विकराली कराली च कालजंघा यशस्विनी। वेगा वेगवती यज्ञा वेदांगा चाष्टमी स्मृता॥१५६॥

---

को मैंने कहा। अब चण्ड व्यूह को सुनो—प्रथम आवरण में अतिघण्टा, अतिघोरा, कराला, करभा, विभूति, भोगदा, कान्ति शंखिनी, ये आठ होती हैं। प्रथम आवरण मैंने कहा, अब द्वितीय आवरण सुनो।।१४०-१४१।। वे पत्रिणी, गान्धारी, योगमाता सुपीवरा, रक्ता, मालांकुशा, वीरा, संहारी, मांसहारिणी, फलाहारी, जीवहारी, स्वेच्छाहारी, तुंडिका, रेवती, रंगिनी, संगा ये सोलह होती हैं। चंडव्यूह मैंने कहा। इसके बाद चंडाव्यूह कहता हूँ। चण्डी, चण्डमुखी, चण्डा, चण्डवेगा, महारवा, भृकुटी, चण्डभू और चन्डरूपा ये आठ हैं। प्रथम आवरण मैंने कहा। अब द्वितीय आवरण सुनो, चन्द्रघ्राणा, बला, बलजिह्वा, बलेश्वरी, बलवेगा, महाकाया, महाकोपा, विद्युता, कंकाली, कलशी, विद्युता, चण्डघोषिका, महाघोषा, महारावा, चंडभा, अनंगचण्डिका ये चण्डा व्यूह मैंने कहा। अब हर व्यूह सुनो।।१४२-४७।। प्रथम आवरण में चण्डाक्षी, कामदादेवी, सूकरी, कुक्कुटानना, गान्धारी, दन्दुभी, दुर्गा, सौमित्रा ये आठ हैं। प्रथम आवरण मैंने कहा, अब द्वितीय आवरण को सुनो।।१४८-१४९।। मृतोद्भवा, महालक्ष्मी, वर्णदा, जीवरक्षिणी, हरिणी, क्षीणजीवा, दण्डवक्त्रा, चर्तुभुजा, व्योमचारी, व्योमरूपा, व्योमव्यापी, सुभोदया, गृहचारी, सुचारी, विषाहारी, विषार्तिहा। हरव्यूह मैंने कहा, अब हराया व्यूह कहता हूँ। जम्भाच्युता, कंकारी, देविका, दुर्धरावहा, चण्डिका, चपला ये प्रथम आवरण में हैं। चण्डिका, चामरी भंडिका, शुभानना, पिण्डिका, मुण्डिनी, मुण्डा, शाकिनी, शांकरी, कर्तरी, भर्तरी, भागिनी, यज्ञदायिनी, यमदंष्ट्रा, महादंष्ट्रा, कराला ये शक्तियाँ हैं।।१५०-१५५।। हराया व्यूह को कहा, अब मुझसे

प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु।
वज्रा शंखातिशंखा वा बला चैवाबला तथा॥१५७॥
अंजनी मोहिनी माया विकटांगी नली तथा।
गंडकी दंडकी घोणा शोणा सत्यवती तथा॥१५८॥
कल्लोला चेति क्रमशः षोडशैव यथाविधि।
शौंडव्यूहः समाख्यातः शौंडाया व्यूह उच्यते॥१५९॥
दंतुरा रौद्रभागा च अमृता सकुला शुभा। चलजिह्वार्यनेत्रा च रूपिणी दारिका तथा॥१६०॥
प्रथमा वरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु।
खादिका रूपनामा च संहारी च क्षमांतका॥१६१॥
कंडिनी पेषिणी चैव महात्रासा कृतांतिका। दंडिनी किंकरी बिंबा वर्णिनी चामलांगिनी॥१६२॥
द्रविणी द्राविणी चैव शक्तयः षोडशैव तु।
कथितो हि मनोरम्यः शौंडाया व्यूह उत्तमः॥१६३॥
प्रथमाख्यं प्रवक्ष्यामि व्यूहं परमशोभनम्।
प्लविनी प्लावनी शोभा मंदा चैव मदोत्कटा॥१६४॥
मंदाऽक्षेपा महादेवी प्रथमावरणे स्मृताः। कामसंदीपिनी देवी अतिरूपा मनोहरा॥१६५॥
महावशा मदग्राहा विह्वला मदविह्वला। अरुणा शोषणा दिव्या रेवती भांडनायिका॥१६६॥
स्तंभिनी घोररक्ताक्षी स्मररूपा सुघोषणा। व्यूहः प्रथम आख्यातः स्वायंभुव यथा तथा॥१६७॥
कथितं प्रथमव्यूहं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व मे। घोरा घोरतराघोरा अतिघोराघनायिका॥१६८॥

---

शौंड व्यूह सुनो। प्रथम आवरण में विकराली, कराली, कालजंघा, यशस्विनी, वेगा, वेगवती, यज्ञा, वेदांगा ये आठ प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में वज्रा, शंखा अतिशंखा, बला, अबला, अंजनी, मोहिनी, माया, विकटांगी, नली, गण्डकी, दण्डकी, घोणा, शोंणा, सत्यवती, कल्लोला ये क्रमशः सोलह कही गयी हैं। शौंड व्यूह को मैंने कहा। अब शौंडाया व्यूह कहता हूँ।।१५६-१५९।। दन्तुरा, रौद्रभागा, अमृता, शकुलाशुभा, चलजिह्वा, आर्यनेत्रा, रूपिणी, दारिका ये प्रथम आवरण में हैं। अब द्वितीय आवरण सुनो। खादिका, रूपनामा, संहारी, क्षमा, अंतका, कंडिनी, पेषिणी, महात्रासा, कृतान्तिका, दंडिनी, किंकरी, बिम्बा, वर्णिनी, अम्लाँगिनी द्रविणी, द्रावणी ये सोलह शक्तियाँ इस प्रकार शोभन और मनोरम शौंडाया व्यूह का वर्णन किया।।१६०-१६३। अब मैं उत्तम प्रथम व्यूह की शक्तियों का वर्णन करता हूँ। इसके प्रथम आवरण में ये शक्तियाँ हैं। प्लविनी, प्लाविनी, शोभा, मंदा, आक्षेपा, मदोत्कटा, महादेवी ये प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में काम संदीपनी, देवी अतिरूपा, मनोहरा, महावशा, मदग्राहा, विह्वला, भदविह्वला, अरुणा, शोषणा, दिव्या, रेवती, भांडनायिका, स्तंभिनी, घोररक्ताक्षी, स्मररूपा, सुघोषणा है। हे सुव्रत! इस प्रकार प्रथम व्यूह का वर्णन किया।।१६४-१६७।। अब मैं प्रथम व्यूह का वर्णन करता हूँ। सुनो—इसके प्रथम आवरण में घोरा, घोरतरा

धावनी क्रोष्टुका मुंडा चाष्टमी परिकीर्तिता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१६९॥
भीमा भीमतरा भीमा शास्ता चैव सुवर्तुला। स्तंभिनी रोदनी रौद्रा रुद्रवत्यचला चला॥१७०॥
महाबला महाशांतिः शाला शांता शिवाशिवा। बृहत्कक्षा महानासा षोडशैव प्रकीर्तिताः॥१७१॥
प्रथमायाः समाख्यातो मन्मथव्यूह उच्यते।
तालकर्णी च बाला च कल्याणी कपिला शिवा॥१७२॥
इष्टिस्तुष्टिः प्रतिज्ञा च प्रथमावरणे स्मृताः।
ख्यातिः पुष्टिकरी तुष्टिर्जला चैव श्रुतिर्धृतिः॥१७३॥
कामदा शुभदा सौम्या तेजिनी कामतंत्रिका। धर्मा धर्मवशा शीला पापहा धर्मवर्धिनी॥१७४॥
मन्मथः कथितो व्यूहो मन्मथायाः शृणुष्व मे। धर्मरक्षा विधाना च धर्मा धर्मवती तथा॥१७५॥
सुमतिर्दुर्मतिर्मेधा विमला चाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१७६॥
शुद्धिर्बुद्धिर्द्युतिः कांतिर्वर्तुला मोहवर्धिनी।
बला चातिबला भीमा प्राणवृद्धिकरी तथा॥१७७॥
निर्लज्जा निर्घृणा मंदा सर्वपापक्षयंकरी। कपिला चातिविधुरा षोडशैताः प्रकीर्तिता॥१७८॥
मन्मथायिक उक्तस्ते भीमव्यूहं वदामि च। रक्ता चैव विरक्ता च उद्वेगा शोकवर्धिनी॥७९॥
कामा तृष्णा क्षुधा मोहा चाष्टमी परिकीर्तिता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१८०॥
जया निद्रा भयालस्या जलतृष्णोदरी दरा।
कृष्णा कृष्णांगिनी वृद्धा शुद्धोच्छिष्टाशनी वृषा॥१८१॥

---

अघोरा, अतिघोरा, अघनायिका, धावनी, क्रोष्टुका, मुण्डा, ये आठ कही गयी है। मैंने प्रथम आवरण को बताया अब द्वितीय आवरण सुनो।।१६८-१६९।।

भीमा, भीमतरा, भीमा, शास्ता सुवर्तुला, स्तंभिनी, रोदिनी, रौद्रा, रुद्रवती, अचलाचला, महाबला, महाशांति, शाला, शांता, शिवाशिवा, वृहत्कक्षा, महानासा ये सोलह है। प्रथम आवरण को बताया। अब मन्मथव्यूह को बताता हूँ। तालकर्णी, बाला, कल्याणी, कपिला, शिवा, इष्टि, तुष्टि, प्रतिज्ञा, ये प्रथम आवरण में है।।१७०-१७१।।

ख्याति, पुष्टिकरी, तुष्टि, जला, श्रुति धृति, कामदा, शुभदा, सौम्या, तेजिनी, कामतंत्रिका, धर्मा, धर्मवशा, शीला, पापहा, धर्मवर्धिनी, ये मन्मथ, के द्वितीय आवरण में है।।१७२-१७४।। इस प्रकार मन्मथ व्यूह को कहा। अब मन्मथायिक व्यूह को सुनो। धर्मरक्षा, विधाना, धर्मा, अधर्मवती, सुमति, दुर्मति, मेधा, विमला ये आठ प्रथम आवरण में कहे गये हैं। अब दूसरे आवरण में सुनो।।१७५-१७६।। द्वितीय आवरण में सोलह शक्तियाँ हैं—शुद्धि, बुद्धि, द्युति, कांति, वर्तुला, मोहवर्धिनी, बला, अतिबला, भीमा, प्राणवृद्धिकरी, निर्लज्जा, निर्घृणा, मंदा, सर्वपापक्षयंकरी, कपिला, अतिविधुरा, ये सोलह हैं।।१७७-१७८।। मन्मथायिक व्यूह मैंने कहा। अब भीम व्यूह को सुनो। रक्ता, विरक्ता, उद्वेगा, शोकवर्धिनी, कामा, तृष्णा, क्षुधा, मोहा, ये आठ प्रथम आवरण में कही गई हैं।।१७९-१८०।। द्वितीय आवरण में जया, निद्रा, भयालस्या, जलतृष्णोदरी, दरा

कामना शोभिनी दग्धा दुःखदा सुखदावली।
भीमव्यूहः समाख्यातो भीमायीव्यूह उच्यते॥१८२॥
आनंदा च सुनंदा च महानंदा शुभंकरी। वीतरागा महोत्साहा जितरागा मनोरथा॥१८३॥
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। मनोन्मनी मनःक्षोभा मदोन्मत्ता मदाकुला॥१८४॥
मंदगर्भा महाभासा कामानंदा सुविह्वला। महावेगा सुवेगा च महाभोगा क्षयावहा॥१८५॥
क्रमिणी क्रामिणी वक्रा द्वितीयावरणे स्मृताः। कथितं तव भीमायीव्यूहं परमशोभनम्॥१८६॥
शाकुनं कथयाम्यद्य स्वायंभुव मनोत्सुकम्। योगा वेगा सुवेगा च अतिवेगा सुवासिनी॥१८७॥
देवी मनोरया वेगा जलावर्ता च धीमती। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१८८॥
रोधिनी क्षोभिणी बाला विप्राशेषा सुशोषिणी। विद्युता भासिनी देवी मनोवेगा च चापला॥१८९॥
विद्युज्जिह्वा महाजिह्वा भृकुटीकुटिलानना।
फुल्लज्वाला महाज्वाला सुज्वाला च क्षयांतिका॥१९०॥
शाकुनः कथितो व्यूहः शाकुनायाः शृणुष्व मे।
ज्वालिनी चैव भस्मांगी तथा भस्मांगता तता॥१९१॥
भाविनी च प्रजा विद्या ख्यातिश्चैवाष्टमी स्मृता। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥१९२॥
उल्लेखा च पताका च भोगोभोगवती खगा। भोगभोगव्रता योगा भोगाख्या योगपारगा॥१९३॥
ऋद्धिर्बुद्धि धृतिः कांतिः स्मृतिः साक्षाच्छ्रुतिर्धरा।
शाकुनाया महाव्यूहः कथिताः कामदायकः॥१९४॥

---

कृष्णा, कृष्णांगिनी, वृद्धा, शुद्धोच्छिष्टाशनी, वृषा, कामना, शोभिनी, दग्धा, दुःखदा, सुखदावली ये द्वितीय आवरण में हैं। इस प्रकार भीमव्यूह को बताया। अब भीमायी व्यूह को सुनो। आनन्दा, सुनन्दा, महानंदा, शुभंकरी, वीतरागा, महोत्साहा, जितरागा, मनोरथा, ये प्रथम आवरण में हैं। अब द्वितीय आवरण की सुनो। मनोन्मनी, मनःक्षोभा, मदोन्मत्ता, मदाकुला, मंदगर्भा, महाभासा, कामानंदा, सुविह्वला, महावेगा, सुवेगा, महाभोगा, क्षयावहा, क्रमिणी, क्रामिणी, वक्रा, ये द्वितीय आवरण में है। इस प्रकार परम शोभन भीमायीव्यूह को मैंने कहा।।१८१-१८६।। हे स्वयंभू मनु! अब मैं शाकुन व्यूह को बताता हूँ—योगा, वेगा, सुवेगा, अतिवेगा, सुवासिनी, देवी, मनोरया, वेगा, जलावर्ता, धीमती ये प्रथम आवरण में है। रोधिनी, क्षोभिणी, बाला, विप्राशेषा, सुशोषिणी, विद्युता, भासिनी, देवी, मनोवेगा, चापला, विद्युज्जिह्वा, महाजिह्वा, भृकुटीकुटिलानना, फुल्लज्वाला, महाज्वाला, सुज्वाला, क्षयांतिका शाकुन व्यूह में ये सब द्वितीय आवरण है।।१८७-१९०।। इस प्रकार व्यूह शाकुन मैंने कहा। अब शाकुना व्यूह को सुनो। ज्वालिनी, भस्मांगी, भस्मांगता, तता, भाविनी, प्रजा, विद्या, ख्याति में आठ प्रथम आवरण में हैं। उल्लेखा, पताका, भोगा, उपभोगवती, खगा, भोगा, भोगव्रता, योगा, भोगाख्या, योगपारगा, ऋद्धि, बुद्धि धृति, कांति, स्मृति, श्रुतिधरा ये कामना के पूरा करने वाले शाकुना व्यूह के द्वितीय आवरण में है।।१९१-१९४।। हे स्वयंभू मनु! शोभन सुमति नामक व्यूह को सुनो। परेष्टा, परा, दृष्टा,

स्वायंभुव शृण व्यूहं सुमत्याख्यं सुशोभनम्। परेष्टा च परा दृष्टा ह्यमृता फलनाशिनी॥१९५॥
हिरण्याक्षी सुवर्णाक्षी देवी साक्षात्कपिंजला। कामरेखा च कथितं प्रथमावरणं शृणु॥१९६॥
रत्नद्वीपा च सुद्वीपा रत्नदा रत्नमालिनी।
रत्नशोभा सुशोभा च महाशोभा महाद्युतिः॥१९७॥
शांबरी बंधुरा ग्रंथिः पादकर्णा करानना। हयग्रीवा च जिह्वा च सर्वभासेति शक्तयः॥१९८॥
कथितः सुमतिव्यूहः सुमत्या व्यूह उच्यते। सर्वाशी च महाभक्षा महादंष्ट्रातिरौरवा॥१९९॥
विस्फालिंगा विलिंगा च कृतांता भास्करानना। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२००॥
रागा रंगवती श्रेष्ठा महाक्रोधा च रौरवा। क्रोधनी वसनी चैव कलहा च महाबला॥२०१॥
कलंतिका चतुर्भेदा दुर्गा वै दुर्गमानिनी। नाली सुनाली सौम्या च इत्येव कथितं मया॥२०२॥
गोपव्यूहं वदाम्यत्र शृणु स्वायंभुवाखिलम्। पाटली पाटवी चैव पाटी विटिपिटा तथा॥२०३॥
कंकटा सुपटा चैव प्रघटा च घटोद्भवा। प्रथमावरणं चात्र भाषया कथितं मया॥२०४॥
नादाक्षी नादरूपा च सर्वकारी गमाऽगमा। अनुचारी सुचारी च चंडनाडी सुवाहिनी॥२०५॥
सुयोगा च वियोगा च हंसाख्या च विलासिनी। सर्वगा सुविचारा च वंचनी चेति शक्तयः॥२०६॥
गोपव्यूह; समाख्यातो गोपायीव्यूह उच्यते। भेदिनी च्छेदिनी चैव सर्वकारी क्षुधाशनी॥२०७॥
उच्छुष्मा चैव गांधारी भस्माशी वडवानला। प्रथमावरणं चैव द्वितीयावरणं शृणु॥२०८॥

---

अमृता, फलनाशिनी, हिरण्याक्षी, सुवर्णाक्षी, कपिंजला, कामरेखा ये प्रथम आवरण में है। रत्नद्वीपा, सुद्वीपा, रत्नदा, रत्नमालिनी, रत्नशोभा, सुशोभा, महाशोभा, महाद्युति, शांबरी, बंधुरा, ग्रंथि, पादकर्णा, करानना, हयग्रीवा, जिह्वा, सर्वभासा, ये शक्तियाँ सुमति व्यूह में कही गई हैं। ये द्वितीय आवरण में कही गई है। इस प्रकार सुमति (पुल्लिग) का वर्णन किया गया। अब सुमत्या (स्त्रीलिंग) को ध्यान सुनो।।१९५-१९६।। सर्वाशी, महाभक्षा, महादंष्ट्रा अतिरौरवा, विस्फालिंगा, विलिंगा, कृतांता, भास्कारानना, ये प्रथम आवरण में कहा। अब द्वितीय आवरण में सुनो। रागा, रंगवती, श्रेष्ठा, महाक्रोधा, रौरवा, कोधनी, वसनी, कलहा, महाबला, कलन्तिका, चतुरर्भेदा, दुर्गा, दुर्गमानिनी, नाली, सुनाली, सौम्या इस प्रकार ये प्रथम आवरण में हैं। सुमत्या व्यूह का वर्णन कर दिया गया।।१९७-२०२।।

अब मैं तुमसे गोप व्यूह का वर्णन करता हूँ। अब इसको सुनो—पाटली, पाटवी, पाटी, विटिपिटा, कंटका, सुपटा, प्रघटा और घटोद्रवा, ये प्रथम आवरण में हैं। इस प्रकार प्रथम आवरण का वर्णन स्पष्ट रूप में किया गया।।२०३-२०४।। द्वितीय आवरण में, नादाक्षी, नादरूपा, सर्वकारी, गमा अगमा, अनुचारी, सुचारी, चण्डनाडी, सुवाहिनी, सुयोगा, वियोगा, हंसाख्या, विलासिनी, सर्वगा, सुविचारा, वंचनी ये शक्तियाँ द्वितीय आवरण में हैं।।२०५-२०६।। गोपव्यूह का वर्णन किया गया। गोपायी व्यूह का वर्णन सुनो—भेदिनी, छेदिनी, सर्वकारी, सुधासनी, उच्छुष्मा, गान्धारी, भस्माशी, वडवानला, यह प्रथम आवरण में है। द्वितीय आवरण को सुनिए।।२०७-२०८।। अन्धा, बाह्वांशिनी, बाला, दीक्षपामा, अक्षा, त्र्यक्षा, हल्लेखा, हृद्गता,

अंधा बाह्वासिनी बाला दीक्षपामा तथैव च। अक्षा त्र्यक्षा च हल्लेखा हृद्गता मायिकापरा॥२०९॥
आमयासादिनी मिल्ली सह्यासह्या सरस्वती। रुद्रशक्तिर्महाशक्तिर्महामोहा च गोनदी॥२१०॥
गोपायी कथितो व्यूहो नंदव्यूहं वदामि ते। नंदिनी च निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च यथाक्रमम्॥२११॥
विद्यानासा खग्रसिनी चामुंडा प्रियदर्शिनी। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२१२॥
गृह्या नारायणी मोहा प्रजा देवी च चक्रिणी।
कंकटा च तथा काली शिवाद्योषा ततः परम्॥२१३॥
विरामा या च वागीशी वाहिनी भीषणी तथा। सुगमा चैव निर्दिष्टा द्वितीयावरणे स्मृता॥२१४॥
नंदव्यूहो मया ख्यातो नंदाया व्यूह उच्यते। विनायकी पूर्णिमा च रंकारी कुंडली तथा॥२१५॥
इच्छा कपालिनी चैव द्वीपिनी च जयंतिका। प्रथमावरणे चाष्टौ शक्तयः परिकीर्तिताः॥२१६॥
प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु। पावनी चांबिका चैव सर्वात्मा पूतना तथा॥२१७॥
छगली मोदिनी साक्षाद्देवी लंबोदरी तथा। संहारी कालिनी चैव कुसुमा च यथाक्रमम्॥२१८॥
शुक्रा तारा तथा ज्ञाना क्रिया गायत्रिका तथा। सावित्री चेति विधिना द्वितीयावरणं स्मृतम्॥२१९॥
नंदायाः कथितो व्यूहः पैतामहमतः परम्। नंदिनी चैव फेत्कारी क्रोधा हंसा षडंगुला॥२२०॥
आनंदा वसुदुर्गा च संहारा ह्यमृताष्टमी। प्रथमावरणं प्रोक्तं द्वितीयावरणं शृणु॥२२१॥
कुलांतिकानला चैव प्रचंडा मर्दिनी तथा। सर्वभूताभया चैव दया च वडवामुखी॥२२२॥
लंपटा पन्नगा देवी कुसुमा विपुलांतका। केदारा च तथा कूर्मा दुरिता मंदरोदरी॥२२३॥
खड्गचक्रेतिविधिना द्वितीयावरणं स्मृतम्। व्यूहः पैतामहः प्रोक्तो धर्मकामार्थमुक्तिदः॥२२४॥

---

मायिका, परा, आमयासादिनी, मिल्ली, सह्या, असह्या, सरस्वती, रुद्रशक्ति, महाशक्ति, महामोहा, गोनदी।।२०९-२१०।। गोपायी व्यूह का वर्णन किया गया। अब मैं नन्द व्यूह का वर्णन करता हूँ। नन्दिनी, निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्यानासा, खग्रसिनी, चामुण्डा, प्रियदर्शिनी ये प्रथम आवरण में हैं। अब द्वितीय आवरण को सुनो।।२११-२१२।। गृह्या, नारायणी, मोहा, प्रजा देवी, चक्रिणी, कंकटा, काली, शिवा, आद्या, उषा, विरामा, वागीशी, वाहिनी, भीषणी, सुगमा, निर्दृष्टा द्वितीय आवरण में हैं।।२१३-२१४।। नन्दव्यूह का वर्णन मैंने किया, नंदा व्यूह का वर्णन करता हूँ—विनायकी, पूर्णिमा, रंकारी, कुण्डली, इच्छा, कपालिनी, द्वीपिनी, जयन्तिका यह प्रथम आवरण में आठ शक्तियाँ कही गयी हैं। द्वितीय आवरण में पावनी, अम्बिका, सर्वात्मा, पूतना, छगली, मोदिनी, साक्षात् देवी लम्बोदरी, संहारी, कालिनी, कुसुमा, शुक्रा, तारा, ज्ञाना, क्रिया, गायत्रिका, सावित्री ये आठ द्वितीय आवरण में हैं।।२१५-२१९।। इस प्रकार नन्दा व्यूह का वर्णन किया गया। अब पितामह व्यूह का वर्णन सुनो। नन्दिनी, फेत्कारी, क्रोधा, हंसा, षडंगुला, आनन्दा, वसुदुर्गा, संहारा, अमृताष्टमी ये प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में सुनो।।२२०-२२१।। कुलान्तिका, नला, प्रचण्डा, मर्दिनी, सर्वभूताभया, दया, वडवामुखी, लंपटा, पन्नगादेवी, कुसुमा, विपुलांतका, केदारा, कूर्मा, दुरिता, मंदरोदरी, खड्गचक्रा ये द्वितीय आवरण में आती हैं। इस प्रकार पितामह व्यूह जो कि धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति को देने वाला है। उसका

पितामहाया व्यूहं च कथयामि शृणुष्व मे। वज्रा च नंदना शावाराविका रिपुभेदिनी॥२२५॥
रूपा चतुर्था योगा च प्रथमावरणे स्मृताः। भूता नादा महाबाला खर्परा च तथा परा॥२२६॥
भस्मा कांता तथा वृष्टिर्द्विभुजा ब्रह्मरूपिणी। सैह्या वैकारिका जाता कर्ममोटी तथापरा॥२२७॥
महामोहा महामाया गांधारी पुष्पमालिनी। शब्दापी च महाघोषा षोडशैव तथांतिमे॥२२८॥
सर्वाश्च द्विभुजा देव्यो बालभास्करसन्निभाः। पद्मशंखधराः शांता रक्तस्रग्वस्त्रभूषणाः॥२२९॥
सर्वाभरणसंपूर्णा मुकुटाद्यैरलंकृताः। मुक्ताफलमयैर्दिव्यै रत्नचित्रैर्मनोरमैः॥२३०॥
विभूषिता गौरवर्णाध्येया देव्यः पृथक्पृथक्। एवं सहस्त्रकलशं ताम्रजं मृन्मयं तु वा॥२३१॥
पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तं रुद्रक्षेत्रे प्रतिष्ठितम्। भवाद्यैर्विष्णुना प्रोक्तैर्नाम्नां चैव सहस्त्रकैः॥२३२॥
संपूज्य विन्यसेदग्रे सेचयेद्बाणविग्रहम्।
अभिषिच्य च विज्ञाप्य सेचयेत्पृथिवीपतिम्॥२३३॥
एवं सहस्त्रकलशं सर्वसिद्धिफलप्रदम्। चत्वारिंशन्महाव्यूहं सर्वलक्षणलक्षितम्॥२३४॥
सर्वेषां कलशं प्रोक्तं पूर्ववद्धेमनिर्मितम्। सर्वे गंधांबुसंपूर्णपंचरत्नसमन्विताः॥२३५॥
तथा कनकसंयुक्ता देवस्य घृतपूरिताः। क्षीरेण वाथ दध्ना वा पंचगव्येन वा पुनः॥२३६॥
ब्रह्मकूर्चेन वा मध्यमभिषेको विधीयते। रुद्राध्यायेन रुद्रस्य नृपतेः शृणु सत्तम॥२३७॥

---

वर्णन किया गया।।२२२-२२४।। अब मैं पितामहा व्यूह का वर्णन करता हूँ। इसको सुनिए। वज्रा, नन्दना, शांवाराविका, रिपुभेदिनी, रूपा, चतुर्था योगा ये प्रथम आवरण में हैं। द्वितीय आवरण में भूता नादा, महाबाला, खर्परा, परा, भस्मा, कान्ता, वृष्टि, द्विभुजा (दो भुजा वाली), ब्रह्मरूपिणी, सैह्या, वैकारिका, कर्ममोटी, महामोहा, महामाया, गान्धारी, पुष्पमालिनी, शब्दापी और महाघोषा ये सोलह द्वितीय आवरण में हैं।।२२५-२२८।। ये सभी देवियाँ दो भुजा वाली हैं। ये आभा में प्रातःकालीन सूर्य के समान हैं। ये कमल और शंख हाथो में धारण किये हुए हैं और शान्त हैं और लाल माला पहने हए हैं। वस्त्र आभूषण धारण किये हुए हैं और मुकुट आदि को पहने हुए हैं। ये मोती और दिव्य सुन्दर रत्नों से विभूषित हैं। ये सब गौर वर्ण की हैं। ये सब देवियों का अलग-अलग ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार ताँबे या मिट्टी के बने हुए कलश पूर्वोक्त लक्षण से युक्त को रुद्रक्षेत्र में स्थापित करें। उसके बाद विष्णु, भव आदि द्वारा उच्चारण किये गये, सहस्त्र नाम से उनकी पूजा करे। उनको कलशों को सामने में रखें, तब भक्त बाणलिंग का अभिषेक करें (जल से सींचे)। अभिषेक करके राजा के ऊपर यह जल उड़ेल दें।।२२९-२३३।।

यह सहस्त्र जल कलश सब सिद्धिदायक है। यह चौसठ महाव्यूह हैं। जिनमें से प्रत्येक अपने अपने विशिष्ट लक्षणों से युक्त हैं।।२३४।।

राजा का अभिषेक रुद्र के रुद्राध्याय मन्त्रों को दोहराते हुए किया जाना चाहिये। पात्र स्वर्ण से बने होने चाहिये। वे सुगंधित जल से पूर्ण हों और प्रत्येक पात्र में पाँच रत्न और स्वर्ण के टुकड़े पड़े हों। देव के पात्र घी, दूध, दही या पंचगव्य ब्रह्मकुश से भरे हो। हे सुव्रत! सुनो। राजा का अभिषेक रुद्र से रुद्राध्याय मंत्र दोहराते हुए किया जाय। अघोरेभ्यो अथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेऽभ्यः। इन मंत्रों को

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।
सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥२३८॥
मंत्रेणानेन राजानं सेचयेदभिषेचितम्। होमं च मंत्रेणानेन अघोरेणाघहारिणा॥२३९॥
प्रागाद्यं देवकुंडे वा स्थंडिले वा घृतादिभिः। समिदाज्यचरुं लाजशालिनीवारतंडुलैः॥२४०॥
अष्टोत्तरशतं हुत्वा राजानमधिवासयेत्।
पुण्याहं स्वस्ति रुद्राय कौतुकं हेमनिर्मितम्॥२४१॥
भसितं च मृणालेन बंधयेद्दक्षिणे करे। त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्धनम्॥२४२॥
उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। मंत्रेणानेन राजानं सेचयेद्वाथ होमयेत्॥२४३॥
सर्वद्रव्याभिषेकं च होमद्रव्यैर्यथाक्रमम्॥२४४॥
तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥२४५॥
स्वाहांतं पुरुषेणैवं प्राक्कुण्डं होमयेद्द्विजः। अघोरेण च याम्ये च होमयेत्कृष्णवाससा॥२४६॥
वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः।
इत्याद्युक्तक्रमेणैव जुहुयात्पश्चिमे नरः॥२४७॥
सद्येन पश्चिमे होमः सर्वद्रव्यैर्यथाक्रमम्। सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः॥२४८॥
भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः।
स्वाहांतं जुहुयादग्नौ मंत्रेणानेन बुद्धिमान्॥२४९॥

---

दुहराते हुए राजा के ऊपर अभिमंत्रित जल को उड़ेर (डाल) देना चाहिये। अघोर के मंत्रों से–जो कि सब पापों को दूर करता है—हवन भी कराना चाहिये।।२३५-२३९।। देवकुंड में या भूमि पर धृत आदि से पूर्व से प्रारम्भ करके, समिधा, घी, चरु, लावा, अन्न, या शालि नीवार के चावल होम के लिये प्रयोग में लाया जाय। १०८ बार आहुति देने के बाद राजा को सुगंधित जल से अधिवासित करे। शरीर पर सुगंधित अगरबत्ती आदि से धूप करे। स्वस्ति मंत्र दोहराते हुये पुण्याह जल को राजा के ऊपर छिड़के। सुनहरा तागा (धागा) (कलावा या रक्षासूत्र) बाँध दे और मृणाल (कमल की नाल) से उस पर भस्म छिड़क राजा के दाहिने हाथ में तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। 'तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्' के इस मन्त्र से ब्राह्मण पूर्व कुण्ड में मन्त्र के अन्त में स्वाहा शब्द लगाकर होम करे। वह एक काले कपड़े के टुकड़े के साथ अघोर मन्त्र को दोहराते हुए दक्षिणी कुण्ड में होम करे।।२४०-२४६।। भक्त पश्चिम दिशा में वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः इत्यादि इन मन्त्रों को पढ़ते हुए पश्चिमी कुण्ड में हवन करे।।२४७।। उसके बाद सद्योजातं प्रपद्यामि 'सद्योजाताय वै नमः, इस सद्य मन्त्र को दोहराते हुए यथा क्रम में सब सामग्री से पश्चिमी कुण्ड में हवन करे। भवे भवेनातिभवे भवस्य मां भवोद्भवाय नमः बुद्धिमान भक्त इस मन्त्र से अन्त में स्वाहा शब्द लगाकर अग्नि में हवन करे। वह दक्षिण पूर्व के कुण्ड में रुद्र सम्बन्धी मन्त्र को पढ़ते हुए होम करे। उसके बाद जातवेदसे सुनवाम सोमम् इत्यादि से होम करे। उसके बाद पूजा की सब सामग्री के साथ यह मन्त्र दोहराते हुए दक्षिण पश्चिम कुण्ड में होम पूरा किया

आग्नेय्यां च विधानेन ऋचा रौद्रेण होमयेत्।
जातवेदसे सुनवाम सोममित्यादिना ततः। नेर्ऋते पूर्ववद्द्रव्यैः सर्वैर्होमो विधीयते॥२५०॥
मंत्रेणानेन दिव्येन सर्वसिद्धिकरेण च।
निमि निशि दिश स्वाहा खड्ग राक्षस भेदन॥२५१॥
रुधिराज्याद्रं नैर्ऋत्यै स्वाहा नमः स्वधा नमः। यथेष्टं विधिना द्रव्यैर्मंत्रेणानेन होमयेत्॥२५२॥
यम्यां हि विविधैर्द्रव्यैरीशानेन द्विजोत्तमाः। ईशान्यामथ पूर्वोक्तैर्द्रव्यैर्होममथाचरेत्॥२५३॥
ईशानाय कद्रुद्राय प्रचेतसे त्र्यंबकाय शर्वाय तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥२५४॥
प्रधानं पूर्ववद्द्रव्यैरीशानेन द्विजोत्तमाः। प्रतिद्रव्यं सहस्रेण जुहुयान्नृपसन्निधौ॥२५५॥
स्वयं वा जुहुयादग्नौ भूपतिः शिववत्सलः॥
ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां
ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोऽहम्॥२५६॥
प्रायश्चित्तमघोरेण शेषं सामान्यमाचरेत्। कृताधिवासं राजानं शंखभेर्यादिनिस्वनैः॥२५७॥
जयशब्दरवैर्दिव्यैर्वेदघोषैः सुशोभनैः। सेचयेत्कूर्चतोयेन प्रोक्षयेद्वा नृपोत्तमम्॥२५८॥
रुद्राध्यायेन विधिना रुद्रभस्मांगधारिणम्। शंखचामरभेर्याद्यं छत्रं चंद्रसमप्रभम्॥२५९॥
शिबिकां वैजयंतीं च साधयेन्नृपतेः शुभाम्। राज्याभिषेकयुक्ताय क्षत्रियायेश्वराय वा॥२६०॥
नृपचिह्नानि नान्येषां क्षत्रियाणां विधीयते।
प्रमाणं चैव सर्वेषां द्वादशांगुलमुच्यते॥२६१॥

---

जाय।।२४८-२५०।। 'निमि निशि दिश स्वाहा खड्ग' राक्षस भेदन, सब सिद्ध कर इस दिव्य मन्त्र से राक्षस भेदन कृत्य पूरा किया जाय। रुधिराज्याद्रं नैर्ऋत्यैस्वाहा नमः स्वधा नमः इस मन्त्र से सब द्रव्यों से होम किया जाय।।२५१।। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! दक्षिणी कुण्ड में सब सामग्री से ईशान मन्त्र द्वारा होम किया जाय। उसके बाद पहले कही हुई सब सामग्री से दक्षिण-पूर्व कुण्ड में हवन किया जाय।।२५२-२५३।। ईशानाय कद्रुद्राय प्रचेतसे त्र्यंबकाय शर्वाय तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।।२५४।। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों! ईशान मन्त्र को दोहराते हुए पूर्ववत् सामग्री से प्रधान होम पूरा किया जाय। राजा के सामने प्रत्येक सामग्री से एक हजार बार होम किया जाय। शिव का प्रिय भक्त राजा अग्नि में स्वयं होम करे। उसक मन्त्र यह है। ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपति र्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोऽहम्।।२५५-२५६।। अघोर मन्त्र को दोहराते हुए प्रायश्चित कृत्य को करे। शेष कृत्य सामान्य विधि से किया जाय। होम के धुएँ से राजा को अधिवास करके शंख भेरी आदि की ध्वनि से जय जयकार की ध्वनि से दिव्य वेदमन्त्रों की ध्वनि करे। अथवा कुश के जल से राजा के शरीर का सिंचन करे या पोंछे।।२५७-२५८।। रूद्राध्याय मंत्र को दोहराते हुए राजा के पूरे शरीर पर भस्म चुपड़ दे। राजा चन्द्रमा के समान प्रभाव वाले छत्र और शंख चामर भेरी आदि, शिविका (पालकी) वैजयंती (राजध्वज) इन सब से युक्त हो जाय। ये सब राजचिह्न राज्याभिषेक युक्त क्षत्रीश्वर—जो अपने राज्य में मुकुटधारी हो—उसको दिये जाते हैं अन्य क्षत्रियों को नहीं।।२५९-२६१।।

पलाशोदुंबराश्वत्थवटाः पूर्वादितः क्रमात्। तोरणाद्यानि वै तत्र पट्टमात्रेण पट्टिकाः॥२६२॥
अष्टमांगुलसंयुक्तदर्भमालासमावृतम् । दिग्ध्वजाष्टकसंयुक्तं द्वारकुंभैः सुशोभनम्॥२६३॥
हेमतोरणकुंभैश्च भूषितं स्नापयेन्नृपम्। सर्वोपरि समासीनं शिवकुंभेन सेचयेत्॥२६४॥
तन्महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तन्नः शिवः प्रचोदयात्॥२६५॥
मंत्रेणानेन विधिना वर्धन्या गौरिगीतया। रुद्राध्यायेन वा सर्वमघोरायाथ वा पुनः॥२६६॥
दिव्यैराभरणैः शुक्लैर्मुकुटाद्यैः सुकल्पितैः। क्षौमवस्त्रैश्च राजानं तोषयेन्नियतं शनैः॥२६७॥
अष्टषष्टिपलेनैव हेम्ना कृत्वा सुदर्शनम्। नवरत्नैरलंकृत्य दद्याद्वै दक्षिणां गुरोः॥२६८॥
दशधेनु सवस्त्रं च दद्यात्क्षेत्रं सुशोभनम्। शतद्रोणतिलं चैव शतद्रोणांश्च तंडुलान्॥२६९॥
शयनं वाहनं शय्यां सोपधानां प्रदापयेत्। योगिनां चैव सर्वेषां त्रिंशत्पलमुदाहृतम्॥२७०॥
अशेषांश्च तदर्धेन शिवभक्तांस्तदर्धतः। महापूजां ततः कुर्यान्महादेवस्य वै नृपः॥२७१॥
एवं समासतः प्रोक्तं जयसेचनमुत्तमम्। एवं पुराभिषिक्तस्तु शक्रः शक्रत्वमागतः॥२७२॥
ब्रह्मा ब्रह्मत्वमापन्नो विष्णुर्विष्णुत्वमागतः।
अंबिका चांबिकात्वं च सौभाग्यमतुलं तथा॥२७३॥
सावित्री च तथा लक्ष्मीर्देवी कात्यायनी तथा। नंदिनाथ पुरा मृत्यु रुद्राध्यायेन वै जितः॥२७४॥

---

पलास (छिउल) गूलर और पीपल या बरगद की टहनियाँ पूर्व से प्रारंभ करके सब दिशाओं में स्थापित की जायें। उन पर भक्त साधक द्वारा सिल्क के वस्त्रों के टुकड़ों की पट्टिकाएँ लगाई जायँ।।२६२।। राजा आठ अंगुल की कुश माला से समावृत (घेरे में) हो। आठों दिशाओं में आठ ध्वज (झंडे) लगे हों। प्रवेश द्वारों पर सुन्दर आठ जल पूरित कलश हों। सोने के तोरण और कलश (कुम्भ) से भूषित हों। तब पुरोहित राजा को स्नान करावे। राजा सर्वोपरि आसन (सीट) पर विराजमान हो। राजा के ऊपर शिवकुम्भ के जल से सेचन (छिड़काव) हो।।२६३-२६४।। तन्महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि तन्नः शिवः प्रचोदयात्। इस मंत्र द्वारा राजा का एक वर्धनी के साथ गौरीगीत से छिड़काव करे। फिर रुद्राध्याय मंत्र या अघोर मंत्र से सिंचन करे।।२६५-२६६।। तब राजा को सफेद सिल्कन पोशाक, दिव्य आभूषण और राजमुकुट आदि भेंट किये जायँ।।२६७।। अड़सठ (६८) पल सोना का दर्शनीय आभूषण बनवाया जाय। वह नवरत्नों से अलंकृत हो। (शोभित हो)। उसको अपने गुरु को राजा दक्षिणा रूप में दे। दस गायें, वस्त्र सहित तथा एक अच्छा क्षेत्र (भूमि का खंड) भी दिया जाय। सौ द्रोण तिल और सौ द्रोण चावल, शयन (बिस्तर), वाहन, चादर, तकिया भी दिया जाय। सब योगियों को भी तीस पल सोना दिया जाना चाहिये।।२६८-२७०।। उसका आधा शेष पुरोहितों और उसका आधा शिव भक्तों को दिया जाय।।२७१।। इस प्रकार उत्तम जय अभिषेक संस्कार को संक्षेप में मैंने कहा। इस तरह पहले इन्द्र ने अभिषिक्त होकर इन्द्रत्व (इन्द्रपदवी) को प्राप्त किया था। ब्रह्मा जी ब्रह्मत्व को, विष्णु जी विष्णुत्व को अम्बिका, अम्बिकात्व एवं अतुल सौभाग्य को प्राप्त किया। सावित्री, लक्ष्मी देवी, और कात्यायनी ने भी पहले यही पदवी को प्राप्त किया। नन्दी ने भी पहले रुद्राध्याय द्वारा मृत्यु पर विजय प्राप्त की। पहले यह अभिषेक महाबली तारकासुर ने किया। विष्णु ने अभिषिक्त होकर विद्युन्माली और

अभिषिक्तोऽसुरः पूर्वं तारकाख्यो महाबलः।
विद्युन्माली हिरण्याक्षो विष्णुना वै विनिर्जितः॥२७५॥
नृसिंहेन पुरा दैत्यो हिरण्यकशिपुर्हतः। स्कंदेन तारकाद्याश्च कौशिक्या च पुरांबया॥२७६॥
सुंदोपसुंदतनयौ जितौ दैत्येंद्रपूजितौ। वसुदेवसुदेवौ तु निहतौ कृतकृत्यया॥२७७॥
स्नानयोगेन विधिना ब्रह्मणा निर्मितेन तु। दैवासुरे दितिसुता जिता देवैरनिंदिताः॥२७८॥
स्नाप्यैव सर्वभूपैश्च तथान्यैरपि भूसुरैः।
प्राप्ताश्च सिद्धयो दिव्या नात्र कार्या विचारणा॥२७९॥
अहोऽभिषेकमाहात्म्यमहो शुद्धसुभाषितम्। येनैवमभिषिक्तेन सिद्धैर्मृत्युर्जितस्त्विति॥२८०॥
कल्पकोटिशतेनापि यत्पापं समुपार्जितम्। स्नात्वैवं मुच्यते राजा सर्वपापैर्न संशयः॥२८१॥
व्याधितो मुच्यते राजा क्षयकुष्ठादिभिः पुनः। स नित्यं विजयी भूत्वा पुत्रपौत्रादिभिर्युतः॥२८२॥
जनानुरागसंपन्नो देवराज इवापरः। मोदते पापहीनश्च प्रियया धर्मनिष्ठया॥२८३॥
उद्देशमात्रं कथितं फलं परमशोभनम्। नृपाणामुपकाराय स्वायंभुव मनो मया॥२८४॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे अभिषेकविधिर्नाम**
**सप्तविंशोऽध्यायः॥२७॥**

---

हिरण्याक्ष को जीता था।।२७२-२७५।। पहिले नृसिंह ने हिरण्यकशिपु राक्षस का वध किया था। पहिले स्कन्द ने तारक आदि को और भी कौशिकी देवी ने दैत्येन्द्र द्वारा पूजित शुन्द और उपसुन्द के पुत्रों को पराजित किया था। कृतकृत्या द्वारा वसुदेव और सुदेव मारे गये थे। इस अभिषेक संस्कार से अभिषिक्त ब्रह्मा ने दिति के पुत्रों को जीता था एवं विजय प्राप्त की थी। अभिषिक्त राजाओं और ब्राह्मणों ने दिव्य सिद्धि प्राप्त की थी, इसमें कोई संदेह नहीं।।२७६-२७९।। राजाओं और ब्राह्मणों ने इस अभिषेक संस्कार से अभिषिक्त होकर दिव्य सिद्धि प्राप्त की थी। इस अभिषेक का बहुत माहात्म्य है। इस अभिषेक के करने से सिद्धयोगों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस अभिषेक संस्कार के करने से राजा यहाँ तक कि कल्प के सौ करोड़ वर्षों में भी किये गये पापों से मुक्त हो जाता है। राजा क्षय और कुष्ठ आदि व्याधियों से मुक्त हो जाता हैं। वह नित्य विजयी होकर पुत्र पौत्रादि से युक्त होकर जनता द्वारा प्रिय (लोकप्रिय) होकर दूसरे इन्द्र के समान हो जाता है। वह निष्पाप राजा रानी के साथ सुख भोग करता है। इस दिव्य संस्कार के उद्देश्य और फल को मैंने संक्षेप में बताया जो कि स्वयं ब्रह्मा के पुत्र मनु से मैंने सुना था। ब्राह्मणों के उपकार के लिए यह ब्राह्मणों को बताया गया।।२८०-२८४।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अभिषेक विधि**
**नामक सत्ताइसवां अध्याय समाप्त॥२७॥**

## अष्टाविंशत्तमोऽध्यायः

# तुलापुरुषदानविधिः

सूत उवाच

स्नात्वा देवं नमस्कृत्य देवदेवमुमापतिम्। दिव्येन चक्षुषा रुद्रं नीललोहितमीश्वरम्॥१॥
दृष्ट्वा तुष्टाव वरदं रुद्राध्यायेन शंकरम्। देवोऽपि तुष्ट्या निर्वाणं राज्यांते कर्मणैव तु॥२॥
तवास्तीति सकृच्चोक्त्वा तत्रैवांतरधीयत। स्वायंभुवो मनुर्देवं नमस्कृत्य वृषध्वजम्॥३॥
आरुरोह महामेरुं महावृषमिवेश्वरः। तत्र देवं हिरण्याभं योगैश्वर्यसमन्वितम्॥४॥
सनत्कुमारं वरदमपश्यद्ब्रह्मणः सुतम्। नमश्चकार वरदं ब्रह्मण्यं ब्रह्मरूपिणम्॥५॥
कृतांजलिपुटो भूत्वा तुष्टाव च महाद्युतिः। सोऽपि दृष्ट्वा मनुं देवो हृष्टरोमाभवन्मुनिः॥६॥
सनत्कुमारः प्राहेदं घृणया च घृणानिधे।

सनत्कुमार उवाच

दृष्ट्वा सर्वेश्वराच्छांताच्छंकरान्नीललोहितात्॥७॥
लब्ध्वाभिषेकं संप्राप्तो विवक्षुर्वद यद्यपि। तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रणिपत्य कृतांजलिः॥८॥

---

## अट्ठाईसवाँ अध्याय

# तुलापुरुष दान विधि

### सूत बोले

ब्रह्मा के पुत्र मनु ने स्नान करके महादेव शिव को नमस्कार किया। उन्होंने दिव्य चक्षु (नेत्रों) से नीललोहित शिव को देखा। उन्होंने रुद्राध्याय मंत्रों से वरदाता शिव की स्तुति की। बहुत प्रसन्नतापूर्वक शिव जी ने कहा "अपने राज्य की अवधि बीतने पर तुम केवल धार्मिक कर्म से मुक्ति प्राप्त करोगे।" ऐसा कह कर शिव वहीं अन्तर्धान हो गये। वृषध्वज महादेव शिवजी को नमस्कार करके मेरु पर्वत पर उसी तरह चढ़ गये जिस प्रकार शिवजी अपने महान बैल पर चढ़ते हैं। वहाँ पर उन्होंने ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार को देखा जो कि सोने की आभा वाले योगिक ऐश्वर्य से युक्त वरदायक शरणदायक और ब्रह्म स्वरूप हैं। महान तेज वाले मनु ने हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की। मुनि सनत्कुमार भी मनु को देखकर रोमाँचित हो गये। तब दयानिधि मनु से बोले।।१-६।।

### सनत्कुमार बोले

सर्वेश्वर नीललोहित शान्त भगवान शंकर से प्राप्त अभिषेक को करके यहाँ आए हो। यदि आप कुछ कहने की इच्छा रखते हैं तो कहो। उनकी इस बात को सुनकर मनु हाथ जोड़कर उनके आगे नतमस्तक हो गये और उनसे कहा। हे महाराज! 'आप कृपया यह बताएँ कि कोई व्यक्ति केवल कर्म (धार्मिक कृत्य) करने से कैसे मुक्ति प्राप्त कर सकता है? हे विभो! मुक्ति तो ज्ञान प्राप्ति से मिलती है या ज्ञान और कर्म दोनों के मिश्रण से कुछ स्थानों में मुक्ति मिलती हैं।' इन शब्दों को सुनकर सनत्कुमार वेदों के तत्त्व को जानने वालों के भण्डार ने कहा—

विज्ञापयामास कथं कर्मणा निर्वृतिर्विभो। वक्तुमर्हसि चास्माकं कर्मणा केवलेन च॥९॥
ज्ञानेन निर्वृतिः सिद्धा विभो मिश्रेण वा क्वचित्।
अथ तस्य वचः श्रुत्वा श्रुतिसारविदां निधिः॥१०॥
सनत्कुमारो भगवान्कर्मणा निर्वृतिं क्रमात्। मिश्रेण च क्रमादेव क्षणाज्ज्ञानेन वै मुने॥११॥
पुराऽमानेन चोष्ट्रत्वमगमं नंदिनः प्रभोः। शापात्पुनः प्रसादाद्धि शिवमभ्यर्च्य शंकरम्॥१२॥
प्रसादान्नदिनस्तस्य कर्मणैव सुतो ह्यहम्। श्रुत्वोत्तमां गतिं दिव्यामवस्थां प्राप्तवानहम्॥१३॥
शिवार्चनप्रकारेण शिवधर्मेण नान्यथा। राज्ञां षोडशदानानि नंदिना कथितानि च॥१४॥
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं कर्मणैव महात्मना। तुलादिरोहणाद्यानि शृणु तानि यथातथम्॥१५॥
ग्रहणादिषु कालेषु शुभदेशेषु शोभनम्। विंशद्धस्तप्रमाणेन मंडपं कूटमेव च॥१६॥
यथाष्टादशहस्तेन कलाहस्तेन वा पुनः। कृत्वा वेदिं तथा मध्ये नवहस्तप्रमाणतः॥१७॥
अष्टहस्तेन वा कार्या सप्तहस्तेन वा पुनः। द्विहस्ता सार्धहस्ता वा वेदिका चातिशोभना॥१८॥
द्वादशस्तंभसंयुक्ता साधुरम्या भ्रमंतिका। परितो नव कुंडानि चतुरस्त्राणि कारयेत्॥१९॥
ऐंद्रिकेशानयोर्मध्ये प्रधानं ब्रह्मणः सुत। अथवा चतुरस्त्रं च योन्याकारमतः परम्॥२०॥
स्त्रीणां कुंडानि विप्रेंद्रा योन्याकाराणि कारयेत्। अर्धचंद्रं त्रिकोणं च वर्तुलं कुंडमेव च॥२१॥
षडस्त्रं सर्वतो वापि त्रिकोणं पद्मसन्निभम्। अष्टास्त्रं सर्वमाने तु स्थंडिलं केवलं तु वा॥२२॥
चतुर्द्वारसमोपेतं चतुस्तोरणभूषितम्। दिग्गजाष्टकसंयुक्तं दर्भमालासमावृतम्॥२३॥

---

'हे मुनि! कर्म (पवित्र कृत्य) के करने से और ज्ञान से दोनों के संयोग से क्रम से मुक्ति प्राप्त होती है किन्तु यह पूर्ण ज्ञान के द्वारा प्राप्त होती है।।७-११।। पहले की कथा है कि नन्दी भगवान का उचित सम्मान न करने से उनके साथ के कारण मैं ऊँट की दशा को प्राप्त हो गया। नन्दी की कृपा से मैंने भगवान शिव की पूजा की और कर्म से ही ब्रह्मा का पुत्र हो गया। मैं इस उत्तम दिव्य गति को प्राप्त यह केवल शिव के अनेक प्रकार से पूजा करने से ही प्राप्त हुआ अन्यथा नहीं। नन्दी के द्वारा कहे गये धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति की प्राप्ति के लिए राजाओं से सोलह प्रकार के दातव्य दान बताए गये हैं। महात्मा नन्दी के द्वारा पवित्र कृत्य जैसे तुलाधिरोहण आदि अन्य दान कहे गये हैं। उनको यथावत् सुनो।।१२-१५।। शुभ अवसर जैसे ग्रहण आदि के समय उत्तम बीस हाथ लम्बे मण्डप को या कूट को उत्तम स्थान पर खड़ा करे। मण्डप का विस्तार बीस, अट्ठारह, या सोलह हाथ में हो। एक वेदी नौ हाथ, आठ हाथ या सात हाथ की मण्डप के मध्य में बनायी जाय। छोटी वेदी दो या डेढ़ हाथ की और सुन्दर हो और बारह जोड़ने वाली रस्सियों से युक्त हो। भक्त नौ चौकोर यज्ञ कुण्ड चारों ओर खोदे।।१६-१९।। हे ब्रह्मा के पुत्र! प्रधान कुण्ड पूर्व और उत्तर-पूर्व के मध्य में हो। यज्ञ कुण्ड चौकोर या त्रिकोण के आकार में हो। यज्ञ के कुण्ड स्त्री की योनि के आकार में बनाये जायँ। वे कुण्ड अर्ध चन्द्र त्रिकोण होने चाहिये। षडस्त्र या त्रिकोण कुण्ड कमल के आकार में हो। यह अष्टास्त्र भी हो। इसके लिए खाली समतल भूमि या स्थंडिल का भी प्रयोग किया जा सकता है। घेरे के बाउन्ड्री में चार प्रवेश द्वारा हो। वे चार तोरण से

अष्टमंगलसंयुक्तं वितानोपरिशोभितम्। तुलास्तंभद्रुमाश्चात्र बिल्वादीनि विशेषतः॥२४॥
बिल्वाश्वत्थपलाशाद्याः केवलं खादिरं तु वा। येन स्तंभः कृतः पूर्वं तेन सर्वं तु कारयेत्॥२५॥
अथवा मिश्रमार्गेण वेणुना वा प्रकल्पयेत्। अष्टहस्तप्रमाणं तु हस्तद्वयसमायुतम्॥२६॥
तुलास्तंभस्य विष्कंभोऽनाहतस्त्रिगुणोमतः। द्वयगुलेन विहीनं तु सुवृतं निर्व्रणं तथा॥२७॥
उभयरंतरं चैव षड्हस्तं नृपते स्मृतम्। द्वयोश्चतुर्हस्तकृतमंतरं स्तंभयोरपि॥२८॥
षडस्तमंतरंज्ञेयं स्तंभयोरुपरि स्थितम्। वितस्तिमात्रं विस्तारो विष्कंभस्तावदुत्तरम्॥२९॥
स्तभयोस्तु प्रमाणेन उत्तरद्वारसम्मितम्। षट्त्रिंशन्मात्रसंयुक्तं व्यायामं तु तुलात्मकम्॥३०॥
विष्कंभमष्टमात्रं तु यवपंचकसंयुतम्। षट्त्रिंशन्मात्रनाभं स्यान्निर्माणाद्वर्तुलं शुभम्॥३१॥
अग्रे मूले च मध्ये च हेमपट्टेन बंधयेत्। पट्टमध्ये प्रकर्तव्यमवलंबनकत्रयम्॥३२॥
ताम्रेण च प्रकर्तव्यमवलंबनकत्रयम्। आरेण वा प्रकर्तव्यमायसं नैव कारयेत्॥३३॥
मध्ये चोर्ध्वमुखं कार्यमवलंबः सुशोभनः। रश्मिभिस्तोरणाग्रे वा बंधयेच्च विधानतः॥३४॥
जिह्वामेकां तुलामध्ये तोरणं तु विधीयते। उत्तरस्य च मध्ये च शंकुं दृढमनुत्तमम्॥३५॥
वितानेनोपरि च्छाद्य दृढं सम्यक्प्रयोजयेत्। शंकोः सुषिरसंपन्नं वलयं कारयेन्मुने॥३६॥
तुलामध्ये वितानेन तुलयालंबके तथा। वलयेन प्रयोक्तव्यं कुंडले वावलंबनम्॥३७॥

---

विभूषित हों। आठ दिशाओं में आठ दिग्गज स्थापित करे जो कुश की मालाएँ पहने आठ मंगल वस्तुओं से युक्त हों। ऊपर का भाग वितान से शोभित हो। तुला (तराजू) के खम्भों के लिए विशेष रूप से बेल, पीपल, पलाश या खदिर (खैर) की वृक्षों की लकड़ियों का प्रयोग किया जाय। खम्भे की लकड़ी एक वृक्ष की हो जो सामान्य रूप से प्रयोग की जाय।।२०-२६।।

एक बाँस को अन्य काठ के ढाँचे से मिलाकर निर्माण करें। आठ हाथ लम्बा और दो हाथ चौड़ा तुला को खड़ा करने के लिए स्थान चाहिए। मुख्य स्तम्भ (खम्भा) का निष्कंभ से उसका तीन गुणा घेरा हो। यह दो अंगुल से कम, सुन्दर, गोल और छेद रहित हो। दो खम्भों के बीच की दूरी छः हाथ हो। या चार हाथ हो।।२७-२८।। दोनों स्तम्भों के ऊपरी भागों में छः हाथ का अन्तर हो। इसके ऊपरी भाग की चौड़ाई में एक बीता मात्र विस्तार हो।।२९।। ऊपर के भाग में तुला की छड़ में दोनों स्तम्भों की लम्बाई के अनुकूल हो। तुला का संतुलन करने वाले छड़ की लम्बाई ३६ अंगुल हो।।३०।। निष्कंभ आठ अंगुल और पाँच यव मात्र हो। नाभि ३६ अंगुल लम्बी हो और यह सुन्दर और गोल हो।।३१।। एक सोने की पट्ट (प्लेट) सिरे पर, मध्य में और तल भाग में लगायी जाय। मध्य के पट्ट (प्लेट) में तीन अवलम्बक (पिन) लगाई जाय।।३२।। ये तीनों पिन ताँबे या पीतल की बनी हुई हों। लोहे की न बनी हों।।३३।। पट्ट को बीच में लगाने का अवलंब (पिन) सुन्दर हो। उसका मुंह ऊपर (उर्ध्वमुख) की ओर हो। यह डोरे से तोरण के ऊपरी सिरे पर मजबूती से बांधी जाय।।३४।। तुला के मध्य में तोरण बनाया जाय। इसका आकार जीभ के समान हो। ऊपर ऊपरी स्तम्भ के बीच में मजबूत खूंटी (शंकु) हो।।३५।। हे मुनि! वितान के सिरे पर मजबूती से इसको भलीभाँति लगा देना चाहिए। खूंटी को एक खोखला गोला छल्ला (अंगूठीनुमा) से बाँध देना चाहिए।।३६।। तुला के बीच में, वितान में गोल छल्ले के द्वारा लगा

सुदृढं च तुलामध्ये नवमांगुलमानतः। पट्टस्यैव तु विस्तारं पंचमात्रप्रमाणतः॥३८॥
अपरौ सुदृढौ पिंडौ शुभद्रव्येण कारयेत्॥
शिक्याधस्तात्प्रकर्तव्यौ पंचप्रादेशविस्तरौ। सहस्रेण तु कर्तव्यौ पलानां धारकावुभौ॥३९॥
शताष्टकेन वा कुर्यात्पलैः षट्शतमेववा। चतुस्तालं च कर्तव्यो विस्तारो मध्यमस्तथा॥४०॥
सार्धत्रितालविस्तारः कलशस्य विधीयते। बध्नीयात्पंचपात्रं तु त्रिमात्रं षट्कमुच्यते॥४१॥
चतुर्द्वारसमोपेतं द्वारमंगुलमात्रकम्। कुंडलैश्च समोपेतैः शुक्लशुद्धसमन्वितैः॥४२॥
कुंडलेकुंडले कार्यं शृंखलापरिमंडलम्। शृंखलाधारवलयमवलंबेन योजयेत्॥४३॥
प्रादेशं वा चतुर्मात्रं भूमेस्त्यक्त्वावलंबयेत्। घटौ पुरुषमात्रौ तु कर्तव्यौ शोभनावुभौ॥४४॥
तौ वालुकाभिः संपूर्य शिवं तत्र विनिःक्षिपेत्। द्विहस्तमात्रमवटे स्थापनीयौ प्रयत्नतः॥४५॥
निःशेषं पूरयेद्विद्वान्वालुकाभिः समंततः। येन निश्चलतां गच्छेत्तेन मार्गेण कारयेत्॥४६॥
श्रूयतां परमं गुह्यं वेदिकोपरिमंडलम्। अष्टमांगुलसंयुक्तं मंगलांकुरशोभितम्॥४७॥
फलपुष्पसमाकीर्णं धूपदीपसमन्वितम्। वेदिमध्ये प्रकर्तव्यं दर्पणोदरसन्निभम्॥४८॥
आलिखेन्मंडलं पूर्वं चतुर्द्वारसमन्वितम्। शोभोपशोभासंपन्नं कर्णिकाकेसरान्वितम्॥४९॥
वर्णजातिसमोपेतं पंचवर्णं तु कारयेत्।
वज्रं प्रागंतरे भागे आग्नेय्यां शक्तिमुज्ज्वलाम्॥५०॥

---

देना चाहिए।।३७।। तुला के पट्ट के बीच से नव अंगुल मान में इसको जड़ देना चाहिए। बँधने वाले प्लेट की चौड़ाई पाँच अंगुल होनी चाहिए।।३८।।

जो किसी मजबूत मेटेरियल के दो कड़े पिण्ड की दो सीट बनायी जाय और सहारा देने वाली डोरियों के नीचे लटकती हुई एक बीता चौकोर पाँच बीता और एक हजार पल वजन की होनी चाहिए।।३९।। अथवा आठ हजार या छः हजार पलों की हो। कलश की चौड़ाई मध्य में चार ताल और मध्य भाग साढ़े तीन ताल का हो। पंचपात्र उस पर रख दिया जाय। उसमें चार छेद हो। प्रत्येक छेद चौड़ाई में एक अंगुल हो। शुद्ध और सफेद कुंडलों से युक्त हो।।४०-४२।। प्रत्येक कुंडल में चारों ओर श्रृंखला बंधी हुई हो। कुंडल को बाँधने वाली जंजीर वलय से जोड़ देनी चाहिए।।४३।। भूमि से चार बीता छोड़ने के बाद लटका देना चाहिए। मनुष्य के आकार के और देखने में शोभन दो घड़ों को लेना चाहिए।।४४।। उनको बालू से भर दिया जाय। वहाँ पर थोड़े खाली स्थान में दो हाथ शिव की मूर्ति को स्थापित करना चाहिए।।४५।। विद्वान पुरोहित बालू से पूरी तरह भर दे। यह ऐसा कर दिया जाय कि आसानी से हिल डुल न सके।।४६।। एक गुप्त बात को सुनो। वेदिका पर एक मण्डल खींचा जाय जो कि शुभ सामग्री से खींचा जायँ। वह संख्या में आठ हो। मंगल अंकुर से शोभित हो। उस पर फल और पुष्प बिखेर दिये जाय। धूप और दीप का भी प्रयोग किया जाय। वेदी के मध्य भाग को दर्पण के पेट के समान स्पष्ट निर्मल करना चाहिए।।४७-४८।। वेदी के मध्य में एक मण्डल खींचा जाय। उसमें चार प्रवेश द्वारा हों यह कर्णिका और केसर से युक्त शोभा से सम्पन्न हो अर्थात सुन्दर

आलिखेद्दक्षिणे दंडं नैर्ऋत्यां खड्गमालिखेत्। पाशश्च वारुणे लेख्यो ध्वजं वै वायुगोचरे॥५१॥
कौबेर्यां तु गदा लेख्या ऐशान्यां शूलमालिखेत्।
शूलस्य वामदेशेन चक्रं पद्मं तु दक्षिणे॥५२॥
एवं लिखित्वा पश्चाच्च होमकर्म समाचरेत्। प्रधानहोमं गायत्र्या स्वाहा शक्राय वह्नये॥५३॥
यमाय राक्षसेशाय वरुणाय च वायवे। कुबेरायेश्वरायाथ विष्णवे ब्रह्मणे पुनः॥५४॥
स्वाहांतं प्रणवेनैव होतव्यं विधिपूर्वकम्। स्वशाखाग्निमुखेनैव जयादिप्रतिसंयुतम्॥५५॥
स्विष्टांतं सर्वकार्याणि कारयेद्विधिवत्तदा॥
सर्वहोमाग्रहोमे च समित्पालाशमुच्यते। एकविंशतिसंख्यातं मंत्रेणानेन होमयेत्॥५६॥
अयंतइध्मआत्माजातवेदस्तेनेध्यस्ववर्धस्वचेद्धवर्धयचास्मान्प्रजयापशुभिर्ब्रह्म-
वर्चसेनान्नांद्येनसमेधयस्वाहा भूः स्वाहा भुवःस्वाहा भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
समिद्धोमश्च चरुणा घृतस्य च यथाक्रमम्। शुक्लान्नपायसं चैव मुद्गान्नं चरवः स्मृताः॥५७॥
सहस्त्रं वा तदर्धं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥५८॥
अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः॥
आरेबाधस्वदुच्छनाम्॥
अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः॥
तमीमहे महागयम्॥

---

हो।।४९।। यह विभिन्न रंगों में हो। कम-से-कम पाँच रंग हों। पूर्व दिशा में वज्र का चित्र खीचा हुआ हो। दक्षिण-पूर्व में उज्जवल शक्ति, दक्षिण दिशा में दंड, नैऋत्य दिशा में खड्ग (तलवार) और पश्चिम दिशा में पाश और उत्तर-पश्चिम कोने में ध्वज चित्रित हो।।५०-५१।। उत्तर में गदा, ईशान कोण में शूल खींचा हुआ हो। शूल के वाम भाग में चक्र दक्षिण में पद्म चित्रित हो।।५२।। ऐसा सब खींचकर इसके बाद होम कृत्य किया जाय। फिर चक्र के लिए, अग्नि के लिए, यम के लिए, राक्षसेश के लिए, वरुण के लिए, वायु के लिए, कुबेर के लिए, ईशान के लिए, विष्णु और ब्रह्मा के लिए, स्वाहा बोलकर हवन किया जाय। जैसे चक्राय स्वाहा। प्रणव जोड़कर स्वाहा अन्त में लगाकर हवन कार्य किया जाय। होम की अग्नि वेदों के आपनी शाखा के अग्नि मुख से उत्पन्न की जाय जिसमें होम कार्य हो। तब पुरोहित जयादि होम पूर्ण विधि के अनुसार करे। इन सभी होमों और प्रधान होम में यज्ञ की समिधा पलाश वृक्ष की होनी चाहिए। श्लोक ५७-५८ में लिखित मन्त्रों को पढ़ते हुए इक्कीस होम करना चाहिए।।५३-५६।। यज्ञ की समिधा और चरु और घी से इन्द्र आदि का होम करें। चरु के लिए दूध, सफेद चावल, लाजा और हरे चने का प्रयोग अभीष्ट है। तब मूल श्लोक में लिखित मन्त्रों को दोहराते हुए भक्त एक हजार, पाँच सौ या एक सौ आठ बार होम करे।।५७-५९।। प्रधान होम रुद्र गायत्री मन्त्र को दोहराते हुए किया जाता है। इसमें चरु और घी तथा यज्ञ की समिधाओं का प्रयोग

अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्॥
दधद्रयिं मयि पोषम्॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वाजातानि परिता बभूव॥
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥

गायत्र्या च प्रधानस्य समिद्धोमस्तथैव व। चरुणा च तथाज्यस्य शक्रादीनां च होमयेत्॥५९॥
वज्रादीनां च होतव्यं सहस्रार्धं ततः क्रमात्। ब्रह्म जज्ञेति मंत्रेण ब्रह्मणे विष्णवे पुनः॥६०॥

नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि॥
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

अयं विशेषः कथितो होममार्गः सुशोभनः। दूर्वया क्षीरयुक्तेन पंचविंशत्पृथक्पृथक्॥६१॥
त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥६२॥
दूर्वाहोमः प्रशस्तोऽयं वास्तुहोमश्च सर्वथा। प्रायश्चित्तममघोरेण सर्पिषा च शतंशतम्॥६३॥
ब्रह्माणं दक्षिणे वामे विष्णुं विश्वगुरुं शिवम्। मध्ये देव्या समं ज्ञेयमिंद्रादिगणसंवृतम्॥६४॥
आदित्यं भास्करं भानुं रविं देवं दिवाकरम्। उषां प्रभां तथा प्रज्ञां संध्यां सावित्रिमेव च॥६५॥
पंचप्रकारविधिना खखोल्काय महात्मने। विष्टरां सुभगां चैव वर्धनीं च प्रदक्षिणाम्॥६६॥
आप्यायनीं च संपूज्य देवीं पद्मासने रविम्। प्रभूतं वाथ कर्तव्यं विमलं दक्षिणे तथा॥६७॥
सारं पश्चिमभागे च आराध्यं चोत्तरे यजेत्। मध्ये सुखं विजानीयात्केसरेषु यथाक्रमम्॥६८॥
दीप्तां सूक्ष्मां जयां भद्रां विभूतिं विमलां क्रमात्। अमोघां विद्युतां चैव मध्यतः सर्वतोमुखीम्॥६९॥

---

करते हुए इन्द्र और अन्य देवताओं के लिए जैसे वज्र आदि के लिए पाँच सौ बार क्रम से होम किया जाना चाहिए। ब्रह्मा को होम 'ब्रह्म यज्ञ इति' मन्त्र से प्रारम्भ करते हुए ब्रह्मा और विष्णु के लिए नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्। इस मन्त्र से होम किया जाय। होम के शोभन मार्ग की विशेष विधि का वर्णन किया गया है। दूब और दूध को मिलाकर पच्चीस आहुतियाँ अलग-अलग दी जाए। त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्धनम्, उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। दूब का होम और वास्तु होम सब प्रकार से प्रशस्त है। अघोर मन्त्र द्वारा घी से होम कृत्य किया जाय। इन होमों को सौ बार किया जाय। ब्रह्मा बाएँ और विष्णु दाहिने और संसार के गुरु शिव मध्य में उमा देवी के साथ स्थित हों। वह इन्द्र और अन्य तथा अपने गणों से घिरे हुए हों (सम्वृत) हों।।६०-६४।। भक्त आदित्य, भास्कर, भानु, रवि, दिवाकर देव को, ऊषा, प्रभा, प्रज्ञा, संध्या और सावित्री के साथ इन सब की पूजा करें।।६५।। पंच प्रकार विधि से महात्मा खखोल्क के लिए पूजा की जाय। विष्टरा, शुभगा, वर्धिनी, प्रदक्षिणा और आप्यायनी की पूजा के बाद पद्मासन में विराजमान रवि की बहुबार पूजा करे। दक्षिण में विमला, पश्चिम में सार, उत्तर भाग में आराध्य और मध्य में सुख की पूजा की जाय। केसरों में यथा क्रम दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, भद्रा, विभूति, कमला, अमोघा, विद्युता की

सोममंगारकं चैव बुधंगुरुमनुक्रमात्। भार्गवं च तथा मंदं राहुं केतुं तथैव च॥७०॥
पूजयेद्धोमयेदेवं दापयेच्च विशेषतः। योगिनो भोजयेत्तत्र शिवतत्त्वैकपारगान्॥७१॥
दिव्याध्ययनसंपन्नान्कृत्वैवं विधिविस्तरम्। होमे प्रवर्तमाने च पूर्वदिक्स्थानमध्यमे॥७२॥
आरोहयेद्विधानेन रुद्राध्यायेन वै नृपम्। धारयेत्तत्र भूपालं घटिकैकां विधानतः॥७३॥
यजमानो जपेन्मंत्रं रुद्रगायत्रिसंज्ञकम्। घटिकार्धं तदर्धं वा तत्रैवासनमारभेत्॥७४॥
आलोक्य वारुणं धीमान्कूर्चहस्तः समाहितः। नृपश्च भूषणैर्युक्तः खड्गखेटकधारकः॥७५॥
स्वस्तिरित्यादिभिश्चादावंते चैव विशेषतः। पुण्याहं ब्राह्मणैः कार्यं वेदवेदांगपारगैः॥७६॥
जयमंगलशब्दादिब्रह्मघोषैः सुशोभनैः। नृत्यवाद्यादिभिर्गीतैः सर्वशोभासमन्वितैः॥७७॥
स्वमेवं चंद्रदिग्भागे सुवर्णं तत्र विक्षिपेत्। तुलाधारौ समौ वृत्तौ तुलाभारः सदा भवेत्॥७८॥
शतनिष्काधिकं श्रेष्ठं तदर्धं मध्यमं स्मृतम्। तस्यार्धं च कनिष्ठं स्यात्त्रिविधं तत्र कल्पितम्॥७९॥
वस्त्रयुग्ममथोष्णीषं कुंडलं कंठशोभनम्। अंगुलीभूषणं चैव मणिबंधस्य भूषणम्॥८०॥
एतानि चैव सर्वाणि प्रारंभे धर्मकर्मणि। पाशुपतव्रतायाथ भस्मांगाय प्रदापयेत्॥८१॥
पूर्वोक्तभूषणं सर्वं सोष्णीषं वस्त्रसंयुतम्। दद्यादेतत्प्रयोक्तृभ्य आच्छादनपटं बुधः॥८२॥

---

पूजा की जाय। मध्य में सर्वतोमुखी की पूजा की जाय।।६६-६९।। अनुक्रम से चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु की पूजा की जाय और उनके निमित्त होम भी किया जाय।।७०-७१।। शिव तत्त्व के ज्ञाता योगियों को समुचित सम्मान दिया जाय। इन कृत्यों को विस्तार में पूरा करके होम किया जाय। राजा को पूर्व की ओर तुला के पलड़े पर रुद्राध्याय मन्त्रों को दोहराते हुए बैठाया जाय। वहाँ पर राजा एक घड़ी (चौबीस मिनट) बैठा रहे।।७२-७३।। यजमान रुद्र गायत्री मन्त्र को जपे। एक घटिका या इसका भी आधा या उसका भी आधा समय तक वहीं आसन पर बैठा रहे।।७४।। बुद्धिमान भक्त शुद्ध होकर बैठे। वह हाथ में कुश ले ले और पश्चिम दिशा की ओर मुँह करके हाथ में कुश लेकर बैठे। राजा सब आभूषणों से भूषित हो तलवार और खेटक हाथ में ले ले। वेदों के विशेष ज्ञाता ब्राह्मणों द्वारा 'स्वस्ति' इत्यादि आदि और अन्त में दोहराते हुए ब्राह्मणों द्वारा पुण्याह किया जाय।।७५-७६।। मंगल शब्द आदि और उत्तम शब्दघोष नृत्य, वाद्य और गीत किया जाय। समारोह का अन्त इस प्रकार सुन्दर और शानदार ढंग से हो। वह उत्तर दिशा में सोने के सिक्कों को तब तक डालता रहे जबकि तराजू का बैलेंस (भार) बराबर न हो जाय।।७७-७८।। अगर सौ सोने के सिक्कों (निष्क) को देने से राशि बढ़ जाय तो यह श्रेष्ठ माना जाता है। उसका आधा मध्यम और उसका भी आधा अर्थात् पच्चीस सिक्के कनिष्ठ कहा जाता है। इस प्रकार यह विविध रूप में विभक्त है।।७९।।

एक जोड़ी वस्त्र, साफा (उष्णीय), कान का कुंडल, गले का हार, अंगुली में पहनने की अंगूठी, कलाई में पहनने का कंगन (कड़ा) ये सब को धर्मकर्म के प्रारम्भ में भक्त पहने रहे। उन सबको पाशुपत व्रत करने वाले और शरीर पर भस्म धारण करने वाले शिव भक्त को दान देवें।।८०-८१।। ऊपर कहे गये सब आभूषण, साफा

दक्षिणां च शतं सार्धं तदर्धं वा प्रदापयेत्। योगिनां चैव सर्वेषां पृथङ्निष्कं प्रदापयेत्॥८३॥
यागोपकरणं दिव्यमाचार्याय प्रदापयेत्। इतरेषां यतीनां तु पृथङ्निष्कं प्रदापयेत्॥८४॥
तुलारोहसुवर्णं च शिवाय विनिवेदयेत्। प्रसादं मंडपं चैव प्राकारं भूषणं तथा॥८५॥
सुवर्णपुष्पं पटहं खड्गं वै कोशमेव च।
कृत्वा दत्त्वा शिवायाथ किंचिच्छेषं च बुद्धिमान्॥८६॥
आचार्येभ्यः प्रदातव्यं भस्मांगेभ्यो विशेषतः। बंदीकृतान् विसृज्याथ कारागृहनिवासिनः॥८७॥
सहस्रकलशैस्तत्र सेचयेत्परमेश्वरम्। घृतेन केवलेनापि देवदेवमुमापतिम्॥८८॥
पयसा वाथ दध्ना वा सर्वद्रव्यैरथापि वा। ब्रह्मकूर्चेन वा देवं पंचगव्येन वा पुनः॥८९॥
गायत्र्या चैव गोमूत्रं गोमयं प्रणवेन वा। आप्यायस्वेति वै क्षीरं दधिक्राव्णेति वै दधि॥९०॥
तेजोसीत्याज्यमीशानमंत्रेणैवाभिषेचयेत् । देवस्यत्वेति देवेशं कुशांबुकलशेन वै॥९१॥
रुद्राध्यायेन वा सर्वं स्नापयेत्परमेश्वरम्। सहस्रकलशं शंभोर्नाम्नां चैव सहस्रकैः॥९२॥
विष्णुना कथितैर्वापि तंडिना कथितैस्तु वा। दक्षेण मुनिमुख्येन कीर्तितैरथ वा पुनः॥९३॥
महापूजा प्रकर्तव्या महादेवस्य भक्तितः। शिवार्चकाय दातव्या दक्षिणा स्वगुरोः सदा॥९४॥

---

और वस्त्रों को उनको दे दें जो इस संस्कार (कृत्य) को कराये हों।।८२-८३।। बुद्धिमान व्यक्ति इन सबको ढकने (बाँधने) के लिए एक वस्त्र अलग से दे। उसके साथ एक-सौ सोने के सिक्के या पचास या पचीस सिक्के दक्षिणा देनी चाहिए। सब योगियों को अलग से निष्क (सोने का सिक्का) दक्षिणा दी जाये। यज्ञ के सब दिव्य उपकरण आचार्य को दान कर दिया जाय। अन्य शेष यतियों को अलग से निष्क (सोने का सिक्का) दक्षिणा दी जाय।।८४।। तुला पर चढ़े सोने को शिव जी को भेंट कर दिया जाना चाहिए। प्रासाद (महल), मंडप, प्राकार, आभूषण (सोने के फूल), पटह (ढोल), तलवार और म्यान (तलवार की) को भेंट रूप में शिव को समर्पित की जाय। इसके बाद जो कुछ बचे उसको आचार्यों को और विशेष रूप से शरीर पर भस्म लपेटे हुए योगियों को बुद्धिमान भक्त द्वारा दे दी जानी चाहिए। जेल में बन्द सब कैदियों को छोड़ दिया जाना चाहिए। सहस्र कलशों से परमेश्वर शिव का सिंचन करना चाहिए। शिव जी को घी या दूध या दही से अथवा इन सबको मिलाकर उससे या गोमूत्र (ब्रह्मकूर्च) या पंचगव्य से विधिपूर्वक स्नान कराना चाहिए।।८५-८९।। गायत्री मन्त्र दोहराते हुए गोमूत्र मिलाया जाय। प्रणव द्वारा गोबर को, 'आप्यायस्व' मन्त्र द्वारा दूध को और 'दधिक्राव्ण' मन्त्र से दही को मिलाया जाय। 'तेजोऽसि' मन्त्र से घी को उसमें (पंचगव्य में) छोड़ा जाय। ईशान मन्त्र द्वारा पंचगव्य से। देवस्य त्वा आदि मन्त्र को दोहराते हुए कुश सहित कलश के जल से देवेश शिव का अभिषेक विष्णु, तंडिन या दक्ष द्वारा उच्चारित शिव के सहस्र नामों को दोहराते हुए सहस्र कलशों का उपयोग शिव के स्नान में किया जाय। भक्ति से महादेव की महापूजा की जानी चाहिए। अपने गुरु को तथा शिव के पुजारी को सदा द्रव्य दक्षिणा दी जानी चाहिए। नगद दक्षिणा के साथ शरीर को ढकने के लिए सिल्क के वस्त्र या कम्बल भी दिया जाना चाहिए।

देहार्णवं च सर्वेषां दक्षिणा च यथाक्रमम्। दीनांधकृपणानां च बालवृद्धकृशातुरान्॥९५॥
भोजयेच्च विधानेन दक्षिणामपि दापयेत्॥९६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे**
**तुलापुरुषदानविधावष्टाविंशत्तमोऽध्यायः॥२८॥**

---

गरीबों, अन्धों, उपेक्षितों, बालकों व वृद्धों, दुबले-पतले लोगों और रोगियों को विधिपूर्वक (भर पेट) भोजन कराना चाहिए और दक्षिणा भी दी जानी चाहिए।।९०-९६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तुला पुरुष दान विधि**
**नामक अट्ठाईसवाँ अध्याय समाप्त॥२८॥**

एकोनत्रिंशोऽध्यायः

# हिरण्यगर्भदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

तुला ते कथिता ह्येषा आद्या सामान्यरूपिणी। हिरण्यगर्भं वक्ष्यामि द्वितीयं सर्वसिद्धिदम्॥१॥
अधःपात्रं सहस्रेण हिरण्येन विधीयते। ऊर्ध्वपात्रं तदर्धेन मुखं संवेशमात्रकम्॥२॥
हैममेवं शुभं कुर्यात्सर्वालंकारसंयुतम्। अधःपात्रे स्मरेद्देवीं गुणत्रयसमन्विताम्॥३॥
चतुर्विंशतिकां देवीं ब्रह्मविष्ण्वग्निरूपिणीम्। ऊर्ध्वपात्रे गुणातीतं षड्विंशकमुमापतिम्॥४॥
आत्मानं पुरुषं ध्यायेत्पंचविंशकमग्रजम्। पूर्वोक्तस्थानमध्येऽथ वेदिकोपरि मंडले॥५॥
शालिमध्ये क्षिपेन्नीत्वा नववस्त्रैश्च वेष्टयेत्। माषकल्केन चालिप्य पंचद्रव्येण पूजयेत्॥६॥
ईशानाद्यैर्यथान्यायं पंचभिः परिपूजयेत्। पूर्ववच्छिवपूजा च होमश्चैव यथाक्रमम्॥७॥
देवीं गायत्रिकां जप्त्वा प्रविशेत्प्राङ्मुखः स्वयम्।
विधिनैव तु संपाद्य गर्भाधानादिकां क्रियाम्॥८॥
कृत्वा षोडशमार्गेण विधिना ब्राह्मणोत्तमः। दूर्वांकुरैस्तु कर्तव्या सेचना दक्षिणे पुटे॥९॥

---

उन्तीसवाँ अध्याय

# हिरण्यगर्भ की दान विधि

सनत्कुमार बोले

प्रथम पवित्र कृत्य तुलारोहण मैंने सामान्य रूप से कहा। इस क्रम में सब सिद्धि का दायक द्वितीय कृत्य को कहूँगा।।१।। एक हजार सोने के सिक्कों से अधः पात्र बनवाया जाय। उसके आधे अर्थात् पाँच-सौ सोने के सिक्कों से ऊर्ध्व पात्र बनाया जाय। उसका मुख आसानी से भरने योग्य (सुराही के मुख की तरह) काफी चौड़ा हो। इस प्रकार स्वर्ण निर्मित पात्र को सब अलंकार से मुक्त करे। नीचे के पात्र में भक्त तीन गुण वाली माया देवी का स्मरण करे।।२-३।। वह ऊपरी पात्र में ब्रह्मा, विष्णु और अग्नि के रूपों के साथ चौबीस तत्त्वों वाली देवी (प्रकृति) को स्मरण करे। ऊपरी पात्र में छब्बीस तत्त्वों के गुणों वाले उमपति शिव का स्मरण करे।।४।। वह आत्मा पर वेदिका के ऊपर मण्डल में पूर्वोक्त स्थान के मध्य में अग्रज पच्चीस तत्त्वों वाले पुरुष का ध्यान करे।।५।। पात्र के हाथ में शाली चावल डाल दे और उस पात्र को नये वस्त्र से लपेट दे। उसको उड़द की दाल के आटे से लेप करके पंचद्रव्य से उसको पूरा करे।।६।। भक्त ईशान आदि मन्त्रों से उसकी पूजा करे। यथाक्रम पूर्ववत् शिव पूजा और होम करे।।७।। भक्त स्वयं गायत्री मन्त्र का जप करे और पूर्व मुख करके बैठे। इन सब कृत्यों को करने के बाद उत्तम ब्राह्मण पूजा की षोडशोपचार सामग्री से गर्भाधान आदि कृत्य पूरा करे। दूब के अंकुर से, गूलर के फलों के साथ कुशों से इक्कीस बार दाहिनी नासा पर छिड़काव करे। सीमंत संस्कार में भी

औदुंबरफलैः सार्धमेकविंशत्कुशोदकम्। ईशान्यां तावदेवात्र कुर्यात्सीमंतकर्मणि॥१०॥
उद्वहेत्कन्यकां कृत्वा त्रिंशन्निष्केण शोभनाम्। अलंकृत्य तथा हुत्वा शिवाय विनिवेदयेत्॥११॥
अन्नप्राशनके विद्वान् भोजयेत्पायसादिभिः। एवं विश्वजितांता वै गर्भाधानादिकाः क्रियाः॥१२॥
शक्तिबीजेन कर्तव्या ब्राह्मणैर्वेदपारगैः। शेषं सर्वं च विधिवत्तुलाहेमवदाचरेत्॥१३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकोनत्रिंशोऽध्यायः॥२९॥**

---

उत्तर-पूर्व दिशा में जल का सेवन करे।।८-१०।। तीस निष्क से एक सुन्दर आकार की कन्या की प्रतिमा बनवाये। उसको सजा बजा कर विवाह संस्कार करे। होम करे। फिर उसको शिव को समर्पित कर देना चाहिए। अन्नप्राशन में भक्त खीर आदि भोजन कराए। इस प्रकार गर्भाधान से प्रारम्भ करके विश्वजित तक का संस्कार समाप्त हुआ। ये सब संस्कार वेदों के पारगामी विद्वान ब्राह्मणों द्वारा करवाना चाहिए। शक्ति बीज मन्त्र को दोहराते हुये ये संस्कार किये जावें। शेष संस्कार तुलापुरुषदान की तरह पूर्ण किया जाना चाहिए।।११-१३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में हिरण्यगर्भ की दान विधि नामक उन्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥२९॥**

त्रिंशोऽध्यायः

# तिलपर्वतदानम्

सनत्कुमार उवाच

अधुना संप्रवक्ष्यामि तिलपर्वतमुत्तमम्। पूर्वोक्तस्थानकाले तु कृत्वा संपूज्य यत्नतः॥१॥
सुसमे भूतले रम्ये वेदिना च विवर्जिते। दशतालप्रमाणेन दंडं संस्थाप्य वै मुने॥२॥
अद्भिः संप्रोक्ष्य पश्चाद्धि तिलांस्त्वस्मिन्विनिक्षिपेत्।
पंचगव्येन तं देशं प्रोक्षयेद्ब्राह्मणोत्तमः॥३॥
मंडलं कल्पयेद्विद्वान्पूर्ववत्सुसमंततः। नववस्त्रैश्च संस्थाप्य रम्यपुष्पैर्विकीर्य च॥४॥
तस्मिन्संचयनं कार्यं तिलभारैर्विशेषतः। दंडप्रादेशमुत्सेधमुत्तमं परिकीर्तितम्॥५॥
चतुरंगुलहीनं तु मध्यमं मुनिपुंगवाः। दंडतुल्यं कनिष्ठं स्याद्दंडहीनं न कारयेत्॥६॥
वेष्टयित्वा नवैर्वस्त्रैः परितः पूजयेत्क्रमात्। सद्यादीनि प्रविन्यस्य पूजयेद्विधिपूर्वकम्॥७॥
अष्टदिक्षु च कर्तव्याः पूर्वोक्ता मूर्तयः क्रमात्। त्रिनिष्केन सुवर्णेन प्रत्येकं कारयेत्क्रमात्॥८॥
दक्षिणा विधिना कार्या तुलाभारवदेव तु। होमश्च पूर्ववत्प्रोक्तो यथावन्मुनिसत्तमाः॥९॥
अर्चयेद्देवदेवेशं लोकपालसमावृतम्। तिलपर्वतमध्यस्थं तिलपर्वतरूपिणम्॥१०॥

---

तीसवाँ अध्याय

# तिल पर्वत का दान

सनत्कुमार बोले

अब मैं तिल के पर्वत के दान के विषय में आप से कहूँगा। यत्नपूर्वक पूर्वोक्त स्थान और काल में सुलभ सुन्दर समतल भूमि पर दण्ड की स्थापना करके उसकी समुचित पूजा करके जल छिड़के। वह दण्ड दस ताल हाथ लम्बा हो। जल से उस दण्ड को छिड़ककर उत्तम ब्राह्मणभक्त तिल के बीजों को वहाँ रखे। उस स्थान को पञ्चगव्य से जल से छिड़के।।१-३।। विद्वान भक्त उसके चारों ओर गोलमण्डल बनावे। नये वस्त्र को रखकर और सुन्दर पुष्पों को विकीर्ण करके उसपर तिल के बीजों के भार का ढेर लगावे। अगर तिल का भार गाड़े हुए दण्ड से ऊपर हो जाय तो उसको उत्तम कहा जाता है। हे श्रेष्ठ मुनियों! दण्ड से चार अङ्गुल कम रहने पर मध्यम तथा दण्ड के बराबर होने पर कनिष्ठ श्रेणी का होता है। तिल के ढेर को दण्ड से हीन न करना चाहिए।।४-६।। इसको नये वस्त्र से लपेट देना चाहिए। वहाँ सद्य और अन्य को स्थापित करके विधि विधान के अनुसार उनकी पूजा करनी चाहिए।।७।। पूर्व में कहे हुये मूर्तियों को आठों दिशाओं में स्थापित करना चाहिए। प्रत्येक मूर्ति तीन निष्क सुवर्ण से बनवायी जाय।।८।। तुला भार के कृत्य में तद्वत् विधिपूर्वक दक्षिणा दी जाय। हे श्रेष्ठ मुनियों! पूर्वोक्त कथनानुसार होम भी किया जाय।।९।। हजार कलशों के द्वारा शिव की पूजा की जानी चाहिए।

शिवार्चना च कर्तव्या सहस्त्रकलशादिभिः। दर्शयेत्तिलमध्यस्थं देवदेवमुमापतिम्॥११॥
पूजयित्वा विधानेन क्रमेण च विसर्जयेत्। श्रोत्रियाय दरिद्राय दापयेत्तिलपर्वतम्॥१२॥
एवं तिलनगः प्रोक्तः सर्वस्मादधिकः परः॥१३॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे तिलपर्वतदानं नाम त्रिंशोऽध्यायः॥३०॥**

---

तिल पर्वत के मध्य में स्थित तिल पर्वत के स्वरूप में देव देवेश शिव की सहस्त्र कलशों से अर्चना की जाय। विधान के अनुसार उनकी पूजा करके विसर्जन किया जाय। तिल के पर्वत को वेदों के ज्ञाता श्रोत्रिय ब्राह्मण को जो कि गरीब हों, उसको भेंट कर दें। इस प्रकार तिल पर्वत के दान का विधान मैंने तुमसे कहा। इस प्रकार तिल पर्वत का दान सब दानों से अधिक श्रेष्ठ कहा गया है।।१०-१३।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तिल पर्वत का दान नामक तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३०॥**

एकत्रिंशोऽध्यायः

# सूक्ष्मपर्वतदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

अथान्यं पर्वतं सूक्ष्ममल्पद्रव्यं महाफलम्। द्रव्यमात्रोपसंयुक्ते काले मध्यं विधीयते॥१॥
गोमयालिप्तभूमौ तु ह्यंबराणि प्रकीर्य च। तन्मध्ये निक्षिपेद्धीमांस्तिलभारत्रयं शुभम्॥२॥
पद्माष्टदलं कुर्यात्कर्णिकाकेसरान्वितम्। दशनिष्केण तत्कार्यं तदर्धार्धेन वा पुनः॥३॥
तिलमध्ये न्यसेत्पद्मं पद्ममध्ये महेश्वरम्। आराध्य विधिवद्देवं वामादीनि प्रपूजयेत्॥४॥
शक्तिरूपं सुवर्णेन त्रिनिष्केण तु कारयेत्। न्यासं तु परितः कुर्याद्विघ्नेशान्परिभागतः॥५॥
पूर्वोक्तहेममानेन विघ्नेशानपि कारयेत्। तानभ्यर्च्य विधानेन गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकत्रिंशोऽध्यायः॥३१॥**

---

इकतीसवाँ अध्याय

# सूक्ष्म पर्वत की दान विधि

**सनत्कुमार बोले**

सूक्ष्म पर्वत के नाम से कथित दान कृत्य का वर्णन करता हूँ। यद्यपि इसमें सामग्री स्वल्प है, लेकिन इसका फल महान् है। इस दान कृत्य को किसी भी समय किया जा सकता है जबकि सामग्री एकत्र हो जाय। सामान्य रूप से यह एक पवित्र धार्मिक कृत्य है।।१।। गाय के गोबर से भूमि को लीपकर उसको नवीन वस्त्र से ढक देना चाहिए। उस वस्त्र के ऊपर तीन भार तिल को विकीर्ण कर दे।।२।। भक्त अष्टदल कमल कर्णिका और केसर से युक्त दस निष्क या उसके आधे या उससे भी आधे से बनी तिल के बीच में पद्म और पद्म के बीच में महेश्वर की मूर्ति स्थापित करे। विधिपूर्वक उस महेश्वर मूर्ति की पूजा करके बाम और अन्य की पूजा करे।।३-४।। तीन निष्क सुवर्ण से शक्ति की मूर्ति बनवायी जाय। न्यास कृत्य किया जाय। चारों ओर विघ्नेशों को स्थापित करें। पूर्वोक्त सुवर्ण के तौल से (तीन निष्क) विघ्नेशों को बनवाकर उनकी गन्ध पुष्पादि से विधिपूर्वक पूजा करें।।५-६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में सूक्ष्म पर्वत की दान विधि नामक इक्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३१॥**

द्वात्रिंशोऽध्यायः

# सुवर्णमेदिनीदानम्

सनत्कुमार उवाच

जपहोमार्चनादानाभिषेकाद्यं च पूर्ववत्। सुवर्णमेदिनीदानं प्रवक्ष्यामि समासतः॥१॥
पूर्वोक्तदेशकाले तु कारयेन्मुनिभिः सह। लक्षणेन यथापूर्वं कुंडे वा मंडलेऽथ वा॥२॥
मेदिनीं कारयेद्दिव्यां सहस्रेणापि वा पुनः। एकहस्ता प्रकर्तव्या चतुरस्रा सुशोभना॥३॥
सप्तद्वीपसमुद्राद्यैः पर्वतैरभिसंवृता। सर्वतीर्थसमोपेता मध्ये मेरुसमन्विता॥४॥
अथवा मध्यतो द्वीपं नवखंडं प्रकल्पयेत्। पूर्ववन्निखिलं कृत्वा मंडले वेदिमध्यतः॥५॥
सप्तभागैकभागेन सहस्राद्विधिपूर्वकम्। शिवभक्ते प्रदातव्या दक्षिणा पूर्वचोदिता॥६॥
सहस्रकलशाद्यैश्च शंकरं पूजयेच्छिवम्। सूवर्णमेदिनीप्रोक्तं लिंगेस्मिन्दानमुत्तमम्॥७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे सुवर्णमेदिनीदानं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः॥३२॥**

---

बत्तीसवाँ अध्याय

# स्वर्ण मेदिनी का दान

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं संक्षेप में सुवर्ण मेदिनी दान को कहता हूँ। जप, होम, पूजा, दान और अभिषेक आदि पूर्ववत् कथित विधि से मुनियों के साथ में मुनियों के द्वारा पूर्ण किया जाय। यह कार्य कुण्ड में या मण्डल में किया जाय।।१-२।। हजार निष्क (सोने के सिक्के) से भूमि का आकार (आकृति) बनाया जाय। यह एक हाथ या चार हाथ में विभाजित सुन्दर और शानदार हो। सात द्वीप, समुद्र आदि पर्वतों से घिरी हुयी हो। सब तीर्थों से युक्त और मध्य में मेरु स्थित हो।।३-४।। द्वीप नव खण्डों के साथ में बनाया जाय। मण्डल में वेदी के मध्य पूर्ववत् सब कृत्य करके सहस्र स्वर्ण सिक्कों के सातवें भाग को शिव के भक्त को दक्षिणा रूप में विधिपूर्वक देना चाहिए। भक्त हजारों कलशों तथा अन्य वस्तुओं से भगवान शिव की पूजा करे। यह सुवर्ण मेदिनी दान सर्वोत्तम दान कहा गया है।।५-७।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में स्वर्णमेदिनी का दान नामक बत्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३२॥**

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

# कल्पपादपदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि कल्पपादपमुत्तमम्। शतनिष्केण कृत्वैवं सर्वशाखासमन्वितम्॥१॥
शाखानां विविधं कृत्वा मुक्तादामाद्यलंबनम्। दिव्यैर्मारकतैश्चैव चांकुराग्रं प्रविन्यसेत्॥२॥
प्रवालं कारयेद्विद्वान्प्रवालेन द्रुमस्य तु। फलानि पद्मरागैश्च परितोऽस्य सुशोभयेत्॥३॥
मूलं च नीलरत्नेन वज्रेण स्कंधमुत्तमम्। वैडूर्येण द्रुमाग्रं च पुष्परागेण मस्तकम्॥४॥
गोमेदकेन वै कंदं सूर्यकांतेन सुव्रत। चन्द्रकांतेन वा वेदिं द्रुमस्य स्फाटिकेन वा॥५॥
वितस्तिमात्रमायामं वृक्षस्य परिकीर्तितम्। शाखाष्टकस्य मानं च विस्तारं चोर्ध्वतस्तथा॥६॥
तन्मूले स्थापयेल्लिंगं लोकपालैः समावृतम्। पूर्वोक्तवेदिमध्ये तु मंडले स्थाप्य पादपम्॥७॥
पूजयेद्देवमीशानं लोकपालांश्च यत्नतः। पूर्ववज्जपहोमाद्यं तुलाभारवदाचरेत्॥८॥
निवेदयेद्द्रुमं शंभोर्योगिनां वाथ वानृप। भस्मांगिभ्योऽथ वा राजा सार्वभामो भविष्यति॥९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे कल्पपादपदानविधिर्नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः॥३३॥**

---

तैंतीसवाँ अध्याय

# कल्प पादप दान विधि

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं सौ सोने के सिक्कों से बने हुये कल्प वृक्ष के दान के विषय में कहता हूँ जो कि सब शास्त्रों से सम्मत् और उत्तम दान है। कल्प पादप हजार निष्क से बनवाया जाय। इसमें सभी शाखाएँ और डालियाँ मोतियों की बनी हों। इसमें अंकुर का अग्रभाग दिव्य मरकत से अलंकृत हो।।१-२।। पादप के प्रवाल को प्रवाल (मोती) से कराया जाय। उसमें चारों ओर पद्मराग से फल बनवाकर सुशोभित करना चाहिए।।३।। नील रत्न से पादप के मूल को और उसकी शाखाओं को वज्र से और उसके अग्र भाग को वैडूर्य मणि से और मस्तक को पुष्पराग से, जड़ को गोमेद से बनाया जाय। हे सुव्रत! पादप के वेदी चबूतरे को सूर्यकान्त मणि से, चन्द्रकान्त मणि अथवा स्फटिक से बनावे।।४।। वृक्ष की लम्बाई को एक बीता कहा गया है। आठ शाखाओं के मान विस्तार और ऊँचाई एक होगी।।५-६।। उसके मूल में लिंग की स्थापना करे। यह लिंग दिक्पालों से घिरा हुआ हो। मण्डल पर पूर्वोक्त विधि से वेदी के बीच में पादप को स्थापित करे। भक्त तब विधिपूर्वक लोकपालों और भगवान शिव की पूजा करे। तुला भारवत् पहले की तरह जप, होमादि करे। हे राजन्! उस पादप को योगी को अथवा ऐसे व्यक्ति को समर्पित करे जो अपने शरीर पर भस्म धारण किये हुये हो। राजा इस कल्प पादप के दान से चक्रवर्ती सम्राट् होगा।।७-९।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में कल्पपादप दानविधि नामक तैंतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३३॥**

## चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

# गणेशेशदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

गणेशेशं प्रवक्ष्यामि दानं पूर्वोक्तमंडपे। संपूज्य देवदेवेशं लोकपालसमावृतम्॥१॥
विश्वेश्वरान्यथाशास्त्रं सर्वाभरणसंयुतान्। दशनिष्केण वै कृत्वा संपूज्य च विधानतः॥२॥
अष्टदिक्ष्वष्टकुंडेषु पूर्ववद्धोममाचरेत्। पंचावरणमार्गेण पारंपर्यक्रमेण च॥३॥
सप्तविप्रान्समभ्यर्च्य कन्यामेकां तथोत्तरे। दापयेत्सर्वमंत्राणि स्वैःस्वैर्मंत्रैरनुक्रमात्॥४॥
दत्त्वैवं सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः॥५॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे गणेशेशदानविधिनिरूपणं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥३४॥**

---

## चौंतीसवाँ अध्याय

# गणेशेशदान विधि

**सनत्कुमार बोले**

इसके बाद मैं पूर्व कथित मण्डप में गणेशेश कृत्य का वर्णन करूँगा। दिक्पालों से घिरे हुए देवेश शंकर की पूजा करने के बाद विश्वेश्वर की प्रतिमा दस निष्क से बनवाये जो शास्त्रविधि के अनुसार हो और सभी आभूषणों से विभूषित हो। भक्त यथाविधि उनकी पूजा करे। वह पूर्ववत् आठ कुण्डों में आठ दिशाओं में होम करे। यह होम पञ्चावरण मार्ग से और परम्परानुसार किया जाय। भक्त सात ब्राह्मणों और एक कुमारी कन्या को उत्तर दिशा में बैठाकर पूजा करे। सब मंत्रों को दोहरावे और यथाक्रम से अपने-अपने मन्त्रों के द्वारा दान दिया जाय। इस प्रकार दान देकर भक्त निःसन्देह सभी पापों से मुक्त हो जाता है।।१-५।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में गणेशेशदान विधि नामक चौतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३४॥**

पंचत्रिंशोऽध्यायः

# हेमधेनुदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

अथ ते संप्रवक्ष्यामि हेमधेनुविधिक्रमम्।
सर्वपापप्रशमनं ग्रहदुर्भिक्षनाशनम्॥१॥
उपसर्गप्रशमनं सर्वव्याधिनिवारणम्। निष्काणां च सहस्रेण सुवर्णेन तु कारयेत्॥२॥
तदर्धेनापि वा सम्यक् तदर्धार्धेन वा पुनः।
शतेन वा प्रकर्तव्या सर्वरूपगुणान्विता॥३॥
गोरूपं सुखुरं दिव्यं सर्वलक्षणसंयुतम्। खुराग्रे विन्यसेद्वज्रं शृंगे वै पद्मरागकम्॥४॥
भ्रुवोर्मध्ये न्यसेद्दिव्यं मौक्तिकं मुनिसत्तमाः। वैडूर्येण स्तनाः कार्या लांगूलं नीलतः शुभम्॥५॥
दंतस्थाने प्रकर्तव्यः पुष्परागः सुशोभनः। पशुवत्कारयित्वा तु वत्सं कुर्यात्सुशोभनम्॥६॥
सुवर्णदशनिष्केण सर्वरत्नसुशोभितम्। पूर्वोक्तवेदिकामध्ये मंडलं परिकल्प्य तु॥७॥
तन्मध्ये सुरभिं स्थाप्य सवत्सां सर्वतत्त्ववित्। सवत्सां सुरभिं तत्र वस्त्रयुग्मेन वेष्टयेत्॥८॥
संपूजयेद्गां गायत्र्या सवत्सां सुरभिं पुनः। अथैकाग्निविधानेन होमं कुर्याद्यथाविधि॥९॥

---

पैंतीसवाँ अध्याय

# सुवर्ण धेनु दान विधि

सनत्कुमार बोले

अब मैं तुमसे हेमधेनु के दान की प्रक्रिया को कहता हूँ। यह सब पापों का नाश करता है और सब ग्रह दोषों और दुर्भिक्ष का नाशक है।।१।। यह सब रोगों और विपत्तियों का निवारण करता है। एक हजार और पाँच सौ, दौ सौ पचास या सौ निष्क सोने के सिक्कों से सर्वरूप और गुण से युक्त गाय बनवायी जाय।।२-३।। गाय का रूप उसका खुर सब लक्षणों से युक्त और दिव्य हो। खुर के अग्रभाग पर वज्र मढ़ा जाय। सींगों पर पद्मराग लगाया जाय।।४।। हे मुनियों! भौंहों के बीच में दिव्य मोती, वैदूर्य से स्तन और नील से पूँछ बनायी जाय। दाँतों के स्थान पर सुन्दर पुष्पराग से दन्तावली बनायी जाय।।५।। इस प्रकार गाय को पशु के रूप में बनाकर सुन्दर बछड़ा बनाया जाय।।६।। बछड़ा सोने के दस सिक्कों द्वारा बनाया जाय। यह रत्नों के द्वारा सुन्दर हो। पूर्वकथित वेदी के मध्य में मण्डल खींचकर (बनाकर) उसके बीच में बछड़े सहित गाय को स्थापित करके दो नवीन वस्त्रों से ढक दें।।७-८।। फिर बछड़े सहित गाय की गायत्री मन्त्र से पूजा करें और फिर विधिपूर्वक अग्नि स्थापित करके होम करना चाहिए। अग्नि में समिधा और घी से पूर्ववत् यथाविधि होम करना चाहिए। शिव के लिंग को

समिदाज्यविधानेन पूर्ववच्छेषमाचरेत्। शिवपूजा प्रकर्तव्या लिंगं स्नाप्य घृतादिभिः॥१०॥
गामालभ्य च गायत्र्या शिवायादापयेच्छुभाम्। दक्षिणा च प्रकर्तव्या त्रिंशन्निष्का महामते॥११॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे हेमधेनुदानविधिनिरूपणं नाम पंचत्रिंशोऽध्यायः॥३५॥**

---

धृतादि से स्नान कराकर शिव की पूजा की जानी चाहिए। गायत्री मन्त्र से गाय का स्पर्श करके उसको शिव को समर्पित कर देना चाहिए। हे महामते! तीस निष्क दक्षिणा दी जानी चाहिए।।९-११।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में हेमधेनु दानविधि नामक पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३५॥**

षट्त्रिंशमोऽध्यायः

# लक्ष्मीदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

लक्ष्मीदानं प्रवक्ष्यामि महदैश्वर्यवर्धनम्। पूर्वोक्तमंडपे कार्यं वेदिकोपरिमंडले॥१॥
श्रीदेवीमतुलां कृत्वां हिरण्येन यथाविधि। सहस्रेण तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः॥२॥
अष्टोत्तरशतेनापि सर्वलक्षणसंयुताम्। मंडले विन्यसेल्लक्ष्मीं सर्वालंकारसंयुताम्॥३॥
तस्यास्तु दक्षिणे भागे स्थंडिले विष्णुमर्चयेत्। अर्चयित्वा विधानेन श्रीसूक्तेन सुरेश्वरीम्॥४॥
अर्चयेद्विष्णुगायत्र्या विष्णुं विश्वगुरुं हरिम्। आराध्य विधिना देवीं पूर्ववद्धोममाचरेत्॥५॥
समिद्धुत्वा विधानेन आज्याहुतिमथाचरेत्। पृथगष्टोत्तरशतं होमयेद्ब्राह्मणोत्तमैः॥६॥
आहूय यजमानं तु तस्याः पूर्वदिशि स्थले। तस्मै तां दर्शयेद्देवीं दंडवत्प्रणमेत्क्षितौ॥७॥
प्रणम्य विष्णुं तत्रस्थं शिवं पूर्ववदर्चयेत्। तस्या विंशतिभागं तु दक्षिणा परिकीर्तिता॥८॥
तदर्धांशं तु दातव्यमितरेषां यथार्हतः। ततस्तु होमयेच्छंभुं भक्तो योगी विशेषतः॥९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे लक्ष्मीदानविधिनिरूपणं**
**नाम षट्त्रिंशत्तमोऽध्यायः॥३६॥**

---

छत्तीसवाँ अध्याय

# लक्ष्मी दान विधि

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं ऐश्वर्य को बढ़ाने वाले लक्ष्मीदान के बारे में कहता हूँ। पूर्वोक्त मण्डप में वेदी के ऊपर मध्य में लक्ष्मी की स्वर्ण प्रतिमा बनवाये। एक हजार निष्क या पाँच सौ निष्क अथवा उसका आधा या फिर एक सौ आठ निष्क स्वर्ण से सभी लक्षणों से युक्त बनाकर मण्डल में सभी अलंकारों से सुसज्जित कर स्थापित करे और उसके दक्षिण भाग में स्थापित विष्णु की पूजा करे और श्री सूक्त से विधिपूर्वक लक्ष्मी की पूजा करे तथा विश्वगुरु भगवान विष्णु की गायत्री सूक्त से पूजा करे और विधिपूर्वक देवी की पूजा करके पूर्वोक्त विधि से हवन करे।।१-५।। श्रेष्ठ ब्राह्मणों से विधिपूर्वक समिधा से हवन करे, और यजमान को बुलाकर वेदी के पूर्व में देवी का दर्शन करावे और भूमि पर दण्डवत् प्रणाम करे। विष्णु को प्रणाम करे तथा पूर्ववत् शिव की पूजा करे और उसका आधा दशांश दक्षिणा सुपात्र को दे और भक्त योगी शिव के लिये हवन करे।।६-९।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में लक्ष्मीदान विधि**
**नामक छत्तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३६॥**

## सप्तत्रिंशोऽध्यायः

# तिलधेनुदानविधिनिरूपणम्

सनत्कुमार उवाच

अथातः संप्रवक्ष्यामि तिलधेनुविधिक्रमम्। पूर्वोक्तमंडपे कुर्याच्छिवपूजां तु पश्चिमे॥१॥
तस्याग्रे मध्यतो भूमौ पद्ममालिख्य शोभनम्। वस्त्रैराच्छादितं पद्मं तन्मध्ये विन्यसेच्छुभम्॥२॥
तिलपुष्पं तु कृत्वाथ हेमपद्मं विनिक्षिपेत्। त्रिंशन्निष्केण कर्तव्यं तदर्धार्धेन वा पुनः॥३॥
पंचनिष्केण कर्तव्यं तदर्धार्धेन वा पुनः। तमाराध्य विधानेन गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥४॥
पद्मस्योत्तरदिग्भागे विप्रानेकादश न्यसेत्। तानभ्यर्च्य विधानेन गंधपुष्पादिभिः क्रमात्॥५॥
आच्छादनोत्तरासंगं विप्रेभ्यो दापयेत्क्रमात्। उष्णीषं च प्रदातव्यं कुंडले च विभूषिते॥६॥
हेमांगुलीयकं दत्त्वा ब्राह्मणेभ्यो विधानतः। एकं दश च वस्त्राणि तेषामग्रे प्रकीर्य च॥७॥
तेषु वस्त्रेषु निःक्षिप्य तिलाद्यानि पृथक्पृथक्। कांस्यपात्रं शतपलं विभिद्यैकादशांशकम्॥८॥
इक्षुदंडं च दातव्यं ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः। गोशृंगे तु हिरण्येन द्विनिष्केण तु कारयेत्॥९॥
रजतेन तु कर्तव्याः खुरा निष्कद्वयेन तु। एवं पृथक्पृथग् दत्त्वा तत्तिलेषु विनिक्षिपेत्॥१०॥
रुद्रैकादशमंत्रैस्तु रुद्रेभ्यो दापयेत्तदा। पद्मस्य पूर्वदिग्भागे विप्रान्द्वादश पूजितान्॥११॥
एतेनैव तु मार्गेण तेषु श्रद्धासमन्वितः। द्वादशादित्यमंत्रैश्च दापयेदेवमेव च॥१२॥

---

## सैंतीसवाँ अध्याय

# तिल धेनु दान विधि

### सनत्कुमार बोले

अब मैं तिल धेनु दान के बारे में कहता हूँ। पूर्वोक्त मण्डप में पश्चिम में शिव की पूजा करे। उसके आगे और बीच में अष्टदल कमल पुष्प बनावे और उसपर वस्त्रों से ढके पद्म को स्थापित करे। तिल पुष्प करके स्वर्ण कमल स्थापित करे। वह स्वर्ण कमल ३० निष्क अथवा उसके आधे निष्क का बनवावे अथवा पाँच निष्क या उसके आधे का बनाकर विधिपूर्वक क्रम से गन्ध पुष्पादि से पूजा करे।।१-४।। पद्म के उत्तर भाग में ग्यारह ब्राह्मणों को बैठावे। उनकी क्रमशः गन्ध पुष्पादि से विधिपूर्वक पूजा करे और अंग वस्त्र, पगड़ी तथा कुण्डलों से ब्राह्मणों को सुशोभित करे। सभी ब्राह्मणों को सोने की अँगूठी देकर उनके सामने एक या दस वस्त्र बिछाकर उन वस्त्रों में अलग-अलग तिल डाले।।५-७।। उन वस्त्रों पर अलग-अलग तिलादि वस्त्र रखकर एक कांस्य पात्र सौ पल का, ग्यारह भागों में विभक्त करके विशेष रूप से ब्राह्मणों के लिए ईख के दण्डे के साथ देनी चाहिए। भक्त को दो सोने के सिक्कों से गाय की सींग बनवानी चाहिए। दो सोने के सिक्के की कीमत के बराबर चाँदी के खुर बनवावे। इस प्रकार अलग-अलग देकर उन सबको तिलों में रख दे।।८-१०।। ग्यारह रुद्र मन्त्रों

पूर्ववद्दक्षिणे भागे विप्रान्षोडश संस्थितान्। मूर्तिं विघ्नेशमंत्रैश्च दापयेत्पूर्ववत्पुनः॥१३॥
यजमानेन कर्तव्यं सर्वमेतद्यथाक्रमम्। केवलं रुद्रदानं वा अदित्येभ्योऽथ वा पुनः॥१४॥
मूर्त्यादीनां च वा देयं यथाविभवविस्तरम्। पद्मं विन्यस्य राजासौ शेषं वा कारयेन्नृपः॥१५॥
दक्षिणा च प्रदातव्या पंचनिष्केण भूषणम्॥१६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे तिलधेनुदानविधिनिरूपणं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः॥३७॥**

---

को पढ़कर उन वस्तुओं को रुद्रों को भेंट कर दे। पूरब की ओर बारह ब्राह्मणों को बिठाकर उनकी पूजा करे। उसी पूर्व वर्णित विधि के अनुसार भक्त सभी संस्कारों को करे। बारह आदित्य मन्त्रों को पढ़कर सामग्री को उनको भेंट कर दे।।११-१२।। पूर्ववत् दक्षिण भाग में बैठे हुये १६ ब्राह्मणों को विघ्नेश्वर मन्त्रों के द्वारा मूर्ति को समर्पित कर देनी चाहिए।।१३।। यह सब कार्य यथाक्रम यजमान द्वारा किया जाना चाहिए। रुद्रों अथवा आदित्यों को दान पर्याप्त है। अपने सामर्थ्य के अनुसार मूर्ति आदि को दक्षिणा देनी चाहिए। राजा पाद्य आदि कृत्य को पूरा करे। पाँच निष्क सोने का मूल्य का एक आभूषण राजा द्वारा दक्षिणा के रूप में दिया जाना चाहिए।।१४-१६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में तिलधेनुदान विधि नामक सैतीसवाँ अध्याय समाप्त॥३७॥**

## अष्टत्रिंशोऽध्यायः

# गोसहस्रदानम्

सनत्कुमार उवाच

गोसहस्रप्रदानं च वदामि शृणु सुव्रत। गवां सहस्रमादाय सवत्सं सगुणं शुभम्॥१॥
तास्त्वभ्यर्च्य यथाशास्त्रमष्टौ सम्यक्प्रत्नतः। तासां शृंगाणि हेम्नाथ प्रतिनिष्केण बंधयेत्॥२॥
खुरांश्च रजतेनैव बंधयेत्कंठदेशतः। प्रतिनिष्केण कर्तव्यं कर्णे वज्रं च शोभनम्॥३॥
शिवाय दद्याद्विप्रेभ्यो दक्षिणां च पृथक्पृथक्। दशनिष्कं तदर्धं वा तस्यार्धार्धमथापि वा॥४॥
यथाविभवविस्तारं निष्कमात्रमथापि वा। वस्त्रयुग्मं च दातव्यं पृथग्विप्रेषु शोभनम्॥५॥
गावश्चाराध्य यत्नेन दातव्याः सुमनोरमाः। एवं दत्त्वा विधानेन शिवमभ्यर्च्य शंकरम्॥६॥
जपेदग्रे यथान्यायं गवां स्तवमनुत्तमम्। गावो ममाग्रतो नित्यं गावो नः पृष्ठतस्तथा॥७॥
हृदये मे सदा गावो गवां मध्ये वसाम्यहम्। इति कृत्वा द्विजाग्र्येभ्यो दत्त्वा गत्वा प्रदक्षिणम्।
तद्रोमवर्षसंख्यानि स्वर्गलोके महीयते॥९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे गोसहस्रप्रदानं नामाष्टत्रिंशोऽध्यायः॥३८॥**

---

## अड़तीसवाँ अध्याय

# सहस्र धेनु दान विधि

**सनत्कुमार बोले**

हे सुव्रत! अब मैं सहस्र गायों की दान विधि को बताता हूँ। भक्त एक हजार अच्छी गायों को बछड़ों सहित इकट्ठा करे और शास्त्र विधि से उन सब गायों की पूजा करे और उनकी सींगों को एक सोने के सिक्के के मूल्य के सोने से बाँध देना चाहिए।।१-२।। खुरों को चाँदी से बाँध देना चाहिए। गले को चारों ओर से एक सोने के सिक्के से बाँध देना चाहिए। कानों को सुन्दर हीरे से विभूषित कर देना चाहिए। यह सब शिव को भेंट कर देना चाहिए और ब्राह्मणों को अलग-अलग दक्षिणा दी जानी चाहिए। यह दक्षिणा दस निष्क या उसका आधा पाँच या उसका आधा ढाई या अपने सामर्थ्य के अनुसार एक निष्क मात्र भी होनी चाहिए। इसके साथ एक जोड़ी वस्त्र ब्राह्मणों में से प्रत्येक को देना चाहिए।।३-५।। गायों की पूजा करके उनको दान देना चाहिए। गायें देखने में सुन्दर हों। इस प्रकार दान देकर भक्त भगवान शिव की पूजा करे और उसके बाद भक्त गायों की स्तुति करे, "गायें मेरे सामने हैं पीठ पीछे हैं। गायें मेरे हृदय में हैं और मैं गायों के बीच में निवास कर रहा हूँ।" इस प्रकार प्रार्थना करने के बाद सुपात्र ब्राह्मणों को ये गायें दान कर दी जायँ। जो भक्त इस प्रकार सहस्र गायों का दान करता है, उन गायों के शरीर में जितने रोम होते हैं, संख्या में उतने वर्ष वह स्वर्ग में पूजित होता है।।६-९।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में सहस्र धेनु दान विधि नामक अड़तीसवाँ अध्याय समाप्त॥३८॥**

एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

# हिरण्याश्वदानम्

सनत्कुमार उवाच

हिरण्याश्वप्रदानं च वदामि विजयावहम्। अश्वमेधात्पुनः श्रेष्ठं वदामि शृणु सुव्रत॥१॥
अष्टोत्तरसहस्रेण अष्टोत्तरशतेन वा। कृत्वाश्वं लक्षणैर्युक्तं सर्वालंकारसंयुतम्॥२॥
पंचकल्याणसंपन्नं दिव्याकारं तु कारयेत्।
सर्वलक्षणसंयुक्तं सर्वांगैश्च समन्वितम्॥३॥
सर्वायुधसमोपेतमिंद्रवाहनमुत्तमम्। तन्मध्यदेशे संस्थाप्य तुरंगं स्वगुणान्वितम्॥४॥
उच्चैःश्रवसकं मत्वा भक्त्या चैवसमर्चयेत्। तस्य पूर्वदिशाभागे ब्राह्मणं वेदपारगम्॥५॥
सुरेंद्रबुद्ध्या संपूज्य पंचनिष्कं प्रदापयेत्। स चाश्वः शिवभक्ताय दातव्यो विधिनैव तु॥६॥
सुवर्णाश्वं प्रदत्त्वा तु आचार्यमपि पूजयेत्। यथाविभवविस्तारं पंचनिष्कमथापि वा॥७॥
दीनांधकृपणानाथबालवृद्धकृशातुरान्। तोषयेदन्नदानेन ब्राह्मणांश्च विशेषतः॥८॥
एतद्यः कुरुते भक्त्या दानमश्वस्य मानवः। ऐंद्रान्भोगांश्चिरं भुक्त्वा रुचिरैश्वर्यवान्भवेत्॥९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे हिरण्याश्वदानं नामैकोनचत्वारिंशोऽध्याय॥३९॥**

---

उन्तालीसवाँ अध्याय

# स्वर्ण अश्वदान विधि

सनत्कुमार बोले

हे सुव्रत! मैं सोने के घोड़े की दान की विधि का वर्णन करूँगा। इससे रण क्षेत्र में विजय प्राप्त होती है। यह अश्वमेध से भी श्रेष्ठ है।।१।। एक हजार आठ सोने के सिक्के या १०८ सोने के सिक्के से भक्त घोड़े की एक मूर्ति बनवाये जो सब उत्तम लक्षणों से युक्त और सब अलंकारों से भूषित हो। घोड़े में पाँच कल्याण चिह्न हों और उसका आकार एवं स्वरूप दिव्य हो। यह सब लक्षणों से युक्त और सर्वाङ्ग पूर्ण हो। भक्त इन्द्र के वाहन (उच्चैश्रवा) के समान उसको मानकर भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करे। उसके बाद पूर्व दिशा में वेदों में पारंगत ब्राह्मण को बैठावे। उस ब्राह्मण को इन्द्र के रूप में मानकर उसकी पूजा करके पाँच निष्क दक्षिणा दे। विधिपूर्वक पूजित उस अश्व को शिव भक्त को दे दिया जाय। स्वर्ण अश्व के दान करने के बाद आचार्य की पूजा करे। उनको अपने सामर्थ्य के अनुसार अथवा पाँच निष्क दक्षिणा दे। गरीब, अन्ध, कृपण, अनाथ, बालक, वृद्ध, कृश और रोगियों को अन्न (भोजन) दान करके उनको संतुष्ट करे। विशेष रूप से ब्राह्मणों को भोजन करावे। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक ऐसा स्वर्ण अश्व प्रदान करता है, वह चिरकाल तक इन्द्र के समान भोगों को प्राप्त करता है और वह महान ऐश्वर्यवान होता है।।२-९।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में स्वर्ण अश्वदान विधि नामक उन्तालीसवाँ अध्याय समाप्त॥३९॥**

चत्वारिंशोऽध्यायः

# कन्यादानविधिः

सनत्कुमार उवाच

कन्यादानं प्रवक्ष्यामि सर्वदानोत्तमोत्तमम्। कन्यां लक्षणसंपन्नां सर्वदोषविवर्जिताम्॥१॥
मातापित्रोस्तु संवादं कृत्वां दत्त्वां धनं महत्।
आत्मीकृत्याथ संस्नाप्य वस्त्रं दत्त्वा शुभं नवम्॥२॥
भूषणैर्भूषयित्वाथ गंधमाल्यैरथार्चयेत्। निमित्तानि समीक्ष्याथ गोत्रनक्षत्रकादिकान्॥३॥
उभयोश्चित्तमालोक्य उभौ संपूज्य यत्नतः। दातव्या श्रोत्रियायैव ब्राह्मणाय तपस्विने॥४॥
साक्षादधीतवेदाय विधिना ब्रह्मचारिणे। दासदासीधनाढ्यं च भूषणनि विशेषतः॥५॥
क्षेत्राणि च धनं धान्यवासांसि च प्रदापयेत्। यावंति देहे रोमाणि कन्यायाः संततौ पुनः॥६॥
तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे कन्यादानविधिर्नाम चत्वारिंशोऽध्यायः॥४०॥**

---

चालीसवाँ अध्याय

# कन्यादान विधि

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं कन्यादान को कहूँगा यह सब दानों में सर्वोत्तम है। सब लक्षणों से युक्त और सभी दोषों से रहित कन्या को उसके माता-पिता से बातचीत करके समुचित धन देकर उसको अपनाकर स्नान कराकर सुन्दर नये वस्त्र और आभूषणों से भूषित करके उसके बाद गन्ध माल्य से उसकी पूजा करनी चाहिए। उसके गोत्र नक्षत्रादि की समीक्षा करके श्रोत्रिय तपस्वी ब्राह्मण, वेद पढ़े हुये ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले ब्रह्मचारी को दोनों की इच्छा को देखकर विधिपूर्वक पूजा करे। उनको दास-दासी आभूषण विशेष रूप से भूमि, धन, धान्य और वस्त्रों को देना चाहिए। उस कन्या के सन्तति के शरीर में जितने रोम विद्यमान हों उतने वर्षों तक वह भक्त रुद्र लोक में पूजित होता है।।१-७।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में कन्यादान विधि नामक चालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४०॥**

## एकचत्वारिंशोऽध्यायः

# सुवर्णवृषदानम्

सनत्कुमार उवाच

हिरण्यवृषदानं च कथयामि समासतः। वृषरूपं हिरण्येन सहस्रेणाथ कारयेत्॥१॥
तदर्धार्धेन वा धीमांस्तदर्धार्धेन वा पुनः। अष्टोत्तरशतेनापि वृषभं धर्मरूपिणम्॥२॥
ललाटे कारयेत्पुंड्रमर्धचंद्रकलाकृतिम्। स्फाटिकेन तु कर्त्तव्यं खुरं तु रजतेन वै॥३॥
ग्रीवा तु पद्मरागेण ककुद्गोमेदकेन च। ग्रीवायां घांटवलयं रत्नचित्रं तु कारयेत्॥४॥
वृषांकं कारयेत्तत्र किंकिणीवलयावृतम्। पूर्वोक्तदेशकाले तु वेदिकोपरिमंडले॥५॥
वृषेंद्रं स्थापयेत्तत्र पश्चिमामुखमग्रतः। ईश्वरं पूजयेद्भक्त्या वृषारूढं वृषध्वजम्॥६॥
वृषेंद्रं पूज्य गायत्र्या नमस्कृत्य समाहितः।
तीक्ष्णशृंगाय धर्मपादाय विद्महे धीमहि। तन्नो वृषः प्रचोदयात्॥७॥
मंत्रेणानेन संपूज्य वृषं धर्मविवृद्धये।
होमयेच्च घृतान्नाद्यैर्यथाविभवविस्तरम्॥८॥

---

## इकतालीसवाँ अध्याय

# सुवर्ण वृषभ दान

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं सोने के बैल के दान कृत्य का वर्णन संक्षेप में करूँगा। बुद्धिमान भक्त १ हजार या ५ सौ यहाँ तक कि १०८ सोने के सिक्कों द्वारा एक बैल का स्वरूप बनवाये। वह उस बैल को धर्म के रूप में बनवाये।।१-२।। उसके ललाट पर अर्धचन्द्र के आकार का पुण्ड्र (विशेष चिह्न) कराये। खुर को चाँदी से, गले को पद्मराग से और ककुद (कूबड़ या डील) को गोमेद से बनवाये। गले में गोल रस्सी द्वारा घण्टियाँ बाँधी जायँ। किंकिणी और वलय से युक्त तथा रत्नों से सुशोभित करे।।३-४।। बैल के घण्टियाँ और वलय (कड़ा) चमकदार हों। भक्त उस सुसज्जित बैल को वेदी पर मण्डप में यथोचित समय में खड़ा करे। बैल का मुख पश्चिम की ओर रहे। भक्त श्रद्धापूर्वक बैल की पीठ पर आसीन भगवान शंकर की पूजा करे।।५-६।। वृष गायत्री मन्त्र के द्वारा उस वृषेन्द्र की पूजा करे और उसको प्रणाम करे। "तीक्ष्णशृंगाय विद्महे धर्मपादाय धीमहि। तन्नो वृषः प्रचोदयात्।" "तीखे सींग वाले बैल को जानते हैं। हम धर्मपाद से युक्त वृष का ध्यान करते हैं। अतः बैल हम लोगों का मार्ग दर्शन करे।" बैल की फिर पूजा की जाय और उसको ब्राह्मण को या शिव को दान कर दिया जाय। अपने सामर्थ्य के

वृषभः पूज्य दातव्यो ब्राह्मणेभ्यः शिवाय वा। दक्षिणा चैव दातव्या यथावित्तानुसारतः॥९॥
एतद्यः कुरुते भक्त्या वृषदानमनुत्तमम्। शिवस्यानुचरो भूत्वा तेनैव सह मोदते॥१०॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे सुवर्णवृषदानं नामैकचत्वारिंशोध्यायः॥४१॥**

---

अनुसार यजमान दक्षिणा भी दे क्योंकि जो भक्तिपूर्वक इस सर्वोत्तम वृष दान को करता है वह शिव का अनुचर होता है और उनके साथ आनन्द करता है।।७-१०।।

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में स्वर्णवृषभ दान
नामक इकतालीस अध्याय समाप्त॥४१॥

द्विचत्वारिंशोऽध्यायः

# गजदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

गजदानं प्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः। द्विजाय वा शिवायाथ दातव्यः पूज्य पूर्ववत्॥१॥
गजं सुलक्षणोपेतं हैमं वा राजतं तु वा। सहस्रनिष्कमात्रेण तदर्धेनापि कारयेत्॥२॥
तदर्धार्धेन वा कुर्यात्सर्वलक्षणभूषितम्। पूर्वोक्तदेशकाले च देवाय विनिवेदयेत्॥३॥
अष्टम्यां वा प्रदातव्यं शिवाय परमेष्ठिने। ब्राह्मणाय दरिद्राय श्रोत्रियायाहिताग्नये॥४॥
शिवमुद्दिश्य दातव्यं शिवं संपूज्य पूर्ववत्। एतद्यः कुरुते दानं शिवभक्तिसमाहितम्॥५॥
स्थित्वा स्वर्गे चिरं कालं राजा गजपतिर्भवेत्॥६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः॥४२॥**

---

बयालीसवाँ अध्याय

# गज दान विधि

**सनत्कुमार बोले**

अब मैं पूर्व के क्रम में यथावत् गजदान को कहूँगा। गज की पूजा करके ब्राह्मण या शिव को देना चाहिए। भक्त हाथी की एक प्रतिमा सुन्दर लक्षणों से युक्त सोने या चाँदी से बनवाये। यह एक हजार सोने के सिक्के या उसके आधे या उससे आधे सिक्कों से बनवायी जाय और वह प्रतिमा सब लक्षणों से युक्त हो। पूर्व कथित स्थान और समय पर यह शिव को अष्टमी तिथि को भेंट करना चाहिए। या इस गज प्रतिमा को वेदों में पारंगत गरीब ब्राह्मण—जो की पवित्र अग्नि को सर्वदा सुरक्षित रखता है—शिव की पूजा करके और शिव को ध्यान में रखकर दान करना चाहिए। जो व्यक्ति पूर्णभक्ति के साथ यह गजदान करता है वह चिरकाल तक स्वर्ग में रहकर बाद में एक राजा और गजपति होता है।।१-६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में गजदान विधि नामक बयालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४२॥**

## त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

# लोकपालाष्टकम् दानम्

सनत्कुमार उवाच

लोकपालाष्टकं दिव्यं साक्षात्परमदुर्लभम्। सर्वसंपत्करं गुह्यं परचक्रविनाशनम्॥१॥
स्वदेशरक्षणं दिव्यं गजवाजिविवर्धनम्। पुत्रवृद्धिकरं पुण्यं गोब्राह्मणहितावहम्॥२॥
पूर्वोक्तदेशकाले तु वेदिकोपरिमंडले। मध्ये शिवं समभ्यर्च्य यथान्यायं यथाक्रमम्॥३॥
दिग्विदिक्षु प्रकर्तव्यं स्थंडिलं वालुकामयम्। अष्टौ विप्रान्समभ्यर्च्य वेदवेदांगपारगान्॥४॥
जितेंद्रियान्कुलोद्भूतान्सर्वलक्षणसंयुतान् । शिवाभिमुखमासीनाऽनाहतेष्वंबरेषु च॥५॥
वस्त्रैराभरणैर्दिव्यैर्लोकपालकमंत्रकः । गंधपुष्पैः सुधूपैश्च ब्राह्मणानर्चयेत्क्रमात्॥६॥
पूर्वतो होमयेदग्नौ लोकपालकमंत्रकैः। समिद्धृताभ्यां होतव्यमग्निकार्यं क्रमेण वा॥७॥
एवं हुत्वा विधानेन आचार्यः शिववत्सलः। यजमानं समाहूय सर्वाभरणभूषितान्॥८॥
तेन तान्पूजयित्वाथ द्विजेभ्यो दापयेद्धनम्। पृथक्पृथक्तन्मंत्रैश्च दशनिष्कं च भूषणम्॥९॥
दशनिष्केण कर्तव्यमासनं केवलं पृथक्। स्नपनं तत्र कर्तव्यं शिवस्य विधिपूर्वकम्॥१०॥

---

## तैंतालीसवाँ अध्याय

# आठ लोकपालों की दान विधि

### सनत्कुमार बोले

आठ लोकपालों का दान कृत्य दिव्य है जो बहुत दुर्लभ है। यह सब सम्पत्ति को देने वाला और शत्रुओं का नाश करने वाला है। अपने देश की रक्षा करने वाला, हाथी और घोड़ों की वृद्धि करने वाला, पुत्र वृद्धि करने वाला और गो एवं ब्राह्मणों का हित सम्पादन करने वाला है।।१-२।। भक्त पूर्वोक्त स्थान और समय पर मण्डल में वेदी के ऊपर यथाक्रम विधिपूर्वक शिव की पूजा करके दिशाओं और विदिशाओं की बालू से मूर्ति बनावे। वेद और वेदांग के पारगामी विद्वानों, जितेन्द्रिय, कुलीन और सब लक्षणों से युक्त शिव के सामने बैठे हुये, आठ ब्राह्मणों की भलीभाँति पूजा करके नये वस्त्र फैला दे। भक्त गंध, पुष्प, धूप, दीप से दिव्य वस्त्रों और आभूषणों से लोक पालक मन्त्र पढ़ते हुये उन ब्राह्मणों की क्रम से पूजा करे।।३-६।। लोकपालों के मन्त्रों को पढ़ते हुये पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके भक्त होम करे। होम यज्ञ की समिधाओं और घी द्वारा करे। इस प्रकार विधान से हवन करके शिव का प्रिय भक्त आचार्य होम करके यजमान को बुलाकर और वह ब्राह्मणों को सब आभरणों से भूषित करके उनकी पूजा करके तत्सम्बन्धी मन्त्रों को क्रमशः दोहराते हुये उनको धन दे। दस निष्क दक्षिणा उत्तम होती है। दस निष्क के सोने के द्वारा आठों दिगपालों के लिए अलग से आसन बनाया जाय। वहाँ पर शिव का स्नान

दक्षिणा च प्रदातव्या यथाविभवविस्तरम्।
एवं यः कुरुते दानं लोकेशानां तु भक्तितः। लोकेशानां चिरं स्थित्वा सार्वभौमो भवेद्बुधः॥११॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः॥४३॥**

विधिपूर्वक कराया जाय। इस प्रकार जो भी दिक्पालों की भक्तिपूर्वक पूजा करके इनका दान देता है। वह लोकपालों के लोक में चिरकाल तक रहकर सार्वभौम सम्राट होता है।।७-११।।

श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में लोकपालों की दान विधि
नामक तैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४३॥

चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

# विष्णुदानविधिः

सनत्कुमार उवाच

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि सर्वदानोत्तमोत्तमम्। पूर्वोक्तदेशकाले च मंडपे च विधानतः॥१॥
प्रणयात्कुंडमध्ये च स्थंडिले शिवसन्निधौ। पूर्वं विष्णुं समासाद्य पद्मयोनिमतः परम्॥२॥
मंत्राभ्यां विधिनोक्ताभ्यां प्रणवादिसमंत्रकम्।
नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्॥३॥
ब्रह्मब्राह्मणवृद्धाय ब्रह्मणे विश्ववेधसे। शिवाय हरये स्वाहा स्वधा वौषट् वषट् तथा॥४॥
पूजयित्वा विधानेन पश्चाद्धोमं समाचरेत्। सर्वद्रव्यं हि होतव्यं द्वाभ्यां कुंडविधानतः॥५॥
ऋत्विजौ द्वौ प्रकर्तव्यौ गुरुणा वेदपारगौ। तानुद्दिश्य यथान्यायं विप्रेभ्यो दापयेद्धनम्॥६॥
शतमष्टोत्तरं तेभ्यः पृथक्पृथगनुत्तमम्। वस्त्राभरणसंयुक्तं सर्वालंकारसंयुतम्॥७॥
गुरुरेको हि वै श्रीमान् ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरः। तेषां पृथक्पृथग्देयं भोजयेद्ब्राह्मणानपि॥८॥
शिवार्चना च कर्तव्या स्नपनादि यथाक्रमम्॥९॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥४४॥**

---

चौवालीसवाँ अध्याय

# विष्णुदान विधि

**सनत्कुमार बोले**

इसके बाद में एक ऐसे दानकृत्य को कहूँगा जो कि सभी उत्तम दानों में श्रेष्ठ है। पूर्वोक्त काल और स्थान पर, मण्डप में कुण्ड के बीच में या खाली भूमि पर शिव के सामने, भक्त भक्तिपूर्वक विष्णु की पूजा करे। कमल से उत्पन्न भगवान विष्णु की पूजा प्रणव सहित निम्नलिखित मन्त्रों द्वारा की जाय। "नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्" हम नारायण को जानते हैं, हम नारायण पर ध्यान करते हैं। अतः विष्णु हम लोगों का मार्गदर्शन करें। ब्राह्मण को स्वाहा। वृद्ध ब्राह्मण, सृष्टि के कर्त्ता, शिव को हरि को स्वाहा। वौषट् और वषट् स्वधा।।१-४।। इस प्रकार विधिपूर्वक पूजन करके पश्चात् होम करना चाहिए। मन्त्रों के साथ दो कुण्डों में सब होम द्रव्यों से हवन करना चाहिए। होम में दो ब्राह्मण होने चाहिए जो आचार्य से विधिपूर्वक वेदों का अध्ययन किये हों। भक्त उनको दृष्टि में रखकर ब्राह्मणों को द्रव्य दक्षिणा दे। १०८ सोने के सिक्के उत्तम वस्त्र, आभूषण और द्रव्य दक्षिणा के साथ होना चाहिए। यद्यपि गुरु एक है। वह ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनो का प्रतिनिधित्व करता है। उनको पृथक्-पृथक् दान दिया जाय। ब्राह्मणों को भोजन कराया जाय। अभिषेक से प्रारम्भ करके यथाक्रम शिव की पूजा की जानी चाहिए।।५-९।।

**लिंगमहापुराण के उत्तर भाग में विष्णुदान विधि नामक चौवालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४४॥**

पंचचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः

# जीवच्छ्राद्धविधिः

ऋषय ऊचुः

एवं षोडश दानानि कथितानि शुभानि च।
जीवच्छ्राद्धक्रमोऽस्माकं वक्तुमर्हसि सांप्रतम्॥१॥

सूत उवाच

जीवच्छ्राद्धविधिं वक्ष्ये समासात्सर्वसंमतम्। मनवे देवदेवेन कथितं ब्रह्मणा पुरा॥२॥
वसिष्ठाय च शिष्टाय भृगवे भार्गवाय च। शृण्वंतु सर्वभावेन सर्वसिद्धिकरं परम्॥३॥
श्राद्धमार्गक्रमं साक्षाच्छ्राद्धार्हाणामपि क्रमम्। विशेषमपि वक्ष्यामि जीवच्छाद्धस्य सुव्रताः॥४॥
पर्वते वा नदीतीरे वने वायतनेऽपि वा। जीवच्छ्राद्धं प्रकर्तव्यं मृतकाले प्रयत्नतः॥५॥
जीवच्छ्राद्धे कृते जीवो जीवन्नेव विमुच्यते। कर्म कुर्वन्नकुर्वन्वा ज्ञानी वाज्ञानवानपि॥६॥
श्रोत्रियोश्रोत्रियो वापि ब्राह्मणः क्षत्रियोऽपि वा। वैश्यो वा नात्र संदेहो योगमार्गगतो यथा॥७॥
परीक्ष्य भूमिं विधिवद्गंधवर्णरसादिभिः। शल्यमुद्धृत्य यत्नेन स्थंडिलं सैकतं भुवि॥८॥
मध्यतो हस्तमात्रेण कुंडं चैवायतं शुभम्। स्थंडिलं वा प्रकर्तव्यमिषुमात्रं पुनः पुनः॥९॥

---

पैंतालीसवाँ अध्याय

# जीवत् श्राद्ध संस्कार की विधि

ऋषिगण बोले

इस प्रकार सोलह दानों को संक्षेप में कहा। अब आप जीवत्श्राद्ध विधि को हम लोगों को बतायें।

सूत बोले

संक्षेप में सर्वसम्मत जीवत् श्राद्ध विधि को कहता हूँ जिसको देवताओं के देवता ब्रह्मा ने पहले मनु से कहा था। मनु ने वसिष्ठ को, वसिष्ठ ने अनुशासित भृगु और भार्गव को कहा। उस सब प्रकार से सिद्धि देने वाले जीवत् श्राद्ध विधि को पूर्णभाव से सुनिये।।१-३।। हे सुव्रत! मैं श्राद्ध के क्रम और विधि को कहता हूँ। जो जीवत् श्राद्ध को करने में श्रद्धा रखते हों उनके लिए उस श्राद्ध की विशेषताओं को भी कहता हूँ।।४।। जीवत् श्राद्ध पर्वत पर, नदी के किनारे, वन में या अपने निवास पर जबकि शरीर वृद्ध हो। तब यह कृत्य किया जाता है, तो उसके करने पर जीव जीते हुये भी मुक्त हो जाता है। कर्म करते हुये अथवा न करते हुये, ज्ञानी हो या अज्ञानी हो, श्रोत्रिय हो या अश्रोत्रिय हो, ब्राह्मण हो, क्षत्रिय हो या वैश्य हो, या योग मार्ग का अनुयायी हो। इसमें कोई सन्देह नहीं है।।५-७।। श्राद्ध की भूमि को गंध, रंग, स्वाद आदि के द्वारा परीक्षा कर लेनी चाहिए। उस भूमि पर से घास-फूस और काँटे आदि उखाड़ देना चाहिए। इस प्रकार स्वच्छ भूमि पर मध्य में एक हाथ मात्र चौड़ाई में बालू से ढक देना

उपलिप्य विधानेन चालिप्याग्निं विधाय च। अन्वाधाय यथाशास्त्रं परिगृह्य च सर्वतः॥१०॥
परिस्तीर्य स्वशाखोक्तं पारंपर्यक्रमागतम्। समाप्याग्निमुखं सर्वं मंत्रेरेतैर्यथाक्रमम्॥११॥
संपूज्य स्थंडिले वह्नौ होमयेत्समिदादिभिः। आदौ कृत्वा समिद्धोमं चरुणा च पृथक्पृथक्॥१२॥
घृतेन च पृथक्पात्रे शोधितेन पृथक्पृथक्। जुहुयादात्मनोद्धृत्य तत्त्वभूतानि सर्वतः॥१३॥

ॐ भूः ब्रह्मणे नमः॥१४॥
ॐ भूः ब्रह्मणे स्वाहा॥१५॥
ॐ भुवः विष्णवे नमः॥१६॥
ॐ भुवः विष्णवे स्वाहा॥१७॥
ॐ स्वः रुद्राय नमः॥१८॥
ॐ स्वः रुद्राय स्वाहा॥१९॥
ॐ महः ईश्वराय नमः॥२०॥
ॐ महः ईश्वराय स्वाहा॥२१॥
ॐ जनः प्रकृतये नमः॥२२॥
ॐ जनः प्रकृत्यै स्वाहा॥२३॥
ॐ तपः मुद्गलाय नमः॥२४॥
ॐ तपः मुद्गलाय स्वाहा॥२५॥
ॐ ऋतं पुरुषाय नमः॥२६॥
ॐ ऋतं पुरुषाय स्वाहा॥२७॥
ॐ सत्यं शिवाय नमः॥२८॥
ॐ सत्यं शिवाय स्वाहा॥२९॥

---

चाहिए, यदि कुण्ड खोदा जाय तो यह लम्बा और उत्तम हो, या खाली भूमि को एक बाण बढ़ा दिया जाय। भूमि को विधिपूर्वक गाय के गोबर से लीपकर वहाँ वेद मन्त्रों के उच्चारण के साथ अग्नि की स्थापना की जाय। चारों ओर जल का छिड़काव किया जाय। अग्नि स्थापन अपने-अपने वेदों की शाखाओं के परम्परागत मन्त्रों से किया जाय। भूमि पर विधिवत् पूजन करने के बाद यज्ञ के समिधाओं के द्वारा होम किया जाय तथा तब चरु से घी से पृथक्-पृथक् होम किया जाय। अलग पात्र तथा शुद्ध किये हुये घी से तत्त्वों भूतों को मन से विचार करके चारों ओर अलग-अलग होम करना चाहिये।।८-१३।। ॐ भूः ब्रह्मा को नमस्कार है।।१४।। ॐ भूः ब्रह्मा को स्वाहा।।१५।। ॐ भुवः विष्णु को नमस्कार।।१६।। ॐ भुवः विष्णु को स्वाहा।।१७।। ॐ स्वः रुद्र को नमस्कार।।१८।। ॐ स्वः रुद्र को स्वाहा।।१९।। ॐ महः ईश्वर को नमस्कार।।२०।। ॐ महः ईश्वर को स्वाहा।।२१।। ॐ जनः प्रकृति को नमस्कार।।२२।। ॐ जनः प्रकृति को स्वाहा।।२३।। ॐ तपः मुद्गल को नमस्कार।।२४।। ॐ तपः मुद्गल को स्वाहा।।२५।। ॐ ऋतं पुरुष को नमस्कार।।२६।। ॐ ऋतं पुरुष को स्वाहा।।२७।। ॐ सत्यं शिव को नमस्कार।।२८।। ॐ सत्यं शिव को स्वाहा।।२९।।

ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गंधं शर्वाय देवाय भूर्नमः॥३०॥
ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गंधं शर्वाय भूः स्वाहा॥३१॥
ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गंधं शर्वस्य देवस्य पत्न्यै भूर्नमः॥३२॥
ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गंधं शर्वपत्न्यै भूः स्वाहा॥३३॥
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवाय देवाय भुवो नमः॥३४॥
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवाय देवाय भुवः स्वाहा॥३५॥
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवस्य देवस्य पत्न्यै भुवो नमः॥३६॥
ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवस्य पत्न्यै भुः स्वाहा॥३७॥
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय देवाय स्वरों नमः॥३८॥
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय देवाय स्वः स्वाहा॥३९॥
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य पत्न्यै स्वरों नमः॥४०॥
ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य देवस्य पत्न्यै स्वः स्वाहा॥४१॥
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शं उग्राय देवाय महर्नमः॥४२॥
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्राय देवाय महः स्वाहा॥४३॥
ॐ उग्र वायुं में गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्रस्य देवस्य पत्न्यै महरों नमः॥४४॥
ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्रस्य देवस्य पत्न्यै महः स्वाहा॥४५॥
ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनो नमः॥४६॥

---

ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गंध, शर्व स्वामी को नमस्कार, भूः ॐ शर्व को नमस्कार। ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गंध, शर्व को स्वाहा। ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गंध, भूः शर्व स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ शर्व, मेरी भूमि की रक्षा करें, नासिका में गन्ध, भूः शर्व की पत्नी को स्वाहा।।३०-३३।। ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव स्वामी को नमस्कार। ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव स्वामी को स्वाहा। ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ भव, मेरे जलों की रक्षा करें, जिह्वा में स्वाद, भुवः, भव की पत्नी को स्वाहा।।३४-३७।। ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करे, मेरे नेत्रों में रंग, स्वः, ॐ रुद्र को नमस्कार। ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करें, नेत्र में रंग, स्वः स्वाहा, रुद्र स्वामी को नमस्कार। ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करें, नेत्र में रंग, स्वः ॐ, रुद्र स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ रुद्र, मेरी अग्नि की रक्षा करे, नेत्र में रंग, स्वः स्वाहा, रुद्र स्वामी की पत्नी को।।३८-४१।। ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करे, त्वचा में स्पर्श, महः, उग्र स्वामी को नमस्कार। ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करे, त्वचा में स्पर्श, महः स्वाहा, उग्र स्वामी को। ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करें, त्वचा में स्पर्श, महः ॐ, उग्र स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ उग्र, मेरी वायु की रक्षा करें, त्वचा में स्पर्श, महः स्वाहा उग्र स्वामी की पत्नी को।।४२-४५।। ॐ भीम, मेरी शुषिर की रक्षा करे, कानों में ध्वनि, जनः ॐ, भीम स्वामी को नमस्कार। ॐ भीम, मेरी शुषिर की रक्षा

ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनः स्वाहा॥४७॥
ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य पत्न्यै जनो नमः॥४८॥
ॐ भीम सुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य देवस्य पत्न्यै जनः स्वाहा॥४९॥
ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशाय देवाय तपो नमः॥५०॥
ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशाय देवाय तपः स्वाहा॥५१॥
ॐ रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशस्य पत्न्यै तपो नमः॥५२॥
ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशस्य पत्न्यै तपः स्वाहा॥५३॥
ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवाय ऋतं नमः॥५४॥
ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवाय ऋतं स्वाहा॥५५॥
ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवस्य पत्न्यै ऋतं नमः॥५६॥
ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवस्य पत्न्यै ऋतं स्वाहा॥५७॥
ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतये देवाय सत्यं नमः॥५८॥
ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतये देवस्य सत्यं स्वाहा॥५९॥
ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपते र्देवस्य पत्न्यै सत्यं नमः॥६०॥
ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतेर्देवस्य पत्न्यै सत्यं स्वाहा॥६१॥
ॐ शिवाय नमः॥६२॥
ॐ शिवाय सत्यं स्वाहा॥६३॥
एवं शिवाय होतव्यं विरिंच्याद्यं च पूर्ववत्। विरिंचाद्यं च पूर्वोक्तं सृष्टिमार्गेषु सुव्रताः॥६४॥

---

करे, कानों में ध्वनि, जनः स्वाहा, भीम स्वामी को। ॐ भीम, मेरी शुषिर की रक्षा करें, कानों में ध्वनि, जनः ॐ भीम स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ भीम मेरे सुषिर की रक्षा करें, कानों में ध्वनि, जनः स्वाहा भीम स्वामी की पत्नी को।।४६-४९।। ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः ॐ, ईश स्वामी को नमस्कार। ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः स्वाहा, ईश स्वामी को। ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः ॐ, ईश स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ ईश, मेरे रजोगुण की रक्षा करें, धन के लिए तृष्णा, तपः स्वाहा ईश स्वामी की पत्नी को।।५०-५३।। ॐ महादेव, मेरे सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य में श्रद्धा, ऋतं, महादेव को नमस्कार। ॐ महादेव मेरे सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य में श्रद्धा, ऋतम्, स्वाहा महादेव को। ॐ महादेव, मेरे सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य में श्रद्धा, ऋतं महादेव की पत्नी को नमस्कार। ॐ महादेव, मेरे सत्य की रक्षा करें, ऐश्वर्य में श्रद्धा, महादेव की पत्नी को ऋतं स्वाहा।।५४-५७।। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करें, भोक्ता और भोग की स्थिति, सत्यं, पशुपति स्वामी को नमस्कार। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करें, भोक्ता और भोग की स्थिति, पशुपति स्वामी को सत्यं स्वाहा। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करे, भोक्ता और भोग की स्थिति, सत्यं, पशुपति स्वामी की पत्नी को नमस्कार। ॐ पशुपति, मेरे पाश की रक्षा करें, भोक्ता और भोग की स्थिति, पशुपति स्वामी की पत्नी को सत्यं स्वाहा। ॐ शिव को नमस्कार। ॐ सत्यं, शिव को स्वाहा।।५८-६३।। इस प्रकार

पुनः पशुपतेः पत्नीं तथा पशुपतिं क्रमात्। संपूज्य पूर्ववन्मंत्रैर्होतव्यं च क्रमेण वै॥६५॥
चर्वंतमाज्यपूर्वं च समिदंतं समाहितः॥६६॥
ॐ शर्व धरां मे छिंधि घ्राणे गंधं छिंधि मेघं जहि भूः स्वाहा॥६७॥
भुवः स्वाहा॥६८॥
स्वः स्वाहा॥६९॥
भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥७०॥
एवं पृथक्पृथग्घुत्वा केवलेन घृतेन वा। सहस्रं वा तदर्धं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥७१॥
विरजा च घृतेनैव शतमष्टोत्तरं पृथक्। प्राणादिभिश्च जुहुयाद्घृतेनैव तु केवलम्॥७२॥
ॐ प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि शिवो मा विशाप्रदाहाय प्राणाय स्वाहा॥७३॥
प्राणाधिपतये रुद्राय वृषांतकाय स्वाहा॥७४॥
ॐ भूः स्वाहा॥७५॥
ॐ भुवः स्वाहा॥७६॥
ॐ स्वः स्वाहा॥७७॥
भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥७८॥
एवं क्रमेण जुहुयाच्छ्राद्धोक्तं च यथाक्रमम्। सप्तमेऽहनि योगींद्राञ्छ्राद्धार्हानपि भोजयेत्॥७९॥
शर्वादीनां च विप्राणां वस्त्राभरणकंबलान्। वाहनं शयनं यानं कांस्यताम्रादिभाजनम्॥८०॥
हैमं च राजतं धेनुं तिलान् क्षेत्रं च वैभवम्। दासीदासगणश्चैच दातव्यो दक्षिणामपि॥८१॥
पिंडं च पूर्ववद्दद्यात्पृथगष्टप्रकारतः। ब्राह्मणानां सहस्रं च भोजयेच्च सदक्षिणम्॥८२॥
एकं वा योगनिरतं भस्मनिष्ठं जितेंद्रियम्। त्र्यहं चैव तु रुद्रस्य महाचरुनिवेदनम्॥८३॥

---

शिव के होम कृत्य को पूरा किया जाय और विरिंचादि के लिये हुये पूर्ववत् विरंचि और अन्न सृष्टि मार्गों में पूर्वोक्त होम करे। इसके बाद भक्त पशुपति और पशुपति की पत्नी की क्रम से पूजा करे, पूजा करने के बाद क्रमशः मन्त्रों के प्रयोग को करते हुये होम करे। हवन सामग्री में घी चरु और यज्ञ समिधा होनी चाहिए।यज्ञ कर्त्ता को शरीरिक और मानसिक रूप शुद्ध होना चाहिये।।६४-६६।। ॐ शर्व, मेरे भूमि को काटो, नाक में गन्ध को घन को नष्ट करो—भूः स्वाहा, भूवः स्वाहा, स्वः स्वाहा। भूर्भुवः स्वः स्वाहा। इस प्रकार भक्त अलग-अलग १ हजार, पाँच सौ या १०८ बार केवल घी से हवन करे। विरजा मन्त्रों को दोहराते हुये केवल घी से १०८ बार अलग होम किया जाय। हे शिव! मुझमें प्रवेश करो। प्राण के जलाने वाला प्राण के अधिपति को स्वाहा, रुद्र को वृष के नाशक के लिए स्वाहा। ॐ भूः स्वाहा ॐ भुवः स्वाहा ॐ स्वः स्वाहा ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा।।६७-७८।। इस प्रकार जैसा कि श्राद्ध में होता है। यथाक्रम उसी प्रकार हवन करे। सातवें दिन श्रेष्ठ योगियों और श्राद्ध में भोजन करने योग्य व्यक्तियों को भोजन करावे।।७९।। शिव के भक्त ब्राह्मणों को वस्त्राभूषण, शाल, कम्बल, वाहन, विस्तर, कांस्य ताम्र आदि के बर्तन, सोने चाँदी के बने बर्तन, गायें, तिल, भूमि तथा अन्य वस्तुएँ दान करे। दास और दासियों को भी दक्षिणा दी जाय।।८०-८१।। आठ प्रकार के पिण्ड अलग-अलग पूर्ववत् दिया जाय। श्राद्ध कर्त्ता को चाहिये कि वह हजार ब्राह्मणों को भोजन कराये और उनको दक्षिणा भी दे।।८२।। या योगाभ्यास में लगे हुये

विशेष एवं कथित अशेषश्राद्ध चोदितः। मृते कुर्यान्न कुर्याद्वा जीवन्मुक्तो यतः स्वयम्॥८४॥
नित्यनैमित्तिकादीनि कुर्याद्वा संत्यजेत्तु वा। बांधवेऽपि मृते तस्य शौचाशौचं न विद्यते॥८५॥
सूतकं च न संदेहः स्नानमात्रेण शुद्ध्यति। पश्चाज्जाते कुमारे च स्वे क्षेत्रे चात्मनो यदि॥८६॥
तस्य सर्वं प्रकर्तव्यं पुत्रोऽपि ब्रह्मविद्भवेत्। कन्यका यदि संजाता पश्चात्तस्य महात्मनः॥८७॥
एकपर्णा इव ज्ञेया अपर्णा इव सुव्रता। भवत्येव न संदेहस्तस्याश्चान्वयजा अपि॥८८॥
मुच्यंते नात्र संदेहः पितरो नरकादपि। मुच्यंते कर्मणानेन मातृतः पितृतस्तथा॥८९॥
कालं गते द्विजे भूमौ खनेच्चापि दहेत्तु वा। पुत्रकृत्यमशेषं च कृत्वा दोषो न विद्यते॥९०॥
कर्मणा चोत्तरेणैव गतिरस्य न विद्यते। ब्रह्मणा कथितं सर्वं मुनीनां भावितात्मनाम्॥९१॥
पुनः सनत्कुमाराय कथितं तेन धीमता। कृष्णद्वैपायनायैव कथितं ब्रह्मसुनुना॥९२॥
प्रसादात्तस्य देवस्य वेदव्यासस्य धीमतः। ज्ञातं मया कृतं चैव नियोगादेव तस्य तु॥९३॥
एतद्वः कथितं सर्वं रहस्यं ब्रह्मसिद्धिदम्। मुनिपुत्राय दातव्यं न चाभक्ताय सुव्रताः॥९४॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे जीवत्श्राद्धविधिर्नाम पंचचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥४५॥**

---

किसी एक व्यक्ति को भोजन कराये। वह स्वयं भस्म धारण करे और इन्द्रियों को वश में करके महाचरु तीन दिन के लिए भगवान रुद्र को समर्पित करे।।८३।। यहाँ पर केवल जीवत् श्राद्ध से सम्बन्धित विशेष चीजों का जिक्र किया गया है। अन्य सब क्रियाएँ अन्य श्राद्धों की तरह होती हैं। यदि भक्त मर जाता है, तो उसका मरणोत्तर श्राद्ध किया जा सकता है नहीं भी किया जा सकता है। क्योंकि यह श्राद्ध करने वाला व्यक्ति स्वयं जीवन्मुक्त होता है।।८४।। वह नित्य और नैमित्तिक क्रियाओ को करे या छोड़ दे। बान्धवों के मरने पर भी जीवत् श्राद्ध करने वाले व्यक्ति के लिए शौचाशैच नहीं होता है और सूतक भी नहीं मानना चाहिए। स्नान मात्र से उसकी शुद्धि हो जाती है।।८५।। इसके बाद यदि उसको पुत्र प्राप्त होता है या उसकी पत्नी से पुत्र उत्पन्न होता है, तो वह पुत्र उसके लिए सब पवित्र संस्कार कर सकेगा। उसका पुत्र भी ब्रह्मविद् होता है। यदि कन्या पैदा होती है तो, हे सुव्रत! वह कन्या एक पर्णा या अपर्णा के समान होगी, उसके परिवार में जन्म लेने वाले व्यक्ति नरक से मुक्त हो जाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है। उसके पिता और पितर गण और मातृपक्ष के लोग भी मुक्त हो जाते हैं।।८६-८९।। ऐसा ब्राह्मण जब मर जाता है, तो भूमि को खोदकर उसके शरीर को गाड़ दिया जाता है। या उसका दाह संस्कार कर दिया जाय, पुत्र द्वारा सम्पूर्ण कृत्य (और्द्धदैहिक क्रिया) किया जाय इसमें कोई दोष नहीं है। मृत्यु के उपरान्त पृथक् मुक्ति के लिए कोई क्रिया आवश्यक नहीं है। यह सब ब्रह्मा द्वारा महात्मा मुनियों को कहा गया है। फिर सनत्कुमार को ब्रह्मा ने कहा। उसे बाद में कृष्ण द्वैपायन (व्यासमुनि) को ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार ने कहा। उन्हीं वेदव्यास की कृपा से मैंने यह जाना और उनके निर्देश से किया। यह सब ब्रह्म की सिद्धि देने वाले रहस्य को मैंने कहा। हे सुव्रतो! यह सब ऐसे व्यक्ति को बताया जाय जो कि मुनि पुत्र हो। अभक्त को यह ज्ञान नहीं देना चाहिये।।९०-९४।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में जीवत् श्राद्ध संस्कार की विधि नामक पैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४५॥**

षट्चत्वारिंशोऽध्यायः

# लिङ्गमूर्त्तिप्रतिष्ठा

ऋषय ऊचुः

जीवच्छ्राद्धविधिः प्रोक्तस्त्वया सूत महामते। मूर्खाणामपि मोक्षार्थमस्माकं रोमहर्षण॥१॥
रुद्रादित्यवसूनां च शक्रादीनां च सुव्रत। प्रतिष्ठा कीदृशी शंभोर्लिंगमूर्तेश्च शोभना॥२॥
विष्णोः शक्रस्य देवस्य ब्रह्मणश्च महात्मनः। अग्नेर्यमस्य निर्ऋतेर्वरुणस्य महाद्युतेः॥३॥
वायोः सोमस्य यक्षस्य कुबेरस्यामितात्मनः। ईशानस्य धरायाश्च श्रीप्रतिष्ठाथ वा कथम्॥४॥
दुर्गाशिवाप्रतिष्ठा च हैमवत्याश्च शोभना। स्कंदस्य गणराजस्य नंदिनश्च विशेषतः॥५॥
तथान्येषां च देवानां गणानामपि वा पुनः। प्रतिष्ठालक्षणं सर्वं विस्ताराद्वक्तुमर्हसि॥६॥
भवान्सर्वार्थतत्त्वज्ञो रुद्रभक्तश्च सुव्रत। कृष्णद्वैपायनस्यासि साक्षात्त्वमपरा तनुः॥७॥
सुमंतुर्जैमिनिश्चैच पैलश्च परमर्षयः। गुरुभक्तिं तथा कर्तुं समर्थो रोमहर्षणः॥८॥
इति व्यासस्य विपुला गाथा भागीरथीतटे। एकः समो वा भिन्नो वा शिष्यस्तस्य महाद्युतेः॥९॥
वैशंपायनतुल्योऽसि व्यासशिष्येषु भूतले। तस्मादस्माकमखिलं वक्तुमर्हसि सांप्रतम्॥१०॥

---

छियालीसवाँ अध्याय

# लिंग का स्थापन

ऋषिगण बोले

हे महामति, हे रोमों के हर्षित करने वाले सूत जी! हम मूर्खों के मोक्षों के लिए भी आपने जीवत् श्राद्ध विधि को बताया।।१।। हे सुव्रत! रुद्र, आदित्य, वसुओं, इन्द्र, और अन्य की स्थापना कैसे होती है? लिंग से रूप मूर्ति में शिव की उत्तम प्रतिष्ठा कैसे होती है? तथा विष्णु, इन्द्र, ब्रह्मा, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, यक्ष, कुबेर, ईशान, भूमि, श्री दुर्गा, हिमालय की पुत्री शिवा (पार्वती), स्कन्द, विशेषरूप में नन्दी, गणराज की तथा अन्य देवताओं और गणों की प्रतिष्ठा कैसे होती है? विस्तार से प्रतिष्ठा के लक्षण को वर्णन करें।।२-६।। हे सुव्रत! आप सब तत्त्वों के ज्ञाता और रुद्रभक्त हैं। आप कृष्ण द्वैपायन के द्वितीय शरीर हैं।।७।। "सुमंतु जैमिनि, पैल आदि परम ऋषिगण हैं आप अपने गुरु की भक्ति करने में समर्थ हैं।" इस प्रकार भागीरथी के तट पर व्यास के विषय में यह अनुपम कथा कही गयी है। आप उस महापुरुष के रूप है या उनके समान हैं, या उनके प्रधान शिष्य हैं। अथवा उनसे अभिन्न हैं।।८-९।। इस पृथ्वी पर व्यास के शिष्यों में आप वैशम्पयन के तुल्य हैं। अतः इस समय आप हमको सब कुछ बतायें।।१०।। इतना कहने के बाद ऋषि लोग वहाँ थोड़ी देर के लिए खड़े हो गये। उस समय उनके (सूत) सामने एक अति विस्मयजनक बात हुयी। अन्तरिक्ष में साक्षात् देवों ने इस प्रकार कहा, "मुनियों का यह प्रश्न यहीं पर समाप्त हो। सारा जगत लिंगमय है, और सभी लिंग में

एवमुक्त्वा स्थितेष्वेव तेषु सर्वेषु तत्र च। बभूव विस्मयोऽतीव मुनीनां तस्य चाग्रतः॥११॥
अथांतरिक्षे विपुला साक्षाद्देवी सरस्वती। अलं मुनीनां प्रश्नोऽयमिति वाचा बभूव ह॥१२॥
सर्वं लिङ्गमयं लोकं सर्वं लिंगे प्रतिष्ठितम्। तस्मात्सर्वं परित्यज्य स्थापयेत्पूजयेच्च तत्॥१३॥
लिंगस्थापनसन्मार्गनिहितस्वायतासिना । आशु ब्रह्मांडमुद्भिद्य निर्गच्छेदविशंकया॥१४॥
उपेंद्रांभोजगर्भेंद्रयमांबुधनदेश्वराः । तथान्ये च शिवं स्थाप्य लिंगमूर्तिं महेश्वरम्॥१५॥
स्वेषुस्वेषु च पक्षेषु प्रधानास्ते यथा द्विजाः। ब्रह्मा हरश्च भगवान्विष्णुर्देवी रमा धरा॥१६॥
लक्ष्मीर्धृतिः स्मृतिः प्रज्ञा धरा दुर्गा शची तथा। रुद्राश्च वसवः स्कंदो विशाखः शाख एव च॥१७॥
नैगमेशश्च भगवाँल्लोकपाला ग्रहास्तथा। सर्वे नंदिपुरोगाश्च गणा गणपतिः प्रभुः॥१८॥
पितरो मुनय; सर्वे कुबेराद्याश्च सुप्रभाः। आदित्या वसवः सांख्या अश्विनौ च भिषग्वरौ॥१९॥
विश्वेदेवाश्च साध्याश्च पशवः पक्षिणो मृगाः। ब्रह्मादिस्थावरांतं च सर्वं लिंगे प्रतिष्ठितम्॥२०॥
तस्मात्सर्वं परित्यज्य स्थापयेल्लिंगमव्ययम्। यत्नेन स्थापितं सर्वं पूजितं पूजयेद्यदि॥२१॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥४६॥**

---

प्रतिष्ठित है। इसलिए सब छोड़कर लिंग की स्थापना करनी चाहिये और उसकी पूजा की जानी चाहिये''।।११-१३।। कोई भी व्यक्ति ब्रह्मांड को तुरन्त भेद करके लिंग की स्थापना संस्कार को पूरा करे। यह कार्य ऐसा है जैसे कि सन्मार्ग में एक लम्बी तलवार कार्य करती है। उसके बाद भक्त ब्रह्माण्ड को भेद कर बेहिचक बाहर हो जाय।।१४।। उपेन्द्र, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर और ईशान तथा अन्य इन सबको लिंग पर स्थापित करे। महेश्वर शिव जिनका भौतिक रूप लिंग है, उनको स्थापित करे। हे ब्रह्मणों! इस प्रकार शिव की प्रतिष्ठा (स्थापना) के द्वारा वे सब अपने-अपने पक्ष में (परिवारों में) प्रधान हो जाते हैं। ब्रह्मा, हर, रमा, धरा, लक्ष्मी, धृति, स्मृति, प्रज्ञा, धरा, दुर्गा, शची, रुद्र, वसु, स्कन्द, विशाख, साख, नैगमेश दिग्पाल, ग्रहमण्डल, गण, नन्दी, गणपति, पितृगण, ऋषिगण, कुबेर, आदित्य, वसु, सांख्य और वैद्यों में श्रेष्ठ अश्विनी कुमार, विश्वदेव, साध्य, पशु, पक्षी, और मृग, ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक यह सब लिंग में प्रतिष्ठित हैं। इसलिए सबकुछ छोड़कर अव्यय लिंग की स्थापना करे। यत्नपूर्वक स्थापना करके अगर कोई इसकी पूजा करता है, तो सब पूज्य की पूजा के समान यह मान्य है।।१५-२१।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में लिंग का स्थापन नामक छियालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४६॥**

## सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः

# लिङ्गस्थापनम्

सूत उवाच

इति निशम्य कृतांजलयस्तदा दिवि महामुनयः कृतनिश्चयाः।
शिवतरं शिवमीश्वरमव्ययं मनसि लिंगमयं प्रणिपत्य ते॥१॥
सकलदेवपतिर्भगवानजो हरिरशेषपतिर्गुरुणा स्वयम्।
मुनिवराश्च गणाश्च सुरासुरा नरवराः शिवलिंगमयाः पुनः॥२॥
श्रुत्वैवं मुनयः सर्वे षट्कुलीयाः समाहिताः। संत्यज्य सर्वं देवस्य प्रतिष्ठां कर्तुमुद्यताः॥३॥
अपृच्छन्सूतमनघं हर्षगद्गदया गिरा। लिंगप्रतिष्ठां विपुलां सर्वे ते शंसितव्रताः॥४॥

सूत उवाच

प्रतिष्ठां लिंगमूर्तेर्वो यथावदनुपूर्वशः। प्रवक्ष्यामि समासेन धर्मकामार्थमुक्तये॥५॥
कृत्वैव लिंगं विधिना भुवि लिंगेषु यत्नतः। लिंगमेकतमं शैलं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्॥६॥
हेमरत्नमयं वापि राजतं ताम्रजं तु वा। सवेदिकं ससूत्रं च सम्यग्विस्तृतमस्तकम्॥७॥

---

## सैंतालीसवाँ अध्याय

# लिंग का स्थापन

### सूत बोले

आकाश से इस वाणी को सुनकर महामुनियों ने उस वाणी के सम्मान में अपने हाथ जोड़ लिए। तत्क्षण निश्चय करके लिंग से अभिन्न अव्यय शिव को नतमस्तक हो मन में ही लिंग की स्थापना करके देवेन्द्र इन्द्र, अज, विष्णु, सर्वेश्वर देवगुरु (वृहस्पति) सहित सब मुनिवर, गण, सुर असुर, और श्रेष्ठ मनुष्य इन सब ने शिवलिंगमय अपने को अनुभव किया। इस आकाशवाणी को सुनकर छः महान् कुलीन सबकुछ छोड़कर शिवलिंग की स्थापना करने को उद्यत हुये। इन लोगों ने प्रसन्नता से गद्गद वाणी से निष्पाप सूत जी से लिंग की प्रतिष्ठा के विषय में पूछा।।१-४।।

### सूत बोले

मैं धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति के लिए संक्षेप में यथावत् क्रमशः लिंगमूर्ति की प्रतिष्ठा को कहूँगा।।५।। इस प्रकार विधिपूर्वक लिंग बनवाये जो यह लिंग पत्थर का हो। यह ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक हो। यह रत्नजटित सोने का या चाँदी का या ताँबे का भी बनवाया जा सकता है। यह वेदी सहित हो। जल के निकलने का मार्ग भी हो। ऊपरी सिरा पर्याप्त रूप में विस्तृत हो। भक्त लिंग और वेदी को भलीभाँति स्वच्छ करके तब उसकी स्थापना करे। लिंग की वेदी देवी उमा है और लिंग स्वयं साक्षात् महेश्वर। इन दोनों की पूजा देव और

विशेध्य स्थापयेद्भक्त्या सवेदिकमनुत्तमम्। लिंगवेदी उमा देवी लिंगं साक्षान्महेश्वरः॥८॥
तयोः सपूजनादेव देवी देवश्च पूजितौ। प्रतिष्ठया च देवेशो देव्या सार्धं प्रतिष्ठतः॥९॥
तस्मात्सवेदिकं लिंगं स्थापयेत्स्थापकोत्तमः॥१०॥
मूले ब्रह्मा वसति भगवान्मध्यभागे च विष्णुः सर्वेशानः पशुपतिरजो रुद्रमूर्तिर्वरेण्यः।
तस्माल्लिगं गुरुतरतरं पूजयेत्स्थापयेद्वा यस्मात्पूज्यो गणपतिरसौ देवमुख्यैः समस्तैः॥११॥
गंधैः स्रग्धूपदीपैः स्नपनहुतबलिस्तोत्रमंत्रोपहारै-
र्नित्यंयेऽभ्यर्चयंति त्रिदशवरतनुं लिंगमूर्तिं महेशम्।
गर्भाधानादिनाशक्षयभयरहिता देवगंधर्वमुख्यैः
सिद्धैर्वंद्याश्च पूज्या गणवरनमितास्ते भवंत्यप्रमेयाः॥१२॥
तस्माद्भक्त्योपचारेण स्थापयेत्परमेश्वरम्। पूजयेच्च विशेषेण लिंगं सर्वार्थसिद्धये॥१३॥
समर्च्य स्थापयेल्लिंगं तीर्थमध्ये शिवासने। कूर्चवस्त्रादिभिर्लिंगमाच्छाद्य कलशैः पुनः॥१४॥
लोकपालदिदैवत्यैः सकूर्चैः साक्षतैः शुभैः। उत्कूर्चैः स्वस्तिकाद्यैश्च चित्रतंतुकवेष्टितैः॥१५॥
वज्रादिकायुधोपेतैः सवस्त्रैः सपिधानकैः। लक्षयेत्परितो लिंगमीशानेन प्रतिष्ठितम्॥१६॥
धूपदीपसमोपेतं वितानविततांबरम्। लोकपालध्वजैश्चैव गजादिमहिषादिभिः॥१७॥
चित्रितैः पूजितैश्चैव दर्भमाला च शोभना। सर्वलक्षणसंपूर्णा तया बाह्ये च वेष्टयेत्॥१८॥
ततोधिवासयेत्तोये धूपदीपसमन्विते। पंचाहं वा त्र्यहंवाथ एकरात्रमथापि वा॥१९॥

---

देवी की पूजा है। इन दोनों की देवेश और देवी की प्रतिष्ठा की जाय। इसलिए भक्त वेदी सहित लिंग की स्थापना करे।।६-१०।। लिंग के मूल में ब्रह्मा बसते हैं और मध्य भाग में विष्णु अज, रुद्र, पशुपति, सर्वेश्वर, शिर पर वास करते हैं। इस लिए गणों के स्वामी सब देवताओं द्वारा पूजने के योग्य हैं। अतः भक्त को गुरु से गुरुतर लिंगों की स्थापना और पूजा करनी चाहिये।।११।। वे जो सदा महेश की पूजा करते हैं जो कि देवताओं में सर्वोत्तम हैं, उनके लिंग रूपी भौतिक शरीर में वे जो पूजा की शुद्ध वस्तुओं गन्ध, माला, धूप, दीप, स्नान, हवन, स्तोत्र मन्त्र और उपहारों से नित्य देवताओं में श्रेष्ठ शिव के लिंग की पूजा करते हैं, वे लोग जन्म मृत्यु के भय से मुक्त हो जाते हैं। वे सिद्धों, देवताओं और गन्धर्वों द्वारा पूज्य और गणवरों द्वारा प्रणम्य होते हैं।।१२।। अतः भक्त को चाहिये कि वह लिंग की भक्तिपूर्वक स्थापना करे और सब कामनाओं की पूर्ति के लिए विशेषरूप से लिंग की पूजा करे।।१३।। उसकी पूजा करने के बाद वह लिंग को पवित्र भूमि के मध्य में शिवासन पर स्थापित करे। तब लिंग को कुश और वस्त्र से लपेट देना चाहिये। उसके बाद लोकपाल, दिक्पाल आदि देवताओं अक्षत सहित कुशों स्वस्तिक आदि विभिन्न रंग के धागों से वेष्टित, बज्र आदि आयुध से युक्त वस्त्रों से ढके हुये, लिंग को ईशान मन्त्र पढ़ते हुये एक मण्डल में स्थापित करे। धूप दीप से युक्त वस्त्र का एक वितान (चाँदनी) ऊपर तान दिया जाय। लोकपालों के चित्रों के ऊपर कपड़े फैला दिये जायँ और उनके वाहनों हाथी, भैंसा आदि को भी वस्त्र से ढक दें। भक्त कुशों की मालाओं को उस स्थान पर चारों ओर बाँध दे।।१४-१८।। उसके बाद भक्त धूप,

वेदाध्ययनसंपन्नो नृत्यगीतादिमंगलैः। किंकिणीरवकोपेतं तालवीणारवैरपि॥२०॥
ईक्षयेत्कालमव्यग्रो यजमानः समाहितः। उत्थाप्य स्वस्तिकं ध्यायेन्मंडपे लक्षणान्विते॥२१॥
संस्कृते वेदिसंयुक्ते नवकुंडेन संवृते। पूर्वोक्तविधिना युक्ते सर्वलक्षणसंयुते॥२२॥
अष्टमंडलसंयुक्ते दिग्ध्वजाष्टकसंयुते। पूर्वोक्तलक्षणोपेतैः कुंडैः प्रागादितः क्रमात्॥२३॥
प्रधानं कुंडमीशान्यां चतुरस्त्रं विधीयते। अथवा पंचकुंडैकं स्थंडिलं चैकमेव च॥२४॥
यज्ञोपकरणैः सर्वैः शिवार्चायां हि भूषणैः। वेदिमध्ये महाशय्यां पंचतूलीप्रकल्पिताम्॥२५॥
कल्पयेत्कांचनोपेतां सितवस्त्रावगुंठिताम्। प्रकल्प्यैवं शिवं चैव स्थापयेत्परमेश्वरम्॥२६॥
प्राकशिरस्कं न्यसेल्लिंगमीशानेन यथाविधि। रत्नन्यासे कृते पूर्वं केवलं कलशं न्यसेत्॥२७॥
लिंगमाच्छाद्य वस्त्राभ्यां कूर्चेन च समंततः। रत्नन्यासे प्रसक्तेऽथ वामाद्या नव शक्तयः॥२८॥
नवरत्नं हिरण्याद्यैः पंचगव्येन संयुतैः। सर्वधान्यसमोपेतं शिलायामपि विन्यसेत्॥२९॥
स्थापयेद्ब्रह्मलिंगं हि शिवगायत्रिसंयुतम्। केवलं प्रणवेनापि स्थापयेच्छिवमव्ययम्॥३०॥
ब्रह्मजज्ञानमंत्रेण ब्रह्मभागं प्रभोस्तथा। विष्णुगायत्रिया भागं वैष्णवं त्वथ विन्यसेत्॥३१॥
सूत्रे तत्त्वत्रयोपेते प्रणवेन प्रविन्यसेत्। सर्वं नमः शिवायेति नमो हंसः शिवाय च॥३२॥

---

दीप से युक्त जल में पाँच दिन या तीन दिन या एक रात्रि बास देना चाहिये।।१९।। भक्त को इस काल में वेदों का अध्ययन करना चाहिये। भक्त को नित्य धार्मिक भजन वीणा आदि वाद्य मन्त्रों के साथ गाना चाहिये। उसमें किंकिणी की शब्द ध्वनि भी होती रहे। यजमान शान्त चित्त होकर यह काल बिताये। इसको करने के बाद वह स्वस्तिक पर ध्यान करे। तब लिंग को मण्डप में रखे। वहाँ पर नवकुण्ड खोदे हुये हों, उनमें उनके अपने-अपने चिह्नों से युक्त हों, आठ पवित्र सामग्री जिसको अष्टमंगल कहते हैं, वहाँ पर फैला दिया जाय। वहाँ दिगपालों के लिए आठ मण्डल हों जो अपनी-अपनी ध्वजा से युक्त हों। ये कुण्ड पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके क्रमशः स्थापित हों। प्रधान कुण्ड ईशान कोण में हो। वह आकार में चार हाथ हो या पाँच कुण्ड एक ओर हो और उसके पास खाली भूमि छोड़ दी जाय। सब यज्ञ के उपकरणों और भूषणों को शिव की पूजा में वेदी के मध्य में एक महाशय्या सोने की हो। उसके पास पाँच बत्तियों वाला दीपक उसके पास रखा जाय। उसके बाद शय्या का विस्तर सफेद वस्त्र से ढका हो। ये सब व्यवस्था करने के बाद परमेश्वर शिव को वहाँ स्थापित करना चाहिये।।२०-२६।। भक्त लिंग शिरोभाग को पूर्व की ओर स्थापित करे। स्थापना कार्य ईशान मन्त्रों द्वारा किया जाय। रत्नन्यास (रत्नों को जड़ना) धार्मिक कृत्य करने के बाद कलश को ऊपर रखे।।२७।। तब लिंग को दो वस्त्रों द्वारा कुश सहित चारों ओर से लपेट दे। रत्नन्यास करने के बाद नव शक्तियाँ वामा आदि को रखे। स्वर्ण के साथ नव कीमती रत्नों, पंचगव्य और सब प्रकार के धान्य शिला पर रख दे।।२८-२९।। भक्त, ब्रह्मलिंग को शिव गायत्री मन्त्र को पढ़ते हुये स्थापित करे। केवल प्रणव उच्चारण करते हुये अव्यय शिव को स्थापित करे। ब्रह्मज ज्ञान मंत्र द्वारा प्रभु के मध्य भाग को, विष्णु गायत्री द्वारा वैष्णव भाग को स्थापित करे।।३०-३१।। प्रणव के साथ नमः स्वाहा मन्त्र द्वारा तीन तत्त्वों से निर्मित वेदी में सर्व को स्थापित करे। सर्वं नमः शिवाय नमो हंसः

रुद्राध्यायेन वा सर्वं परिमृज्य च विन्यसेत्। स्थापयेद्ब्रह्मभिश्चैव कलशान्वै समंततः॥३३॥
वेदिमध्ये न्यसेत्सर्वान्पूर्वोक्तविधिसंयुतान्। मध्यकुंभे शिवं देवीं दक्षिणे परमेश्वरीम्॥३४॥
स्कंदं तयोश्च मध्ये तु स्कंदकुंभे सुचित्रिते। ब्रह्माणं स्कंदकुंभे वा ईशकुम्भे हरिं तथा॥३५॥
अथवा शिवकुंभे च ब्रह्मांगानि च विन्यसेत्। शिवो महेश्वरश्चैव रुद्रो विष्णुः पितामहः॥३६॥
ब्रह्माण्येवं समासेनहृदयादीनि चांबिका। वेदिमध्ये न्यसेत्सर्वान्पूर्वोक्तविधिसंयुतान्॥३७॥
वर्धन्यां स्थापयेद्देवीं गंधतोयेन पूर्य च। हिरण्यं रजतं रत्नं शिवकुंभे प्रविन्यसेत्॥३८॥
वर्धन्यामपि यत्नेन गायत्र्यंगैश्च सुव्रताः। विद्येश्वरान्दिशां कुंभे ब्रह्मकूर्चेन पूरिते॥३९॥
अनंतेशादिदेवांश्च प्रणवादिनमोंतकम्। नववस्त्रं प्रतिघटमष्टकुंभेषु दापयेत्॥४०॥
विद्येश्वराणां कुंभेषु हेमरत्नादि विन्यसेत्। वक्त्रक्रमेण होतव्यं गायत्र्यंगक्रमेण च॥४१॥
जयादिस्विष्टपर्यंतं सर्वं पूर्ववदाचरेत्। सेचयेच्छिवकुंभेन वर्धन्या वैष्णवेन च॥४२॥
पैतामहेन कुंभेन ब्रह्मभागं विशेषतः। विद्येश्वराणां कुंभैश्च सेचयेत्परमेश्वरम्॥४३॥
विन्यसेत्सर्वमंत्राणि पूर्ववत्सुसमाहितः। पूजयेत्स्नपनं कृत्वा सहस्रादिषु संभवैः॥४४॥
दक्षिणा च प्रदातव्या सहस्रपणमुत्तमम्। इतरेषां तदर्धं स्यात्तदर्धं वा विधीयते॥४५॥
वस्त्राणि च प्रधानस्य क्षेत्रभूषणगोधनम्। उत्सवश्च प्रकर्तव्यो होमयागबलिः क्रमात्॥४६॥

---

शिवाय या रुद्राध्याय पढ़ते हुये सब साफ करके स्थापित करे। भक्त कलशों को चारों ओर वैदिक मन्त्रों द्वारा स्थापित करे।।३२-३३।। पूर्वोक्त विधि के साथ वेदी के मध्य में उनको स्थापित करे। वह शिव को मध्य में और शिवा देवी को दक्षिण कुंभ पर रखे। स्कन्द को उन दोनों के बीच में रखे। अथवा शिवकुंभ पर ब्रह्मांग को रखे। सुचित्रित स्कन्द कुम्भ पर रखे। या ब्रह्मा को स्कन्द कुम्भ पर रखे और ईश कुम्भ पर विष्णु को रखे। यह ब्रह्माङ्ग शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु और पितामह हैं। ये हृदय आदि और अम्बिका माँ को वेदी के मध्य में पूर्वोक्त स्थापित करे।।३४-३७।। सुगन्धित जल से वर्धनी पात्र को भर दिया जाय और उसमें देवी को स्थापित किया जाय। शिव कुम्भ में सोना, चाँदी और रत्नों को डाल दिया जाय।।३८।। हे सुव्रत! विद्येश्वरों को वर्धनी पात्र में गायत्री और अंग मन्त्रों द्वारा दिशाओं के कुश से पूरित कुम्भ में स्थापित करे। अनन्त ईश अन्य देवताओं को दिशाओं के गोमूत्र से पूरित कुम्भ पर प्रणव से प्रारम्भ करके नमः के अन्त करते हुये स्थापित करे। आठ घड़ों में से प्रत्येक को नवीन वस्त्र से ढक दे।।३९-४०।। सोना, इत्यादि विश्वेशरों के कुम्भों में डाल दें। शिव के सम्मुख गायत्री तथा अंगन्यास मन्त्रों द्वारा हवन किया जाय।।४१।। 'जय' से अन्त और 'स्विष्ट' से समाप्त करते हुये पूर्ववत् करना चाहिये। शिव कुम्भ, वर्धनी के जल से चारों ओर जल का छिड़काव करे और परमेश्वर का सेंचन करे।।४२-४३।। पूर्ववत् स्वस्थ चित्त होकर सव मन्त्रों को पढ़ते हुसे, पूर्ववत् स्नान कराकर पूजन करना चाहिये। एक हजार पणों की उत्तम दक्षिणा दी जानी चाहिये। उसकी आधी या उससे भी आधी अन्य लोगों को दक्षिणा देनी चाहिये यदि ऐसा सम्भव हो।।४४-४५।। वस्त्र, भूमि, भूषण, गायें आदि प्रधान पुजारी को—जो शिव का प्रतिनिधित्व करता है—उसको दिया जाय, एक बड़ा उत्सव किया जाय। होम, याग और बलि उचित

नवाहं वापि सप्ताहमेकाहं च त्र्यहं तथा। होमश्च पूर्ववत्प्रोक्तो नित्यमभ्यर्च्य शंकरम्॥४७॥
देवानां भास्करादीनां होमं पूर्ववदेव तु। अभ्यंतरे तथा बाह्ये वह्नौ नित्यं समर्चयेत्॥४८॥
य एवं स्थापयेल्लिंगं स एव परमेश्वरः। तेन देवगणा रुद्रा ऋषयोऽप्सरसस्तथा॥४९॥
स्थापिताः पूजिताश्चैव त्रैलोक्यं सचराचरम्॥५०॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे लिङ्गस्थापनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः॥४७॥**

---

क्रम में नव, सात या तीन दिन या केवल एक दिन की जाय। शंकर की पूजा के बाद प्रतिदिन पूर्वोक्त विधि से हवन किया जाय। देवों, भास्करादि की ओर से होम पूर्ववत् किया जाय। आभ्यन्तर और बाह्य अग्नि में उनकी दैनिक पूजा की जाय। जो व्यक्ति इस विधि से लिंग का स्थापन करता है वह परमेश्वर का सानिध्य प्राप्त करता है। जिसने इस प्रकार शिवलिंग की स्थापना की उसके द्वारा देवगण, रुद्र, ऋषि, अप्सरा स्थापित और पूजित हुये। वास्तव में मानो उसके द्वारा चर और अचर तीनों लोक की पूजा की गयी।।४६-५०।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में लिंग का स्थापन नामक सैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४७॥**

## अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः

# गायत्रीभेदाः

सूत उवाच

सर्वेषामपि देवानां प्रतिष्ठामपि विस्तरात्। स्वैर्मंत्रैर्यागकुंडानि विन्यस्यैकैकमेव च॥१॥
स्थापयेदुत्सवं कृत्वा पूजयेच्च विधानतः। भानोः पंचाग्निना कार्यं द्वादशाग्निक्रमेण वा॥२॥
सर्वकुंडानि वृत्तानि पद्माकारणि सुव्रताः। अंबाया योनिकुंडं स्याद्वर्धन्येका विधीयते॥३॥
शक्तीनां सर्वकार्येषु योनिकुंडं विधीयते।
गायत्रीं कल्पयेच्छंभोः सर्वेषामपि यत्नतः। सर्वे रुद्रांशजा यस्मात्संक्षेपेण वदामि वः॥४॥

गायत्रीभेदाः

तत्पुरुषाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तन्नः शिवः प्रचोदयात्॥५॥
गणांबिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥६॥
तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥७॥
तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुंडाय धीमहि। तन्नो दंतिः प्रचोदयात्॥८॥
महासेनाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तन्नः स्कंदः प्रचोदयात्॥९॥

---

## अड़तालीसवाँ अध्याय

# गायत्री के विभिन्न प्रकार

### सूत बोले

अब मैं सब देवों की प्रतिष्ठा (स्थापना) को विस्तार में वर्णन करूँगा। देवताओं के यज्ञ कुण्डों को उनसे सम्बन्धित मन्त्रों से स्थापित किया जाय और विधान के अनुसार उत्सव के बाद देवताओं की स्थापना और पूजा की जानी चाहिये। सूर्य देव की पूजा पंच अग्नि या द्वादश अग्नि से पूर्ण की जाय।।१-२।। हे सुव्रतो! कुण्ड रूप में गोल होने चाहिये। अम्बा का कुण्ड त्रिकोण होना चाहिये। अम्बा के कुण्ड में केवल एक वर्धनी हो। शक्ति से सम्बन्धित सब कृत्यों में कुण्ड त्रिकोण (योनि कुण्ड) होना चाहिये। शिव की गायत्री यत्नपूर्वक सबकी बनाना चाहिये क्योंकि रुद्र के अंश से वह सब उत्पन्न हुई हैं। इसलिए इन सबको मैं संक्षेप में कहता हूँ।।३-४।।

### गायत्री के भेद

हम तत्पुरुष को जानते हैं, हम वाग्शुद्धि का ध्यान करते हैं। शिव हमको मार्ग प्रदर्शित करें।।५।। हम गणाम्बिका को जानते हैं। हम कर्मसिद्धि का ध्यान करते हैं। गौरी हमको मार्ग प्रदर्शित करें।।६।। हम तत्पुरुष को जानते हैं। हम महेश्वर का ध्यान करते हैं। रुद्र हमारा मार्ग प्रदर्शित करें। हम तत्पुरुष को जानते हैं।।७।। हम वक्रतुण्ड का ध्यान करते हैं। दन्ती हमारा मार्ग प्रदर्शित करें।।८।। हम महासेन को जानते हैं। हम वाग्विशुद्धि का ध्यान करते हैं। स्कन्द हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।।९।। हम तीक्ष्णशृंग को जानते हैं, हम वेदपाद का ध्यान

तीक्ष्णशृंगाय विद्महे वेदपादाय धीमहि। तन्नो वृषः प्रचोदयात्॥१०॥
हरिवक्त्राय विद्महे रुद्रवक्त्राय धीमहि। तन्नो नंदी प्रचोदयात्॥११॥
नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्॥१२॥
महांबिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात्॥१३॥
समुद्धृतायै विद्महे विष्णुनैकेन धीमहि। तन्नो धरा प्रचोदयात्॥१४॥
वैनतेयाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि। तन्नौ गरुडः प्रचोदयात्॥१५॥
पद्मोद्भवाय विद्महे वेदवक्त्राय धीमहि। तन्नः स्त्रष्टा प्रचोदयात्॥१६॥
शिवास्यजायै विद्महे देवरूपायै धीमहि। तन्नो वाचा प्रचोदयात्॥१७॥
देवराजाय विद्महे वज्रहस्ताय धीमहि। तन्नः शक्रः प्रचोदयात्॥१८॥
रुद्रनेत्राय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि। तन्नो वह्निः प्रचोदयात्॥१९॥
वैवस्वताय विद्महे दंडहस्ताय धीमहि। तन्नो यमः प्रचादेयात्॥२०॥
निशाचराय विद्महे खड्गहस्ताय धीमहि। तन्नो निर्ऋतिः प्रचोदयात्॥२१॥
शुद्धहस्ताय विद्महे पाशहस्ताय धीमहि। तन्नो वरुणः प्रचोदयात्॥२२॥
सर्वप्राणाय विद्महे यष्टिहस्ताय धीमहि। तन्नो वायुः प्रचोदयात्॥२३॥
यक्षेश्वराय विद्महे गदाहस्ताय धीमहि। तन्नो यक्षः प्रचोदयात्॥२४॥
सर्वेश्वराय विद्महे शूलहस्ताय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥२५॥

---

करते हैं। वृष मेरा मार्ग प्रदर्शित करे।।१०।। हम हरिवक्त्र को जानते हैं, हम रुद्रवक्त्र का ध्यान करते हैं। नन्दी हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।।११।। हम नारायण को जानते हैं, हम वासुदेव का ध्यान करते हैं। विष्णु हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।।१२।। हम महाम्बिका को जानते हैं, हम कर्मसिद्धि का ध्यान करते हैं। लक्ष्मी मेरा मार्ग प्रदर्शित करे।।१३।। हम समुद्धृता को जानते हैं और समुद्धृता को ध्यान करते हैं जो केवल विष्णु से पूजित हैं, अतः धरा हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।।१४।। हम वैनतेय को जानते हैं, हम सुवर्णपक्ष का ध्यान करते हैं, गरुण हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।।१५।। हम पद्मज को जानते हैं, हम वेद वक्त्र का ध्यान करते हैं, विश्व के स्त्रष्टा ब्रह्मा हमारा मार्गदर्शन करे।।१६।। हम शिवास्यजा को जानते हैं, हम वेदरूपा का ध्यान करते हैं, वाचा हमारा मार्गदर्शन करे।।१७।। हम देवताओं के राजा इन्द्र को जानते हैं, हम वज्रहस्त का ध्यान करते हैं, अतः शक्र हमारा मार्गदार्शन करे।।१८।। हम रुद्रनेत्र को जानते हैं, हम शक्तिहस्त का ध्यान करते हैं, अग्निदेव हमारा मार्गदर्शन करें।।१९।। हम वैवस्वत को जानते हैं, हम दण्डहस्त यम का ध्यान करते हैं, यम हमारा मार्ग दर्शन करें।।२०।। हम निशाचर को जानते हैं, हम खड्गहस्त का ध्यान करते हैं। निर्ऋति हमारा मार्ग दर्शन करें।।२१।। हम शुद्धहस्त को जानते हैं, हम पाशहस्त का ध्यान करते हैं। वरुण हमारा मार्ग प्रदर्शित करें।।२२।। हम सर्वप्राण को जानते हैं, हम यष्टिहस्त का ध्यान करते हैं। वायु हमारा मार्ग प्रदर्शित करे।।२३।। हम यक्षेश्वर को जानते हैं, हम गदाहस्त का ध्यान करते हैं। यक्ष हमारा मार्गदर्शन करें।।२४।। हम सर्वेश्वर को जानते हैं, हम शूलहस्त

कात्यायन्यै विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्॥२६॥
एवं प्रभिद्य गायत्रीं तत्तदेवानुरूपतः। पूजयेत् स्थापयेत्तेषामासनं प्रणवं स्मृतम्॥२७॥
अथवा विष्णुमतुलं सूक्तेन पुरुषेण वा। विष्णुं चैव महाविष्णुं सदाविष्णुमनुक्रमात्॥२८॥
स्थापयेद्देवगायत्र्या परिकल्प्य विधानतः। वासुदेवः प्रधानस्तु ततः संकर्षणः स्वयम्॥२९॥
प्रद्युम्नो ह्यनिरुद्धश्च मूर्तिभेदास्तु वै प्रभोः। बहूनि विविधानीह तस्य शापोद्भवानि च॥३०॥
सर्वावर्तेषु रूपाणि जगतां च हिताय वै। मत्स्यः कूर्मोऽथ वाराहो नारसिंहोऽथ वामनः॥३१॥
रामो रामश्च कृष्णश्च बौद्धः कल्की तथैव च। तथान्यानि न देवस्य हरेः शापोद्भवानि च॥३२॥
तेषामपि च गायत्रीं कृत्वा स्थाप्य च पूजयेत्। गुह्यानि देवदेवस्य हरेर्नारायणस्य च॥३३॥
विज्ञानानि च यंत्राणि मंत्रोपनिषदानि च। पंच ब्रह्मांगजानीह पंचभूतमयानि च॥३४॥
नमो नारायणायेति मंत्रः परमशोभनः। हरेरष्टाक्षराणीह प्रणवेन समासतः॥३५॥
ओंनमो वासुदेवाय नमः संकर्षणाय च। प्रद्युम्नाय प्रधानाय अनिरुद्धाय वै नमः॥३६॥
एवमेकेन मंत्रेण स्थापयेत्परमेश्वरम्। बिंबानि यानि देवस्य शिवस्य परमेष्ठिनः॥३७॥
प्रतिष्ठा चैव पूजा च लिंगवन्मुनिसत्तमाः। रत्नविन्याससहितं कौतुकानि हरेरपि॥३८॥
अचले कारयेत्सर्वं चलेष्येवं विधानतः। तन्नेत्रोन्मीलनं कुर्यान्नेत्रमंत्रेण सुव्रताः॥३९॥
क्षेत्रप्रदक्षिणं चैव आरामस्य पुरस्य च। जलाधिवासनं चैव पूर्ववत्परिकीर्तितम्॥४०॥

---

का ध्यान करते हैं। रुद्र हमारा मार्गदर्शन करें।।२५।। हम कात्यायनी को जानते हैं, हम कन्याकुमारी का ध्यान करते हैं, दुर्गा हमारा मार्गदर्शन करें।।२६।। इस प्रकार गायत्री देवताओं के अनुसार अलग-अलग हैं। उनकी प्रतिष्ठा की जाय और पूजा की जाय। उनका आसन प्रणव हो।।२७।। अथवा भक्त पुरुष सूक्त द्वारा अतुलनीय विष्णु की स्थापना करे। भक्त विष्णु, महाविष्णु और सदा विष्णु को क्रमशः देव गायत्री मन्त्र के उच्चारण द्वारा उनकी स्थापना करे, वासुदेव प्रधान देवता हैं। संकर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध प्रभु के पृथक्-पृथक् रूप (मूर्ति) हैं। भृगु के श्राप के कारण उनके रूप विविध हैं।।२८-३०।। लोगों के कल्याण के लिए यह सब रूप हैं। वे युगों के प्रत्येक चक्र में होते हैं। जैसे—मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, राम, परशुराम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। भृगु के शाप के कारण विष्णु के अन्य रूप भी हैं।।३१-३२।। इनके गायत्री रूपों की स्थापना करके पूजा करनी चाहिये। पूर्णज्ञान, यन्त्र, मन्त्र और उपनिषद् विष्णु के गुह्य हैं। विष्णु, नारायण पंचाग्नि से उत्पन्न उनकी पहचान पंचभूतों से होती है। विष्णु का मन्त्र नमोनारायण प्रणव लगाकर "ॐ नमो नारायणाय" परम पवित्र है। यह अष्टाक्षर मन्त्र है।।३३-३५।। और मन्त्र ये हैं। जैसे ॐ नमो वासुदेवाय, ॐ नमः संकर्षणाय, ॐ प्रद्युम्नाय, ॐ नमः प्रधानाय, ॐ नमः अनुरुद्धाय।।३६।। इसी तरह एक मन्त्र से भक्त परमेश्वर की स्थापना करे। परमेष्ठी शिव देवता की मूर्तियों की प्रतिष्ठा करे और लिंग के समान उनकी पूजा करे। हे श्रेष्ठ मुनियों! पवित्र शुभ रत्न जटित सूत्रों से विष्णु की भी पूजा करे।।३७-३८।। प्रत्येक अचल लिंग में सब पूजा की जाय और चल लिंग में भी विधानपूर्वक पूजा की जाय। हे सुव्रतो! नेत्र मन्त्र द्वारा नेत्रों को खुला रखा जाय।।३९।। पहले की तरह क्षेत्र की प्रदक्षिणा पार्क और नगर प्रदक्षिणा तथा जल में स्थापन कार्य भी पूर्ववत् किया जाय।।४०।।

कुंडमंडपनिर्माणं शयनं च विधीयते। हुत्वा नवाग्निभागेन नवकुंडे यथाविधि॥४१॥
अथवा पंचकुंडेषु प्रधाने केवलेऽथ वा। प्रतिष्ठा कथिता दिव्या पारंपर्यक्रमागता॥४२॥
शिलोद्भवानां बिंबानां चित्राभासस्य वा पुनः।
जलाधिवासनं प्रोक्तं वृषेंद्रस्य प्रकीर्तितम्॥४३॥
प्रासादस्य प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठा परिकीर्तिता। प्रासादांगस्य सर्वस्य यथांगानां तनोरिव॥४४॥
वृषाग्निमातृविघ्नेशकुमारानपि यत्नतः। श्रेष्ठां दुर्गां तथा चंडीं गायत्र्या वै यथाविधि॥४५॥
प्रागाद्यं स्थापयेच्छंभोरष्टावरणमुत्तमम्। लोकपालगणेशाद्यानपि शंभोः प्रविन्यसेत्॥४६॥
उमा चंडी च नंदी च महाकालो महामुनिः। विघ्नेश्वरो महाभृंगी स्कंदः सौम्यादितः क्रमात्॥४७॥
इंद्रादीन्स्वेषु स्थानेषु ब्रह्माणं च जनार्दनम्। स्थापयेच्चैव यत्नेन क्षेत्रेशं वैशगोचरे॥४८॥
सिंहासने ह्यनंतादीन् विद्येशामपि च क्रमात्। स्थापयेत्प्रणवेनैव गुह्यांगादीनि पंकजे॥४९॥
एवं संक्षेपतः प्रोक्तं चलस्थापनसुत्तमम्। सर्वेषामपि देवानां देवीनां च विशेषतः॥५०॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागेऽष्टचत्वारिंशोऽध्याय॥४८॥**

---

कुण्ड और मण्डप का निर्माण और देवता की मूर्ति का शयन भी किया जाय। ये धर्मिक कृत्य निर्धारित हैं। केवल मुख कुण्ड में या पाँच कुण्ड या नौ पवित्र अग्नि के साथ नौ कुण्डों में होम किया जाय। परम्परा के अनुसार यह दिव्य प्रतिष्ठा कही गयी है।।४१-४२।। जलाधिवासन कृत्य पत्थर की चट्टान से काटकर बनायी गयी मूर्तियों और चित्र की तरह तक्षण की गयी सब मूर्तियों का करे। नन्दी बैल के लिए भी जलाधिवासन करने की संस्तुति की गयी है।।४३।।

प्रासाद (शिवालय) की प्रतिष्ठा में और उनके भागों की प्रतिष्ठा में भी उसी तरह प्रतिष्ठा (स्थापन) की जाय जैसे शरीर के अंगों की। गायत्री मन्त्र के जप के द्वारा यथाविधि वृष, अग्नि, मातृगण, विघ्नेश, कुमार, दुर्गा देवी और चण्डी की प्रतिष्ठा की जाय। पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके आठों दिग्पालों, आठों लोकपालों की प्रतिष्ठा (स्थापना) की जाय। आठों दिशाओं, आठों विदिशाओं गणेश आदि की भी स्थापना शिव के सम्मान में मूर्तियाँ रखी जाय।।४४-४६।। उत्तर दिशा में क्रम से उमा, चण्डी, नन्दी, महाकाल, महामुनि, विघ्नेश्वर, महाभृंगी, स्कन्द और सौम्य आदि की पूजा की जाय। भक्त इन्द्र और अन्य की मूर्तियों को भी अपने-अपने उचित स्थान में रखे। ब्रह्मा, विष्णु और अपने वेष से देखने में चमकते हुए क्षेत्रेश को, उत्तर पूर्व में स्थापित करे। अनन्त और अन्य और विघ्नेशों को प्रणव के उच्चारण के साथ सिंहासन पर उचित क्रम से स्थापित करे और गुप्त अंगों को कमल में स्थापित करे। इस प्रकार देवताओं और देवियों की चल स्थापना का उत्तम प्रकार आप लोगों को संक्षेप में मैंने बताया।।४७-५०।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में गायत्री के विभिन्न प्रकार नामक अड़तालीसवाँ अध्याय समाप्त॥४८॥**

## एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः

# अघोरेशप्रतिष्ठा

ऋषय ऊचुः

अघोरेशस्य माहात्म्यं भवता कथितं पुरा। पूजां प्रतिष्ठां देवस्य भगवन्वक्तुमर्हसि॥१॥

सूत उवाच

अघोरेणांगयुक्तेन विधिवच्च विशेषतः। प्रतिष्ठालिंगविधिना नान्यथा मुनिपुंगवाः॥२॥
तथाग्निपूजां वै कुर्याद्यथा पूजा तथैव च। सहस्त्रं वा तदर्धं वा शतमष्टोत्तरं तु वा॥३॥
तिलैर्होमः प्रकर्तव्यो दधिमध्वाज्यसंयुतैः। घृतसक्तुमधूनां च सर्वदुःखप्रमार्जनम्॥४॥
व्याधीनां नाशनं चैव तिलहोमस्तु भूतिदः। सहस्त्रेण महाभूतिः शतेन व्याधिनाशनम्॥५॥
सर्वदुःखविनिर्मुक्तो जपेन च न संशयः। अष्टोत्तरशतेनैव त्रिकाले च यथाविधि॥६॥
अष्टोत्तरसहस्त्रेण षण्मासाज्जायते ध्रुवम्। सिद्धयो नैव संदेहो राज्यमंडलिनामपि॥७॥
सहस्त्रेण ज्वरो याति क्षीरेण च जुहोति यम्। त्रिकालं मासमेकं तु सहस्त्रं जुहुयात्पयः॥८॥

---

## उन्चासवाँ अध्यायः

# अघोरेश की प्रतिष्ठा (स्थापना)

**ऋषिगण बोले**

अघोरेश का माहात्म्य आपने पहले वर्णन किया था। हे भगवन्! उनकी पूजा और प्रतिष्ठा की विधि अब हम लोगों को बताने की कृपा करें।।१।।

**सूत बोले**

हे श्रेष्ठ मुनियों! अघोरेश की प्रतिष्ठा लिंग के समान विधिवत् करनी चाहिए। इसके लिए कोई अन्य विधि नहीं है।।२।। भक्त को पवित्र अग्नि की पूजा करनी चाहिए। उनकी पूजा पहले की भाँति की जाय। एक हजार या उसका आधा या एक सौ आठ बार होम किया जाय। होम तिल के बीज, दही, मधु और घी मिलाकर करने से सब दुःखों का मार्जन हो जाता है।।३-४।। यह व्याधियों का नाशक है। तिल के बीजों से हवन समृद्धि देता है। एक हजार बार का हवन बहुत ऐश्वर्य देता है और सौ बार के होम से रोगों का नाश होता है।।५।। विधान के अनुसार एक सौ आठ बार दिन में तीन बार जप करने से व्यक्ति सब दुःखों से छुटकारा पा जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। यदि एक सौ आठ बार जप किया जाय तो छः मास के भीतर व्यक्ति को सिद्धि मिल जाती है। यहाँ तक कि राजाओं, प्रदेशों के शासकों को भी जप करने से सिद्धियाँ मिल जाती हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं।।६-७।। एक हजार बार जप करने से ज्वर दूर हो जाता है। अगर भक्त प्रतिदिन तीन काल जप करके हजार बार दूध से लगातार हवन करता है तो एक महीने के भीतर उसको महा सौभाग्य प्राप्त होता है। अगर भक्त एक

मासेन सिद्ध्यते तस्य महासौभाग्यमुत्तमम्। सिद्ध्यते चाब्दहोमेन क्षौद्राज्यदधिसंयुतम्॥९॥
यवक्षीराज्यहोमेन जातितंडुलकेन वा। प्रीयेत भगवानीशो ह्यघोरः परमेश्वरः॥१०॥
दध्ना पुष्टिर्नृपाणां च क्षीरहोमेन शांतिकम्। षण्मासं तु घृतं हुत्वा सर्वव्याधिविनाशनम्॥११॥
राजयक्ष्मा तिलैर्होमान्नश्यते वत्सरेण तु। यवहोमेन चायुष्यं घृतेन च जयस्तदा॥१२॥
सर्वकुष्ठक्षयार्थं च मधुनाक्तैश्च तंडुलैः। जुहुयादयुतं नित्यं षण्मासान्नियतः सदा॥१३॥
आज्यं क्षीरं मधुश्चैव मधुरत्रयमुच्यते। समस्तं तुष्यते तस्य नाशयेद्वै भगंदरम्॥१४॥
केवलं घृतहोमेन सर्वरोगक्षयः स्मृतः। सर्वव्याधिहरं ध्यानं स्थापनं विधिनार्चनम्॥१५॥
एवं संक्षेपतः प्रोक्तमघोरस्य महात्मनः। प्रतिष्ठा यजनं सर्वं नंदिना कथितं पुरा॥१६॥
ब्रह्मपुत्राय शिष्याय तेन व्यासाय सुव्रताः॥१७॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः॥४९॥**

---

साल तक मधु, घी और दही एक मे मिलाकर होम करता है तो वह सिद्धियों को प्राप्त करता है। अगर दूध, घी या उत्तम चावल के द्वारा होम किया जाय तो अघोर देवता बहुत प्रसन्न होते हैं।।८-१०।। दही से होम करने से राजा समृद्धि को प्राप्त करता है। दूध से हवन करने से व्यक्ति को शान्ति मिलती है। छः मास तक घी से होम करने से सब व्यधियाँ दूर हो जाती हैं।।११।। एक साल तिल से होम करने से राजयक्ष्मा (टी.वी.) नष्ट हो जाती है। जौ के होम करने वाला दीर्घ आयु प्राप्त करता है और घी से होम करने से जय प्राप्त होती है।।१२।। सब प्रकार के कोढ़ को दूर करने के लिए मधु से सने हुए चावलों से नित्य छः महीने एक लाख बार होम करने से कोढ़ दूर हो जाता है।।१३।। केवल घी, दूध और मधु को मधुत्रय कहा जाता है। इन तीनों को सेवन करने से भगन्दर नाश हो जाता है।।१४।। केवल घी द्वारा होम करने से सब रोगों का क्षय हो जाता है। ध्यान, स्थापन और विधिपूर्वक पूजन सब व्याधियों को दूर करता है। महान् आत्मा अघोर की प्रतिष्ठा, पूजन ये सब संक्षेप में पहले नन्दी ने कहा था। हे सुव्रत! नन्दी ने सनत्कुमार से कहा था जो कि उनके शिष्य थे। उन्होंने व्यास को यह बताया था।।१५-१७।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तरभाग में अघोरेश की प्रतिष्ठा (स्थापना) नामक उनचासवाँ अध्याय समाप्त॥४९॥**

पंचाशत्तमोऽध्यायः

# अघोरमंत्रस्य वैशिष्ट्यम्

ऋषय ऊचुः

निग्रहः कथितस्तेन शिववक्त्रेण शूलिना। कृतापराधिनां तं तु वक्तुमर्हसि सुव्रत॥१॥
त्वया न विदितं नास्ति लौकिकं वैदिकं तथा। श्रौतं स्मार्तं महाभाग रोमहर्षण सुव्रत॥२॥

सूत उवाच

पुरा भृगुसुतेनोक्तो हिरण्याक्षाय सुव्रताः। निग्रहोऽघोरशिष्येण शुक्रेणाक्षयतेजसा॥३॥
तस्य प्रसादाद्दैत्येंद्रो हिरण्याक्षः प्रतापवान्। त्रैलोक्यमखिलं जित्वा सदेवासुरमानुषम्॥४॥
उत्पाद्य पुत्रं गणपं चांधकं चारुविक्रमम्। रराज लोके देवेन वराहेण निषूदितः॥५॥
स्त्रीबाधां बालबाधां च गवामपि विशेषतः। कुर्वतो नास्ति विजयो मार्गेणानेन भूतले॥६॥
तेन दैत्येन सा देवी धरा नीता रसातलम्। तेनाघोरेण देवेन निष्फलो निग्रहः कृतः॥७॥
संवत्सरसहस्रांते वराहेण च सूदितः। तस्मादघोरसिद्ध्यर्थं ब्राह्मणान्नैव बाधयेत्॥८॥
स्त्रीणामपि विशेषेण गवामपि न कारयेत्। गुह्याद्गुह्यतमं गोप्यमतिगुह्यं वदामि वः॥९॥

---

पचासवाँ अध्याय

# अघोर मन्त्र की विशेषता

**ऋषिगण बोले**

शुभ मुख वाले भगवान शंकर द्वारा वर्णन किये गये अपराधियों पर नियन्त्रण और रोक कैसे हो। यह आप हम लोगों को बताएँ। हे रोमहर्षण! हे सुव्रत! लौकिक और वैदिक ऐसा कुछ नहीं है जो आप को ज्ञात न हो। आप पूर्ण रूप से श्रुति और स्मृति में कथित धार्मिक कृत्यों को जानते हैं।।१-२।।

**सूत बोले**

हे सुव्रत! अघोर के शिष्य और भृगु के पुत्र तेजस्वी शुक्र के द्वारा हिरण्याक्ष को निग्रह और रोक की विधि पहले बतायी गयी थी। उनकी कृपा से हिरण्याक्ष दैत्यों का प्रतापी नेता हो गया। उसने देवता असुर और मनुष्यों सहित तीनों लोकों को जीत लिया। उसके एक सुन्दर और पराक्रमी गणों का स्वामी अन्धक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने जगत पर शासन किया। अन्त में वह वराह के द्वारा मारा गया।।३-५।। जो स्त्रियों की, बालकों की विशेष रूप से गायों की हत्या करता है या बाधा पहुँचाता है, ऐसा करने वाले को पृथ्वी पर इस मार्ग से इस संसार में विजय नहीं मिलती है।।६।। उस दैत्य ने इस देवी पृथ्वी को रसातल पहुँचा दिया किन्तु अघोर देवता ने उसके इस निग्रह (नियन्त्रण) को निष्फल कर दिया। एक हजार वर्ष बाद वराह द्वारा उसका वध कर दिया गया। अतः अघोर मन्त्र की सिद्धि के लिए किसी व्यक्ति को ब्राह्मणों, स्त्रियों या गायों को बाधा नहीं पहुँचानी चाहिए। यह महान रहस्य की बात नहीं बल्कि रहस्यों की बात मैं तुमसे कह रहा हूँ।।७-९।। यह अघोर मन्त्र

आततायिनमुद्दिश्य कर्तव्यं नृपसत्तमैः। ब्राह्मणेभ्यो न कर्तव्यं स्वराष्ट्रेशस्य वा पुनः॥१०॥
अतीव दुर्जये प्राप्ते बले सर्वे निषूदिते। अधर्मयुद्धे संप्राप्ते कुर्याद्विधिमनुत्तमम्॥११॥
अघृणेनैव कर्तव्यो ह्यघृणेनैव कारयेत्। कृतमात्रे न संदेहो निग्रहः संप्रजायते॥१२॥
लक्षमात्रं पुमाञ्जप्त्वा अघोरं घोररूपिणम्। दशांशं विधिना हुत्वा तिलेन द्विजसत्तमाः॥१३॥
संपूज्य लक्षपुष्पेण सितेन विधिपूर्वकम्। बाणलिंगेऽथवा वह्नौ दक्षिणामूर्तिमाश्रितः॥१४॥
सिद्धमंत्रोऽन्यथा नास्ति द्रष्टा सिद्ध्यादयः पुनः। सिद्धमंत्रः स्वयं कुर्यात्प्रेतस्थाने विशेषतः॥१५॥
मातृस्थानेऽपि वा विद्वान्वेदवेदांगपारगः। केवलं मंत्रसिद्धो वा ब्राह्मणः शिवभावितः॥१६॥
कुर्याद्विधिमिमं धीमानात्मनोऽर्थं नृपस्य वा। शूलाष्टकं न्यसेद्विद्वान् पूर्वादीशानकांतकम्॥१७॥
त्रिशिखं च त्रिशिखं च त्रिशूलं च चतुर्विंशच्छिखाग्रतः।
अघोरविग्रहं कृत्वा संकलीकृतविग्रहः॥१८॥
सर्वनाशकरं ध्यात्वा सर्वकर्माणि कारयेत्। कालग्निकोटिसंकाशं स्वदेहमपि भावयेत्॥१९॥
शूलं कपालं पाशं च दंडं चैव शरासनम्। बाणं डमरुकं खड्गमष्टायुधमनुक्रमात्॥२०॥
अष्टहस्तश्च वरदो नीलकंठो दिगंबरः। पंचतत्त्वसमारूढो ह्यर्धचंद्रधरः प्रभुः॥२१॥

---

की सिद्धि का धार्मिक कृत्य शक्तिशाली राजाओं द्वारा दुर्जय की स्थिति आने और भारी सामूहिक हत्याओं (कत्लेआम) के विरुद्ध की जानी चाहिये। इस मन्त्र का अभ्यास ब्राह्मणों के या अपने राष्ट्र के स्वामी के विरुद्ध न करना चाहिये। यह सर्वोत्तम अनुष्ठान तब करना चाहिये जब अधर्म युद्ध की स्थिति आ जाय। यह धार्मिक कृत्य तब पूरा किया जबकि निर्दयी व्यक्ति द्वारा दया के पात्र पर अत्याचार किया जाय। न दयालु भक्त यह करे न दयालु व्यक्ति से कराए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिस क्षण यह अनुष्ठान किया जाता है, निग्रह की शक्ति उसी समय प्राप्त हो जाती है।।१०-१२।। हे उच्च ब्राह्मणों! इस मन्त्र के साधक को घोर रूप वाले अघोर मन्त्र का सौ हजार बार जप करना चाहिये। इसके दसवें भाग अर्थात् दस हजार बार तिल का होम करना चाहिए। साधक को सौ हजार सफेद फूलों द्वारा बाणलिंग पर या पवित्र अग्नि पर पूजा करनी चाहिये। इससे मन्त्र सिद्ध हो जाता है। नहीं तो वह न द्रष्टा होता है और न उसको सिद्धियाँ ही प्राप्त होती हैं। स्वयं विशेष रूप से प्रेत स्थान में मन्त्र को सिद्ध करना चाहिये। केवल विद्वान और बुद्धिमान ब्राह्मण को यह अनुष्ठान कृत्य करना चाहिये जिसको कि मन्त्र सिद्ध हो या जो शिव का भक्त हो। बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिये कि यह अपने लिए करे या राजा के लिए करे। बुद्धिमान व्यक्ति पूर्व से आरम्भ करके उत्तर-पूर्व कोण पर समाप्त होने वाले आठों दिशाओं में आठ शूल स्थापित करे।।१३-१७।। त्रिशूलों के चौबीस किनारों के सिरों पर तीन शिखा वाले त्रिशूल बनावे। ये अघोर के त्रिशूलधारी रूप हैं। उन सब रूपों को (विग्रहों को) संकलित कर दे या एक स्थान पर इकट्ठा करे। सब नाश करने वाले देवता अघोर का ध्यान करने के बाद इस अनुष्ठान को करे। अपने शरीर को भी करोड़ कालाग्नि के समान अनुभव करना चाहिये।।१८-१९।। आठ आयुध शूल, कपाल, पाश, दण्ड, धनुष, बाण, डमरू, खड्ग (तलवार) क्रम से रखे।।२०।। नीलकंठ के आठ भुजाएँ होती हैं, वह वरदाता है, वह दिगम्बर

दंष्ट्राकरालवदनो रौद्रदृष्टिर्भयंकरः। हुंफट्कारमहाशब्दशब्दिताखिलदिङ्मुखः॥२२॥
त्रिनेत्रं नागपाशेन सुबद्धमुकुटं स्वयम्। सर्वाभरणसंपन्नं प्रेतभस्मावगुंठितम्॥२३॥
भूतैः प्रेतैः पिशाचैश्च डाकिनीभिश्च राक्षसैः। संवृतं गजकृत्त्या च सर्पभूषणभूषितम्॥२४॥
वृश्चिकाभरणं देवं नीलनीरदनिस्वनम्। नीलांजनाद्रिसंकाशं सिंहचर्मोत्तरीयकम्॥२५॥
ध्यायेदेवमघोरेशं घोरघोरतरं शिवम्। षट्विंशदुक्तमात्राभिः प्राणायामेन सुव्रताः॥२६॥
महामुद्रासमायुक्तः सर्वकर्माणि कारयेत्। सिद्धमंत्रश्चिताग्नौ वा प्रेतस्थाने यथाविधि॥२७॥
स्थापयेन्मध्यदेशे तु ऐंद्रे याम्ये च वारुणे। कौबेर्यां विधिवत्कृत्वा होमकुंडानि शास्त्रतः॥२८॥
आचार्यो मध्यकुंडे तु साधकाश्च दिशासु वै। परिस्तीर्य विलोमेन पूर्ववच्छूलसंभृतः॥२९॥
कालाग्निपीठमध्यस्थः स्वयं शिष्यैश्च तादृशैः। ध्यात्वा घोरमघोरेशं द्वात्रिंशाक्षरसंयुतम्॥३०॥
विभीतकेन वै कृत्वा द्वादशांगुलमानतः। पीठे न्यस्य नृपेंद्रस्य शत्रुमंगारकेण तु॥३१॥
कुंडस्याधः खनेच्छत्रुं ब्राह्मणः क्रोधमूर्च्छितः। अधोमुखोर्ध्वपादं तु सर्वकुंडेषु यत्नतः॥३२॥
श्मशानांगारमानीय तुषेण सह दाहयेत्। तत्राग्निं स्थापयेत्तूष्णीं ब्रह्मचर्यपरायणः॥३३॥
मायूरास्त्रेण नाभ्यां तु ज्वलनं दीपयेत्ततः। कंचुकं तुषसंयुक्तैः कार्पासास्थिसमन्वितैः॥३४॥

---

(नग्न) है, वह पाँच तत्त्वों पर सवार है और स्वयं अर्धचन्द्रधारी है।।२१।। उनका मुख कुछ टेढे दाँतों के कारण कराल है, वह भयंकर है, उनकी दृष्टि रौद्र है। वह सम्पूर्ण दिशाओं को हुं फट् की ध्वनि से गुंजित करने वाले हैं।।२२।। भक्त अघोरेश शिव पर इस विधि से ध्यान करे। उनके तीन नेत्र हैं, वह नाग पाश से अपने मुकुट को बाँधे हैं, सब आभूषणों से भूषित हैं, वह चिता की भस्म को सारे शरीर में चुपड़े हैं। वह भूतों, प्रेतों, पिशाचों, डाकिनियों और राक्षसों द्वारा घिरे हुए हैं। वह गज चर्म को लपेटे हुए हैं। वह सर्प के भूषण से भूषित हैं। वह बीछियों को आभूषण की तरह धारण किये हैं। नीले बादल की तरह उनकी आवाज है। वह नीले आँजन की पहाड़ की तरह लग रहे हैं। वह सिंह के चमड़े को चादर की तरह लपेटे हुये हैं। वह बहुत भयानक हैं। हे सुव्रत! भक्त अघोर के इस रूप का ध्यान करके पूर्व वर्णित छत्तीस मन्त्रों से प्राणायाम करे। वह महामुद्रा को दिखावे और तब सब पवित्र अनुष्ठान करे।।२३-२६।।

सिद्ध मंत्र साधक मूर्ति को चिता की अग्नि या प्रेत स्थान में स्थापित करे। वह पांच होमकुंड बनावे। एक मध्य में और एक प्रत्येक पूर्व, दक्षिण, पश्चिम में और उत्तर में शास्त्र की विधि से बनावे। आचार्य मध्य कुंड के सामने बैठे। साधक लोग दिशाओं के कुंडों के सामने बैठें। वह कुशों को विलोम क्रम में फैलाकर शूल को पकड़ लें। वह स्वयं कालक्रम के बीच के आसन पर बैठे। उनके शिष्य साधक अपने आसन पर बैठें। बत्तीस अक्षरों वाले अधीर मंत्र से घोर रूप अघोर का ध्यान करे। विभीतक (बहेरा) की शाखा की बारह अंगुल नाप के टुकड़े कर लें। अपने राजा के शत्रु का पुतला तैयार करे। कुंड में कोयले के साथ पीठ पर रख दे। उसका चेहरा (मुख) नीचे की ओर और पैर ऊपर की ओर हो। तब वह क्रोध से भरी मुद्रा में कुंड को खोदे और राजा के शत्रु के पुतले को रखे। श्मशान से अग्नि ले आकर धान की भूसी से जला दे। साधक ब्रह्मचर्य से युक्त होकर मौन होकर वहाँ अग्नि को स्थापित करे।।२७-३३।। तब वह कुंड

रक्तवस्त्रसमं मिश्रैर्होमद्रव्यैर्विशेषतः। हस्तयंत्रोद्भवैस्तैलैः सह होमं तु कारयेत्॥३५॥
अष्टोत्तरसहस्रं तु होमयेदनुपूर्वशः। कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां समारभ्य यथाक्रमम्॥३६॥
अष्टम्यंतं तथांगारमंडलस्थानवर्जितः। एवं कृते नृपेंद्रस्य शत्रवः कुलजैः सह॥३७॥
सर्वदुःखसमोपेताः प्रयांति यमसादनम्। मंत्रेणानेन चादाय नृकपाले नखं तथा॥३८॥
केशं नृणां तथांगारं तुषं कंचुकमेव च। चीरच्छटां राजधूलीं गृहसंमार्जनस्य वा॥३९॥
विषसर्पस्य दंतानि वृषदंतानि यानि तु। गवां चैव क्रमेणैव व्याघ्रदंतनखानि च॥४०॥
तथा कृष्णमृगाणां च बिडालस्य च पूर्ववत्। नकुलस्य च दंतानि वराहस्य विशेषतः॥४१॥
दंष्ट्राणि साधयित्वा तु मंत्रेणानेन सुव्रताः। जपेदष्टोत्तरशतं मंत्रं चाघोरमुत्तमम्॥४२॥
तत्कपालं नखं क्षेत्रे गृहे वा नगरेऽपि वा। प्रेतस्थानेऽपि वा राष्ट्रे मृतवस्त्रेण वेष्टयेत्॥४३॥
शत्रोरष्टमराशौ वा परिविष्टे दिवाकरे। सोमे वा परिविष्टे तु मंत्रेणानेन सुव्रताः॥४४॥
स्थाननाशो भवेत्तस्य शत्रोर्नाशश्च जायते। शत्रुं राज्ञः समालिख्य गमने समवस्थिते॥४५॥
भूतले दर्पणप्रख्ये वितानोपरि शोभिते। चतुस्तोरणसंयुक्ते दर्भमालासमावृते॥४६॥
वेदाध्ययनसंपन्ने राष्ट्रे वृद्धिप्रकाशके। दक्षिणेन तु पादेन मूर्ध्नि संताडयेत्स्वयम्॥४७॥

---

की नाभि में मयूरास्त्र से लाल वस्त्र के कंचुक को बिनौले आदि भूसी से अग्नि को जला दे (प्रज्वलित कर दे)। तब वह हाथ के यन्त्र से निकाले गये तेल को अन्य होम सामग्री मिलाकर होम करे।।३४-३५।। वह कृष्णपक्ष में चतुर्दशी से आरम्भ करके अष्टमी तक क्रमशः एक हजार आठ बार होम करे। वह जलते कोयले की जगह और उसके मंडप (घेरे) की जगह को न छुए। यदि यह अनुष्ठान पूरा किया तो राजा के शत्रु अपने परिवार सहित सब दुःखों से दुःखित हो मर जायेंगे।।३६-३७।। अघोर के मंत्र को जपते हुए भक्त ये सामग्री मरे मनुष्य की खोपड़ी में इकट्ठा करे। नाखून, मनुष्य का बाल, कोयला, भूसी, कंचुक, झाड़ू से उड़ी हुई सड़क की धूलि, जहरीले साँप की केंचुल, बैल का दाँत और गाय के दाँत, बाघ के दाँत और नाखून, काले हिरन और बिल्ली, न्योले और सुअर के दाँत। हे सुव्रत! इन सब चीजों को एकत्र करके उत्तम अघोर मंत्र को एक सौ आठ बार जपे।।३८-४२।। सब चीजों से भरी खोपड़ी को कफन के कपड़े के टुकड़े से लपेट ले। उन सब चीजों को खेत, घर, श्मशान घाट, नगर या शत्रु के देश में गाड़ दे।।४३।। जब सूर्य ग्रहण लगा हो या चन्द्र आठवीं राशि में हो, यह मंत्र को जपना चाहिए। ऐसा करने पर शत्रु अपने स्थान (पद) से भ्रष्ट होगा और उसका नाश होगा। जब गमन समय हो, राजा के शत्रु के चित्र को भूमि पर खींच ले। उसके दर्पण के तल पर उसका चित्र दिखाई पड़े। उस स्थान पर चाँदनी (वितान) तान दिया जाय। चार तोरण कर कुश की माला लटका दे। राजधानी की समृद्धि का सूचक वेद-मंत्रोच्चारण होना चाहिए। भक्त तब अपने दाहिने पैर से शत्रु के सिर पर ठोकर मार दे। जब ऐसा किया जाय तो राजा के शत्रु का नाश हो जाता है। यदि कोई दुष्ट व्यक्ति अपने ही राजा के विरुद्ध यह अभिचार करेगा तो वह स्वयं अपने परिवार सहित मर जायेगा। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने राजा की रक्षा करनी चाहिए जो कि

एवं कृते नृपेंद्रस्य शत्रुनाशो भविष्यति। स्वराष्ट्रपतिमुद्दिश्य यः कुर्यादाभिचारिकम्॥४८॥
स आत्मानं निहत्यैव स्वकुलं नाशयेत्कुधीः। तस्मात्स्वराष्ट्रगोप्तारं नृपतिं पालयेत्सदा॥४९॥
मंत्रौषधिक्रियाद्यैश्च सर्वयत्नेन सर्वदा। एतद्रहस्यं कथितं न देयं यस्य कस्यचित्॥५०॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पंचाशत्तमोऽध्यायः॥५०॥**

---

अपने प्रजा की मंत्रों, औषधियों और धार्मिक अनुष्ठानों से रक्षा करता है। यह रहस्य जो मैंने आप लोगों को बताया, इस रहस्य को किसी को नहीं देना (बताना) चाहिए।।४४-५०।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में अघोर मंत्र की विशेषता**
**नामक पचासवाँ अध्याय समाप्त॥५०॥**

एकपंचाशत्तमोऽध्यायः

# वज्रवाहनिका विद्या

निग्रहोऽघोररूपोऽयं कथितोऽस्माकमुत्तमम्। वज्रवाहनिकां विद्यां वक्तुमर्हसि सत्तम॥१॥
वज्रवाहनिका नाम सर्वशत्रुभयंकरी। अनया सेचयेद्वज्रं नृपाणां साधयेत्तथा॥२॥
वज्रं कृत्वा विधानेन तद्वज्रमभिषिच्य च। अनया विद्यया तस्मिन्विन्यसेत्कांचनेन च॥३॥
ततश्चाक्षरलक्षं च जपेद्विद्वान्समाहितः। वज्री दशांशं जुहुयाद्वज्रकुंडे घृतादिभिः॥४॥
तद्वज्रं गोपयेन्नित्यं दापयेन्नृपतेस्ततः। तेन वज्रेण वै गच्छञ्छत्रूञ्जीयाद्रणाजिरे॥५॥
पुरा पितामहेनैव लब्धा विद्या प्रयत्नतः। देवी शक्रोपकारार्थं साक्षाद्वज्रेश्वरी तथा॥६॥
पुरा त्वष्टा प्रजानाथो हतपुत्रः सुरेश्वरात्। विद्यया हरतः सोममिंद्रवैरेण सुव्रताः॥७॥
तस्मिन्यज्ञे यथाप्राप्तं विधिनोपकृतं हविः। तदैच्छत महाबाहुर्विश्वरूपविमर्दनः॥८॥
मत्पुत्रमवधीः शक्र न दास्ये तव शोभनम्। भागं भागार्हता नैव विश्वरूपो हतस्त्वया॥९॥

---

इक्यावनवाँ अध्याय

# वज्रवाहनिका विद्या

### ऋषिगण बोले

हे सूत! आप ने हम लोगों को अघोर से सम्बन्धित निग्रह का उत्तम और भयानक रूप बताया। हे महामुनि! हमको अब वज्रवाहनिका विद्या के विषय में बतायें।।१।।

### सूत बोले

वज्रवाहनिका विद्या सब शत्रुओं के लिए भयंकर है। राजा के उद्देश्य की पूर्ति के लिए वज्र को मन्त्र से इस मन्त्र से सींचना (सेचन करना) चाहिये। तब राजा को उस वज्र को समर्पित करना चाहिये।।२।। वज्र को तांत्रिक विधानपर्वक बनावे। तब उसको जल से सिंचित करे। इस विद्या से गदा के उस टुकड़े पर मढ़े सोने पर मन्त्र को खोदा जाय।। तब विद्वान भक्त प्रत्येक अक्षर को शुद्ध होकर एक लाख बार जप करे। जिसके पास यह वज्र हो दस हजार बार वज्रेन्द्र कुण्ड में घी आदि से हवन करे। उस वज्र की नित्य रक्षा करनी चाहिये और तब राजा को देना चाहिये। अगर राजा शत्रु के विरुद्ध इस वज्र के साथ जाय तो युद्ध क्षेत्र में उसकी विजय होती है।।३-५।। पहले यह वज्रेश्वरी विद्या को इन्द्र की सहायता के लिए प्रयत्नपूर्वक ब्रह्मा ने प्राप्त किया था।।६।। हे सुव्रत! पहले त्वष्ट्रा प्रजापति के पुत्र का इन्द्र ने वध किया था। वह इन्द्र का विरोधी हो गया और उसने एक यज्ञ किया जिससे सोम रस निचोड़ा गया था। इसमें महाबाहु इन्द्र, जिसने विश्वरूप को मारा था, उसने उस यज्ञ में अपना भाग देने की इच्छा की।।७-८।। "हे इन्द्र तुमने मेरे पुत्र की हत्या की है। मैं तुमको यज्ञ में भाग नहीं दूँगा। तुमने मेरे पुत्र विश्वरूप की हत्या की। इसलिए तुम भविष्य में भाग पाने के योग्य नहीं हो"।।९।। यह कहकर उन्होंने अपनी माया से पूरे आसन को मोहग्रस्त कर दिया। लेकिन विश्वरूप के विमर्दन इन्द्र ने माया

इत्युक्त्वा चाश्रमं सर्वं मोहयामास मायया। ततो मायां विनिर्भिद्य विश्वरूपविमर्दनः॥१०॥
प्रसह्य सोममपिबत्सगणैश्च शचीपतिः। ततस्तच्छेषमादाय क्रोधाविष्टः प्रजापतिः॥११॥
इंद्रस्य शत्रो वर्धस्व स्वाहेत्यग्नौ जुहाव ह। ततःकालग्निसंकाशो वर्तनाद्वृत्रसंज्ञितः॥१२॥
प्रादुरासीत्सुरेशारिर्दुद्राव च वृषांतकः। ततः किरीटी भगवान्परित्यज्य दिवं क्षणात्॥१३॥
सहस्त्रनेत्रः सगणो दुद्राव भयविह्वलः। तदा तमाह स विभुर्हृष्टो ब्रह्मा च विश्वसूट्॥१४॥
त्यक्त्वा वज्रं तमेतेन जहीत्यरिमरिंदमः। सोऽपि सन्नह्य देवेंद्रो देवैः सार्धं महाभुजः॥१५॥
निहत्य चाप्रयत्नेन गतवान्विगतज्वरः। तस्माद्वज्रेश्वरीविद्या सर्वशत्रुभयंकरी॥१६॥
मंदेहा राक्षसा नित्यं विजिता विद्ययैव तु। तां विद्यां संप्रवक्ष्यामि सर्वपापप्रमोचनीम्॥१७॥

ॐ भूर्भुवस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि॥
धियो यो नः प्रचोदयात्॥
ॐ फट् जहि हुं फट् छिंधि भिंधि जहि हनहन स्वाहा॥

विद्या वज्रेश्वरीत्येषा सर्वशत्रुभयंकरी। अनया संहृतिः शंभोर्विद्याया मुनिपुंगवाः॥१८॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे एकपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५१॥**

---

को भेद कर अपने गणों के सहित जबरदस्ती सोम रस को अपने कब्जे में कर लिया और उसको पी लिया। तब क्रोधित ब्रह्मा ने बचे खुचे सोमरस को लेकर अग्नि में यह कहते हुये होम कर दिया। "हे इन्द्र के शत्रुओं बढ़ो स्वाहा" तब वहाँ वृत्र नाम का एक राक्षस दिखायी दिया। वह कालाग्नि के समान था। उसको वृत्र कहा गया क्योंकि वह अपने धनुषों से घिरा हुआ था। इन्द्र वहाँ से भाग गये। उन्होंने स्वर्ग में तुरन्त शरण ली। भयभीत होकर वह अपने गणों के साथ भाग गये। तब विश्व के स्रष्टा भगवान ब्रह्मा प्रसन्न हो गये और उससे कहा।।१०-१४।। "हे शत्रु नाशक! यह वज्र ले लो और इसको मारो" तब देवताओं के स्वामी शक्तिशाली भुजाओं वाले इन्द्र देवताओं सहित तैयार हो गये और उन्होंने बिना किसी विशेष प्रयत्न के उसको मार डाला। वह सब विपत्तियों से मुक्त हो गये। अतः वज्रेश्वरी विद्या सब प्रकार के शत्रुओं के लिए भयंकर है। इस विद्या के द्वारा मन्देह कहलाने वाले दैत्य प्रतिदिन जीते जाते रहे। मैं उस विद्या का वर्णन करूँगा जो कि सब पापों से छुटकारा देती है। "ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ फट् जहि हुं फट् छिंधि भिंधि जहि हन हन स्वाहा" ॐ भूर्भुवः स्वः हम लोग भगवान सूर्य के तेज को ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ॐ फट्, जहि (मारो) हुँ फट् छिंधि (फाडो) भिंधि (छेदो) जहि, हन हन (मारो) स्वाहा।" यह वज्रेश्वरी विद्या है। यह सब शत्रओं के लिए भयंकर है। हे श्रेष्ठ मुनियों! इस विद्या के द्वारा शिव संसार का संहार करते हैं।।१५-१८।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में वज्रवाहनिका विद्या नामक इक्यावनवाँ अध्याय समाप्त॥५१॥**

द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः

# वज्रवाहनिकाविद्याविनियोगः

ऋषय ऊचुः

श्रुता वज्रेश्वरी विद्या ब्राह्मी शक्रोपकारिणी। अनया सर्वकार्याणि नृपाणामिति नः श्रुतम्॥१॥
विनियोगं वदस्वास्या विद्याया रोमहर्षण।

सूत उवाच

वश्माकर्षणं चैव विद्वेषणमतः परम्॥२॥
उच्चाटनं स्तंभनं च मोहनं ताडनं तथा। उत्सादनं तथा छेदं मारणं प्रतिबंधनम्॥३॥
सेनास्तंभनकादीनि सावित्र्या सर्वमाचरेत्। आगच्छ वरदे देवि भूम्यां पर्वतमूर्धनि॥४॥
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम्। उद्वास्यानेन मंत्रेण गंतव्यं नान्यथा द्विजाः॥५॥
प्रतिकार्यं तथा ब्राह्मं कृत्वा वश्यादिकां क्रियाम्।
उद्वास्य वह्निमाधाय पुनरन्यं यथाविधि॥६॥
देवीमावाह्य च पुनर्जपेत्संपूजयेत्पुनः। होमं च विधिना वह्नौ पुनरेव समाचरेत्॥७॥
सर्वकार्याणि विधिना साधयेद्विद्यया पुनः। जातीपुष्पैश्च वश्यार्थी जुहुयादयुतत्रयम्॥८॥

---

बावनवाँ अध्याय

# वज्रवाहनिका विद्या का विनियोग

ऋषिगण बोले

हम लोगों ने इन्द्र की सहायता देने वाली ब्रह्मा की बज्रेश्वरी विद्या को सुना। इससे राजाओं के सब कार्य सिद्ध होते हैं। हे लोमहर्षण! अब इस विद्या का विभिन्न उद्देश्यों का विनियोग (उपयोग विधि) बतायें।

सूत बोले

सावित्री मंत्र के विभिन्न उपयोग वश्य, आकर्षण, विद्वेषण, उच्चाटन, स्तंभन, मोहन, ताडन, उत्सादन, छेद, मारण, प्रतिबंधन, सेनास्तंभन आदि तथा अन्य क्रियाकलाप होते हैं।

मन्त्र

'हे वर देने वाली देवि! पृथ्वी पर पर्वत के शिखर पर आओ। हे देवी! ब्राह्मणों द्वारा आज्ञा पाकर सुखपूर्वक जाओ।' हे ब्राह्मणों! केवल यही मंत्र है जिससे छुट्टी लेकर पृथ्वी से बाहर जाओ अन्यथा नहीं।।१-५।। सब बाहरी प्रारंभिक कृत्यों को पूरा करने के बाद वश्य आदि कृत्यों को करने के बाद साधक देवी को विसर्जित करे। फिर विधिपूर्वक दूसरी अग्नि की स्थापना करके देवी का आवाहन करके फिर जप और पूजा करना चाहिए। फिर अग्नि में विधि से होम करना चाहिए।।६-७।। तब उसी मंत्र से साधक पवित्र कृत्य को पूरा करे जो दूसरों को

घृतेन करवीरेण कुर्यादाकर्षणं द्विजाः। विद्वेषणं विशेषेण कुर्याल्लांगलकस्य च॥९॥
तैलेनोच्चाटनं प्रोक्तं स्तंभनं मधुना स्मृतम्। तिलेन मोहनं प्रोक्तं ताडनं रुधिरेण च॥१०॥
खरस्य च गजस्याथ उष्ट्रस्य च यथाक्रमम्। स्तंभनं सर्षपेणापि पाटनं च कुशेन च॥११॥
मारणोच्चाटने चैव रोहीबीजेन सुव्रताः। बंधनं त्वहिपत्रेण सेनास्तंभमतः परम्॥१२॥
कुनट्या नियतं विद्यात्पूजयेत्परमेश्वरीम्। घृतेन सर्वसिद्धिः स्यात्पयसा वा विशुद्ध्यते॥१३॥
तिलेन रोगनाशश्च कमलेन धनं भवेत्। कांतिर्मधूकपुष्पेण सावित्र्या ह्ययुतत्रयम्॥१४॥
जयादिप्रभृतीन्सर्वान् स्विष्टांतं पूर्ववत्स्मृतम्। एवं संक्षेपतः प्रोक्तो विनियोगोतिविस्तृतः॥१५॥
जपेद्वा केवलां विद्यां संपूज्य च विधानतः। सर्वसिद्धिमवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥१६॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५२॥**

---

वश में करना चाहे वह जाती फूलों से तीस हजार होम करे।।८।। हे ब्राह्मण! आकर्षण कृत्य के लिए घी और करवीर (कनइल) के फूलों से होम करे। विद्वेषण (घृणा) के कृत्य में लांगलक फूल से होम करे। उच्चाटन कृत्य के लिए तेल से होम करे। स्तम्भन कृत्य में मधु से होम करे। मोहन कृत्य में तिल से और ताडन कृत्य में गधा, हाथी या ऊँट के खून (रुधिर) से होम करे।।९-१३।। स्तम्भन कृत्य में सरसों से तथा पाटन कृत्य में कुश से होम करना चाहिए। हे सुव्रतो! मारण और उच्चाटन कृत्य रोही (अहिपत्र और कुत्री) के बीजों से होम करे। बंधन कृत्य में अहिपत्र से, सेनास्तम्भन कृत्य में कुनटी के पत्र से होम करे। तब साधक घी से परमेश्वरी की सब प्रकार की सिद्धि के लिए पूजा करे। दूध की खीर से होम करने से शुद्धि प्राप्त होती है। तिल के होम से रोगनाश होता है और कमल के होम से धन प्राप्त होता है। महुआ के फूल के होम से कीर्ति प्राप्त होती है। प्रत्येक होम में तीस हजार गिनती में सावित्री मंत्र उच्चारण करते हुए करना चाहिए। पूर्ववत् सब कृत्यों का प्रारम्भ 'जय' से और अंत 'स्विष्ट' से होना चाहिए। यह विनियोग संक्षेप में कहा गया जो कि अति विस्तृत है। विधानपूर्वक पूजा करके केवल सावित्री मंत्र का जाप करे। तभी वह सिद्धियां प्राप्त कर सकता है। इसमें संदेह करने की कोई बात नहीं है।।१४-१६।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में वज्रवाहनिका विद्या का विनियोग नामक बावनवां अध्याय समाप्त॥५२॥**

त्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः

# मृत्युञ्जयस्यानुष्ठानविधिः

ऋषय ऊचुः

मृत्युंजयविधिं सूत ब्रह्मक्षत्रविशामपि। वक्तुमर्हसि चास्माकं सर्वज्ञोऽसि महामते॥१॥

सूत उवाच

मृत्युंजयविधिं वक्ष्ये बहुना किं द्विजोत्तमाः। रुद्राध्यायेन विधिना घृतेन नियुतं क्रमात्॥२॥
सघृतेन तिलेनैव कमलेन प्रयत्नतः। दूर्वया घृतगोक्षीरमिश्रया मधुना तथा।३॥
चरुणा सघृतेनैव केवलं पयसापि वा। जुहुयात्कालमृत्योर्वा प्रतीकारः प्रकीर्तितः॥४॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे त्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५३॥**

---

तिरपनवाँ अध्याय

# मृत्युंजय अनुष्ठान विधि

**ऋषिगण बोले**

हे सूत! ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों से सम्बन्धित मृत्युंजय कृत्य विधि को अब बताइये। हे महाज्ञानी मुनि! आप सर्वज्ञ हैं।

**सूत बोले**

हे उत्तम ब्राह्मणों! मै मृत्युंजय अनुष्ठान की विधि बताऊँगा। बहुत कहने से क्या लाभ? रुद्राध्याय के सभी मन्त्रों द्वारा घी से एक लाख बार क्रमशः होम करे। हवन के लिए घी मिला तिल, कमल, घी से मिली दूब, गाय का दूध, मधु, घी सहित चरु या केवल दूध ये सामग्री होम के लिए चाहिये। इससे होम करे। यह मृत्यु या मृत्यु के देवता यम का प्रतीकार कहा गया है।।१-५।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में मृत्युजंय अनुष्ठान विधि नामक तिरपनवाँ अध्याय समाप्त॥५३॥**

## चतुष्पंचाशत्तमोऽध्यायः

# त्रियंबकमंत्रेण पूजा

सूत उवाच।

त्रियंबकेण मंत्रेण देवदेवं त्रियंबकम्। पूजयेद्बाणलिंगे वा स्वयंभूतेऽपि वा पुनः॥१॥
आयुर्वेदविदैर्वापि यथावदनुपूर्वशः। अष्टोत्तरसहस्रेण पुंडरीकेण शंकरम्॥२॥
कमलेन सहस्रेण तथा नीलोत्पलेन वा। संपूज्य पायसं दत्त्वा सघृतं चौदनं पुनः॥३॥
मुद्गान्नं मधुना युक्तं भक्ष्याणि सुरभीणि च। अग्नौ होमश्च विपुलो यथावदनुपूर्वशः॥४॥
पूर्वोक्तैरपि पुष्पैश्च चरुणा च विशेषतः। जपेद्वै नियुतं सम्यक् समाप्य च यथाक्रमम्॥५॥
ब्राह्मणानां सहस्रं च भोजयेद्वै सदक्षिणम्। गवां सहस्रं दत्त्वा तु हिरण्यमपि दापयेत्॥६॥
एतद्वः कथितं सर्वं सरहस्यं समासतः। शिवेन देवदेवेन शर्वेणात्युग्रशूलिना॥७॥
कथितं मेरुशिखरे स्कंदायामिततेजसे। स्कंदेन देवदेवेन ब्रह्मपुत्राय धीमते॥८॥
साक्षात्सनत्कुमारेण सर्वलोकहितैषिणा। पाराशर्याय कथितं पारंपर्यक्रमागतम्॥९॥
शुके गते परं धाम दृष्ट्वा रुद्रं त्रियंबकम्। गतशोको महाभागो व्यासः पर ऋषिः प्रभुः॥१०॥
स्कंदस्य संभवं श्रुत्वा स्थिताय च महात्मने। त्रियंबकस्य माहात्म्यं मंत्रस्य च विशेषतः॥११॥

---

## चौवनवाँ अध्याय

# त्रियंबक मन्त्र से पूजा

### सूत बोले

त्रियंबक मन्त्र से भक्त बाणलिंग में या स्वयंभू लिंग में देवताओं के देवता त्रियंबक की पूजा करनी चाहिये।।१।। वे जो अपनी दीर्घ आयु चाहते हैं और जो वेदों के ज्ञाता हैं उनको चाहिये कि वे शिव जी की पूजा एक सौ आठ सफेद कमलों से या एक हजार लाल कमलों से या एक हजार नीले कमलों से पूजा करें। पूजा करने के बाद पायस, घी से सना भात, उबला हुआ मूँग के दाने और शहद मिला भात, सुगन्धित मिठाई और अन्य खाने योग्य पदार्थ देने चाहिये। भक्त को फूलों से अग्नि में पूर्व वर्णित विधि से विशेष रूप से चरु से होम करना चाहिये। उसको सौ हजार बार जप करना चाहिये। पूर्ण रूप से प्रत्येक काम को उचित क्रम में करना चाहिये और एक हजार ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये और उनको दक्षिणा देनी चाहिये। एक हजार गायों को दान देने के बाद अन्त में सोना भी देना चाहिये।।२-६।। इस प्रकार प्रत्येक वस्तु रहस्य सहित संक्षेप में मैंने कहा। देवों के देव त्रिशूलधारी शिव के द्वारा मेरु पर्वत की चोटी पर अनुपम तेजस्वी स्कन्द से पहले बताया गया था।।७-८।। लोकों के शुभचिंतक स्कन्दकुमार ने यह व्यास जी को बताया था। इस प्रकार क्रमशः परम्परा से यह आगे आयी।।९।। शुक जी की मृत्यु के बाद महाभाग श्रेष्ठ ऋषि व्यास ने त्रियंबक भगवान रुद्र का दर्शन किया और अपने दुःखों को दूर किया।।१०।। ऋषि ने स्कन्द के जन्म की कथा को सुना। वह वहाँ ठहरे और उनको त्रियंबक मन्त्रपूर्ण

कथितं बहुधा तस्मै कृष्णद्वैपायनाय वै। तत्सर्वं कथयिष्यामि प्रसादादेव तस्य वै॥१२॥
देवं संपूज्य विधिना जपेन्मंत्रं त्रियंबकम्। मुच्यते सर्वपापैश्च सप्तजन्मकृतैरपि॥१३॥
संग्रामे विजयं लब्ध्वा सौभाग्यमतुलं भवेत्।
लक्षहोमेन राज्यार्थी राज्यं लब्ध्वा सुखी भवेत्॥१४॥
पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति नियुतेन न संशयः। धनार्थी प्रयुतेनैव जपेदेव न संशयः॥१५॥
तस्मात्त्रियंबकं देवं तेन नित्यं सर्वमंगलैः। क्रीडते पुत्रपौत्रैश्च मृतः स्वर्गे प्रजायते॥१६॥
नानेन सदृशो मंत्रो लोके वेदे च सुव्रताः। तस्मात्त्रियंबकं देवं तेन नित्यं प्रपूजयेत्॥१७॥
अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं भवेत्। त्रयाणमपि लोकानां गुणानामपि यः प्रभुः॥१८॥
वेदानामपि देवानां ब्रह्मक्षत्रविशामपि। अकारोकारमकाराणां मात्राणामपि वाचकः॥१९॥
तथा सोमस्य सूर्यस्य वह्नेरग्नित्रयस्य च। अंबा उमा महादेवो ह्यंबकस्तु त्रियंबकः॥२०॥
सुपुष्पितस्य वृक्षस्य यथा गंधः सुशोभनः। वाति दूरात्तथा तस्य गंधः शंभोर्महात्मनः॥२१॥
तस्मात्सुगंधो भगवान्गंधारयति शंकरः। गांधारश्च महादेवो देवानामपि लीलया॥२२॥
सुगंधस्तस्य लोकेस्मिन्वायुर्वाति नभस्तले। तस्मात्सुगंधिस्तं देवं सुगंधि पुष्टिवर्धनम्॥२३॥
यस्य रेतः पुरा शंभोहरेर्योनौ प्रतिष्ठितम्। तस्य वीर्यादभूदंडं हिरण्मयमजोद्भवम्॥२४॥
चंद्रादित्यौ सनक्षत्रौ भूर्भुवः स्वर्महस्तपः। सत्यलोकमतिक्रम्य पुष्टिर्वीर्यस्य तस्य वै॥२५॥

---

रूप से बताया गया। उनकी कृपा से वह सब मैं अब तुम लोगों को बताता हूँ।।११-१२।। विधिपूर्वक शिव की पूजा करके त्रियंबक मन्त्र जपना चाहिये। ऐसा करने पर वह सात जन्मों में किये हुए भी सब पापों से मुक्त हो जाता है।।१३।। वह युद्ध में विजय प्राप्त करता है और उसको अतुल सौभाग्य प्राप्त होता है। राज्य को चाहने वाला व्यक्ति एक लाख होम करने पर राज्य पाकर सुखी होता है।।१४।। इस मन्त्र के एक लाख बार होम करने से पुत्र चाहने वाले को पुत्र प्राप्त होता है। जो धन चाहता है उसको बेहिचक एक करोड़ बार मन्त्र का जप करना चाहिये।।१५।। वह व्यक्ति पूर्ण रूप से धन-धान्य आदि से और अन्य सब शुभ सामग्री से सम्पन्न होकर इस लोक में पुत्रों और पौत्रों के साथ आनन्द मनाता है और मरने के बाद वह स्वर्ग को जाता है।।१६।। हे सुव्रतो! इस मन्त्र से बढ़कर संसार में और वेदों में कोई दूसरा मन्त्र नहीं है। इसलिए त्रियंबक देवता की नित्य पूजा करनी चाहिये।।१७।। ऐसा करने से अग्निष्टोम यज्ञ का आठ गुना फल मिलता है। त्रियंबक शब्द की व्याख्या इस प्रकार की गयी है। वह तीनों लोकों, तीनों गुणों, तीनों वेदों, तीनों देवताओं, तीनों जातियों ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों का स्वामी है। वह "अ, उ, और म" इन तीन अक्षरों द्वार व्यक्त किया जाता है। वह तीनों अग्नियों का (चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि) का स्वामी है। इसलिए इन तीनों का स्वामी त्रियंबक है। जैसे अच्छे फूल वाले वृक्ष की सुगंध दूर से ही बहुत दूर तक फैलती है उसी प्रकार महान् आत्मा शिव की गंध भी अन्य देवताओं तक पहुँचती है। इसलिए भगवान सुगंध हैं। और जब वायु बहती है तो इस संसार में उसकी सुगंध फैलती है। अतः सुगंध शब्द शिव का सन्दर्भ बताता है। अब पुष्टिवर्धनम् शब्द की व्याख्या की जाती है।।१८-२३।। पहले भगवान् शिव का वीर्य विष्णु की योनि में जमा हुआ। उस वीर्य से सोने का अंड बना। ब्रह्मा की उत्पत्ति

पंचभूतान्यहंकारो बुद्धिः प्रकृतिरेव च। पुष्टिर्बीजस्य तस्यैव तस्माद्वै पुष्टिवर्धनः॥२६॥
तं पुष्टिवर्धनं देवं घृतेन पयसा तथा। मधुना यवगोधूममाषबिल्वफलेन च॥२७॥
कुमुदार्कशमीपत्रगौरसर्षपशालिभिः । हुत्वा लिंगे यथान्यायं भक्त्या देवं यजामहे॥२८॥
ऋतेनानेन मां पाशाद्बंधनात्कर्मयोगतः। मृत्योश्च बंधनाच्चैव मुक्षीय भव तेजसा॥२९॥
उर्वारुकाणां पक्वानां यथा कालादभूत्पुनः। तथैव कालः संप्राप्तो मनुना तेन यत्नतः॥३०॥
एवं मंत्रविधिं ज्ञात्वा शिवलिंगं समर्चयेत्। तस्य पाशक्षयोऽतीव योगिनो मृत्युनिग्रहः॥३१॥
त्रियंबकसमो नास्ति देवो वा घृणयान्वितः। प्रसादशीलः प्रीतश्च तथा मंत्रोपि सुव्रताः॥३२॥
तस्मात्सर्वं परित्यज्य त्रियंबकमुमापतिम्। त्रियंबकेण मंत्रेण पूजयेत्सुसमाहितः॥३३॥
सर्वावस्थां गतो वापि मुक्तोऽयं सर्वपातकैः। शिवध्यानान्न संदेहो यथा रुद्रस्तथा स्वयम्॥३४॥
हत्वा भित्त्वा च भूतानि भुक्त्वा चान्यायतोऽपि वा।
शिवमेकं सकृत्स्मृत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥३५॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे चतुष्पंचाशत्तमोऽध्यायः॥५४॥**

---

का वही कारण है। उनके वीर्य का पोषण चन्द्रमा, सूर्य, तारागण, पृथ्वी, भुवन, स्वः, महः, तपः और सत्यम् लोक से आगे बढ़कर पंचभूत, महाभूत, अहंकार, बुद्धि, प्रकृति उनके वीर्य से पुष्टि को प्राप्त हुए। अतः भगवान् शिव पुष्टिवर्धन अर्थात् पुष्टि के बढ़ाने वाले हैं।।२४-२६।। ययामहे (हम पूजा करते हैं) की व्याख्या इस प्रकार है। हम लोग होम करके घी, दूध, मधु, जौ, गेहूँ, उड़द, बेल का फल, लिली, अर्क (धतूरा) के फूल, शमी की पत्तियाँ, सफेद सरसों, शालिधान से हम लोग इन चीजों से श्रद्धापूर्वक विधि से लिंग में पूजा करते हैं।।२७-२८।। अब मन्त्र के बाद वाले आधे की व्याख्या की जाती है। जो इस प्रकार है। इस ऋत (विधिपूर्वक पूजा) की कृपा से हम लोग कर्मों और उसके अस्तित्व तथा मृत्यु के बन्धन से मुक्त हों। हमारे संसारिक तेज से मुक्ति मिले। जैसे उर्वारुक के पके फल समय पर वृक्ष की डाल से मौसम पर गिर जाते हैं। उसी प्रकार इस मन्त्र की कृपा से समय आने पर मुक्ति प्राप्त हो जाय।।२९-३०।। इस तरह मन्त्र के अर्थ को समझकर और इसके विनियोग को जानकर शिव के लिंग की पूजा करनी चाहिये। ऐसा करने से वह योगी सब बन्धनों से मुक्त होता है और उसकी मृत्यु का निग्रह होता है। हे सुव्रतो! त्रियंबक के समान कोई और दूसरा देवता दयालु नहीं है। वह आसानी से प्रसन्न होने वाले और स्तुति किये जाने वाले हैं और यह मन्त्र भी वैसा ही है। अर्थात् आसानी से फल देने वाला है। इसलिए सब छोड़कर त्रियंबक मन्त्र से उमापति त्रियंबक की पूजा करनी चाहिये। पूर्ण शुद्धि के साथ भक्त को उसकी इच्छा चाहे जो भी हो शिव का ध्यान करने से वह निसन्देह सब पापों से मुक्त हो जाता है और स्वयं रुद्र के समान हो जाता है। यदि कोई किसी प्राणी की हत्या करता है और अन्यायपूर्वक खाता और मौज मस्ती करता है तो वह भी केवल एक बार शिव के स्मरण करने से सब पापों से मुक्त हो जाता है।।३१-३५।।

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में त्रियंबक मंत्र से पूजा नामक चौवनवाँ अध्याय समाप्त॥५४॥**

पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः

# शिवस्य ध्यानविधिः

ऋषय ऊचुः

कथं त्रियंबको देवो देवदेवो वृषध्वजः। ध्येयः सर्वार्थसिद्ध्यर्थं योगमार्गेण सुव्रत॥१॥
पूर्वमेवापि निखिलं श्रुतं श्रुतिसमं पुनः। विस्तरेण च तत्सर्वं संक्षेपाद्वक्तुमर्हसि॥२॥

सूत उवाच

एवं पैतामहेनैव नंदी दिनकरप्रभः। मेरुपृष्ठे पुरा पृष्टो मुनिसंघैः समावृतः॥३॥
सोऽपि तस्मै कुमाराय ब्रह्मपुत्राय सुव्रताः। मिथः प्रोवाच भगवान्प्रणताय समाहितः॥४॥

नंदिकेश्वर उवाच

एवं पुरा महादेवो भगवान्नीललोहितः। गिरिपुत्र्यांबया देव्या भगवत्यैकशय्यया॥५॥
पृष्टः कैलासशिखरे हृष्टपुष्टतनूरुहः।

श्रीदेव्युवाच

योगः कतिविधः प्रोक्तस्तत्कथं चैव कीदृशम्॥६॥
ज्ञानं च मोक्षदं दिव्यं मुच्यंते येन जंतवः॥

---

पचपनवाँ अध्याय

# शिव के ध्यान की विधि

**ऋषिगण बोले**

तीन नेत्र धारी, बैल की ध्वजा वाले, देवों के देव, भगवान् शंकर का योग मार्ग द्वारा सब पापों की सिद्धि के लिए ध्यान कैसे किया जाय? हे सुव्रत! आपसे पहिले विस्तारपूर्वक सब सुन चुके हैं। यह वेद ज्ञान के बराबर है। आप एक बार फिर संक्षेप में कहें।।१-२।।

**सूत बोले**

हे सुव्रतो! पहिले ऐसा प्रश्न सूर्य के समान प्रभा वाले, मुनियों से घिरे हुये नन्दी से ब्रह्मा के पुत्र ने मेरु पर्वत की चोटी पर पूछा था। सनत्कुमार ने नन्दी को प्रणाम किया। तब नन्दी ने बहुत ध्यानपूर्वक विश्वस्त मुद्रा में कहा।।३-४।।

**नन्दिकेश्वर बोले**

इसी प्रकार पहिले पर्वत की पुत्री अम्बा पार्वती देवी ने भगवान् नीललोहित महादेव से पूछा था जब कि कैलाश के शिखर पर एक ही शय्या पर हृष्ट-पुष्ट दशा में बैठे थे।।५।।

**श्री देवी बोलीं**

योग कितने प्रकार का होता है? वे कैसे हैं? वे किस प्रकार हैं? कैसे कार्य करते हैं? वह दिव्य मोक्षदायक ज्ञान कैसा है जिससे प्राणी बन्धन से मुक्त हो जाते हैं?।।६।।

श्रीभगवानुवाच

प्रथमो मंत्रयोगश्च स्पर्शयोगो द्वितीयकः॥७॥
भावयोगस्तृतीयः स्यादभावश्च चतुर्थकः। सर्वोत्तमो महायोगः पंचमः परिकीर्तितः॥८॥
ध्यानयुक्तो जपाभ्यासो मंत्रयोगः प्रकीर्तितः। नाडीशुद्ध्यधिको यस्तु रेचकादिक्रमान्वितः॥९॥
समस्तव्यस्तयोगेन जयो वायोः प्रकीर्तितः। बलस्थिरक्रियायुक्तो धारणाद्यैश्च शोभनैः॥१०॥
धारणात्रयसंदीप्तो भेदत्रयविशोधकः। कुंभकावस्थितोऽभ्यासः स्पर्शयोगः प्रकीर्तितः॥११॥
मंत्रस्पर्शविनिर्मुक्तो महादेवं समाश्रितः। बहिरंतर्विभागस्थस्फुरत्संहरणात्मकः॥१२॥
भावयोगः समाख्याताश्चित्तशुद्धिप्रदायकः। विलीनावयवं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्॥१३॥
शून्यं सर्वं निराभासं स्वरूपं यत्र चिंत्यते। अभावयोगः संप्रोक्तश्चित्तनिर्वाणकारकः॥१४॥
नीरूपः केवलः शुद्धः स्वच्छंदं च सुशोभनः। अनिर्देश्यः सदालोकः स्वयंवेद्यः समंततः॥१५॥
स्वभावो भासते यत्र महायोगः प्रकीर्तितः। नित्योदितः स्वयंज्योतिः सर्वचित्तसमुत्थितः॥१६॥
निर्मलः केवलो ह्यात्मा महायोग इति स्मृतः। अणिमादिप्रदाः सर्वे सर्वे ज्ञानस्य दायकाः॥१७॥
उत्तरोत्तरवैशिष्ट्यमेषु योगेष्वनुक्रमात्। अहं संगविनिर्मुक्तो महाकाशोपमः परः॥१८॥
सर्वावरणनिर्मुक्तो ह्यचिंत्यः स्वरसेन तु। ज्ञेयमेतत्समाख्यातमग्राह्यमपि दैवतैः॥१९॥

---

## भगवान बोले

पहला मंत्र योग है दूसरा स्पर्श है। तीसरा भाव योग है। चौथा अभाव है। पाँचवा महायोग है जो कि सबसे उत्तम है।।७-८।। ध्यान से युक्त और अभ्यास और ध्यान के साथ मन्त्रों का जप मन्त्र योग है। रक्तवाहिनी नाडियों को शुद्ध करने वाले रेचक प्राणायाम द्वारा रक्तवाहिनी नाड़ियों को शुद्ध करना होता है और प्राण वायु को समस्त और व्यस्त योग से अपने वश में करना होता है। जन्म आदि के बल के शानदार क्रिया-कलापों के कारण दृढ़ और मजबूत कार्य होता है। कुम्भक प्राणायाम (वायु के रोकने का अभ्यास) तीन धारणाओं के द्वारा संदीप्त को स्पर्श योग कहा जाता है। यह तीनों भेदों (विश्व, प्रज्ञा और तैजस्) को शुद्ध करने वाला है।।९-११।। भाव योग वह दशा है जो मन्त्र और स्पर्श से अलग है किन्तु महादेव की ओर होती है। उसको भाव योग कहते हैं। इसमें बाहर और भीतर सर्वत्र महादेव के प्रयत्न आश्रित स्फुरण और संहरण की अभिव्यक्ति होती है। योग को चित्त की शुद्धि देने वाला कहा गया है। विश्व के चर और अचर सब प्राणी जिस भाव में लीन हो जाते हैं और शून्य स्वरूप होते हैं। यह चित्त के निर्वाण करने वाला योग अभाव योग कहलाता है।।१२-१४।। महायोग वह ध्यान जिसमें शुद्ध रूप बिना किसी रंग के दिखायी देता है जो शुभ है। शुद्ध है, स्वतन्त्र है, और अनिर्देश्य है। जो प्रकाशमय है और स्वयं वेद्य है उसको महायोग कहते हैं। इसमें यह अनुभव होता है केवल आत्मा ही शुद्ध स्वयं ज्योतिर्मय है आत्मा केवल निर्मल है। यह महायोग के नाम से प्रसिद्ध है। यह सम्पूर्ण चित्त से ऊपर आता है। ये सब योग अणिमा आदि सिद्धि और पूर्ण ज्ञान को देने वाले हैं।।१५-१७।। इन योगों में प्रथम की अपेक्षा उसके बाद वाले क्रम से उत्तरोत्तर अच्छे हैं। महायोग की दशा अहं के संग से अलग होने की है। यह महा आकाश से तुलना करने योग्य है। यह सब आवरणों से मुक्त है। यद्यपि यह स्वरस से अचिन्त्य है।

प्रविलीनो महान्सम्यक् स्वयंवेद्यः स्वसाक्षिकः।
चक्रास्त्यानंदवपुषा तेन ज्ञेयमिदं मतम्॥२०॥
परीक्षिताय शिष्याय ब्राह्मणायाहिताग्नये। धार्मिकायाकृतघ्नाय दातव्यं क्रमपूर्वकम्॥२१॥
गुरुदैवतभक्ताय अन्यथा नैव दापयेत्। निंदितो व्याधितोल्पायुस्तथा चैव प्रजायते॥२२॥
दातुरप्येवमनघे तस्माज्ज्ञात्वैव दापयेत्। सर्वसंगविनिर्मुक्तो मद्भक्तो मत्परायणः॥२३॥
साधको ज्ञानसंयुक्तः श्रौतस्मार्तविशारदः। गुरुभक्तश्च पुण्यात्मा योग्यो योगरतः सदा॥२४॥
एव देवि समाख्यातो योगमार्गः सनातनः। सर्ववेदागमांभोजमकरंदः सुमध्यमे॥२५॥
पीत्वा योगामृतं योगी मुच्यते ब्रह्मवित्तमः। एवं पाशुपतं योगं योगैश्वर्यमनुत्तमम्॥२६॥
अत्याश्रममिदं ज्ञेयं मुक्तये केन लभ्यते। तस्मादिष्टैः समाचारैः शिवार्चनरतैः प्रिये॥२७॥
इत्युक्त्वा भगवान्देवीमनुज्ञाप्य वृषध्वजः। शंकुकर्णं समासाद्य युयोजात्मानमात्मनि॥२८॥

शैलादिरुवाच

तस्मात्त्वमपि योगींद्र योगाभ्यासरतो भव। स्वयंभुव परा मूर्तिर्नूनं ब्रह्ममयी वरा॥२९॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन मोक्षार्थी पुरुषोत्तमः। भस्मास्नायी भवेन्नित्यं योगे पाशुपते रतः॥३०॥

---

फिर भी यह अपनी स्व प्रकृति के द्वारा ज्ञेय है। यह महान् है। यह अगम्य है। यह स्वयं वेद्य है और स्वयं साक्षिक है। यह अपने आनन्दपूर्ण शरीर में चमकता है। इसलिए यह ज्ञेय (जानने योग्य) है।।१८-२०।। यह परीक्षा किये गये शिष्य को देना चाहिये और आहिताग्नि (जो सदा पवित्र अग्नि को सुरक्षित रखे) ब्राह्मण को धार्मिक व्यक्ति को, कृतज्ञ व्यक्ति को क्रमशः देना चाहिये।।२१।। गुरु और देवता के भक्त को यह देना चाहिये। अन्य को नहीं। देने पर व्यक्ति संसार में निर्दिष्ट रोग से पीड़ित और अल्पआयु होता है। दाता को भी ऐसा ही होता है। हे पवित्र देवी! पूरी तरह जाँच पड़ताल करके तब यह ज्ञान देना चाहिये। मेरा भक्त सब बन्धनों से मुक्त हो जायेगा। वह मुझको सबसे बड़ा स्वामी समझेगा। वह पूर्ण ज्ञान से युक्त होगा। वह वेद और शास्त्र में लिखित धार्मिक कृत्यों के करने में विशेषज्ञ होगा। वह गुरुभक्त होगा। सुयोग्य साधक पुण्यात्मा होगा और सदा योग रत रहेगा। इस प्रकार हे देवी! हे सुन्दर कटि भाग वाली! यह ज्ञान वेद और आगम रूपी कमल का मधु स्वरूप है।।२२-२५।। योगी यौगिक अमृत पीने के बाद ब्रह्म के जानने वालों में उत्तम और मुक्त हो जाता है। इस प्रकार पाशुपत योग सबसे उत्तम योग है। यह सब प्रकार सानिध्य और योगों को शक्ति देता है तथा इसको किसी अन्य के सहायता की आवश्यकता नहीं होती है। मुक्ति के लिए यह एक मात्र घोषित साधन है। यह किसके द्वारा प्राप्त हो? हे प्रिये! यह उनको ही प्राप्त होता है जो कि शिव की पूजा में रत हैं और जिनका आचरण प्रेम करने के योग्य है। ऐसा कहकर वृषध्वज शिवजी ने देवी पार्वती से विदा ले ली। उनके बाद फाटक पर शंकुकर्ण (एक विशेष गण) को नियुक्त करके वह समाधि में लीन हो गये।।२६-२८।।

## शैलादि बोले

इसलिए हे योगीन्द्र! तुम भी योगाभ्यास में लीन हो जाओ। सर्वोच्च स्वामी निश्चित रूप से ब्रह्ममय श्रेष्ठ मूर्ति हैं। अतः सब प्रकार से मुक्ति चाहने वाले बुद्धिमान व्यक्ति को भस्म लपेटे हुए उचित विधि से पाशुपत योग

ध्येया यथाक्रमेणैव वैष्णवी च ततः परा। माहेश्वरी परा पश्चात्सैव ध्येया यथाक्रमम्॥३१॥
योगेश्वरस्य या निष्ठा सैषा संहृत्य वर्णिता॥३२॥

सूत उवाच

एवं शिलादपुत्रेण नंदिना कुलनन्दिना। योगः पाशुपतः प्रोक्तो भस्मनिष्ठेन धीमता॥३३॥
सनत्कुमारो भगवान्व्यासामिततेजसे। तस्मादहमपि श्रुत्वा नियोगात्सत्रिणामपि॥३४॥
कृतकृत्योऽस्मि विप्रेभ्यो नमो यज्ञेभ्य एव च। नमः शिवाय शांताय व्यासाय मुनये नमः॥३५॥
ग्रंथैकादशसाहस्त्रं पुराणं लैंगमुत्तमम्। अष्टोत्तरशताध्यायमादिमांशमतः परम्॥३६॥
षष्ट्चत्वारिंशदध्यायं धर्मकामार्थमोक्षदम्। अथ ते मुनयः सर्वे नैमिषेयाः समाहिताः॥३७॥
प्रणेमुर्देवमीशानं प्रीतिकंटकितत्वचः। शाखां पौराणिकीमेवं कृत्वैकादशिकां प्रभुः॥३८॥
ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवानिदं वचनमब्रवीत्। लैंगमाद्यंतमखिलं यः पठेच्छृणुयादपि॥३९॥
द्विजेभ्यः श्रावयेद्वापि स याति परमां गतिम्। तपसा चैव यज्ञेन दानेनाध्ययनेन च॥४०॥
या गतिस्तस्य विपुला शास्त्रविद्या च वैदिकी। कर्मणा चापि मिश्रेण केवलं विद्ययापि वा॥४१॥
निवृत्तिश्चास्य विप्रस्य भवेद्भक्तिश्च शाश्वती। मयि नारायणे देवे श्रद्धा चास्तु महात्मनः॥४२॥
वंशस्य चाक्षया विद्या चाप्रमादश्च सर्वतः। इत्याज्ञा ब्रह्मणस्तस्मात्तस्य सर्वं महात्मनः॥४३॥

---

में लीन रहना चाहिये। विष्णु की शक्ति पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिये। उसके बाद महेश्वर की पराशक्ति का ध्यान करना चाहिये।।२९-३१।। इस प्रकार योगेश्वर शिव के योग का दृढ़ अभ्यास क्रम एक योगी के लिए संक्षेप में मैंने वर्णन किया।।३२।।

## सूत बोले

इस प्रकार शैलादि के पुत्र बुद्धिमान भस्मधारी नन्दी ने पाशुपत योग को बताया। भगवान् सनत्कुमार ने तेजस्वी व्यास को यह पाशुपति योग बताया। मैंने इस योग को व्यास जी से सुना। उनके आदेश से मैंने उन ऋषियों को बताया जो कि सत्र को पूर करते हैं। मैं कृतज्ञ हूँ। ब्राह्मणों को नमस्कार। यज्ञों को नमस्कार। शान्त शिव के लिए नमस्कार और व्यास मुनि के लिए नमस्कार।।३३-३५।। इस उत्तम लिंग पुराण में ग्यारह हजार श्लोक हैं। इसके प्रथम भाग में एक सौ आठ अध्याय हैं। दूसरे भाग में पचपन अध्याय हैं। यह धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष को देने वाला है। तब नैमिषारण्य के मुनि गण ने पूर्ण एकाग्र चित्त और मानसिक शुद्धि के साथ ईशान भगवान् को प्रसन्नता से रोमाँचित होकर प्रणाम किया। पुराण की इस ग्यारहवी शाखा का निर्माण करके स्वयम् ब्रह्मा ने ये शब्द कहे "जो सम्पूर्ण लिंग पुराण को आदि से अन्त तक पढ़ता है, जो ब्राह्मणों को सुनाता है और जो इसको सुनता है, वह परम गति (मोक्ष) प्राप्त करता है। वह उस मोक्ष को प्राप्त करता है जो कि तपस्या के द्वारा, यज्ञ के द्वारा, दान के द्वारा और वेदों के अध्ययन के द्वारा प्राप्त होता है। उसको वैदिक शास्त्र विद्या से जो प्राप्त होता है, ब्राह्मण कर्म से, विद्या से या दोनों के मेल (मिश्रण) से, त्याग के संकाय को प्राप्त करेगा। उसकी भक्ति स्थायी होगी। उस महान आत्मा की मुझमें और भगवान नारायण में श्रद्धा होगी। उसके परिवार में

ऋषयः प्रोचुः

ऋषेः सूतस्य चास्माकमेतेषामपि चास्य च। नारदस्य च या सिद्धिस्तीर्थयात्रारतस्य च॥४४॥
प्रीतिश्च विपुला यस्मादस्माकं रोमहर्षण॥४५॥
सा सदास्तु विरूपाक्षप्रसादात्तु समंततः। एवमुक्तेषु विप्रेषु नारदो भगवानपि॥४६॥
कराभ्यां सुशुभाग्राभ्यां सूतं पस्पर्शिवांस्त्वचि। स्वस्त्यस्तु सूत भद्रं ते महादेवे वृषध्वजे॥४७॥
श्रद्धा तवास्तु चास्माकं नमस्तस्मै शिवाय च॥४८॥

**इति श्रीलिङ्गमहापुराणे उत्तरभागे पञ्चपञ्चाशत्तमोध्यायः॥५५॥**

समाप्तं चैतल्लैंगोत्तरार्धम्।।

श्रीभवानीशंकरार्पणमस्तु ।

**इति सटीकं श्रीलिङ्गमहापुराणं समाप्तम्।**

---

विद्या का अध्ययन जारी रहेगा और चारों ओर वह चैतन्य (प्रमाद रहित) रहेगा। यह ब्रह्मा की आज्ञा है। अतः यह उनकी कृपा से यह सब प्राप्त हुआ है।।३६-४३।।

**ऋषिगण बोले**

हे रोमहर्षण! सूत ऋषि! हम ऋषियों ने सिद्धि प्राप्त की। नारद जो तीर्थ यात्रा में लगे हैं उन्होंने भी सिद्धि प्राप्त की। हमको अपार प्रसन्नता है। यह प्रसन्नता शिव की कृपा से चारों ओर विराजमान हो। जब ब्राह्मणों ने ऐसा कहा, तब भगवान नारद ने अपने पवित्र हाथों के अग्रभाग से सूत के शरीर का स्पर्श किया अर्थात् उनके शरीर पर हाथ फेरा और कहा "हे सूत! तुम्हारा कल्याण हो। वृषध्वज भगवान महादेव में तुम्हारी श्रद्धा रहे और हम लोगों की भी श्रद्धा रहे। उन शिव जी के लिए नमस्कार।।४४-४७।।"

**श्रीलिंगमहापुराण के उत्तर भाग में शिव के ध्यान की विधि नामक पचपनवाँ अध्याय समाप्त॥५५॥**

**श्रीलिंगमहापुराण का उत्तर भाग समाप्त हुआ।**

**यह श्री भवानीशंकर को अर्पण हो।**

**अनुवाद सहित लिंगमहापुराण समाप्त।**

# कुछ विशेष शब्दों के अर्थ और टिप्पणियाँ

| | |
|---|---|
| अग्नि | अग्नि ४९ प्रकार के हैं। वे रुद्र के विविध रूप हैं। इनके नामों में मतभेद है। |
| अधृष्य | क्षति पहुँचाने को अयोग्य, साहसी। |
| अन्तराय | विघ्न। |
| अपरा विद्या | श्रौत और गृह्य सूत्रों में वर्णित धार्मिक कृत्यों का ज्ञान। |
| अरुणोद | यह मेरु के पश्चिम में स्थित है। |
| अर्धनारीश्वर | आधा भाग पुरुष और आधा भाग नारी का बना शिवजी का रूप। |
| अर्बुद | १० करोड़ की संख्या। |
| अवन्ती | आधुनिक उज्जैन। |
| अविद्या | पाँच पत्तों के विपर्यय का जाप। उसके ६२ उपविभाग होते हैं। |
| अविमुक्त | काशी, शिव का स्थायी निवास। |
| अविमुक्तेश्वर | वाराणसी में स्थापित प्रसिद्ध शिवलिंग उसके आस-पास का क्षेत्र अविमुक्तेश्वर क्षेत्र। |
| अश्वमेध यज्ञ | एक यज्ञ का नाम। |
| अष्ट लोकपाल | १ इन्द्र (पूर्व दिशा), अग्नि (अग्नि कोण), यम (दक्षिण दिशा) सूर्य (पश्चिम-दक्षिण कोण), वरुण (पश्चिम दिशा), वायु (वायव्य कोण), कुबेर (उत्तर), सोम (ईशान कोण)। |
| आग्नेय स्नान | भस्म स्नान। गाय के गोबर या लकड़ी की भस्म (राख) से स्नान। शरीर पर चुपड़ लेना। |
| आग्नीध्र | प्रियव्रत का ज्येष्ठ पुत्र। |
| आयाम | लम्बाई, विस्तार, प्रसार। |
| उत्तरायण | २२ दिसम्बर से २१ जून। |
| उद्भव | उत्पत्ति, प्रारम्भ। |
| उल्वण | गाढ़ा, जमा हुआ, अधिक, स्पष्ट। |
| एकत्व | ब्रह्ममय होना। |
| एकार्णव | विश्व की उस स्थिति का प्रतीक है जब प्रलय काल में सब इकाईयाँ एक जलमय समूह में विलीन हो जाती हैं। |
| ओउम् | ब्रह्म का प्रतीक है। बाद में यह 'अ' (विष्णु), 'उ' (शिव) और 'म्' (ब्रह्मा) इन त्रित्व का प्रतिनिधि रूप माना गया। लिंगमहापुराण में 'अ' (ब्रह्मा), 'उ' (विष्णु) और 'म' (शिव) में मान्य है। |
| कन्यस मार्ग | सुषुम्ना नाड़ी रूप मार्ग। |
| कर्णिकार | अमिलतास। |
| कला | तीस काष्ठा (कालमान)। |

| | |
|---|---|
| **कल्प** | चार युगों के चार हजार चक्रों का काल (पीरियड) या ब्रह्मा का एक दिन। इसके दो भाग होते हैं। परार्द्ध दो हजार चतुर्युग के। कल्प के पूरा होने पर विनाश अर्थात् प्रलय। |
| **कालकूट** | विष। |
| **कालिंजर** | उत्तर प्रदेश में महोबा के पूर्व चित्रकूट के नीचे। |
| **काष्ठा** | पन्द्रह निमेष (पलक झपकना) का काल। |
| **कुंड** | पति के जीवित रहते उसकी पत्नी से उत्पन्न जारज संतान। |
| **कुंद** | चमेली का एक भेद सफेद और कोमल फूल। |
| **कुंभोदन** | शिव के एक गण का नाम। |
| **कुशस्थल** | आनर्तदेश की राजधानी गुजरात में। |
| **कूर्च** | एक मुट्ठी कुश जो रक्षा से बँधा हो। |
| **कृतयुग** | सतयुग। |
| **कृष्णद्वैपायन व्यास** | सत्यवती से उत्पन्न पराशर के पुत्र। महाभारत और पुराणों के संपादन और वेदों को चार भागों के व्यवस्थापन कर्त्ता। इनको महर्षि व्यास भी कहते हैं। |
| **कौशिकी** | आधुनिक कोसी नदी जो हिमालय से निकलकर नेपाल और तिरहुत से बहती हुई पटना के पास गंगा में मिलती है। |
| **क्रव्य** | पितरों के लिये भेंट। |
| **गंगाद्वार ( १ )** | आधुनिक हरद्वार। अन्य मत के अनुसार दक्षिण में त्र्यंबक के पास नासिक में। |
| **( २ )** | हरद्वार, मोक्षद्वार, मायाद्वार। |
| **गुह्यक** | एक अर्ध देव वर्ग जो कुबेर के अनुचर और उनके कोष के रक्षक होते हैं। |
| **गेय** | संगीत विज्ञान। |
| **गोकर्ण** | पश्चिमी घाट पर स्थित शिव का ज्योतिर्लिंग स्थान। दूसरा गोकर्ण नेपाल में वागमैती नदी के तट पर है। |
| **गोल** | वर्णसंकर। |
| **गोलाँगूल** | लंगूर। |
| **चतुर्मुख** | ब्रह्मा के पहले पाँच मुख थे। असत्य बोलने पर शिव जी ने इनके एक मुख को काट दिया। तब ब्रह्मा चतुर्मुख हो गये और चतुर्मुख कहे जाने लगे। |
| **चतुर्व्यूह** | सर्वोच्च आत्मा का चार वर्ग। तैजस, विश्व, प्राज्ञ और तुरीय। |
| **चान्द्रायण** | एक धार्मिक व्रत या प्रायश्चित्त। इसमें चन्द्रमा के क्षय और वृद्धि के अनुसार पूर्णमासी को १५ कौर और बाद में क्रम से अमावास्या तक १-१ कौर कम करके खाने का विधान है। |
| **जंबू द्वीप** | इसके ९ खंड है। इन्द्र द्वीप, कशेरुमान, ताम्रवर्ष, गभस्तिमान, नाग, सौम्य, गंधर्व, वरुण और भारत। |
| **जाती** | चमेली। |
| **जीवात्मा** | प्रत्येक शरीर में स्थित व्यक्तिगत आत्मा। |

| | |
|---|---|
| **तल** | एक विशेष प्रकार की माप। अँगूठा से मध्यमा उँगली तक। |
| **तारा गति** | इसको अंग्रेजी से स्टार स्पेस कहते हैं। यह १८०° का होता है। |
| **तालुमुद्रा** | खेचरीमुद्रा। २४ मुद्राओं (अँगुलियों की स्थिति) में से एक मुद्रा का नाम। |
| **त्रिमया** | ब्रह्मा, विष्णु और शिवमय एक रूपा। |
| **देव वर्ग** | देवताओं के आठ वर्ग। आदित्य, विश्व, वासव, त्वष्टि, विश्व महर्षिक, साध्य, रुद्र, गणदेवता। |
| **द्वादशाक्षर मंत्र** | ॐ नमोभगवते वासुदेवाय। |
| **द्विगुण** | प्रकृति और पुरुष के रूप में। |
| **द्वीप** | (१) विश्व के विभाजन की सीमा के लिये द्वीप शब्द का पुराणों में प्रयोग किया जाता है, (२) दो नदियों के मध्य स्थित भूमि। |
| **धातकी खेड** | गोवी मरुस्थल के पश्चिम जापान में। |
| **धारणा** | योग का एक अंग। |
| **नंदा** | नंदा, अलखनंदा और भागीरथी ये गंगा की तीन शाखायें गढ़वाल में है। |
| **नवब्रह्मा** | मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु, दक्ष, अत्रि, वसिष्ठ। |
| **नारद** | ब्रह्म के मानस पुत्र और एक दिव्य मुनि। |
| **निष्क** | स्वर्ण मुद्रा, १६ मासा के तोल के बराबर, १०८ कर्ष के बराबर सोना। |
| **नैमिष** | उत्तर प्रदेश के सीतापुर जिले में स्थित वर्तमान नीमसार। यह गोमती नदी के तट पर स्थित है। प्राचीन काल में ऋषियों की प्रसिद्ध तपोभूमि। |
| **पंचगव्य** | गाय का दूध, दही, घी, मूत्र और गोबर का मिश्रण (घोल) |
| **पंचनद** | पाँच नदियाँ—जटोदका, त्रिस्रोता, वृषद्वती, स्वर्गोदका और जंबू नदी। |
| **पंचमहायज्ञ** | ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और नृयज्ञ (अतिथि पूजन)। |
| **पंचरात्र** | वैष्णव सम्प्रदाय के पवित्र ग्रंथ का नाम। |
| **पंचाक्षर मंत्र** | ऊँ नमः शिवाय। |
| **पंद्रह मुहूर्त्त** | १ दिन। |
| **पंद्रह मुहूर्त्त** | १ रात्रि। |
| **पराविद्या** | ब्रह्मविद्या। |
| **परिघा** | लोहे की गदा। |
| **पल** | समय मापने का मान। |
| **पुरुष** | प्रकृति के कार्य के २६ तत्त्व। |
| **पुष्कर तीर्थ** | अजमेर के पास। |
| **प्रजा** | सन्तान, जनता, सृष्टि। |
| **प्रत्यान्त** | म्लेक्ष देश। |
| **प्रत्याहार** | योग का एक अंग। |
| **प्रधान** | भौतिक जगत का मूल स्रोत। |
| **प्रभास तीर्थ** | काठियावाड़ के दक्षिण सौराष्ट्र में। |

**प्रमिति** चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय समुद्रगुप्त का पुत्र।

**प्राजापात्य** यह एक धार्मिक व्रत या तप है। इसमें ३ दिन प्रातःकाल भोजन करने, तीन दिन सायंकाल भोजन करने और इसके बाद ३ दिन भोजन न करने का विधान है।

**प्रियव्रत** स्वयंभुव मनु और शतरूपा का पुत्र।

**बाणविग्रह** बाणलिंग (बाण असुर द्वारा पूजित लिंग)।

**बालघी** मूर्ख।

**ब्रह्मकूर्च** गोमूत्र, पंचगव्य।

**भार** एक विशेष प्रकार की तौल जो २० तल के बराबर होती है।
२ तल = १ प्रसृत
२ प्रसृत = १ कुडव
२ कुडव = १ प्रस्थ
२ प्रस्थ = १ आढक
२ आढक = १ शिव
२ शिव = १ द्रोण
२ द्रोण = १ खारी
३ खारी = १ भार
९ भार = १ आचित

**भारत** (१) ऋषभ के ज्येष्ठ पुत्र और नाभि के पौत्र भरत के नाम पर भारतवर्ष का नाम भारत पड़ा। इसका पूर्व नाम हिमवर्ष या हैमवत वर्ष था, (२) भरत मनु का नाम था। उससे भारत नाम इस देश का पड़ा।

**भुशुंडी** एक प्रकार का अस्त्र।

**भूतवन** शिव का बन।

**भृगुतंग** हिमालय की एक चोटी का नाम।

**मधुपर्क** मधु, घी, चीनी और दही का मिश्रण (घोल)।

**मधुरा** शिव की माया की शक्ति।

**मन्वन्तर** लगभग ७१ महायुगों के बराबर या देवों के बारह हजार वर्ष के बराबर होता है। १४ मन्वन्तर होते हैं।

**महाप्राज्ञ** सर्वाधिक बुद्धिमान। व्यास तथा अन्य के लिये प्रयुक्त।

**मात्रा** (१) पलक उठने और गिरने (झपकने) तक के काल को मात्रा कहते हैं, (२) शब्द के अक्षर में ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत तीन प्रकार की मात्राएँ होती हैं।

**मुहूर्त्त** तीस कला (कालमान)।

**मूर्तिभेद** चतुर्व्यूह मूर्ति (वामदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध)।

**मेरु** पृथ्वी के मध्य भाग में स्थित चारों ओर फैला हुआ पर्वत का नाम। इसको सुमेरु, हेमाद्रि और रत्नसानु भी कहते हैं।

| | |
|---|---|
| मैथुन | इसके ८ अंग होते हैं। स्मरण, कीर्तन, केलि, प्रेक्षण, गुह्य भाषण, संकल्प, अध्यवसाय और क्रियानिवृत्ति। इसके विपरीत आचरण ब्रह्मचर्य है। |
| म्लेच्छ | जंगली बर्बर जाति हूण आदि। |
| यक्ष | यक्ष के रूप में शिवजी ने अपना दुर्जेय रूप धारण किया था। |
| यक्ष लोक | कुबेर का लोक जिसकी राजधानी अलका है। |
| युगांतिक | युग के अन्त होने पर। |
| योग | जीव द्वारा सव विषयों के ज्ञान की प्राप्ति को योग कहते हैं। पतंजलि के अनुसार चित्तवृत्ति के निरोध का नाम योग है। |
| योगांग | योग के ८ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि होते हैं। |
| योनि परित्याग | जन्म और मृत्यु के बन्धन से मुक्ति। |
| रुद्र | शिव के अर्धनारीश्वर के पुरुष भाग से उत्पन्न ११ रुद्र हैं। उनके नामों में पुराणों में मतभेद हैं। |
| रुद्र गायत्री | तत्पुरुषाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्। |
| रुद्रेण | रुद्राध्याय का रुद्रमंत्र (शतरुद्र)। |
| रैवतक | द्वारका के पास का एक पर्वत रैवत या रैवतक। |
| लोमहर्षण/रोमहर्षण | व्यास के पाँच शिष्यों में से एक शिष्य। पौराणिक परम्परा के संरक्षण का दायित्व इन पर था। इनको सूत कहा जाता है किन्तु ये ब्राह्मण थे। |
| वराह | विष्णु का बराह अवतार। उन्होंने एकार्णव सागर की गहराई में डूबी पृथ्वी को अपने वक्र दंष्ट्रा पर रखकर उठाकर ऊपर लाकर उसको पूर्ववत् स्थापित किया था। |
| वर्धनी | यज्ञ का एक पात्र। |
| वसु | देवों का एक वर्ग। ये ८ है। आप (जल), ध्रुव, सोम, धरा, अनिल, अनल, प्रभास, प्रत्यूष। |
| वामदेव | शिव के पाँच रूपों में से एक ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात। ये रूप आकाश, वायु, अग्नि, जल और भूमि का प्रतिनिधित्व करते हैं। |
| वाराणसी | पुरानी काशी। बरना और असी नदियों के बीच स्थित होने के कारण इसका नाम वाराणसी है। |
| वालखिल्य | एक ऋषि वर्ग। इनकी संख्या साठ हजार कही गई है। ये ब्रह्मा के पुत्र कहे गये हैं। |
| विज्ञानम् | माया। |
| वितस्ति | १२ अंगुल की माप। |
| विश्व | चौदह लोकों का विश्व (जगत) है। इसमें ७ लोक भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यं पृथ्वी के ऊपर हैं। अतल, वितल, सुतल, रसातल, तल, तलातल और पाताल ये नीचे के सात लोक हैं। |
| विश्वकर्मा | प्रभास नामक वसु से उसकी भार्या योगसिद्धि से उत्पन्न पुत्र। प्रख्यात इंजीनियर (भवनों और नगरों आदि के निर्माता)। |

| | |
|---|---|
| **विश्वगौ** | प्रकृति या पुरुष का तथा इस जगत के स्रोत रूप ३२ गुणों से युक्त गो रूप में वर्णित। |
| **शंकु** | कील (लकड़ी या लोहे की)। |
| **शिव वन** | हिमालय पर स्थित वह वन जहाँ शिव जी के पुत्र कार्तिकेय का जन्म हुआ था। |
| **शिव नाम** | शिव के प्रसिद्ध ८ नाम—हर, महेश्वर, शंभु, शूलपाणि, पिनाकधृक्, शिव, पशुपति, महादेव। |
| **श्रद्धा** | शिव की प्रथम पत्नी का नाम। सती पत्नी जो बाद में दक्ष की पुत्री हुई। तृतीय जन्म में वह पर्वती (उमा) हुई। |
| **श्रावक** | बौद्ध भिक्षु, बौद्धभक्त, श्रोता। |
| **श्री पर्वत/श्री शैव** | कृष्णा नदी के पास दक्षिण में। |
| **श्वेत द्वीप** | एक द्वीप का नाम (ब्रिटेन)। |
| **षट्त्रिंसन्मात्रा** | मात्रा अर्थात् सोने के ३६ टुकड़े। |
| **षड्ज ( १ )** | संगीत के सात स्वर में एक स्वर। गान्धार, मध्यम, निषाद आदि नाम अन्य स्वरों के हैं। |
| **( २ )** | स्वर, कल्प, मूर्छना, ताल, वर्ण, लय, अंगना। |
| **सप्ततन्तु** | एक प्रकार का यज्ञ। |
| **सकल** | (१) सृष्टि, पालक, संहार के समष्टि रूप, (२) लिंग की आकृति में विद्यमान शिव। |
| **सगर्भ** | कुंभक प्राणायाम का एक प्रकार। |
| **सप्तधा** | सात तत्त्वों (बुद्धि, अहंकार, ५ तन्मात्रा) का समूह। |
| **सप्तर्षि** | मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु और वसिष्ठ। |
| **सप्त सागर** | लवण, इक्षुरस, सुरा, घृत, दधि, क्षीर और जल। |
| **सप्त द्वीप** | शाल्मलि, कुश, जंबू, प्लक्ष, क्रौंच, शक और पुष्कर। |
| **समाधि** | योग की अन्तिम स्थिति। |
| **सिद्ध** | परम विशुद्ध मानव वर्ग। वे सात हैं—मन्त्रज्ञ, मन्त्रविद आदि। |
| **सुव्रत** | पवित्र धार्मिक व्रत (कृत्य) करने वाला। |
| **सुषिर** | छिद्र। |
| **सोम** | (१) उमा सहित, (२) चन्द्रमा। |
| **स्थानेश्वर** | हरियाणा प्रदेश में कुरुक्षेत्र के पास वर्तमान थानेसर। |
| **स्वस्तिक** | योग साधना में योगी का एक आसन। यह बैठनेका आसन ८ प्रकार का है—स्वस्तिक, पद्म, अर्धेन्दु, वीर, योग, प्रसाधित, पर्यंक, यथेष्ट। |
| **हलाहल** | विष। |
| **हव्य** | देवों के लिये भेंट। |
| **हिमवत** | भारत की उत्तर सीमा पर पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ हिमालय पर्वत। |
| **हिरण्यगर्भ** | ब्रह्मा। |

# श्रीलिङ्गमहापुराण
# के
# श्लोकों की अनुक्रमणी

(अनुक्रमणी की उपयोग की विधि सहित)

# अनुक्रमणी की उपयोग की विधि

यह अनुक्रमणिका लिंगमहापुराण के सब श्लोकों के आरम्भ अंश को लेकर संस्कृत के कोश की भाँति अनुवर्ण क्रम से बनाई गई है। यह महापुराण दो भागों में है। पूर्व भाग में १०८ और उत्तर भाग में ५५ अध्याय है। प्रत्येक श्लोक के आरम्भ अंश के सामने दी गई संख्या है। प्रत्येक श्लोक के आरम्भ अंश के सामने दी गई संख्याओं में प्रथम संख्या भाग को, दूसरी संख्या अध्याय को और तीसरी संख्या उस अध्याय के श्लोक क्रमांक को सूचित करती है। जैसे अनुक्रमणी का प्रथम श्लोक 'अंकितं कुसुमाद्यै' के सामने १.७१.१२६ की संख्या सूचित करती है कि यह श्लोक लिंगमहापुराण के पूर्वभाग के ७१वें अध्याय का १२६वाँ श्लोक है।

संस्कृत भाषा के कोश में अ से ह तक वर्ण या अक्षर होते हैं। उनमें क्रमशः अनुस्वार, विसर्ग तथा व्यंजन वर्णों में अ से औ तक मात्राएँ लगाई जाती हैं। जैसे कं कः क का कि की कु कू कृ के कै को कौ क्।

हलन्त में फिर व्यंजन जोड़े जाते हैं। जैसे क्क, क्ख आदि। इसी क्रम में क् + ष = क्ष, त् + र = त्र और ज् + ञ = ज्ञ बनता है। अतः क्ष से प्रारम्भ होने वाले श्लोक को क हलन्त में अर्थात् कौ के बाद, ज्ञ को ज अक्षर में और त्र को त अक्षर में हलन्त में तौ के बाद देखना चाहिये। क्ष, त्र और ज्ञ संस्कृत भाषा में स्वतन्त्र अक्षर नहीं माने जाते।

इस महापुराण में जो अक्षर मात्रा सहित और संयुक्त अक्षर आरम्भ में आये है उनको खोजने की सुविधा के लिये सूची पृष्ठ संख्या सहित नीचे दी गई है।

## अनुवर्ण क्रम से पृष्ठ संख्या

| अक्षर | पृष्ठ | अक्षर | पृष्ठ | अक्षर | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|---|
| अ | ८५१ | कि | ८६७ | ग | ८६९ |
| आ | ८५७ | की | ८६७ | गा | ८६९ |
| इ | ८५९ | कु | ८६७ | गि | ८६९ |
| ई | ८६० | कू | ८६७ | गी | ८६९ |
| उ | ८६० | कृ | ८६७ | गु | ८६९ |
| ऊ | ८६१ | के | ८६८ | गृ | ८७१ |
| ऋ | ८६१ | कै | ८६८ | गे | ८७१ |
| ए | ८६२ | को | ८६८ | गो | ८७१ |
| ऐ | ८६४ | कौ | ८६८ | गौ | ८७१ |
| ओ | ८६४ | क्र | ८६९ | ग्र | ८७१ |
| औ | ८६५ | क्व | ८६९ | घ | ८७१ |
| क | ८६५ | क्ष | ८६९ | च | ८७१ |
| का | ८६६ | ख | ८६९ | चा | ८७२ |

| अक्षर | पृष्ठ |
|---|---|
| चि | ८७२ |
| ची | ८७२ |
| चू | ८७२ |
| चे | ८७२ |
| चै | ८७२ |
| छ | ८७२ |
| ज | ८७२ |
| जा | ८७३ |
| जि | ८७३ |
| जी | ८७३ |
| जु | ८७४ |
| जै-जै | ८७४ |
| ज्ञ | ८७४ |
| ज्य | ८७४ |
| ज्व | ८७४ |
| झ | ८७४ |
| ट | ८७४ |
| त | ८७४ |
| ता | ८८० |
| ति | ८८१ |
| ती | ८८१ |
| तु | ८८१ |
| तृ | ८८१ |
| ते | ८८१ |
| तै | ८८१ |
| तो | ८८२ |
| तौ | ८८२ |
| त्य | ८८२ |
| त्र | ८८२ |
| त्व | ८८२ |
| द | ८८२ |
| दा | ८८३ |
| दि | ८८४ |
| दी | ८८४ |
| दु | ८८४ |
| दू | ८८४ |
| दृ | ८८५ |
| दे | ८८५ |
| दै | ८८६ |
| दो | ८८६ |
| दौ | ८८६ |
| द्य | ८८६ |
| द्र | ८८६ |
| द्व | ८८६ |
| ध | ८८६ |
| धा | ८८७ |
| धि | ८८७ |
| धु | ८८७ |
| धू | ८८७ |
| धृ | ८८७ |
| धे | ८८७ |
| धै | ८८७ |
| ध्या | ८८७ |
| ध्र | ८८७ |
| न | ८८७ |
| ना | ८८७ |
| नि | ८८९ |
| नी | ८८९ |
| नू | ८९० |
| नृ | ८९० |
| ने | ८९० |
| नै | ८९० |
| न्य | ८९१ |
| प | ८९१ |
| पा | ८९१ |
| पि | ८९१ |
| पी | ८९२ |
| पु | ८९३ |
| पू | ८९३ |
| पृ | ८९४ |
| पै | ८९५ |
| पौ | ८९५ |
| प्र | ८९५ |
| प्रा | ८९५ |
| प्रि-प्रो | ८९७ |
| प्ल | ८९७ |
| फ | ८९७ |
| ब | ८९८ |
| बा | ८९८ |
| बि | ८९८ |
| बी | ८९८ |
| बु | ८९८ |
| बौ | ८९८ |
| ब्र | ८९८ |
| भ | ८९८ |
| भा | ८९९ |
| भि | ९०० |
| भी | ९०० |
| भु | ९०१ |
| भू | ९०१ |
| भृ | ९०१ |
| भे | ९०१ |
| भै | ९०१ |
| भो | ९०१ |
| भ्र | ९०१ |
| म | ९०१ |
| मा | ९०१ |
| मि | ९०४ |
| मी | ९०४ |
| | ९०४ |

| अक्षर | पृष्ठ |
|---|---|
| मु | ९०४ |
| मू | ९०५ |
| मृ | ९०५ |
| मे | ९०५ |
| मै | ९०५ |
| मो | ९०५ |
| मौ | ९०५ |
| य | ९०५ |
| या | ९०७ |
| यु | ९०७ |
| ये | ९०८ |
| यै | ९०८ |
| यो | ९०८ |
| यै | ९०८ |
| यो | ९०८ |
| र | ९०८ |
| रा | ९०९ |
| रु | ९०९ |
| रू | ९१० |
| रे-रौ | ९१० |
| ल | ९१० |
| ला | ९१० |
| लि | ९१० |
| ली | ९१० |
| ले-लौ | ९१० |
| व | ९१० |
| वा | ९१२ |
| वि | ९१२ |
| वी | ९१४ |
| वृ | ९१४ |
| वे | ९१५ |
| वै | ९१५ |
| वौ | ९१५ |
| व्य | ९१५ |
| व्र | ९१६ |
| श | ९१६ |
| शा | ९१७ |
| शि | ९१७ |
| शी | ९१७ |
| शु | ९१७ |
| शू | ९१७ |
| शृ | ९१८ |
| शे | ९१८ |
| शे | ९१८ |
| शै | ९१८ |
| शो | ९१८ |
| शौ-श्म | ९१८ |
| श्य | ९१८ |
| श्र | ९१८ |
| श्व | ९१९ |
| ष | ९१९ |
| स | ९१९ |
| सा | ९२४ |
| सि | ९२५ |
| सु | ९२५ |
| सू | ९२६ |
| सृ | ९२६ |
| से | ९२६ |
| सै | ९२६ |
| सो | ९२६ |
| सौ | ९२६ |
| स्क | ९२७ |
| स्त | ९२७ |
| स्त्र | ९२७ |
| स्थ | ९२७ |
| स्ना | ९२७ |
| स्प | ९२७ |
| स्फ | ९२७ |
| स्म | ९२७ |
| स्न | ९२७ |
| स्व | ९२८ |
| ह | ९२८ |
| हा | ९२९ |
| हि | ९२९ |
| हु | ९२९ |
| ह्व | ९२९ |
| हे | ९२९ |
| है | ९२९ |
| हो | ९२९ |
| ह्र | ९२९ |

# श्रीलिङ्गमहापुराण के श्लोकों की अनुक्रमणी


| श्लोकारम्भ | भा. अ. श्लो. |
|---|---|
| **अ** | |
| अंकितं कुसुमाद्यैश्च | १.७१.१२६ |
| अंगं प्रविन्यसेच्चैव | २.२२.४२ |
| अंगन्यासं ततः पश्चा. | १.८५.५८ |
| अंगन्यासं न्यसेत्पश्चा. | १.८५.६४ |
| अंगसूत्राणि संगृह्य | २.२७.१६ |
| अंगानां च तथैकैकं | २.२२.७६ |
| अंगारसदृशी नारी | १.८.२३ |
| अंगिरामुनिरात्रेयो | १.१८.१०८ |
| अंगुलीजपसंख्यान. | १.८५.१०९ |
| अंगुलीनां च सर्वेषां | १.८५.६८ |
| अंगुल्यग्रनिघातेन | १.९.४१ |
| अंगुल्यग्रेण वै धीमा. | १.२६.१३ |
| अंगुष्ठं मोक्षदं विद्या. | १.८५.११४ |
| अंगुष्ठतर्जन्याग्राभ्यां | १.८५.७८ |
| अंगुष्ठमात्रं सुशुभं | १.३१.१२ |
| अंगुष्ठमात्रौ तु कुशौ | २.२५.२१ |
| अंगुष्ठेन विना कर्म | १.८५.११६ |
| अंजनी मोहिनी माया | २.२७.१५८ |
| अंडं दशगुणेनैव | १.३.३० |
| अंडाज्जज्ञे स एवेशः | १.७०.६२ |
| अंडानां कोटयश्चैव | १.३६.६० |
| अंडोद्भवत्वं शर्वस्य | १.२.७ |
| अंतं गंतुं न शक्ताःस्म | १.३२.१६ |
| अंतःस्थं च बहिःस्थं चं | २.१२.३० |
| अंतःस्थश्च बहिःस्थश्च | २.१२.३३ |
| अंतर्यामीति देवेषु | २.१०.९ |
| अंतर्बलिं च कुंडस्थ | २.२६.२३ |
| अंतर्यामीति देहेषु | २.१०.१३ |
| अंतर्यामी परः कैश्चित् | २.१६.१४ |
| अंधकात्काश्यदुहिता | १.६९.३२ |
| अंधकारस्य कथितो | १.४६.३३ |
| अंधको नाम दैत्येंद्रो | १.९३.१ |
| अंधा बाह्वासिनी बाला | २.२७.२०९ |
| अंब मंगलविभूषणैर्विना | १.६४.६२ |
| अंबरीषं समासाद्य | २.५.१३४ |
| अंबरीष इति ख्यातो | २.५.२१ |
| अंबरीषश्च मद्भक्त. | २.५.१४३ |
| अंबरीषश्च राजासौ | २.५.१५३ |
| अंबरीषस्य दायादों | १.६५.४० |
| अंबरीषस्य पुत्रस्य | २.५.१४६ |
| अंबरीषेण वै पुष्टो | २.४.३ |
| अंबरीषो महातेजाः | २.५.५१ |
| अंबायाः परमेशाय | २.१०४.२४ |
| अंभसां पतये चैव | १.२१.२४ |
| अंशकः षट्शतं तस्मात् | १.४.७ |
| अंशुर्भगश्च द्वावेतौ | १.५५.५९ |
| अंशुर्विवस्वांस्त्वष्टा च | १.५९.३२ |
| अकंपितो गुणग्राही | १.९८.१४३ |
| अकस्माच्च भवेत्स्थूलो | १.९१.६ |
| अकारणजगत्सृष्टि | १.९.४८ |
| अकारस्त्वेष भूर्लोक. | १.९१.५४ |
| अकारोकारमकारं | १.१.२० |
| अकारोकारमकारा | १.८५.४५ |
| अकारो ह्यक्षरो ज्ञेय. | १.९१०५३ |
| अकालिके त्वधर्मे च | १.९८.१७६ |
| अकोमलाः स्थिरा विप्र | २.२५.४८ |
| अक्रूरं हिंसयामास | १.६६.७३ |
| अक्रोधो गुरुशुश्रूषां | १.८९.२५ |
| अक्षः सहैकचक्रेण | १.५५.७ |
| अक्षत्रियाश्च राजानो | १.४०.१२ |
| अक्षपादः कुमारश्च | १.२४.१२३ |
| अक्षयश्चाव्ययश्चैव | १.४३.२७ |
| अक्षरं च क्षरं चाहं | २.१७.१७ |
| अक्षरप्रातिलोम्येन | १.८५.२१० |
| अक्षरांतरनिष्पंदाद् | १.२१.७७ |
| अंगंधरसरूपस्तु | १.८८.२६ |
| अगच्छद्यत्र सोनंतो | १.२०.३५ |
| अगस्त्यश्च वसिष्ठश्च | १.८५.६५ |
| अगस्त्यार्कादयो वापि | २.६.४७ |
| अगुणं ध्रुवमक्षय्यं | १.३.३ |
| अगृहणाद्वंशकर्तारं | १.६६.१७ |
| अग्न आयूंषि पवस | २.२८.५९ |
| अग्नये रुद्ररूपाय | १.१८.३ |
| अग्नयो नैव दीप्यंति | १.१००.१० |
| अग्निकार्यं च यः कृत्वा | १.३४.४ |
| अग्निकार्यमधः शय्यां | १.८३.१३ |
| अग्निज्वालो महाज्वालः | १.६५.१०४ |
| अग्निप्रवेशं कुरुते | १.९१.३४ |
| अग्निमाविशते रात्रौ | १.५९.१५ |
| अग्निरिंद्रस्तथा विष्णु | १.८६.७९ |
| अग्निरित्यादिना भस्म | २.२६.२ |
| अग्निवर्णाय रौद्राय | १.७२.१२६ |
| अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य | २.५४.१८ |
| अग्निहोत्रं गृहे येषां | २.६.२७ |
| अग्निहोत्रं च वेदाश्च | २.२१.७९ |
| अग्निहोत्रेर्पिते तेन | २.१२.५ |
| अग्नेरपां च संयोगा | १.८९.६० |
| अग्नौ च नामाभिर्देवं | १.९८.२६ |
| अग्नौ न तापयेत्यादौ | १.८५.१५० |
| अग्न्यभ्यासे जले वापि | १.८.७९ |
| अग्रतः पृष्ठतो वापि | १.९१.७ |
| अग्रतस्तु तमोमूर्ति | १.७७.७८ |
| अग्रे मूले च मध्ये च | २.२८.३२ |
| अग्रे ससर्ज वै ब्रह्मा | १.७०.१७० |
| अग्रे सामान्यार्घ्यपात्रं | २.२४.२० |
| अग्रे सुराणां च गणेश्वराणां | १.७२.५२ |
| अघृणेनैव कर्तव्यो | २.५०.१२ |
| अघोरं च तथेशानं | १.११.२ |
| अघोरं त ततो ब्रह्मा | १.१४.८ |
| अघोरं दक्षिणे पत्रे | २.२.११० |
| अघोरं पञ्चधा कृत्वा | २.२६.१ |
| अघोरमष्टधा कृत्वा | २.२१.२२ |
| अघोररूपाय विकटाय | १.९५.५० |
| अघोरहृदयं हृद्यं | १.१७.९० |
| अघोराख्यां तृतीया च | २.१४.८ |
| अघोराय नमस्तुभ्यं | १.७२.१४२ |
| अघोरेण फडंतेन | २.२१.७० |
| अघोरेण यथान्याय. | २.२१.३८ |
| अघोरेणांगयुक्तेन | २.४९.२ |

अघोरेभ्यः प्रशांतहृदयाय २.२६.७
अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो २.२६.६
अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो २.२७.२३८
अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्या २.४९.१
अघोरेशस्य माहात्म्यं २.४९.१
अघोरोपि महादेव. २.१४.१३
अचले कारयेत्सर्वं २.४८.३९
अचेतनां सर्वगता १.८८.४२
अचेतनाय चिंत्याय १.१८.१२
अज हरिं च मां वापि १.१०५.२७
अजः पुत्रो रघोश्चापि १.६६.३४
अजवक्त्रो हयवक्त्रो १.७२.८२
अजश्चैव महातेजा १.२३.४५
अजातशत्रुरालोकः १.९८.४३
अजामेकां लोहितां शुक्लकृष्णां १.१६.३५
अजाश्वमेषोष्ट्रखरान् १.६३.३२
अजाश्वानखरोष्ट्राणां १.८५.१५३
अजितश्चैव शुक्रश्च १.७९.२८१
अजेशः क्षेमरुद्रश्च २.२७.१०७
अज्ञानाद्यदि विज्ञानां. १.३१.४३
अटित्वा विविधाँल्लोकान् १.२०.२३
अट्टहासप्रियाश्चैव १.२४.९६
अणवे महते चैव १.२१.२९
अणिमादिगणैश्वर्यं १.६४.१००
अणिमाद्यं तथा व्यक्तं १.८८.१६
अणिमा लघिमा चैव १.८८.९
अणिमाव्यूहमावेष्ट्य २.२७.९८
अणोस्तु विषयत्यागः १.६.२३
अत ऊर्ध्वं गृहस्थेषु १.८९.१५
अत ऊर्ध्वं निबोधध्व. १.६३.८९
अत ऊर्ध्वं पुनश्चापि १.८९.१६
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि १.८८.२
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि १.८९.१
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि १.९०.१
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि १.९१.१
अतः परं प्रवक्ष्यामि १.७६.१
अतः परं प्रवक्ष्यामि १.८५.८३
अतः परमिदं क्षेत्रं १.९२.४५
अतस्तत्र पठेद्विद्वा. १.९६.१२७
अतस्त्वमुग्रकलया १.९६.५७
अताडयच्च राजेंद्रं १.३५.२९
अतिथिः श्रोत्रियो बापि २.६.४१
अतिसूक्ष्मं महार्थं च १.८५.३२
अतीतानागताः सर्वे १.६३.४८
अतीतानि च कल्पानि १.७०.११४
अतीतान्यप्यसंख्यानि २.१०.४६
अतीताय भविष्याय १.२१.३४
अतीता वर्तमानाश्च १.७०.१११
अतीतैस्तु सहैतानि १.६१.१५
अतीव दुर्जये प्राप्ते २.५०.११
अतीव भवभक्तानां १.३०.१३
अतीव भोगदो देवि १.८५.६३
अतीव स्नेहसंयुक्त. २.३.३३
अतुलमिह महाभयप्रणाशहेतुं १.३३.१३
अतो धूमाग्निवातानां १.५४.३९
अतो मां शरणं प्राप्य १.९६.३४
अत्यंतघोरं भगवान् १.९६.२४
अत्यंतनिर्मले सम्यक् १.८.८३
अत्यंतावनतौ दृष्ट्वा १.२२.१
अत्यंतोत्साहयुक्तस्य १.९.१३
अत्याश्रममिदं ज्ञेयं २.५५.२७
अत्युग्रं कालकूटाख्यं १.८६.६
अत्र गच्छंति निधनं १.६०.१०
अत्रान्योत्पातभूकंप. १.९६.१२६
अत्रापि स्वयमेवाहं १.९२.७०
अत्रेर्भार्यानसूया वै १.५.४६
अत्र गाथा महाराज्ञा १.६७.१५
अथ चेल्लुप्तधर्मा तु १.८८.४७
अथ जाम्बूनदमयै १.८०.१३
अथ तस्मिन्क्षणादेवं १.६४.९२
अथ तस्य वचः श्रुत्वा १.७१.४५
अथ तस्य विमानस्य १.८०.४४
अथ तस्यास्तदालापं १.६४.५९
अथ तस्यैवमनिशं १.४२.२
अथ तामाह देवेशो १.१३.१०
अथ तामुद्धतां तेन १.९४.२०
अथ तेषां प्रसन्नोभूद् १.१०२.५३
अथ ते संप्रवक्ष्यामि २.२३.१
अथ ते संप्रवक्ष्यामि २.३५.१
अथ दृष्ट्वा कलावर्ण. १.१७.८९
अथ दृष्ट्वा परा नार्यः १.२९.१५
अथ देवो महादेवः १.४३.४९
अथ दैत्यवधं चक्रे १.६९.८०
अथ द्वादशवर्ष वा १.८०.५०
अथ नंदं च नंदायीं २.२७.६२
अथ नाभ्यंबुजे विष्णो १.६४.१७
अथ निरीक्ष्य सुरेश्वरमीश्वरं १.७२.९९
अथ प्रसूतिमिच्छन्वै १.६८.२३
अथ प्राथमिकस्येह १.४.१
अथ ब्रह्मादयः सर्वे १.९६.९९
अथ ब्रह्मा महादेव. १.१०३.१
अथ भीमरथस्यासतीत् १.६८.४४
अथ महेंद्रविरिंचिविभावसु. १.७२.९४
अथ रुद्रस्य देवस्य १.७२.१
अथ रुद्रो महादेवो २.२०.१
अथर्वणोहं मन्त्रोहं २.१७.१६
अथर्वणोहं मंत्रं १.१७.८५
अथर्वशीर्षः सामास्य १.६५.११३
अथर्वास्त्रं तदा तस्य १.१०७.४९
अथवा देवमीशानं २.२६.१
अथवा पंच कुंडेषु २.४८.४२
अथवा पूजयेच्छंभुं १.८९.१०
अथवा भास्करं चेष्ट्वा २.२२.२९
अथवा मध्यतो द्वीपं २.३२.५
अथवा मिश्रमार्गेण २.२८.२६
अथवा योगामार्गेण २.२०.४३
अथवारिष्टमालोक्य १.९१.७३
अथवा विष्णुमतुलं २.४८.२८
अथवा शिवकुंभे च २.४७.३६
अथवा सक्तचित्तश्चे. १.८१.५२
अथवा ह्येकमासं वा १.८१.५१
अथ विभाति विभो विशदं वपु. १.७२.९०
अथ विभ्रम्य पक्षाभ्यां १.९६.७१
अथ शृणु भगवंस्तवच्छलेन १.१०४.२८

अथ शैलसुता देवी १.१०२.२३
अथ संप्रोक्षयेत्पश्चाद् १.२७.१८
अथ सज्यं धनुः कृत्वा १.७२.१०१
अथ समररतैः सदा समता. १.७१.३७
अथ सा तस्य वचनं १.१०६.१०
अथ स्नानविधिं वक्ष्ये १.२५.६
अथांतरिक्षे विपुला २.४६.१२
अथांभसा प्लुतां भूमिं १.३८.७
अथाज्ञां प्रददौ तेषां. १.४४.४६
अथातः संप्रवक्ष्यामि २.३७.१
अथादितिर्दितिः साक्षा. १.१०३.४
अथानेनैव कर्मात्मा १.७५.१२
अथान्यं पर्वतं सूक्ष्म. २.३१.१
अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि २.३३.१
अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि २.४४.१
अथान्यो ब्रह्मणः कल्पो १.१६.१
अथापरो ब्रह्मवरात्मजो हि २.५.८७
अथापश्यन्महातेजाः १.१४.४
अथार्चिततया ख्यात. २.१४.२८
अथार्धमात्रां कल्याणी १.४१.११
अथाल्पकृष्टाश्चानुप्तां १.३९.४०
अथाशेषासुरांस्तस्य १.९३.११
अथाह भगवान् ब्रह्मा १.७२.१०५
अथाह भगवान् रुद्रो १.७२.३४
अथाहार्धेन्दुतिलकः १.१०३.७३
अथैनमवमन्यते १.८९.१३
अथैवं ते तदा दग्धा १.७१.३९
अथोभौ चंदनचर्चि. २.२४.२
अथोवाच महादेवः १.१९.१
अदितिः सुषुवे पुत्र. १.६५.२
अदितिश्च दितिश्चैव १.६३.२३
अदृश्यंतीं पुनः प्राह १.६४.६५
अदृश्यंतीं महाभागां १.६४.१०१
अदृश्यंतीं वसिष्ठं च १.६४.७५
अदृश्यंती तदा वाक्यं १.६४.६४
अदृष्टपूर्वैरन्यैश्च १.९६.७
अदृष्टमस्माभिरनेकमूर्ते १.७१.११२
अदेहिनस्त्वहो देह. १.५३.५१
अद्भिः संछादितां भूमिं १.७०.१२७
अद्भिः संप्रोक्ष्य पश्चाद्धि २.३०.३
अद्भिर्दशगुणाभिस्तु १.७०.५४
अद्भिर्विविधमाल्यैश्च १.३१.३२
अद्यप्रभृति सर्वेषः १.२०.५६
अद्यापि च विनिर्मग्नो २.६.८१
अद्यापि न निवर्तते १.६३.७
अद्राक्षं तं नृपं तत्र २.३.५०
अद्रिराजालयः कांतः १.९८.६२
अधः पात्रं सहस्रेण २.२९.२
अधः सप्ततलानां तु १.५३.४४
अधरोऽनुत्तरो ज्ञेयो १.९८.११०
अधर्मं च महातेजा २.६.५
अधर्मश्चानिष्टफलो १.१०.१४
अधर्मस्तमसो जज्ञे १.७०.२६५
अधर्माभिनिवेशित्वात् १.४०.४४
अधश्च धर्मो देवेश १.३६.१४
अधस्तादत्र चैतेषां १.४५.९
अधारणे महत्त्वे च १.१०.१३
अधितिष्ठति योनिं यो २.१८.२९
अधिष्ठानं महामेरु. १.७२.७
अधिष्ठिता सा हि महेश्वरेण १.७०.८३
अधुना संप्रवक्ष्यामि २.३०.१
अधृतः स्वधृतः साध्यः १.९८.१४५
अधृष्यं सर्वभूतानां १.७०.१२६
अधोदृष्ट्या वितस्त्यां तु १.८६.६२
अध्यापनं चाध्ययनं १.१०५.१७
अध्यापयामास च तां १.९५.११
अध्यापयामास तदा २.७.१८
अध्यायनीं च कौबेर्या. २.१९.१६
अध्रुवेण शरीरेण १.१०८.१८
अनंतः कुलिकश्चैव १.८२.५४
अनंतकात्सुतो यज्ञो १.६८.२७
अनंतदृष्टिरानंदो १.९८.५७
अनंतपादस्त्वमनंतबाहु. १.७२.१५७
अनंताद्या महानागाः १.७४.५
अनंताय विरूपाय १.९८.१०
अनंतासनसंस्थाय १.१७.१४५
अनंतेत्येव सा नित्यं २.५.१२
अनंतेन च संयुक्तं १.४५.११
अनंतेशादयस्त्वेवं १.५०.१९
अनंतेशादिदेवांश्च २.४७.४०
अनघाय विरिंचाय १.१०४.८
अनन्या सा गतिस्तत्र १.९२.७९
अनपत्यः क्रतुस्तस्मिन् १.६३.६८
अनपावृतमद्वैतं १.८६.५८
अनभ्यर्च्य महादेवं २.६.४३
अनभ्रे विद्युतं पश्ये. १.९१.१०
अनमित्रसुतो निघ्नो १.६९.१२
अनया देवदेवोसौ १.७०.३४५
अनयोरेकमुद्दिश्य २.५.९६
अनयोर्यं वरं भद्रे २.५.९१
अनागतेषु तद्वच्च १.४०.९६
अनाच्छाद्य द्विजः कुर्या. १.५४.४३
अनात्मन्यात्मविज्ञान. १.९.८
अनादानं परस्वाना. १.८.१५
अनादित्वाच्च पूर्वत्वात् १.७०.१०४
अनादिनिधनो धाता २.९.१३
अनादिमध्यनिधनो १.९८.३७
अनादिरेष संबंधो २.९.४८
अनादिमान्प्रबंधः स्यात् १.८८.६६
अनादृत्य कृतिं ज्ञात्वां १.९९.१६
अनाद्यन्तमजं सूक्ष्मं १.७०.६
अनामया ह्यशोकाश्च १.५२.३४
अनावृष्टया हते लोके १.६३.८१
अनासनः शयानो वा १.८५.१६१
अनिरुद्ध्य विचिष्टेद्यः १.९.५७
अनिर्विण्णो गुणाग्राही १.९८.१४९
अनुगम्य च वै स्नात्वा १.८९.८९
अनुगृह्य गणत्वं च १.९२.१८८
अनुगृह्य तदा देवी १.१०२.१२
अनुगृह्यस्ततस्तुष्टो १.१५.२
अनुगृह्ये ततो दद्या. १.८५.९५
अनुग्रहो मया ह्येवं १.९२.१२२
अनुज्ञाप्य च राजानं २.५.५९
अनुपृक्तावभूतांता. १.७०.७३
अनुमानादसंमूढो १.७०.१२३
अनुम्लोचा घृताची च १.५५.३३
अनुयांति सुराः सर्वे १.९६.७५

अनृतं बुवते लुब्धा. १.४०.४
अनेन देवं स्तुत्वा तु १.८२.१११
अनेन निर्मितास्त्वेवं १.४५.४
अनेन विधिना स्नात्वा १.२५.७
अनेन हरिरूपेण १.९६.२०
अनेनैव मुनिश्रेष्ठा २.८.२२
अनेनैव वराहेण १.९४.२१
अनेनोपसदा देवा १.७१.४४
अनौपम्यमानिर्देश्य. १.१७.३५
अन्धकं च महाभागं १.६८.२
अन्नं प्राणे मनो ज्ञानं २.१८.५१
अन्नप्रशासनके विद्वान् २.२९.१२
अन्नभक्षप्रमाणं स्या. २.२५.५१
अन्नमयोसौ भूतात्मा १.८६.९३
अन्नशुद्धो सत्तावशुद्धि. १.८६.१४०
अन्नाद्यैरलमद्यार्थे १.२९.५५
अन्नोदकं मूलफलं १.६३.८२
अन्यं च कथयिष्यामि १.१०८.११
अन्यं वा गेययोगेन २.३.२७
अन्यत्र रमते मूढः १.८६.१०९
अन्यथा जीवितं तासां १.३९.४७
अन्यथा नरकं गच्छे. २.३.१११
अन्यथा नास्ति संततुं १.२९.४५
अन्यथा वापि शुश्रूषां १.८६.१५१
अन्यभक्तसहस्रेभ्यो २.४.२०
अन्याः सृज त्वं भद्रं ते १.७०.३१५
अन्यानि नवतीश्चैव १.४.२१
अन्येपि नियतात्मानो १.१३.२०
अन्येपि योगिनो दिव्या. १.९२.६२
अन्योऽन्यं तारयन्नैव २.२०.४१
अन्योन्यं सस्मितं प्रेक्ष्य १.२९.१९
अन्योन्यमनुरक्ताश्च १.५२.२०
अन्योन्यमिथुना ह्येते १.७०.८०
अन्वयः सकलो वत्स १.६४.१०२
अपमृत्युजयार्थं च २.२७.११
अपमृत्युप्रशमनं १.९६.११९
अपरब्रह्मनिर्दिष्टं २.१५.१७
अपराजिता बहुभुजा १.७०.३३८
अपरामृष्टमदश्चैव १.८६.१०२
अपरेण सितोदश्च १.४९.५०
अपरौ सुदृढो पिंडौ २.२८.३९
अपर्णा चैकपर्णा च १.७०.३३१
अपर्णा वरदा देवी १.८२.१५
अपवर्गं ततो गच्छेत् १.८८.३०
अपवित्रकरो शुद्धः १.८५.१५७
अपश्यंस्तत्पुरं देवाः १.८०.१०
अपहृत्य च विज्ञान. २.१७.९
अपां च वरुणं देवं १.५८.३
अपां निधानं जीमूताः १.५४.४४
अपां निधिरधिष्ठानं १.९८.७३
अपां शिवस्य भगवा. १.५४.३६
अपानाय द्वितीया च १.८८.८३
अपापा नैव हंतव्याः १.७१.४८
अपाम सोममृता २.१८.७
अपिध्यायंति तां सिद्धिं १.३९.२६
अपूजितस्तदा देवैः १.७२.४५
अपूतोदकपाने तु १.८९.९
अपृच्छन् भगविल्लंगं १.१७.४
अपृच्छन्सूतमनघं २.४७.४
अप्रतीपेन ज्ञानेन १.७०.८८
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं १.९१.५०
अप्रमाणाय सर्वाय १.२१.४९
अप्रमादश्च विनयो १.५.३६
अप्रमेयं तदस्थूल. १.८६.५७
अप्रसंख्येयतत्त्वस्य १.२१.८७
अप्राप्य तं निवर्तंते १.१७.५९
अप्सरोभिः प्रनृत्ताभिः १.१०२.२४
अप्सु वा यदि वादर्शे १.९१.११
अप्सु शेते यतस्तस्मात् १.७०.१२०
अबुद्धिपूर्वकाः सर्गाः १.७०.१६७
अब्बिंदु च कुशाग्रेण १.८९.१९
अब्रवीद् भगवान्रुद्रो २.१७.१०
अभक्ष्यभक्षी संपूज्य १.७९.६
अभयं च ददौ तेषां १.९५.५९
अभवत्कुंठिताग्रं हि १.३६.४७
अभवन् वृष्टिसंतत्या १.३९.३८
अभवे च भवे तुभ्यं १.१६.१०
अभाग्यान्न समाप्तं तु १.७१.१४१
अभिमंत्र्य धेनुमुद्रा. २.२५.८९
अभिरामः सुशरणः १.९८.७९
अभिरामः सुशरणो १.६५.१६६
अभिवाद्याग्रतो धीमान् १.१.१७
अभिषिच्य ततो राज्ये १.६७.११
अभिषेकोऽसुरः पूर्व २.२७.२७५
अभिषेक्तुकामं च नृपं १.६६.८१
अभीषुहस्तो भगवा. १.७२.३२
अभुक्तराशिधान्याना. १.८९.६४
अभोज्यानि यतीनां तु १.९०.२१
अभ्यमन्यत सोऽन्यं वै १.५.४
अभ्ययुः शंखवर्णाश्च १.१०३.१३
अभ्यर्चयंति ये लोका १.१०५.२६
अभ्यर्च्य च यथान्यायं २.३.३१
अभ्यर्च्य देवदेवेशं १.६४.६९
अभ्यषिंचत्कथं ब्रह्मा १.५८.१
अभ्यषिंचत्पुरुं पुत्रं १.६६.८०
अभ्यषिंचत्सुधर्माणं १.५८.१४
अभ्यस्यंति परं योगं १.९२.४०
अभ्युक्ष्य दापयेदग्नौ २.२५.२५
अभ्युक्ष्य सकुशं चापि १.२५.२७
अमरत्वं मया दत्तं १.१०७.५८
अमरावती पूर्वभागे १.४८.९
अमरेशः स्थितीशश्च २.२७.१०३
अमर्षणो मर्षणात्मा १.६५.७६
अमस्तु तालुनीतस्य १.१७.७७
अमाक्षिकं महावीर्यं १.३९.२८
अमानी बुद्धिमाञ्छांत. १.८६.१४९
अमानुष्याणि रम्याणि १.४९.३४
अमावास्यामहन्येव २.८.१५
अमूर्तोपि ध्रुवं भद्रे १.१०१.४३
अमृतं चाक्षरं ब्रह्म १.८६.९९
अमृतः शाश्वतः शांतो १.९८.६६
अमृताख्या कला तस्य २.१२.८
अमृतीकरणं चैव २.२१.६०
अमृत्युः सर्वदृक्सिंह. १.९८.१५१
अमोघां कर्णिकाकारां २.१९.२२
अमोघार्थप्रसादश्च १.६५.१४
अमोघा विंध्यनिलया १.७०.३३९

अम्बुसिक्तगृहद्वारां २.५.८१
अम्लानमालानिचितै. १.५१.११
अयंत इध्म आत्मा २.२८.५७
अयं स गर्भो देवक्यां १.६९.५६
अयज्वानश्च यज्वानः १.६.५
अयने चार्धमासेन १.७७.६४
अयाचत महादेवं १.९८.१८९
अयुताघोरमभ्यस्य १.१५.१०
अयुतानि च षट्त्रिंशत् २.३.६९
अयुतासु सुतस्तस्य १.६६.२३
अयोगी नैव जानाति २.२०.५२
अयोनिजं मृत्युहीन. १.४१.६३
अयोनिज नमस्तुभ्यं १.४२.२८
अरक्षितारो हर्तारः १.४०.११
अरणीजनितं कांतोद्भवं २.२५.७३
अरण्ये पर्वते वापि १.७०.३४१
अरत्निमात्रमायाभं २.२५२७
अरश्मिवंतमादित्यं १.९१.३
अरिष्टनेमिनं वीरो १.१००.३६
अरिष्टनेमिरश्वश्च १.६९.३१
अरिष्टे सूचिते देहे १.९१.३६
अरुंधतीं कराभ्यां तां १.६४.१६
अरुंधतीं ध्रुव चैव १.९१.२
अरुंधतीं महाभागां १.६४.९६
अरुंधत्यां वसिष्ठस्तु १.६३.८३
अरूपाय सुरूपाय १.३२.२
अरेषु तेषु विप्रेंद्राः १.७२.४
अर्कैरष्टशतं नित्यं १.८५.१९२
अर्घ्यं च दापयेत्तेषां २.२२.६५
अर्घ्यं दत्वाथ पुष्पाणि १.२७.५३
अर्घ्यं दत्वा समभ्यर्च्य १.२६.४
अर्घ्यस्य सादनं चैव २.२२.३३
अर्घ्यांबुना समभ्युक्ष्य २.२२.३९
अर्घ्योदकमग्रे ह्रदा २.२४.१९
अर्चनं गाननृत्याद्यं २.२.५
अर्चना च तथा गर्भ. २.२१.६८
अर्चनादधिकं नास्ति २.२६.२९
अर्चयंति मुहुः केचित् १.७५.३२
अर्चयामास गोविंदं २.५.१३
अर्चयामास देवेश १.९२.१८६
अर्चयामास सततं २.५.९
अर्चयित्वा लिंगमूर्तिं १.७३.९
अर्चयेद्देवदेवेशं २.३०.१०
अर्चयेद्विष्णुगायत्र्या २.३६.५
अर्चितं परमेशानं १.७९.२५
अथदेशादिसंयुक्तं २.२०.१०
अर्थितव्यः सदाचारः १.९८.२८
अर्थो विचारतो नास्ति १.७५.२३
अर्धं शिवाय दत्त्वैव २.२१.३२
अर्धक्रोशे तु सर्वे वै १.५४.५२
अर्धनारीनरवपु. १.७०.३२५
अर्धनारीशरीराय १.१८.३०
अर्धनारीश्वरं दृष्ट्वा १.५.२८
अर्धनारीश्वरो भूत्वा १.४१.४३
अर्धमासांश्च मासांश्च १.७०.१८०
अर्धावशिष्टे तस्मिंस्तु १.६३.५६
अर्धेनांशेन सर्वात्मा १.४१.४४
अर्यमा दशभिर्याति १.५९.३८
अर्वाक्स्रोतोऽनुग्रहश्च १.५.६
अर्वावसुरिति ख्यातो २.१२.१५
अलंकृत त्वया ब्रह्मन् १.९२.१६०
अलंकृतां मणिस्तंभै. २.५.८३
अलंकृत्य यथान्यायं १.८४.२५
अलंकृत्य वितानाद्यै. १.७७.८३
अलक्षणमनिर्देश्य. १.८.१०३
अलक्ष्मीं वाथ संत्यज्य २.७.२
अलक्ष्मीरतुला चेयं २.६.१७
अलदं जलदस्याथ १.४६.२६
अलब्ध्वा स पितुर्धीमा. १.६२.७
अलातचक्रवद्यांति १.५७.७
अलिंगो लिंगमूलं तु १.३.१
अलुब्धः संयमी प्रोक्तः १.१०.२५
अल्पंभूतं सुखं स्वर्गे १.२०.८९
अल्पसौख्यं बहुक्लेशं १.२०.८८
अल्पाक्षरं महार्थं च १.८५.२९
अल्पोदका चाल्पफला १.४०.३१
अवकाशमशेषाणां २.१०.२१
अवकाशस्ततो देव १.३.२५
अवक्रा निर्व्रणाः स्निग्धा २.२५.४९
अवगाह्य पुनस्तस्मिन् १.२५.२०
अवगाह्यापि मलिनो १.८.३४
अवतीर्णे सुते नंदिन् १.४२.३२
अवतीर्णो यथा ह्यण्डात्. १.६४.५३
अवध्यः सर्वदा सर्वैः १.३६.२३
अवध्यत्वमपि श्रुत्वा १.९७.१२
अबध्या वरलाभात्ते १.९८.१३
अवध्यो मम विप्रर्षे १.३५.१६
अवयवव्याप्तिर्वक्त्रोद्घाटनं २.२५.७४
अवाप महतीं सिद्धि. १.६२.४१
अवापुर्मुनयो योगान् २.१५.२१
अविघ्नं यज्ञदानाद्यैः १.१०.४३
अविद्यया मुनेर्ग्रस्तः १.५.३
अविद्ययास्य संबंधो २.९.३६
अविद्या पंचपर्वैषा १.७०.३२
अविद्यामस्मितां रागं २.९.१४१
अविमुक्तेश्वरं प्राप्य १.२९.२९
अविमुक्तेश्वरं लिंगं १.९२.१०५
अविमुक्तेश्वरे नित्यं. १.९२.१४६
अविमुक्ते सुखासीनं १.१०३.७२
अविशब्देन पापस्तु १.९२.१४३
अविशेषवाचकत्वा १.७०.३७
अव्यक्तं चेश्वरात्तस्मा. १.७०.३
अव्यक्तलिंगैर्मुनिभिः १.९२.५५
अव्यक्ताज्जायते तेषां १.७०.८९
अव्यक्तादि विशेषांतं १.३.१२
अव्यक्तादीनि वै दिक्षु २.२७.२२
अव्यक्ताय विशोकाय १.९६.९०
अव्ययं च व्ययं चापि १.७०.२५१
अव्याकृतं प्रधानं हि २.१६.२४
अव्याकृतमिदं त्वासी. १.५९.७
अव्रणत्वं शरीरस्य १.९.३५
अशनिर्भासकश्चैव १.१०३.३१
अशीतिमंडलशतं १.५५.१४
अशीतिश्च सहस्राणि १.४.२८
अशुभा सा तथोत्पन्ना २.६.७
अशून्यममरैर्नित्यं १.५१.१६
अशेषांश्च तदर्धेन २.२७.२७१

अशौचं चानुपूर्व्येण १.८९.९३
अश्नाति तद्धरेरास्यं २.४.१५
अश्मकं जनयामास १.६६.२८
अश्रद्धादशनं भ्रांति. १.९.२
अश्वमेधफलं प्राप्य १.७७.५५
अश्वमेधसहस्रेण १.६५. ७१
अश्वमेधसहस्रेण १.९८.१९१
अष्टत्रिंशत्कलादेहं २.२६.१५
अष्टदिक्षु च कर्तव्या २.३०.८
अष्टदिक्ष्वष्टकुंडेषु २.३४.३
अष्टपत्रं लिखेत्तेषु २.२७.३६
अष्टबाहुं चतुर्वक्त्रं २.१९.७
अष्टभिश्च हयैर्युक्तः १.५७.१
अष्टमंगलसंयुक्तं २.२८.२४
अष्टमंडलसंयुक्ते २.४७.२३
अष्टमं नवमं चैव १.८०.२२
अष्टमांगुलसंयुक्त. २.२७.२६३
अष्टमूर्तिर्विश्वमूर्ति. १.९८.३२
अष्टमूर्तेः प्रसादेन १.४१.३७
अष्टमूर्तेर्महिशस्य २.१३.३१
अष्टमूर्तेर्महिशस्य २.१३.३२
अष्टमूर्तेर्महिशस्य २.१३.३३
अष्टमूर्तेरनन्यत्वं २.१३.२८
अष्टमूर्तेस्तु सायुज्यं १.४१.३४
अष्टम्यंतं तथांगार. २.५०.३७
अष्टम्यां च चतुर्दश्या. १.८४.२१
अष्टम्यां वा प्रदातव्यं २.४२.४
अष्टरश्मि गृहं वापि १.६१.२५
अष्टशक्तिसमायुक्त. १.८८.५
अष्टषष्टिपलेनैव २.२७.२६८
अष्टस्वेतासु सुष्टासु १.७०.२३५
अष्टहस्तश्च वरदो २.५०.२१
अष्टहस्तेन वा कार्या २.२८.१८
अष्टांगप्रणिपातेन १.८९.३४
अष्टांगुलप्रमाणेन २.२७.२०
अष्टाक्षरस्थितो लोकः १.२३.३२
अष्टाक्षरो द्विजश्रेष्ठा २.८.१
अष्टादशपुराणानां १.२६.२७
अष्टादशविधं चाहु. २.९.३५
अष्टानां लोकपालानां १.३५.५
अष्टाब्दादेकरात्रेण १.८९.८५
अष्टावक्रस्य शापेन १.६९.८७
अष्टाश्वश्चाथ भीमस्य १.५७.३
अष्टोतरणतं हुत्वा २.२७.२४१
अष्टोत्तरशेतेनापि २.३६.३
अष्टोत्तरसहस्रं तु २.५०.३६
अष्टोत्तरसहस्रेण १.८५.२००
अष्टोत्तरसहस्रेण २.३९.२
अष्टोत्तरसहस्रेण २.४९.७
अष्टौ पुराण्युदीर्णानि १.५०.२
अष्टौ प्रकृतयो देव्या २.११.२२
असंख्याताश्च संक्षेपात् ३.४.५४
असंख्याता हि कल्पेषु १.७.१९
असंगैश्च हयैर्युक्तो १.५५.५
असंगो युयुधानस्य १.६९.१७
असंचयं द्विजानां च १.८९.७९
असद्वादो न कर्तव्यो १.९०.११
असन्निकृष्टे त्वर्थेपि १.८६.१२
असपत्नः प्रसादश्च १.६५.१११
असमंजस्य तनयः १.६६.१९
असमक्षं समक्षं वा १.८५.१८०
असादृश्यमिदं व्यक्तं १.९.४९
असिपत्रवनं चैव १.८८.५९
असुरा दुर्मदाः पापा १.७१.४९
असुरा यातुधानाश्च १.१०४.३
असुहृत्सर्वभूतानां १.६५.१३६
असूत मेना मैनाकं १.६.७
असूत रोहिणी रामं १.६९.४५
असूत सा च तनयं २.८.१६
असूत सा दितिर्विष्णुं १.६४.४७
असृजच्च महातेजाः १.७१.७३
असृष्ट्वैव प्रजासर्ग १.७०.१७६
अस्तं याति पुनः सूर्यो १.५९.१९
अस्ति चेद् भगवन् भीति. १.३६.३९
अस्तेयं ब्रह्मचर्य च १.८९.२४
अस्त्रायाग्निशिखाभाय २.२१.१४
अस्नात्वा न च भुंजीया. १.८५.१४३
अस्पर्श तदरूपं च १.८६.५५
अस्पृश्यः कर्मसंस्कारैः २.९.४३
अस्मद्धितार्थं देवेश १.७२.११३
अस्माकं यान्यमोघानि १.१०१.२०
अस्माभिर्नारदाद्यैश्च २.१.४६
अस्मात्तु पततां दुःखं १.८६.४०
अस्मात्प्रवृत्ता पुण्योदा १.५२.४
अस्मान् मयोह्यमानस्त्वं १.२०.५३
अस्मान्महत्तरं भूतं १.२०.७६
अस्मिन्नर्थे महाप्राज्ञै. १.५९.४
अस्मिन्मन्वन्तरे चैव १.६१.१६
अस्मिन्सिद्धाः सदा देवि १.९२.३९
अस्य क्षेत्रस्य माहात्म्य. १.९२.३६
अस्य क्षेत्रस्य माहात्म्य १.९२.५३
अस्य देवस्य रुद्रस्य १.१०३.४२
अस्य द्वीपस्य मध्ये तु १.४८.१
अस्य लिंगादभूद्बीज. १.१७.६५
अस्याः बुद्धे प्रसादस्तु १.८.७५
अस्यात्मना सर्वमिदं १.७०.७
अस्यामुत्पादयामास १.६९.२६
अस्या विनिर्गता नद्यः १.५२.११
अस्यैकादशसाहस्रे १.२.४
अस्यैवात्रमिदं सर्वं १.८६.९१
अस्यैवेह प्रसादात्तु ७.५४.६६
अहंकारमनुप्राप्य १.४१.४
अहंकारमहंकारात् १.७६.११
अहंकाराच्छब्दमात्रं १.३.१९
अहंकारावलेपेन १.९६.४४
अहंकारोऽतिसंसूते २.१०.१०
अहं वामांगजोब्रह्म १.३८.३
अहमग्निर्महातेजाः १.३४.३
अहमेको द्विधाप्यासं १.८५.१०
अहमेव परं ज्योतिः १.१७.२७
अहरंते प्रलीयंते १.७०.७१
अहर्भवति तच्चापि १.५४.२५
अहस्तत्रोदगयनं १.४.१६
अहस्तस्य तु या सृष्टिः १.७०.६८
अहिंसाप्येवमैवेषा. १.८.२०
अहिंसायाः प्रलोभाय १.२१.३३
अहिंसा सत्यमस्तेय १.८३.५२

अहिंसा सर्वत; शान्ति. १.१०.१९
अहिंसा सर्वभूतानां १.९०.१६
अहिर्बुध्न्यो निर्ऋतिश्च १.६५.१२५
अहुताशी सहस्रेण १.१५.१२
अहोद्भुतं मया दृष्टं १.६४.३७
अहोधिक् तपसो मह्यं १.२२.२१
अहो निरीक्ष्य चातंकं १.३.२५
अहो बलं दैवविधे. १.४३.१२
अहोऽभिषेकमाहात्म्य. २.२७.२८०
अहो ममात्र काठिन्यं १.६४.४१
अहोरात्रं च नक्तं च १.६५.७१
अहोरात्रं रथेनासा. १.५५.८२
अहोरात्रविभागाना. १.६१.५४
अहोरात्रात्तदा तासां १.४०.७४
अहोरात्रार्धमासानां १.२१.१३
अहोरात्रोषितः स्नातः १.१५.२६
अहो विचित्रं तब देवदेव १.७२.१६३
अहो विधेर्वलं चेति १.७१.१४०
अहोस्य तपसो वीर्य. १.२९.६४

आ

आकंठं वह्नितत्त्वं स्या. १.८६.१३६
आकाशं शब्दमात्रं च १.७०.४३
आकाशं शब्दमात्रं तु १.७०.३२
आकाशदेहो दिग्बाहुः १.८२.३३
आकाशांभोनिधिर्योसौ १.५२.३
आकाशात्मानमीशान. २.१४.२६
आकाशादीनि भूतानि १.१७.३१
आकाशेनावृतो वायु. १.७०.५६
आकाशेनावृतो वायु. १.३.३२
आकृष्येते यदा ते वै १.५५.१३
आखंडलधनुः खंड. १.९६.९
आगच्छद्यत्र वै विष्णु. १.३७.३७
आगतो न यथा कुर्यात् २.५.१०९
आगतोसि यतस्तत्र १.९६.२६
आगत्य वाथ सृष्टिं वै १.६३.१०
आगम्य दृष्ट्वा मां नित्यं २.१.५९
आगमिष्यामि ते राजन् २.५.७२
आग्निकः शतकोट्या वै १.१०३.२०
आग्नीध्रं ज्येष्ठदायादं १.४७.१
आग्नेयं च ततः सौरं १.८.९४
आग्नेयसौरममृतं १.२८.१
आग्नेयानां श्वासजानां १.५४.५६
आग्नेय्यां च तथैशान्यां २.२२.५१
आग्नेय्यां च विधानेन २.२७.२५०
आघारावपि चाधाय २.२५.९८
आचंद्रतारकं ज्ञानं १.७६.३८
आचम्य च पुनस्तस्मा. १.२५.२१
आचम्य त्रिस्तदा तीर्थे १.२५.१९
आचम्य वा जपेच्छेषां १.८५.१५९
आचम्याचमनं कुर्यात् १.२५.२६
आचामेद् ब्रह्मतीर्थेन २.२६.३
आचारः परमा विद्या १.८५.१२९
आचारपालकं धीरं २.२०.२३
आचार्यं पूजयेच्छिष्यः १.८५.८८
आचार्येभ्यः प्रदातव्यं २.२८.८७
आचार्यो मध्यकुंडे तु २.५०.२९
आचिनोति च शास्त्रार्था. १.१०.१६
आच्छादनोत्तरासंगं २.३७.६
आजगाम स विश्वात्मा २.५.२६
आजहाराश्वमेधानां १.६८.२८
आज्ञया तस्य सा शोकं १.६४.६०
आज्ञया दारुकं तस्याः १.१०६.१९
आज्ञा आवेशनी कृष्णा १.७०.३३४
आज्ञाधारस्त्रिशूली च १.९८.७८
आज्ञापय जगत्स्वामिन् १.९६.१२
आज्ञापय वयं नाथ १.३२.१५
आज्ञाबलात्तस्य धरा १.५३.५४
आज्ञासिद्धं क्रियासिद्धं १.८५.८५
आज्ञाहीनं क्रियाहीनं १.८५.८४
आज्यं क्षीरं मधुश्चैव २.४९.१४
आज्यतापनमैशान्यां २.२५.८३
आज्यानां काष्ठसंयोगा. १.५४.४७
आज्येन स्रुग्वदनेन २.२५.९०
आज्योदनार्णवश्चैव १.१०७.५६
आततायिनमुद्दिश्य २.५०.१०
आतारार्केदुनक्षत्रं १.२०.८३
आतिथ्यश्राद्धयज्ञेषु १.८९.११
आत्तशस्त्रो जटाजूटो १.९६.८
आप्तज्ञानं महादेवो २.१८.२४
आत्मज्ञानांभसि स्नात्वा १.८.३६
आत्मत्रयं ततश्चोर्ध्वं १.२७.२९
आत्मत्राणाय शरणं १.९५.३३
आत्मनः सदृशान्दिव्यां १.३६.५७
आत्मनस्तु समान् सर्वान् १.६.१२
आत्मना च धनेनैव २.२०.२४
आत्मनो भैरवं रूपं १.९६.४
आत्मनो यद्धि कथित. १.६४.४०
आत्मप्रयोजनाभावे २.९.४९
आत्मबोधपरं गुह्यं १.८५.२१९
आत्मभूरनिरुद्धोत्रि १.९८.१०२
आत्मयोनिरनाद्यंतो १.९८.९१
आत्मवत्सर्वभूतानां १.८.१२
आत्मा एकश्च चरति १.८६.८६
आत्माकारेण संवित्ति. २.१५.२२
आत्मा च सर्वभूतानां १.३२.५
आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिः २.१३.२९
आत्मानं चांतरात्मानं १.२६.८
आत्मानं चांतरात्मानं १.७७.८०
आत्मानं पुरुषं ध्यायेत् २.२९.५
आत्मानं प्रणवं विद्धि १.८५.४३
आत्रेयवंशप्रभवा. १.६३.७१
आत्रेयाणां च चत्वारः १.६३.७८
आदातव्यं च गन्तव्यं १.८६.७७
आदाय च कराभ्यां च १.१०५.१४
आदावत्राहमागत्य १.९२.८३
आदिकर्ता च भूतानां १.३.३७
आदित्यं परमं भानुं १.५५.३९
आदित्यं भास्करं भानुं २.१९.२९
आदित्यं भास्करं भानुं २.२८.६५
आदित्यमग्रतो पश्यन् २.१९.१३
आदित्यवंशं सोमस्य १.६५.१
आदित्यश्च तथा सूर्य. १.८२.४३
आदित्यात्तच्च निष्क्रम्य १.६१.३१
आदित्या वसवो रुद्रा २.१०.३५
आदित्याश्च तथा रुद्राः १.५०.८
आदित्योपि दिशश्चैव १.८६.७८
आदित्यो वै तेज ऊर्जो २.२२.४०

आदिदेवः क्रियानंदः २.५.३६
आदिदेवो महादेवः १.७७.१०५
आदिमध्यांतरहितं १.२७.५१
आदिसर्गस्त्वया सूत १.७०.१
आदौ चांते न संपूज्य २.२४.३६
आदौ वेदानधीत्यैव १.२९.७०
आद्यं कृतयुगं विद्धि १.३९.५
आद्यंतयोर्जपस्यापि १.८५.१०३
आद्यंतशून्याय च संस्थिताय १.७२.१६१
आद्यंतहीनो भगवा. १.५३.५३
आद्यवर्णमकारं तु १.१७.५१
आद्ये कृतयुगे धर्म. १.३९.१३
आद्येन संपुटीकृत्य २.२१.६३
आधारः सकलाधारः १.९८.१२७
आधारशक्तिमध्ये २.२७.२४
आधाराधेयभावेन १.७०.६१
आधिक्यं सर्वमूर्तीनां १.२.५५
आधिदैविकमित्युक्तं १.९.९
आध्यात्मिकं च यल्लिंगं १.७५.२१
आनंदं कुरुतेशश्च २.१०.२०
आनंदं ब्रह्मणो विद्वान् १.८.११३
आनंद ब्रह्मणो विद्वान् १.२८.१९
आनंदस्तु स विज्ञेये १.१६.२८
आनंदा च सुनंदा च २.२७.१८३
आनंदा वसुदुर्गा च २.२७.२२१
आनंदोद्भवयोगार्थं आनर्तो नाम शर्यातेः १.६६.४७
आनीतान् विष्णुना विप्रान् १.१०३.६१
आनीय वसुधां देवी १.९४.१०
आपः पुनंतु मध्याह्न. १.२२.१५
आपः पूताः सकृत्प्राश्य १.८८.८२
आपः पूताः भवंत्येता १.७८.२
आपूरयन्सुषुम्नेन १.५६.६
आपोग्निं पृथिवीं वायु. १.७०.१७८
आपो नाराश्च सूनव १.७०.११९
आपोऽहं भगवानीश. २.१७.१५
आपो ह्यग्रे समभवन् १.७०.११५
आप्यं द्रव्यमिति प्रोक्तं १.८६.१३२
आप्यं श्यामं मनोज्ञं च १.६१.२३
आप्यायनीं च संपूज्य २.२८.६७
आप्यायस्वेति च क्षीरं १.१५.२०
आबबंध महातेजा १.४३.३०
आभानोर्वै भुवः स्वस्तु १.५३.३६
आभिमानिकमप्येवं १.८६.३२
आभ्यंतरार्चकाः पूज्या १.२८.३०
आभ्यंतरार्चकाः सर्वे १.२८.३१
आमया सादिनी भिल्ली २.२७.२१०
आमस्तकतलाद्यस्तु १.९१.१८
आम्नायोथ समाम्नाय १.९८.११२
आयसी त्वभिचारे तु २.२५.४३
आयामतः स विज्ञेयो १.४९.१६
अयामतश्चतुस्त्रिंशत् १.४९.१५
आयुर्मायुरमायुश्च १.६६.५८
आयुर्वेदविदैर्वापि २.५४.२
आयुषस्तनया वीराः १.६६.५९
आये व्यये तथा नित्यं २.३.६१
आरण्यानां पशूनां च १.३२.७
आराधनं कृतं तस्मा. २.१३.३४
आराधनं तु देवस्य २.१३.३५
आराधयंति विप्रेंद्रा १.३१.११
आराध्य जगतामीशं १.६२.१८
आराध्य भक्ता मुक्तिं च २.१६.२०
आरार्तिदीपादींश्चैव २.२४.३३
आरुरोह महामेरुं २.२८.४
आरुरोह रथं दिव्यं १.७२.२७
आरुहा मूर्धानमजा. १.६४.८
आरोहणोऽधिरोहश्च १.६५.१४७
आरोहयेद्विधानेन २.२८.७३
आर्जवा मार्दवा स्वस्था २.२०.३०
आर्यकग्रहभूतैश्च १.७०.३४३
आर्वाक्तु निषधस्याथ १.४९.१२
आलस्यं प्रथमं पश्चाद् १.९.१
आलिंग्याघ्राय संपूज्य १.१०२.१६
आलिखेद्दक्षिणे दंडं २.२८.५१
आलिखेन्मंडलं पूर्वं २.२८.४९
आलिख्य कमलं भद्रं १.७७.७०
आलेपनं यथान्यायं १.७७.३३
आलोक्य वारुणं धीमान् २.२८.७५
आवयोः स्थानमालोक्य २.६.७८
आवयोर्देवदेवेश १.१९.९
आवयोश्चाभवद्युद्धं १.१७.३२
आवर्तनात्तु त्रेतायां १.३९.३२
आवहः प्रवहश्चैव १.५३.३७
आवहाद्यास्तथा सप्त १.७२.१९
आवहाप्रतिवाहौ च १.६९.२८
आवाहयेत्ततो देवीं १.२६.१
आवाह्य कर्णिकायां तु २.२१.४
आवृणोद्धि तथाकाशं १.३.२२
आवृणोद्रसमात्रं वे १.३.२३
आवृत्य मां तथालिंग्य १.४२.२५
आवेष्टनस्तथाष्टाभिः १.१०३.१८
आशयैरपरामृष्टः २.९.४२
आशु द्वाराणि सर्वाणि १.२०.४६
आशु भक्ता भवंत्येव १.९.१९
आशुशब्दपतिर्वेगी १.९८.१०४
आश्रयं सर्वभूताना. १.६.२९
आश्रिताः शंकरं तस्मात् १.६.२७
आश्लेषासु समुत्पन्नः १.६१.४७
आश्विने चैव विप्रेंद्रा. १.८१.२१
आषाढश्च सुषाढश्च १.६५.१४३
आषाढास्विह पूर्वासु १.६१.४५
आषाढे मासि चाप्यैवं १.८३.३५
आषाढे मौक्तिकं लिंगं १.८१.२०
आसनं कूर्मशिलायां २.२४.२१
आसनं च तथा दंड. १.७७.९१
आसनं परिकल्प्यैवं २.२४.१४
आसनं रुचिरं वद्ध्वा १.८५.१०२
आसनस्थो जपेत्सम्यक् १.८५.१६२
आसमुद्रायताः केचि. १.४६.१३
आसाद्य भारतं वर्षं १.८६.१५२
आसीत्वैलविलिः श्रीमान् १.६६.३१
आसीदंतकसंकाशं १.९७.३
आसीनान्धावंतश्चैव १.७०.३१०
आस्तां तावन्ममेच्छया १.१०७.४३
आस्थाय योगपर्यंकं १.८५.११
आस्था रूपं यत्सौम्यं १.१०२.१४

आस्थाय रूपं विप्रस्य १.३६.३३
आस्थायैवं हि शक्रस्य १.१०७.२८
आस्येन न पिबेत्तोयं १.८५.१४६
आह बालेंदुतिलकः १.१०.४१
आहुकात्काश्यदुहितु. १.६९.३८
आहूय कृष्णो भगवान् २.३.१०३
आहूय चोत्तमः श्रीमान् २.५.१४४
आहूय पश्चादन्यस्मै २.५.१३५
आहूय यजमानं तु २.३६.७

इ

इंद्रद्वीपे तथा केचि. १.५२.२७
इंद्रनारायणाद्यैश्च १.३६.५५
इंद्रनीलमयं लिंगं १.७४.२
इंद्रस्य शत्रो वर्धस्व २.५१.१२
इंद्रस्यापि च देवानां १.३५.२३
इंद्रस्यापि च धर्मज्ञ १.२९.२७
इंद्राग्नियमवित्तेश. १.९७.२४
इंद्राणीं चैव चामुंडां १.७६.५८
इंद्रादयस्तथा दंवाः १.३४.२२
इंद्रादिदेवाश्च तथेश्वराश्च २.१९.३२
इंद्रादिलोकपालांश्च २.२५.७६
इंद्रादीन्स्वेषु स्थानेषु २.४८.४८
इंद्रियाणि मनश्चित्त. १.८८.१३
इंद्रियाणि मनश्चैव १.८८.१२
इंद्रियाणि मनो बुद्धिं १.९१.६०
इंद्रियैरजितैर्नग्नो १.३४.१४
इंद्रोधिदैवतं छंदो १.८५.४९
इंद्रोपेंद्रौ भुजाभ्यां तु १.७५.१०
इकारो दक्षिणं नेत्र. १.१७.७४
इक्षुदंडं च दातव्यं २.३७.९
इच्वाकुर्नभगश्चैव १.६५.१८
इक्ष्वाकोरश्वमेधेन १.६५.२२
इच्छया तस्य रूपाणि १.८८.२२
इच्छा कपालिनी चैव २.२७.२१६
इच्छा कामावसायित्वं १.३४.२१
इज्यायुद्धवणिज्याभि. १.५२.३०
इज्यावेदात्मकं श्रौतं १.१०.१७
इति तेन समादिष्टः १.८५.१४
इति ते सर्वमाख्यातं १.८५.२३०
इति निशम्य कृतांजलयस्तदा २.४७.१
इति यो दशवायूनां १.८.६७
इति वाक्पतिर्बहुविधै. १.९४.१९
इति व्यासस्य विपुला २.४६.९
इति श्रुत्वा वचः १.७२.३६
इति संचिंतयन् विप्र २.१.८०
इति स्तवेन देवेश १.१६.१६
इतिहासपुराणानि १.३९.६१
इतिहासश्च कल्पश्च १.६५.१००
इतीदमखिलं श्रुत्वा १.९३.९
इत्थं प्रसन्नं विज्ञानं १.८६.१०१
इत्थंभूतं तदा दृष्ट्वा १.९८.१६६
इत्थं मंत्रमयं देवं २.२३.२५
इत्थं रूपधरंध्यायेत् २.२२.५७
इत्थं शिवेन सायुज्यं २.१९.४३
इत्थं सर्वं समालोक्य १.९६.५९
इत्यहं प्रेरितस्तेन २.३.२२
इत्याज्ञप्य महातेजा २.३.२९
इत्युक्तः स तु मात्रा वै १.६२.११
इत्युक्तः स मुनिः श्रीमान् १.६२.१७
इत्युक्तः स विचक्राम १.६६:६
इत्युक्ता सा तदा देवी १.९४.२४
इत्युक्तो देवदेवेन १.९८.१८०
इत्युक्तो भगवान् विष्णुः २.६.८४
इत्युक्तो मुनिशार्दूल. २.५.५८
इत्युक्तो वीरभद्रेण १.९६.२५
इत्युक्तो प्रणिपत्यैन. २.५.१३२
इत्युक्तांतर्दधे रुद्रो १.९८.१८८
इत्युक्त्वा चाश्रमं सर्वं २.५१.१०
इत्युक्त्वा तं प्रणेमुश्च १.१०३.५१
इत्युक्त्वाथ महादेवं १.९७.३६
इत्युक्त्वा दर्शयामास १.३६.६४
इत्युक्त्वान्योन्यमनघं १.१०४.७
इत्युक्त्वा पूर्वमभ्यर्च्य १.७३.२८
इत्युक्त्वा भगवान्देव. १.९२.१४५
इत्युक्त्वा भगवान्देवी. २.५५.२८
इत्युक्त्वा भगवान्रुद्रः १.९२.१४४
इत्युक्त्वा मुनिशाद्रूलौ २.५.६४
इत्युक्त्वा स्वोटजं विप्रः १.३६.७६
इत्येतन्मंडलं शुक्लं १.५९.४३
इत्येतल्लक्षणं प्रोक्त १.४०.९४
इत्येतानि महान्तीह १.४७.११
इत्येते देवचरिता १.४९.४८
इत्येते देवचरिता १.४९.५२
इत्येते प्रकृताश्चैव १.७०.१६९
इत्येते ब्रह्मणः पुत्रा. १.६३.९३
इत्येते वै मया प्रोक्ता १.८९.१८
इत्येवं खेचराः सिद्धा १.८७.२४
इत्येवमुक्त्वा ब्रह्माण. १.२४.१४९
इत्येष एकचक्रेण १.५५.८१
इत्यैष ज्योतिषामेवं १.६१.५८
इत्येष प्रकृतः सर्गः १.७०.१६४
इत्येष प्रकृतः सर्गो १.७०.१५९
इत्येष वै सुतोदर्कः १.७०.२९८
इत्येषानुगतिर्विष्णो १.२.४८
इदं तु वैष्णवं स्तोत्रं १.३६.१९
इदं तु शरभाकारं १.९६.१२३
इदं पवित्रं परमं १.८१.५६
इदं पवित्रं परमं २.५.१५९
इदं मन्ये महाक्षेत्रं १.९२.९०
इदं वेत्युभयस्पृक्तं १.९.५
इदं हैमवतं वर्ष १.४९.७
इदंइदमेकं सुनिष्पन्नं २.७.१२
इदानीं दहनं सर्वं १.७१.६
इदानीं श्रोतुमिच्छामि १.२९.१
इभाननाश्रितं वरं १.१०५.९
इभेंद्रदारकं देवं १.७६.२९
इमं पाशुपतं ध्यायन् १.३४.२४
इयं च प्रकृतिर्देवी १.१०२.४५
इलावृतात् परं नीलं १.४९.९
इलवृताय प्रददौ १.४७.८
इषुणा तेन कल्पांते १.७२.११६
इष्टिस्तुष्टिः प्रतिज्ञा च २.२७.१७३
इष्टो मम सदा चैव १.४३.२८
इष्टै ववं जुहुयादग्नौ १.२९.७५
इह वैखानसानां च १.८.१७
इह षड्विंशको ध्येयो १.२८.७
इह स्वर्गापवर्गार्थं १.५२.३२

इहास्मान् पाहि भगवन् १.९६.१०७

ई

ईक्षयेत्कालमव्यग्रो २.४७.२१
ईक्षयेद् भास्करं देवं १.८९.१०८
ईदृशान्तेवताराणि १.९६.१०४
ईप्सितं यच्छ सकलं १.६४.८५
ईप्सितं वरयशानं १.६४.१०३
ईश रजो मे गोपाय २.४५.५०
ईश रजो मे गोपाय २.४५.५१
ईश रजो मे गोपाय २.४५.५२
ईश रजो मे गोपाय २.४५.५३
ईशानं पंचधा कृत्वा २.२१.२३
ईशानं प्राणिनां देवं १.१४.२१
ईशानं वरदं देव २.१९.१८
ईशानं विश्वरूपाख्यो. १.१०.४६
ईशानः परमो देवः २.१४.११
ईशानः सर्वविद्यानां २.१८.२३
ईशानः सर्वविद्यानां. १.२७.३१
ईशानकल्पवृत्तांत. १.२.१
ईशानमस्य जगतः २.१८.२२
ईशानमुकुटं देवं २.२१.१९
ईशानमूर्तये तत् २.२५.९१
ईशानमूर्तये तत् २.२५.९२
ईशानमूर्तेरेकस्य २.१२.३९
ईशानाद्यैर्यथान्यायं २.२९.७
ईशानाय कद्रुदाय २.२७.२५४
ईशानाय श्मशानाय १.१८.५
ईशानेन च मन्त्रेण २.२१.४१
ईशानो निर्ऋतिर्यक्षो १.४२.२२
ईशान्यां पंचमेनाथ २.२१.५२
ईशान्यां पूर्वरात्रस्तु १.५४.५०
ईशान्यामीश्वरक्षेत्रे १.४८.२६
ईशित्वे च वशित्वे च १.२३.४७
ईशो भवति सर्वत्र १.८८.२१
ईश्वरस्तु परो देवो १.७०.८१
ईश्वरस्तु सुषुप्ते तु १.८६.६८
ईषणारागदोषेण १.८६.११

उ

उछवृत्त्यार्जितान्बीजान् १.१०७.८
उत्ताकाले शुचिर्भूत्वा १.८९.१२०
उक्तमक्षरमव्यक्तं २.१५.७
उक्ता नदी भवस्वेति १.४३.३३
उक्तानि च तदन्यानि २.१६.२७
उक्तानि पंच ब्रह्माणि २.२३.१३
उक्तोऽसौ गायमानोपि २.३.१०१
उग्र वायुं मे गोपाय २.४५.४२
उग्र वायुं मे गोपाय २.४५.४३
उग्र वायुं मे गोपाय २.४५.४४
उग्र वायुं में गोपाय २.४५.४५
उग्राह्वयस्य देवस्य २.१३.१८
उग्रैस्तपोभिर्विविधै. १.८६.४७
उग्रो नाम महातेजाः १.२४.५३
उग्रो भीमो महादेवः १.८२.३९
उग्रोसि सर्वदुष्टानां १.९५.५५
उग्रोसि सर्वभूतानां १.९५.३६
उच्चत्वाद् दृश्यते शीघ्रं १.५७.२३
उच्चाटनं स्तंभनं च २.५२.३
उच्चायोच्चारयित्वा तु १.८५.९६
उच्चावचानि भूतानि १.७०.२४८
उच्चैःश्रवसकं मत्वा २.३९.५
उच्छिष्टः पूजयन्याति १.७९.५
उच्छुष्मा चैव गांधारी २.२७.२०८
उच्यते योगशास्त्रज्ञैः २.१५.१२
उड्डीयोड्डीय भगवान् १.९६.७४
उत्कलस्योत्कलं राष्ट्रं १.६५.२७
उत्तमं मार्गमास्थाय १.६०.१६
उत्तमश्चाधमे योज्यो २.२०.२७
उत्तमाद्यं तथांत्येन २.२१.६९
उत्तरप्रवहां पुण्यां १.९२.१२६
उत्तराग्रं पुरस्ताद्धि २.२५.११
उत्तराषाढिका चैव १.८२.८०
उत्तरासु च वीथीषु १.५७.२७
उत्तरेतात्मनः पुण्यां १.२७.२१
उत्तरे देवदेवेश १.७९.३५
उत्तरे देवदेवेश १.८४.५७
उत्तरे नैगमे यस्य १.४९.४०
उत्तरे यमुनातीरे १.६६.५६
उत्तरोत्तरवैशिष्ट्य. २.५५.१८
उत्तानपादे ह्यवरो. १.५९.१७
उततारको दुष्कृतिहा १.९८.८५
उत्तिष्ठति पुनः सूर्ये १.५९.१८
उत्थाय प्रांजलिर्भूत्वा १.२९.४०
उत्पत्तिर्नदिनाम्ना तु १.२.२५
उत्पत्त्यादित्रिभेदेन १.८५.५७
उत्पत्त्यादित्रिभेदेन १.८५.६९
उत्पत्स्यामि तदा ब्रह्मन् १.२४.११
उत्पद्यंते तदा ते वै १.४०.४१
उत्पद्यंते मुनिश्रेष्ठा १.९.६१
उत्पन्नाः कलिशिष्टासु १.४०.७६
उत्पन्नाः पितृकन्यायां १.६६.६१
उत्पन्नाः प्रतिभात्मानो १.२०.८७
उत्पाद्य पुत्रं गणपं २.५०.५
उत्संगतलसंसुप्तो १.१०२.२९
उत्संगश्च महांगश्च १.६५.१०६
उत्साद्य पार्थिवान् सर्वान् १.४०.६२
उत्सीदंति तदा यज्ञा १.४०.३९
उत्सीदति नराश्चैव १.४०.६
उत्सर्गं कुरुते पायु २.१०.१९
उत्सृष्टा सा तनुस्तेन १.७०.२०६
उत्सेधस्तु तदर्ध स्यात् २.२५.३०
उद्गायतो महाशैलो १.४९.१४
उदङ्मुखोः प्राङ्मुखो वा १.९१.३८
उदतिष्ठत पर्यंकाद् १.२०:१३
उदयार्थ तु शौचानां १.८९.३
उदयास्तमयात्पूर्व. १.८५.१३५
उदयास्तमये कुर्वन् २.१०.३३
उदानो व्याननामा च २.२७.८२
उदारकीर्तिरुद्योगी १.९८.९५
उदुंबरं वा पनसं २.६.५१
उदुंबरे कर्दमस्य १.४९.६१
उदुत्यं च तथा चित्रं १.२६.६
उदेति सूर्यो भीतश्च १.८६.१४०
उदैक्षत महाबाहुः १.३७.३४
उद्गतस्त्रिक्रमो वैद्यो १.६५.१६३
उद्गिरेच्च क्वचिद्वेदान् १.९.५८
उद्देशमात्रं कथितं २.२७.२८४
उद्धृता च तथा माता २.८.३१

उद्धृतानुष्णफेनाभिः १.८९.५०
उद्धृतासीतिमंत्रेण १.२५.१५
उद्धृत्य पृथ्वीछायां १.५७.१२
उद्धृत्य पृथिवीछायां १.६१.३०
उद्भिजः स्वेदजश्चैव १.८६.१९
उद्भिदं प्रथमं पुष्पं १.४६.३६
उद्भिदो वेणुमांश्चैव १.४६.३५
उद्भूतास्तूर्णमाकाशे १.२०.३६
उद्यानं दर्शितं देव १.९२.३५
उद्वदेहकन्यकां कृत्वा ३.२९.११
उद्वाहः शंकरस्याथ १.२.२२
उद्वाहः शंकरस्येति १.१०३.८
उद्वाहश्च कृतस्तत्र १.४४.३९
उद्वाहार्थं महेशस्य १.१०३.३
उन्मत्तवेषः प्रच्छन्नः १.६५.५८
उन्मत्तवेषश्चक्षुष्यो १.९८.६
उन्मीलयेत्त्वयि ब्रह्मन् १.९५.५७
उपगमय गुरुं विप्रं १.८५.८६
उपचारस्तु क्रियते १.७०.६९
उपदिश्य महायोगं १.१३.१९
उपदिश्य मुनीनां च १.८०.५६
उपद्रवांस्तथान्योन्यं १.४०.४३
उपपातकदुष्टानां १.८५.२१८
उपपातकमप्येवं १.१५.४
उपमन्युः सुतस्तस्य १.६३.९१
उपमन्युमुवाच सस्मितो १.१०७.५३
उपमन्युरिति ख्यातो १.१०७.३
उपमन्युस्तथान्ये च १.८२.६६
उपयाति कुयोनित्वं १.८५.१३१
उपयेमे उदाकृतिं १.५.१८
उपयेमे भृगुर्धीमान् १.५.२४
उपरिष्टात्रयस्तेषां १.५७.१९
उपवासात्परं भैक्ष्यं १.८३.१०
उपलिप्य विधानेन २.४५.१०
उपशांतं शिवं चैव १.९२.१०७
उपसंहृतवान्सत्रं १.६४.११३
उपसंहृत्य रुद्राग्निं २.१८.५२
उपसंहृत्येवं सद्यषष्ठेन २.२४.११
उपसर्गप्रशमनं २.३५.२
उपसर्गाः प्रवर्तन्ते १.९.१४
उपसर्गेषु सर्वेषु १.९६.१०३
उपस्थात्मतया देवः २.१४.२०
उपस्थेद्रियबंधश्च २.१०.६
उपस्पृश्य शुचिर्भूत्वा २.२१.३३
उपहस्ता ज्वरं भीमो १.९६.५८
उपहाराणि पुण्यानि १.८१.४०
उपहिंसंति चान्योन्यं १.४०.६४
उपांशु यच्चतुर्धा वै १.१५.१६
उपासितः पुराणार्थ १.१.१२
उपासितव्यं यत्नेन २.१८.२७
उपास्यमानः सर्वस्य १.८६.८९
उपास्यमानो वेदश्च १.८६.९०
उपास्य रजनीं कृत्स्नां १.७०.७५
उपेंद्रप्रुखैश्चान्यैः १.५१.१९
उपेंद्रांभोजगर्भेंद्र २.४६.१५
उपोषितः शुचिः स्नातः २.१८.४६
उभयोः पक्षयोर्देवि १.९२.१२४
उभयोरंतरं चैव २.२८.२८
उभयोश्चित्तमालोक्य २.४०.४
उभाभ्यां सपुष्पाभ्यां २.२४.२२
उभे ते शिवरूपे हि २.१५.५
उभौ देवर्षिसिद्धौ ता. २.५.८९
उभौ भवंतौ कन्यां मे २.५.६१
उमा चंडी च नंदी च २.४८.४७
उमादेहसमुद्भूता १.६९.४९
उमापतिविरूपाक्षो १.२२.२
उमापतिविरूपाक्षो २.१८.३२
उमामहेशप्रतिमां १.८४.३
उमामहेश्वरं वक्ष्ये १.८४.१
उमा संकीर्तिता देवी २.१३.६
उमा हैमवती जज्ञे १.१०१.२६
उरगो वासुकिश्चैव १.५५.४६
उरोदेशमघोरेण १.२६.३८
उर्वशी मेनका चैव १.८२.७१
उर्वारुकमिव बन्धना. २.२७.२४३
उर्वारुकाणां पक्वानां २.५४.३०
उलूकं गच्छ देवर्षे २.३.२१
उलूकं पश्यगत्वा चं ३.३.७
उलूको विद्युतश्चैव १.७.५०
उल्मुकव्यग्रहस्तश्च १.३१.२९
उल्लेखनेनांजनेन १.८९.६६
उल्लेखा च पताका च २.२७.१९३
उवाच च महादेव. १.४३.२५
उवाच च हृषीकेशः २.३.१०५
उवाच तान्सुरान्देवो १.९६.१११
उवाच प्रांजलिर्भूत्वा १.६२.१२
उवाच बालधीर्मृतः १.३०.२६
उवाच भगवानीशः १.१६.१८
उवाच ब्रूहि किं तेद्य १.४३.३२
उवाच भगवान्देवो १.२२.७
उवाच भगवान् ब्रह्मा १.४१.५४
उवाच भगवान् रुद्रं १.१६.१९
उवाच भद्रो भगवान् १.१००.१२
उवाच वाक्यमीशानः १.९६.२७
उवाचाष्टभुजा देवी १.६९.५९
उशिकः कुशिकश्चैव १.४.४६
उष्ट्रा वा रासभा वाभि. १.९१.२९
उष्णीषी च सुवक्त्रश्च १.६५.६८
उष्णोदकेन हरिद्राद्येन २.२४.२७
उष्यता वायुभक्षेण १.६९.६८

ऊ

ऊचतुश्च महात्मानौ १.४३.९
ऊचुर्दाता गृहीता च १.१०३.५०
ऊर्जा वसिष्ठो भगवान् १.५.२६
ऊर्जामाहुरुमां वृद्धां २.११.१८
ऊर्द्धतश्च करं त्यक्त्वा १.५४.२३
ऊर्ध्वबाहुर्निरालंबः १.६९.७६
ऊर्ध्वमुन्नामयत्येव २.१८.१५
ऊर्ध्वरेतसमीशानं २.२१.२६
ऊर्ध्वरेता महातेजा १.६३.८०
ऊर्ध्वरेतोर्ध्वलिंगी च १.६५.७०
ऊर्ध्वस्रोतःसु सृष्टेषु १.७०.१५१
ऊर्ध्वस्रोतास्तृतीयस्तु १.७०.१४७
ऊर्ध्वा च दृष्टिनं च संप्रतिष्ठा १.९१.३२
ऊष्मपाः पितरो ज्ञेया १.३४.६

ऋ

ऋकारो दक्षिणं तस्य १.१७.७५

ऋक्षवानरयुक्तेन १.९१.१५
ऋक्षाणां प्रभवे तुभ्यं १.२१.८
ऋक्षाणि च तदा तस्य १.७५.२
ऋचो यजूंषि सामानि १.९१.६७
ऋणत्रयविनिर्मुक्तः १.८६.१५०
ऋतुर्ऋतुकरस्तालो १.६५.९५
ऋतूनां शिशिरश्चापि १.६१.५३
ऋतेनानेन मा पाश. २.५४.२९
ऋत्विजौ द्वौ प्रकर्तव्यौ २.४४.६
ऋद्धिबुद्धिधृतिः कांति २.२७.१९४
ऋद्धिशोकविशोकाय १.१८.१६
ऋभुं सनत्कुमारं च १.५.१३
ऋभुं सनत्कुमार च १.२०.९०
ऋषभं पार्थिवश्रेष्ठं १.४७.२०
ऋषभश्च मुनिर्धीमा. १.७.३२
ऋषभो वृषभो भंगो १.६५.१५०
ऋषयः कृत्स्नशस्तत्र १.१०३.३६
ऋषयश्च तदा सर्वे १.१०१.५
ऋषयस्तुष्टुवुश्चैव १.४४.३६
ऋषयो देवगंधर्व. १.५५.७२
ऋषयो मनवश्चैव १.४०.९८
ऋषयो मुनिशार्दूल १.४२.२०
ऋषिं दृष्ट्वा त्वंगिरसं १.६९.७४
ऋषिः सर्वगतत्वाच्च १.७०.९७
ऋषिपुत्रैः पुनर्भेदा १.३९.५८
ऋषिभिः स्तूयमानश्च १.७२.२८
ऋषिरैरविलो यस्यां १.६३.५९
ऋषिर्ब्राह्मणविज्जिष्णु. १.९८.८९
ऋषिशपादिकं दुःखं २.५.४४
ऋषिशापो न चैवासी. २.५.१४५
ऋषीणां च वसिष्ठस्त्वं १.३२.६
ऋषेः सूतस्य चास्माक. २.५५.४४

ए

एकं तमाहुर्वै रुद्रं २.१८.४१
एकं वा योगनिरतं २.४५.८३
एकं स्थूलं सूक्ष्ममेकं १.७२.१६४
एक दव तदा विष्णुः १.९६.११२
एक एव हि सर्वज्ञः १.८६.८८
एककालं द्विकालं वा २०२१.८१
एककालसमुत्पन्नं १.७०.५३
एकत्र समतां याति २.२१.७२
एकत्रिंशत्तमः कल्पः १.१३.१
एकत्वमपि नास्त्येव १.८६.९६
एकद्वित्रिचतुःपंच. १.९६.९३
एकधा सा द्विधा चैव १.७०.९३
एकपर्णा इवाज्ञेया २.४५.८८
एकमस्त्विति तान्देवः १.७१.१८
एकमात्रममात्रं हि २.१८.४४
एकमोमोमिति प्रोक्त. १.१७.७०
एकरात्रिं सुराः सर्वे १.५६.१०
एकरूपप्रधानस्य १.६१.६०
एकरूपमथौतस्याः १७०.३३३
एकवक्त्रं चतुर्भुजं २.२५.७१
एकविंशमथर्वाणं १.७०२४६
एकशय्यासनगतो २.८.२३
एकशृंगो महाशूलो १.४९.४७
एकहस्तप्रमाणेन १.२१.२
एकहस्तप्रमाणेन २.२२.६८
एकाक्षरादुकाराख्यो १.१७.६१
एकाक्षराय रुद्राय १.१८.१
एकाक्षाय नमस्तुभ्य. १.७२.१४४
एकादशे द्वापरे तु १.२४.५२
एकारमोष्ठमुद्ध्वश्च १.१७.७६
एकार्णवे तदा तस्मिन् १.७०.११
एकार्णवे तदा वृत्ते १.१४.२
एकार्णवे महाघोरे १.१७.१०
एकार्षेयास्तथा चान्ये १.६३.९३
एकाहं यः पुमान् सम्यक् १.२४.१३८
एकाहाद्यज्ञयाजीनां १.८९.८०
एकीभावं गते चैव १.७२.१०३
एकेनांशेन देवेशं १.१०६.११
एकेनैव तु गंतव्यं १.८८.६२
एकेनैव हृतं विश्वं १.३.७
एकैकं योजनशतं १.७१.२०
एकैकातिक्रमे तेषां १.९०.७
एको न गच्छेदध्वानं १.८५.१४८
एको वेदश्चतुष्पाद. १.३९.५७
एत एव त्रयो देवा १.७०.७८
एतच्छ्रुत्वा तु मुनयः १.५९.१
एतज्जगद्धितं दिव्य. २.१८.८
एतज्ज्ञात्वा पुराणस्य १.२.५६
एतत्कालव्यये ज्ञात्वा २.९.५४
एतत्कालांतरं ज्ञेय. १.७०.६७
एतत्ते कथितं सर्व. १.४१.१४
एतत्ते प्रार्थितं प्राप्तं २.३.१०६
एतत्पाशुपतं दिव्यं १.१८.५३
एतत्सर्व विशेषेण १.२०.२
एतत्स्तोत्रवरं पुण्यं १.१८.४०
एतत्स्वांगभवायैव १.७१.७५
एतदेव तु सर्वेषां १.४०.८८
एतद्दिव्यमहोरात्र. १.४.१५
एतद्धि कथितं सर्वं २.५.१५७
एतद्यः कुरुते भक्त्या २.३९.९
एतद्यः कुरुते भक्त्या २.४१.१०
एतद्वः कथितं सम्यक् २.५४.७
एतद्वः कथितं सर्वं १.८०.५९
एतद्वः कथितं सर्वं १.१०८.१८
एतद्वः कथितं सर्वं १.१०५.३०
एतद्वः कथितं सर्वं १.८.३५
एतद्वः कथितं सर्वं २.८.३५
एतद्वः कथितं सर्वं २.४५.९४
एतद्वः संप्रवक्ष्यामि १.३४.१
एतद्वेदितुमिच्छामि १.१६.२०
एतद्वो विस्तरेणैव १.५८.१७
एतद् व्रतं पाशुपतं २.१८.४५
एतन्मम पुरं दिव्यं १.९२.४४
एतन्मे संशयं ब्रूहि १.२०.३८
एतमर्थं मया पृष्टो १.६२.२
एतस्मात्कारणाद्ब्रह्मा १.६२.१४
एतस्मिन्नंतरे ताभ्या. १.२०.३३
एतस्मिन्नंतरे तेषां १.७१.१३८
एतस्मिन्नंतरे देवाः १.१०४.२
एतस्मिन्नंतरे रुदः १.३७.३६
उतस्मिन्नंतरे लिंग. १.१७.३३
एतस्मिन्नेव काले तु १.१०१.८
एतानि चैव सर्वाणि २.२८.८१
एतावत्तत्त्वमित्युक्तं १.९.५०

एतावदुक्त्वा भगवान् १.९६.११४
एतावद्ब्रह्मविद्या च १.८५.३९
एतावद्बहिंसंस्कार. २.२५.६५
एता वै मातरः सर्वाः १.८२.९७
एतास्तु मात्रा विज्ञेया १.९१.५९
एते इक्ष्वाकुदायादा १.६६.४३
एते किन्नरसंघा वे २.३.५६
एते चान्ये च बहवो १.२९.३५
एते जनपदाः सप्त १.४६.३४
एते ज्योतींषि प्रोक्तानि १.८५.१६०
एते तपन्ति वर्षन्ति १.५५.७३
एते तारा ग्रहाश्चापि १.६१.४९
एते देवा भविष्यंति १.७०.३१८
एते देवा वसंत्यर्के १.५५.६६
एते देवा वसंत्यर्के १.५५.८०
एतेन क्रमयोगेन १.५९.२०
एतेनैव तु मार्गेण २.३७.१२
एते पर्वतराजानः १.४९.६
एते पापं व्यपोहंतु १.८२.४७
एते ये वै मया सृष्टा १.७०.३१७
एते रुद्राः समाख्याता १.६३.२२
एते वसंति वै सूर्ये १.५५.७८
एते वसंति वै सूर्ये १.५५.७८
एते विप्राश्च देवत्वं २.१.६४
एते वै चारणाः शंभोः १.८२.५०
एते वै संस्थिता रुद्रा. १.४१.५७
एतेषां पुत्रपौत्रादि. १.६३.४२
एतेष शैलमुख्याना. १.४९.५८
एतेषामेव देवानां १.५५.७०
एतेष्वेव ग्रहाः सर्वे १.६१.४०
एते संबोधयामस्त्वां १.६६.८३
एते समासतः प्रोक्ता १.६६.५४
एते हिरण्यवर्णाभा १.८२.६४
एते ह्यांगिरसः पक्षे १.६५.४१
एते ह्यांगिरसः पक्षे १.६५.४३
एतैरन्यैर्यथालाभं १.८१.१३
एतैरावरणैरंडे १.७०.५९
एरकालाभतोन्योन्यं १.२.४८
एरकास्त्रबलेनैव १.२.४९
एलापत्रमहापद्म १.६३.३६
एलापत्रस्तथा सर्पः १.५५.५३
एवं कल्पास्तु संख्याता १.४.४९
एवं कालीमुपालभ्य १.१०७.२
एवं कृते नृपेंद्रस्य २.५०.४८
एवं कृत्वा कृतघ्नोऽपि १.१५.२७
एवं कृत्वा रथं दिव्यं १.७२.२६
एवं कृत्वा सुदुष्टात्मा १.९०.१४
एवं क्रमागतं ज्ञानं १.७.१०
एवं क्रमेण जुहुया. २.४५.७९
एवं क्षांतातीतादिनिवृत्ति. २.२४.१२
एवं च दक्षतिर्धातु १.७०.२२८
एवं चेदनया देव्या १.८७.२
एवं चोपोषितं शिष्यं २.२१.३९
एवं जीवास्तु तैः पापै. १.८८.६१
एवं ज्ञात्वा महायोग. १.२०.९७
एवं तत्र शयानेन १.२०.७
एवं तिलनगः प्रोक्तः २.२०.१३
एवं तुष्टो गुरुः शिष्यं १.८५.९२
एवं देवि समाख्यातो २.५५.२५
एवं दीक्षा प्रकर्तव्या २.२१.७८
एवं धूमविशेषेण १.५४.४२
एवं ध्यानसमायुक्तः १.९१.७२
एवं न्यासमिमं प्रोक्तं १.८५.८०
एवं परार्धे विप्रेंद्र १.४१.२
एवं पाशुपतं कृत्वा १.७३.१९
एवं पाशुपतं योगं १.८८.८
एवं पुत्रमुपामंत्र्य १.६४.१०४
एवं पुरा महादेवो २.५५.५
एवं पूज्य प्रविश्यान्त. १.२७.२२
एवं पृथक्पृथग्घुत्वा २.४५.७१
एवं पैतामहेनैव २.५५.३
एवं प्रभिद्य गायत्रीं २.४८.२७
एवं बभूवुर्दैत्याना. १.७१.२३
एवं ब्रुवंतं वैकुण्ठं १.२०.१७
एवं भवतु भद्रं ते १.७०.३२२
एवं मंत्रविधिं ज्ञात्वा २.५४.३१
एवं मया समाख्याता १.५२.४४
एवं मुख्यादिकान् सृष्ट्या १.३८.१६
एवं मुनिवरं भद्रे २.३.९६
एवं यतीनामावासे १.७७.३६
एवं युगाद्युगस्येह १.४०.८३
एवं रश्मिसहस्रं तत् १.५९.४२
एवं लब्ध्वा परं मंत्र. १.८५.९७
एवं लब्ध्वा शिवं ज्ञानं १.८५.१२६
एवं लिखित्वा पश्चाच्च २.२८.५३
एवं वः कथितं सर्वं १.७७.८१
एवं वाराणसी पुण्या १.९२.१
एवं विज्ञापयन्प्रीतः १.९६.९७
एवंविधैस्तटाकैश्च १.४८.१४
एवं विन्यस्य मेधावी १.८५.८२
एवं वृत्तसमोपेता २.२०.३२
एवं व्यवसिते विप्रे १.१०७.४८
एवं शिलादपुत्रेण २.५५.३३
एवं शिवाय होतव्यं २.४५.६४
एवं श्रुत्वापि तद्वाक्यं १.३६.४४
एवं षोडश दानानि २.४५.१
एवं संक्षिप्त कथितं १.२७.५४
एवं संक्षिप्त कथितं १.५७.३७
एवं संक्षेपतः प्रोक्तं १.१०६.२८
एवं संक्षेपतः प्रोक्तः १.१७.१
एवं संक्षेपतः प्रोक्तं २.४८.५०
एवं संक्षेपतः प्रोक्तं २.२६.२६
एवं संक्षेपतः प्रोक्त २.४९.१६
एवं संक्षेपतः प्रोक्ता १.४९.२१
एवं संक्षेपतः प्रोक्तं १.४९.६९
एवं संक्षेपतः प्रोक्तो २.२१.८३
एवं संध्यांशके काले १.४०.५०
एवं संपीड्य वै देवा १.९३.७
एवं संपूजयेयुर्वै १.७९.३४
एवं संपूजयेन्नित्यं २.२०.४
एवं संपूज्य विधिना २.२७.६३
एवं संपूज्य विधिव. १.८५.९१
एवं समासतः प्रोक्तं २.२७.२७२
एवं सम्यग्बुधैर्ज्ञात्वा २.९.५६
एवं सर्व च मामेच २.१७.२०
एवं सर्वेषु पात्रेषु १.२७.१४
एवं सहस्रकलशं १.२७.२३४

एवं सुस्नाप्यार्घ्य च २.२४.३१
एवं स्तुत्वा तु मुनयः १.३१.४४
एवं स्तुत्वा महादेवं १.७१.९८
एवं स्नात्वा यथान्यायं १.२७.२
एवं स्नुषामुपालभ्य १.६४.३३
एवं स्मृत्वा हरिः प्राह १.३६.२७
एवं हि चाभिषिच्याथ १.२५.२५
एवं हि मोहितास्तेन १.२९.३६
एवं हि योगसंयुक्तः १.९१.६५
एवं हुत्वा विधानेन २.४३.८
एवमज्ञानदोषेण १.८६.२१
एवमज्ञानदोषेण २.५.४३
एवमादीनि वाक्यानि १.६२.२७
एवमाराध्य देवेशं १.३५.२८
एवमाराध्य संप्राप्ता २.३.१७
एवमालिख्य यो भक्त्या १.७७.९४
एवमाहुर्महादेव. १.३८.५
एवमाहुस्तथान्ये च १.७५.२९
एवमुक्तः प्रहस्येशः १.८७.३
एवमुक्तस्तदा तेन १.१०१.३१
एवमुक्तस्तदा तेन १.१०७.३३
एवमुक्तस्तदा तेन १.१०७.६४
एवमुक्तस्तदा दक्षो १.५.३३
एवमुक्तस्तदां ब्रह्मा १.७०.३२१
उवमुक्तस्तु विज्ञाय १.२२.११
एवमुक्तस्तु शक्रेण १.१०१.२३
एवमुक्ता तु सा कन्या २.५.९२
एवमुक्ता भगवता १.४४.१८
एवमुक्तास्तदा तेन १.३०.१
एवुक्तास्तदा तेन १.३०.३०
एवमुक्तास्तदा तेन १.९५.१३
एवमुक्तास्तदा भृत्या २.१.३१
एवमुक्ते मुनिः प्राह २.५.१०४
एवमुक्तो नमस्कृत्य १.१०१.३८
एवमुक्तोऽब्रवीदेनं १.७०.३१६
एवमुक्तो मनुस्तत्र २.३.१०७
उवमुक्तो महादेवः १.९७.३२
एव मुक्त्वा घृणी विप्रः १.६४.२३
एवमुक्त्वा च मां देव १.४३.२९
एवमुक्त्वा तु तं देव १.१०७.४५
एवमुक्त्वा तु तं विष्णु १.१९.४
एवमुक्त्वा तु भगवान् १.२२.१३
एवमुक्त्वाथ धर्मज्ञा १.६४.१३
एवमुक्त्वाथ संतप्ता १.२९.४९
एवमुक्त्वाब्रवीद्भूयः १.२०.२६
एवमुक्त्वा महदेवः १.१६.३६
एवमुक्त्वा महादेव १.१०७.५९
एवमुक्त्वा मुनिं प्रेक्ष्य १.४२.१३
एवमुक्त्वा मुनिर्हृष्टः २.५.७५
एवमुक्त्वा स्थितं वीक्ष्य १.१०७.३१
एवमुक्त्वा स्थितेष्वेव २.४६.११
एवमुक्त्वा हरिश्चेष्ट्वा १.७१.५७
एवमेकेन मन्त्रेण २.४८.३७
एवमेतेन योगेन १.१४.१३
एवमेव हरे ब्रह्मन् १.१७.७१
एष आपः परं ज्योति. १.८८.७७
एष चक्री च वज्री च १.३१.३
एष त्रिमात्रो विज्ञेयो १.९१.४६
एष देवो महादेवो १.३१.३
एष नंदी यतो जातो १.४२.३८
एष बीजी भवान् बीज. १.२०.७३
एष वः कथितः सर्वो १.६४.१२३
एषा कलियुगावस्था १.४०.४८
एषा चैव विशेषेण १.९१.६४
एषा रजस्तमोयुक्ता १.३९.६९
एषो हि देवः प्रदिशो २.१८.२६
एह्येहि मम पुत्रेति १.१०७.९
एह्येहि श्वेत चानेन १.३०.७
एह्येहीति महादेवि १.१३.९


ऐ


ऐंद्रमासाद्य चैंद्रत्वं १.७६.७
ऐंद्रमैश्वर्यमित्युक्त. १.९.४४
ऐंद्रिकेशानयोर्मध्ये २.२८.२०
ऐंद्री होताशनी याम्या २.२७.७०
ऐंद्रे चैंद्राग्नमावाह्य २.२५.१२
ऐंद्रेशेशानयोर्मध्ये २.२७.५९
ऐक्ष्वाकीमवहच्चांशुः २.६८.४९
ऐक्ष्वाकुरंबरीषो वै २.५.१
ऐतरेयस्य सा माता २.७.२१
ऐरावतः सुप्रतीको १.४४.२८
ऐरावतगजारुढः १.८२.९४
ऐरावतादयो नागाः १.९७.२९
ऐलः पुरूरवा नाम १.६६.५५
ऐश्वर्यः कथितो व्यूहो २.२७.१२२
ऐश्वर्याष्टदलं श्वेतं १.८६.६४


ओ


ओं अभिव्यक्तायै वायव्य. २.२५.६३
ओं ई वागीश्वराय नमः २.२५.७२
ओं ईशानः सर्वविद्यानां २.२३.१४
ओं ऋतं पुरुषाय नमः २.४५.२६
ओं ऋतं पुरुषाय नमः २.४५.२७
ओं कनकायै कनकनिभायै २.२५.५९
ओंकारमात्रमोंकार. २.२१.२४
ओंकारमूर्ते देवेश १.१६.९
ओंकारवाच्यं परमं १.८.९१
आंकारस्तु त्रयो लोकाः १.९१.५५
ओंकाराय नमस्तुभ्यं १.७२.१३२
ओंकारे त्रिविधं रूप. १.१०४.२२
ओंकारेशः कृत्तिवासा. १.१०३.७८
ओंकारो यः स एवेह २.१८.१३
ओं कृष्णायै नैर्ऋतजिह्वायै २.२५.६१
ओं जनः प्रकृतये नमः २.४५.२२
ओं जनः प्रकृतये स्वाहा २.४५.२३
ओं तपः मुद्गलाय नमः २.४५.२४
ओं तपः मुद्गलाय स्वाहा २.४५.२५
ओं नमो वासुदेवाय २.४८.३६
ओं पशुपते पाशं मे गोपाय २.४५.६०
ओं पशुपते पाशं मे गोपाय २.४५.६१
ओं प्राणे निविष्टोऽमृतं २.४५.७३
ओं बहुरूपायै मध्यजिह्वायै. २.२५.५७
ओं ब्रह्मणे बृंहणाय २.२३.१६
ओं ब्रह्माधिपतये कालाग्नि. २.२३.१५
ओं भव जलं मे गोपाय २.४५.३४
ओं भव जलं मे गोपाय २.४५.३५
ओं भव जलं मे गोपाय २.४५.३६
ओं भव जलं मे गोपाय २.४५.३७
ओं भुवः विष्णवे नमः २.४५.१६

ओं भुवः विष्णवे स्वाहा २.४५.१७
ओं भुवः स्वाहा २.४५.७६
ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः २.२२.८
ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः २.२३.२०
ओं भूः ब्रह्मणे नमः २.४५.१४
ओं भू. ब्रह्मणे स्वाहा २.४५.१५
ओं भूः ब्रह्मणे हृदयाय नमः २.२३.२४
ओं भूः ब्रह्महृदयाय २.२२.१२
ओं भूः स्वाहा २.४५.७५
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितु. २.२२.९
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितु. २.२३.२१
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितु. २.५१.१८
ओं महः ईश्वराय नमः २.४५.२०
ओं महः ईश्वराय स्वाहा २.४५.२१
ओं रक्तायै रक्तवर्णायै २.२५.६०
ओं वह्नये तेजस्विने स्वाहा २.२५.६४
ओं शर्व धरां मे गोपाय २.४५.३०
ओं शर्व धरां मे गोपाय २.४५.३१
ओं शर्व धरां मे गोपाय २.४५.३२
ओं शर्व धरां मे गोपाय २.४५.३३
ओं शर्व धरां मे छिंधि २.४५.६७
ओं शिवाय नमः २.४५.६२
ओं शिवाय सत्यं स्वाहा २.४५.६३
ओं सत्यं शिवाय नमः २.४५.२८
ओं सत्यं शिवाय स्वाहा २.४५.२९
ओं सद्योजाताय भवे भवे २.२३.१७
ओं सुप्रभायै पश्चिमजिह्वायै २.२५.६२
ओं स्वः रुद्राय नमः २.४५.१८
ओं स्वः रुद्राय स्वाहा २.४५.१९
ओं हिरण्यायै चामीकराभायै २.२५.६८
ओं ह्रीं वागीश्वरीं श्यामवर्णां २.२५.६८
ओमित्येकाक्षरं मंत्रं १.८५.३३
ओमित्येतत्त्रयो लोका. १.९१.५१
ओषधीनां तथात्माभो १.७०.१७९
ओषधीषु बलं धत्ते १.५९.४१
ओषध्यः फलमूलिन्यः १.७०.२३९
ओषध्यश्च रजोदोषाः १.८९.९९
ओष्ठं च द्वयङ्गुलोत्सेध. २.२७.४३

औ

औकारांता अकाराद्या १.७.२४
औदर्यैर्व्याधिभिः सर्वै. १.८५.१९४
औदुंबरफलैः सार्ध. २.२९.१०
औपसर्गिकमाब्रह्म. १.९.२९
औपसर्गिकमाब्रह्मा. १.९.५५
औमं कौमारमैशानं १.७६.६
और्वस्तुष्टस्तयोः प्रादा. १.६६.१६

क

कंकटा सुपटा चैव २.२७.२०४
कंकाय कंकरूपाय १.१८.१८
कंकाली कालशी चैव २.२७.१४७
कंठात्सोमं तथात्मानं १.७६.१३
कंठे कालो महाबाहु. १.९६.६८
कंडिनी पेषिणी चैव २.२७.१६२
कंडूयमाने शिरसि १.९६.५१
कंधरे च स्थितायैच १.७२.१३८
कंपः स्वेदस्तथाक्षेषु २.४.६
कंसोपि निहतस्तेन १.६९.६३
कः पुमान् सिद्धिमाप्नोति १.७२.४६
कः समर्थः परित्रातुं १.३०.८
कटंकटाय तिग्माय १.२१.६४
कणिकायाँ न्यसेद्देवं १.७७.८८
कथं करोति भगवान् १.७.६
कथं च पशवश्चासन् १.७१.२
कथं चिल्लब्धवान् शक्रः १.९७.३१
कथं जघान राजानं १.३५.१
कथं त्रियंवको देवो २.५५.१
कथं ददाह भगवान् १.७१.४
कथं दारुवनं प्राप्तो १.२९.२
कथं देवेन वै सूत १.९८.१
कथं देवो महादेवो १.९६.१
कथं पंचाक्षरी विद्या १.८५.३
कथं पशुपतिं दृष्ट्वा १.८०.१
कथं पशुपतिर्देवः २.९.३
कथं पाद्मे पुराकल्पे १.२०.१
कथं पूजादयः शंभो २.२०.१७
कथं पूज्यो महादेवो ९.२५.१
कथं पूज्यो महादेवो १.७९.१
कथं भवप्रसादेन १.३१.१
कथं लब्धं तदा ज्ञानं १.१०८.२
कथं वा देवमुख्यैश्च २.१७.३
कथं विनायको जातो १.१०४.१
कथं विमुक्तिविप्राणां १.९४.३२
कथं विष्णोः प्रसादाद्वै १.६२.१
कथं वै दृष्टवान्ब्रह्मा १.११.१
कथं शरीरी भगवान् २.१७.२
कथं शुक्रस्य नप्तारं १.६६.८२
कथं हिमवतः पुत्री १.१०१.१
कथं हि रक्षसा शक्ति. १.६४.१
कथमस्य पिता दैत्यो १.९४.१
कथितं तथ्यमेवात्र १.७९.१
कथितं प्रथमव्यूहं २.२७.३
कथितं बहुधा तस्मै २.५४.१६८
कथितं मेरुशिखरे २.५४.१२
कथितं सर्ववेदार्थ. १.६५.५२
कथितः कनकव्यूहो २.२७.७७
कथितः सुमतिव्यूहः २.२७.१९९
कथितश्चांबिकाव्यूहः २.२७.८१
कथितश्चाणिमाव्यूहो २.२७.१०२
कथितस्तव संक्षेपाद् १.३६.७८
कथितानि मम क्षेत्रे १.९२.९९
कथितानि शिवांगानि २.२३.१८
कथितो महिमाव्यूहः २.२७.१०९
कदंबः खादिरं वापि २.६.५०
कदाचित्क्षीरमल्पं च १.१०७.७४
कद्रूः सहस्रशिरसां १.६३.३४
कद्रूस्त्विषा दनुस्तद्वत् १.६३.२४
कनकांगदहाराय १.१८.३८
कनकाभे तथांगार. १.८.९८
कनिष्ठा रक्षणीया सा १.८५.११५
कन्यां तां रममाणां वै २.५.५५
कन्यां वा गोगृहे वापि २.६.७२
कन्यादानं प्रवक्ष्यामि २.४०.१
कन्याभावाच्च सुद्युम्नो १.६५.२९
कन्यार्थी लभते कन्यां १.८२.११३
कन्या वै मालिका वापि १.६३.६५
कन्यासिद्धिरहो प्राप्ता २.५.१३९

कन्ये द्वे च महाभोग १.७०.२७६
कपालमेकं द्योर्यज्ञे १.२०.८३
कपालहस्तं देवेशं १.७६.२८
कपालिने करालाय १.९६.८८
कपालीशश्च विज्ञेयो १.८२.४१
कपिलश्चासुरिश्चैव १.७.४१
कपिलाह्रदमित्येवं १.९२.६९
कमलं चालिखेत्तत्र २.२७.१९
कमलेन सहस्रेण २.५४.३
कमलोत्पलपुष्पाढ्यै. १.९२.४१
करणं कारणं कर्ता १.९८.७५
करणश्चैव विंशत्या १.१०३.२६
करवीरैः सितैश्चैव १.२७.३६
करयोरुभयोश्चैव १.८५.६५
करवीरे गणाध्यक्षे १.८१.३६
करसंमितमध्यांगी २.५.८५
करस्थाली कपाली च १.६५.१५३
कराभ्यां सुशुभाग्राभ्यां २.५५.४७
कराभ्यां सुशुभाभ्यां च १.२२.१४
कराभ्यां सुशुभाभ्यां च १.४३.२४
करालैर्हरिकेशैश्च १.५१.१४
करुणादिगुणोपेताः १.७.३
करूषश्च पृषध्रश्च १.६५.१९
करोति पाणिरादानं २.१०.१७
कर्णमूले मम कथं २.५.१२५
कर्णिकायां न्यसेल्लिंगं १.८१.११
कर्तव्यं च कृतं चैव १.२०.१४
कर्तव्यं नास्ति विप्रेंद्रा १.८६.१०६
कर्तव्यः सर्वयत्नेन १.७७.३०
कर्तव्याभ्यासमुत्सृज्य १.८६.१०८
कर्ता नेता च हर्ता च १.१७.२६
कर्ता यदि महादेव १.२८.१२
कर्तास्मि वचनं सर्वं १.१०३.५८
कर्तुमर्हथ यत्नेन १.७१.१६२
कर्तुरप्यधिकं पुण्यं १.७७.२६
कर्म कुर्याद्यदि सुखं १.७७.२८
कर्मणा चोत्तरेणैव २.४५.९१
कर्मणा तस्य चैवेह १.२८.१५
कर्मणा मनसा वाचा १.३१.३४
कर्मणा मनसा वाचा १.६७.१९
कर्मणा मनसा वाचा १.८८.६५
कर्मयज्ञरताः स्थूलाः १.७५.२०
कर्मयज्ञसहस्रेभ्य. १.७५.१३
कर्मस्था विषमं ब्रूयुः १.७०.२५७
कर्मेंद्रियाणि पंचैव १.७७.७९
कर्मेंद्रियाणि मात्रं हि २.२०.५०
कर्मेंद्रियाणि संशोध्य १.७३.१६
कलंतिका चतुर्भेदा २.२७.२०२
कलशान् विन्यसेत् पंच २.२१.३६
कलशानां सहस्रं तु १.४४.२४
कलशानां सहस्राणि २.२७.४०
कलाः काष्ठा निमेषाश्च २.१०.३९
कला काष्ठा लवो मात्रा १.६५.१५७
कला संशोषमायाति १.८६.१७
कलिजैः सहते सर्वं १.४०.७८
कलिदोषान् विनिर्जित्य १.४०.२२
कलौ प्रमादको रोगः १.४०.२
कल्पकद्रुमजैः पुष्पैः १.७१.१२४
कल्पकोटिशतेनापि २.२७.२८१
कल्पत्वं चैव कल्पानां १.२.१५
कल्पद्रुमसमाकीर्णं १.७१.२५
कल्पयामास वै क्षेत्रं १.९२.१८७
कल्पयामास वै वक्त्रं १.१००.४७
कल्पयेच्चासनं पद्म १.८८.३
कल्पयेत्कांचनोपेतां २.४७.२६
कल्पादीनां तु सर्वेषां १.२६.२९
कल्पादौ संप्रवृतानि १.६१.१३
कल्पार्धसंख्या दिव्या वै १.४.४२
कल्पावसानिकांस्त्यक्त्वा १.४.४०
कल्पेतीते तु वै विप्राः १.४.३९
कल्पे शेषाणि भूतानि १.२०.९३
कल्पेश्वरोऽथ भगवान् १.२४.९
कल्पोदयनिबंधानां १.२१.१६
कल्याणं वा कथं तस्य १.९९.३
कल्याणप्रकृतिः कल्पः १.९८.५९
कल्लोला चेति क्रमशः २.२७.१५९
कवची पट्टिशी खड्गी १.२१.८१
कव्यं पितृगणानां च २.१२.३६
कव्याशिनां गणाः सप्त २.१०.३८
कश्यपो गोत्रकामस्तु १.६३.४९
कश्यपोऽप्युशनाश्चैव १.७.४५
कस्त्वं वदेति हस्तेन १.१७.१५
कस्यां वा युगसंभूत्यां २.२४.४
कस्याद्य व्यसनं घोरं १.४४.१३
कस्याधिकारः पूजायां २.१९.३


## का


कांचनं दिवि तत्रासी. १.७१.१९
कांचनेन विमानेन १.७६.१८
काकः कपोतो गृध्नो वा १.९१.८
काकपक्षधरं मूर्ध्ना १.७६.३०
काकपादोपरः षष्ट्या १.१०३.२२
काकोलूककपोतानां १.८९.४६
काचित्तदा तां न १.२९.१७
कात्यायन्यै विद्महे २.४८.२६
कामं भुञ्जन्स्वपन् क्रीडन् १.९२.५०
कामः क्रोधश्च लोभश्च १.३२.९
कामः क्रोधण्च लोभश्च १.३२.१२
कामतोपि कृतं पापं १.८४.१३
कामदा शुभदा सौम्या २.२७.१७४
कामदेवः कामपालः १.९८.४८
कामना शोभिनी दग्धा २.२७.१८२
कामवानपि भावोयं २.५.१२४
कामा तृष्णा क्षुधा मोहा २.२७.१८०
कामो दर्पोऽथ नियमः १.५.३५
कायांतस्थामृताधार. १.१०४.९
कायावतार इत्येव १.२४.१३०
कायिकानि सुमिश्राणि १.१५.५
कायिकं भजनं सद्भिः २.९.२५
कारुण्यात्सर्वभूतेभ्यः १.१०.२२
कार्त्तिके च तथा मासे १.८३.४६
कार्त्तिके मासि यो दद्या. १.७९.३१
कार्त्तिक्यामपि या नारी १.८४.६६
कार्यमभ्युक्षणं नित्यं १.७८.१३
कार्यार्थं दक्षिणं तस्याः १.७०.३२८
कालं गते द्विजे भूमौ २.४५.९०
कालंधुरस्तु कथित १.७.२६
कालं नयति तपसा १.३०.२६
कालः करोति सकलं १.२८.१४
कालकंठाय मुख्याय १.१०४.११
कालकालाय कालाय १.९६.७८

कालदूतश्च कथितो २.२७.११७
कालभैरवमासाद्य १.९२.१३२
कालयोगी महानादो १.९८.६८
कालरात्रिर्महामाया १.७०.३३५
कालसंख्याविवृत्तस्य १.७०.१०८
कालांतरवशाद्योगाद् १.८.५४
कालाग्निपीठमध्यस्थ २.५०.३०
कालाग्निरुद्ररूपाय १.१०४.१०
कालाग्निरुद्रसंकाशान् १.७१.५९
कालाग्निस्तच्छरस्यैव १.७२.२५
कालाप्रयत्नतो ज्ञात्वा १.६५.१३
कालात्मा कालनाभस्तु १.१७.१३
कालात्मा सोम एवेह १.८६.९४
कालादित्यसमाभासं १.१७.४२
कालादृते न नियमो १.६०.१२
कालध्वरं महाभाग २.२०.४७
कालाभ्रभोजनाः सर्वे १.५२.१४
कालाय कालरूपाय १.९५.४१
कालावच्छेदयुक्तानां २.९.४७
काली तदा कालनिशाप्रकाशं १.७२.६६
कालेन कललं चापि १.८८.४९
कालेषु त्रिषु संबंध. २.९.३७
कालोस्म्यहं कालविनाशहेतु. १.९६.३५
काश्चिज्जगुस्तं ननृतु. १.२९.१८
काश्चित्तदा तं विपिने १.२९.१६
काष्ठकूटचतुःषष्ट्या १.१०३.२७
काष्ठाशंकुभिरन्योन्यं २.१.३२
काष्ठेष्टकादिभिर्मर्त्यः १.७७.२९

कि

किं करिष्यति मे मृत्यु. १.३०.६
किं कार्यं मम युधि देव. १.९७.३४
किं कार्यं हि मया ब्रह्मन् २.३.१३
किं किं धैर्यं कृतं तेन १.९६.२
किं कृत्यमिति संतप्तः १.७१.६५
किंचित्कर्णांतरं विद्या. १.८५.१२१
किंचिदुन्नामितशिरा १.८.८९
किंच्चिद्विस्रतवस्त्राश्च १.८०.२१
किं चेत्याह तदा देवान् १.७२.११९
किं जपन्मुच्यते जंतुः २.७.१
किंतु किंत्विति चान्योन्यं १.७१.१३६
किं न जानासि विश्वेशं १.९६.३७
किंनामगोत्रा कस्येयं १.१६.२२
किं नु रूपमहं कृत्वा १.७०.१२५
किं पश्यसि च मे ब्रूहि २.५.१०६
किं प्रवृत्तं वने तस्मिन् १.२९.३
किं रथेन ध्वजेनेश १.७२.१०८
किं लिंगं कस्तथा लिंगी १.१७.३
किं लिंगं कस्तथा लिंगी १.१७.५
किं वदामि च ते भूयो २.२.९
किं सागराञ्शोषयामो १.४४.११
किन्नरैरुरगाश्चैव १.४९.६७
किन्नर्यः किंनराश्चैव १.८०.३९
किमत्र भगवानद्य १.२०.४१
किमनेन द्विजश्रेष्ठा १.८६.८
किमप्यंचिंत्यं योगात्मा १.२०.५
किमर्थं भाषसे मोहाद् १.१७.२२
किमश्नामि महाभाग २.६.७९
किमिच्छसि वरं भद्रे २.५.१६
किमिदं त्विति संचित्य १.१७.५०
किमिदं त्विति संचित्य १.१०७.२२
किरणैः सर्वतस्तोयं १.५४.३०
किरीटी पद्महस्तश्च १.३६.२

की

कीटपक्षिमृगाणां च १.८६.४३
कीर्तनीयमिदं सर्वं १.१०३.७०
कीर्तिमांश्च महातेजाः १.६९.९
कीर्त्यते विषयाश्चेति २.९.२७

कु

कुंठितं हि दधीचेन १.९८.१४
कुंडं च पश्चिमे कुर्या. २.२२.६७
कुंडमंडपनिर्माणं २०.४८.४१
कुंडमध्ये तु नाभिः स्या २.२५.५
कुंडले कुंडले कार्यं २.२८.४३
कुंडले च शुभे दिव्ये १.४३.४३
कुंडले चामले दिव्ये १.४४.२९
कुंडसंस्कारानंतर. २.२५.६७
कुंडस्याधः खनेच्छत्रुं २.५०.३२
कुंडी द्वादशभिर्वीर. १.१०३.१९
कुंभीनसीं तथा कन्यां १.६३.६४
कुकुरस्य सुतो वृष्णि. १.६९.३३
कुंडाप्रभं च परमं १.९२.१४८
कुतः प्राप्तं कृतं केन १.९६.५२
कुतः सस्यविनिष्पत्ति. १.६०.१३
कुतोम्यपरिमेयात्मा १.२०.३४
कुनट्या नियतं विद्यात् २.५२.१३
कुबेरोऽत्र मम क्षेत्रे १.९२.५७
कुमारं जनयामास १.६६.११
कुमारौ ब्रह्मणस्तुल्यौ १.५.१४
कुमुदार्कशमीपत्र. २.५४.२८
कुमुदे किन्नरावास. १.५०.१२
कुरुवंशादनुस्तस्मात् १.६८.४८
कुर्याद्वर्षक्रमेणैव १.८३.५४
कुर्याद्वा यः शुभं विप्रा १.७७.१५
कुर्याद्विधिमिमं धीमा. २.५०.१७
कुर्वन्पतत्यधो गत्वा १.८५.१८१
कुर्वत्यनुग्रहं तुष्टा १.८५.१७४
कुलांतिकानला चैव २.२७.२२२
कुलालचक्रनाभिस्तु १.५४.२८
कुलालचक्रपर्यंतो १.५४.१७
कुलालचक्रमध्यं तु १.५४.२०
कुलालचक्रवच्छक्त्या १.९६.४६
कुलालचक्रवद्भ्रांत. १.८८.६९
कुलिशेन यथा छिन्नो १.९७.३९
कुरुवर्षे च कुरवः १.५२.१९
कुशपुंजेन वाभ्युक्ष्य २.२२.१९
कुशपुष्पयवव्रीहि. १.२७.१५
कुशमुष्टिं तदादाय १.३६.५३
कुशलदेशः कुशलो १.४६.३२
कुशलाकुशलं कर्म १.१०.१२
कुशलाकुशलानां तु १.१०.२८
कुशलाकुशलैस्तस्य २.९.३९
कुशस्थलात्समापन्ना २.१.२१
कुशाग्रमक्षतांश्चैव १.२७.१५
कुशानग्नौ तु प्रज्वाल्य २.२५.२०
कुशासने तु संस्थाप्य २.२१.४६
कुशिकश्चैव गर्भश्च १.७.५१
कुसुमोत्तरस्य वै वर्ष १.४६.२८

कृ

कृकलः क्षुद्रकायैव १.८.६६
कृच्छ्रातिकृच्छ्रं कुर्वीत १.९०.१७

कृच्छ्रात् सभार्यो भगवान् १.६४.४४
कृतं वा न कृतं वापि १.९२.१८१
कृतकृत्योऽस्मि विप्रेभ्यो २.५५.३५
कृतत्रेतादियुक्तानां १.४.३३
कृतमास्याः प्रसादार्थं १.१०६.२५
कृतमेतद्वहत्यग्नि. १.३४.२
कृतस्तस्य सुधर्माभूत् १.६६.५१
कृतस्याद्यस्य विप्रेंद्रा १.४.२६
कृतस्थलाऽप्सराश्चैव १.५५.४७
कृतांजलिपुटाः सर्वे २.१९.२६
कृतांजलिपुटो भूत्वा १.४१.५८
कृतांजलिपुटो भूत्वा २.२८.६
कृतास्त्रा बलिनः शूरा १.६८.११
कृते सकृद्युगवशा. १.८९.९४
कृतो रथश्चेषुवर. १.७२.१५५
कृतौजाश्च चतुर्थोऽभूत् १.६८.९
कृत्वांगन्यासमेवं हि १.८५.७३
कृत्वा कनीयसं लिंगं १.८१.९
कृत्वा करं विशेष्याग्रे २.२६.९
कृत्वा च गुरुतल्पं च १.१५.१८
कृत्वा च नगरीं राजा २.५.८२
कृत्वा च मैथुनं स्पृष्ट्वा १.८९.७४
कृत्वा द्वंद्वोपघातांस्तान् १.३९.३५
कृत्वा धनां प्रयत्नेन १.४.६२
कृत्वा नृपेंद्रस्तां कन्यां २.५.८४
कृत्वा पाणितले धीमा. १.२६.३०
कृत्वा पापसहस्राणि १.९२.५१
कृत्वा पापसहस्राणि २.११.३९
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.२५
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.३७
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.४४
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.४७
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.४९
कृत्वा भक्त्या प्रतिष्ठाप्य १.७६.६२
कृत्वा भक्त्या यथान्यायं १.७६.६३
कृत्वा यत्फलमाप्नोति १.७७.२०
कृत्वार्णवांभसि सितं १.९७.१७
कृत्वा लयं हि कौबेरं १.८४.३२
कृत्वा वित्तानुसारेण १.७७.१७
कृत्वा विन्यस्य तन्मध्ये १.४४.२२
कृत्वा विमुच्यते सद्यो १.१५.३१
कृत्वा शिरसि तत्पात्रं २.२२.२७
कृत्वा षोडशमार्गेण २.२९.९
कृत्वा हैमं शुभं पद्मं १.८१.१०
कृत्वैव लिंगं विधिना २.४७.६
कृत्वोंकारं प्रदीपं २.९.५५
कृत्स्नं च विंदते ज्ञानं १.७०.२४
कृष्णं गोमिथुनं दद्यात् १.८३.२२
कृष्णः श्यामस्तथा धूम्रः १.७.८५
कृष्णत्वे द्वारकायां तु १.२.४६
कृष्णपक्षस्त्वहस्तेषां १.४.११
कृष्णपुत्राः समाख्याताः १.६९.६५
कृष्णरूपा च देवेश १.२३.२१
कृष्णवर्णेन बाह्यस्थं २.२२.२१
कृष्णश्च पांडुरश्चैव १.४९.५१
कृष्णस्तुष्यति केनेह २.१.१
कृष्णस्य तासु सर्वासु १.६९.६७
कृष्णांबरधरा श्यामा १.९१.१६
कृष्णांबरधरोष्णीषं १.१४.५
कृष्णागरुसमुद्भूतं १.८१.३२
कृष्णाष्टम्यां च रुद्रस्य २.६.३५
कृष्णाष्टम्यां तु नाक्तेन १.८३.७
कृष्णेन च नृपश्रेष्ठ २.३.१०९
कृष्णैश्न विकटैश्चैव १.९१.२०

**के**

केचिदाहुर्महादेव. २.१५.१६
केदारं मध्यमं श्रेष्ठं १.९२.१०३
केदारे चैव यल्लिंगं १.९२.१३४
केदारे वा महाक्षेत्रे १.७७.३९
केन गच्छंति नरकं १.६.३१
केन योगेन वै सूत १.८८.१
केन वा तपसा देव १.३०.३१
केनाहं हि हरेर्यास्ये २.१.७८
केयं राजन्महाभागा २.५.५६
के वयमेव धातुक्ये १.९६.१०२
केवलं घृतहोमेन २.४९.१५
केवलं चापि शुद्धात्र. १.७८.२०
केवलं द्वादशाहेन १.८९.९१
केशं नृणां तथांगार २.५०.३९
केशरं नागरं वापि १.७७.७
केशवं प्रणवेनाथ २.२१.४२
केशवो भगवान् रुद्र. २.२७.१००
केशो विगतवासाश्च १.७२.७६

**कै**

कैः पाशैस्ते निबध्यंते २.९.१०
कैकसी चाप्यजनयद् १.६३.६२
कैकसी मालिनः कन्या १.६३.६१
कैतवं वित्तशाठ्यं च १.८९.३७
कैलासपतिः कामारिः १.९८.८३
कैलासवर्णनं चैव १.२.२०
कैलासस्थो गुहावासी १.६५.१३१
कैलासाख्यं च यः कुर्यात् १.७७.८
कैलासो गंधमादश्च १.४९.२२
कैलासो यक्षराजस्य १.५१.२०
कैवर्ताय किराताय १.९६.८२
कैवल्यं चैव निर्वाणं १.८.१०४

**को**

कोटयो नरकाणां तु १.६.२८
कोटिकोटिशतैश्चैव १.८२.८३
कोटिकोटिसहस्राणां १.१०३.२४
कोटिकोटिसहस्राणि १.३७.१०
कोटिकोटिसहस्राणि १.७०.१०९
कोटिभास्करसंकाशं १.७१.१०९
कोटिभास्करसंकाशं १.९८.१६४
कोटीनां द्वे सहस्रे तु १.४.४१
कोटीश्वरं महातीर्थं १९२.१५७
कोणस्तथास्त्रहंकारो १.७२.१२
को भवानष्टमूर्तिर्वै १.४१.५५
को भवानिति चाहुस्तं १.२९.२०
कोयमत्रेति संमंत्र्य १.१०२.३०
कोहं ब्रह्माथवा देवा १.७१.५०
को ह्यसौ शंकरो नाम १.२०.६८
कोतूहलान्महायोगी १.२०.२०

**कौ**

कौबेर्या तु गदा लेख्या २.२८.५२
कौ भवन्तौ महात्मानौ १.२२.४
कौशिकस्य इमे विप्राः २.१.५२
कौशिकस्यास्य गानेन २.१.६०
कौशिकादीस्ततो दृष्ट्वा २.१.४०
कौशिकाद्यगणैः सार्धं २.१.२४

क्र

क्रतवे संनति नाम १.७०.२९१
कतुर्दक्षक्रतुध्वंसी २.११.१७
क्रतुः सत्यो भार्गवश्च १.७.१४
क्रतोस्तु भार्या सर्वे ते १.५.४४
क्रथो विदर्भस्य सुः १.६८.४१
क्रमणः क्रमणीयत्वात् १.७०.१०५
क्रमते शुक्लपक्षादी १.५६.४
क्रमशः कन्यसेनैव १.८.११०
क्रमादेव विधानेन २.२२.७४
क्रमाद् गांधर्वमासाद्य १.७७.१०४
क्रमाद् भुवि दिवं प्राप्य १.९४.२६
क्रमणी क्रामिणी वक्त्रा २.२७.१८६
क्रमेण परिवृत्ता तु १.४०.८९
क्रमोयं मलपूर्णस्य १.८६.१५३
क्रियाणां साधनाच्चैव १.१०.९
क्रियायामभवत् पुत्रो १.७०.२९५
क्रियावंतः प्रजावंतो १.७०.१९१
क्रीडते नात्र संदेहो १.७६.५४
क्रीडते सगणः सांब. १.५१.३०
क्रीडते सुचिरं कालं १.५२.८
क्रीडमानं च पद्मेन १.२०.११
क्रीडाभूमिश्च देवानां. १.४८.५
क्रीडार्थं च सतां मध्ये १.१०२.१३
क्रूरा च पिंगला देवी २.२७.१३४
क्रोधरक्तेक्षणः श्रीमा. १.१००.२९
क्रोधाकारः प्रसन्नात्मा १.२१.८३
क्रोधाद्या नाशमायांति १.८६.११३
क्रोधाविष्टस्य नेत्राभ्यां १.४१.४०
क्रोधीशश्च तथा चंडः २.२७.१०५
क्रोधो हर्षस्तथा लोभो १.८६.११
क्रोशमानाः समभ्येत्य २.१.३९
क्रोष्टुश्च शृणु राजर्षे १.६८.२१
क्रोष्टोरेकोऽभवत्पुत्रो १.६८.२२
क्रौंचद्वीपेश्वरस्यापि १.४६.३०
क्रौंचो वामनकः पश्चात् १.५३.१४

क्व

क्वचिच्च केकारुतनादितं १.९२.१५
क्वचिच्च दंतक्षतचारु. १.९२.२०
क्वचित्क्वचिद्गंधकदंबकै. १.९२.१८
क्वचित्प्रफुल्लांबुजरेणु. १.९२.१४
क्वचिदंजनचूर्णाभैः १.९२.३०
क्वचिदशेषसुरद्रुमसंकुलं १.८०.८
क्वचिद्दंडकबंधं तु १.९.५९
क्वचिन्नृत्यति शृंगार १.३१.३०
क्व वा भूयश्च गंतव्यं १.२०.१६
क्व शर्वस्तव भक्तिश्च १.३०.१७

क्ष

क्षंतव्यमिति विप्रेंद्रं २.२१.७३
क्षणश्चापि निमेषादिः १.६१.५५
क्षत्रियाणां विशेषेण २.२१.४५
क्षमा च शिखरा देवी २.२७.७९
क्षमा च सुषुवे पुत्रान् १.५.४१
क्षमा धृतिरहिंसा च १.३४.१५
क्षमा युधि न कार्य वै १.९८.१७५
क्षमा सत्यं दयादानं १.८४.२२
क्षमाहिंसादिनियमैः १.८४.१९
क्षयं जघान पादेन १.३०.३६
क्षराक्षरात्मकं प्राहुः २.१५.६
क्षारोदेक्षुरसोदश्च १.४६.४
क्षालनं प्रोक्षणं चैव १.२७.९
क्षितिर्वायुः पुमानंभः १.४१.३६
क्षितौ शर्वः स्मृतो देवो १.८६.१२९
क्षीरं तत्र कुतोऽस्माकं १.१०७.१५
क्षीरधारासहस्रं च १.१०७.५१
क्षीरषष्टिकभक्तेन १.८३.३८
क्षीरस्नानं ततो विप्राः १.७७.५०
क्षीरस्यं मधुनो दध्नः २.२५.५२
क्षीरार्णवामृतमिव १.४६.६
क्षीरार्णवेमृतमये १.३७.३२
क्षीरार्थमदहत्सर्व १.१०७.२४
क्षीरोदश्च समुद्रोसौ १.२९.२९
क्षुत्तृट् च वर्तते देव २.३.३८
क्षुद्रनद्यस्त्वसंख्याता १.५२.१२
क्षुद्रार्त्तेन भयार्त्तेन २.३.६६
क्षुपो दुःखातुरो भूत्वा १.३६.६९
क्षुरा कर्तरिका चापि १.१०८.१३
क्षेत्रं गोमिथुनं चैव १.८४.४४
क्षेत्रज्ञं पुरुषं प्राहुः २.१६.४
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रविज्ञान. १.७०.१०३
क्षेत्रज्ञः प्रकृतिर्व्यक्तं २.१६.३
क्षेत्रज्ञः प्रथमा मूर्तिः २.१४.६
क्षेत्रपालोथ वा यत्र २.६.५४
क्षेत्रं प्रदक्षिणं चैव २.४८.४०
क्षेत्रस्यास्य च माहात्म्य. १.९२.२
क्षेत्रस्यास्य च माहात्म्य. १.९२.११
क्षेत्राणि च धनं धान्यं २.४०.६
क्षेत्राण्यासाद्य चाभ्यर्च्य १.१.१४
क्षेत्राण्येतानि सर्वाणि १.६१.१
क्षोभयामास योगेन १.७०.७६
क्षोभिणी मोहिनी नित्यं १.८२.२१
क्ष्मांभोग्निवायुव्योमांतं २.२४.५
क्ष्मायां सृष्टिं विसृजते १.५४.३३
क्ष्मा सा पंचगुणा तस्मा. १.३.२४

ख

खगेंद्रमारुह्य नगेंद्रकल्पं १.७२.५४
खट्वांगधारिणी दिव्या १.८२.१६
खड्गचक्रेति विधिना २.२७.२२४
खरजोगरुडश्चैव २.२७.१२५
खरस्य च गजस्याथ २.५२.११
खात्मेंन्दुवह्निसूर्याभो. २.१२.४
खिन्नस्य धारणायोगा. १.९१.४४
खुरांश्च रजतेनैव २.३८.३
खेचरी वसुचरी च १.८२.४९
ख्यातः कल्माषपादो वै १.६६.२७
ख्यातमासीतदा तस्य २.१.२३
ख्यातिः प्रज्ञामहाभागा १.७०.३३२
ख्यातिः प्रत्युपभोगश्च १.७०.१९
ख्यातिशीलस्तथा चांद्रं १.७९.१९
ख्यायते तद्गणैर्वापि १.७०.२०
ख्यायते यत्त्विति ख्याति १.८.७३

ग

गंगया सहितं चैव १.७६.५६
गंगाकाशान्निपतिता १.७१.१४७
गंगादिभिः कृत्तिकाद्यैः १.७१.१२८
गंगा निरुद्धा बाहुभ्यां १.९७.२७
गंगा माता जगन्माता १.८२.८८
गंगायमुनयोर्मध्ये १.४०.६१
गंगास्नानसमं पुण्यं १.७७.५६
गंतु चक्रे मतिं यस्य १.१००.५

गंतुमर्हसि नाशाय १.७१.७८
गंधद्वारां दुराधर्षा. १.२५.१६
गंधद्वारेति तस्या वै १.१५.१९
गंधपुष्पं तथा धूपं १.२७.४७
गंधपुष्पैस्तथा धूपै १.२७.२३
गंधमाली च भगवा. १.६५.१५२
गंधर्वविद्याधरकिन्नराणा. १.५८.११
गंधर्वाणां च पतये १.२१.२१
गंधर्वा देवसंघाश्च २.१०.३६
गंधर्वाप्सश्चैव १.५५.६८
गंधर्वाप्सरसां संघैः २.३.८६
गंधर्वैरप्सरोभिश्च १.५४.२२
गंधर्वो ह्यदितिस्तार्क्ष्यो १.६५.१२०
गंधवर्णरसैर्दुष्ट. १.८९.५१
गंधवर्णरसैर्हीनं १.७०.४
गंधादिपेषणं चैव २.५.१०
गंधैः स्रग्धूपदीपैश्च २.४७.१२
गंधो रसस्तथा रूपं १.९.२७
गंभीररोषो गंभीरो १.६५.७८
गगनं स्पर्शनं तेजो १.८२.४४
गगनव्यापि दुर्धर्ष. १.९६.६२
गच्छध्वं शरणं शीघ्रं १.१०२.५०
गच्छ शीघ्रं च पश्यैनं २.३.८
गच्छेंद्र मा कृथास्त्वत्र २.५.३०
गच्छेद्वायसपंक्तीभिः १.९१.९
गच्छोपशममीशेति १.९२.७२
गजं सुलक्षणेपेतं २.४२.२
गजदानं प्रवक्ष्यामि २.४२.१
गजोष्ठासदृशाकारं २.२५.३९
गणत्वं लभते दृष्ट्वा १.९२.१०१
गणपाश्च महाभागाः १.१०३.१२
गणमातांबिका चैव २.२७.८४
गणांबिकायै विद्महे २.२७.५०
गणांबिकायै विद्महे २.४८.६
गणेशायतनैर्दिव्यैः १.८०.२६
गणेशेशं प्रवक्ष्यामि २.३४.१
गणेश्वराश्चा तुष्टुवुः १.१०५.८
गणेश्वराश्च संक्रुद्धा १.१००.१४
गणेश्वरैर्देवगणैश्च १.७२.७५
गणैश्वर्यमनुप्राप्तो १.६५.४७
गणो मुनिज्योतिषां तु १.५४.२९
गतं दृष्ट्वाथ पितरं १.६४.१०५
गतवान् गणपो देवः १.२२.१६
गतागतं मनुष्येण १.६१.६१
गतानि तावच्छेपाणि १.४.५०
गतासुर्भगवानासीत् १.७०.२६६
गतिर्नः सर्वदास्माभि. १.७१.१०१
गते पितामहे देवो १.१०२.९
गते पुण्ये च वरदे १.४२.१
गते महेश्वरे देवे १.३८.१
गते महेश्वरे देवे १.७३.१
गते महेश्वरे सांबे १.६४.१०७
गते मुनिवरे तस्मिन् २.५.७६
गत्वा तदाश्रमे शंभोः १.१०१.३९
गत्वा विज्ञापयामासुः १.२९.३८
गत्वा शिवपुरं दिव्यं १.७७.२१
गत्वा शिवपुरं रम्यं १.७७.११
गदामुद्धृत्य हत्वा च १.९७.२१
गमिष्यंति महात्मानो १.२४.३९
गरुडोपि मया बद्धो १.९७.३०
गर्भवासो वसूनां च १.२९.२८
गर्भाधानादिकार्येषु १.२५.९४
गर्भे दुःखान्यनेकानि १.८६.२२
गलादधो वितत्या य. १.८.२
गले मध्ये तथांगुष्ठे १.८५.७९
गवां कोट्यर्बुदे चैव २.३.२५
गव्यं क्षीरमतिस्वादु १.१०७.६
गव्यं घृतं ततः श्रेष्ठं २.२५.५०
गह्वराय घटेशाय १.२१.५

गा

गांगा गंगाम्बुसंभूता १.५४.५८
गां गोभिर्ब्राह्मणान् सर्वान् २.१७.२१
गांधारश्च सुरापश्च १.६५.१३९
गांधारी चैव माद्री च १.६९.१०
गांधारी दुंदुभी दुर्गा २.२७.१४९
गाणपत्यं च दैत्याय १.९३.२६
गाणपत्यं ततः सम्भो. १.७२.११७
गाणपत्यं ददौ तस्मै १.१००.४९
गाणपत्यं दृढं प्राप्तः १.६६.२
गानकीर्ति वयं तस्य २.१.२९
गाननृत्यादिकं चैक २.२.७
गानबंधुं मुनिः प्राह २.३.७१
गानबंधुं समासाद्य २.३.७८
गानयोगसमायुक्ता २.३.५५
गानयोगेन ये नित्यं २.१.३७
गानयोगेन सर्वत्र २.३.२८
गानविद्यां प्रति तदा २.३.५३
गानेनाराधितो विष्णुः २.२.३
गामालभ्य च गायत्र्या २.३५.११
गायंतश्च द्रवंतश्च १.४४.४
गायत्रं च ऋचं चैव १.७०.२४३
गायत्रीं तु ततो रौद्रीं १.१३.१३
गायत्रीप्रभवं मंत्रं १.१७.८४
गायत्र्या चैव गोमूत्रं २.२८.९०
गायत्र्या देवमभ्यर्च्य १.७९.८
गायन् शृण्वंस्तमाप्नोति २.३.११२
गावश्चाराध्य यत्नेन २.३८.६

गि

गिरिजां पूर्ववच्छंभो. १.१०६.१२
गिरिरक्षस्तथोपेक्षः १.६९.२७
गिरींद्रो मंदरः श्रीमान् १.९७.२६
गिरेः पृष्ठे परं शार्व १.८०.९
गिरेरुपरि विप्रेंद्राः १.४८.२१
गीतैरेनमुपासंते १.५५.४२

गु

गुंजागिरिवरतटा १.९६.१०५
गुणत्रयं क्रमेणैव १.८.९५
गुणत्रयं चतुर्धाख्य. १.७३.१५
गुणात्मिका च तद्वृत्ति. १.४.५६
गुणान् देवावृधस्याथ १.६९.६
गुणे तु ख्यापिते तस्य १.८५.१७९
गुणोत्तरमथैश्वर्ये १.८८.२९
गुरुः कान्तो निजः सर्गः १.६५.१६५
गुरुतः शास्त्रतश्चैव २.२०.१९
गुरुदैवतभक्ताय २.५५.२२
गुरुप्रसादजं दिव्य. २.२०.१६
गुरुप्रियकरो मंत्रं १.८५.१८३
गुरुरेको हि वै श्रीमान् २.४४.८
गुरुर्देवो यतः साक्षा. १.८५.१६९
गुरुश्च शास्त्रवित्प्राज्ञ. २.२०.३४

गुरुस्तुष्टो दहत्येवं १.८५.१७३
गुरूपदेशयुक्तानां १.८९.३३
गुरोरपि हिते युक्तः १.८९.५
गुर्वाज्ञापालकः सम्यक् १.८५.१६७
गुह्याद् गुह्यतरं साक्षा. १.८५.४०
गुह्यालयैर्गुह्यगृहै. १.८०.२७

गृ

गृणंतश्च महात्मानो १.१२.१२
गृध्रीगृध्रान् कपोतांश्च १.६३.३१
गृध्रोलूकमुखैश्चान्यैः १.५१.१३
गृहद्वारं गतो धीमां. १.२९.५८
गृहमेधिनः पुराणास्ते १.७०.१९०
गृहस्थैश्च न निंद्यास्तु १.२९.४३
गृहस्थोपि पुरा जेतुं १.२९.४६
गृहस्थो ब्रह्मचारी च १.१०.११
गृहिणी प्रकृतिर्दिव्या १.५३.५२
गृहीतो दम्यमानस्तु १.८.५२
गृहीत्वा गणपाः सर्वान् १.१००.१५
गृहे क्षेत्रे तथावासे २.७.११
गृहे जपः समं विद्या. १.८५.१०६
गृहोपकरणैश्चैव १.८४.४०
गृह्या नारायणी मोहा १.२७.२१३

गे

गेयनादरतैर्दिव्यैः १.८०.३२

गो

गोचर्ममात्रमालिख्य १.७७.८२
गोचर्मेश्वरमीशानं १.९२.१५२
गोत्रतो वै चंद्रमसः १.४०.५८
गोत्रेस्मिन्वैचंद्रमसो १.४०.५१
गोपयामास कमलं १.९८.१६१
गोपव्यूहं वदाम्यत्र २.२७.२०३
गोपव्यूहः समाख्यातो २.२७.२०७
गोपायी कथितो व्यूहो २.२७.२११
गोपुरैर्गोपतेः शंभो. १.८०.२५
गोपुरैर्विविधाकारै. १.४८.१०
गोप्रेक्षकमथागम्य १.९२.६८
गोप्रेक्षकमिदं क्षेत्रं १.९२.६७
गोभिर्महीं संपतते १.८८.३८
गोमंडलेश्वरं चैव १.९२.१६२
गोमयालिप्तभूमौ तु २.३१.२
गोमयेन समालिप्य २.१.२०
गोमुखी व त्रिभागैका १.३१.१४
गोमेदकेन वैकंपं २.३३.५
गोरूपं सुखुरं दिव्यं २.३५.४
गोलोकं समनुप्राप्य १.८४.४५
गोष्ठशायी मुनिश्रेष्ठाः १.८३.२८
गोसहस्रप्रदानं च २.३८.१

गौ

गौणं गणेश्वराणां च १.८६.३३
गौतमस्तु तदा व्यासो १.२४.९५
गौतमी कौशिकी चार्या १.७०.३३६
गौतमोत्रिः सुकेशश्च १.३३.२१
गौरजः पुरुषो मेषो १.७०.२४०
गौरहं गह्वरश्चाहं २.१७.१४
गौरी माया च विद्या च १.१६.३४
गौरीरूपाणि सर्वाणि २.११.२४

ग्र

ग्रंथकोटिप्रमाणं तु १.२.२
ग्रंथैकादशसाहस्रं २.५५.३६
ग्रथितैः स्वैर्वचोभिस्त १.५५.१९
ग्रसामि त्वां प्रसादेन १.३७.३३
ग्रहणांतं हि वा विद्वा. १.२९.७१
ग्रहणादिषु कालेषु १.२.२४
ग्रहणादिषु कालेषु २.२८.१६
ग्रहनक्षत्रताराश्च २.१०.३७
ग्रहनक्षत्रतारासु २.५७.३३
ग्रहाणि ऋषयः सप्त १.५३.३९
ग्रहाधिपत्ये भगवा. १.५८.२
ग्रहाधिपत्ये भगवान् १.५७.३८
ग्रहान्निःसृत्य सूर्यात्तु १.५४.६८
ग्रहैश्च संवृतं वापि १.७७.७६
ग्रामणीयक्षभूतानि १.५५.२०
ग्रामण्यो यातुधानाश्च २.२२.६३
ग्रीवां तु पद्मरागेण २.४१.४

घ

घंटा सरस्वती देवी १.७२.२४
घंटेश्वरी महाघोरा २.२७.१३९
घनतोयात्मकं तत्र १.६१.७
घनतोयात्मिका ज्ञेयाः १.६१.२७
घर्षयामास भगवान् १.१००.१८
घृणी ददौ पुनः प्राणान् १.४१.४९
घृतस्नानेन चानंतं १.७७.५१
घृतेन करवीरेण २.५२.९
घृतेन च पृथक्पात्रे २.४५.१३
घृतेनाष्टशतं हुत्वा १.८५.२०३
घ्राणेंद्रियात्मकत्वेन २.१४.१५

च

चंडः सर्वगणेशानो १.८२.२५
चंडयक्षो गणपति. २.२७.११०
चंडव्यूहः समाख्यात. २.२७.१४४
चंडा चंडमुखी चैव २.२७.६७
चंडायाः कथितो व्यूहो २.२७.१४८
चंडिका चपला चेति २.२७.१५३
चंडिकेश्वरकं देवि १.९२.१६६
चंद्रः सूर्यः शनिः केतु. १.९८.६१
चंद्रऋक्षग्रहाः सर्वे १.५९.४४
चंद्रघ्राणा बला चैव २.२७.१४६
चंद्रबिंबस्थितायैव १.७२.१३९
चंद्रभानामतः सर्वाः १.५९.२७
चंद्रमंडलसंकाश २.२१.१२
चंद्रस्य षोडशो भागो १.५७.१३
चद्रांशुसन्निभैः शस्त्रै. १.९७.१६
चंद्राख्यकिरणास्तस्य २.१२.९
चंद्रादित्यौ सनक्षत्रो २.५४.२५
चंद्रार्धशेखरश्चंद्रो २.११.११
चंद्रांशुजालशबलै. १.९२.२९
चंपकाशोकपुंनाग १.५१.३
चकार सर्वं भगवा. १.४४.३४
चक्रपक्षे निबद्धास्तु १.५५.६
चक्रपाणिरहं नित्यं २.५.१३१
चक्रुः पादप्रतिष्ठार्थं १.४४.२३
चक्रुर्देवास्ततस्तस्य १.३६.५२
चक्रे कथां विचित्रार्थां १.१.७
चक्षुः पूतं चरेन्मार्गं १.८९.७
चक्षुःश्रोत्रे च जीयेते १.६७.२२
चक्षुषी चाज्यभागौ तु २.२५.९९
चतुःशृंगी चतुर्वक्त्रा १.१६.२१
चतुःषष्टिप्रकाराय १.७२.१३०
चतुःषष्ट्यात्मतत्त्वाय १.७२.१३६
चतुःषष्ट्या विशाखश्च १.१०३.१४

चतुरंगुलमध्ये तु २.२५.४७
चतुरंगुलहीनं तु २.३०.६
चतुरस्रं बहिश्चांत. १.३१.८
चतुराशीतिसाहस्र. १.४८.२
चतुराशीतिसाहस्रो १.०३.८
चतुर्गुणं बुद्धिपूर्वे १.१५.८
चतुर्थी वामदेवाख्या २.१४.९
चतुर्थेनैव विभजे. २.२२.३
चतुर्थ्यां स्त्री न गम्या तु १.८९.१०९
चतुर्दशविधेष्वेव १.८६.८७
चतुर्दशसु लोकेषु २.१०.४३
चतुर्दशानां स्थानानां १.८८.७२
चतुर्द्रोणैर्महादेव. १.९२.१७६
चतुर्द्वारसमोपेतं २.२८.२३
चतुर्द्वारसमोपेते २.२८.४२
चतुर्धा च चतुर्धा च १.७२.१२९
चतुर्भागैकहीनं तु १.३९.१
चतुर्भिस्तनुभिर्नित्यं १.८२.३७
चतुर्मुखस्तु ब्रह्मत्वे १.७०.९०
चतुर्युगसहस्रांते १.४.५
चतुर्युगस्य च तथा १.४.३६
चतुर्युगानां सर्वेषा. १.४०.८६
चतुर्लक्षेण संप्राप्त १.२.५
चतुर्वक्त्रो विशालाक्षः १.२०.१०
चतुर्वर्णः ससौवर्णो १.४९.१९
चतुर्विंशतिकां देवीं २.२९.४
चतुर्विंशतृतीये तु १.९.२६
वतुर्विंशत्प्रकारेण १.८६.२९
चतुर्विंशात्मकं ह्येतत् १.९.३९
चतुर्विधानां भूतानां १.६१.५७
चतुर्व्यूहः समाख्यातः १.२८.२४
चतुर्व्यूहेण मार्गेण १.२८.२३
चतुष्कोणं तु वा चूर्णे. १.७७.१००
चतुष्पदां चतुर्वक्त्रां १.१३.६
चत्वारस्तु महात्मानः १.१४.१०
चत्वारस्तु महात्मानो १.२४.१५
चत्वारस्तु महाभागा १.२४.२९
चत्वारिंशत् समावृत्ति १.८५.१०४
चत्सारिंशत्सहस्राणि १.४.२७
चत्वारि च सहस्राणि १.३९.९
चत्वारि च सहस्राणि १.३९.८
चत्वार्येतानि रूपाणि २.१६.२२
चरणौ चैव पातालं १.७५.८
चराचराणां भूतानां २.१३.३
चराचराणां भूतानां २.१२.४१
चराचराणि भूतानि २.१०.२८
चराचरविभागं च १.२८.२८
चराचरशरीरेषु २.१२.४४
चरुणा च यथावद्धि २.२५.१०२
चरुणा सघृतेनैव २.५३.४
चरुश्च वह्निर्यज्ञश्च १.१७.७
चरेद्धि शुद्धः समलोष्ठ. १.९०.२४
चरेद्यदि भवेन्नारी १.८९.११९
चर्वन्तमाज्यपूर्वं च २.४५.६६

चा

चांद्रायणसहस्रस्य १.७७.३२
चांद्रायणादिकाः सर्वाः १.७७.९७
चातुराश्रमशैथिल्ये १.४०.२४
चादिपंचाक्षराण्येव १.१७.७८
चामरासक्तहस्ताग्राः १.७२.१८
चारुधीर्जनकश्चारु १.९८.१११
चारुश्रवाश्चारुयशाः १.६९.९६

चि

चितबंधे न तस्याभू. २.१०.४
चित्रकस्याभवन्पुत्रा १.६९.३०
चित्रसेनश्च गंधर्व. १.५५.६०
चित्रसेनो महातेजा. १.५५.३१
चित्रितैः पूजितैश्चैव २.४७.१८
चित्रैर्मणिमयैः कूटैः १.५३.२०
चिद्भासमर्थमात्रस्य १.८.४४
चिरकालस्थितिं प्रेक्ष्य १.१०.४२
चिरात्तयोः प्रसंगाद्वै १.३५.४
चिराद्वा ह्यचिराद्वापि १.१०७.१८

ची

चीर्णेन सुकृतेनेह १.६१.२

चू

चूर्णेरष्टदलं वृत्तं २.२१.३

चे

चेकितानाय तुष्टाय १.२१.५३
चेतनाचेतनान्यत्व १.१०.२९
चेष्टितं तत्क्षणे राजन् २.१.३६

चै

चैत्रेपि रुद्रमभ्यर्च्य १.८३.२७
चैत्रे मासि भवेदंशु. १.५९.३३

छ

छंदो ऋषिर्भरद्वाजः १.८५.५३
छंदो देवो च गायत्री १.८५.४७
छंदोऽनुष्टुप्ऋषिश्चात्री १.८५.५०
छगली मोदिनी साक्षा. २.२७.२१८
छत्रं शतशलाकं च १.४४.२६
छाया च तस्मात्सुषुवे १.६५.५
छाया च विप्लुषो विप्रा १.८९.७१
छायाविहीननिष्पत्ति. १.९.४२
छायाशपात्पदं चैकं १.६५.८
छाया स्वपुत्राभ्यधिकं १.६५.६
छिद्रं वा स्वस्य कंठस्य १.९१.१७
छिन्नं च निपपाताशु १.१००.३२
छिन्नं तमेनाभिसंघं १.९६.५०

ज

जंघे शिश्नमुपस्थं च २.१८.४९
जंतवो दिवि भूमौ च १.७५.२६
जंबूः प्लक्षः शाल्मलिश्च १.४६.२
जंबू द्वीपे तत्रापि १.५२.२४
जंबूद्वीपेश्वरं चक्रे १.४६.१९
जंबूफलरसं पीत्वा १.५२.४२
जंबू फलरसाहारा १.५२.४०
जंभः कुंभश्च मायावी १.८२.६१
जगतां हिताय भवता १.९४.१८
जगत्त्रयं सर्वमिवापरं तत् १.७२.१००
जगत्त्रयेऽत्र सर्वत्र १.१०५.२१
जगत्त्रतापनमृते १.६०.१४
जगत्यस्मिन्हि देहस्थं १.९.२२
जगत्संहारकारेण १.९६.११३
जगदावासहृदयं १.३२.३७
जगद्द्वैधमिदं चक्रे २.६.३
जगद्योनि महाभूतं १.३.४
जगद्योनि महाभूत १.७०.५
जगर्जुरुच्चैः पापिष्ठा १.९७.१०
जगाम देवताभिर्वै १.८०.४
जगाम देवदेवेशं १.९७.५

जगाम नैमिषं धीमान् १.१.८
जगाम भगवान् ब्रह्मा १.९५.६०
जगाम मदनं लब्ध्वा १.१०१.४६
जगाम रंहसा तत्र १.९६.१६
जगाम शौनकमृषिं १.६६.७५
जगाम स रथो नाशं १.६६.७२
जगाम स स्वयं ब्रह्मा १.१०२.३
जगामेष्टं तदा दिव्यं १.१०२.१५
जगुत्तदा च पितरो १.६४.५०
जगौ कलपदं हृष्टो २.१.७४
जग्मतुः प्रणिपत्यैनं १.९८.१९४
जग्मुर्यथागतं देवा २.२०.६
जघान च सुतं प्रेक्ष्य १.९५.१६
जघान भगवान् रुद्रः १.१००.२३
जघान मूर्ध्नि पादेन १.१००.३७
जजाप भगवान् रुदः २.६.९०
जजाप मंत्रमनिश. १.६२.२३
जज्ञे च रुक्मकवचात् १.६८.३२
जज्ञे चित्ररथस्तस्य १.६८.२४
जज्ञिरे मानसा ह्येते १.६३.७९
जटिनो मुंडिनश्चैव १.३४.३१
जटी मुंडी शिखंडी च १.१६.३७
जठरो देवकूटश्च १.४९.४
जननी ब्रह्मदत्तस्य १.६३.८७
जनयत्यंगना यस्मा. १.८९.११७
जनलोको महर्लोकात्. १.५३.४२
जनानुरागसंपन्नो २.२७.८३
जनार्दनसुतः प्राह १.३७.२१
जनार्दनोपि भगवान् १.७२.१७३
जनासक्ता बभूवुस्ता १.७१.८५
जन्तुभिर्मिश्रिता ह्यापः १.७८.४
जन्मप्रभृति देवेशं १.९५.३
जन्मांतरसहस्रेषु १.९२.६६
जनमांतरेपि देवेन १.९३.१६
जन्माधिपो महादेवः १.९८.८८
जपः शिवप्रणीधानं १.८.३१
जप नित्यं महाप्राज्ञ १.६२.१९
जपन् स वासुदेवेति १.६२.३१
जपयज्ञसहस्रेभ्यो १.७५.१४
जपहोमादिकं नास्ति २.६.३४
जपहोमार्चनादाना. २.३२.१
जपाच्छ्रेष्ठतमं प्राहु. १.८६.१
जपादेव न संदेहो १.८५.२
जपान्यनियमाश्चैव १.८५.१७६
जपित्वा तु महादेवीं १.१३.१४
जपित्वैवं महाबीजं १.९२.१८२
जपेत्स याति विप्रेंद्रा २.७.१४
जपेदक्षरलक्षं वै १.८५.९९
जपेदग्रे यथान्यायं २.३८.७
जपेदष्टोत्तरशतं १.८५.१९१
जपेद्वा केवलां विद्यां २.५२.१६
जपेन पापं शमयेदशेषं १.८५.१२५
जपेन्नाम्नां सहस्रं च १.९८.१९५
जपेल्लक्षमघोराख्यं १.१५.२३
जप्त्वायुतं च तत्स्नान. १.८५.१९७
जप्त्वा सर्वाणि मंत्राणि १.२५.२४
जप्त्वा हुत्वाभिमंत्र्यैवं १.३५.२६
जयघोषो महानासी. २.१.५१
जयध्वजश्च राजासी. १.६८.१२
जयमंगलशब्दादि. २.२८.७७
जयशब्दरवैर्दिव्यै. २.२७.२५८
जयस्तंभे विशिष्टं भो १.९८.१२१
जयादिप्रभृतीन सर्वान् २.५२.१५
जयादिस्विष्टपर्यंत. २.२१.५५
जयादिस्विष्टपर्यांतं २.४७.४२
जया निद्राभयालस्या २.२७.१८१
जयाभिषेकं देवस्य २.२७.९
जयाभिषेक ईशेन २.२७.२
जयाभिषेकमखिलं २.२७.१०
जयामग्निशिखाकारां १.१९.२१
जरामरणगर्भेभ्यो १.८९.२०
जरामरणनिर्मुक्तान् १.६.१४
जराव्याधिक्षुधाविष्टा १.४०.७२
जरासिद्ध नमस्तुभ्य. १.२१.३६
जलंधरं जटामौलौ १.९७.१
जलंधरेशयोस्तेन १.९७.६
जलदं च कुमारं च १.४६.२५
जलमध्ये हुतवहं १.९.३७
जलस्य नाशे वृद्धिर्वा १.५४.६७
जलानामोषधीनां च २.१२.२५
जलाय जलभूताय १.१८.८
जलेन केवलेनैव १.९२.१७४
जले निवसनं यद्वद् १.९.३२
जले वा मैथुनं कुर्यात् २.६.७१
जहौ प्राणंश्च भगवान् १.४१.४२

जा

जांबवत्या वचः श्रुत्वा १.६९.७२
जांबूनदमयैः पद्मै. १.५१.२३
जांबूनदसमप्रख्या १.४८.३३
जागरं कारयेद्यस्तु १.९२.१७९
जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिश्च १.८६.७२
जातकर्मादिकं कृत्वा २.८.२०
जातकर्मादिकाः सर्वा. १.१०१.३
जातमात्रं सुतं दृष्ट्वा १.१०५.१३
जातां तदानीं सुरसिद्धसंघा १.१०६.१६
जातानि न तदन्यानि २.१६.२९
जातानि भूतवृंदानि २.१०.४२
जाता यदा कालिमकालकंठी १.१०६.१५
जाताय बहुधा लोके १.९५.४०
जाता शिवात्र संदेहः २.१६.३०
जातिकंकोलकर्पूर. १.२७.१३
जातूकर्ण्यो यदा व्यासो १.२४.१२६
जातूकर्ण्यो हरिः साक्षात् १.७.१८
जाते रामेऽथ निहते १.६९.४६
जानातेर्ज्ञानमित्याहु. १.७०.२६
जानुभ्यामवनीं गत्वा १.१९.८
जाने तथैनां भगवान् १.३६.३८
जाने वोर्तिं सुरेंद्राणां १.१०१.२५
जायस्व शीघ्रं भद्रं ते १.६९.२२

जि

जितेंद्रियान्कुलोद्भूतान् २.४३.५
जिह्वा प्रसादिता स्पष्टा २.३.५४
जिह्वाबंधो न तस्याभूद्. २.१०.५
जिह्वामेकां तुलामध्ये २.२८.३५
जिह्वेंद्रियात्मकत्वेन २.१४.१४

जी

जीवच्छ्राद्धं पुरा कृत्वा २.२७.४
जीवच्छ्राद्धविधिं वक्ष्ये २.४५.२
जीवच्छ्राद्धविधिः प्रोक्त. २.४६.१
जीवच्छ्राद्धे कृते जीवो २.४५.६
जीवतां व्याधिभिः पीडां २.१०.२९
जीवत्वेन स्थिते तस्मि. २.१२.२७
जीवितांतकरो नित्यो १.९८.१२९

जीमूतस्य च जीमूतो १.४६.४०
जीवकाश्च तथा क्षीणा १.५४.५१
जीवन्मुक्तो यतस्तस्मा. १.८६.१०७
जीविताश धनाशा च १.६७.२३

जु

जुहुयाद्विरजो विद्वान् २.१८.४७

जे

जेता क्षत्रस्य सर्वत्र १.६६.१३
जेतुमिच्छामि तं विप्रं १.३६.२५

जै

जैगीषव्यो विभुः ख्यातः १.२४.३७

ज्ञ

ज्ञातं प्रसादादुद्रस्य १.३६.३७
ज्ञातं मयेदमधुना १.९८.१७०
ज्ञात्वा च विविधोत्पत्तिं १.२०.७५
ज्ञात्वा चेश्वरसद्भावं १.२०.९५
ज्ञात्वा न हिंसते राजा १.४०.१५
ज्ञात्वा प्रयोगं विधिना १.८५.१७
ज्ञात्वा शक्तिसुतस्यास्य १.६४.७१
ज्ञात्वा सोपि दधीचस्य १.३६.३६
ज्ञात्वा स्वनेत्रमुद्धृत्य १.९८.१६२
ज्ञानं गुरोहि संपर्का. १.८६.११५
ज्ञानं च मोक्षदं दिव्यं २.५५.७
ज्ञानं च हीयते तस्मात् १.८५.२१३
ज्ञानं धर्मोद्भवं साक्षा. १.८६.१४४
ज्ञानं यथा तथा ध्यानं १.८६.११९
ज्ञानं विचारितं लब्ध्वा १.७६.५५
ज्ञानं विचारतो लब्ध्वा १.७६.३५
ज्ञानतत्त्वं प्रयत्नेन २.९.५२
ज्ञानेमेवाभ्यसेत्तस्मा. १.८६.१०४
ज्ञानयोगं समासाद्य १.७७.१६
ज्ञानयोगेश्वरैः सिद्धै. २.१.४४
ज्ञानवैराग्ययुक्तस्य १.८६.१४५
ज्ञानस्कंधो महाज्ञानी १.९८.९४
ज्ञानस्यैवेह माहात्म्यं १.८६.१५५
ज्ञानात्परतरं नास्ति १.८६.११७
ज्ञानादीनि च रुपाणि १.७०.२२
ज्ञानाय ज्ञानगम्याय १.१८.२९
ज्ञानिनः सर्वपापानि १.८६.११८
ज्ञानिनां सूक्ष्ममलं १.७५.२२
ज्ञानेन ज्ञेयमालोक्य १.७७.९८
ज्ञानेन निर्दहेत्पापं १.८.६
ज्ञानेन निर्वृतिः सिद्धा २.२८.१०
ज्ञानेनैव भवेन्मुक्तिः १.७५.५
ज्ञेयं च तत्त्वविद्भिर्वै २.१३.२१

ज्य

ज्यामघस्य मया प्रोक्ता १.६८.५०
ज्यामघस्याभवद्भार्या १.६८.३७
ज्येष्ठः पुत्रशतस्यासीद् १.६५.३२
ज्येष्ठः सर्वेश्वरः सौम्यो १.८२.९३
ज्येष्ठस्तु यतिर्मोक्षार्थी १.६६.६३
ज्येष्ठा तेन समाख्याता २.६.६
ज्येष्ठान्येपि च ते सर्वे १.८९.३५
ज्येष्ठाय चैव श्रेष्ठाय १.१६.१५
ज्येष्ठाय रुद्ररूपाय १.७२.२७
ज्येष्ठा वरिष्ठा वरदा १.८२.१०४
ज्येष्ठा ह्यपर्णा ह्यनुजा १.१०१.६
ज्येष्ठे मासि महादेवं १.८४.३५
ज्येष्ठे मासे च देवेशं १.८३.३१
ज्येष्ठो नाभिरिति ख्यात. १.४७.४
ज्योतिरग्निस्तथा सायं १.२६.३६
ज्योतिरुत्पद्यते वायो. १.७०.३३
ज्योतिर्गणप्रचारं वै १.५४.१
ज्योतिर्मयो निराकारो १.९८.१३३
ज्योतिश्चापि विकुर्वाणं १.७०.३४
ज्योतिश्चाहं तमश्चाहं २.१७.१९
ज्योतिषं चापरा विद्या १.८६.५३
ज्योतिषां गतियोगेन १.५७.२६
ज्योतिषामयनं सिद्धिः १.६५.८१
ज्योतिष्मान् द्युतिमान १.४६.१८
ज्योत्स्ना रात्र्यहनी संध्या १.७०.२२१

ज्व

ज्वलितः स नृसिंहाग्निः १.९६.१३
ज्वालाकेशो द्वादशभिः १.१०३.१५
ज्वाला माला करालं च २.६.२४
ज्वालामालासहस्राढ्यं १.१७.३४

झ

झर्झरैः शंखपटहै. १.५१.१७

ट

टादिपादाय रुद्राय १.१०.४.१७

त

तं जित्वा सर्वमीशानं १.९७.८
तं ज्ञात्वा होमयेद्भक्त्या २.२५.१०८
तंडुलानां तदर्धं स्या. २.२७.३७
तंडुलैश्च तिलैर्वापि २.२७.३५
तं तुष्टुवुः सुरश्रेष्ठा १.९५.२१
तंत्रीं च घंटां विपुलं २.२६.२०
तं दृष्ट्वा ध्यानसंयुक्तो १.१३.४
तं दृष्ट्वा नंदिनं सर्वे १.८०.४५
तं दृष्ट्वा परमेशानं १.१०७.२९
तं दृष्ट्वा पुरुषं श्रीमान् १.११.४
तं दृष्ट्वा बालमीशानं १.१०६.२२
तं दृष्ट्वा शैलजा प्राह १.९२.११९
तं दृष्ट्वा संस्थितं देव. १.९९.११
तं देवदेवं सुरसिद्धसंघा १.७२.५१
तं देवमीशं त्रिपुरं १.७२.७१
तं पुष्टिवर्धनं देवं २.५४.२७
तं प्रणम्य महात्मानं २.३.८९
तं प्रभुं प्रीतमनसं २.१९.१
तं प्राह च महादेवं १.३०.११
तं विष्णुलोकं परमं १.५७.३२
तं शशांकं पुनर्द्रष्टुं १.९२.११६
तं सर्वदेवाः सुरलोकनाथं १.७२.५५
तं सिद्धगंधर्वसुरेंद्रवीराः १.७२.५८
तक्षकश्च तथा नाग १.५५.२८
तच्चांडालसमं ज्ञेयं १.८५.१५५
तच्छारीरसमुत्पन्नैः १.७०.१९६
तच्छास्त्रमुपदिश्यैव १.७१.७७
तच्छृणुष्व मुनिश्रेष्ठ २.३.५८
तच्छ्रुत्वा कौशिकः प्राह २.१.२५
तच्छ्रुत्वा भगवान् विष्णु. २.५.७८
तच्छ्रुत्वा मंत्रमाहात्म्य. १.८५.२५
तटनी रत्नपूर्णास्ते १.१०७.१२
तडागैर्दीर्घिकाभिश्च १.८०.२९
ततः कपर्दी नंदीशो १.७१.१४२
ततः कार्यविरोधाद्धि १.८९.७८
ततः कालेन महता २.३.९०
ततः कालेन संप्राप्य २.३.४७
ततः कालेन सा देवी २.५.१९
ततः कृतयुगे तस्मिन् १.३९.१०
ततः कोलाहलमभू. २.१.४१
ततः क्षणत् प्रविश्यैव १.१००.११
ततः पंचदशे प्राप्ते १.२४.६७

ततः पंचदशे भागे १.५६.१४
ततः परममेयात्मा १.२०.४९
ततः पाशुपताः सिद्धा १.९२.११०
ततः पुनरपि ब्रह्मा १.९२.७७
ततः पुनरभूत्तासां १.३९.४२
ततः पृथुर्मुनिश्रेष्ठो १.६५.३३
ततः प्रक्षालयेत् पादं १.२६.३९
ततः प्रणम्य तं मायी १.७१.७९
ततः प्रणम्य देवेशं १.४२.८
ततः प्रणम्य देवेशं १.३७.४
ततः प्रणम्य देवेशं १.७१.६१
ततः प्रणम्य देवेशं १.७२.१७०
ततः प्रणम्य मुदितो २.५.४५
ततः प्रणम्य शिरसा १.६४.२४
ततः प्रत्यागतप्राणः १.४१.५३
ततः प्रभूति देवेशे १.७०.३२३
ततः प्रमुदिता विप्राः १.३३.१४
ततः प्रसीदताद् भवान् १.१०५.६
ततः प्रहस्य गोविन्दः २.५.६७
ततः प्रहृष्टमनसा १.१९.५
ततः प्रीतो गणध्यक्षः १.७१.१६१
ततः शक्रस्य वचनं १.१०७.३७
ततः षष्टिसहस्राणि १.६६.१८
ततः षोडशधा चैव १.८८.४
ततः षोडशसाहस्रं १:४८.६
ततः संचिंत्य भगवान् १.७१.४६
ततः संत्रस्तसर्वांगो २.५.१३८
ततः संप्रेक्ष्य मदनं १.१०१.४०
ततः सदाशिवः स्वयं १.३०.१९
ततः स नंदी सहषण्मुखेन १.७१.१३४
ततः सन्निहितो विप्र. १.८९.८७
ततः स परमं ज्ञान. १.६२.३२
ततः सप्तदशे चैव १.२४.७६
ततः सब्रह्मका देवाः १.९४.५
ततः स भगवाञ्शर्वः १.४३.५३
ततः स भगवान् देवः १.२२.३
ततः समस्तसंपन्नो २.३.६८
ततः समेत्य तौ देवौ १.३७.३८
ततः स विदधे बुद्धि. १.७०.२६२
ततः सा कन्यका भूयः २.५.११४
ततः सासूत तनयं १.६४.४६
ततः सूर्ये पुनश्चान्या १.५५.५२
ततः सृष्टिं विशेषेण १.६३.६
ततः सृष्टिरभूत्तस्मात् १.४१.६
ततः स्फटिकसंकाशं १.२७.४९
तत एव प्रवृत्ते तु १.१०३.३७
तत एवं प्रसन्ने तु १.१०२.५४
ततश्च प्रतिसंध्यात्मा १.२०.८२
ततश्चाक्षरलक्षं च २.५१.४
ततश्चोंकारमुच्चार्य १.७३.१४
ततश्चोर्ध्वं चरेदेवं १.२९.७८
ततस्तं चासृजद् ब्रह्मा १.३७.३५
ततस्तत्परमं ब्रह्मा १.८८.७३
ततस्तत्र विभुर्दृष्ट्वा १.९८.१६३
ततस्तदा निशम्य वै १.१०५.७
ततस्तदा महेश्वरे १.७२.१७८
ततस्तमाह भगवान् १.६.१८
ततस्तस्मिन् गते कल्पे १.१४.१
ततस्तस्मिन् गते कल्पे १.१५.१
ततस्तस्य महादेवो १.१३.१५
ततस्तस्य मुनेः श्रुत्वा १.३६.४६
ततस्तस्य वसिष्ठस्य १.६४.७४
ततस्तां ध्यानयोगेन १.१३.१२
ततस्तां युंजत स्तस्य १.७०.२०३
ततस्तां पर्यगृह्णंत १.३९.४३
ततस्तान्स मुनीन्प्रीतः १.३३.१९
ततस्तु गर्भसंयुक्तः १.८८.५५
ततस्तुतोष भगवा. १.३३.१
ततस्तुतोष भगवान् १.८५.१९
ततस्तु नष्टास्ते सर्वे १.७१.६२
ततस्तु युंजतस्तस्य १.७०.१९८
ततस्तुष्टो महादेवो १.६४.१०६
ततस्तेभ्योऽश्रुविंदुभ्यो २.२२.१९
ततस्ते मुनयः सर्वे १.३३.२०
ततस्तेषां प्रसादार्थं १.३१.२७
ततस्तेषु विकीर्णेषु १.७०.१३६
ततस्तेष्वपि नष्टेषु १.६३.११
ततस्ते समस्ताः सुरेंद्राः १.९३.८
ततस्ते सहिता दैत्याः १.७१.१४
ततस्तैर्गतैः सैष देवो नसिंहः १.९५.२०
ततस्त्रिंशत्तमः कल्पो १:१२.१
ततस्त्रैलोक्यसंप्लावो २.३.७३
ततस्त्वदृष्टमाकारं १.९२.११५
ताप च महाघोरं २.३.५
ततो गंधर्वसंघाश्च २.३.७०
ततो गणाधिपाः सर्वे १.४४.३८
ततोऽतिशयमापन्न. २.३.१०४
ततोथ नारीगजवाजिसंकुलं १.८०.१२
ततो दीर्घेण कालेन १.२२.१८
ततो दुःस्वप्नशमनं १.९६.१२०
ततो देवः प्रसन्नात्मा १.३१.४५
ततो देवगणाः सर्वे १.७२.१०४
ततो देवाः सगंधर्वाः १.६२.३९
ततो देवा निरातंकाः १.९६.११६
ततो देवाश्च सेंद्राश्च १.४४.३१
ततो देवसुरपितॄन् १.७०.१९७
ततो द्वादशवर्षांते १.८०.५८
ततो द्वाराणि सर्वाणि १.२०.३०
ततो द्वितीयाप्रभृति १.५६.८
ततोधिवासयेत्तोयं २.४७.१९
ततो ध्यानगतस्तत्र १.१३.५
ततो नादः समभवत् २.५.११७
ततो नारायणश्चित्य २.५.१४२
ततो नारायणो देव. २.२.१
ततो निशम्य कुपित. १.३०.१४
ततो निशम्य भगवान् १.६४.१८
ततो निशम्य वचनं १.१०७.३४
ततो निहत्य तं दैत्यं १.९५.१७
ततो बहुविधं प्रोक्तं १.२८.३
ततो मदतरं नाभ्यां १.५४.२६
ततो मत्परमं भावं १.९६.१४
ततो मनुष्याधिपति १.६३.४४
ततो महात्मा भगवान् १.७०.१२४
ततो महालयात्तस्मात् १.९२.१०२
ततो यज्ञः स्मृतस्तेन १.७१.४२
ततो राजा द्विजश्रेष्ठं २.३.३५
ततो राजा प्रणम्यासौ २.५.१११

ततो राजा सुसंक्रुद्धः २.१.३४
ततो रैवतके कृष्णं २.३.९४
ततोर्वाक्स्रोतसां सर्गः १.७०.१६५
ततो वर्षसहस्रं तु १.१४.११
ततो वर्षसहस्रांते १.१७.६७
ततो वर्षसहस्रात्तु १.२०.४५
ततो वाणी समुद्भूता २.७.२५
ततो विलोक्य भगवान् २.१.५०
ततो विवेश भगवा. १.३०.२७
ततो विष्णुस्ततः शक्रो १.४४.३५
ततो विश्वजिदंतैश्च १.७७.९६
ततो विस्मयनार्थाय १.३६.५८
ततो विस्मयमापन्नः १.२२.२८
ततोश्वांश्चोदयामास १.७२.३३
ततोसृजच्च संकल्पं १.७०.१८४
ततोऽस्माक सुरश्रेष्ठाः १.१०४.५
ततोस्य जघनात्पूर्व. १.७०.१९९
ततोस्य नेत्रजो वह्निः १.१०१.४१
ततोस्य पार्श्वतो दिव्याः १.१३.१६
ततोस्य मातुराहारात् १.८८.५६
ततो हत्वा जरासंधं १.६६.७९
ततो ह्यंतिसूत्रेण स्रुक्. २.२५.८०
ततो ह्यनुज्ञां प्राप्यैवं १.६५.१७०
ततो ह्यन्यां पुनर्ब्रह्मा १.७०.२१२
तत्कथं षोडशविधं २.२७.३
तत्कपालं नखं क्षेत्रे २.५०.४३
तत्कर्मणा विनाप्येष १.९०.३
तत्कृत्वा न च पापीया. १.७२.४४
तत्कौतुकसमाविष्टा २.५.११
तत्क्षयाद्धि भवेन्मुक्ति. १.८६.१०३
तत्तद्रसान्वितं तस्य १.९.३४
तत्तद्गुणवते देयं १.१०.२१
तत्तद्वर्णैस्तथा चूर्णैः १.७७.८७
तत्तद्विद्धि चतुर्वक्त्र १.१७. २८
तत्तस्य भवति प्राप्यं १.८८.१७
तत्त्रयं शांकरं रूपं २.१५.२६
तत्पद्मकर्णिकामध्ये १.४१.२२
तत्पुण्यं कोटिगुणितं १.८२.११८
तत्पुरुषाय विद्महे २.२७.२४५
तत्पुरुषाय विद्महे २.४८.५
तत्पुरुषाय विद्महे २.४८.७
तत्पुरुषाय विद्महे २.४८.८
तत्पूर्वाभिमुखं वश्यं १.८५.८
तत्प्रमाणेन कुंडस्य २.२२.७०
तत्फलं कोटिगुणितं १.७६.२६
तत्फलं कोटिगुणितं १.७८.१०
तत्फलं लभते दत्त्वा २.२२.२८
तत्फलं समवाप्नोति १.९२.१८३
तत्यजुश्च महादेवं १.७१.८१
तत्त्वं तु विदितं तेन २.२०.४०
तत्त्वगतमात्मानं २.२४.४
तत्त्वमाद्यं भवानेव १.३६.६
तत्त्वशुद्धिः षष्ठेन २.२४.६
तत्त्वानामग्रजो यस्मा १.७०.१४
तत्र कालं जरिष्यामि १.२४.१०९
तत्र चैषा तु या मात्रा १.९१.६३
तत्र जाम्बूनदं नाम १.५२.४३
तत्र तत्प्रतिकृतं तदा १.९५.१४
तत्र तत्र चतुर्वक्त्रा १.३.३४
तत्र तत्र विभोः शिष्या १.७.९
तत्र तत्पुरुषत्वेन १.२३.१६
तत्र ताभ्यां समासाद्य २.३.८८
तत्र ते मुनयः सर्वे १.११.९
तत्र ते स्तंभितास्तेन १.१०२.५२
तत्र पित्रा सुशैलेन १.९२.१६५
तत्र प्रशेमुः सर्वत्र १.६२.२८
तत्र भुक्त्वा महाभोगान् १.७६. १६
तत्र भुक्त्वा महाभोगान् १.७७.१०३
तत्र यत्कृतवान् विष्णु. २.१.८२
तत्र शिष्याः शिखायुक्ता १.२४.१४
तत्र श्रुतिसमूहानां १.२४.१४०
तत्र सब्रह्मका देवा १.१०६.२७
तत्र साक्षाद्वृषांकस्तु. १.५३.१०
तत्रापि च महासत्त्व १.२३.१५
तत्रापि जगृहुः सर्वे १.३९.४८
तत्रापि तीर्थं तीर्थज्ञे १.९२.१६१
तत्रापि दह्यं गगन. २.१८.३७
तत्रापि देवदेवस्य १.५१.२१
तत्रापि मम ते पुत्राः १.२४.५०
तत्रापि मम ते पुत्राः १.२४.६१
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.५७
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.६५
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.७०
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.७४
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.११६
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.११९
तत्रापि मम ते पुत्रा १.२४.१३१
तत्रापि मम ते शिष्या १.२४.११०
तत्रापि मम ते शिष्या १.२४.११३
तत्रापि सगणः साम्बः १.५१.२८
तत्रायांतं महात्मानं २.६.१४
तत्रावाह्य महादेवं १.७७.७१
तत्राष्टगुणमैश्वर्य १.८८.८
तत्रेंद्रपद्मोद्भवविष्णु. १.९३.१०
तत्रैनं गायमानं च २.१.१३
तत्रैव ददृशुर्देवा १.८०.३६
तत्रैव पादुके दिव्ये १.९२.१५४
तत्समा ह्युरुदेहत्वा. १.७०.१३१
तत्सर्वं ते प्रदास्यामि २.५.३८
तत्सर्वं दहते भस्म १.३४.१७
तत्सर्वं श्रुतवान्व्यासः २.९.८
तत्सर्वमहमेवेति १.८६.७३
तथांतः संस्थितं देवं १.८८.७९
तथाकनकणीतां स १.५.४२
तथा कनकसंयुक्ता २.२७.२३६
तथा किंनरगंधर्वा. १.६३.४०
तथा कुमुदखंडैश्च १.५१.२४
तथा कृष्णमृगाणां च ५०.४१
तथा गुग्गुलुधूपं च १.८१.१७
तथा गोमिथुनं च १.८३.१८
तथाग्निपूजां वै कुर्या. २.४९.३
तथा चान्येषु भवति १.४०.९०
तथा जांबवती चैव १.६९.७८
तथा तपत्यसौ सूर्य. १.५५.७१
तथान्याः सर्वलोकेषु १.८२.७२
तथान्यानि च पापानि १.१५.३०
तथान्या बहवः सृष्टा. १.४१.४७

तथान्ये च ततोऽनंतो २.१८.१७
तथान्येषां च देवानां २.४६.६
तथान्यैर्मणिमुख्यैश्च १.५१.२
तथा पापं विलीयेत १.८५.१७२
तथापि तस्मै दातव्यं १.०३.४३
तथापि देवा धर्मिष्ठाः १.७२.१०७
तथापिं न च कर्तव्यं १.९०.१०
तथापि भक्ताः परमेश्वरस्य १.७७.४
तथापि भर्तृरहिता १.६४.५
तथाप्ययुतमात्रेण १.१५.१
तथा भूतमहं दृष्ट्वा १.१७.१४
तथा मरकतैश्चैव १.७७.६९
तथा वर्षसहस्रेषु १.७१.१६
तथा शिवतरायेति २.८.३
तथाष्टचत्वारिंशच्च १.९.२८
तथाष्टचत्वारिंशच्च १.८६.३०
तथा सोमस्य सूर्यस्य २.५४.२०
तथा सौराणि सूक्तानि १.२६.७
तथा ह्याचमनीयार्थं १.२७.१०
तथेंद्रपद्मोद्भवविष्णु. १.७२.७३
तथेति चाब्रुवन्देवाः १.७२.४२
तथेत्युक्त्वा च सा देवी २.५.१२१
तथेत्युक्त्वा स गोविंदः २.५.७४
तथेत्युक्त्वा स सत्यभामां २.३.९९
तथोत्युवाच तस्या वै १.६९.२४
तथैकदंष्ट्राग्रमुखाग्र. १.९४.१४
तथैनां पुत्रकामस्य १.१३.११
तथैव केसरीत्युक्तो १.५३.१९
तथैव गुरुसंपर्कात् १.८५.१७१
तथैव जातं नयनं ललाटे १.१०६.५७
तथैव भगवान् विष्णुः १.१७.४६
तथैव यज्ञपात्राणां १.८९.६२
तथैव वाह्यतः सूर्यो १.५५.१५
तथैवाभिनिवेशेन २.९.३८
तथोंकारमयो योगी १.९१.४५
तथोंकारमयो योगी १.९१.४९
तदंगणदहं शंभो. १.४२.१५
तदग्रहणमेवेह २.१८.२८
तदचक्षुस्तदश्रोत्रं १.८६.५४
तदर्चनं परं प्राहु. २.१३.३६
तदर्चनादि सकलं २.३.३४
तदर्धं कंठनालं स्यात् २.२५२८
तदर्धं केवले पापे १.१५.१७
तदर्धं स्विष्टकृत्प्रोक्तं २.२५.५३
तदर्धांशं तु दातव्य. २.३६.९
तदर्धाधेन वा कुर्यात् २.४२.३
तदर्धार्धेन वा धीमां. २.४१.२
तदर्धेन पुरस्तात्तु २.२२.६९
तदर्धेनापि वा सम्यक् २.३५.३
तदा ऋतंजयो नाम १.२४.८६
तदाकाशं च विज्ञानं १.८६.१३३
तदा चतुर्युगावस्थे १.२४.१०
तदा चलत्वादचलाः १.७०.१३५
तदा चापि भविष्यामि १.२४.२८
तदा जगौ हरेस्तस्य २.३.१०८
तदा तं कल्पमाहुर्वै १.३७.२०
तदा तदावतीर्णस्त्वं १.९६.२२
तदा तयोर्विनिर्गतः १.१०५.११
तदा तस्य सुतो यश्च १.१०१.४५
तदा तस्य स्नुषा प्राह १.६४.१०
तदा तस्यैव तु गतं १.६९.८४
तदा तिष्ठंति सायुज्यं १.८७.२५
तदा तु सर्वभूतानां १.३९.५४
तदा तेजांसि सर्वाणि १.९६.६४
तदाथ गर्वभिन्नस्य १.९५.१५
तदा देवीं भवं दृष्ट्वा १.४४.४५
तदा द्रक्ष्यसि मां चैवं १.१९.१४
तदानीं मां समासाद्य २.३.८०
तदा पार्श्वे स्थितो नंदी १.२५.३
तदाप्यहं त्वया ज्ञातः १.२३.२३
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.२१
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.२४
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.३२
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.४४
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.५६
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.६०
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.६८
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.७३
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.७७
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.१०४
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.११२
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.११८
तदाप्यहं भविष्यामि १.२४.१२७
तदाप्रभृति तं कृष्णं १.१०८.१०
तदाप्रभृति लोकेषु १.१९.१५
तदाप्रभृति लोकेषु १.३४.९
तदाप्रभृति लोकेऽस्मिन् १.१०५.२९
तदा प्रभृति वै मोक्ष १.८७.११
तदा प्रभृति शक्राद्याः १.७३.२९
तदा प्राह महादेवः १.९८.१६९
तदा मनसि संजातं १.९.११
तदामरपतिः श्रीमान् १.१०१.१७
तदा मुक्तिः क्षणादेव १.८७.१५
तदा रुद्रैर्जगन्नाथ. १.४१.६०
तदा वृषध्वजो देवः १.६४.९४
तदा षष्ठेन चांशेन १.२४.१२६
तदाष्टधा महादेवः १.४१.३५
तदा समभवत्तव १.१७.४९
तदा सस्मार वै यज्ञं १.७१.४१
तदास्य वक्त्रान्निष्क्रम्य १.२०.२४
तदा स्वयं वृत्रिपुः १.५३.५७
तदाह पौत्रं धर्मज्ञो १.६४.१०८
तदा हरं प्रणम्याशु १.६४.९७
तदा ह्यदृश्यं गत एव यक्ष. १.५३.५८
तदा ह्यहल्योपपतिं १.७२.५९
तदेन सेतुमात्मान. १.८८.७८
तदेव तीर्थमभवत् १.३६.७७
तदेव लभ्यं नान्यत्तु १.१०७.१६
तद् दृष्ट्वा महदाश्चर्यं १.२०.३७
तद्बाह्ये च विनिद्रं तु २.२५.३४
तद्भाविताज्ञः प्रपद्यन्ते १.७०.२५३
तद्रोमवर्षसंख्यानि २.३८.९
तद्वक्त्रशेषमात्रांतं १.९६.९८
तद्वज्रं गोपयेन्नित्यं २.५१.५
तद्वत्सहस्रकिरणे १.६०.१८
तद्वदाचारहीनानां १.८५.१३०
तद्वदाचार्यसंगेन १.८५.१७०

तद्वाक्याद्भयनिर्मुक्तो २.६.३१
तत्रादश्रवणात्रेदु. १.९३.१३
तन्मध्ये सुरभिं स्थाप्य २.३५.८
तन्महेशाय विद्महे २.२७.२६५
तन्मात्राणां द्वितीयस्तु १.७०.१६३
तन्मात्राद्भुतसर्गश्च १.३.२०
तन्माहात्म्यात्तदा लोकान् १.८५.२६
तन्मूले स्थापेल्लिंगं २.३३.७
तप उग्रं समास्थाय १.७१.१०
तपतस्तस्य तपसा १.३७.३
तपतस्तस्य तपसा १.४२.६
तपत्येष द्विजश्रेष्ठा. १.६०.१५
तपसा च महादेव्याः १.१०१.७
तपसा च महादेव्याः १.१०२.१
तपसा च विनीताय २.२७.५
तपसा तस्य संतुष्टो १.६९.७७
तपसा तोषितः पूर्वं १.५३.११
तपसा त्वेकवर्षान्ते १.१०८.९
तपसा प्राप्य सर्वज्ञं १.७१.९६
तपसाराध्य देवेशं १.६२.३७
तपसा विद्यया वापि १.१०.४०
तपस्तेपे तया सार्धं. १.१०१.४
तपस्युपरमश्चैव १.८.१०
तपांसि तेषां सर्वेषां १.२९.२४
तमः प्रच्छाद्य रजसा १.८.९०
तमपूज्य जगत्सर्वं १.७१.५४
तमभ्ययुर्महात्मानं १.६२.२४
तमश्च व्यनुदत्पश्चा. १.७०.२६४
तमसा कालरुद्राख्यं १.१.२२
तमसा कालरुद्राख्यं १.६.३०
तमसा कालरुद्राख्यं २.५.८
तमसोऽष्टविद्या भेदा २.९.३४
तमादिपुरुषं भक्त्या १.९५.४
तमालगुल्मैर्निचितं १.९२.१३
तमाह अहसन् विष्णु. १.६२.३५
तमाह भगवाञ्छक्रः १.१०१.३५
तमाह माता सुशभं १.१०७.१९
तमाह शंकरो देवं १.१०३.५७
तमाहुर्वरदं देवं १.८०.४७
तमिमं मम संदेशा. १.४४.१७
तमुद्दिश्य तदा ब्रह्मा १.२४.१५०
तमृते परमात्मानं २.९.१५
तमेकमाहुर्द्विगुणं १.७५.३७
तमेवमुक्त्वा भगवान् १.२०.१५
तमोंते च तमःपारे १.५३.५०
तमोभिभूते लोकेस्मिन् १.६३.७२
तमोमात्रात्मिका रात्रिः १.७०.२१७
तमो मोहो महामोह. २.९.३०
तमो मोहो महामोहा. १.५.२
तमोविद्यापदच्छत्रं १.८६.१४६
तमोवीर्यमयो राहुः १.६१.४८
तमोहरो महायोगी १.९६.३५
तमो ह्यग्नी रजो ब्रह्मा १.३१.९
तया च पूजयेद्यस्तु १.७४.२१
तया स रमते येन १.१०१.३६
तया सह वनं गत्वा २.६.१२
तयोः परः शिवः शांतः २.१५.८
तयोः श्रुत्वा महादेवं १.७२.१७६
तयोः संपूजनादेव २.४७.९
तयोः समभवद्युद्धं १.१०१.१२
तयोरग्रे हुताशं च १.८४.६८
तयोमध्ये च विजेयं १.४९.१३
तरक्षुश्चारुणिर्धीमां. १.७.१६
तर्क्यातर्क्यशरीराय १.२१.५१
तर्पयेद्विधिना पश्चात् १.२६.१०
तलाः कपोताः कापोताः १.७२.२२
तलानां चैव सर्वेषां १.४५.१४
तलानां चैव सर्वेषा. १.४५.२३
तले च तर्जन्यंगुष्ठं २.२२.१७
तलेषु तेषु सर्वेषु १.४५.२२
तल्ललाटादभूच्छंभोः १.९६.४२
तल्लिंगं पूजितं तेन १.८१.४८
तव देहात्समुत्पन्नं १.३१.४२
तव पुत्रो भविष्यामि १.४२.१२
तव भृत्यैस्तदा तुप्तं २.३.४३
तव रोम्णि सकलामरेश्वरा १.९४.१७
तवांतिकं गमिष्यामि १.६४.२७
तवात्मजं शक्तिसुतं १.६४.३२
तवान्योन्यावताराणि १.९६.३८
तवापराधो नास्त्यत्र १.१७.२५
तवावतारो दैत्यानां १.१०५.१५
तवास्तीति सकृच्चोक्त्वा २.२८.३
तवाहं दक्षिणाद्धस्तात् १.१०२.४४
तस्थुरात्मानमास्थाय १.९२.११२
तस्थुस्तदाग्रतः शंभोः १.८०.५४
तस्थौ श्रिया वृतो मध्ये १.१००.३९
तस्माच्चतुर्युगावस्थं १.२३.३०
तस्माच्च द्विपदाः सर्वे १.२३.४३
तस्माच्च रूपमात्रं तु १.३.२१
तस्माच्च सततं युक्तो १.८८.७६
तस्माच्च सर्वकार्येषु २.१८.६३
तस्माच्छतगुणं पुण्यं १.७७.४९
तस्माच्छतगुणोपांशुः १.८५.११९
तस्माच्छनैश्चरश्चोर्ध्वं १.५७.३१
तस्माच्छांतभयाच्चैव १.४६.४३
तस्माच्छ्रुतेन संयुक्तो २.३.५७
तस्माज्ज्येद्द्विजो नित्यं १.१५.३२
तस्माज्ज्येद्धि यो नित्यं २.८.३४
तस्मात्तत्त्वविदो ये तु २.२०.३९
तस्मात्तव महाभाग १.३६.२९
तस्मात्तु परिहर्तव्या १.७८.८
तस्मात्तु पशवः सर्वे १.२३.३९
तस्मात्तु भारतं वर्षं १.४७.२४
तस्मात्तु वैष्णवं चापि २.४.२१
तस्मात्तेन निहंतव्या १.९८.१६
तस्मात्ते भोगिनो दैत्या १.७१.७१
तस्मात्त्यागः सदा कार्य. १.८.२६
तस्मात्त्रिः प्रवणं योगी १.९१.७१
तस्मात्त्वं मम मदनारि. १.९७.३५
तस्मात्त्वमपि योगींद्र २.५५.२९
तस्मात्पंचगुण भूमिः १.७०.४७
तस्मात्पंचदशैवैते १.५.३८
तस्मात्परिहरेद्राजा २.२४.३०
तस्मात्पाशुपतैर्योगै. १.९१.६६
तस्मात्प्रकृष्टां भूमिं तु १.५४.१८
तस्मात्संपूजयेद्देव. १.८१.४३
तस्मात्संपूजयेद् भक्त्या २.४.१९

तस्मात्संपूजयेल्लिगं १.७३.७
तस्मात्संपूजयेत् विधिवत् १.१०३.६९
तस्मात्संसिद्धिमन्विच्छन् १.८५.१३२
तस्मात्संसेवनीयं हि १.९२.५२
तस्मात्सदा पूजनीयो १.७३.६
तस्मात्सदाभ्यसेज्ज्ञानं १.८६.१०५
तस्मात्सनत्कुमारेति १.७०.१९५
तस्मात्सनत्कुमारेति १.७०.१७४
तस्मात्समेत्य विप्रेंद्र १.३६.३१
तस्मात्सर्वं परित्यज्य २.४६.२१
तस्मात्सर्वं परित्यज्य २.५४.३३
तस्मात्सर्वगतो मेध्यः १.२३.४६
तस्मात्सर्वप्रकारेण १.४४.४९
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन २.१८.५९
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन १.७७.६
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन १.७८.७
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन १.८६.४८
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन १.८९.१००
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन २.५५.३०
तस्मात्सर्वाणि भूतानि १.७०.७०
तस्मात्सर्वे पूजनीयाः १.२९.५१
तस्मात्सवेदिकं लिंगं २.४७.१०
तस्मात्सुगंधो भगवान् २.५४.२२
तस्मात्सेवा बुधैः प्रोक्ता २.९.२०
तस्मात्सोममयं चैव १.२३.४१
तस्मात्स्थानात् पुनः श्रेष्ठो १.८८.३३
तस्मादंडोद्भवे जज्ञे १.१७.६९
तस्मादनेन दानेन १.१०८.१६
तस्मादप्यभिजित्पुत्र १.६९.३५
तस्मादयोनिजे पुत्रे १.३७.११
तस्मादवध्यतां प्राप्ता १.७१.६९
तस्मादष्टाक्षरान्मंत्रा. २.८.३३
तस्मादहं च देवेश १.२३.५
तस्मादापः पिबन्सूर्यो १.५९.१२
तस्मादायुर्बलं रूपं १.४०.४५
तस्मादुत्तरमार्गस्थो १.५७.२५
तस्मादेकोनपंचाशत् २.२७.१८
तस्मादेतन्मया लब्ध. १.९३.१७
तस्मादेतैर्यथालाभं १.८१.३७
तस्मादेव तमोद्रिक्ता. १.७०.३०
तस्माद् ग्रहार्चना कार्या १.५७.३९
तस्माद्दीर्घेण कालेन १.५४.२१
तस्माद् दृष्टानुश्रविकं १.८६.१३
तस्माद्देवं यजेद्भक्त्या १.८१.४५
तस्माद्देवासुराः सर्वे १.७०.२११
तस्माद्दैत्या न वध्यास्ते १.७१.६७
तस्माद् द्विजाः सर्वमजस्य १.५३.६२
तस्माद्धि मुनयो लब्ध्वा १.४४.४७
तस्माद्ध्यानरतिर्नित्य. १.९१.५७
तस्माद्ध्येयं तथा ध्यानं १.२८.४
तस्माद्धंहति यस्माद्धि २.१८.२१
तस्माद् ब्रह्मा महादेव्या. १.४१.१३
तस्माद् भक्त्योपचारेण २.४७.१३
तस्माद् भविष्यते पुण्यं १.२४.१०१
तस्माद् भस्म महाभागा १.३४.८
तस्माद्योगं प्रशंसति १.९०.५
तस्माद्यो वासुदेवाय १.६२.४२
तस्माद्वंशात्परिभ्रष्टो १.६६.७८
तस्माद्वदस्व सूताद्य १.८६.२
तस्माद्विचारतोवास्ति १.८६.२५
तस्माद्विद्वान् हि विश्वत्व. १.२३.५१
तस्माद्विरागः कर्तव्यो १.८.२८
तस्माद्विश्वेश्वरं देवं १.११.१०
तस्माद्वेदार्थतत्त्वज्ञ. २.२०.२१
तस्माद्वै सर्वकार्याणि १.७८.३
तस्मान्नंदय मां नंदिन् १.४२.३०
तस्मान्न निंद्याः पूज्याश्च १.३४.२७
तस्मान्मृत्युं जयं चैव १.३०.२८
तस्मिंस्तत्परमं ध्यानं १.११.३
तस्मिन्स्थिते महादेवे १.७२.१०२
तस्मिन्कल्पे मुनेः शापा. २.८.१३
तस्मिन्कालेऽथ भगवान् २.१.४९
तस्मिन्काले मुनिः श्रीमान् २.५.५३
तस्मिन् क्षणे समापन्ना २.१.६८
तस्मिन्द्वीपे स्मृतौ तौ तु १.५३.२५
तस्मिन्नंडे इमे लोका १.७०.६५
तस्मिन्नमहाभुजः शर्वः १.४८.२२
तस्मिन्यज्ञे यथाप्राप्तं २.५१.८
तस्मिन्याते द्विजानां तु २.७.२४
तस्मिन्वा यस्त्यजेत्प्राणा. १.७७.३८
तस्मिन्विश्वत्वमापन्नं १.२३.२४
तस्मिंन्वेदाश्च शास्त्राणि १.८५.९
तस्मिन् शक्रस्य विपुलं १.४८.२४
तस्मिन्संचयनं कार्यं २.३०.५
तस्मै कन्यां प्रयच्छामि २.५.६३
तस्मै सनत्कुमाराय २.२०.१४
तस्य कन्या त्विलविला १.६३.५८
तस्य कृष्णस्य तनयाः १.६९.६४
तस्य क्रोधेन दह्यंते १.८५.१७५
तस्य क्रोधोद्भवो योसौ १.७०.२३१
तस्य गोत्रद्वये जाता. १.६३.७७
तस्य चासीद् दृढरथः १.६८.४५
तस्य चिंतयमानस्य १.१४.३
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.१९.१०
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.२३.१
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.२९.४
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.२९.६६
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.३०.१०
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.३५.२७
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा १.३६.५१
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा २.१.५
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा १.३७.१२
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा १.३९.४
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा १.४३.५१
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा १.९७.१९
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा १.९८.७
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा १.१०३.२
तस्य तां परमां मूर्ति. १.९२.११४
तस्य तीव्राभवन्मूर्च्छा १.२२.२२
तस्य दक्षिणपार्श्वे तु १.४८.३१
तस्य देवस्य रुद्रस्य १.४५.६
तस्य द्वादशधा भिन्नं २.१२.७
तस्य पादास्तु चत्वार. १.४९.२६
तस्य पुण्यं मया वक्तुं १.७४.२९
तस्य पुत्रा बभूवुस्ते १.४७.३
तस्य पुत्रास्त्रयश्चापि १.१०१.९
तस्य पुत्रोभवद्विप्रो १.६८.५

तस्य पुत्रोभवद्वीरो १.६६.४०
तस्य पुत्रो महादेवो १.४१.१०
तस्य पुत्राः सप्त भवन्. १.६६.५७
तस्य पूर्वदलं साक्षा. १.२७.२५
तस्य पूर्वमुखं प्रीतं २.१९.९
तस्य प्रसादाद्दैत्येंद्रो २.५०.४
तस्य प्रसादाद्धर्मश्च १.९.६६
तस्य बभ्रुरिति ख्यातः १.६९.५
तस्य भार्याद्वयमभूत् १.६२.४
तस्य मध्येतिरात्रस्य १.६९.३६
तस्य मूर्ध्नि शिवं कुर्यात् १.८४.५६
तस्य रक्तेन रौद्रेण १.९७.४०
तस्य रश्मिसहस्रं त. १.५९.२४
तस्य रामस्तदा त्वासी. १.६८.१०
तस्य रूपं प्रवक्ष्यामि १.८८.१५
तस्य रूपं समाश्रित्य १.२७.४
तस्य रोगा न बाधंते १.८२.११६
तस्य वंशास्तु पंचैते १.६७.२६
तस्य शृंगं महेशस्य १.९४.२
तस्य सत्यव्रतो नाम १.६६.३
तस्य सत्राजितः सूर्यः १.६९.१३
तस्य सर्वं प्रकर्तव्यं २.४५.८७
तस्य सर्वाश्रयं दिव्यं १.४४.१९
तस्य सिद्धिश्च मुक्तिश्च २.२०.४८
तस्य सोमात्मकं रूपं २.१२.१९
तस्यांडस्य शुभं हैमं १.१७.६८
तस्यांशमेकं संपूज्य १.७१.५३
तस्यां सिद्धौप्रणष्टाया. १.३९.२०
तस्यां हरिं च ब्रह्माणं १.४१.१२
तस्याः परेण शैलस्तु १.५३.३२
तस्याः पुत्र स्मृतोऽक्रूरः १.६९.२५
तस्या; स्वास्थ्येन ध्यानं च १.८.४३
तस्याग्रे मध्यतो भूमौ २.३७.२
तस्याग्रे श्वेतवर्णाभः १.११.८
तस्याज्ञया समस्तार्था. २.१०.१४
तस्यापि पुत्रमिथुनं १.६९.३७
तस्यापि शिरसो बालः १.१०२.३७
तस्याप्रमितवीर्यस्य १.२२.२३
तस्याभिध्यायतश्चैव १.७०.१४५
तस्याभिषिक्तस्य तदा १.४३.४५
तस्यावलोकनादेव १.१०८.६
तस्याश्चैवांशजाः सर्वाः १.५.२९
तस्याश्चोत्तरपार्श्वेतु १.५१.२६
तस्यासीत्तुंबुरुसखो १.६९.३४
तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा १.२९.५०
तस्यास्तु दक्षिणे भागे २.३६.४
तस्याहमग्रजः पुत्रो २.५.१४७
तस्यैवं क्रीडमानस्य १.२०.९
तस्यैवं तप्यमानस्य १.४१.२९
तस्यैवं ध्यायमानस्य १.६३.५०
तस्यैवेह च माहात्म्यं २.७.१६
तस्योपरि न्यसेद्दर्भा. २.२५.१४
तस्योपरि महादेवं १.२८.२

ता

तां कन्यां जगृहे रक्षन् १.६९.५१
तां च ज्ञात्वा तथाभूतां १.१०६.१४
तांडवैः सरसैः सर्वा. १.५५.४३
तां शक्रमुख्या बहुशोभमाना. १.५३.५९
तां सिद्धगंधर्वपिशाचयक्ष. १.७२.६
तांस्तथा वादिनः १.४४.१४
तांस्तु संक्षेपतो वक्ष्ये १.४९.४१
तांस्तु संक्षंपतो वक्ष्ये १.५३.७
ताञ्जीवान्मुनिशार्दूलाः २.९.३१
ताडनं कथितं द्वारं २.२१.६२
ताडयंति द्विजेंद्राश्च १.४०.१३
ताडयामास देवेश १.३६.२४
तानि तस्मादनन्यानि २.१६.२८
तानि तेषां तु नामानि १.४६.४४
तानि भाग्यान्यशुद्धानि १.८६.२८
तानि व्यासादुपश्रुत्य १.८३.३
तानि सर्वाण्यशेषाणि १.९२.१३९
तानि स्रोतांसि त्रीण्यस्याः १.४३.३९
तानुवाच महाभागान् १.३१.३
तान् दृष्ट्वा तनयान् वीरान् १.६९.७०
तान्पंच वदनैर्गृह्णन् १.८५.१५
तान्येव प्रतिपद्यन्ते १.७०.२५२
तान्समीक्ष्याथ भगवान् १.९८.५
तान्सर्वान् शीघ्रमाप्नोति १.८२.११५
तान्हित्वा व्रज चान्यत्र २.६.२९
ताभिरेव नरः श्रीमान् १.६७.१६
ताभिर्विमानमारुह्य २.८.३२
तामजां लोहितां शुक्लां १.३.१३
तामाज्ञां संप्रविश्याहं १.८७.१०
तामुवाच सुरश्रेष्ठ. १.९२.१२०
तामेवाजामजोन्यस्तु १.३.१४
तामैच्छत्सोपि भगव. २.५.७०
ताम्रकुंभेन वा विप्रः २.२२.१३
ताम्रजानि यथान्यायं २.२७.४१
ताम्रपत्राणि सौराणि २.२२.३५
ताम्रा च जनयामास १.६३.२९
ताम्राद्यैर्विधिवत्कृत्वा १.८४.३१
तामेशा च प्रकर्त्तव्य. २.२८.३३
ताम्रेण पद्मपत्रेण १.२७.३८
ताम्रेवा पद्मपत्रेण वा १.१५.२२
तारकाक्षोपि दितिज; १.७३.३
तारकाग्रहसोमार्का १.४५.३
तारणश्चरणो धाता १.६५.१४१
ताराग्रहाणां प्रवर. १.६१.४३
ताराग्रहाणां शुक्रस्तु १.६१.५१
तारानक्षत्ररूपाणि १.५७.१७
तारानक्षत्ररूपाणि १.६१.३५
तारो वराञ्छतगुणं १.१०१.१४
तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च १.५५.६१
तालकेतुः षडास्यश्च १.१०३.२८
तावंत्यस्तारकाः कोट्यो १.५७.२१
तावच्छती च वै संध्या १.४.६
तावत्काल महादेव. १.८८.५२
तावद्भिरभितो वीरै. १.९६.६
तावद्वर्षसहस्राणि २.४०.७
तावांश्च विस्तरस्तस्य १.५३.३४
तावागतौ समीक्ष्याथ २.५.८८
तावागतौ समीक्ष्याह २.५.१२०
तावुभावागतौ दृष्ट्वा २.५.५४
तावुभौ प्रणितत्याग्रे २.५.९०
तावुभौ मुनिशार्दूलौ २.५.११९
तावूचतुर्महात्मानौ १.२२.५
ता वै निष्कामचारिण्यो १.३९.१८

तास्तथा प्रत्यापद्यंत १.७०.२८८
तास्त्वभ्यर्च्य यथाशास्त्र. २.८.२

ति

तिलपुष्पं तु कृत्वाथ २.३७.३
तिलमध्ये न्यसेत्पद्मं २.३१.४
तिलानामाढकं मध्ये २.२७.३८
तिलेन रोगनाशश्च २.५२.१४
तिले यथा भवेत्तैलं १.७०.७४
तिलैर्होमः प्रकर्तव्यो २.४९.४
तिष्ठंति शाश्वता धर्मा १.८५.२८
तिष्ये मायामसूयां च १.४०.१
तिस्रोऽवस्था जगत्सृष्टि. २.१६.१९

ती

तीक्ष्णदंष्ट्रं गदाहस्तं १.७६.३१
तीक्ष्णशृंगाय विद्महे २.४८.१०
तीक्ष्णोपायश्च हर्यश्वः १.६५.७९
तीर्णस्तारयते जंतु. १.२४.८४
तीर्थतत्वाय साराय १.१०४.२१

तु

तुंगाग्रैर्नीलपुष्पैः १.९२.२३
तुंबरुर्नारदो हाहा १.१०३.३५
तुंबरोर्न विशिष्टोसि २.३.७७
तुंबरोश्च समं नैव २.३.८१
तुंबरोश्च समानत्वं २.३.२
तुंबवीणो महाकोष १.६५.१२१
तुरीयस्य शिवस्यास्य २.१६.१८
तुरीयातीतममृतं १.१७.५४
तुला ते कथिता ह्येषा २.२९.१
तुलामध्ये वितानेन २.२८.३७
तुलारोहसुवर्ण च २.२८.८५
तुलास्तंभस्य विष्कंभो २.२८.२७
तुल्यमायुः सुखं रूपं १.३९.१६
तुल्यानेवात्मनः सर्वान् १.७०.३०५
तुल्याभिमानिनः सर्वे १.४०.९७
तुल्याभिमानिनश्चैव १.४६.१६
तुष्टाव च पुनः शंभु १.९८.२७
तुष्टाव देवदेवेशं १.१००.४८
तुष्टाव परमेशानं १.९६.७६
तुष्टाव पुनरिष्टाभि. १.१७.९२
तुष्टाव वाग्भिरिष्टाभिः १.२४.१४२
तुष्टाव वाग्भिरिष्टाभिः १.३६.४
तुष्टाव हृदये ब्रह्मा १.७२.१२१
तुष्टिः पुष्टिः क्रिया चैव १.१६.३१
तुष्टुवुर्गणपेशानं १.७१.१५४
तुष्टुवुर्देवदेवेशं १.७१.६३
तुष्टुवुर्देवदेवेशं १.१००.५१
तुष्टोब्रवीन्महादेवः १.४३.१९
तुष्टो रुद्रो जगन्नाथ. १.२९.६
तुष्टोस्मि ते वरं ब्रूहि १.१०७.३२
तुष्टोस्मि वत्स भद्रं ते १.९३.२२
तुष्टोस्मीत्याह देवेभ्यः २.१८.६७

तृ

तृणकाष्ठादिवस्तूनां १.८९.६१
तृतीयं धातुजं लिंग. १.७४.१५
तृतीयरूपमीशस्य २.१५.२३
तृतीयां त्रिगुणां चैव १.९१.४७
तृतीयाय मकाराय १.१८.२
तृतीयावरणे चैव २.२७.३२
तृतीयो द्युतिमान्नाम १.५३.८
तृतीयो नारदो नाम १.५३.३
तृष्णाक्षयसुखस्यैतत् १.६७.२४
तृष्णा रागवती मोहा २.२७.८०

ते

ते गणेशा महासत्त्वाः १.४४.९
ते च प्रकाशबहुला. १.७०.१५४
तेजसा तस्य देवास्ते १.१०२.५५
तेजस्विनी नाम पुरी १.४८.१५
तेजो दशगुणेनैव १.३.३१
तेजो दशगुणेनैव १.७०.५५
तेजोपहारी बलवान् १.६५.७७
तेजोमयो द्युतिधरो १.९८.१३२
तेजोरूपाणि सर्वाणि १.९.६२
तेजोसीत्याज्यमीशानं २.२८.९१
ते देवा मुनयः सर्वे २.२०.५
ते देवाः शक्तिमुसलैः १.९८.३
तेन ग्रहां गृहाण्येव १.९१.९
तेन चात्मानमत्यर्थं २.५.१३६
तेन तान् पूजयित्वाथ २.४३.९
तेन ते कर्मणा यक्षा १.७०.२२७
तेन दैत्येन सा देवी २.५०.७
तेन धारयित्व्या वै १.९०.१८
तेन प्रणीतो रुद्रेण १.७.५५
तेन सृष्टाः क्षुधात्मानो १.७०.२२५
तेनाग्निना तदा लोका १.३२.११
तेनाधीतं यथान्यायं २.८.२१
तेनैवाधिष्ठितं तस्मा. १.८६.१४२
तेनासौ प्राप्तवांल्लोकं २.१.६६
तेनाहं हरिमित्रं वै २.३.५२
ते नित्यं यमविषयेषु १.८८.६४
तेनेह लभते जंतु. १.९२.१४०
तेनैव ऋषिणा विष्णु. १.१७.५८
तेनैव चावृतः सम्य. १.३.१८
तेनैव सृष्टमखिलं १.४६.८
ते परिग्राहिणः सर्वे १.७०.१६१
तेपि तेनैव मार्गेण १.२४.७५
तेपि तेनैव मार्गेण १.२४.४७
तेऽपि तेनैव मार्गेण १.२४.११४
तेपि दारुवनात्तस्मात् १.२९.३७
तेपि लब्ध्वा वरान्विप्रो. १.८५.२०
ते प्रणम्य महादेव. १.३३.२२
तेभ्यः प्रधानदेवानां १.३.६
तेभ्यश्चाहं प्रवक्ष्यामि १.९२.५६
तेभ्योधस्तात्तु चत्वारः १.५७.२०
ते लब्ध्वा मंत्ररत्नं तु १.८५.१८
ते शीर्णाश्चोत्थिताः द्यूर्ध्व १.७०.२२९
तेषां चतुष्टयं बुद्धेः २.१६.८
तेषां तद्वचनं श्रुत्वा १.८६.३
तेषां तद्वचनं श्रुत्वा १.८६.७
तेषां तु दशसाहस्रं १.८५.१८९
तेषां देवावृधो राजा १.६९.४
तेषां धनं गृहं क्षेत्र. २.६.८९
तेषां पंच गणा ह्येते १.६८.१६
तेषां पितामहः प्रीतो १.७१.११
तेषां ब्रह्मात्मकानां वै १.७०.१८३
तेषां भक्तिमहं दृष्ट्वा १.८५.२३
तेषां भावं ततो ज्ञात्वा १.७२.३७
तेषां भावं समालोक्य २.१९.५
तेषां यावच्च यद्यच्च १.७०.५०
तेषां वा किं करोत्येष २.४.२
तेषां विरुद्धं यत्त्याज्यं २.१८.६१
तेषां शतहस्रं तु १.२४.८०
तेषां शृंगेषु हृष्टाश्च १.८०.३८
तेषां श्रेष्ठो महातेजा १.६६.३६

तेषां सृष्टिप्रसिद्ध्यर्थं १.८५.१३
तेषां स्वभावतः सिद्धिः १.४७.१४
तेषां स्वसारः सप्तासन् १.६९.४०
तेषां हिताय रुद्रेण १.४७.१७
तेषामघोरः शांतश्च १.२३.२२
तेषामपि च गायत्रीं २.४८.३३
तेषामपि तथात्राद्यं २.१.१७
तेषामृद्धिश्च शांतिश्च १.८५.२०७
तेषु तेषु पृथक्त्वेन २.२७.३४
तेषु वस्त्रेषु निःक्षिप्य २.३७.८
तेषु शैलेषु दिव्येषु १.४९.५७
तेषु सर्वेषु विधिना २.२७.३९
ते सत्त्वस्य च योगेन १.७०.१४९
ते सर्वे पापनिर्मुक्ता १.११.११
ते सर्वे पापनिर्मुक्ता १.१२.१५
ते सर्वे पापनिर्मुक्तः १.१०८.१५
ते सुखप्रीतिबहुला १.७०.१४८

तै

तैः पाशैर्मोचयत्येकः २.९.१६
तैरियं पृथिवी सर्वा १.६३.४५
तैरेव पठितव्यं च १.९६.१२४
तैलेनोच्चाटनं प्रोक्तं २.५२.१०
तैस्तु सञ्छादितं सर्वं १.६.१३

तो

तोयात्मक महादेवं २.१४.२९
तोषयेत्तं प्रयत्नेन १.८५.८७
तोषितस्तेन विप्रेंद्रः १.६६.६७

तौ

तौ चोर्ध्वरेतसौ दिव्यौ १.३८.१५
तौ तं तुष्टवतुश्चैव १.३७.३९
तौ वराहे तु भूर्लोके १.७०.१७२
तौ वालुकाभिः संपूर्य २.२८.४५

त्य

त्यक्त्वा च मानुषं रूपं १.६९.८६
त्यक्त्वा देवं महादेवं १.७३.४
त्यक्त्वा प्रसादाद्रुद्रस्य २.९.५
त्यक्त्वा मायामिमांतस्मा. १.३६.६६
त्यक्त्वा वज्रं तमेतेन २.५१.१५
त्यजेद्देहं विहायान्नं १.७७.५२
त्यागेन वा किं विधिना १.२९.८८
त्यागेनैवामृतत्त्वं १.८.२७

त्र

त्रयं चैव सुरेंद्राणां १.१००.२२
त्रयश्च त्रिसहस्रं च १.१०२.२२
त्रयस्त्रिंशत्सहस्राणि १.५६.१२
त्रयस्त्रिंशत्सुरानेवं १.१००.२१
त्रयस्त्रिंशत्सुराश्चैव १.७२.८५
त्रयोग्नयस्त्रयो लोका १.६६.३३
त्रयोदशकलायुक्तं १.१७.८७
त्रयोदशसहस्राणि १.५२.२१
त्रयोदशसहस्राणि १.५२.४१
त्रयोदशांगुलायामं २.२५.३७
त्रयोदशार्धमृक्षाणां. १.५४.१९
त्रयोदशे पुनः प्राप्ते १.२४.५९
त्रयोविंशतिभिस्तत्त्वै. १.८२.१९
त्राहि त्राहीति गोविंदं २.५.१४०
त्रिंशत्कोट्यस्तु वर्षाणां १.४.३४
त्रिंशदन्यानि वर्षाणि १.४.२०
त्रिंशद्यानि तु वर्षाणि १.४.१७
त्रिंशन्मुहूर्तैरेवाहु. १.५४.२७
त्रिंशांशकं तु मेदिन्यां १.५४.११
त्रिकोणं च तथाग्नेयं १.८.९३
त्रिगुणाद्रजसोद्रिक्ता. १.७०.२९
त्रिगुणाय त्रिशूलाय १.९६.८६
त्रिगुणाय नमस्तुभ्यं १.१८.२२
त्रिणाभिना तु चक्रेण १.५५.३
त्रितत्त्वस्य त्रिवह्नेश्च १.३५.१९
त्रिधन्वा देवदेवस्य १.६६.१
त्रिधा भिन्नो ह्यहं विष्णो १.१९.१२
त्रिधामा सौभगः शर्वः १.९८.४५
त्रिधा यद्वर्तते लोके १.७०.९५
त्रिधा विभज्य सर्वं च २.२२.४
त्रिधा संवृत्य लोकान्वै १.७२.१४०
त्रिनेत्रं नागपाशेन २.५०.२३
त्रिनेत्रा वरदा देवी १.८२.१०८
त्रिनेत्राश्च महात्मान. १.४४.२
त्रिपादं सप्तसहस्रं च १.७६.१५
त्रिपादहीनस्तिष्ये तु १.३९.१४
त्रिपुंड्रधारिणस्तेषां १.७६.४२
त्रिपुरारेरिमं पुण्यं १.७२.१८०
त्रिभागैकं भवेदग्रं २.२५.३१
त्रिभिर्गुणमयैः पाशैः २.९.२१
त्रिभिश्च धर्षितं शार्ङ्गं १.१००.३१
त्रिभिश्च प्रणवैर्देवाः १.७३.१३
त्रिमूर्तिर्यः समाख्यात. १.६३.९०
त्रियंबकं यजामहे १.३५.१८
त्रियंबकसमो नास्ति २.५४.३२
त्रियंबकेण मंत्रेण २.५४.१
त्रिरात्रमुपवासाश्च १.९०.१९
त्रिलोकधारणे शक्ता १.६३.९४
त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः १.९८.१३४
त्रिविक्रमः महाजिह्वो २.२७.१११
त्रिविधं स्नानमाख्यातं १.२५.८
त्रिशंकोर्दयिता भार्या २.५.६
त्रिशती द्विशती संध्या १.३९.१२
त्रिशिखं च त्रिशूलं च २.५०.१८
त्रिशृंगोजारुचिश्चैव १.४९.२४
त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप् च २.१७.१३
त्रिस्रोतसं नदीं दृष्ट्वा १.४३.४०
त्रेताद्वापरतिष्याणां १.४.८
त्रेतायां वार्षिको धर्मो १.४०.४७
त्रैलोक्यमखिलं भुक्त्वा १.९३.५
त्रैलोहिकं गुह्यकाश्च १.७४.६
त्र्यंबकं यजामहे २.२८.६२
त्र्यंबकं त्रिनेत्राय १.३१.३९
त्र्यंबकं त्र्यक्षराय १.९६.८४
त्र्यक्षं दशभुजं शांतं १.४३.१८
त्र्यक्षो दशभुजश्चैव १.४३.३१

त्व

त्वं च पर्वत मे वाक्यं २.५.६२
त्वं च लोकहितार्थाय १.३२.१४
त्वं भक्तान् सर्वयत्नेन १.१०५.२०
त्वत्क्रोधसंभवो रुद्र. १.३६.७
त्वत्प्रसादात्स्वयं विष्णुः १.३६.८
त्वत्संहारे नियुक्तोस्मि १.९६.४३
त्वदीयं प्रणवं किंचि. १.८५.४४
त्वदीयं प्रणवं विद्धि १.८५.४६
त्वदीयैषा विवाहार्थ १.१०३.४८
त्वदीयो नृपतिः श्रीमा. २.५.६८
त्वमष्टमूर्तिस्त्वमनंतमूर्ति. १.९४.१३
त्वमादिस्त्वमनादिस्त्व. २.५.३४
त्वमेव देवदेवेश १.९८.९
त्वमेव भर्ता हर्ता च १.९८.१०

त्वमेव मोहं कुरुषे २.५.११३
त्वमेव सर्वभूतानां १.९६.२१
त्वमादौ च तथाभूतो २.१८.४
त्वया किं काल नो नाथ. १.३०.१२
त्वया तत्क्षम्यतां वत्स १.४२.३४
त्वया तत्मात्समस्तानि १.६४.११६
त्वया तस्मान्महाभाग १.६४.११७
त्वया दत्तं च नेष्यामि २.५.२९
त्वया धर्माश्च वेदाश्च १.९६.२३
त्वया न विदितं नास्ति २.५०.२
त्वया मे संविदं तत्र २.५.७९
त्वया सृष्टं जगत्सर्वं १.१०२.५
त्वया हिताय जगतां १.९२.१६४
त्वया हि सुमहत्पापं २.९.३९
त्वयि भक्तिः प्रसीदेति १.१०३.५५
त्वयि योगं च सांख्यं च १.१६.२९
त्वयि स्नात्वा नरः कश्चित् १.४३.३६
त्वयैव कथितं सर्वं १.१०७.३९
त्वयैव देवेश विभो कृतश्च १.९४.१६
त्वयोद्धृता देव धराधरेश १.९४.१५
त्वय्येव जीवितं चास्य १.६४.३४
त्वरन् विनिर्गतः परः १.३०.२०
त्वरमाणोथ संगम्य १.३७.२५
त्वरितेनैव रुद्रेण १.२७.४४
त्वष्टा विष्णुः पुलस्त्यश्च १.५५.२६
त्वष्टा विष्णुर्जमदग्नि. १.५५.६३
त्वां गंधपुष्पधूपाद्यै. १.१०५.२५
त्वां प्रसाद्य पुरास्माभि. १.२१.८२
त्वां बोधयितुकामेन १.२०.५१
त्वामनभ्यर्च्य कल्याणं १.१०५.२३
त्विषा तु यक्षरक्षांसि १.६३.४१

द

दंडं षडंगुलं नालं २.२५.३६
दंडिनी मुंडिनी वापि २.६.५२
दंतधावनपूर्वं च २.२२.३०
दंतस्थाने प्रकर्तव्यः २.३५.६
दंतुरा रौद्रभागा च २.२७.१६०
दंतोलूखलिनस्त्वन्ये १.३१.२५
दंदह्यमानेषु चराचरेषु १.५४.३८
दंभोऽदंभो महादंभः १.९८.१२४
दंष्ट्राकरालं तव दिव्यवक्त्रं २.१९.३७
दंष्ट्राकरालं दुर्धर्षं. १.२१.७५
दंष्ट्राकरालमत्युग्रं. २.१९.१०
दंष्ट्राकरालवदना १.४४.३
दंष्ट्राकरालवदनो २.५०.२२
दंष्ट्राग्रकोट्या हत्वैनं १.९४.९
दंष्ट्राणि साधयित्वा तु २.५०.४२
दंष्ट्रिणी रंगिणी चैव २.२७.७६
दक्षः पुत्रसहस्राणि १.६३.४
दक्षमत्रिं वसिष्ठं च १.३८.१३
दक्षमत्रिं वसिष्ठं च १.७०.१८२
दक्षयज्ञे शिरश्छिन्नं १.९६.४९
दक्षस्य च मुनीन्द्रस्य १.१००.४५
दक्षस्य पतनं भूमौ १.२.१९
दक्षस्य विपुलं यज्ञं १.९९.१८
दक्षिणं तु महाभाग २.२५.१०१
दक्षिणप्रक्रमे भानुः १.५४.५
दक्षिणस्यापि शैलस्य १.४९.३०
दक्षिणां च शतं सार्धं २.२८.८३
दक्षिणा च प्रदातव्या २.३७.१६
दक्षिणा च प्रदातव्या २.४३.११
दक्षिणा च प्रदातव्या २.४७.४५
दक्षिणायनमार्गस्थो १.५७.२८
दक्षिणायामथो राजा १.६७.१२
दक्षिणा विधिना कार्या २.३०.९
दक्षिणासहितं यज्ञ. १.५.१९
दक्षिणेन च पंथानं १.३४.२०
दक्षिणे विश्वकर्मा च १.६०.२३
दग्धं क्षणेन सकलं १.९७.२३
दग्धुं तृणं वापि समक्षमस्य १.५३.५६
दग्धुं वै प्रेषितश्चासौ १.१००.८
दग्धुं संप्रेषितश्चाहं १.१००.१३
दग्धुं समर्थो मनसा क्षणेन १.७२.९५
दग्धुं स्वदेहमाग्नेयीं १.१०७.४७
दग्धुमर्हसि शीघ्रं त्वं १.७२.११०
दग्धोग्निना च शूलेन १.९३.१५
दग्ध्वा भित्त्वा च भुक्त्वा च १.७२.६०
दग्ध्वोद्धृतं सर्वमिदं त्वयाद्य १.७२.५२
दत्तोर्णं वेदबाहुं च १.५.४३
दत्तो ह्यत्रिवरो ज्येष्ठो १.६३.७६
दत्त्वा गोमिथुनं चैव १.८३.२९
दत्त्वा गोमिथुनं चैव १.८३.४८
दत्त्वा गोमिथुनं चैव १.८३.५१
दत्त्वा च राजा विप्रेभ्यो २.३.२६
दत्त्वा तस्मै ब्रह्मणे १.७२.१७७
दत्त्वा पंचविधं धूपं १.७९.१८
दत्त्वैनं नयनं चक्रं १.९८.१७८
दत्त्वैनं नंदगोपस्य १.६९.५३
दत्त्वैनं सर्वपापेभ्यो २.३४.५
ददर्श चाग्रे ब्रह्माणं २.१७.५
ददामि दृष्टिं मद्रूप. १.६४.८७
ददावंबापतिः शर्वो १.१०२.५७
ददाह तेजस्तच्छंभोः १.९८.१६८
ददुः पुष्पवर्षं हि सिद्धा १.१०५.१०
ददौ निरीक्षणं क्षणा. १.१०५.२
दद्याद् गोमिथुनं गौरं १.८३.३७
दधाति भूमिराकाश. १.८६.१४१
दधार च महादेव १.९४.२९
दधिभक्षाः पयोभक्षा १.८९.२१
दधीच क्षम्यतां देव १.३६.७०
दधीचिश्च्यावनिश्चोग्रो १.३५.९
दधीचो भगवान् विप्रः १.३६.५९
दध्ना च स्नापयेद्रुद्रं १.७९.१४
दध्ना पुष्टिर्नृपाणां च २.४९.११
दनुः पुत्रशतं लेभे १.६३.२८
दमः शमः सत्यमकल्मषत्वं १.८९.२८
दमस्य तस्य दायाद. १.६३.५७
दयादर्शितपंथानो १.७८.११
दयावतां द्विजश्रेष्ठा १.१०.२
दयिता रोहिणी प्रोक्ता २.१३.१६
दर्दुरैस्तलघातैश्च १.४४.८
दर्पहा दर्पितो दृप्तः १.९८.१४०
दर्भद्वयं गृहीत्वाग्नि. २.२५.८६
दर्भद्वयं गृहीत्वाग्नि. २.२५.८४
दर्भेण गृहीत्वा तेनाग्र. २.२५.८७
दर्भैराच्छादयेच्चैव १.२७.११
दर्शनाद्दिव्यरूपाणां १.९.२०

दर्शयामास च तदा १.९२.१०
दर्शयामास चोद्यानं १.१०३.७९
दत्तं दलाग्रं सुश्चेतं २.२२.४३
दत्तेषु सिद्धयः प्रोक्ताः २.२१.५
दश चैव तथाहानि १.४.१८
दशधाभिप्रजायंते १.९.३
दशधेनु सवस्त्रं च २.२७.२६९
दशनिष्केण कर्त्तव्य. २.४३.१०
दशबाहुस्त्रिशूलांको १.२०.६०
दशभिश्चाकृशैरश्वैः १.५७.२
दशमे द्वापरे व्यासः १.२४.४८
दशयोजनविस्तीर्णं १.१७.४१
दशयोजनसाहस्र. १.४९.२७
दशवर्षसहस्राणि १.४१.२०
दशवर्षसहस्राणि १.५२.१६
दशवर्षसहस्राणि १.५२.३३
दशवर्षसहस्राणि १.५२.३७
दशवर्षसहस्राणि १.६६.३७
दशवर्षसहस्राणि १.१०१.२१
दश वै द्वयधिका मासाः १.४.१४
दशार्हस्य सुतो व्याप्तो १.६८.४३
दशाहं सूतिताशौचं १.८९.८४
दह्यंते प्राणिनस्ते तु १.३२.१३

दा

दांतो दयाकरो दक्षः १.९८.४०
दाक्षव्यूहः समाख्यात. २.२७.१४०
दाक्षायणी महादेवी १.८२.१४
दाक्षायणी सा दक्षोपि १.३७.१५
दातुमप्यैकमनघे २.५५.२३
दातुमध्ययनं सर्वं १.१०.३३
दानमानार्चनैर्नित्यं २.५.१४
दानयज्ञादिकं सर्वं २.३.४१
दानिनां चैव दांतानां १.१०.३
दारवं तालपर्णं वा १.८५.१६३
दाराण्येतानि वै. तस्य १.७०.२८६
दारिद्र्यार्णवामग्नं च १.८९.११०
दारुकेण तदा देवा. १.१०६.३
दारुकोऽसुरसंभूत. १.१०६.२
दारुजं नैर्ऋतिर्भक्त्या १.७४.७
दारुणो भगवान्दारुः १.१०६.७

दि

दिग्वारणानामधिपं १.५८.१२
दिग्विदिक्षु प्रकर्तव्यं २.४३.४
दितिः पुत्रद्वयं लेभे १.६३.२७
दिलीपस्तस्य पुत्रोभूत् १.६६.३२
दिवं गता महात्मानः १.६६.४५
दिवः पृष्ठे यथा चंद्रो १.७१.१५३
दिवाकरात्मनस्तस्य २.१२.११
दिवा वा यदि वा रात्रौ १.९१.३३
दिवा विकृतयः सर्वे. १.४.३
दिवावृतः परश्चापि १.५३.१५
दिवा सृष्टिं विकुरुते १.४.२
दिवा स्वप्नं विशेषेण १.८९.१०५
दिव्यं त्रिशूलमभवत् १.३६.५४
दिव्यं पाशुपतं ज्ञानं १.१०८.८
दिव्यं वर्षसहस्रं तु १.३७.१८
दिव्यं शब्दमयं रूप. १.१७.७३
दिव्यं स्थानं महात्मानः २.७.३३
दिव्यः क्व देवेश भवत्प्रभावो १.७२.१६६
दिव्यः संवत्सरो ह्येष १.४.१९
दिव्यमाल्यैस्तथा शुभ्रैः २.१.७५
दिव्यरूपधरः श्रीमान् २.१.५७
दिव्यवर्षसहस्रं तु १.८५.२२
दिव्यवर्षसहस्रं वै २.३.२०
दिव्यवर्षसहस्रांते १.१६.३८
दिव्यस्त्रीभिः सुसंपूर्णं १.७१.२८
दिव्यस्य भौतिकस्याग्रे १.५९.६
दिव्यां मेरुगुहां पुण्यां १.२४.१२९
दिव्यक्षहृदयज्ञो वै १.६६.२४
दिव्याध्ययनसंपन्नान् २.२८.७२
दिव्यानां पार्थिवानां च १.६१.३
दिव्या हैमवती विष्णो १.९८.१८५
दिव्ये च शाश्वतस्थाने १.८.१०२
दिव्येनैव प्रमाणेन १.४.२४
दिव्यैराभरणैः शुक्लै. २.२७.२६७
दिशः पादा रथस्यास्य १.७२.१६
दिशमासाद्य कालेन २.१.३५
दिशो दश स्मृता देव्यः २.१३.१२
दिष्टपुत्रस्तु नाभाग. १.६६.५३

दी

दीक्षां दीक्षायिकां चैव २.२७.६१
दीनांधकृपणानाथ. २.३९.८
दीपधूपादिनैवेद्यं २.२२.५०
दीपमालां हरेर्नित्यं २.१.१९
दीपमालादिभिर्नित्य. २.१.६५
दीपाद्दीपो यथा चान्यः २.२०.४६
दीप्तां सूक्ष्मां जयां भद्रां २.२८.६९
दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा २.२२.४४
दीप्तास्यैर्दीप्तचरितै. १.५१.१५
दीप्तिः सूर्ये वपुश्चंद्रे १.२१.७६
दीर्घाणि तत्र चत्वारि १.४९.११

दु

दुःखमेव न संदेहो १.८६.३७
दुःखितापि परित्रातुं १.६४.१४
दुःखिता विललापार्ता १.१०७.७
दुःखिता सा तदा प्राह १.१०७.११
दुःखेनाभिप्लुतानां च १.४०.३८
दुदुभिः शतरूपश्च १.२४.१९
दुःसहस्त्वामुवाचेदं २.६.७७
दुःसहो नाम विप्रर्षि. २.६.८
दुकूलाद्येन वस्त्रेण २.२१.४०
दुदोह गां प्रयत्नेन १.३९.४५
द्रुद्रुवुस्ते भयाविष्टा १.९८.१६७
दुद्रुवुस्ते भयाविष्टा १.७१.१३९
दुर्गमो दुर्लभे दुर्गः १.९८.५०
दुर्गा उषा शची ज्येष्ठा १.८२.६९
दुर्गारूढमृगाधिपा दुरतिगा १.७२.७०
दुर्गा शिवा प्रतिष्ठा च २.४६.५
दुर्गा हैमं महादेवं १.७४.१०
दुर्धरेण रथांगेन १.९७.३८
दुर्मदेनाविनीतात्मा १.९७.३७
दुश्चरं विचचारेशं १.४१.८
दुष्टांतकाय सर्वाय १.८२.३
दुहितेयं मम विभो २.५.५७

दू

दूरतो व्रज तान्हित्वा २.६.२८
दूरे च शब्दग्रहणं १.९.४३
दूर्वापामार्गगव्येन २.२२.२६
दूर्वाहोमः प्रशस्तोऽयं २.२८.६३

दृ

दृढाश्वस्य प्रमोदस्तु १.६५.३७
दृश्यंते दिवि ताः सर्वाः १.६०.२६
दृश्यते श्रूयते यद्यत् १.७५.२७
दृश्यवस्तु प्रजारूपं २.११.२७
दृश्यादृश्यगिरिर्यावत् १.५३.३३
दृष्टं श्रुतं चानुमितं १.८.१३
दृष्टं श्रुतं स्थितं सर्वं १.७१.१०६
दृष्टः परमया भक्त्या १.१२.७
दृष्टः पूज्यस्तया देव्या १.१२.७
दृष्टोऽसौ वासुदेवेन १.१०८.१
दृष्ट्वा काश्चिद्भवं नार्यो १.२९.१४
दृष्ट्वा च तनयं बाला १.६४.५५
दृष्ट्वा च तस्थुः सुर. १.८०.४३
दृष्ट्वा च तत्कुंठिताग्रं हि १.३६.४८
दृष्ट्वा तमतिविश्वस्तं १.१.१०
दृष्ट्वा तामबलां प्राह १.६४.६१
दृष्ट्वा तु तं मुनिश्रेष्ठं २.८.२८
दृष्ट्वा तुष्टाव वरदं २.२८.२
दृष्ट्वा न जायते मर्त्यः १.९२.१०८
दृष्ट्वा यक्षं लक्षणैर्हीनमीशं १.५३.५५
दृष्ट्वा देवं प्रणम्यैवं १.१०७.२३
दृष्ट्वा देवं यथान्यायं १.७९.११
दृष्ट्वा नारीकुल विप्रा. १.२९.२३
दृष्ट्वा नार्यस्तदा विष्णुं १.८०.१९
दृष्ट्वा परावरं धीराः १.९०.६
दृष्ट्वाप्यवध्यत्वमदीनतां च १.३५.३१
दृष्ट्वा भावं महादेवो १.३७.१९
दृष्ट्वा यमोऽपि वै भक्तं २.४.१८
दृष्ट्वा शंभोः पुरं बाह्यं १.८०.१४
दृष्ट्वा श्रुत्वा भवस्तासां १.२९. २२
दृष्ट्वा संपूजितं यांतं २.१.७६
दृष्ट्वा सुरासुरमहोरग. १.९५.१९
दृष्ट्वा हृदि महादेव. १.४७.१८
दृष्ट्वैनं नियतः सद्यो १.९२.९४
दृष्ट्वैनमपि देवेशं १.९२.९७

दे

देवं च तेन मन्त्रेण २.२६.४
देवं नाम्नां सहस्रेण १.९८.२४
देवं नाम्नां सहस्रेण १.९८.२५
देवं संपूज्य विधिना २.५४.१३
देवः पुराकृतोद्वाहः १.९२.५
देवः प्रदत्तवान् देवाः १.१९.७
देवः शाखो विशाखश्च १.१०१.२९
देवकस्य सुता पत्नी १.६९.४३
देवकस्य सुता राज्ञो १.६९.३९
देवकार्योपयुक्तानां १.८९.५४
देवकार्य्यं करिष्यामि १.७१.६६
देवक्याः स भयात्कंसो १.६९.६१
देवक्षत्रसुतः श्रीमान् १.६८.४७
देवकूटे गिरौ मध्ये १.५१.१
देवगंधर्वसंघैश्च २.५.३२
देवतापरमार्थं च १.६४.११८
देवतापरमार्थं तु १.२.३०
देवतापरमार्थज्ञा १.९६.३०
देवता शिव इत्याह १.८५.४२
देवताश्च सहेंद्रेण १.१०१.१६
देवत्वं वा पितृत्वं वा १.८१.५३
देवदानवगंधर्वै. १.५१.२५
देवदानवयक्षेंद्र. १.२४.९७
देवदारुवनं प्राप्तः १.३१.२८
देवदारुवने शंभोः १.२.३८
देवदुंदुभयो नेदु. १.१०२.६०
देवदुंदुभयो नेदु. १.१०३.५२
देवदेवं समासाद्य १.७२.११५
देवदेवं समासाद्य १.९२.६५
देवदेवं समासाद्य १.७२.७
देवदेव जगन्नाथ २.२७.७
देवद्रोहं गुरुद्रोहं १.८९.४१
देवद्रोहं गुरुद्रोहात् १.८९.४२
देवमिष्ट्वा त्रिसंध्यं च १.६५.७५
देवयज्ञं च मानुष्यं १.२६.१५
देवमानीमुशनसः १.६६.६४
देवराजस्तथा शक्रा १.९२.६१
देवराजाय विद्महे २.४८.१८
देवरातादभूद्राजा १.६८.४६
देवर्षिर्दिवसंकाशः २.३.८३
देववानुपदेवश्च १.६९.२९
देवसेनापतिः श्रीमान् १.८२.३८
देवस्य त्वेति मंत्रेण १.१५.२१
देवाञ्जित्वाथ दैत्येंद्रो १.९४.४
देवादयः पिशाचांताः १.७.५४
देवादिदेवो देवर्षि. १.९८.११८
देवाद्यास्तु इमाः सृष्टा १.१०२.४७
देवानां च ऋषीणां च १.७.७
देवानां च ऋषीणां च १.३१.४
देवानां चैव चैत्याना. १.८६.४५
देवानां चैव सर्वेषां १.७२.१७२
देवानां जातयश्चाष्टौ २.१०.४१
देवानां दानवानां च १.६३.१
देवानां पुष्पतोयेन १.२६.११
देवानामक्षयः कोश. १.२१.८४
देवानामसुरेंद्राणा० १.९८.२
देवानृषींश्च महतो १.७०.१८१
देवान्पात्यसुरान्हंति २.१०.३०
देवान् पितृंश्च पुष्णाति २.१२.२२
देवापिभीतास्तं यांति २.४.१७
देवाश्च दुद्रुवुः सर्वे १.३६.५६
देवाश्च द्रुद्रुवुर्भूयो १.३६.६७
देवाश्च मुनयः सर्वे १.१०३.४६
देवाश्च सर्वे ते देवं १.७१.९९
देवाश्चैव तथा नित्यं १.५५.१६
देवासुरगणाध्यक्षो १.६५.६१
देवासुरगुरुर्देवो १.६५.६०
देवासुरगुरुर्देवो १.९८.११७
देवासुरेश्वरो विष्णु. १.६५.१६२
देवि नंदीश्वरं देव. १.४३.५०
देवीं गायत्रिकां जप्त्वा २.२९.८
देवी तनयमालोक्य १.१०७.६०
देवी मनोरया वेगा० २.२७.१८८
देवीमावह्य च पुन० २.५२.७
देवेंद्रप्रमुखाञ्जित्वा १.१०१.१५
देवैः पीतं क्षये सोम. १.५६.५
देवैः पुरा कृतं दिव्यं २.९.१
देवैः समंतादेतानि १.९२.८४
देवैर्दृशां तैर्यद्रूपं १.९८.१७४
देवैर्भुक्तं तु पूर्वाह्णे १.८३.११
देवैर्वृतो ययौ देवः १.४१.६४
देवैश्च पूज्या राजेंद्र १.३६.४५
देवैश्च लोकाः सर्वे ते १.४४.३२

देवैस्तुल्याः सर्वयज्ञ० १.८९.२७
देवोद्याने वसेत्तत्र १.९२.९
देवो हिरण्मयो मृष्टः २.१२.२६
देव्यः शिवार्चनरता १.८२.७३
देव्या पृष्टो महादेवः १.२५.२
देव्यास्तद्वचनं श्रुत्वा १.९२.३७
देव्यै देवेन मधुरं १.१०.३८
देहमध्ये शिवं देवं १.८.१०९
देहशुद्धिं च कृत्वैव १.२७.५
देहादग्निविनिर्माणं १.९.३६
देहार्णवं च सर्वेषां २.२८.९५
देहे देहे तु देहेशो २.१३.२०

दै

दैत्यानां दानवानां च १.५२.४७
दैत्यानां देवकार्यार्थं १.७१.७२
दैत्यानां विघ्नरूपार्थ. १.१०३.८०
दैत्यानामतुलबलै० १.९७.३३
दैत्याश्च वैष्णवैर्ब्राह्मै० १.९८.१७
दैत्येश्वरैर्महाभागैः १.७१.३३
दैवमित्यपरे विप्राः १.७०.२५५
दैवे कर्मणि पित्र्ये वा १.८८.९३

दो

दोधूयते महापद्मं १.२०.६५
दोषं तामिस्र इत्याहु० २.९.३३
दोषं त्वं पश्य एतत्त्व. १.९६.३९
दोषात्तस्माच्च नश्यंति १.८.५७

दौ

दौरात्म्यं तत्रृपस्यैव २.५.१३३
दौर्बल्यं याति तन्मंत्रं १.८५.१८४
दौर्मनस्यं निरोद्धव्यं १.९.१०

द्य

द्युतिमंतं च राजानं १.४६.२१
द्युतिमानृषिपुत्रस्तु १.६१.१७
द्युतिर्द्युतिमतां कृत्स्नं १.६०.७
द्यूतवादक्रियामूढाः २.६.६७
द्यौर्मूर्धा तु विभोस्तस्य १.७५.७
द्यौर्मूर्धा ते विभो नाभिः १.३६.१६

द्र

द्रक्ष्यंति तद्द्विजा युक्ता १.२३.३७
दक्ष्यंति मां कलौ तस्मिन् १.२४.१०५
द्रविणी द्राविणी चैव २.२७.१६३
द्रव्याणि सप्त होतव्य २.२१.५३
द्रव्याभावात्स्वयं पार्थो १.६९.९२
द्रष्टव्यं चैव श्रोतव्यं १.८६.७५
द्रष्टुमिच्छामि भगवान् १.६४.८०
द्राविडं नगरं वापि १.७७.२३
द्रुमक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं १.९२.१२९
द्रुमचंडेश्वरं नाम १.९२.१३६
द्रुह्यं चानुं च पूरुं च १.६६.६६
द्रोणः कंकश्च महिषः १.५३.६

द्व

द्वंद्वरूपेण पात्राणि २.२५.१३
द्वंद्वैः संपीड्यमानाश्च १.३९.३३
द्वयोर्मासस्य पंचभ्यो १.८३.६
द्वात्रिंशदंगुलायामा. २.२५.४६
द्वात्रिंशद्गुणसंयुक्ता० १.१३.७
द्वात्रिंशद्रेचयेद्धीमान् १.८.१११
द्वादशस्तंभसंयुक्ता २.२८.१९
द्वादशांते भ्रुवोर्मध्ये २.२१.२८
द्वादशाध्यात्मामित्स्येवं १.९१.४३
द्वादशास्य क्रमेणैव १.५५.४४
द्वादशे परिवर्ते तु १.२४.५५
द्वादशैव प्रजास्त्वेता १.३८.१४
द्वादशैव महादेवं १.५५.४१
द्वादशैव स्तवैर्भानु १.५५.४०
द्वादश्यां धर्मतत्त्वज्ञं १.८९.११६
द्वापरश्च कलिश्चैव १.४.२५
द्वापरांते भविष्यामि २.३.७९
द्वापरे चैव कालाग्नि. १.३१.७
द्वापरे तु प्रवर्तते १.३९.५६
द्वापरे द्वापरे व्यासाः १.७.११
द्वापरे प्रथमे ब्रह्मन् १.२४.१२
द्वापरे व्याकुलीभूत्वा १.३९.७०
द्वापरेष्वपि वर्तते १.३९.५३
द्वारस्य पार्श्वे ते तस्थु. १.७१.१३५
द्विगुणः सूर्यविस्तारा. १.५७.११
द्विगुणः सूर्यविस्ताराद्. १.६१.२९
द्विजक्षापच्छलेनैव. १.९५.२६
द्विजश्रेष्ठा भविष्यंति १.२४.२५
द्विजाः कनकनंदाया. १.५१.२७
द्विजाः परिवहश्चेति १.५३.३८
द्विजानां तु हितायैव १.२६.४१
द्विजेभ्यः श्रावयेद्वापि २.५५.४०
द्वितीयावरणं प्रोक्तं २.२७.१३०
द्वितीयावरणे चैव २.२७.६९
द्वितीयावरणे चैव २.२७.९३
द्वितीयावरणे चैव २.२७.१३१
द्वितीयावरणे प्रोक्ताः २.२७.१३५
द्वितीयावरणे रुद्राः २.२७.१०६
द्वितीयेऽहनि विप्रा हि १.८९.१०१
द्विदले षोडशारे वा १.८.९७
द्विदेवकुलसंज्ञं च १.९२.१५८
द्विधा कृत्वा स्वकं देह० १.७०.२६७
द्विधाभ्यस्य च योगींद्रो १.८६.१२१
द्विधासौ रूपमास्थाय १.८७.१४
द्विविधं चैवग्रात्मानं १.२०.७७
द्विशिखस्त्रिशिखश्चै० १.७२.८०
द्विसप्ततिसहस्राणि १.८६.६६
द्वीपस्यानंतरो यस्तु १.५३.२९
द्वीपस्यार्धे परिक्षिप्तः १.५३.२२
द्वै चैव भृगुपुत्राय १.६३.१३
द्वे तनू तव रुद्रस्य १.९६.१०६
द्वे भार्ये सगरस्यापि १.६६.१५
द्वे वाथ परमेरिष्टे १.९१.३०
द्वे विद्ये वेदितव्ये हि १.८६.५१
द्वैपायनो ह्यरण्यां वै १.६३.८५

ध

धंधुमारस्य तनया १.६५.३६
धनंजय इरावांश्च १.५५.५६
धनंजयो महापद्म १.५५.२९
धनं वा तुष्टिपर्यंतं १.७३.२५
धनकस्य तु दायादा० १.६८.८
धनधान्यादिभिः सर्वैः २.५४.१६
धनहीनश्च धर्मात्मा १.६५.४८
धनी प्रजावानायुष्मान् १.६७.२७
धनुश्च मकरश्चैव १.८२.७६
धनुष्मान् पुरुषः कोत्र २.५.१२९
धनेशत्वमवाप्तोसौ २.१.६७
धन्यं यशस्यमायुष्य० १.९६.११८
धन्या धर्मं चरिष्यंति १.४०.४६
धन्वंतरिर्धूमकेतुः १.६५.१२६
धन्विने शूलिने तुभ्यं १.९५.४८
धन्विनो निशितैर्बाणै० १.६८.३१

धयतीत्येष वै धातुः १.७०.२३४
धरणि त्वं महाभागे १.९४.२२
धरणी जनयामास १.६.८
धरणी धारणी चेला १.१०३.७
धराधरात्तं पतितं १.६४.९
धरापृष्टा द्विजाः क्ष्मायां १.५४.५३
धरा प्रतिष्ठिता ह्येवं १.९४.३०
धरायां सोचितनोत्सर्वान् १.३८.९
धर्मं धर्मेण सर्वांश्च १.१७.२२
धर्मं पितॄणामधिपं १.५८.५
धर्मकर्माक्षमः क्षेत्रं १.९८.३९
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं २.२०.७
धर्मकामार्थमुक्त्यर्थं २.२८.१५
धर्मकामार्थमोक्षार्थं १.८३.१४
धर्मनिष्ठाश्च ते सर्वे १.७१.५५
धर्मवृक्षाय धर्माय १.२१.११
धर्मश्चातिवलः सर्पो २.२७.१२८
धर्मश्चैव तथा शप्तो १.२९.३३
धर्मस्य पत्न्यः श्रद्धाद्याः १.५.३४
धर्मस्य वै क्रियायां तु १.५.३७
धर्मस्योपनिपत्सत्यं १.९२.४९
धर्मादयः प्रथमजाः १.७७.१८९
धर्मादयो विदिक्ष्वेते १.२७.२८
धर्मादीनि च रूपाणि १.७०.११
धर्मादैश्वर्यमित्येषा १.७१.६८
धर्माधर्मौ च तेष्वास्तां १.४७.१५
धर्मार्थकामसंयुक्तो १.५२.३१
धर्मो ज्ञानं च वैराग्य० १.६.२५
धर्मो ज्ञानं च वैराग्य० २.२७.२१
धर्मो द्विजोत्तमो भूत्वा १.२९.५३
धर्मोपदेशमखिलं १.१२.१३
धर्मो विरागो दंडोस्य १.७२.१०

धा

धारणात्रयसंदीप्तो २.५५.११
धातकी चैव द्वावेतौ १.४६.२३
धातारं च विधातारं १:५.३९
धाताऽर्यमाऽथ मित्रश्च १.५५.२५
धता विधाता लोकानां २.१५.१९
धातुशून्यबिलक्षेत्र. १.८९.३६
धारणाभ्यासयुक्तानां १.७२.१४९
धावनी क्रोष्टुका मुंडा २.२७.१६९

धि

धिग्युष्मान् प्राप्तनिधनाम् १.२९.४१

धु-धू

धुंधुमूकः पुरासक्तो २.८.१४
धूपदीपसमोपेतं २.४७.१७
धूपाचमनीयदीप. २.२४.३२
धूमवंतो ज्वलंतश्च १.७०.३११

धृ

धृतराष्ट्रः सगंधर्वः १.५५.६४
धृतिमान्मतिमांस्त्र्यक्षः १.६५.१३७
धृतिरेषा मयानिष्ठा १.८७.७
धृत्यास्तु नियमः पुत्र. १.७०.२९४
धृष्टश्च धृष्टकेतुश्च १.६६.४६

धे

धेनुमुद्रां दर्शयित्वा २.२५.८१

धै

धैर्याग्र्यधुर्यो धात्रीशः १.९८.१५८

ध्या

ध्यानं द्वादशकं यावत् १.८.११४
ध्यानं ध्येयं दमः शांति. १.१६.३०
ध्यानं परं कृतयुगे १.३९.७
ध्यानमार्गं समासाद्य १.२४.४६
ध्यानयुक्तो जपाभ्यासे २.५५.९
ध्यायंतस्तत्र मां नित्यं १.९२.५४
ध्यायंति ये महादेवं १.३४.१९
ध्यायतः पुत्रकामस्य १.१२.२
ध्यायतः पुत्रकामस्य १.१३.२
ध्यायते जृंभते चैव १.२१.६७
ध्यायन्विष्णुमथाध्यास्ते २.१.८१
ध्यायन्सनातनं विष्णु १.६२.२१
ध्यायेदेवमघोरेशं २.५०.२६
ध्येया यथाक्रमेणैव २.५५.३१
ध्येयाय ध्येयगम्याय १.७२.१५०
ध्येयो महेश्वरो ध्यानं १.२८.६
ध्येयो लिंगे त्वया दृष्टे १.१०.४९

ध्र

ध्रुवेण प्रगृहीतो वै १.५५.१०
ध्रुवेणाधिष्ठिताश्चैव १.५७.९
ध्रुवो नाम महाप्राज्ञः १.६२.५
ध्वांक्षशत्रो महाप्रज्ञ २.३.७२
ध्वांतोदरे शशांकस्य १.९६.५६

न

नंदव्यूहो मयाख्यातो २.२७.२१५
नंदा भद्रा च सुरभी १.४२.२४
नंदायाः कथितो व्यूहः २.२७.२२०
नंदिनं प्रणिपत्यैनं २.९.७
नंदिनां च गणैश्चैव १.५२.४९
नंदिना सहितं देवं १.७६.१९
नंदी नंदीश्वरो नग्नो १.९८.१२२
नंदी प्राह वचस्तस्मै १.८१.३
नंदी भवश्चांद्रया तु १.७१.१५१
नंदी यज्ञागणे देव १.४२.३७
नंदी शिलादतनयः १.८०.५२
नंदीश्वरो गणवरैः १.४९.६८
नंदीश्वरोयं पुत्रो नः १.४४.१६
न करिष्यामि चेत्युक्त्वा २.६.१३
न करिष्याव इत्युक्त्वा २.५.१५२
न किंचिच्च शिवादन्य० २.१५.१५
न कृते प्रतिकर्त्ता च १.४०.२९
न क्रुध्यंति न हृष्यंति १.१०.६
नक्षत्रऋक्षनामिन्यो १.६१.२०
नक्षत्रतारका द्यौश्च १.३६.१७
नक्षत्रसूर्याश्च तथा १.५७.८
नक्षत्राणां श्रविष्ठा स्या. १.६१.५२
नक्षत्राणि च सर्वाणि १.६१.१२
नक्षत्रेभ्यो बुधश्चोर्ध्वं १.५७.३०
न क्षीयते न क्षरति १.८८.२५
नखाग्रकेशनिर्धूत० १.८५.१५२
न गायेदूर्ध्वबाहुश्च २.३.६३
न गेययोगे गातव्यम् २.३.४४
नगो नीलः कविः कालो १.६५.११६
नग्ना एव हि जायंते १.३४.१३
न च स्पर्शं विजानाति १.८६.१२७
न चाभिमन्यते योगी १.८६.१२६
न चैकं न पृथग्भाव. १.७०.२५६
न जगाम द्विजाः शांति १.९५.३०
न जलं ताडयेत्पद्भ्यां १.८५.१५१
न जातु कामः कामानां १.८६.२४
न जातु कामः कामाना. १.८.२५
न जायते न म्रियते १.८८.२४
न जीवः प्रकृतिः सत्त्वं १.८६.१३८
न तं विनाहं जीविष्ये १.६४.७

न तत्क्षमति देवेशो २.१८.६०
न तत्र सूर्यस्तपति १.५२.३८
न तथा तापसोग्रेण १.९१.६२
न तद्धिरण्मयं सौम्यं १.९६.६३
न तस्य शक्यते वक्तुं १.७७.२४
न तीर्थफलभोगेन १२४.७
न तु च्यावयितुं शक्यो १.८८.३६
न तु शक्रसहस्रत्वं १.१०३.७७
न तृप्यत्यनवद्यांगी २.१०३.५४
न तेऽन्यथावगंतव्यं १.२०.५२
न त्याज्यं तव विप्रेंद्र १.६४.१२
नत्वा संपूज्य विधिना २.२७.६
न दानेन मुनिश्रेष्ठा० १.३०.३२
न दास्यंति सुतं तेत्र १.३७.७
नदीनदससुद्रांश्च १.३८.८
नदीनाममृतं साक्ष. २.१२.३१
न दुर्लभो न संदेहो १.१०.३६
न दुर्लभो मृत्युहीन. १.४१.६२
न दृष्टमेवमाश्चर्य. १.४३.१०
न देयं यस्य कस्यापि १.८६.१५६
नद्यश्च बहवः प्रोक्ताः १.५२.१
नद्येषा वरुणा देवि १.९२.८७
ननाद चोर्ध्वमुच्चधी. १.३०.२२
ननाद तनुवेगेन १.९६.६१
ननाद भगवान् ब्रह्मा १.१०३.६३
न निंदेद्यतिनं तस्मा. १.३३.५
ननु स्वभावः सर्वेषां १.८६.१५
ननृतुर्मुनयः सर्वे १.७२.७४
न पठेच्छृणुयाद्वापि १.८६.१५७
न पुनर्दुर्गतिं याति १.९२.८१
न प्रामाण्यं श्रुतेरस्ति १.४०.३
न भावयत्यतीतानि १.८६.३५
नमो नमस्ययोरेष १.५५.५५
न भ्रश्यंति यतोघ्राणि १.५४.४६
नमः केयूरभूषाय १.१८.३६
नमः क्षेत्राधिपतये २.२१.३
नमः क्षेम्याय वृद्धाय १.२१.४६
नमः पाशाय वृद्धाय १.२१.३१
नमः शिवाय देवाय २.१९.४१
नमः शिवाय रुद्राय २.१९.२७
नमः सर्वात्मने तुभ्यं १.७१.१००
नमः सिद्धाय मेध्याय १.२१.३९
नमः सेनाधिपतये १.७१.१५९
नमः सोमाय सूर्याय १.१८.३१
नमः स्थूलाय सूक्ष्माय १.२१.४१
नमः स्थैर्याय वपुषे १.२१.२६
नमः उग्राय भौमाय १.९६.७७
नमश्चंद्राग्निसूर्याय १.९६.८७
नमश्चकार तं दृष्ट्वा १.१०८.५
नमश्चेंद्रियपत्राणां १.२१.३७
नमस्कारविहीनस्तु १.४४.४८
नमस्कारसमायुक्तं १.६२.३८
नमस्कारादिकं सर्वं १.८९.५३
नमस्कारेण सततं १.२८.२१
नमस्कृत्य महादेवं १.१.२८
नमस्तुभ्यं महादेव १.१०२.४६
नमस्ते कालकालाय १.९५.३५
नमस्ते प्राणपालाय १.२१.६१
नमस्ते भगवन् रुद्र १.४१.२९
नमस्ते वक्रकेशाय १.२१.४२
नमस्ते वै महादेव १.२४.५
नमस्ते सविशेषाय १.२१.४५
नमस्त्रिंशत्प्रकाशाय १.७२.१४३
न मिथ्या संप्रवर्तते १.१०.२६
नमोंबिकाधिपतये १.१८.३२
नमोऽकृत्याय कृत्याय १.२१.६८
नमो गुण्याय गुह्याय १.२१.७१
नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय १.२१.४
नमो दिग्वाससे नित्यं १.३२.१
नमो देवाधिदेवाय १.३३.१६
नमो धूम्राय श्वेताय १.२१.४४
नमोनंताय सूक्ष्माय ३.९६.८०
नमो नदीनां प्रभवे १.२१.१०
नमो नमः सर्वविदे शिवाय १.७२.१५८
नमो नारायणयेति २.७.१३
नमो नारायणायेति २.४८.३५
नमो नृसिंहसंहर्त्रे १.९६.८३
नमोऽपरिमितं कृत्वा १.९६.९४
नमो भगवते तुभ्यं १.१८.२४
नमो भवाय देवाय १.२१.३०
नमो भवाय भव्याय १.३१.३७
नमो भूताय भव्याय १.२१.२८
नमो योगस्य प्रभवे १.२१.७
नमो रसानां प्रभवे १.२१.१२
नमो राजाधिराजाय १.१८.३५
नमो रुद्राय हरये १.१.१
नमो विकरणायैव १.१६.१२
नमो विकृतवेषाय १.२१.६९
नमो वै पद्मवर्णाय १.२१.४७
नमोऽस्तु ते महादेव १.६.१७
नमोऽस्तु नृत्यशीलाय १.२१.६३
नमोस्तु वामदेवाय २.२७.२८
नमोस्तु सर्वविद्याना० १.१६.७
नमोस्त्वजाय पतये १.१८.२६
नमोस्त्विष्टाय पूर्ताय १.२१.३२
नमो ह्रस्वाय दीर्घाय १.९५.४६
न यज्ञार्थं स्त्रियो ग्राह्याः १.७८.१९
नयनं चैवमीशस्य १.५९.४५
न ययौ तृप्तिमीशानः १.७१.१२९
नरः कृत्वा व्रतं चैव १.८४.७२
नरकं च जगामान्या १.७१.८९
नरकं चैव नाप्नोति २.२५.१०६
नरकाणां स्वरूपं च १.२.३५
नरकारीशरीराय १.२१.६२
नरावतारे तच्छिष्ये १.७७.३७
नर्दते कूर्दते चैव १.२१.६६
नर्मदातीरमेकाकी १.६८.३६
नर्गदायां समुत्पन्नः १.६५.४२
न लब्ध्वा दिवि भूमौ च १.९७.२५
नलस्तु निषधाज्जातो १.६६.३९
न वदेत्सर्वयत्नेन १.८९.३९
नवधा स्थापयेद्वह्निं २.२७.१३
नव प्रकृतयो देवा १.६३.५५
नवमः केतुमालस्तु १.४७.६
नवमासात्परिक्लिष्टः १.८८.५७
नवमासोषितश्चापि १.८८.५८
नवम्यां दारिकायार्थी १.८९.११५
नवयोजनसाहस्रो १.५५.४
नवयोजनसाहस्रो १.५७.१०
नवयोजनसाहस्रो १.६१.२८

नवरक्तं हिरण्याद्यैः २.४७.२९
नवरश्मि तु भौमस्य १.६१.२४
नववर्षान्वितश्चैव १.४८.३४
नवाक्षरेण मंत्रेण २.२२.४७
नवात्मतत्त्रूपाय १.७२.१३५
नवाहं वापि सप्ताह० २.४६.४७
न विदुस्त्वां महात्मानं १.६२.३४
न विषं कालकूटाख्यं १.८६.९
नवैते ब्रह्मणः पुत्रा १.५.११
नवोग्रसेनस्य सुता० १.६९.४२
न व्यवर्धंत लोकेऽस्मिन् १.४१.७
न शक्यं भानवैर्द्रष्टु. १.२४.८
न शक्यो विस्तरो वक्तुं १.९.६७
वश्यंत्यभ्यासतस्तेऽपि १.८.११६
नष्टं कुलमिति श्रुत्वा १.६४.६
नष्टा चैव स्मृतिर्दिव्या० १.४३.३
नष्टानां जीवितं चैव १.१००.४६
न सितं वासितं पीतं १.८६.१२३
न स्तोष्यामीति नियतः २.१.६२
न स्प्रष्टव्या न द्रष्टव्या १.७८.२२
न हंतव्याः सदा पूज्याः १.७८.१७
न हसेन्नाप्रियं ब्रूया. १.३३.१०
नहि विष्णुसमा काचिद् १.२४.१४३
नहुषः प्रथमस्तेषां १.६६.६०
न ह्येनं प्रस्थितं कश्चि. १.८८.६३
न ह्येषा प्रकृतिर्जीवी १.८७.८

ना

नांदीश्राद्धविधानं च १.२.३२
नागः कूर्मस्तु कृकलो १.८.६२
नाग इत्येव कथिता १.८६.८४
नागद्वीपं तथा सौम्यं १.५२.२८
नागशत्रुर्हिरण्यांगो १.८२.६३
नागाद्यैपंचभिर्भेदैः २.१०.२४
नागानां सिद्धसंघानां १.४९.६२
नागाश्च ननृतुः सर्वे १.७१.१३२
नागाश्च पर्वताः सर्वे १.१०२.२१
नाग्रेद्रवक्त्रो यः साक्षा० १.८२.३५
नाचरेद्देहबाधायां १.८.८१
नाडी राशिशुका चैव १.८६.८१
नाड्यां प्राणे च विज्ञाने १.८६.८५
नात्यर्थं धार्मिका ये च १.४०.५५
नादाक्षी नादरूपा च २.२७.२०५
नादेयीश्चैव सामुद्रीः १.५९.२३
नादैस्तस्य नृसिंहस्य १.९५.१८
नादोपरि शिवं ध्याये० २.२७.२५
नाधिकान्न च हीनांस्तान् १.७०.३०४
नानाकृतिक्रियारूप० १.७०.९४
नानादेवार्चने युक्ता १.५२.२६
नानापुष्पसमाकीर्णे १.८.८४
नानाप्रभावसंयुक्ता १.८०.४०
नानाविधानि दानानि १.२.३६
नानासिद्धियुतं दिव्यं १.८५.३०
नान्तःप्रज्ञो बहिःप्रज्ञो १.८६.९७
नान्यमिच्छामि भक्ताना० १.९६.१८१
नान्या गतिस्त्वदन्या मे २.५.३७
नानेन सदृशो मंत्रो २.५४.१७
नापश्यंत ततो देवं २.१७.२३
नापश्यदल्पमप्यस्य १.१७.४४
नापेक्षितं महाभाग १.२९.६७
नाभागस्तस्य दायादो १.६६.२१
नाभागादंबरीषस्तु १.६६.५०
नाभागेनांबरीषेण १.६६.२२
नाभिनंदिकरो हम्यंः १.६५.११५
नाभूत्राशाय तद्वज्रं १.३५.३०
नाभेरधस्ताद्वा विद्वान् १.८.९२
नाभेर्निसर्गं वक्ष्यामि १.४७.१९
नाभौ वाथ गले वापि १.८.९६
नामघोषो हरेश्चैव २.५.४९
नामभिश्छंदसैश्चैव १.२१.२
नाम्ना तु धातकेश्चैव १.४६.२४
नाम्नां सहस्रं जप्त्वा वै १.६५.५१
नाम्नां सहस्रं रुद्रस्य १.६५.४९
नाम्नां सहस्रेणानेन १.९८.१९२
नाम्नामष्टशतेनैव १.९६.९५
नारकी पापकृत्स्वर्गी १.८६.१८
नारदं मुनिशार्दूल० २.२.२
नारदः पर्वतश्चैव २.५.१५६
नारदः प्राह हर्यश्वान् १.६३.५
नारदस्यैव दक्षोपि १.९९.१५
नारदोनुगान् प्राह १.६३.९
नारदोभ्यर्च्य शैलेशे १.१.२
नारसिंहश्च विजय० २.२७.१२१
नारस्य च तथोत्पत्तिः १.२.४४
नारायणं जपेन्नित्यं २.७.६
नारायणं तथा लोके १.३४.३०
नारायणां पुनर्ब्रह्मा १.४१.१८
नारायणं बुधं प्राहु० १.६०.३
नारायणपदं श्रुत्वा २.७.१०
नारायणपरो नित्यं २.४.१३
नारायणमुखोद्गीर्ण. १.२०.४
नारायणश्च भगवान् १.१००.५०
नारायण हृषीकेश २.६०१९
नारायणाय सर्वाय १.९४.१२
नारायणानां दिव्यानां २.१.४
नारायणाय विद्महे २.१८.६१
नारायणय विद्महे २.४८.१२
नारायणाय शर्वाय १.७१.९७
नारायणेन कथितं २.३.९५
नारुद्रस्तु स्पृशेद्रुद्रं २.२१.८२
नार्यश्चरंति संत्यज्य १.७१.८५
नालमेकस्य तत्सर्व. १.६७.१८
नावमंतव्य एवेह १.३५.८
नाशातिशयतां ज्ञात्वा १.९.५३
नाश्लीलं कीर्तयेदेवं १.८.१४
नासास्या नानृणा भूमि० २.५.५०
नास्तिकाश्च शठा यत्र २.६.५८
नास्ति क्रिया च लोकेषु १.७५.१७
नास्ति मृत्योर्भयं शंभो० १.३५.१७
नास्ति विज्ञानिनां शौचं १.७५.१६
नास्ति सत्यसमं यस्मा० १.२६.३७
नास्ति सर्वामरत्वं वै १.७१.१३
नास्त्येव दैविकं दिष्टं १.४३.२१
नास्य प्रकृतिबंधोऽभृद्० २.१०.३

नि

निःशेषं पूरयेद्विद्वान् २.२८.४६
निकृत्य केशान् सशिखा० १.२९.७७
निकृत्या तु द्वयं जज्ञे १.७०.२९९
निग्रहः कथितस्तेन २.५०.१
निग्रहो घोररूपोऽयं २.५१.१
निगृह्य मनसा सर्वं १.९१.४१

नित्यं समारभेद्धर्मं १.८८.७५
नित्यनैमित्तिकादीनि २.४५.८५
नित्यप्रियो नित्यनृत्यो १.६५.७४
नित्यमुक्त इति प्रोक्तो २.१०.७
नित्यमृक्षेषु युज्यंते १.५७.३४
नित्यहोमादिकुंडं च २.२५.३
नित्यांता ह्यणवो बद्धाः १.१७.२९
नित्यो धाता सहायश्च १.६५.१४२
नित्यो नियतकल्याणः १.९८.८४
नित्योऽनित्योऽहमनघो २.१७.१२
नित्यो विशुद्धो बुद्धश्च १.२८.१३
नित्यो ह्यनीशः शुद्धात्मा १.६५.१०२
निद्रापरवशः शेषे १.९६.५३
निन्दंति वेदविद्यां च १.४०.२०
निपेतुर्विह्वलात्यर्थं १.४३.१३
निमित्तस्थो निमित्तं च १.६५.९७
निमेषाश्चानुकर्षाश्च १.७२.९
नियुतं मानसं जप्त्वा १.१५.१३
नियुतान्येकनियुतं १.५३.४०
नियुतान्येव षट्त्रिंश० १.४.३१
नियोगादेव तत्कार्यं १.८४.१६
नियोगाद्ब्रह्मणःसाध्वी १.९८.१८६
नियोगाद्ब्रह्मणः सर्वे १.७१.१४८
निरवद्यपदोपायो १.९८.१५७
निराशस्त्यक्तसंदेहः १.४७.२३
निरीक्षणं प्रोक्षणं ताडनं च २.२५.६६
निरीक्षणादेव विभोसि दग्धुं १.७२.१५४
निर्गतां शोकसंतप्तौ २.५.१५१
निर्जिता समरे सर्वे १.९७.४
निर्देशाद्देवदेवस्य २.१०.२३
निर्देशेन शिवस्यैव २.१०.२२
निर्द्वंद्वा वीतरागाश्च १.६.१६
निर्ममे भगवांस्त्वष्टा १.६५.१६
निर्मर्यादा निराक्रांता १.४०.६७
निर्मलः केवलो ह्यात्मा २.५५.१७
निर्मांसरुधिरत्वग्वै १.४२.४
निर्लज्जा निर्घृणा मंदा २.२७.१७८
निर्लेपो निष्प्रपंचात्मा १.९८.१५६
निर्वाणं हृदयश्चेव १.६५.१५९
निवारितं हरेश्चक्रं २.५.१५०
निवृत्तं वर्तमानं च १.७०.१६०
निवृत्तः संवृतः शिल्पो १.९८.१५५
निवृत्तः सर्वसंगेभ्यो १.१०.१४
निवृत्तिलक्षणो धर्मः १.८६.१६
निवृत्तिलक्षणज्ञान० १.२९.८
निवृत्तिश्चास्य विप्रस्य २.५५.४२
निवृत्त्या रुद्रपर्यंतं २.२१.४७
निवृत्त्यै धनदेवाय २.२१.१८
निवेदनःसुधाजातः १.६५.१५१
निवेदयामास तदा १.६९.५७
निवेदयीत शर्वाय १.८४.४७
निवेदयेच्च रुद्राय १.८१.४१
निवेदयेत्ततो भक्त्या १.८१.३८
निवेदयेद् द्रुभं शंभो० २.३३.९
निवेदितं किलात्मानं १.२९.५७
निवेद्य देवदेवाय १.७७.७३
निशम्य तद्यक्षमुमांबिकाह १.५३.६०
निशम्य ते महाप्राज्ञाः १.८७.१
निशम्यवचनं तस्य १.२४.१४५
निशम्य वचनं तस्य १.३६.६८
निशम्य वचनं देवी १.९२.१८५
निशम्यैवं महातेजा १.२४.१४१
निशांते सृजते लोकान् १.४.३७
निशाकरान्निस्रवंते १.५४.३२
निशाचरः प्रेतचारि० १.९८.६९
निशाचरः प्रेतचारी १.६५.७३
निशाचराय विद्महे २.४८.२१
निशायामिव खद्योतः १.७०.१२२
निषधं नाम यः कुर्यात् १.७७.१४
निषधः पारियात्रश्च १.४९.२३
निषेवितं चारुसुगंधि० १.९२.१६
निष्कंटकः कृतानंदो १.९८.१४२
निष्कलं प्रथमं चैकं १.७५.३१
निष्कलस्यात्मनः शंभो १.६.२१
निष्कलो निर्मलो नित्यः १.७५.१
निहता सा च पापेन १.८.२५
निहते तारके दैत्ये १.७१.८
निहतो हिमवत्पुत्रि १.९२.९६
निहत्य गदया विष्णु १.१००.२७

नी

नीचस्येव तदा वाक्यं १.४०.१४
नीचो द्वादशमात्रस्तु १.८.४७
नीतिः सुनीतिः शुद्धात्मा १.९८.४२
नीरस्तीर्थश्च भीमश्च १.६५.१२८
नीराजनाद्यैश्चान्यैश्च १.८१.१४
नीरूपः केवलः शुद्धः २.५५.१५
नीलः कंटकशृंगश्च १.४९.५५
नीलकंठाय देवाय १.३२.४
नीलकानां पुराण्याहुः १.५०.३
नीलकेशाय वित्ताय १.१८.३३
नीलग्रीवान् सहस्राक्षान् १.७०.३१२
नीलमेघांजनाकार० १.९६.१०
नीलरुद्रं च शाक्तेय० १.६४.७७
नीलश्च लोहितश्चैव २.१८.१९
नीलश्च वैडूर्यमयः १.४९.२०
नीलस्कंधं वृषं गां च १.८३.४२
नीलस्तथांगलुप्तश्च १.६५.१०५
नीलस्तथोत्तरे मेरोः १.४९.३
नीलाभं दक्षिणं वक्त्र० २.२३.९
नीलोत्पलं चोत्पलं च १.८१.३१
नीलोत्पलदलप्रख्यै० १.७१.३६
नीलोत्पलैश्च राजीवै० १.७९.१६
नीलो नवत्या देवेशः १.१०३.२३
नीलो बादरिकश्चेव १.६३.८८

नू

नूपुरैश्छत्रवारैश्च १.७०.१२३

नृ

नृणां तनुं समास्थाय १.७४.२८
नृणां योनिपरित्यागः १.४३.२३
नृणां हि चित्तकमलं १.२५.१२
नृत्यंतं देवदेवेशं १.७६.२२
नृत्यंतं भूतसंघैश्च १.७६.३३
नृत्यद्भिरप्सरःसंघैः १.७६.२१
नृत्यप्रियो नृत्यनृत्यः १.९८.७१
नृत्यारंभं कथं शंभोः १.१०६.१
नृपं प्रति ततश्चक्रं २.५.१३७
नृपशून्या वसुमती १.४०.३०
नृसहकृद्दंतवसना १.९६.११५
नृसिंहेन पुरा दैत्यो २.२७.२७६

नृसिंहेन हतः पूर्व १.९५.१
नृपचिह्नानि नान्येषां २.२७.२६१

ने

नेतु यस्योत्थतश्चाहं १.३०.९
नेतु संचित्य विप्रेंद्राः १.३०.४
नेत्रं च नेता जगतां १.९८.१७७
नेत्रमेक स्रवेद्यस्य १.९१.२५
नेत्राणि च विभो पश्य १.७१.१२७
नेत्रांतं विधिनाऽभ्यर्च्य २.२२.५२
नेत्रे च दक्षिणे वामे १.८६.१३५

नै

नैकस्तंभमयं चापि १.४४.२०
नैकधा तु शतैश्चित्रे १.५१.४
नैगमेशश्च भगवाँ० २.४६.१८
नैतानि शस्तरूपाणि २.३.६५
नैध्रुवस्य तु सा पत्नी १.६३.५३
नैमिषेयास्तदा दृष्ट्वा १.१.५
नैमिषेयास्तु शिष्याय १.१.९
नैर्ऋते कृष्णवर्णा च १.४८.१७
नैवमात्मविदामस्ति १.८९.४८
नैवाशीचं यतीनां च १.८९.७७
नैषधं हेमकूटात्तु १.४९.८
नैषां भार्यास्तु पुत्रश्च १.७०.३०२
नैष्ठिकं व्रतमास्थाय १.२४.१०३

न्य

न्यगूर्ध्वाधःप्रचारोऽस्य १.६०.२२
न्यग्रोधबीजे न्यग्रोध० १.२७.७
न्यग्रोधे विपुलस्कंधो १.४९.३३
न्यसेत्पंचाक्षरं चैव १.२७.१७
न्यसेन्मंत्राणि तत्तोये १.२७.३७
न्यस्ते मंत्रेथ सुभगे १.८५.८१
न्यस्यते यत्तदुत्पत्ति० १.८५.६२
न्यायतःसेव्यमानस्तु १.८.५३
न्यायनिर्वाहको न्यायो १.९८.११३
न्यासं षडंगं दिग्बंधं १.८५.२४
न्यासस्त्रिनेत्रसहितो २.२६.१२

प

पंचकल्याणसंपन्नं २.३९.३
पंचकेनेशमूर्तीनां २.१२.४२
पंचक्लेशमयैः पाशैः २.९.२८
पंचदश्यां च धर्मिष्ठां १.८९.११८
पंचधा पंचकैवल्यं १.१०४.१५
पंचनिष्केण कर्तव्यं २.३७.४
पंचप्रकारविधिना २.२८.६६
पंचपूर्वातिक्रमेण २.२५.७५
पंचबुद्धींद्रियाण्यस्य १.३.२७
पंच ब्रह्माणि मे नंदिन् २.१४.१
पंचब्रह्मात्मकं सर्वं २.१४.३१
पंचभिश्च कपालीशः १.१०३.१६
पंचभूतानि शेषाणि २.१९.२५
पंचभूतानि संयम्य २.१८.४३
पंचभूतान्यहंकारो २.५४.२६
पंचमंत्रसहितेन २.२४.२४
पंचमं धृतिमत्षष्ठं १.४६.३७
पंचमः स्वरितश्चैव १.८५.४८
पंचमस्तु जनस्तत्र १.२३.३४
पंचमाय महापंच० १.१०४.१४
पंचमोनुग्रहः सर्ग० १.७०.१५७
पंचरात्रं तथा स्पृश्या १.८९.१०३
पंचवक्त्रं दशभुजं १.२७.३
पंचवक्त्रं दशभुजं २.२३.७
पंच वायुजयं भद्रे १.८५.२२०
पंचविंशतिकं साक्षात् १.७६.१०
पंचविंशति तत्त्वज्ञः १.९८.५४
पंचविंशतितत्त्वात्मा २.१४.३२
पंचविंशतितत्त्वात्मा २.१४.३२
पंचविंशतितत्त्वात्मां १.८५.२२५
पंचविंशतिमोक्षार्थं १.८५.११२
पंचविंशत्कुशेनैव २.२५.४०
पंचविंशत्परिमिता १.४०.९१
पंचाक्षरस्य माहात्म्यं १.८५.६
पंचामृतपंचगव्यादीनि २.२४.१७
पंचार्थज्ञानसंपन्नः १.८६.४९
पंचार्थयोगसंपन्नो १.८६.५०
पंचाशत्कोटिविस्तीर्णा १.४९.२
पंचाशद्दीपमालाभि० १.७७.८६
पंचास्यरुद्ररुद्राय १.७२.१२३
पंचेंद्रियाणां विजयो १.८५.२२१
पंचैते वैकृताः सर्गाः १.७०.१६६
पंचैते हेतवो ज्ञेया १.६१.६३
पकारमुदरं तस्य १.१७.७९
पक्वेष्टकाभिर्विधिव० १.८४.३९
पक्षजाः पुष्काराद्याश्च १.५४.५५
पक्षजाः कल्पजाः सर्वे १.५४.५४
पक्षद्वादशकं वापि १.२९.७४
पक्षयोरुपवासं च १.८३.५३
पक्षिणी मातुलानां च १.८९.९०
पठतां शृण्वतां नित्यं २.७.३०
पठेत्प्रतिष्ठाकालेषु १.९६.१२५
पण्यं प्रसारितं चैव १.८९.७०
पतंति चात्मभोगार्थं १.१०.३५
पतये हैमवत्याश्च १.१०४.१३
पतितेन च विप्रेण २.९.२
पतिव्रताभिः सर्वत्र १.७१.३२
पदे पदेश्वमेधस्य १.७७.६६
पद्भ्यां चाश्वान् समातंगान् १.७०.२३८
पद्भ्यां तलनिपातेन १.२०.६३
पद्मकिंजल्कसंकाशैः १.८०.४१
पद्मगर्भो महागर्भो १.९८.११६
पद्मप्रभाः पद्ममुखाः १५२.३९
पद्ममष्टदलं कुर्यात् २.३१.३
पद्मसूत्रानुसारेण १.२०.३१
पद्मस्योत्तरदिग्भागे २.३७.५
पद्महस्तोमृतास्यश्च २.२२.५६
पद्माक्षप्रभृतीनां च २.२.४
पद्माक्षमाह भगवान् २.१.५८
पद्माक्षैर्दशलक्षं तु १.८५.१११
पद्माश्रितो महादेवः १.८१.३०
पद्मासनस्थः सोमेशः १.८२.५
पद्मोत्पलवनोपेता १.४३.३४
पद्मोद्भवाय विद्महे २.४८.१६
पपात च तदा भूमौ १.१००.२८
पपात ताडयंतीव १.६४.२८
पयसा वाथ दध्ना च २.२८.८९
पयोष्णी वारुणी शांता २.२७.८७
परं ध्यानं समाश्रित्य १.१२.४
परं ब्रह्म स ईशान २.१८.१४
परः स पुरुषो ज्ञेयः १.७०.८२
परदाररता मर्त्या २.६.६९

परदारान् परद्रव्यं १.८५.१३८
परमात्मानमीशानं १.३७.३०
परमात्मा परं ज्योति० २.१५.१३
परमात्मा मुनिर्ब्रह्मा १.३.१०
परमात्मा शिवः प्रोक्तः २.११.३
परमात्मा शिवः शंभुः २.१६.१६
परमात्मा शिवादन्यो २.१६.२६
परमात्मा ह्यणुर्जीवः २.२७.१०१
परमार्थः परमयः १.९८.८१
परमार्थविदः केचि० १.७५.२
परमेशो जगन्नाथः १.३८.२
परस्परनिमित्तेन १.४०.६०
परस्परानुप्रवेशा. १ ५९.१७
परस्परानुप्रवेशा. १.७०.४८
परस्पराश्रिता ह्येते १.७०.७९
परस्परास्थिता ह्येते १.५७.३६
पराजितास्तदा देवा १.९८.४
परात्परतरं ब्रह्म १.९५.२२
परात्पराय विश्वाय १.९६.८१
परानंदात्मकं लिंगं १.७५.१८
परापरेति कथिते १.८६.५९
परार्धे तु तमो नित्यं १.५३.३५
पराशरमुवाचेदं १.६४.११५
पराशरश्च गर्गश्च १.७.४२
पराशरश्च गर्गश्च १.२४.४५
पराशरसुतः श्रीमान् १.२४.१२५
पराशरसुतो योगी १.९२.५९
पराशरस्यावतारो १.२.२९
परिग्रहविनिर्मुक्ता. २.२०.३८
परिग्रहविनिर्मुक्तो १.८६.१२४
परिणेतुमनास्तत्र २.५.६९
परिवर्तत्यहरहो १.५२.६
परिषेचनपूर्णं च २.२५.९७
परिसंमोहने कुर्या० २.२५.१०
परिस्तीर्य स्वशाखोक्तं २.४५.११
परीक्षिताय शिष्याय २.५५.२१
परीक्ष्य निपुणं बुद्ध्या १.६१.६२
परीक्ष्य भूमिं विधिव. २.२१.१
परीक्ष्य भूमिं विधिव. २.४५.८
परेण तस्य महती १.५३.३१
परेण पृष्करस्याय १.५३.३०
पर्णवृत्त्या पयोवृत्त्या १.२९.७९
पर्यग्निं च पुनः कुर्यात् २.२५.२२
पर्यटित्वा तु देवस्य १.२०.२९
पर्यपृच्छेत्पतंगोपि १.५४.१४
पर्यायवाचकैः शब्दैः १.७०.२७
पर्वतस्य मया विद्वन् २.५.१२६
पर्वतानि महाभार० १.९.४०
पर्वताश्च व्यशीर्यंत १.१००.९
पर्वते वा नदीतीरे २.४५.५
पर्वतोदधिवासिन्यो १.३९.१७
पर्वतोऽपि तथा प्राह २.५.१२७
पर्वतोऽपि यथान्यायं २.५.११०
पलानां द्वे सहस्रे तु १.९२.१७१
पलाशोदुंबराश्वत्थ. २.२७.२६२
पवनात्मा बुधैर्देव २.१३.९
पवनो यस्तु लोकेस्मिन् १.५९.१०
पवनो हि यथा ग्राह्यो १.८८.४६
पवमानः पावकश्च १.६.१
पवित्रं त्रिमधुर्मंत्रः १.६५.१५६
पवित्रपाणिः पापारि० १.९८.९६
पवित्रश्च महाश्चैव १.६५.६०
पवित्री चैव गांधारी २.२७.१४२
पशवः परिकीर्त्यंते २.९.१२
पशवश्च वयं तस्य १.७३.१०
पशवो नैव जायंते १.७३.२०
पशवो मानुषा वृक्षाः १.१७.९
पशुत्वादिति सत्यं च १.७२.३९
पशुपते पाशं मे गोपाय २.४५.५८
पशुपते पाशं मे गोपाय २.४५.५९
पशूनां च पतिर्यस्मात्० १.८०.५७
पशूनां पतये चैव १.४१.३१
पश्चाद्दक्षं विनिर्द्यैषा १.६.११
पश्चिमे सद्यमंत्रेण १.८१.१५
पश्यंति युक्त्या ह्यचलप्रकाशं १.८८.४०
पश्यतां सर्वदेवानां १.९६.६६
पश्यति ब्रह्मविष्ण्वीद्र. १.९.६३
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णो १.८८.४१
पश्य पुण्यानि लिगानि १.९२.९८
पश्यबालं महाभागे १.६४.८२
पश्वादयस्ते विख्याता १.७०.१४६
पस्पर्श च ददौ तस्मै १.९८.१८२


पा


पाणिग्रहणमंत्रेषु १.६६.४
पार्णींद्रियात्मकत्वेन २.१४.१७
पातकं धारणाभिस्तु १.८.७६
पापकर्मरता मूढा २.६.४४
पातकी च तदर्धेन १.८९.४३
पातालतलसंस्थाश्च १.९.६४
पातालानि समस्तानि २.१०.४४
पाति यस्मात्प्रजाः सर्वाः १.७०.१०१
पादयोः स्थापयामास १.१०२.६२
पादयोरुभयोश्चैव १.८५.७१
पादांगुष्ठेन सोमांग. १.८२.१०२
पादांतं विष्णुलोकं वै १.२३.३८
पादादिमूर्धपर्यंतं १.८५.५९
पादेन निर्मितं दैत्य. १.९७.१८
पादेन पार्थिवस्याग्ने. १.५९.१६
पादौ पायुरुपस्थश्च १.७०.४२
पादौ प्रक्षाल्य देवस्य १.१०३.४७
पादौ स्पृशंति ये चापि १.८९.७३
पाद्यमाचमनं चार्घ्यं १.७९.१३
पाद्यमाचमनीयं च १.२६.२
पाद्यमाचमनीयं च २.२२.३८
पापं व्यपोहंतु मम १.८२.४५
पापं हि त्रिविधं ज्ञेयं १.९०.२
पापकंचुकमुत्सृज्य १.७७.५७
पापशुद्धितः सम्यग् १.८५.२१२
पापाचारोऽपि यो मर्त्यः १.२१.९०
पापिनस्तेषु पच्यन्ते १.५३.४५
पापिनां यत्र मुक्तिः स्या० १.१०३.७५
पापैरपि न लिप्येत २.२६.२८
पापैर्विमुच्यते सद्यो २.१८.५७
पापैश्च मुच्यंते जंतुः १.७२.१८३
पार्थिवद्रियात्मकत्वेन २.१४.१९

पारावतध्वनिविकूजित० १.९२.२१
पार्थिवं च तथार्प्य च १.८६.३१
पार्थिवांशं विना नित्यं १.९.३१
पार्वतो हि तथा प्राह २.५.६०
पार्श्वतो देवदेवस्य १.२७.१९
पालयामास पृथिवीं २.५.४८
पालयामास हृष्टात्मा २.५.४७
पालयिष्यामि पृथिवीं २.५.४१
पालाशसमिधैर्देवि १.८५.२०८
पाली भुजंगनामा च २.२७.१०८
पावितश्चाश्रमश्चायं १.१०७.३०
पाषंडाचारनिरताः. २.६.५७
पाषंडे ख्यापिते तेन १.७१.९४
पाहि नान्या गतिः शंभो १.७१.११३

पि

पिंडं च पूर्ववद्दद्यात् २.४५.८२
पिंडजातिस्वरूपी तु २.१६.९
पिंडिका मुंडिनी मुद्रा २.२७.१५४
पितरं सोब्रवीत्त्यक्तः १.६६.५
पितरः पितामहाश्चैव १.८२.६७
पितरो मुनयः सर्वे २.४६.१९
पितरोऽमृतपाः प्रोक्ता. १.६.९
पितरो ह्यपपक्षाभ्यां १.७०.२०८
पिता तव महादेवः १.१०७.५७
पितामहस्तथा चैषां १.१०१.१०
पितामहस्याथ परः १.४.५७
पितामहाश्च भो नंदिन् १.४२.३१
पितामहाया व्यूहं च २.२७.२२५
पितामहेनोपदिष्टो १.८९.३२
पिता माता च पुत्राश्च १.६४.३९
पिता विगतसंज्ञश्च १.४३.१५
पितुरंके समासीनं १.६२.१३
पितृंश्चैवासृजत्तन्वा १.७०.२२३
पितृंस्तु तपयेद्विद्वान् १.२६.१४
पितृणां मानवानां च १.७०.२२०
पितृनुद्दिश्य यद्दत्तं १.२६.१९
पित्रा ते शैलराजेन १.९२.८५
पित्रा त्यक्तोऽवसद्वीरः १.६६.७
पित्र्यं पितृणां संभूति० १.२.१०
पिधायकर्णौ संयाति २.६.११
पिपीलिकागतिस्पर्शा० १.९१.४८
पिप्पलायतनश्चैव १.७२.८१
पिबंति द्विकलं काल १.५६.१५
पिशाचांतः स विज्ञेयः १.८८.७१

पी

पीठाकृतिरुमा देवी २.११.३१
पीतं नृत्तामृतं शंभो० १.१०६.२६
पीतं रक्तं सितं विद्युत् १.८६.१२२
पीतगंधानुलिप्तांगः १.१३.३
पीतांभोष्णीषशिरसः १.१३.१७
पीत्वा च कृत्रिमं क्षीरं १.१०७.१०
पीत्वा योगामृतं योगी २.५५.२६
पीत्वार्धमासं गच्छंति १.५६.१३
पीत्वा स्थितं यथाकामं १.१०७.५

पु

पुंडरीकाजिनं दोर्भ्यां १.७६.३२
पुंडरीकात्परश्चापि १.५३.१६
पुंल्लिगं पुरुषो विप्रा १.३३.४
पुंल्लिगशब्दवाच्या ये २.११.१९
पुंविशेषपरो देवो २.९.४४
पुंसां पशुपतिर्देव १.८६.१३१
पुच्छेनैव समाबध्य १.९६.१९
पुच्छद्वयसमायुक्तं २.२५.२९
पुण्यमाचमानं कुर्याद् १.२६.२४
पुण्यवृक्षक्षयात्तद्व० १.८६.३९
पुण्यस्थानस्थितां पुण्या १.९२.१२७
पुण्यानामितिहासानां १.२६.२८
पुण्यानुरूपं सर्वेषां २.१०.३२
पुण्यैर्द्रव्यैर्महादेवं १.२७.३४
पुत्रं दास्यामि विप्रर्षे १.३७.६
पुत्रं पुत्रवतां श्रेष्ठ १.७१.१२२
पुत्रत्रयमभूत्तस्य १.६५.२६
पुत्र पाहि महाबाहो १.४२.३३
पुत्रपौत्रादिमित्रैश्च २.२२.८२
पुत्रप्रेम्णाभ्यषिचच्च १.४३.३८
पुत्रमेकं तयोत्पाद्य २.७.१७
पुत्रसंक्रामितश्रीस्तु १.६७.१४
पुत्रस्तवासौ दुर्बुद्धि० २.८.१९
पुत्रस्तु रुक्मकवचो १.६८.३०
पुत्रस्तेऽयमिति प्रोच्य १.४३.३७
पुत्रानुत्पादयामास २.७.२०
पुत्रार्थं चैव नारीणां १.१०४.६
पुत्रार्थं भगवांस्तत्र १.१०८.४
पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति २.५४.१५
पुत्रीकृता सती या सा १.५.२७
पुत्रेण लंघितामाज्ञां १.९५.१२
पुत्रेषु दारेषु गृहेषु नृणां १.७८.२६
पुत्रो मे त्वं भव ब्रह्मन् १.२०.५७
पुत्रोसि जगतां यस्मा० १.४२.२७
पुत्रौ विदर्भराजस्य १.६८.३९
पुनः कुशेन गृहीत्वा २.२५.८८
पुनः पशुपतेः पत्नी २.४५.६५
पुनः पुनः प्रवक्ष्यामि २.१६.२
पुनः प्राग्वासनायोगा. २.२२.८५
पुनः शरवणं प्राप्य १.६५.२१
पुनः सनत्कुमाराय २.४५.९२
पुनः ससर्ज भगवान् १.४१.१
पुनः स्नात्वा परित्यज्य १.२५.१७
पुनरर्घ्यप्रदानेन २.२२.४९
पुनरष्टाभिरीशानं १.७७.७२
पुनराज्यसंस्कारः २.२५.८२
पुनराश्रममागत्य १.९०.९
पुनराह महादेवः १.१३.८
पुनरेव महाबुद्धेः २.१६.१
पुनर्दर्भान् गृहीत्वा २.२५.८५
पुनर्भवान्याः पादौ च १.६४.९०
पुनर्वागीश्वरावाहनम् २.२५.७०
पुनस्तस्मादिहागत्य २.२२.८४
पुन्नागेषु द्विजशतविरुतं १.९२.३१
पुमिति नरकस्याख्या १.८९.११३
पुरं प्रवेशयामास १.१०३.३८
पुरं रुद्रपुरी नाम १.५१.२९
पुरत्रयं विरुपाक्ष १.७२.१११
पुरत्रयस्यास्य समीपवर्ती १.७२.९८
पुरत्रये तदा जाते १.७१.२४
पुरश्चरणजापी वा १.८५.१००
पुरस्तादसृजद्देवः १.५.९
पुरस्ताद् बृहते चैव १.२१.५०
पुरांतगो यदा भानुः १.५४.६
पुरांधक इति ख्यात० १.९३.४

पुरांधकाग्निदक्षाणां १.२.५०
पुरा कश्चिद्द्विजः शक्तो २.८.८
पुराकृतं विश्वसृजा स्तवं च १.८१.५८
पुरा कैलासशिखरे १.८०.२
पुरा जंबुकरूपेण १.९२.१५
पुरा जलंधरं हन्तु १.९८.१५
पुराणन्यायमीमांसा. १.७२.१४
पुराणसंहितां दिव्यां १.१.१३
पुराणसंहितां पुण्यां १.१.११
पुराणानां तु सहस्राणि १.५०.१४
पुराणैः सामसंगीतैः १.१०२.४२
पुरा तदर्थमनिशं २.५.११८
पुरा त्रेतायुगे कश्चित् २.१.९
पुरा त्वष्टा प्रजानाथो २.५१.७
पुरा देवेन रुद्रेण १.८५.४
पुरा पितामहेनैव २.५१.६
पुरा पितामहेनोक्तं २.७.३
पुरा पुरत्रयं दग्धुं १.८०.४८
पुरा पृष्टो महातेजा २.१.२
पुरा भृगुश्रुतेनोक्तो २.५०.३
पुरा ममाज्ञा मद्वक्त्रात् १.८७.९
पुरा महेंद्रदायादा० १.३७.१४
पुरा मात्रा तु कथितं १.१०७.४४
पुरा मानेन चोष्ट्रत्व० २.२८.१२
पुरा वः कथितं सर्वं १.४५.७
पुरा शापाद्विनिर्मुक्तो २.९.४
पुरुणा च कृतं वाक्यं १.६७.५
पुरुषं परमात्मानं १.१७.२४
पुरुषं शंकरं प्राहु० २.११.४
पुरुषस्त्वं जगन्नाथो १.३६.५
पुरुषाख्यो मनुः शंभुः २.११.१३
पुरुषादि विरिंच्यंत० २.२०.५१
पुरुषाधिष्ठितत्वाच्च १.७०.५२
पुरुषार्थप्रदानाय १.९५.५१
पुरुषेण मुनिश्रेष्ठा १.८१.१६
पुरुषो वै महादेवो १.२८.२२
पुरुषोसि पुरे शेषे १.८८.८८
पुरेशयो गुहावासी १.२१.७८
पुरे शेते पुरं देहं १.२८.५
पुरेषु राक्षसानां च १.६४.५२
पुरोपमन्युना सूत १.१०७.१
पुलस्त्यः पुलहोगस्त्यो १.९८.१०१
पुलस्त्यः शशभृन्मौलिः २.११.१६
पुलस्त्येन यदुक्तं ते १.६४.१२०
पुलस्त्योत्रिर्वसिष्ठश्च १.७०२८९.
पुष्करं च पवित्रं च २.१७.१८
पुष्करां चांतरिक्षं वै १.७२.६
पुष्कराधिपतिं चक्रे १.४६.२२
पुष्करावर्तकाद्यास्तु १.७५.११
पुष्णात्योषधिजातानि २.१२.२३
पुष्पांजलिं दृत्त्वा पुन. २.२४.२६
पुष्पाण्यौषधिजातानि २.१०.३४
पुष्पेषु गंधवत्सूक्ष्मः १.३५.२१
पुष्पैरन्यैः शुभशुभतमैः १.९२.३३
पुष्पोडुपवहाभिश्च १.५१.६
पुष्पोत्कटा ह्यजनयत् १.६३.६३
पुष्पोत्करानिलविधूर्णित० १.९२.२८
पुष्यमासे तु वै शूलं १.८४.२६
पुष्ययोगे त्वनुप्राप्ते १.७२.१०९

पू

पूजनीयः शिवो नित्यं १.७३.६
पूजनीयो महादेवो १.७३.११
पूजया तस्य संतुष्टो १.३६.१
पूजयामास पुण्यात्मा १.३०.५
पूजया शतसाहस्रं १.९२.१७३
पूजयित्वा विधानेन २.३०.१२
पूजयित्वा विधानेन २.४४.५
पूजयेच्च यथालाभं १.३१.१९
पूजयेत्परमात्मानं १.२९.७३
पूजयेदंगमंत्राणि २.२३.२३
पूजयेदंगमंत्राणि २.२२.११
पूजयेद्देवमीशानं २.३३.८
पूजयेद्भोगयेद्देव २.२८.७१
पूजयेद्यः शिवं रुद्रं १.७९.२४
पूजयेन्मां सदा भक्त्या १.९२.१६८
पूजां चक्रुस्ततो यज्ञं २.७.२६
पूजाकर्म क्रिया तस्य २.१८.६२
पूजाप्रकरणं तस्मै १.२४.१४६
पूजासंप्रोक्षणं विद्धि २.२१.६७
पूजा होमादिकं सर्वं २.२२.७८
पूजितं यत्पुरा वत्स १.४३.२२
पूजितं वा महादेवं १.७९.२६
पूजितश्च ततो देवो २.२७.८
पूजितो वै महादेवः १.५१.१८
पूज्यो भवति रुद्रस्य १.९८.१९३
पूज्यो लिंगे न संदेहः १.१०.५२
पूरयेद्गंधतोयेन २.२२.२५
पूरितं पूरकेणैव १.४१.२१
पूर्णं युगसहस्रं वै १.७०.११२
पूर्णभद्रेश्वरो माली १.८२.५३
पूर्णमासं तु मारीचं १.५.४०
पूर्णं शतसहस्राणा. १.५४.१२
पूर्णाहुतिविधानेन २.२३.२९
पूर्णेदुवदनं सौम्यं २.२६.१८
पूर्णेदुवर्णेन च पुष्पगंध. २.१९.४०
पूर्वं निकामचारास्ता १.३९.३४
पूर्वकल्पसमुद्भू ता० १.८५.२७
पूर्वतः पद्मरागाभो १.४८.८
पूर्वतो होमयेदग्नौ २.४३.७
पूर्वदेवामराणां च १.७६.४१
पूर्वद्वारसमीपस्थं १.९२.१५०
पूर्वमाराधितः प्राह १.४२.१०
पूर्वमाराधितो विप्र १.४२.११
पूर्वमेवापि निखिलं २.५५.२
पूर्ववत्कारयेद्यस्तु १.७७.२५
पूर्ववत्पुरुषं दृष्ट्वा २.५.११६
पूर्ववत्प्रणवेनैव २.२७.४५
पूर्ववत्स्थापयामास १.४.६१
पूर्ववद्दक्षिणे भागे २.३७.१३
पूर्वहृदा शिवशक्तिसमवायेन २.२४.२३
पूर्वाग्रमुत्तराग्रं च २.२५.२
पूर्वे किरातास्तस्यांते १.५२.२९
पूर्वेण मंदरस्येते १.४९.४४
पूर्वोक्तदेशकाले तु २.३२.२
पूर्वोक्तदेशकाले तु २.४३.३
पूर्वोक्तभूषणं सर्वं २.२८.८२
पूर्वोक्तमखिलं कृत्वा १.८४.१०

पूर्वोक्तमखिलं पुण्यं १.७७.७४
पूर्वोक्तलक्षणैर्युक्तं २.२७.२३२
पूर्वोक्तहेममानेन २.३१.६
पूर्वोक्तेनांबुना सार्धं २.२२.३६
पूर्वोक्तैरपि पुष्पैश्च २.५४.५
पूर्वोत्पन्नो परं तेभ्यः १.७०.१९२
पूर्वोत्पन्नौ परं तेभ्यः १.७०.१७१
पूर्वोत्सृष्टं स्वदेहं तं २.३.४५
पूषदन्तविनाशाय १.२१.५८
पूषा दंतान्दशन्दतै. १.१०२.३८

पृ

पृथक् पशुत्वं देवानां १.७२.३५
पृथक्पृथङमूलेनार्घ्यं २.२४.१८
पथगादाय हस्ताभ्यां २.२५.२४
पृथिवीं पादमूलात्तु १.७६.१२
पृथिवीं भाजनं कृत्वा १.८३.५
पृथिवी चांतरिक्षं च १.४५.८
पृथिव्यां पृथुमीशानं १.५८.१५
पृथिव्यां यानि पुण्यानि १.९२.१३३
पृथव्यां सर्वरत्नाना. १.६९.१४
पृथिव्याः प्रविभागाय १.७०.१३२
पृथिव्यामेव तु विद्या. १.७०.५१
पृष्दश्वो नभोयोनिः १.९८.१०६
पृषितो हिंसयित्वा गां १.६६.५२
पृष्टः कैलासशिखरे २.५५.६
पृष्टो नंदीश्वरो देवः २.२०.१३
पृष्टतः पार्श्वतश्चैव १.१७.४८

पै

पैतामहेन कुंभेन २.४७.४३
पैशाचे राक्षसे दुःखं १.८६.२६

पौ

पौंड्रास्तु वृष्टयः सर्वा १.५४.५७
पौरजानपदैस्त्यक्तो १.६६.७४
पौरुषेयो वधश्चैव १.५५.५१
पौर्णमास्यां घृताद्यैस्तु १.८३.३६
पौर्णमास्यां च पूर्वोक्तं १.८३.५०
पौग्रमास्यां च विधिवत् १.८३.४७
पौर्णमास्यां तु संपूज्य १.८३.३३
पौर्णमास्यां भवं स्नाप्य १.८३.३०
पौर्णमास्यां महादेवं १.८३.२५
पौर्णमास्याममावास्यां १.८४.२
पौष्णं च देव्यः सततं १.८४.१५
पौष्णं च देव्यः सततं १.८२.८१

प्र

प्रकाशते प्रतिष्ठार्थं १.४०.२१
प्रकाशाद्बहिरंतश्च १.७०.१५०
प्रकाशो दीप्तिरित्युक्तः १.८.६०
प्रकीर्णकेशाः सर्पास्ते १.२२.२०
प्रकुदः ककुदंतश्च १.७२.७८
प्रकृतिं भूतदात्रीं तां १.७०.२६८
प्रकृतिः पुरुषः साक्षात् १.७१.१०२
प्रकृतिर्विहिता ब्रह्मं. १.१६.३२
प्रकृतिस्तस्य पत्नी च १.७५.९
प्रकृतिस्त्वं पुमान् रुद्र. १.९६.४०
प्रक्षाल्याचम्य पादौ च १.२५.१४
प्रक्षिपेद्विधिना वह्नि. २.२५.९
प्रक्षीयंते परस्यांतः १.५६.११
प्रगृहीतायुधैर्विप्रैः १.४०.५३
प्रजया कर्मणा मुक्ति. १.८६.२०
प्रजां धर्मं च कामं च १.७०.१७३
प्रजां धर्मं च कामं च १.७०.१९४
प्रजाः सृजेति व्यादिष्टो १.७०.३०३
प्रजाः स्रंष्टुमनाश्चके १.२२.१७
प्रजाकामः शिलादोभूत् १.३७.२
प्रजापतिर्यदा व्यासः १.२४.१७
प्रजापतिसुतावुक्तौ १.६०.५
प्रजापतीनां दक्षं च १.५८.४
प्रजापतीनां पतये १.२१.२०
प्रजापतीनां सर्गश्च १.२.८
प्रजापतेर्मखे पुण्ये १.३६.७४
प्रजापतेश्च रुद्रस्य १.४६.४९
प्रजास्ता वै ततः सर्वाः १.४०.६५
प्रजास्तृप्ता सदा सर्वाः १.३९.१५
प्रजीवत्येति वै स्वर्गं १.६८.५१
प्रणम्य नंदिनं मूर्ध्ना १.७१.१४४
प्रणम्य प्रयतो भूत्वा १.२३.४९
प्रणम्य भगवान् विष्णुः १.१७.८२
प्रणम्य विष्णुं तत्रस्थं २.३६.८
प्रणम्य संस्थितोऽपश्यद् १.२२.२७
प्रणम्याहुस्तु तत्सर्वे १.१०७.२१
प्रणयत्कुंडमध्ये च २.४४.२
प्रणवं हृदयं विद्या. १.८५,७५
प्रणवप्रणवेशाय १.२१.५६
प्रणवादिनमोंतानि १.७७.८९
प्रणवेन क्षिपेत्तेषु १.२७.१२
प्रणवेनाथ साम्ना तु १.२०.९६
प्रणवेनैव गव्यैस्तु १.२७.३३
प्रणवेनैव मंत्रेण १.२७.५२
प्रणवो वाचकस्तस्य २.९.५०
प्रणश्यंति ततः सर्वे १.३९.२५
प्रणामपूर्वं क्षान्त्या वै २.४.१०
प्रणिपत्य यथान्यायं २.३.१२
प्रणिपत्य यथान्यायं २.३.३२
प्रणिपत्याग्रतस्तस्थौ २.३९.८
प्रणीतापात्रमादाय २.२५.१७
प्रणेमुर्देवमीशानं २.५५.३८
प्रणेमुस्तुष्टुवुश्चैव १.८०.५३
प्रतिकार्यं तथा बाह्यं २.५२.६
प्रतिद्वीपे मुनिश्रेष्ठाः १.५१.३१
प्रतिपन्नं जनानंदं २.२०.२२
प्रतिमां च हरेर्नित्यं २.४.१२
प्रतिमां च हरेश्चैव २.३.३६
प्रतिष्ठां लिंगमूर्तेर्वो २.४७.५
प्रतिष्ठा च निवृत्तिश्च २.२१.६५
प्रतिष्ठा चैव पूजा च २.४८.३८
प्रतिष्ठा धर्मराजस्य १.६५.३०
प्रतिष्ठाप्य ततः स्नाप्य १.८४.५८
प्रतिष्ठाप्य यथान्यायं १.३१.१७
प्रतिष्ठाप्य यथान्यायं १.८४.८
प्रतिष्ठाप्य यथान्यायं १.८४.३७
प्रतिष्ठितासु सर्वासु १.६३.४३
प्रतिसर्गं प्रसूतानां २.९.४६
प्रतीतहृदयः शर्व० १.१२.६
प्रतोदो ब्रह्मणस्तस्य १.७२.२०
प्रत्यंडं द्विजशार्दूला १.५३.४९
प्रत्यंतानुपसेवते १.४०.६९
प्रत्यग् भवति तच्छक्तिः १.८५.२०९
प्रत्यङमुखस्य देवस्य २.२५.१००
प्रत्ययार्थ हि जगता० १.७५.२५
प्रत्याहारः पंचमो वै १.८.९

प्रत्याहाररतानां च १.७२.१४८
प्रत्युवाचांबुजाभाक्षं १.२०.४३
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च १.६३.२०
प्रत्येकं पंचकान्याहु० १.५३.४६
प्रत्येकमश्वमेधेन २.१.७
प्रथमं तस्य वै जज्ञे १.५.५
प्रथमः संप्रयोगात्मा १.७०.२७३
प्रथमः सांप्रतस्तेषां १.७०.११०
प्रथमाख्यं प्रवक्ष्यामि २.२७.१६४
प्रथमायाः समाख्यातो २.२७.१७२
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.३१
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.७१
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.१३७
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.१५७
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.१६१
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.१८४
प्रथमावरणं प्रोक्तं २.२७.२१७
प्रथमावरणं चाष्टौ २.२७.९५
प्रथमावरणे चैव २.२७.५१
प्रथमावरणे चैव २.२७.९१
प्रथमावरणे प्रोक्ता २.२७.११९
प्रथमावरणं प्रोक्ता २.२७.१३३
प्रथमाश्रमिणे भक्त्या १.८४.४३
प्रदक्षिणं ततः कुर्याद् १.२५.२८
प्रदक्षिणक्रमपादेन २.२४.३९
प्रदक्षिणात्रयं कुर्याद् १.७७.६५
प्रदक्षिणीकृत्य च तं १.४३.१७
प्रदक्षिणीकृत्य च तां १.१०२.४
प्रददौ चेप्सितं सर्वं १.२९.६२
प्रददौ दर्शनं तस्मै १.६३.३
प्रददौ दर्शनं देवो १.१४.९
प्रदीपितमहाशालं १.१००.३४
प्रद्युम्नो ह्यनिरुद्धश्च २.४८.३०
प्रधानं कुंडमीशान्यां २.४७.२४
प्रधानं पूर्ववद्द्रव्यै. २.२७.२५५
प्रधानं प्रकृतिश्चेति १.३.२
प्रधानगुणवैषम्यात् १.७०.८४
प्रधानव्यक्तयोः कालः २.१६.५
प्रधानसहितं देवं २.२१.२५
प्रधानावयवं व्याप्य १.१.२३
प्रनष्टचेष्टनाः पुंसो १.४०.३३
प्रनष्टा मधुना सार्धं १.३९.३१
प्रपंचजातमखिलं २.१५.२०
प्रफुल्लनानाविधगुल्म० १.९२.१२
प्रफुल्लांबुजवृन्दाद्यै० १.८०.३३
प्रबुद्धस्तु द्विजो यस्तु २.२०.३७
प्रबुद्धोहीयशयनात् १.१७.१६
प्रभवे चापरार्धस्य १.२१.१४
प्रभावर्ती ततः शक्ति० २.२२.७२
प्रभावात्मा जगत्कालः १.६५.१३४
प्रभावाद्देवदेवस्य १.३६.४५
प्रभावो नंदिनश्चैव २.२७.१
प्रभासो विलयश्चैव १.६९.९३
प्रभासः पर्वतो वायु. १.६५.१२७
प्रभासतीर्थमासाद्य १.२४.१२२
प्रभासे पुष्करेऽवंत्यां १.७७.४०
प्रभुं तत्पुरुषं देवं २.१४.२७
प्रभुर्लोकहितार्थाय १.७०.१२९
प्रभूतं विमलं सार० २.२२.४१
प्रभूते विमले सारे २.१९.१८
प्रमदाः केशशूलिन्यो १.४०.२६
प्रमाणभूतो दुर्ज्ञेयः १.९८.५६
प्रमोदाय समोदाय १.२१.५५
प्रम्लोचा चैव विख्याता १.५५.५४
प्रयत्नाद्वा तयोस्तुल्यं १.८.११५
प्रयागे वा भवेन्मोक्ष० १.९२.४८
प्रयाणं कुरुते तस्माद् १.८.६३
प्रलयस्थितिसर्गाणां १.१९.११
प्रलये समनुप्राप्ते १.८५.७
प्रलुप्तश्मश्रुकेशश्च १.६९.७५
प्रवक्ष्यामि धरेशान् वो १.४६.१५
प्रवर्तकं जगत्यस्मिन् १.७१.११०
प्रवालं कारयेद्विद्वान् २.३३.३
प्रविलीनो महान्सम्यक् २.५५.२०
प्रविवेश तदा चैव १.१००.३३
प्रविवेश समीपं वै २.१.७३
प्रविशंति महादेवं १.१३.२१
प्रविशामि तथा तत्र २.६.१६
प्रविश्य तत्पुरं तेन १.७१.८२
प्रविश्य लोकान् पश्यैता० १.२०.२७
प्रविश्य सुमहातेजा० १.२०.२१
प्रविष्टाः पावकं विप्राः १.६९.९०
प्रवृत्तचक्रो बलवान् १.४०.५६
प्रवृत्तनृत्तानुगताप्सरोगणं १.९२.१७
प्रवृत्तिलक्षणं ज्ञानं १.२.२६
प्रवृत्तिलक्षणंज्ञानं १.२९.७
प्रसंगाच्चैव संपूज्य १.७९.४
प्रसंगाद्देवदेवेशे २.६.८२
प्रसंगाद्वापि यो मर्त्यः १.७८.२३
प्रसंगाद्वारमेकं तु १.७७.५९
प्रसन्नं च यदेकाग्रं १.८६.१००
प्रसन्नं वामदेवाख्यं २.१९.११
प्रसन्ना विपुलान् भोगान् १.८५.१२४
प्रसन्ने विमला मुक्ति. १.९.५६
प्रसर्गकाले स्थित्वा तु १.७०.६०
प्रसह्य सोममपिबत् २.५१.११
प्रसह्यास्मांस्तु गायेत २.१.३३
प्रशस्ता तव कांतेयं १.५.३२
प्रशांतः स वनस्थोऽपि १.६८.३५
प्रसाद इति संप्रोक्तः १.८.६१
प्रसादस्य स्वरूपं यत् १.८.४
प्रसादाच्चैव देवस्य १.६९.५४
प्रसादाज्जायते ज्ञानं १.७.४
प्रसादात्तस्य देवस्य २.४५.९३
प्रसादाद्देवदेवस्य १.८७.१८
प्रसादाद्ब्रह्मसूनोर्वै १.६५.४६
प्रसादाद्भगवञ्छंभो० १.५८.१६
प्रसादाद्यदि विज्ञानं १.७.५
प्रसादाद्वैष्णवं चक्रे १.६४.१२१
प्रसादान्नंदिनस्तस्य २.२८.१३
प्रसादामृतपूर्णेन १.९.६५
प्रसादेन क्षणान्मुक्तिः १.८७.१६
प्रसादेनैव सा भक्ति० १.३०.३३
प्रसीद क्षम्यतां सर्वं १.१००.४१
प्रसीदति न संदेहो १.१०.३०
प्रसीदति न संदेहो १.१.३२
प्रसीद त्वं जगन्नाथ १.३६.११

प्रसीद देवदेवेश १.६२.३३
प्रसीद देवदेवेश १.७२.१२२
प्रसीद देवदेवेश १.१०७.६३
प्रसीद देहि मे सर्वं १.३७.२४
प्रसीद परमेशाने १.३६.७१
प्रसीद लोकनाथेश २.५.३३
प्रसूतिः सुषुवे दक्षा. १.५.२०
प्रस्कंदोप्यविभावश्च १.६५.८७
प्रस्थानादिकमायासं १.२९.८०
प्रहसंती यथायोगं २.३.९७
प्रहिणोति स्म तस्यैव २.१८.३३
प्रहृष्टोऽभूत्ततो रुद्रः १.४१.५०
प्रह्लादजीविते वांछा १.९५.९
प्रह्लाद वीर दुष्पुत्र १.९५.७
प्रह्लादः पूजयामास १.९५.१०

प्रा

प्राकामान् विषयान् भुंक्ते १.८८.२०
प्राकारागारविध्वंसा २.६.४५
प्राकारैर्विविधाकारै. १.८०.२६
प्राकृतः कथितस्त्वेष १.३.३९
प्राक्शिरस्कं न्यसेल्लिंग. २.४७.२७
प्राक्सर्गे दह्यमाने तु १.७०.१३३
प्रागाद्यं दक्षिणाद्यं च २.२७.१७
प्रागाद्यं देवकुंडे वा २.२७.२४०
प्रागाद्यं वर्णसूत्रं च २.२७.१४
प्रागाद्यं विधिना स्थाप्य २.२७.६४
प्रागाद्यं स्थापयेच्छंभो. २.४८.४६
प्रागायताः सुपर्वाणाः १.४९.१७
प्रागायतेन विप्रेंद २.२५.७
प्रागुक्ता तु महादेवी १.७०.३२७
प्रागुदकप्रवणे देशे १.९१.४०
प्राङ्मुखो दक्षिणास्यातु १.५२.२
प्राङ्मुखोदङ्मुखो वापि १.८५.६६
प्राङ्मुखो नियतो भूत्वा १.६२.२२
प्राचीं वा यदि वोदीचीं १.९१.३७
प्राच्यालोक्याभिवंद्येशां १.२६.५
प्राजापत्यं पवित्रं च २.१८.९
प्राजापत्याद् ब्रह्मलोकः १.५३.४३
प्राजापत्यं तथा ब्राह्मे १.८६.२७
प्राजापत्ये त्वहंकारं १.९.२५
प्राजापत्येन कृच्छ्रेण १.९०.२२
प्राणः प्राणेशजीवेशौ १.८२.४८
प्राणः स्वदेहजो वायु. १.८.४५
प्राणरूपी तथा हंसः २.२७.९९
प्राणांस्तस्य ददौ भूय. १.२२.२६
प्राणाः प्राणवतां ज्ञेयाः १.२२.२५
प्राणाद्ब्रह्मासृजद्दक्षं १.७०.१८६
प्राणाद्यैश्चैव संयुक्ता १.८६.६५
प्राणाधिपतये रुद्राय १.४५.७४
प्राणानां ग्रंथिरस्यात्मा १.८८.८५
प्राणापाननिरोधस्तु १.८.४६
प्राणायामत्रयं कृत्वा २.२३.३
प्राणायामपरः श्रीमान् १.१४.७
प्राणायामसमायुक्तं १.९०.८
प्राणायामाद्भवेत्क्षिप्रं १.८५.१०५
प्राणायामेन शुद्धात्मा १.९०.२०
प्राणायामैः समायुक्तैः १.७३.१२
प्राणा वै जगतामापो १.५४.३५
प्राणे निविष्टो वै रुद्र० १.८८.८६
प्राणेभ्यो निशि जन्मानो १.७०.२१९
प्राणेशे बंधकीवृक्षो १.६५.१३२
प्राणेष्वंतर्मनसो लिंगमाहु. १.१८.४०
प्रातर्मध्याह्नसावाह्ने २.२२.२३
प्रादात्स दशकं धर्मे १.६३.१२
प्रादुरासंस्तदा तासां १.३९.२२
प्रादुरासीत्तदा व्यक्ता. १.७०.१५३
प्रादुरासीत्सुरेशारि. २.५१.१३
प्रादुर्बभूव स महान् १.३.१५
प्रादुर्भूतानि चैतानि १.३९.४१
प्रादुर्भूता महानादा १.१६.३
प्रादेशं वा चतुर्मात्रं २.२८.४४
प्राप्तिस्तथोतरं पत्रं १.२७.२६
प्राप्तिव्यूहः समाख्यातः २.२७.११३
प्राप्तो वनमिदं ब्रह्मन् १.६२.१६
प्राप्नुयात्परमं स्वर्गं १.७१.८७
प्राप्नोति परमं स्थानं २.७.३२
प्राप्नोति विष्णुसायुज्यं २.२.८
प्राप्यतेऽभिमतान्देशा. १.८९.३०
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.९०
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.९४
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.९९
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.११
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.११७
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.१२०
प्राप्य माहेश्वरं योगं १.२४.१२४
प्राप्य योगगतिं सूक्ष्मां १.२४.२६
प्राप्यानुज्ञां ततश्चैव १.८९.६
प्रायशश्चंद्रयोगीनि १.६१.३६
प्रायश्चितं प्रवक्ष्यामि १.८५.२११
प्रायश्चित्तमघोरेण २.२५.१०४
प्रायश्चित्तमघोरेण २.२७.२५७
प्रार्थनायोनिजस्याथ १.२.१३
प्रार्थितश्च महादेवो १.५३.१२
प्रावर्तत नदी पुण्या १.४३.४७
प्रासादशृंगेष्वथ पौरनार्यः १.८०.१८
प्रासादस्य प्रतिष्ठायां १.४८.४४
प्रासादैर्गोपुरैर्दिव्यैः १.७१.२७
प्राह गंभीरया वाचा १.७१.११७
प्राह देववृषं ब्रह्मा १.१६.२३
प्राहिणोति स्म तस्यैव १.९९.९
प्राहुः क्षेत्रज्ञशब्देन २.१५.१४
प्राहुस्तत्पुरुषं देवं २.१४.२२

प्रि-प्रो

प्रियं भवद्भ्याम् कृतवान् २.५.१२८
प्रियं हि कृतवानद्य २.५.१२२
प्रियदर्शनास्तु यतयो १.२०.८४
प्रियदुःखमहं प्राप्ता १.६४.३६
प्रियव्रतात्मजा वीरा. १.४६.१७
प्रीता बभूवुर्मुक्ताश्च १.८७.१३
प्रीतिं पुलस्त्यः पुण्यात्मा १.५.२५
प्रीतितापविषादेभ्यो १.१०.२७
प्रीतिश्च विपुला यस्मा० २.५५.४५
प्रीतो भवति यो दृष्ट्वा २.४.७
प्रीतोऽहमनया भक्त्या १.२२.८
प्रीत्या प्रणम्य पुण्यात्मा १.४२.२६
प्रोक्षणी द्व्यंगुलोत्सेधा २.२५.४४
प्रोक्षणीपात्रमादाय २.२५.१५
प्रोवाच को भवाञ्छेते १.२०.१२
प्रोवाचेदं दितेः पुत्रान् १.९७.७

प्ल

प्लक्षद्वीपादिद्वीपेषु १.५३.१
प्लक्षद्वीपादिवर्षेषु १.४६.४६
प्लक्षद्वीपे तु वक्ष्यामि १.५३.२

प्लक्षो दार्भायणिश्चैव १.२४.१०२
प्लावयेच्च कुशाग्रं तु २.२५.१६

फ

फडंतं संहृतिः प्रोक्ता २.२१.६१
फलपुष्पसमाकीर्णं २.२८.४८
फलहारी जीवहारी २.२७.१४३
फलार्णवं च बालस्य १.१०७.५२
फाल्गुनीषु समुत्पन्नः १.६१.४४
फुल्लातिमुक्तकलता १.९२.२७
फुल्लोत्पलांबुजवितान० १.९२.२२

ब

बंधनं परिपूर्णेन २.२१.६४
बंधनस्तु सुरेंद्राणां १.६५.८६
बंधमोक्षकरो यस्मा० १.३५.२५
बंधमोक्षौ न चैवेह १.८७.४
बद्धपद्मासनासीनं २.२३.८
बध्वा पद्मासनं तीर्थे २.२२.३१
बभूव तस्मिस्तद्राज्यं १.४७.२५
बभूव पार्वती देवी १.९९.१७
बभ्रुः श्रेष्ठो मनुष्याणां १.६९.७
बर्हिध्वजा शूलधरा १.७०.३३७
बलं तेजश्च योगं च १.१०२.३९
बलप्रमथनायैव १.१६.१३
बलभद्रोपि संत्यज्य १.६९.८८
बलवांश्चोपशांतश्च १.६५.१२९
बलविकरिणीं देवीं १.४१.४६
बलाद्विष्णुस्तदा यज्ञ० १.३९.५२
बला प्रमथिनी देवी २.२७.२७
बलाबलसमूहाय १.२१.२५
बलाबला च विप्रेंद्रा १.६३.७०
बलिना दैत्यमुख्येन १.९४.६
बलिभिः पुष्पधूपैश्च २.६.८०
बहव; शतशोभ्येत्य १.९२.१११
बहिरेव गृहात्पादौ १.२६.३४
बहुधा लिंगभेदाश्च १.७४.१९
बहुना किं प्रलापेन १.३०.२९
बहुना किं प्रलापेन १.३४.२८
बहुनात्र किमुक्तेन १.२९.६५
बहुनात्र किमुक्तेन १.७४.१२
बहुनात्र किमुक्तेन १.१०७.४०
बहुमानेन वै रुद्रं २.८.१०
बहुमालो महामालः १.६५.१
बहुयाजनको लोके १.४०.३
बहुलश्चंद्र इत्येष १.६१.४
बहुला कदली यत्र २.६.५
बहुश्रुतो बहुमयो १.९८.७०

बा

बाणस्य च तदा तेन १.६९.७९
बाधितास्ताडिता बद्धा १.९३.६
बाधितास्तेन ते सर्वे १.१०६.५
बालक्रीडनकैर्देव १.२०.७१
बालभावे च भगवान् १.९७.२२
बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये २.१८.३४
बालानां प्रेक्षमाणानां २.६.४२
बालेंदुमुकुटं चैव १.२७.२०
बालेंदुशेखरो वायुः २.११.१०
बालोपि मातरं प्राह १.१०७.१७
बाल्यात्तु लोष्टेन शिवं १.७७.५
बाष्कलश्च महायोगी १.२४.४२
बाष्कलेनैव मंत्रेण २.२२.७३
बाहुद्वयं च पश्यामी. २.५.१०५
बाहुस्वनिदितः सर्वः १.६५.१२४
बाह्यं चाभ्यन्तरं प्रोक्त० १.५४.१६
बाह्यशौचेन युक्तः सं० १.८.३२
बाह्ये चास्यांतरे चैव १.७३.२१

बि

बिभर्ति क्षेत्रतां देवी २.११.३४
बिभर्ति मानं मनुते १.७०.१५
बिभीषणोतिशुद्धात्मा १.६३.६६
बिभेमीति सकृद्वक्तुं १.३६.४३
बिभ्रतो वामहस्तेन १.७६.४३
बिलं सुवर्तितं कुर्या० २.२५.३३
बिल्वपत्रे स्थिता लक्ष्मी० १.८१.२९
बिल्वाश्वत्थपलाशाद्याः २.२८.२५

बी

बीजं योनिश्च निर्बीजं १.३.९
बीजं शक्तिं स्वरं वर्णं १.८५.४१
बीजपूरवने पुण्ये १.४९.६३
बीजयोनिगुणा वस्तु० १.८९.२६
बीजी च बीजं तद्योनि० १.१७.६४

बु

बुद्धिं लज्जां वपुः शांतिं १.५.२१
बुद्धिं सूते नियोगेन २.१०.८
बुद्धिपूर्वं भगवता १.६१.५९
बुद्धिमोहं तथाभूतं १.७१.९२
बुद्धिर्लज्जा वपुःशांतिः १.७०.२८५
बुद्धिर्विवेचना वेद्यं १.९.१७
बुद्धिस्त्वं सर्वलोकाना. १.१०२.४३
बुद्धेरेते द्विजाः संज्ञा १.८.६९
बुद्ध्याश्च समकाले वै १.७०.१४०
बुद्ध्वैद्रं सह देवैश्च १.४४.१२
बुधेन तानि तुल्यानि १.५७.१६
बुधेनांतरमासाद्य १.६५.२४
बुधैरीशेति सा तस्य २.१३.२३
बुध्यते पुरुषश्चात्र १.७०.१८

बृ-बौ

बृहज्ज्योतिः सुधामा च १.९८.१००
बृहत्तेजाः स्मृतो देवो १.६१.१८
बृहत्वात् बृहणत्वाच्च १.७०.१६
बृहद्रथो भीमकर्मा १.२१.८०
बृहस्पतेः पादहीनौ १.६१.३४
बृहस्पतेः शुभा कन्या १.६३.६०
बोद्धव्यं वस्तुरूपं च २.११.३०
बौद्धं वा बिंबमासाद्य २.६.५५

ब्र

ब्रह्म एवं हि सेवेत १.८८.३४
ब्रह्मकूर्चेन वा मध्य० २.२७.२३७
ब्रह्मक्षत्रविशो यस्माद् १.१०.७
ब्रह्मगर्भो बृहद्गर्भो १.९८.९८
ब्रह्मघ्नश्च जपेदेवं १.१५.१४
ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्च १.६५.७३
ब्रह्मचारिगृहस्थानां १.८५.५५
ब्रह्मचारिगृहस्थानां १.८५.६०
ब्रह्मचारी लोकचारी १.६५.९६
ब्रह्मजज्ञानमंत्रेण २.४७.३१
ब्रह्मणः परमं ज्ञान० १.२.४०
ब्रह्मणः सा तनुः पूर्वा १.७०.२६९
ब्रह्मणश्च तथान्येषां १.९४.३१
ब्रह्मणश्चाक्षसूत्रं च १.८४.६०
ब्रह्मणस्तदहः प्रोक्तं १.४०.८७

ब्रह्मणस्तूदरे दृष्ट्वा १.२०.२२
ब्रह्मणा कथितं पूर्वं १.८९.२
ब्रह्मणा चापि संगृह्य १.९२.७३
ब्रह्मणा मुनिभिः सार्धं १.१०३.५३
ब्रह्मणे ब्रह्मरूपाय १.९५.५२
ब्रह्मणो जनकं विष्णो. २.१८.४२
ब्रह्मणोऽधिपते तुभ्यं १.१६.८
ब्रह्मणो वासुदेवाख्यां २.३.११०
ब्रह्मण्या ब्रह्मणस्तुल्या १.१२.१०
ब्रह्मत्वे सृजते लोकान् १.७०.९१
ब्रह्मपुत्राय शिष्याय २.४९.१७
ब्रह्मपुत्रो महातेजा १.३५.३
ब्रह्मब्रह्मणवृद्धाय २.४४.४
ब्रह्मयज्ञादाय स्नानं १.२६.३३
ब्रह्मयज्ञेन तुष्यंति १.२६.२१
ब्रह्मर्षि ब्रह्मसंकाश. २.६.७५
ब्रह्मर्षेर्वचनात्तस्य १.६३.७३
ब्रह्मलोके पुरासौ हि १.३५.१०
ब्रह्माविष्णुमहेशानां १.४८.१९
ब्रह्मविष्णुविवादश्च १.२.१२
ब्रह्मविष्ण्वींद्रचंद्रादि १.९६.१०८
ब्रह्मसिद्धिमवाप्नोति १.८५.२२६
ब्रह्मास्थानमिदं चापि १.१६.२५
ब्रह्मस्वहा तथा गोघ्नो १.१५.२९
ब्रह्महत्यादिकान् घोरां० १.१५.३
ब्रह्महत्यादिभिः पापै० १.७७.५४
ब्रह्महत्याविशुद्ध्यर्थं १.८५.२१७
ब्रह्महत्यासमं पाप० १.७८.१८
ब्रह्मांगविग्रहं देवं २.२३.१२
ब्रह्मांडधारका रुद्राः १.८२.१०९
ब्रह्मांडानि भविष्यति २.१०.४७
ब्रह्मा कर्मलगर्भाभो १.७०.९२
ब्रह्मा च इंद्रो विष्णुश्च १.९६.१०९
ब्रह्माणं दक्षिणे तस्य १.७६.६१
ब्रह्माणं दक्षिणे भागे २.१९.१७
ब्रह्माण दक्षिणे वामे २.२८.६४
ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा १.२१.१
ब्रह्माणी चैव माहेशी १.८२.९६
ब्रह्माण्येव समासेन २.४७.३७
ब्रह्मादयः सुराः सर्वे २.३.१६
ब्रह्मादयः सुराः सर्वे २.११.३७
ब्रह्मादींस्तर्जयंतस्ते २.१.७१
ब्रह्मादीनां च देवानां १.३१.३५
ब्रह्मा दृष्ट्वाऽब्रवीदेनं १.७०.३१४
ब्रह्माद्यं स्थावरांतं च १.९.६०
ब्रह्माद्याधोरणैर्दिव्यै. १.८२.३४
ब्रह्माद्यास्तुष्टुवुः सर्वे १.४२.१९
ब्रह्माधिदैवतं छंदो १.८५.५२
ब्रह्मा परमसंविग्नो १.१०२.४०
ब्रह्मा ब्रह्मत्वमापन्नो २.२७.२७३
ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवा० २.५५.३९
ब्रह्मा हरिश्च रुद्रश्च १.४२.२१
ब्रह्मा हरोपि सावित्री २.११.७
ब्रह्मेंद्रविष्णुरुद्राणां १.५०.१६
ब्रह्मेंद्रविष्णुरुद्राद्यै. १.२७.५०
ब्रह्मेंद्रविष्णुरुद्राद्यैः १.६४.८८
ब्रह्मेंद्रविष्णुसोमाद्यैः १.७६.२४
ब्रह्मैकस्त्वं द्वित्रिधार्थ० २.१८.५
ब्रह्मोपेतश्च रक्षेंद्रो १.५५.३७
ब्रह्माणं कल्पसूत्राणि १.३९.६०
ब्रह्माणं क्षत्रियं वैश्य २.२०.४५
ब्राह्मणप्रमुखा वर्णाः १.६७.१
ब्राह्मणादीश्च वर्णांश्च २.५.४६
ब्राह्मणानां सहस्रं च १.८४.४२
ब्राह्मणानां सहस्रं च २.५४.६
ब्राह्मणान् भोजयित्वा च १.८३.३४
ब्राह्मणान् भोजयित्वा च १.८३.३९
ब्राह्मणान् भोजयित्वा च १.८४.४
ब्राह्मणान् भोजयित्वा च १.८४.४८
ब्राह्मणान् भोजयित्वा च १.८४.६४
ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु १.८३.२६
ब्राह्मणान् भोजयेच्चैव १.८३.२९
ब्राह्मणान् भोजयेत्तत्र १.७७.९०
ब्राह्मणान् नरा मूढा २.६.३७
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता २.५२.५
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः १.१०५.२४
ब्राह्मणैः पूज्यमाना वै २.७.२२
ब्राह्मणैः सहितां स्थाप्य १.८४.३८
ब्राह्मणो विष्णुभक्तश्च २.३.३०
ब्रूहि मंत्रमिमं दिव्यं १.६२.२०

भ

भक्तोसौ नास्ति यस्तस्मा. १.२८.२७
भक्त्या एव मुनीनां च १.१०.३७
भक्त्या च तृष्टयाद्भव-
दर्शनाय १.७२.१५३
भक्त्या च योगेन
शुभेन युक्ता १.७५.३८
भक्त्या परमया नित्यं १८२.२२
भक्षितः स इति श्रुत्वा १.६४.४
भक्षितो रक्षसा मातुः १.६४.६८
भक्ष्यं चान्यत्तथा पेयं १.८५.१९५
भक्ष्यभोज्यादिभिश्चैव १.७२.४८
भगद्रावं करोत्यस्मात् २.६.७४
भगवंस्तारको नाम १.१०१.१८
भगवञ्शक सर्वज्ञ १.३९.२
भगवन् केन मार्गेण २.१९.२
भगवन्देवतारिघ्न १.३७.५
भगवन्देवदेवेश १.२४.२
भगवन्देवदेवेश १.४२.९
भगवन्देवदेवेश १.४४.१०
भगवन्देवदेवेश १.७२.१७१
भगवन्देवदेवेश १.८५.५
भगवन्देवदेवेश १.९३.२४
भगवन्देवदेवेश १.९८.८
भगवन्नंडयोनित्वं १.३७.१३
भगवन् ब्राह्मणः कश्चिद् १.३६.२२
भगवन् ब्राह्मणश्रेष्ठ १.६४.११
भगवन् भवता लब्धं १.३६.४९
भगवन् रक्षसा रुद्र १.६४.७९
भगवानपि तं दृष्ट्वा १.७१.४३
भगवानादिरंतश्च १.२०.२५
भगवान् भगवद्भावा० १.७०.९८
भगहरी नियंता च १.६५.९८
भजनाश्चैव माल्याश्च १.५९.२५
भजस्व धात्री जगतां १.५.३१
भजस्व सर्वभावेन २.१३.३०
भजस्व सर्वभावेन २.१६.३१
भद्रकाल्या मयोक्तानि १.७०.३४०
भद्रतोयं च पश्येह १.९२.७१
भद्रमाह महातेजाः १.१००.४०

भद्रश्रेण्यस्य दायादो १.६८.७
भद्रहा विश्वहारी च २.२७.९६
भद्राभद्रपदा देवी १.८२.८९
भद्रामाग्नेयचक्रे तु २.२७.५३
भद्रायां जनयामास १.६३.७४
भ्रदाश्वस्य घृताच्यां वै १.६३.६९
भद्रो नाम गणस्तेन १.१००.३
भयं दधीच सर्वत्र १.३६.४२
भयात्तस्मान्महाभाग १.१०१.१९
भयादेवं निरीक्ष्यैव १.७२.११८
भर्ता एव न संदेह. १.७१.८६
भर्ता गतो महाबाहो २.६.८३
भर्ता हर्ता भवानंगा० १.१७.२३
भर्त्रा न्यमीलयन्नेत्रे १.२९.५६
भल्लावी मधुपिंगश्च १.२४.१०६
भल्लावी मधुपिंगश्च १.७.४८
भवंतं तत्त्वमित्यार्या. १.७१.१०५
भवंतमवहद्विष्णु. १.३७.२३
भवति दुःखिताः सर्वे १.७८.२४
भवंतोऽप्यनुजानंतु १.६७.८३
भवःसुधामृतोपमै. १.१०.५
भवइत्युच्यते देवो २.१३.५
भवक्षेत्रे सुगुप्ते वा १.८.८२
भवतीं प्रार्थयाम्यद्य १.१६०.९
भवतीह कलौ तस्मि. १.४०.७
भवत्यद्भुत दृष्ट्वा १.२०.५९
भवत्यस्माज्जगत्कृत्स्नं १.६०.६
भवनशतसहस्रै. १.८०.७
भवप्रसादजं सर्वं १.१०७.१४
भवप्रसादादागत्य १.६५.१०
भवभक्तो भवांश्चैव १.१.१५
भवभक्त्याद्य दृष्टोहं १.१०.५०
भवंस्मरणोद्युक्ता १.७३.२४
भवस्य दर्शनं चैव १.२.१४
भवस्यैतच्छुभं चक्रं १.३६.५०
भवात्मकं जगत्सर्वं १.५४.३७
भवानग्रे समुत्पन्नो १.१०३.३९
भवानहं च स्तोत्रेण १.२०.६६
भवानी च तमालोक्य १.८७.१२
भवानीशोऽनादिमांस्त्वं १.२१.८५
भवानूर्द्ध्वं प्रयत्नेन १.१७.३७
भवानेव जगत्सर्वं १.९५.२८
भवान्कथमनुप्राप्तो १.३७.१
भवान्न नूनमात्मानं १.२०.६७
भवान्याश्चैव सायुज्यं १.८४.४६
भवान् योनिरहं बीजं १.२०.७४
भवान् विष्णुर्भवान् रुद्रो १.९५.२७
भवान् विप्रस्य रुपेण १.३६.३६
भवान् सर्वस्य लोकस्य १.२२.१२
भवान् सर्वार्थतत्त्वज्ञो २.४६.७
भवितो तस्य शापेन १.३६.३०
भविष्यं नारदीयं च १.३९.६२
भविष्यंति महात्मानो १.२४.७९
भविष्यंति महाभागा० १.२४.३३
भविष्यंति महायोगा १.२४.४१
भविष्यति महावीर्यं १.२४.६९
भविष्यसि विमूढस्त्वं १.२०.९२
भविष्यसि कलौ तस्मिन् १.२४.१८
भविष्यामि च लोकेऽस्मिन् २.१७.११
भविष्यामि शिखायुक्तः १.२४.१३
भवे भक्तिर्न संदेह० १.१०.३१
भवे भवे नातिभवे २.२७.२४९
भवेद्यज्ञविशेषेण १.८५.१२३
भवेद्योगोऽप्रमत्तस्य १.९०.४
भवोद्भवस्तपश्चैव १.४.४५
भवोपि बालरूपेण १.१०६.२१
भवोपि भगवान्देव० १.३७.४०
भवोप्यनेकैः कुसुमैर्गणेशं १.७२.४९
भसितं च मृणालेन २.२७.२४२
भस्मैश्छन्नैः स्वयंछन्नो २.१८.६४
भस्मदिग्धशरीरस्य १.१८.१३
भस्मना कुरुते स्नानं १.३४.१८
भस्मना शुध्यते कांस्यं १.८९.५८
भस्मनोद्धूलनं कृत्वा १.१०८.७
भस्मपांडुरदिग्धांगा १.३४.२६
भस्ममिश्रांस्तथांगारान् २.२५.१९
भस्मव्रताश्च मुंडाश्च १.३३.९
भस्मशायी भवेन्नित्यं १.८९.२२
भस्मशायी भस्मगोप्ता १.६५.११७
भस्मसाद्विहितं सर्वं १.३४.३
भस्मस्नानरतो विप्रो २.१८.५८
भस्मस्नानविशुद्धात्मा १.३४.१०
भस्मस्नानेन दिग्धांगो १.३४.१६
भस्मस्नायी भवेन्नित्यं १.८८.९२
भस्मांगारांश्च केशांश्च १.९१.१९
भस्मा कांता तथा वृष्टि. २.२७.२२७
भस्माधारान्महातेजा १.१०७.४६
भस्मीभूतविनिर्माणं १.९.३८

भा

भागीरथीं समेष्यंति १.९२.१३१
भाग्यवंतश्च दैत्येंद्रा १.७१.१३७
भाति मध्ये गणानां च १.७२.८७
भातिर्दीप्तो निगदितः १.७०.२२२
भातींद्रधनुषाकाशं १.७२.९१
भानुं दक्षिणतो देवं २.१९.१४
भानुना शशिना लोक. १.२८.१७
भानुसोमाग्निनेत्राय १.१०४.२०
भानोर्गतिविशेषेण १.६१.५६
भानोस्तु भानवः प्रोक्ता १.६३.१७
भारद्वाजो गौतमश्च १.५५.२७
भार्गवात्पादहीनस्तु १.५७.१४
भार्यया त्वनया सार्धं १.२९.५९
भार्यामार्यामुमां प्राह १.६४.८८
भार्येयं भगवन्मह्यं २.६.१५
भावं भावेन देवेशि १.१०.५१
भावदुष्टोंभसि स्नात्वा १.२५.१०
भावयोगः समाख्यात. २.५५.१३
भावयोगस्तृतीयः स्या. २.५५.८
भावाभावो हि लोकाना. १.६०.९
भाविनी च प्रजा विद्या २.२७.१९२
भाविनोर्थस्य च बलात् १.४०.७५
भाषसे पुरुषश्रेष्ठ १.२०.४२
भासतेत्येव यद्भस्म १.३४.५
भास्करं च तथा सोमं १.७६.५७
भास्करादीनां देवानां २.४७.४८
भास्कराभिमुखाः सर्वा २.२२.४५

भि

भिक्षुश्च भिक्षुरूपी च १.६५.८९
भिन्दन्नुरसि बाहुभ्यां १.९६.७२
भिन्नभांडे च रथ्यायां १.८५.१४४

भिषक्तमाय मुंडाय १.९६.८९

भी

भीमः सुषिरनाकेसौ १.८६.१३०
भीमश्चावनिमध्यस्थो १.७०.५८
भीम सुषिरं मे गोपाय २.४५.४६
भीम सुषिरं मे गापाय २.४५.४७
भीम सुषिरं मे गोपाय २.४५.४८
भीम सुषिरं मे गोपाय २.४५.४९
भीमस्य सा तनुर्ज्ञेया २.१३.२४
भीमा भीमतरा भीमा २.२७.१७०
भीमाय भीमरूपाय १.९५.४७
भीमास्या जालिनी चोषा २.२७.८३

भु

भुंक्ष्व चैनां यथाकामं १.२९.६१
भुंक्ष्व भोगान्यथाकामं १.१०७.५४
भुजत्रारायणं विप्रा. २.७.७
भुक्तमाहारजातं यत् २.१०.२६
भुक्तिमुक्तिप्रदा दिव्या १.८२.२४
भुक्त्वा च सूकराणां तु १.२६.३२
भुंक्त्वा तु विपुलांस्तत्र १.७६.४०
भुवः स्वाहा २.४५.६८
भुवनानलसंकाशाः १.२०.८५
भुवनानां प्रमाणं तु १.२.३१
भुवनेश इति ख्यातो २.३.२४
भुवनेशाय देवाय १.१८.३७
भुवनेशो नृपो ह्यस्मिन् २.३.४९
भुवि रुद्रालयानां तु १.२.१८

भू

भूतं भव्यं भविष्यं च २.१८.३
भूतकोटिसहस्रेण १.१०३.२५
भूतग्रामश्च चत्वार. १.२३.२९
भूततन्मात्रपाशैश्च २.९.१८
भूततन्मात्रसर्गोयं १.७०.३८
भूतत्वात्ते स्मृता भूताः १.७१.२३३
भूतभव्यभवन्नाथः १.९८.१४१
भूतभावनिकारेण २.१५.४
भूतले दर्पणप्रख्ये २.५०.४६
भूताः पिशाचाः सर्पाश्च १.६३.६७
भूताः प्रेताः पिशाचाश्च १.८२.११०
भूतात्मानं महात्मानं १.८८.४५
भूतादिस्तु विकुर्वाणः १.७०.३१
भूतानां मातरः सर्वा १.८२.७०
भूतानामिह पंचानां १.८५.२२३
भूतानि च तथा सूर्यः २.१८.१८२
भूतानि ब्रह्मभिर्वापि २.२१.५६
भूतालयो भूतपति० १.६५.१३५
भूतेभ्यश्च पितृभ्यश्च २.२२.२२
भूतैः प्रेतैः पिशाचैश्च १.८२.९५
भूतैः प्रेतैः पिशाचैश्च २.५०.२४
भूत्वा यज्ञवराहोसौ १.९४.८
भूभारनिग्रहार्थं च १.६९.५५
भूभृतां त्वथ पक्षैस्तु १.५४.४८
भूमिरेखावृतः सूर्यः १.५७.२४
भूमिशय्यां च मासांते १.८३.१६
भूमिस्थमुदकं शुद्धं १.८९.६७
भूमौ रुद्रस्य लोकं च १.२.५४
भूय एव ममाचक्ष्व २.१०.१
भूयो जज्ञेथ वे माया १.७०.३००
भूयो देवगणश्रेष्ठ २.१७.१
भूयोऽपि वद मे नंदिन् २.१३.१
भूयोऽपि शिवमाहात्म्यं २.१५.१
भूयो भूयस्त्रसेद्यस्तु १.९१.२३
भूयो मृत्युवशं याति १.८८.३५
भूराद्यांश्चतुरो लोकान् १.४.६३
भूरापोग्निर्मरुद् व्योम २.१२.३
भूरिश्रवा प्रभुः शंभुः १.६३.८६
भूर्भुवः स्वः स्वाहा २.४५.७०
भूर्भुवः स्वः स्वाहा २.४५.७८
भूर्भुवः स्वर्महर्लोकान् १.७४.२४
भूर्भुवः स्वर्महश्चैव १.४५.२
भूर्भुवः स्वर्महश्चैव १.८७.१९
भूर्भुवः स्वर्महस्तत्र १.४.५८
भूलोकः प्रथमः पादो १.२३.३३
भूलोकाऽथ भुवर्लोकः १.२३.३१
भूशयो भूतिकृद्भूति. १.९८.१४७
भूषणानि च वासांसि १.८५.८९
भूषणैर्भूषयित्वाथ २.४०.३
भूषिता भुषितैश्चान्यै. १.८०.४२

भृ

भृंगीशः पिंगलाक्षोसौ १.८२.३६
भृगुतुंगे तपस्तप्त्वा १.६७.२५
भृगुर्भगाभिहा देवः २.११.१४
भृगुशापच्छलेनैव १.६९.४८
भृगोरपि च शापेन १.२९.२६
भृग्वाद्या मुनयः सर्वे १.१०३.६५
भृग्वाद्यैर्भूतसंघैश्च १.७६.२३

भे

भेदा एकोनपंचाश. २.१२.३५
भेरीमुरजसंनादै. १.४४.७
भेरीमृदंगकाद्यैश्च १.४४.६
भेरीमृदंगमुरज. १.९२.१७८

भै

भैक्ष्यं यवागूस्तक्रं वा १.८९.१७
भैक्ष्यं चरेद्वनस्थलेषु १.८९.१४
भैरवेश्वरमीशानं १.९२.१३७

भो

भोगदं योगदं चैव १.८१.५
भोगार्थी भोगमाप्नोति २.२४.४०
भोगेन तृप्तिर्नैवास्ति १.८.२४
भोजनासनशय्यासु २.१.१०
भोजयेच्च विधानेन २.२८.९६
भोजराजस्य दौरात्म्यं १.२.४३
भोज्यं पेयं च लेह्यं च २.७.८
भोज्याभोज्यविधानं च १.२.३४
भो दधीच महाभाग १.३५.१५
भो भो दधीच ब्रह्मर्षे १.३६.३४
भो भो देवा महाभागाः १.८०.४६
भो वत्स वत्स विप्रेंद्र १.६४.२०
भो वत्स वत्स विप्रेंद्र १.६४.९९

भ्र

भ्रमंतोभिद्रवंतश्च १.७०.३१३
भ्रमणं स्वेदनं न्यासा० १.८.५०
भ्रमतो मंडलानि स्युः १.५५.९
भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता १.९८.६७
भ्रातृभिः सह पुण्यात्मा १.६४.४९
भ्राम्यतस्तस्य रश्मी तु १.५५.१२
भ्रुकुटी चंडभूश्चैव २.२७.१४५
भ्रूवोर्मध्ये न्यसेद्दिव्यं २.३५.५
भ्रूणहत्या वीरहत्या १.४०.८

म

मंगला चर्चिका चैव २.२७.११८
मंडलं कल्पयेद्विद्वान् २.३०.४
मंडले चाग्रतो पश्यन् २.१९.६

मंतव्यं चैव बोद्धव्य. १.८६.७६
मंतव्यवस्तुतां धत्ते २.११.२९
मंत्रं मुखसुखोच्चार्य. १.८५.३१
मंत्रः षडक्षरो विप्राः २.८.२
मंत्रः स्थितः सदा मुख्यो १.८५.३६
मंत्रज्ञो मंत्रवित्प्राज्ञो १.८२.५१
मंत्रमाह सकृद्वा यः १.७६.४५
मंत्रमुच्चारयेद्वाचा १.८५.१२०
मंत्रवित्परमो मंत्रः १.६५.६६
मंत्रस्नानं ततः कुर्या. १.२६.४०
मंत्रस्पर्शविनिर्मुक्तो २.५५.१२
मंत्रा घंटाः स्मृतास्तेषां १.७२.१५
मंत्राणां प्रभवे तुभ्यं १.२१.१८
मंत्राभ्यां विधिनोक्ताभ्यां २.४४.३
मंत्रिष्वाधाय राज्यं च २.५.२२
मंत्रेण संस्पृशेद्देहं १.८५.७०
मंत्रेणानेन दिव्येन २.२७.२५१
मंत्रेणानेन यो बिभ्रत् १.९४.२५
मंत्रेणानेन राजानं २.२७.२३९
मंत्रेणानेन रुद्रस्य २.२७.४९
मंत्रेणनेन विधिना २.२७.२६६
मंत्रेणानेन संपूज्य २.४१.८
मंत्रैः पादैः स्तवं कुर्या. १.२१.६६
मंत्रैरेतैर्द्विजश्रेष्ठा २.८.५
मंत्रैरेतैर्यथान्यायं २.२७.३३
मंत्रैर्महेश्वरं देवं १.१७.७२
मंत्रो मया पुराभ्यस्तः २.७.१५
मंत्रौषधिक्रियाद्यैश्च २.५०.५०
मंदं मंदगतिं चैव २.१९.२४
मंदमंदस्मिता देवी २.१.६९
मंदगर्भा महाभासा २.२७.१८५
मंदरं वा प्रकुर्वीत १.७७.९
मंदरस्य गिरेः शृंगे १.४९.२९
पंदराद्रिप्रतीकाशै. १.७०.१०
मंदस्मितं च भगवान् १.२९.१०
मंदाक्षेपा महादेवी २.२७.१६५
मंदेहा राक्षसा नित्यं २.५१.१७
मकारं हृदयं शम्भो. १.१७.८०
मकाराख्यो विभुर्बीजी १.१७.६३
मखेशाय वरेण्याय १.९६.८५
मत्कीर्तिश्रवणे युक्ता २.१.५३
मत्कृतेन च वर्णेन १.२३.८
मत्कृतेन च वर्णेन १.२३.१९
मत्त उत्पद्यते तिष्ठन् १.८६.६०
मत्तेभगामी मदलोलनेत्रा १.७२.६७
मत्पुत्रमवधीः शक्र २.५१.९
मत्प्रसादादसंदिग्ध १.६४.११९
मत्प्रसादेन सकलं १.९६.२८
मत्प्रसूता च देवेशी १.२३.४
मत्प्रसूता च देवेशी १.२३.१४
मत्प्रियः सततं श्रीमान् १.८५.२१
मत्प्रियार्थमिदं कार्यं १.९२.१८४
मत्समस्तव पौत्रोसौ १.६४.२१
मत्समीपं गमिष्यंति १.२३.७
मत्समीपं गमिष्यंति १.२४.१६
मत्समीपं गमिष्यंति १.२४.३५
मत्समीपं गमिष्यंति १.२४.४३
मत्समीपमुपेष्यंति १.२३.४८
मत्समीपमुपेष्यंति १.२४.३१
मत्समीपे तथान्यत्र २.१.५४
मत्स्यगृह्यस्य यत्पापं १.८९.८
मदंशस्यास्य शैलस्य १.१०३.४५
मद्बाणैर्भिन्नसर्वांगो १.९७.१४
मद्भक्तश्चाभ्यसेद्ध्यानं १.८६.१२५
मद्भक्तान्निंदयंस्तत्र २.६.८६
मद्भक्तो भव विप्रर्षे १.१०७.३६
मधुपर्कं तथा गां च १.१०३.६४
मधुमासैर्मूलफलै० १.४०.७०
मधुश्च माधवश्चैव १.५५.२२
मधोः पुत्रशतं चासीद् १.६८.१५
मध्यतो वरदां देवीं २.२२.२४६
मध्यतो हस्तमात्रेण २.४५.९
मध्यदेशे च देवेशीं १.७७.७७
मध्यपद्मस्य मध्ये तु २.२७.४६
मध्यमेश्वरमित्युक्तं १.९२.१५१
मध्यमेश्वरमित्येव १.९२.९१
मध्यमेश्वरसंज्ञं च १.९२.१३५
मध्यरात्रे च शिवयोः १.८५.२२७
मध्याह्ने च महादेवं १.७७.६१
मध्ये गगनरूपाय १.७२.१२८
मध्ये चैकार्णवे तस्मि. १.२०.३
मध्ये चोर्ध्वमुखं कार्य. २.२८.३४
मध्ये भवेन संयुक्तं १.८४.३६
मनः सुदर्शो बृंहश्च १.४.४८
मनश्च पञ्चभूतानि १.२८.९
मनसा कर्मणा वाचा १.९४.२३
मनसा चिंतयंतौ तौ २.५.१०८
मनसाध्याहितं मे स्या. २.३.७४
मनसा सर्वकार्याणि २.२३.२६
मनस्येवं महादेवं १.८.१०८
मनुःस्वायंभुवस्त्वाद्य. १.७.२२
मनुते मन्यते यस्मा. १.८.७४
मनुते सर्वभूतानां १.७०.१३
मनुष्यानौषधेनेह १.५९.२९
मनोत्सेधा मनोध्यक्ष २.२७.६८
मनोनिलजवो भूत्वा १.१७.४०
मनोन्मनाय देवाय १.१६.१४
मनोन्मनाय देवाय २.२७.३०
मनोन्मनी महादेवी १.८२.२०
मनो बुद्धिरहंकारः १.९८.१०९
मनोबुद्धिरहंकार. १.८६.७४
मनो महांस्तु विज्ञेय. १.७०.१०
मनोमहान्महिर्ब्रह्म १.७.१२
मनोवाक्कायजान् दोषान् १.८.५६
मनोवेगो निशाचरः १.६५.९०
मनोहरा महानादाः २.२७.१३२
मन्नाभिपंकजाज्जातः १.९६.३१
मन्मथः कथितो व्यूहो २.२७.१७५
मन्मथायिक उक्तस्ते २.२७.१७९
मन्मूर्तिस्तुहिनाद्रीशो १.१०३.४०
मन्ये शक्रस्य रूपेण १.१०७.३८
मन्वंतराणां प्रभवे १.२१.१५
मन्वंतराणां सर्वेषा. १.४०.९२
मन्वंतराणि वाराहे १.७.२१
मन्वंतराधिका रेषु १.४०.८१
मन्वंतरेण चैकेन १.४०.९५
मन्वंतरेण चैकेन १.७०.११३

मन्वंतरेषु ये देवा १.७०.३२०
मन्वंतरेषु वै संख्या १.४.३८
मन्वंतरेषु वै संख्या १.४.३८
मन्वंतरेषु सर्वेषु १.६१.१४
मन्वंतरेषु सर्वेषु १.७०.२९३
मन्वंतरेष्वतीतेषु १.६३.४७
मन्वाम नूनं भगवान्पिनाकी १.७२.९७
मम क्षेत्रमिदं तस्मा. १.९२.४६
मम चैतानि नामानि १.२०.७२
मम ज्येष्ठेन यदुना १.६७.२
मम त्वं पुण्डरीकाक्ष १.६९.७१
मम त्वं मंदभाग्याया १.६२.९
मम त्वमेकः पुत्रोसि १.६२.२६
मम प्रसादाद्यास्यंति १.२४.८३
मम प्रसादाद्यास्यंति २.२४.८५
मम योनौ समायुक्तं १.२०.७९
मम वृत्तं प्रवक्ष्यामि २.३.१४
ममात्र निधनं श्रेयो २.७.२३
मयस्कराय रुद्राय २.८.७
मयस्कराय विश्वाय १.९५.३७
मया चैषां न संदेहः १.२९.६३
मयानीतमिदं लिंगं १.९२.७४
मया पुत्रीकृतोस्यद्य १.१०७.५५
मया प्रोक्तोमरावत्यां १.५४.८
मया बद्धोसि विप्रर्षे १.३०.१६
मया यदि मुनिश्रेष्ठो १.६४.३५
मया सह जगत्सर्वं १.३७.२२
मया सह पिता हृष्टः १.४३.१
मयि पश्य जगत्सर्वं १.३६.६३
मयि भक्तश्च वंद्यश्च १.९८.१८३
मयूरबर्हवर्णस्तु १.५२.५१
मयूरैश्चैव कारंडैः १.८०.३०
मयैव प्रेषितौ विप्रौ १.४३.२०
मरीचये च संभूति १.७०.२९०
मरीचिभृग्वंगिरसः १.५.१०
मरुतस्तस्य तनयो १.६८.२९
मर्त्यस्य चाक्षणोस्तस्याश्च १.४.९
मर्त्यातीता महामाया २.२७.८६
मर्यादा पर्वतानेता. १.४९.२५
मर्यादायाः प्रतिष्ठार्थं १.३९.४९
मलदंता गृहस्थाश्च २.६.६५
मलिना रूपवत्यश्च १.७८.२०
मलिनाश्चैव विप्रेंद्रा १.३४.२९
मलिका वा गृहे येषां २.६.४८
महतस्तु तथा वृत्तिः १.३.१७
महती देवता या सा १.३५.७
महतो यो महीयांश्च २.१८.३५
महत्प्रजापतेः स्थान. १.५०.७
महदादिविशेषांत. १.३५.२२
महदादिविशेषांता १.३.२८
महर्षिः कपिलाचार्यो १.९८.४४
महांतं तद्गृहं तं च १.८६.५६
महांबिकायै विद्महे २.४८.१३
महांस्तथा च भूतादि. १.३६.९
महांस्तथा त्वहंकारं २.२८.८
महाकर्णः प्रभातश्च १.८२.८२
महाकायो मुनिः शूली १.७.३४
महाकायो महातेजा १.८२.३०
महाकेतुर्धराधीता १.६५.१४०
महाग्रहो द्विजश्रेष्ठा १.६०.४
महाचरुं निवेद्यैवं १.७७.९२
महाचरुर्निवेद्यः स्या १.८१.१८
महाजयस्तथांगारो २.२७.१३३
महाजया विरूपाक्षी २.२७.९४
महातपा दीर्घतपाः १.९८.६३
महातलं हेमतलं १.४५.१०
महात्मने नमस्तुभ्यं १.१८.२८
महात्मा सर्वभूतश्च १.६५.५९
महादंतो महादंष्ट्रो १.६५.११०
महादंष्ट्रः करालश्च २.२७.११२
महादेवः शिवो रुद्रः १.८२.४०
महादेव जगन्नाथ १.३६.१०
महादेवपरा नित्य १.३३.७
महादेवमनिर्देश्यं १.७१.१०८
महादेव महादेव २.६.२१
महादेव सत्यं मे गोपाय २.४५.५४
महादेव सत्यं मे गोपाय २.४५.५५
महादेव सत्यं मे गोपाय २.४५.५६
महादेव सत्यं मे गोपाय २.४५.५७
महादेवस्य देवस्य १.५१.८
महदेवस्य सा मूर्ति. २.१३.२६
महादेवाय महते १.९६.७९
महादेवाय सोमाय १.४१.३२
महादेवी कले द्वे तु १.७०.३४४
महादेवेतरं त्यक्त्वा १.७१.३४
महाद्रुमस्य नाम्ना तु १.४६.२९
महाध्वजाष्टसंयुक्तं १.८४.५५
महानंदं परानंदं १.८.१०५
महानद्यां द्विलक्षं च १.८५.१८८
महानपि तथा व्यक्तं १.४१.५
महानिरयसंस्थस्त्वं २.३.४६
महान्सृष्टिं विकुरुते १.७०.२८
महापादो महाहस्तो १.६५.१०७
महापूजा प्रकर्तव्या २.२८.९४
महाप्रमाणा लिंगं च १.९२.१५९
महाबला महाशांतिः २.२७.१७१
महाबलास्त्रयस्त्रिंश. १.५२.४६
महाबलो महातेजा १.६५.१०९
महाभद्रस्य सरस. १.४९.५३
महाभागवते तच्च २.४.१६
महाभूतानि भूतानि २.१६.२५
महाभूतान्यशेषेण २.१०.११
महाभूतान्यशेषेण २.१०.१२
महाभोगपतेर्भोगं १.२०.६
महामुद्रासमायुक्तः २.५०.२७
महामेरुमनुप्राप्य १.८४.६५
महामोहा महाभागा १.८२.१०५
महामोहा महामाया २.२७.२२८
महायोगबलोपेता १.२४.६२
महारजतसंकाशा १.५२.३५
महारौरवमासाद्य १.९७.४१
महावशा मदग्राहा २.२७.१६६
महावीतं तु तद्वर्षं १.५३.२६
महावीते सुवीते च १.८९.९६
महाशरो महापाशो १.६५.७५
महासंध्याभ्रवर्णाय १.२१.४८
महासंहरणे प्राप्ते १.३२.१०

महासेनाय विद्महे २.४८.९
महासेनो विशाखश्च १.६५.९४
महास्कंधो महाकर्णो १.६५.१०८
महित्वं चापि लोकेस्मिं. १.८८.१९
महिषा गवयाक्षाश्च १.७०.२४२
महीयसे नमस्तुभ्यं १.९५.४२
महेंद्रो दुर्भरः सेनी १.९८.९०
महेश्वरं हृदि ध्याये. १.८.१०१
महेश्वरांगजश्चैव १.३७.९
महेश्वरांगजो मध्ये २.५.३५
महेश्वरात्रयो देवा १.७०.७७
महेश्वरो महादेवः १.७०.२
महेश्वासो महीभर्ता १.९८.१५४
महोदधीनां प्रभवे १.२१.९
महोदया चोत्तरे च १.४८.१८
मांगल्यैर्विविधैः सर्वा. २.५.८०
मां च नारायणं वापि १.१०५.२२
मां तथाभ्यचितं व्योम्नि १.४३.४४
मां दिव्येन च भावेन १.९८.१८७
मां दृष्ट्वा कालसूर्याभं १.४२.१७
मांधातुः पुरुकृत्सोभू० १.६५.३९
मां न जानासि देवर्षे १.१०७.३५
मां विनिर्धूय संहृष्टः २.३.१५
माघमासे तु संपूज्य १.८३.२०
माघमासे रथं कृत्वा १.८४.२७
मातरं च महाभागां १.६४.९८
मातरं पूजयित्वा तु २.७.२९
मातरः सर्वलोकानां १.७२.८६
मातरः सुरवरारिसूदनाः १.७२.६९
मातर्मातः कथं त्यक्त्वा १.६४.६३
माता च तस्य दुर्बुद्धेः २.८.२६
मातापित्रोर्वचनकृत् १.६७.३
मातापित्रोस्तु संवादं १.४०.२
मातुः पितुस्तथारिष्टं १.८.१७
मातृदेवोत्थितान्येव १.१५.६
मातृस्थानोऽपि वा विद्वान् २.५०.१६
मातृहा नियुतं जप्त्वा १.६५.१७४
मातृहा पितृहा चैव १.६५.१७४
मातृणां रक्षको नित्यं १.८२.१००
मात्रा चार्धं च तिस्रस्तु १.९१.५२
मात्रा त्वं सहितस्तत्र १.६२.३६
मात्रापादो रुद्रलोको १.९१.५६
मात्रास्तिस्रस्त्वर्धमात्र १.१७.५६
माद्री लेभे च तं पुत्रं १.६९.११
माद्र्याः सुतस्य संजज्ञे १.६९.१८
माध्वी पीता तया सार्धं २.८.२४
मानवस्य तु सोंशेन १.४०.५७
मानवानां तु कुक्षिस्थो १.५९.१३
मानवानां शुभ ह्येते १.५५.७४
मानवेयो महाभागः १.६५.३१
मानसानसृजद्ब्रह्मा १.७०.१७७
मानसैर्वाचिकैः पापैः १.७७.६२
मानसोत्तरशैले तु १.५४.१५
मानसोत्तरशैले तु २.३.९
मानसोपरि माहेंद्री १.५४.२
मानसो विस्तरेणैव १.८.४०
मानार्थमंबरीषस्य २.५.१५४
मानावमानौ द्वावेतौ १.८९.४
मानी मान्यो महाकालः १.९८.१३०
मानुषं भजते नित्यं १.८८.७४
मानुषेणैव मानेन १.४.१३
मानुष्यात्पशुभावश्च १.८८.६७
मा भैर्देव महाभाग १.४१.५१
मामग्रे संस्थितं भासा० १.१७.१७
मामाहुर्ऋषयः प्रेक्ष्य १.३७.४
मामिहांतः स्मितं कृत्वा १.१७.२०
मा मैवं वद कल्याण १.२०.६९
मायया तस्य ते दैत्याः १.७१.८०
मायया देवदेवस्य १.७१.९०
मायया मोहितं देव. १.२०.१८
मायया ह्यनया किं वा १.३६.६५
मायां कृत्वा तथारूपां १.३१.३१
मायां त्यज महाबाहो १.३६.६२
मायावित्वं श्रुतं विष्णो. २.६.१
मायाविनो महात्मानो २.५.१३०
मायी च मायया बद्धः १.८७.५
मायूरास्त्रेण नाभ्यां तु २.५०.३४
मारणोच्चाटने चैव २.५२.१२
मार्कंडेय महाप्राज्ञ २.३.१
मार्गशीर्षकमासादि. १.८४.७१
मार्गशीर्षे च मासेऽपि १.८३.४९
मार्गशीर्षे भवेन्मित्रः १.५९.३५
मार्गेणार्घ्यपवित्रेण २.२२.३२
मार्जारस्य गृहे यस्य १.८५.१५४
मालवं मालतीं चैव २.१.५६
मालां गृह्य जया तस्थौ १.१०.२७
मालां प्रगृह्य देव्यां तु १.१०२.२८
मालिनी गिरिपुत्र्यास्तु १.१०२.२६
माल्यं च शयनस्थानं १.८९.४०
मासतृप्तिमवाप्याग्र्यां १.५६.१६
मासमेकं पुमान्वीरः १.६५.२३
मासा संवत्सराश्चैव १.६०.११
मासेन सिध्यते तस्य २.४९.९
मासे मासेऽश्वमेधेन १.९१.६१
मासोपवासैश्चान्यैर्वा १.१०३.३४
माहात्म्यमनुभावं च २.५.४


मि-मी


मित्रावरुणनामानौ १.४३.८
मित्रावरुणनामानौ २.८.१८
मिथ्या न कारयेद्देवि १.८५.१७८
मीढुषोतिकपालांश्च १.७०.३०९


मु


मुंडो विरूपो विकृतो १.६५.१५४
मुंडो विरूपो विकृतो १.९८.११४
मुकुटं च शुभं छत्रं १.२७.४८
मुक्तकेशो हसंश्चैव १.९१.२७
मुक्ताफलमयैर्हारैः १.७१.१२५
मुक्ताफलमयैर्हारै० २.१९.१२
मुक्ताफलमयैश्चूर्णै० १.७७.६८
मुक्त्वा हस्तसमायोगं १.१०३.६२
मुखतोजाः ससर्जाथ १.७०.२३७
मुखानिलः सुनिष्पन्नः १.९८.१०७
मुखोपरि समभ्यर्च्य २.२२.७५
मुख्यसर्गं तथाभूतं १.७०.१४४
मुख्यस्तु यस्त्विरुद्धांतः १.८.४८
मुच्यंते नात्र संदेहः २.४५.८९
मुच्यंते पशवः सर्वे १.८०.५१
मुच्यंते पातकैः सर्वैः १.७१.७०
मुच्यते तेन दोषेण १.६१.५०
मुच्यते नात्र संदेह० १.१५.११

मुच्यते नात्र संदेहो १.९२.१६९
मुद्गात्रं मधुना युक्तं २.५४.४
मुद्रा च पद्ममुद्राख्या २.२२.४८
मुनयः संशितात्मानः १.८६.५
मुनयश्च तथा सर्वे २.५.१५५
मुनयश्च महादेवं १.१०२.५९
मुनयश्च सदालिंगं १.२४.१४७
मुनयस्ते तथा वाग्भि० १.३१.३३
मुनयो दारुगहने १.२९.५
मुनिभिश्च महाभागै. १.८१.४
मुनिरात्मा मुनिर्लोकः १.६५.९१
मुनिश्च दुंदुभिश्चैव १.४६.३१
मुनिश्रेष्ठं न पश्यामि २.५.९७
मुनिश्रेष्ठौ च हित्वा त्वं २.५.१४९
मुनीनां च न संदेह० १.७३.२२
मुनीनां वंशविस्तारो १.२.२७
मुनीन् पितॄन् यथान्यायं १.२६.९
मुनीश्वरांश्च संप्रेक्ष्य १.४२.३६
मुने कल्पांतरे रुद्रो १.४१.१७
मुनेर्विजयदा चैव १.३०.३५
मुने समस्तधर्माणां २.१.३
मुमुहुर्गणपाः सर्वे १.१०२.६१
मुमोच बाणं विप्रेंद्रा १.७२.११४
मुमोच पूर्ववदसौ १.७०.१३०
मुहूर्तपंचदशिका १.४.१०
मुहूर्तबंधुरास्तस्य १.७२.८

मू

मूकाः सशब्ददुष्टाशा. १.५४.५०
मूढाःस्थ देवताः सर्वा. १.१०२.४९
मूढा ह्यभाग्या मद्भक्ता २.६.८७
मूर्छनास्वरयोगेन २.१.१२
मूर्तयः पंच विख्याताः २.१४.५
मूर्तयोष्टौ च तस्यापि १.१०६.२४
मूर्तयोष्टौ ममाचक्ष्व २.१२.१
मूर्तयोष्टौ शिवस्याहु० २.१२.४३
मूर्तिं तमोरजःप्रायां १.७०.२२४
मूर्तिः पशुपतिर्ज्ञेयः २.१३.२२
मूर्तिरुग्रस्य सा ज्ञेया २.१३.२७
मूर्त्यादीनं च वा देयं २.३७.१५
मूर्ध्नि पुष्पं निधायैवं २.२४.२८
मुष्टिनां चैव यावच्च २.२१.७१
मूलं च नालरत्नेन २.३३.४
मूलं मूलेन विधिना २.२५.४१
मूलकस्यापि धर्मात्मा १.६६.३०
मूलमंत्रं सकृज्जप्त्वा २.२५.९६
मूलमंत्रमिति प्रोक्तं २.२३.२२
मूलमंत्रमिमं प्रोक्तं २.२२.१०
मूलस्थाय नमस्तुभ्यं १.७२.१३७
मूलायामप्रमाणं तु १.४८.७
मूलेन नमस्कारं विज्ञाप्या. २.२४.३४
मूले ब्रह्मा वसति भगवान् २.४७.११
मृच्छकृत्तिलपुष्पं च १.२५.१३
मृणालतंतुभागैक. १.४१.२३
मृतधूमोद्भवं त्वभ्र. १.५४.४१
मृतोद्भवा महालक्ष्मी. २.२७.१५०
मृत्युंजयविधिं वक्ष्ये २.५३.२
मृत्युंजयविधिं सूत २.५३.१
मृत्युरेवं न संदेहः १.६९.५८
मृत्युहीनः पुमान् विद्धि १.४१.६१
मृत्योर्भीतोहमचिरा. १.४३.१६
मृत्योर्व्याधिजराशोक. १.७०.३०१
मृदंगमुरजैर्जुष्टं १.८०.१७
मृदादिरत्नपर्यंतै. १.७७.२
मृदुस्त्वमत्रमस्मभ्य. १.८८.९०
मृन्मयं क्षणिकं वापि १.७४.२२
मृन्मयं चैव विप्रेंद्राः १.७४.१८
मृन्मयं पंचमं लिंगं १.७४.१६

मे

मेढ्रेणोर्ध्वेन महता १.२०.६१
मेघवाहनकल्पस्य १.२.१६
मेघवाहनकल्पेव २.८.९
मेघवाहनकृष्णाय १.३३.१७
मेघानां च पृथग्भूतं १.५४.५९
मेघेभ्यास्तनयित्नुभ्यः १.३९.२१
मेदिनीं कारयेद्दिव्यां २.३२.३
मेधातिथेस्तु पुत्रैस्तैः १.४६.४५
मेध्यास्वनारीसंभोगं १.८.१९
मेनका सहजन्या च १.५५.५०
मेनां तु मानसीं तेषां १.६.६
मेनाजत्वं महादेव्या १.९९.२
मेनापतिमतिक्रम्य १.५४.६०
मेनाया नंदिनी देवी १.८२.१७
मेरुपर्वतसंकाशं १.९८.२२
मेरुपृष्ठे मुनिवरः २.९.६
मेरुमंदरकैलास. १.८२.३१
मेरुमासाद्य देवानां १.७६.८
मेरोः पश्चिमतश्चैव १.४९.५
मेरोः शिखरमासाद्य १.१०१.३२
मेरोः समंताद्विस्तीर्णं १.४८.३२
मेषो वृषोथ मिथुन. १.८२.७५

मै

मैथुनस्याप्रवृत्तिर्हि १.८.१६
मैथुनात्कामतो विप्रा. १.८९.९८

मो

मोक्षाय मोक्षरूपाय १.१८.२३
मोक्षो धर्मस्तथार्थश्च १.२३.२८
मोक्ष्यंति ते न संदेहः १.७२.४०
मोचकः शिव एकैको २.९.२६
मोचयत्येव तान्सद्यः २.९.२२
मोहहेतुस्तथा ज्ञानं १.८६.११०
मोहितं प्राह मामत्र १.१७.३६

मौ

मौहूर्तिकी गतिर्ह्येषा १.५४.१३

य

यं दृष्ट्वा सर्वमज्ञान० १.३१.२१
यः कुर्याद्दिवदेवेशं १.७६.५२
यः कुर्यान्मेरुनामानं १.७७.१२
यः पंचानदमासाद्य १.४३.४८
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.३३.२
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.४१.३३
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.६५.१७२
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.७०.३४७
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.९२.१८९
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.९५.६३
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.९८.१९०
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.१०३.६७
यः पठेच्छृणुयाद्वापि २.६.९२
यः पठेच्छृणुयाद्वापि १.६९.९४
यः पठेच्छृणुयाद्वापि २.५.१५८
यः पठेत्तु स्तवं भक्त्या १.१०४.२९

यः पुनस्तत्त्ववेत्ता च १.८९.४७
यः पुरश्चरणं कृत्वा १.८५.१०१
यः पूरयति यस्माच्च १.७०.१७
यः प्रातर्देवदेवेशं १.७७.६०
यः शिवं पूजयेद्देवं २.२४.३७
यः शिवं मंडले देवं २.१९.४२
यः श्रावयेच्छुचिर्विप्रा. १.८०.६०
यः सकृद्वा यजेद्देवं २.२२.८०
यः सत्त्वनिष्ठो मद्भक्तो १.८६.१४७
यः सप्तविंशको नित्यः १.७१.५१
यः स याति न संदेहः १.७७.२७
य इदं कीर्तयेद्दिव्यं १.३६.७९
य इदं कीर्त्य संग्रामं १.३६.८०
य इदं पराख्यानं १.९६.११७
य इदं प्रातरुत्थाय १.७१.११५
य इमं शृणुयाद्द्विजोत्तमा १.७२.१६७
य एवं सर्वमासेषु १.८१.४९
य एवं स्थापयेल्लिंगं २.४७.४९
य एष भगवान् रुद्रो २.१८.१
यक्षलोकमनुप्राप्य १.८३.४३
यक्षाः सिद्धास्तथा साध्या १.१०२.२०
यक्षान् पिशाचान् गंधर्वा० १.७०.२५०
यक्षा विद्याधराः सिद्धाः १.७३.८
यक्षेश्वराय विद्महे २.४८.२४
यजंति देहे बाह्ये च १.७५.३५
यजंति सततं तत्र १.४६.१२
यजंते चाश्वमेधेन १.४०.४२
यजमानात्मको देवो २.१३.१७
यजमानाह्वया मूर्तिः २.१२.२८
यजमानाह्वया मूर्तिः २.१२.४५
यजमानाह्वया या सा २.१२.२९
यजमानेन कर्तव्यं २.३७.१४
यजमानो जपेन्मंत्रं २.२८.७४
यजुर्वेदमहाग्रीव १.१.२१
यजुर्वेदसमायुक्तं १.१७.८६
यजुषां परिमृज्यैवं १.२६.२५
यजूंषि त्रैष्टुभं छंद० १.७०.२४४
यजेदेकं विरूपाक्षं १.७३.२७
यज्जप्त्वा तु मुनिश्रेष्ठा १.६५.५४
यज्ज्ञानं निर्मलं शुद्धं १.७५.४
यज्ञधूमोद्भवं चापि १.५४.४०
यज्ञप्रवर्तनं चैव १.३९.५१
यज्ञभुग्यज्ञमूर्तिस्तं १.९५.२४
यज्ञयाजी जितक्रोधः १.६६.७०
यज्ञवाटस्तथा तस्य १.१००.७
यज्ञश्च दक्षिणा चैव १.७०.२७९
यज्ञश्च दक्षिणाहीनं १.१०५.१६
यज्ञस्य च शिरश्छेत्ता १.८२.१०१
यज्ञानां पतिभावेन २.१२.२४
यज्ञार्थं पशुहिंसा च १.७८.१५
यज्ञोपकिरणैः सर्वैः २.४७.२५
यज्ञोपवीती देवानां १.२६.१२
यतः सृष्टास्त्विमे लोका० १.९२.१०४
यतमानो यतिः साधुः १.१०.१०
यतयश्च भविष्यंति १.४०.१९
यतस्तस्मान्न हंतव्या १.१८.१६
यतीनां संहतिर्न्यासः १.८५.५६
यतो बिभर्षि सकलं १.९६.११०
यतोस्य दीव्यतो जाता. १.७०.२०४
यत्किंचित्प्रार्थयेद्देवि १.८५.२०४
यत्क्षणं वा मुहूर्तं वा १.७३.२३
यत्तेजस्तु नृसिंहाख्यं १.९६.३
यत्पुण्यं चैव तीर्थानां १.८२.११७
यत्प्रमाणगुहा प्रज्ञा १.८.७१
यत्र कंटकिनो वृक्षा २.६.४६
यत्र क्रीडंति मुनयः १.४९.३८
यत्र तिष्ठंति तद्ब्रह्म १.३१.१०
यत्र मंदाकिनी नाम २.५१.२२
यत्र रुद्रनमस्कारः १.९१.७०
यत्रासीनौ महात्मानौ २.५.९३
यत्रेच्छंति जगत्यस्मिं. १.९.३३
यत्सत्यं ब्रह्म इत्याहु. १.८५.१३७
यथाक्रमं स धर्मात्मा १.४७.१२
यथा तरंगा लहरीसमूहा १.७१.११४
यथा त्वं देवदेवस्य २.५.४०
यथा त्वयाद्य वै पृष्टो १.१०.४४
यथा दारुवने रुद्रं १.२८.३२
यथादिष्टप्रवादस्तु १.१०.१८
यथा देवगृहाणी १.५९.५
यथा देवा भवं दृष्ट्वा १.७१.१४९
यथा प्रधानं भगवा० १.६५.१६९
यथा प्रभाकरो दीपो १.६०.१७
यथा ममोदरे लोकाः १.२०.४४
यथा मृगो मृत्युभयस्य भीतो १.८६.४२
यथा मोक्षमवाप्नोति १.९२.४३
यथा युगानां परिवर्तनानि १.४०.९३
यथा वज्रधरः श्रीमान् १.३५.१२
यथावत्कथिताश्चैव १.३.८
यथावसरमेवं हि २.२५.१०५
यथाविभवविस्तारं २.३८.५
यथावृक्षात्फलं पक्वं १.९१.६९
यथा शिवस्तथा देवी १.७५.३४
यथा श्रुतं तथा प्राह १.७१.७
यथा श्रुतं मया सर्वं १.१०३.८१
यथाष्टादशहस्तेन २.२८.१७
यथा ह्यापस्तु संछिन्नाः १.८८.६०
यथेतरेषां रोगाणा० १.८६.३६
यथैष पर्वते मेरु० १.२०.९४
यदव्यक्तं परं व्योम १.९६.१०१
यदागतोहमुटजं १.४३.२
यदाचरेत्तपश्चायं १.२४.१३७
यदा तदा शक्तिसूनु. १.६४.४८
यदा तु सृजतस्तस्य १.६३.३
यदा न निंदेन्न द्वेष्टि १.६७.२०
यदापराह्णस्त्वाग्नेय्यां १.५४.९
यदाप्नोति यदादत्ते १.७०.९६
यदा प्रबुद्धो भगवान् १.४६.७
यदा यदा भविष्यामि १.२४.४०
यदा यदा ममाज्ञान० १.९६.९६
यदा विष्णुश्च भविता १.१०१.४४
यदा व्यवस्थितस्त्वेतैः १.८६.७०
यदा व्यासस्तरक्षुस्तु १.२४.६३
यदा सती दक्षपुत्री १.९८.१८४
यदा समरसे निष्ठो १.७५.१५
यदा स्थिताः सुरेश्वराः १.१०५.१
यदा स्पृष्टो मुनिस्तेन १.४२.५
यदास्य ताः प्रजाः सृष्टा १.७०.२६१

यदा स्रष्टुं मतिं चक्रे १.५.१
यदाहं पुनरेवेह १.२३.१३
यदि प्रीतिः समुत्पन्ना १.१९.६
यदि योनिं विमुंचामि १.८८.५१
यदि सिंहं महेशानं १.९६.४५
यदुं च तुर्वसुं चैव १.६६.६५
यदुनाहमवज्ञात० १.६७.४
यदृच्छया भवः पश्यन् १.९४.२८
यदेतदुक्तं भवता १.५९.२
यदेतद्द्रविणं नाम १.९०.१३
यदैवं मयि विद्वान् य. १.८७.६
यदोः पुत्रा बभूवुर्हि १.६८.२
यदोर्वंशं प्रवक्ष्यामि १.६८.१
यद्दत्तं यद्धुतं चैव २.३.१८
यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं १.९६.२९
यद्रूपं भवता दृष्टं १.९८.१७१
यमं च यमुनां चैव १.६५.४
यमदंष्ट्रा महादंष्ट्रा २.२७.१५५
यमपावकवित्तेशा १.७२.६०
यमपुष्पादिभिः पूज्यं १.४१.२४
यममिंद्रमनुप्राप्य १.१०६.४
यमस्तु प्रथमः प्रोक्तो १.८८.
यमस्त्रियंबको देव. २.११.९
यमस्य दंडं निर्ऋतेः १.८४.६१
यमस्य दंडं भगवान् १.१००.२०
यमाः संक्षेपतः प्रोक्ता १.८.२९
यमाग्निवायुरुद्रांबु. १.१०४.२६
यमापस्तंबसंवर्त्ताः १.३९.६५
यमाय राक्षसेशाय २.२८.५४
यमोपि दंडं खड्गं च १.१०२.३३
यम्यां हि विविधैर्द्रव्यै. २.२७.२५३
ययातिर्युधि दुर्धर्षो १.६६.६९
यया सृष्टा सुराः सर्वे १.७०.२००
यया सृष्टास्तु पितर. १.७०.२०९
ययुश्च दुःखवर्जिता १.७२.१७९
ययौ प्रांते नृसिंहस्य १.९५.६१
यवक्षीराज्यहोमेन २.४९.१०
यवमात्रांतरं सम्यक् २.२७.४४
यवैश्च व्रीहिभिश्चैव १.१५.२४
यशः कीर्तिसुतश्चापि १.७०.२९७
यशसस्तपश्चैव १.६४.१११
यश्चाभिमानी भगवान् १.५.५०
यश्चायं मंडली शुक्ली १.५९.१४
यश्चासौ तपते सूर्यः १.५९.२१
यस्तत्प्रतिकृतो यत्नो १.६९.६२
यस्तु गर्भगृहं भक्त्या १.७७.१०१
यस्तु दारुवने तस्मि. १.२९.४२
यस्तु प्रावरणं शुक्लं १.९१.३५
यस्तेनानिर्जितो युद्धे १.१०१.२२
यस्त्यजेद् दुस्तरान्प्राणान् १.७७.३४
यस्त्वेतान्पूजयेन्नित्यं १.३३.११
यस्माच्च विश्वरूपो वै १.२३.२५
यस्माच्च सर्ववर्णत्वं १.२३.२७
यस्माच्चैव क्रिया भूत्वा १.२३.४२
यस्माज्जटोदकादेव १.४३.३५
यस्मात्तस्य तु दीव्यंतो १.७०.२०५
यस्मात्तेषां दिवा जन्म १.७०.२१८
यस्मात्तेषां वृता बुद्धि. १.७०.१४३
यस्मादहर्देवतानां १.७०.२१०
यस्मादाचारहीनस्य १.८५.१२८
यस्मादुक्तः स्थितोऽस्मीति १.७०.३२४
यस्माद् ब्रह्मा ततः सर्व २.१.८
यस्माद् भवंति संहृष्टा १.७०.२१५
यस्मिन्मंत्रे पतेत्पुष्पं २.२१.४३
यस्य कृष्णा खरा जिह्वा १.९१.२६
यस्य नास्ति सुतप्तस्य १.२८.२९
यस्य भक्तोपि लोकेस्मिन् १.७७.३
यस्य भीषा दहत्यग्नि. १.९६.१००
यस्य मायाविधिज्ञस्य १.२०.७८
यस्य यद्विहितं कर्म १.८५.१३४
यस्य राष्ट्रे तु लिंगस्य २.२४.२९
यस्य रेतः पुरा शंभो. २.५४.२४
यस्य वा स्नातमात्रस्य १.९१.२२
यस्य वै स्नातमात्रस्य १.९१.१३
यस्य श्वेतधनाभासा १.९१.२८
यस्यैवं हृदि संस्थोयं १.८५.३७

या

यांतं तदानीं तु शिलादपुत्र. १.७२.५३
याः स्त्रियस्त्वां सदाकालां १.१०५.१९
याक्षे तु तेजसं प्रोक्तं १.९.२४
या गतिस्तस्य विपुला २.५५.४१
यागोपकरणं दिव्य. २.२८.८४
यागोपयोगद्रव्याणि १.७७.९३
याचितो देवदेवेन १.३६.३५
याजयामास चेन्द्रेति. १.६६.७६
यानवाहनसंपन्नो २.२२.८३
या नार्येवं चरेदब्दं १.८४.९
यानि चान्यानि पुण्यानि १.९२.१३८
यान्यांश्चिंतयते कामा. १.८१.५५
यान्यांश्चिंतयते कामा. २.२४.४१
यामा इति समाख्याता १.७०.२८०
याम्यपावकयोर्मध्ये २.२७.५६
याम्यमासाद्य वै लोकं १.८३.२३
या लक्ष्मीस्तपसा तेषां १.७१.९१
यावंत्यश्चैव ताराश्च १.५७.६
यावकं चौदनं दत्त्वा १.८३.१७
यावज्जीवं जपेन्नित्य. १.८५.९८
यावत्तु क्षीयते तस्य १.५६.१७
यावत्त्वदृष्टमभव. १.२६.१७
यावद्ग्रहणमोक्षं तु १.८५.१९९
यावन्नरेंद्रप्रवरः १.६६.७१
या वै दृष्टा महासत्त्वा १.२३.४४
याश्च सर्वेषु द्वीपेषु १.१०३.११

यु

युक्तं मनोजवैरश्वै० १.६६.६८
युक्तो योगेन चेशानं १.८८.४४
युगधर्मान् कथं चक्रे १.३९.३
युगमन्वंतराण्यस्य २.१०.४०
युगरूपो महारूपो १.६५.१४८
युगस्वभावश्च तथा १.४०.९९
युगस्वभावाः संध्यास्तु १.४०.४९
युगांतकोटी तौ तस्य १.७२.११
युगांतेषु भविष्यंति १.४०.२५
युगाक्षकोटिसंबद्धौ १.५५.८
युगाक्षकोटिस्त्वेतस्य १.५५.११
युगादिकृद्युगावर्तो १.९८.७२
युगानां परिमाणं ते १.४०.१००
युगे युगे महायोगी १.३३.१२
युद्धा प्रबुद्धा चंद्रा च २.२७.७५
युयोध भगवांस्तेन १.१००२४

युवां प्रसूतौ गात्राभ्यां १.१९.२
युवाभ्यां किं ददाम्यद्य १.२२.९
युष्माभिर्वै कुमाराय १.९९.५
यूपं चांडालकाद्यांश्च १.८९.७५

ये

ये कीर्त्यमानास्तान्सर्वान् १.४९.४६
ये चानिरुद्धं पुरुषं १.४६.१०
ये चान्येपि महात्मानः १.२४.८२
ये चापि वामदेव त्वां १.२३.१२
ये तत्र पश्यंति शिवं त्रिरस्रे १.७५.३९
येन केनापि वा देहं १.९१.७४
येन केनापि वा मर्त्य १.७७.९९
येन भागीरथी गंगा १.६६.२०
येपि चान्ये द्विजश्रेष्ठा १.१२.१४
ये पुत्रपौत्रवत्स्नेहा० १.७८.१२
ये पुनर्निर्ममा धीराः १.९२.६४
ये पुनस्तदपां स्तोकाः १.३९.३९
ये ब्रह्मवादिनो भूमौ १.६४.५१
ये भक्ता देवदेवस्य १.७८.२५
ये मां रुद्रं च रुद्राणीं १.२३.१७
येऽमृतत्वमनुप्राप्ता १.६९.८
ये यजंति विनिंद्यैव २.६.८८
ये ये पदार्था लिंगांका. २.११.३२
ये योग्याः शिवधर्मिष्ठाः २.२०.२८
ये रुद्रमनघं शर्वं २.६.८५
ये शंकराश्रिताः सर्वे १.६.२६
येषां वदति नो वाणी २.६.५६
ये हि मां भस्मनिरता १.३३.६

यै

यैः समिद्भिर्हुतं प्रोक्तं २.२५.४५
यैर्यैर्योगा इहाभ्यस्ता. १.९२.१२१
यैर्लिंगं सकृदप्येवं १.२७.४०
यैस्तु व्याप्तास्त्रयो लोकाः १.६३.९५

यो

योगध्यानैकनिष्ठाश्च १.८९.४९
योगनिद्रासमारूढं २.५.७
योगभूमिः क्वचित्तस्मिन् १.४८.२८
योगमार्गा अनेकाश्च १.२४.१३६
योगशब्देन निर्वाणं १.८.५
योगसिद्धिप्रदं सम्यक् १.९६.१२१
योगाचारः स्वयं तेन १.८८.९१
योगात्मानस्तपोह्लादाः १.१३.१८
योगात्मानो महात्मानः १.२४.३४
योगात्मानो महात्मानः १.२४.५१
योगात्मानो महात्मानः १.२४.६६
योगात्मानो महात्मानः १.२४.७१
योगात्मानो महात्मानः १.२४.९८
योगात्मानो महात्मानो १.२४.१३२
योगादभ्यस्यते यस्तु १.८.५५
योगादेत्य दधीचस्य १.३५.१४
योगाभ्यासरताश्चैव १.२४.८१
योगाश्च त्वां ध्यायिनो १.२१.८६
योगिनः सर्वतत्त्वज्ञाः १.७.२
योगिनां चैव सर्वेषां १.८९.२३
योगिनां निष्कलो देवो १.२०.४२
योगिनां निष्कलो देवो १.७५.३०
योगिनां मोक्षलिप्सूनां १.९२.९२
योगिनां हृदि संस्थाय १.७२.१४७
योगी योग्ये महारेताः १.९८.६५
योगीश्वरान् सशिष्यांश्च १.८.८६
योगीश्वराय नित्याय १.९६.९२
यो गुरुः स शिवः प्रोक्तो १.८५.१६४
योगेन पश्येत्र च चक्षुषा पुन. १.८८.३९
योगेन योगसंपन्नाः १.१४.१२
योगे पाशुपते सम्यक् १.९२.८
योगेश्वरस्य या निष्ठा २.५५.३२
योगो निरोधो वृत्तेषु १.८.७
योग्यं कर्मण्युपरते १.४०.३६
योजनं विद्धि चार्वंगि १.९२.१००
योजनानां महामेरुः १.५२.७
योजनानां सहस्राणि १.५३.२१
योजनानां सहस्राणि १.५३.२३
योजनान्यर्धमात्राणि १.६१.३८
योब्दमेकं प्रकुर्वीत १.८३.८
यो वाचोत्पाटयेज्जिह्वां १.१०७.४२
यो विद्वान्वै जपेत्सम्यक् १.८५.३८
योसौ प्राणांतिको रोग. १.६७.२१
योहं हरेः सन्निकाशं २.१७.७९

र

रंगे करालवक्त्राय १.२१.५९
रंभा चांभोजवदना १.५५.३४
रंस्यते सोपि पद्माक्षि १.९२.६०
रक्तकुंकुमलिप्तांगा १.१२.११
रक्तपद्मासनासीनं २.२३.२७
रक्तपुष्पाणि संगृह्य २.२२.३४
रक्तभागास्त्रयस्त्रिंश. १.८८.५४
रक्तमाल्यांबरधरो १.१२.३
रक्तवस्त्रपरीधानः २.२२.१४
रकतवस्त्रसमं मिश्रै. २.५०.३५
रक्तशाल्यन्नमध्वा च १.८३.३२
रक्तांबरधराः सर्वा २.२२.५५
रक्ता कराली चंडाक्षी २.२७.८८
रक्ताधिक्याद्भवेन्नारी १.८९.१११
रक्ताय रक्तनेत्राय १.७१.१५८
रक्षंति जंतवः सर्वे १.७८.९
रक्षमाणस्य देहस्य १.६९.६०
रक्षसा भक्षिते शक्तौ १.६३.८४
रक्षार्थमंबुधौ मह्यं १.१७.६
रक्षार्थमागतस्त्वद्य १.६४.९१
रक्षोगणं क्रोधवशा १.६३.३८
रक्षोघ्नाय विषघ्नाय १.२१.५४
रक्षो हेतिः प्रहेतिश्च १.५५.३६
रक्षो हेति प्रहेतिश्च १.५५.४८
रजः प्रियांस्ततः सोथ १.७०.२१३
रजः सत्त्वं परित्यज्य १.७०.२६३
रजतेन तु कर्तव्याः २.३७.१०
रजसाधिष्ठितः स्रष्टा १.९६.३२
रजसाबद्धवैरश्च १.१७.१९
रजस्वलानां वृत्तिश्च १.२.३३
रजेश्वरं च पर्याये १.९२.१५६
रणधृष्टस्य च सुतो १.६८.४२
रतिप्रियः सुरेशान २.२७.११५
रतोत्सवरतैश्चैव १.८०.३४
रत्नचूर्णादिभिश्चूर्णै. १.७७.७५
रत्नद्वीपा च सुद्वीपा २.२७.१९७
रत्नधारे गिरिवरे १.५०.६

रत्नभूतोऽथ रत्नांगः १.६५.१४६
रत्नानामप्यलाभे तु १.८१.२४
रत्याः प्रलापमाकर्ण्य १.१०१.२
रत्या समं समागम्य १.१०१.३३
रथं चक्रुः सुसंरब्ध १.७१.१६३
रथं च सप्ताश्वमनूरुवीरं २.१९.३४
रथ आपोमयैरश्वै. १.५७.४
रथजित्सत्यजिच्चैव १.५५.६५
रथश्च हेमच्छत्रं च १.४४.४३
रथांगं दक्षिणं सूर्यो १.७२.३
रथिनश्चर्मिणश्चैव १.७०.३०७
रथेन किं चेषुवरेण तस्य १.७२.९६
रथेनानेन देवैश्च १.५६.३
रथे सुसंस्थितं देवं १.७६.५३
रथैर्नागैर्हयैश्चैव १.४४.५
रथैश्च विविधाकारै० १.७१.३०
रथो रथी देववरो हरिश्च १.७२.१५६
रम्यं ह्यविरलच्छाय १.५१.७
रम्यस्तु पंचमस्तत्र १.४७.५
रराज देवी देवस्य १.७२.८८
रराज भगवान् सोमः १.१०७.२७
रराज मध्ये भगवान् सुराणां १.७२.५६
रविर्विरोचनः स्कंधः १.९८.८२
रवे रश्मिसहस्रं यत् १.६०.१९
रसजातमुमारूपं २.११.२८
रसतन्मात्ररूपत्वात् २.१४.२४
रसमात्रास्तु ता ह्यापो १.७०.३५
रसो रसज्ञः सर्वाः १.९८.१५९
रसोल्लासा कृते वृत्ति. १.८९.९७
रहस्यं वः प्रवक्ष्यामि १.७.१

रा

राक्षसघ्नोऽथ कामारि. १.६५.१२३
राक्षसा नापराध्यंति १.६४.१०९
राक्षसा नाम ते यस्मात् १.७०.२२६
राक्षसानामभावाय १.६४.७३
राक्षसो रुधिरो नाम १.६४.२
रागलोभात्मको भाव. १.३९.२४
रागा रंगवती श्रेष्ठ २.२७.२०१
राघवः सानुजश्चापि १.२९.३४
राजतं कमलं चैव १.८४.१२
राजतं वापि कमलं १.८१.२७
राजतं वा यथान्यायं २.२५.२६
राजतश्च गिरिः श्रीमा. १.५३.१८
राजतेनापि ताम्रेण १.८४.२९
राजप्रतिग्रहैर्दग्धान् १.८५.१४१
राजप्रतिग्रहो घोरो १.८५.१४२
राजयक्ष्मा तिलैर्होमा. २.४९.१२
राजवृत्तिस्थिराश्चौराः १.४०.९
राजसं तामसं वापि १.८८.३२
राजा राज्योदयः कर्ता १.६५.६२
राज्ञा क्षणादहोनष्टं २.८.२७
राज्ञा निरस्तः क्रूरेण २.१.६१
राज्ञी सुदर्शना चैव १.८६.८०
राज्यं पुत्रं धनं भव्य. १.१०८.१७
राज्यं स्वर्गं च मोक्षं च १.१०७.१३
राज्येऽभिषिच्य तं पित्र्ये १.६६.९
राज्यैश्वर्यं च विज्ञानं १.८५.८६
रात्रौ चेन्द्रधनुः पश्ये. १.९१.२४
रात्रौ रात्रौ गृहे यस्मिन् २.६.३९
रात्रौ सर्वे प्रलीयंते १.४.४
रामस्य च तथान्येषां १.६९.९१
रामेश्वरं च परमं १.९२.१४९
रामो दशरथाद्वीरो १.६६.३५
रामो रामश्च कृष्णश्च २.४८.३२
रावणेन हतो योसौ १.६५.४४

रु

रुक्मवर्णं द्रुमं पश्ये. १.९१.५
रुक्मिणी सत्यभामा च २.२७.७२
रुक्मेषुः पृथुरुक्मश्च १.६८.३३
रुक्मेषुरभवद्राजा १.६८.३४
रुचकश्च वृकः पुत्र. १.६६.१४
रुचिकेश्वरकं चैव १.९२.१६७
रुचेः प्रजापतेः सोथ १.७०.२७८
रुदंतं पुत्रमाहेदं १.६२.८
रुद्रः पशुपतिश्चासीत् १.७०.३४६
रुद्रः पशुपतिश्चैव १.७२.४३
रुद्र इत्युच्यते देवै. २.१३.१३
रुद्रकोपाग्निना देवाः १.३६.७३
रुद्रक्षेत्राणि दिव्यानि १.४९.४५
रुद्रक्षेत्राणि दिव्यानि १.४९.४९
रुद्रक्षेत्रे मृताश्चैव १.४७.१६
रुद्रनेत्राय विद्महे २.४८.१९
रुद्रप्रसादजाश्चेति २.६.६०
रुद्रप्रसादाद्विष्णोश्च १.२.४१
रुद्रभक्तश्च गर्भस्थो १.६४.२२
रुद्रभक्तस्य शांतस्य २.९.११
रुद्रभक्ता महात्मानो २.६.१८
रुद्रभक्तार्तिनाशाय १.७१.१५५
रुद्रभक्ताश्च पूज्यंते १.६.३०
रुद्रभक्तिविहीना ये २.६.७३
रुद्ररुद्रेति रुद्रेति २.६.२०
रुद्रलोकं गमिष्यंति १.२३.१८
रुद्रलोकं गमिष्यंति १.२४.२३
रुद्रलोकं गमिष्यंति १.२४.२०
रुद्रलोकं गमिष्यंति १.२४.२७
रुद्रलोकं गमिष्यंति १.२४.१३३
रुद्रलोकं स्मृतस्तस्मात् १.२३.३६
रुद्रलोकमनुप्राप्य १.३३.८
रुद्रलोकमनुप्राप्य १.७७.१९
रुद्रलोके स्थितो नित्यं १.८२.८६
रुद्रव्यूहस्य मध्ये तु २.२७.५५
रुद्रसाधारणं चैव १.९६.६५
रुद्रस्य क्रोधजेनैव १.९९.२०
रुद्रस्यापि तनुर्ज्ञेया २.१३.२५
रुद्राग्निं मे गोपाय २.४५.३८
रुद्राग्निं मे गोपाय २.४५.३९
रुद्राग्नि मे गोपाय २.४५.४०
रुद्राग्नि मे गोपाय २.४५.४१
रुद्राणां देवदेवेशं १.५८.७
रुद्राणी रुद्रमाहेदं १.१०.३९
रुद्रादित्यवसूनां २.४६.२
रुद्राध्यायेन ते देवा २.१७.८
रुद्राध्यायेन पुण्येन १.३०.३
रुद्राध्यायेन वा सर्वं २.२८.९२
रुद्राध्यायेन वा सर्वं २.४७.३३
रुद्राध्यायेन विधिना २.२७.२५९
रुद्राध्यायेन सर्वेश २.१८.६६
रुद्राय कालरूपाय २.२७.२९
रुद्राय मूर्धाननिकृंतनाय १.७२.१६२
रुद्राय रुद्रपतये १.७१.१६०
रुद्रार्चनरता नित्यं १.४६.४८
रुद्रश्च शूलमादित्या १.१०२.३५
रुद्रेण नीलरुद्रेण १.२७.४१

रुद्रेण पवमानेन १.२५.२३
रुद्रे देवे मयात्यंतं १.९२.७५
रुद्रेभ्यो मातृगणेभ्यो २.२६.२४
रुद्रे रुद्रं तमीशाने २.२१.५८
रुद्रैकादशमंत्रैस्तु २.३७.११
रुद्रोपरि महादेवः १.७४.२०
रुधिराज्यार्द्रनैर्ऋत्यै २.२७.२५२

रू

रूपं तथैव विशतः १.७०.४४
रूपं त्वाष्ट्री स्वदेहात्तु १.६५.१२
रूपं वाह्नेयमित्युक्त० १.८६.१३४
रूपकध्यानं कृत्वा २.२४.२५
रूपतन्मात्रकं देवं २.१४.२३
रूपा चतुर्थायोगा च २.२७.२२६
रूपे ते गदिते शंभो २.१५.११
रूपोपादानचिंता च २.९.२४

रे-रौ

रेखांकितकटिग्रीवं २.५.९९
रेवती प्रथमा घोरा २.२७.९२
रेवती यस्य सा कन्या १.६६.४९
रैभ्यस्य रैभ्या विज्ञेया १.६३.५२
रोगैर्नानाविधैर्ग्रस्ता १.८६.३८
रोचते मे सदा वासो १.९२.४२
रोचनाद्यैश्च संपूज्य १.७९.१५
रोचमानस्य रेवोऽभू. १.६६.४८
रोदनात् खलु रुद्रत्वं १.२२.२४
रोधिनी क्षोभिणी बाला २.२७.१८९
रोहिणी च महाभागा १.६९.४४
रौद्रे गोप्रक्षके चैव १.१.३

ल

लंघने समयानां तु १.८९.४५
लंपटा पन्नगा देवी २.२७.२२३
लंबोदरश्च लंबश्च १.७.४३
लंबोदरश्च लंबाक्षो १.२४.५४
लक्षं जप्त्वा ह्यघोरेभ्यो १.१५.७
लक्षं सप्तसहस्रं हि १.४५.१५
लक्षमात्रं पुमाञ्जप्त्वा २.५०.१३
लक्ष्मीः सर्वगुणोपेता १.८२.१०६
लक्ष्मीः साक्षाच्छची ज्येष्ठा १.४२.२३
लक्ष्मीदानं प्रवक्ष्यामि २.३६.१
लक्ष्मीर्धृतिःस्मृतिः प्रज्ञा २.४६.१७
लक्ष्मीवृक्षमयं लक्ष्मी. १.७४.८
लक्ष्म्या देव्या ह्यभूद्देव १.७०.६४
लक्ष्म्याद्यानां बिल्ववने १.४९.६०
लज्जायां विनयः पुत्रो १.७०.९६
लब्धं शशिप्रभं छत्रं १.४४.४०
लब्धदृष्ट्या तया दृष्ट्वा १.३१.४६
लब्धपुत्रः पिता रुद्रात् १.४२.१४
लब्धवान् गाणपत्यं च १.६५.५०
लब्धवान् देवदेवस्य १.६५.११
लब्धवान् परमेशाना. २.८.१२
लब्धवान् भगवांश्चक्रं १.६५.१७
लब्धायामपि भूमौ च १.९.६
लब्धे नाभिप्रदेशेन १.२०.४७
लब्धो हारश्च परमो १.४४.४२
लब्ध्वा पंचाक्षरं चैव २.८.२९
लब्ध्वाभिषेकं संप्राप्तो २.२८.८
लब्ध्वा रथांगं तेनैव १.९८.१९
लब्ध्वासनानि विधिवद् १.८.७८
लब्ध्वा ससर्ज सकलं १.६.१९
लभते नात्र संदेहः १.८४.१८
लयनाल्लिंगमित्युक्तं १.१९.१६
लयश्चैव तथान्योन्य. १.३.३५
ललाटमध्यं निर्भिद्य १.४०.९
ललाटमस्य निर्भिद्य १.४१.२५
ललाटाक्षो विश्वदेहः १.९८.८०
ललाटे कारयेत्पुंड. २.४१.३
ललाटे देवदेवेशं २.२३.३०
लवश्च सुमहाभागः १.६६.३८

ला

लावण्ययुक्तं वृणुया. २.५.७१

लि

लिंगं तु द्विविधं प्राहु. १.७५.१९
लिंगप्रतिष्ठापुण्यं च १.७७.१
लिंगमाच्छाद्य वस्त्राभ्यां २.४७.२८
लिंगमूर्ति महाज्वाला. १.७६.५९
लिंगवेदिसमायोगा. १.९९.८
लिंगस्तु भगवान् द्वाभ्यां १.९९.७
लिंगस्थापनसन्मार्ग. १.७४.२५
लिंगस्थापनसन्मार्ग. १.४६.१४
लिंगस्याराधनं स्नानं १.२.१७
लिंगाध्यक्षः सुराध्यक्षः १.६५.९९
लिंगानि कल्पयित्वैवं १.७४.१
लिंगार्चकश्च षण्मासा. २.२४.३८
लिंगार्चनं यस्य नास्ति २.६.४०
लिंगार्चनरता नित्यं १.२४.१३४
लिंगार्चनं विना निष्ठा १.२४.१४८
लिंगार्चनविधौ सक्तं १.६४.८४
लिंगेस्मिन् संस्थितः श्वेत. १.३०.१८
लिखितो भास्करः पश्चात् १.६५.१५

ली

लीलयैव महासेनः १.१०१.३०
लीलांबुजेन चाहत्य १.७१.१२१

ले-लौ

लेभे स पुरुषः पत्नीं १.७०.२७२
लैंगमेकादशविधं १.३९.६४
लोकं चचार हृष्टात्मा २.६.९
लोककर्ता पशुपति. १.६५.१०१
लोककर्त्ता भूतपतिः १.९८.४१
लोकनाथ परानंद २.५.३९
लोकपालांस्तथास्त्रेण २.२१.३१
लोकपालादिदैवत्यैः २.४७.१५
लोकपालाष्टकदिव्यं २.४३.१
लोकपालैस्तथा सिद्धैः १.८४.६९
लोकपालोंतर्हितात्मा १.९८.६०
लोकपालोपरिष्टात्तु १.५४.४
लोकबंधुर्लोकनाथः १.९८.१३१
लोकान्तकश्च दीप्तास्यो १.१०३.२९
लोकान् प्रकल्पयित्वाथ १.७०.१३८
लोका येनैव तिष्ठंति २.१६.१३
लोकालोकद्वयं किंचि. १.७०.६६
लोके सातिशयत्वेन २.९.४५
लोकोत्तरस्फुटालोक १.९८.१२५
लोहिताक्षी स्तनवती १.२३.९
लौकिकाग्नौ महाभाग २.२५.५४

व

वंदिभिः स्तूयमाना च १.१०२.२५
वंशस्य चाक्षया विद्या २.५५.४३
वंशाच्च बृहदश्वोभूत् १.६५.३५
वंशे त्र्यगिरसां श्रेष्ठे १.२४.६४
वक्तुं मया सुरेशानि १.१०३.७४
वक्तुमर्हसि चास्माकं १.८१.२
वक्तुमर्हसि चास्माकं १.९३.२

वक्तुमर्हसि चास्माकं १.९७.२
वक्तुमर्हसि चास्माकं २.६.२
वक्तुमर्हसि देवेश १.२९.६९
वक्त्रमानय कृत्तिं च १.९६.१५
वक्षःस्थलेस्य पश्यामि २.५.१०७
वक्ष्यंति सततं हृष्टा २.६.२३
वक्ष्यामि ते महेशस्य २.१३.२
वक्ष्यामि वो हितं पुण्यं १.३३.३
वक्ष्यामि शृणु संक्षेपा० १.२७.१
वक्ष्ये संक्षेपतः सम्यक् १.९२.३
वचनं कुरुते वाक्यं २.१०.१६
वचनाद्वो महाभागाः १.९९.६
वज्रं कृत्वा विधानेन २.५१.३
वज्रं क्षेप्तुं न शशाक १.१०२.३२
वज्रं शक्तिं च दण्डं च २.२७.७४
वज्रकोटिप्रभे स्थाने १.८.१००
वज्रपाणिर्महादेवः २.११.८
वज्रवाहनिका नाम २.५१.२
वज्रवैडूर्यमाणिक्य० १.८०.१६
वज्रादिकायुधोपेतैः २.४७.१६
वज्रादीनां च होतव्यं २.२८.६०
वज्रावर्तपर्यंता० २.२५.७७
वज्राशनिरिव स्थाणो १.९६.६०
वज्रास्थित्वं कथं लेभे १.३५.२
वज्रिणं वज्रदंष्ट्रं च १.४२.१८
वज्रिणे वज्रदंष्टाय १.७१.१५७
वडवा च तदा त्वाष्ट्री १.६५.१४
वडवानलशत्रुर्यो १.८२.८५
वडवाया मुखं भग्नं १.९७.२८
वत्सः शुचिः प्रस्रवणे १.८९.६८
वत्सपुत्रो महापुत्रो २.२७.११६
वत्सरश्चासितश्चैव १.६३.५१
वत्स वत्स महाभाग १.४२.२९
वत्साः किमिति वै देवा० १.९८.६
वदंति केचिदाचार्याः २.१५.१०
वदंति मुनयः केचित् १.७५.६
वदंति मूढाः खद्योतं २.६.६१
वदंति वाचः सर्वज्ञं २.१८.२९
वदंति वेदशास्त्रज्ञा० २.१२.३७
वदंत्यव्यक्तशब्देन २.१५.२५
वदंति प्रियमत्यर्थं १.२०.४०
वदामि न मृषा तस्मा० १.३६.४०
वदामि पृथगध्याय० १.६.१०
वदेद्यदि महामोहा० १.८५.१७७
वधं प्राप्तो सहायश्च १.६९.१५
वनानां प्रथमं वृष्ट्या १.४०.८२
वनानि वै चतुर्दिक्षु १.४९.३५
वने तं पुरुषं दृष्ट्वा १.२९.१२
वनोटजद्वारगताश्च नार्यो १.२९.१२
वमेत्मूत्रं पुरीषं च १.९१.४
वयं पुराणि त्रीण्येव १.७१.१५
वरं प्राणपरित्याग० २.२१.७७
वरदं दक्षिणं हस्तं २.२२.५४
वरदानाय हस्तं च २.२६.२१
वरदानेन शुक्रस्य १.६७.१०
वरदाभयहस्तं च १.७६.३६
वरदाभयहस्तं वा २.२३.११
वरदाय वरेण्याय १.२१.३५
वरदायैकपादाय १.९६.९१
वरदो वाङ्मयो वाच्यो १.७१.१०३
वरदोहं वरश्रेष्ठ १.९८.१७९
वरयामास च तदा १.१०७.६२
वरलाभमशेषं च १.९३.३
वरशीलो वरतुलो १.९८.१३५
वरार्थमीश वीक्ष्य ते १.१०५.४
वराहपर्वतश्चैव १.४९.५६
वराहायाप्रमेयाय १.२१.२३
वरीयान् वरदो वंद्यः १.९८.२९
वरुणः सलिलैर्लोकान् २.१०.३१
वरुणश्च तथैवान्यः १.५५.३५
वरुणश्चैव वायुश्च १.३५.६
वरुणासुरयोर्मध्ये २.२७.५७
वरुणो वायुसोमौ च १.८२.४६
वर्जयेत्सर्वयत्नेन १.८९.३८
वर्जयेत्सर्वयत्नेन १.८९.५५
वर्जयेत्सर्वयत्नेन १.८९.१०६
वर्णजातिसमापेतं २.२८.५०
वर्णाः षडधिकाः षष्टि. १.१७.८८
वर्णाच्युतानां नारीणां १.१०५.१८
वर्णाश्रमगुरुर्वर्णी १.९८.५५
वर्णाश्रमपरिभ्रष्टाः १.४०.७१
वर्णाश्रमप्रतिष्ठां च १.३९.५०
वर्णाश्रमप्रतिष्ठा नो १.४०.१०
वर्णाश्रमविधानोक्तं १.८५.१३३
वर्णाश्रमविनिर्मुक्ता १.२८.३३
वर्णाश्रमव्यवस्था च १.३९.१९
वर्णाश्रमव्यवस्था च १.८९.९५
वर्णाश्रमव्यवस्थाश्च २.१७.६
वर्णाश्रमाचारयुतं १.४०.७९
वर्तते त्वसकृद्वृत्तिः १.१०.२०
वर्तते नात्र संदेहः १.१०२.८
वर्तमानव्यतीतानि १.७०.२३
वर्तमानस्तदा तस्य १.८६.६९
वर्तमानानि दुःखानि १.८६.३४
वर्तमानानि सर्वाणि २.१०.४५
वर्तयंति स्म तेभ्यस्ता. १.३९.२३
वर्तितं तु तदर्धेन २.२७.४२
वर्तुलं चतुरस्रं वा १.३१.१६
वर्धन्यां स्थाययेद्देवीं २.४७.३८
वर्धन्यामपि यत्नेन २.४७.३९
वर्धन्यामपि यत्नेन २.४९.३७
वर्येश्वरं पश्चिमे तु १.५५.७६
वर्षतश्च तपंतश्च १.४७.१०
वर्षं माल्यवतं चापि १.२६.३०
वर्षकोटिशतेनापि २.२६.३०
वर्षत्रयं प्रतिदिनं १.६९.२३
वर्षमेकं तु भुंजानो १.८३.४
वर्षमेकं तु भुंजानो १.८४.७
वर्षति सर्वगंधाढ्यां १.८४.१७
वर्षाणां तच्छतं ज्ञेयं १.४.२२
वर्षाणां तत्र जीवंति १.५२.१८
वर्षाणामष्टसाहस्रं १.४.४३
वर्षे तु भारते मृर्त्याः १.५२.२५
वल्कलानां तु सर्वेषां १.८९.५७
वल्मीकेनावृतांगश्च १.४२.३
ववंदिरे नंदिनमिंदुभूषणं १.७२.१२०
ववंदे देवमीशानं १.१६.६

ववर्षुस्तदा पुष्करावर्तकाद्या १.४२.१६
ववृषुश्च सुगंधाढ्यं १.७१.१५०
वशित्वं कथितो व्यूहः २.२७.१२६
वशित्वमथ सर्वत्र १.८८.१०
वसंति ग्रीष्मकौ मासौ १.५५.४९
वसंति देवा मुनयः १.४९.५९
वसंति सर्वदेवाश्च १.६१.८
वसंते कपिलः सूर्ये १.५९.३९
वसंते चैव ग्रीष्मे च १.५९.३०
वसंत्येते तु वै सूर्ये १.५५.५८
वसवस्ते समाख्याताः १.६३.१९
वसिष्ठकोपात् पुण्यात्मा १.६६.८
वसिष्ठयाज्यं विप्रेंद्रा. १.६४.३
वसिष्ठाय च शिष्टाय २.४५.३
वसिष्ठाश्चेत्थमाश्रित्य १.६४.४२
वसुश्रवाः कव्यवाहः १.९८.१०५
वस्त्रपूतेन तोयेन १.७८.१
वस्त्रयुग्ममथोष्णीषं २.२८.८०
वस्त्राणि च प्रधानस्य २.४७.४६
वस्त्राणि ते प्रसूयंते १.३९.२७
वस्त्रैराभरणैर्दिव्यै. २.४३.६
वह्निः समीरणश्चैव १.४१.३
वह्निनी वह्निनाभा च १.२७.७८
वह्नेर्हस्तद्वयं छित्त्वा १.१००.१९
वह्नेश्चैव तु संयोगात् १.४१.२६
वह्नौ विधूमेऽत्यगारे १.८९.१२
वह्न्यात्मा भगवान् देवः २.१.३७

वा

वाकारो नेत्रमस्त्रं तु १.८५.७६
वागीश्वरवागीश्वरी २.२५.७८
वागीश्वरीं पूजयामि २.२५.६९
वाग्वृषाय नमस्तुभ्यं १.२१.१९
वाङ्मनःकर्मजैर्दुःखैः १.३९.६७
वाचःश्रवा मुनिः साक्षात् १.७.१७
वाचःश्रवा ऋचीकश्च १.२४.८९
वाचःश्रवाः सुधीकश्च १.७.४६
वाचःश्रवाः स्मृतो व्यासो १.२४.१०
वाचस्पतिमुखानाह १.९८.१७
वाच्यःपंचाक्षरैर्देवि १.८५.१६
वाच्यवाचकभावेन १.८५.३४
वाच्यवाचकभावेन १.८५.३५
वार्णी दिव्यां महाघोष. २.३.६
वातवेगरवा घोरा २.२७.१३८
वानराननवद्भाति २.५.७३
वापीकूपतडागाश्च १.७७.५३
वापीकूपतडागैश्च १.७१.२९
वामतत्पुरुषाघोर १.१०.४७
वामत्वाच्चैव देवस्य १.२३.१०
वामदेवं ततो ब्रह्मा १.१२.५
वामदेव नमस्तुभ्यं १.१६.११
वामदेवश्च भगवान् १.८२.६
वामदेवादिभिः सार्धं २.२१.८
वामदेवाय ज्येष्ठाय नमो २.२७.२४७
वामदेवेन भस्मांगी २.२१.३४
वामदेवेन मंत्रेण १.२७.३०
वामदेवो महादेवः १.९८.३३
वामनाख्यं ततः कूर्मं १.३९.६३
वामनासापुटेनैव २.२२.२०
वामप्रियाय वामाय १.२१.७०
वामां रौद्रीं महामायां १.४१.४५
वामा ज्येष्ठा च रौद्री च २.२१.६
वामादयः क्रमेणैव २.२७.२६
वामादिभिश्च सहिते २.२६.१४
वामाद्याः पुष्पलिंगं तु १.७४.९
वामाय वामदेवाय १.१८.४
वामेतरं सुविन्यस्य १.७६.५०
वामेन तीर्थं सव्येन २.२२.५
वामे पार्श्वे च मे विष्णु. १.१९.३
वामे पाशं भवान्याश्च १.८४.५९
वायवे वायुवेगाय १.१८.७
वायवो नाडिमध्यस्था १.८६.८२
वायव्यं च तथेशानं २.३.८५
वायव्यचतुर्थेन २.२४.९
वायव्यां सगणैः सार्धं १.७२.६३
वायव्यैश्च तथाग्नेयैः १.९८.१२
वायुः संभवते खात्तु १.८८.५३
वायुः सोमस्तथोशानः १.९५.८
वायुः सोमस्तथेशानो १.१०२.१९
वायुना प्रेर्य तद्भस्म २.२६.१०
वायुर्भस्मेति च व्योम १.७३.१७
वायोः सोमस्य यक्षस्य २.४६.४
वायेर्यष्टि कुबेरस्य १.८४.६२
वायोश्चैव तु रुद्रस्य १.४८.२५
वाराणसी कुरुक्षेत्र. १.९२.७
वाराणसीमनुप्राप्य १.९२.६
वाराणस्यां कृतं पापं १.१०३.७६
वाराणस्यां मृतो जन्तु. १.७७.४१
वाराहः सांप्रतं ज्ञेयः १.७.२९
वाराहमसितं रूप. १.१७.४३
वाराहमहमप्याशु १.१७.३८
वाराहरूपमनघं १.९४.४८
वाराहविग्रहस्तेद्य १.९४.२७
वाराहीं चैव तां सैंही १.९५.२५
वारुणं पुरतः कृत्वा १.२५.९
वारुणेन च ज्येष्ठेन १.२७.४३
वार्ता कृषिं समायाता १.३९.४६
वार्ता च दिव्यगंधानां १.९.२१
वार्ता तृतीया विप्रेंद्रा. १.९.१५
वार्तायाः साधिकाऽप्यन्या १.३९.३७
वालखिल्यगणं चैव २.२२.६४
वालखिल्या नयंत्यस्तं १.५५.२१
वासन्तिकस्तथा ग्रैष्मः १.५५.२४
वासवत्वं च युष्माकं १.९७.९
वसिष्ठस्तुं यदा व्यासः १.२४.११५
वासुदेवनियुक्तोऽसौ २.३.१००
वासुदेव हृषीकेश २.५.१४१
वासुदेवेति नियत २.७.१९
वासोयुगं तथादिव्यं १.४४.२५
वाहनत्वं तवेशान १.७२.१७४
वाह्नेय-तृतीयेन २.२४.८
वाह्नेये कालरुद्राख्ये १.८६.१२८

वि

विंशतिश्च सहस्राणि १.४.२९
विंशतिश्च सहस्राणि १.४.३२
विंशतिश्च सहस्राणि १.४.३५
विकराली कराली च २.२७.१५६
विकरो मणिशैलश्च १.४९.४२

विकर्तनो विवस्वांश्च १.८२.४२
विकारस्य शिवस्याज्ञा १.४.५१
विकीर्य गंधकुसुमै० १.७७.१०२
विकृतं रूपमास्थाय १.२९.९
विकोशश्च विकेशश्च १.२४.२२
विग्रहं देवदेवस्य १.८७.२०
विघ्नं गणेशेऽप्यसुरेश्वराणां १.७२.६५
विघ्नं हरिष्ये देवेशः १.७२.४७
विघ्नेशो मातरो दुर्गा १.८५.७७
विचारणाच्च वैराग्यं १.३९.६८
विचारतः सतां दुःखं १.८६.२३
विचारमुग्ध तव गर्भमंडलं १.६४.३१
विचित्रवस्त्रभूषणै० १.१०५.१२
विचित्रैर्नृत्यगेयैश्च १.८४.५४
विजातिश्चेति षडिमे १.६६.६२
विजातात्मा विधेयात्मा १.९८.४७
विजित्य विष्णुं समरे १.९९.९१
विजित्य विष्णुना सार्धं १.१००.१
विज्ञप्तिं ब्रह्मणः श्रुत्वा १.१०६.८
विज्ञातः स्वेन योगेन १.२३.११
विज्ञातोऽहंत्वया ब्रह्मन् १.२३.२०
विज्ञानानि च यन्त्राणि १.४८.३४
विज्ञानेन तनुं कृत्वा २.२३.४
विज्ञानेन निवृत्तास्ते १.७०.१७५
विज्ञापयामास कथं २.२८.९
विज्ञाप्य शितिकंठाय २.८.११
विज्ञाप्यैवं तदा ब्रह्मा १.१०२.४८
विज्ञाप्यैवं विसृज्याथ २.२६.२५
विज्ञेयस्तामसो नाम १.८८.७०
विज्ञेयास्तारकाः सर्वा० १.६१.२६
विटपनिचयलीनं नील-
कंठाभिरामं १.९२.१९
विड्वराहैश्च चांडालै० १.८५.२१६
विण्मूत्रोत्सर्गकालेषु १.८.२२
वितलं चात्र विख्यातं १.४५.२०
वितलं दानवाद्यैश्च १.४५१९
वितस्तिमात्रमायामं २.३३.६
वितानध्वजवस्त्राद्यै० १.८४.४९
वितानेनोपरिच्छाद्य २.२८.३६
वित्तशाठ्यं न कुर्वीत १.८५.९०
वित्तेशानिलयोर्मध्ये २.२७.५८
विदग्धश्च विचित्रश्च २.२७.१२०
विदितं नास्ति वेद्यं च १.८६.९८
विदुर्भवानीं रुचिरां २.११.१५
विद्महे पुरुषायैव २.२७.४८
विद्यते तत्परं शैवं १.९.५१
विद्यतेपि च सर्वत्र १.७०.२५
विद्यातयेति यस्तस्मा० २.१८.२०
विद्याधराणां विप्रेंद्रा १.५०.१३
विद्यानां प्रभवे चैव १.२१.१७
विद्यानासा खग्रासिनी २.२७.२१२
विद्यार्थी लभते विद्यां १.८१.५४
विद्यार्थी लभते विद्यां १.८२.११४
विद्युज्जिह्वाव महाजिह्वा २.२७.१९०
विद्युतोऽशनिमेघांश्च १.७०.२४७
विद्युत्कोटिनिभे स्थाने १.८.९९
विद्युत्कोटिप्रतीकाश० १.७२.१२५
विद्युद्वलयसंकाशं २.२१.२९
विद्युन्महाबलश्चैव २.२७.१२७
विद्युन्माली तारकाक्षः १.७१.९
विद्युन्मालेश्चायसं वै १.७१.२१
विद्येश्वराणां कुंभेषु २.४७.४१
विधाता सर्वलोकानां २.१५.२४
विधिना चैव कृत्वा तु १.७४.२७
विधिना शास्त्रदृष्टेन १.९.१५
विधिवद्ब्रह्मयज्ञं चे १.२६.३१
विनाकाशं जगत्रैव १.२८.१६
विनाधिपत्यं समतां १.१७.८
विना यथा हि पितरं १.२८.११
विनिंद्यो यत्र भगवान् २.६.३३
विनिघ्नन्सर्वभूतानि १.४०.५९
विनियोगं च भूतानां १.७०.२५४
विनियोगं वदस्वास्या २.५२.२
विनियोगः स विज्ञेयः १.८५.१८५
विनिवृत्ते तु संहारे १.१६.२
विनेदुरुच्चमीश्वराः १.३०.२३
विन्यसेत्सर्वमंत्राणि २.४७.४४
विपरीता निपेतुर्वै १.२९.२१
विपर्ययेण चौषध्यः १.३९.४४
विपर्ययेण भूतादि. १.७०.१६२
विपाकैः कर्मणां वापि २.९.४०
विपुलः पश्चिमे पार्श्वे १.४९.२८
विप्राणां कर्मदोषेण १.४०.५
विबुद्धो विबुधः श्रीमान् १.८२.५८
विबुधाग्रवरः श्रेष्ठः १.९८.१२०
विबुधाग्र्यः सुरः श्रेष्ठः १.६५.१६४
विमुक्तत्रिवलीव्यक्तं २.२५.१००
विभजस्वेति विश्वेशं १.९९.१२
विभज्यमानसलिला १.५२.९
विभीतकार्ककारंज० १.८५.१४७
विभीतकेन वै कृत्वा २.५०.३१
विभुनामा महातेजाः १.२४.३६
विभुश्चानुग्रहं तत्र १.३८.११
विभूतयश्च रुद्रस्य १.२८.२०
विभूतिर्भोगदा क्रांतिः २.२७.१४१
विभूतीः शिवयोर्मह्यं २.११.१
विभूषिता गौरवर्णा २.२७.२३१
विभो रुद्र महामाय १.२२.६
विभोर्यतध्वमाक्रष्टुं १.१०१.२७
विमलस्वादुपानीये १.५१.५
विमला ब्रह्मभूयिष्ठा १.७.५२
विमला ब्रह्मभूयिष्ठा १.२४.१०७
विमलासनसंस्थाय १.७२.१४६
विमाने च स्थिता दिव्ये १.५५.७५
विमानेनार्कवर्णेन २.३.५१
विमाने विमले चित्रे २.१.४८
विमानैर्विश्वतो भद्रै० १.१००.६
विमुक्तिर्विधिनानेन २.१८.५५
विमुख्यो विगुणत्यागो १.१६.२४
विमोचनस्तु शरणी १.६५.८३
विमोह्यावां स्वयं बुद्ध्या २.५.१२३
विरजा च घृतेनैव २.४५.७२
विरराजारविंदस्थः १.२०.३२
विराजेतामुभौ लोके १.७०.१९३
विराड् हिरण्यगर्भात्मा २.१६.११
विरामा या च वागीशी २.२७.२१४
विरिंचोच्छ्वासजाः सर्वे १.५४.४९

विरूपाक्षय लिंगाय १.२१.४३
विरूपाक्षेण स्कंदेन १.२७.४५
विरोचनः सुरगणो १.९८.७४
विरोचन-हिरण्याक्ष० १.४५.१७
विललापातिदुःखार्तः १.४३४
विलोक्य संस्थितेः पश्चा० १.९२.१०९
विवस्वान् दशभिर्याति १.५९.३७
विवस्वान् श्रावणे मासि १.५९.३४
विवस्वान् सविता पूषा १.६३.२६
विवादव्याकुलास्ता वै १.३९.३६
विविशुर्हृदयं सर्वे १.९२.११७
विवृत्तास्यांजलिं कृत्वा २.२२.६०
विश भुंक्ष्य गृहं तेषां २.६.६२
विशाखासु समुत्पन्नो १.६१.४१
विशालजघनाः सद्यो १.८०.२०
विशालशाखस्ताम्रोष्ठो १.६५.११९
विशिष्टः काश्यपो भानु० १.९८.८७
विशिष्टा बलवंतश्च १.६९.६६
विशिष्टान् हरिकेशांश्च १.७०.३०६
विशेष एव कथित २.४५.८४
विशेषाद्देवदेवस्य २.६.७६
विशेषाद्रुद्रभक्ताना० १.३६.२८
विशेषाश्चेंद्रियग्राह्या १.७०.४९
विशोकश्च विकेशश्च १.७.३८
विशोध्य तेषां देवानां १.८०.५५
विशोध्य सर्वद्रव्यैस्तु १.९२.१७२
विशोध्य स्थापयेद्भक्त्या २.४७.८
विश्वं चैव तथा विश्वं २.१८.६
विश्वंभरात्मकं देवं २.१४.३०
विश्वंभरात्मनस्तस्य २.१३.४
विश्वं भूतं तथा जातं १.८७.२३
विश्वकर्माह्वयस्तस्य २.१२.१२
विश्वगोप्ता विश्वभर्त्ता १.९८.८६
विश्वतः पादवदनं १.१७.९१
विश्वपादगिरोग्रीवं १.८८.३७
विश्वरूपः स्वयंश्रेष्ठो १.६५.६५
विश्वरूप महाभाग १.२४.३
विश्वव्यच इतिख्यातः २.१२.१३
विश्वात्मानं हि सर्वं त्वां १.२३.५०
विश्वाधिकः स्वतन्त्रश्च १.९६.३३
विश्वामित्र ऋषिस्त्रिष्टुप् १.८५.५१
विश्वामित्रस्य कण्वस्य १.६९.८५
विश्वेदेवाश्च साध्याश्च २.४६.२०
विश्वेदेवास्तथा रौप्यं १.७४.३
विश्वेदेवास्तु विश्वायाः १.६३.१६
विश्वेश्वर महादेव १.३१.३६
विश्वेश्वरांतं वै विद्या २.२१.४८
विश्वेश्वरान् यथाशास्त्रं २.३४.२
विश्वोष्णीष विश्वगंधा १.१६.४
विषमश्च तदा बाह्यो १.७२.२१
विषमाक्षः कलाध्यक्षो १.९८.१३९
विषयाणां च पंचानां १.८५.२२२
विषयान् विषवत्त्यक्त्वा १.७७.२२
विषयासक्तचित्तोपि १.९२.६३
विषयेषु विचित्रेषु १.९.१२
विषयेषु समासेन १.८.४२
विषसर्पस्य दंतानि २.५०.४०
विषादो विषदश्चैव १.१०३.३०
विष्कंभान्मंडलाच्चैव १.६१.३३
विष्कंभमष्टमात्रं तु २.२८.३१
विष्टंभोष्टाभिरेवेह १.१०३.१७
विष्णुचिह्नसमापन्नै. २.१.४५
विष्णुना कथितैर्वापि २.२८.९३
विष्णुना जिष्णुना साक्षा. १.८१.४२
विष्णुना रावणं हत्वा २.११.३८
विष्णुनोत्पादितैर्भूतै. १.७१.५
विष्णुभक्तमथायांतं २.४.८
विष्णुभक्तस्य च सदा २.४.१४
विष्णुभक्तैर्न संदेहः २.६.९१
विष्णुमायानिरसनं १.९६.१२२
विष्णुमाह जगन्नाथं १.३६.६१
विष्णुरेव हि सर्वत्र २.४.५
विष्णुर्ग्रहपतिः कृष्णः १.९८.९७
विष्णुलोकं ततो गत्वा २.५.६५
विष्णुलोकं ययौ शीघ्रं २.१.४३
विष्णुलोकः स्मृतं स्थानं १.२३.३५
विष्णुस्थले हरि तत्र २.१.८
विष्णोः शक्रस्य देवस्य २.४६.३
विष्णोः स्थलं समासाद्य २.१.११
विष्णो तवासनं दिव्य. १.२६.१३
विष्णेराज्ञां पुरस्कृत्य १.६२.४०
विष्णेरौत्तानपादेन १.५४.३१
विष्णोर्नामविहीना ये २.६.३६
विष्णोर्मायाबलं चैव १.७१.११८
विष्णोर्माहात्म्ययुक्तस्य २.३.१९
विष्णोर्योगबलात्तस्य १.१००.२५
विष्णोर्वरायुधावाप्ति० १.२.५२
विसृज्य सप्तकं चादौ १.६.३
विस्तरानुग्रहः सर्गः १.७०.१६८
विस्तरेण मया वक्तुं १.९२.४
विस्वरस्तु महान् प्रज्ञा १.८.६८
विस्वरो विस्वरो भावो १.८.७०
विस्वरो मंडले पूर्वे २.१९.१५
विस्तरान्मंडलाच्चैव १.४८.३५
विस्तरान्मंडलाच्चैव १.५३.२८
विस्तरान्मंडलाच्चैव १.५७.१५
विस्तारामुत्तरां देवीं २.१९.३०
विस्तीर्णं परिणाहश्च १.२१.२९
विस्तीर्णं मंडलं कृत्वा १.५७.२९
विस्तीर्णं परिणाहश्च १.२१.७४
विस्फुलिंगा यथा ताव. २.११.२३
विस्फुलिंगा विलिंगा च २.२७.२००
विहारं कुरुते पादो २.१०.१८
विहिताकरणाच्चैव १.८६.४१


## वी


वीणाज्ञः किन्नरश्चैव १.८२.५६
वीणी च पणवी ताली १.६५.८४
वीतदोषोऽक्षयगुणो १.९८.१२६
वीतरागो विनीतात्मा १.९८.५८
वीतिहोत्रसुतश्चापि १.६८.२०
वीतिहोत्राश्च हर्यंता १.६८.१७
वीथ्याश्रयाणि चरति १.५६.१
वीरभद्रः समाधाय १.१००.३५
वीरभद्रोपि भगवान् १.९६.११
वीरभद्रो महातेजा १.८२.९८
वीरभद्रो रणे भद्रो १.७२.६१
वीरसेनसुतश्चान्यो १.६६.२५
वीराणां चीरभद्रं च १.५८.६
वीरेश्वरो वीरभद्रो १.९८.७७


## वृ


वृंदशस्तं समावृत्य १.७२.८३
वृक्षस्य मूलसेकेन २.१२.६
वृक्षांस्तान्पर्यगृहणाति १.३९.३०

वृक्षाः पुष्पादिपत्राद्यै. १.७९.२३
वृक्षाणां चैव चाश्वत्थं १.५८.१०
वृतं शिष्यप्रशिष्यैश्च १.७६.३९
वृता सहस्रकोटीभि० २.१.७०
वृतो नंदादिभिर्नित्यं १.८२.८७
वृत्तं तस्य निवेद्याग्रे २.५.७७
वृत्तिभिश्चानुरूपाभि० १.२९.७२
वृत्रेंद्रयोर्महायुद्धं १.२.३७
वृद्धिक्षयौ वै पक्षादौ १.५६.१८
वृद्धो वा मुच्यते जंतु १.८७.१७
वृश्चिकाभरणं देवं २.५०.२५
वृषको वृषकेतुश्च १.६५.११२
वृषध्वनिरिति ख्याता १.४३.४१
वृषप्रभृतयश्चान्ये १.६८.१४
वृषभं नीलवर्णाभ० १.८३.४५
वृषभः पूज्य दातव्यो २.४१.९
वृषभारुह्य सुश्वेतं १.७१.१४३
वृषांकं कारयेत्तत्र २.४१.५
वृषाग्निमातृविघ्नेश० २.४८.४५
वृषारूढं तु यः कुर्यात् १.७६.१७
वृषारूढाय सर्वस्य १.१८.३४
वृषेद्रं पूज्य गायत्र्या २.४१.७
वृषेद्रं स्थापयेत्तत्र २.४१.६
वृषेद्ररूपी चोत्थाय १.७२.३१
वृष्टयः कथिता ह्यद्य १.५४.६१
वृष्ण्यंधकविनाशाय १.२.४७

वे

वेणुमांश्च समेधश्च १.४९.४३
वेतालो रौरवश्चेति २.२७.१२९
वेत्स्यते मां प्रसंख्यातं १.१२.८
वेदकारः सूत्रकारो १.६५.१०३
वेदगर्भाय गर्भाय १.१८.३९
वेदघोषस्तथा विप्रः २.६.१०
वेदघोषो न यत्रास्ति २.६.३८
वेदबाह्यरताचाराः १.७८.२१
वेदमंत्रप्रधानाय १.३१.४१
वेदमाता हिरण्याक्षी २.२७.७३
वेदविक्रयिणाश्चान्ये १.४०.४०
वेदशब्देभ्य एवादौ १.७०.२५८
वेदशब्देभ्य एवेशं १.१७.५७
वेदशाखाप्रणयनं १.३९.५५
वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः १.८२.९२
वेदशीर्षश्च गोकर्णो २.७.३३
वेदाः सर्वे दधिमयं १.७४.११
वेदांतवेद्याय सुनिर्मलाय १.७२.१६०
वेदांतसारसंदोहः १.९८.३१
वेदात् षडंगादुद्धृत्य २.२०.९
वेदाध्ययनशालाभि० १.७१.३१
वेदाध्ययनसंपन्ने २.५.४७
वेदाध्ययनसंपन्नो २.४७.२०
वेदाभ्यासरता नित्यं २.६.२६
वेदानां च पुराणानां १.७.१३
वेदानां प्रभवे चैव १.२१.६
वेदानामपि देवानां २.५४.१९
वेदाश्च पितरः सर्वे १.२६.२२
वेदिकामध्यतो रंध्रं २.२५.३५
वेदिमध्ये तथा कृत्वा २.२५.३८
वेदिमध्ये न्यसेत्सर्वान् २.४७.३४
वेदिरष्टांगुलायामा २.२५.३२
वेद्याय विद्याधाराय २.२१.१७
वेद्यो वेदार्थविद्गोप्ता १.९८.१५२
वेधा धाता विधाता च १.९८.१३६
वेश्मभूतोऽस्य विश्वस्य २.१८.३६
वेष्टयित्वा नवैर्वस्त्रैः २.३०.७

वै

वैकारिकः ससर्गस्तु १.७०.३९
वैकारिकः सात्त्विको वै १.३.२६
वैकुंठेन विशुद्धेन १.१६.२६
वैकुंठे गरुडः श्रीमान् १.५०.५
वैडूर्यनिर्मितं लिंगं १.८१.२२
वैणवी प्रणवी कालः १.६५.८२
वैतृष्ण्यं पुरुषे ख्यातं १.९.८४
वैद्युतोब्जस्तु विज्ञेय० १.५९.११
वैद्युतो मानसश्चैव १.४६.३९
वैनतेयाय विद्महे १.४८.१५
वैनायकादिभिश्चैव १.४५.१८
वैन्येन पृथुना भूमेः १.२.४५
वैभ्राजं पश्चिमे विद्या० १.४९.३६
वैमानिकानामप्येवं १.८६.४४
वैरंभश्च तथा मुख्यो १.८६.८३
वैराग्यं ब्रह्मणो वक्ष्ये १.४१.१५
वैराग्यैश्वर्यसंपन्ने १.७९.१२
वैराग्यैश्वर्यसंयुक्ते २.१९.१९
वैराजात्पुरुषाद्वीरा० १.७०.२७५
वैराजो वै निषादश्च १.४.४७
वैवर्तेन तु ज्ञानेन १.२०.९१
वैवस्वतश्च सावर्णि० १.७.२३
वैवस्वतस्य सोमस्य १.५०.१५
वैवस्वतांतरे कल्पे १.७.२०
वैवस्वतांतरे ते वै १.६३.२५
वैवस्वताय विद्महे २.४८.२०
वैवस्वती दक्षिणे तु १.४८.१६
वैवस्वतेतरे सम्यक् १.७.३५
वैशंपायनतुल्योऽसि २.४६.१०
वैशाखे वै चरेदेवं १.८४.३४
वैश्यः पंचदशाहेन १.८९.९२
वैश्यानां नैव शूद्राणां २.२०.२
वैश्यानामपि योग्यानां २.१८.५४
वैष्णवा इति ये प्रोक्ता २.४.१
वैष्णवान् पालयिष्यामि २.५.४२

वौ

वौषडंतं तथा मूलं २.२२.१६

व्य

व्यक्ताव्यक्तं सदा नित्य० १.७७.१०६
व्यपगतमदमोहमुक्तराग० १.३४.२३
व्यपोहंतु भयं घोर० १.८२.६२
व्यपोहंतु भयं पापं १.८२.६८
व्यमोहंतु भयं पापं १.८२.७७
व्यपोहंतु मलं घोरं १.८२.५९
व्यपोहंतु मलं सर्वे १.८२.५२
व्यपोहनस्तवं वक्ष्ये १.८२.१२२
व्यपोहनस्तवं दिव्यं १.८२.१
व्यपोह्य सर्वपापानि १.८२.१२०
व्यवसायो व्यवस्थानः १.९८.७६
व्यष्टंभयददीनात्मा १.१००.१६
व्यष्टंभयददीनात्मा १.१००.३०
व्यस्तेष्टादशधा चैव १.२.३

व्याख्यां पूजाविधानस्य १.२४.१
व्याघ्रकुंभीनचोरेभ्यो १.७०.३४२
व्याघ्रचर्मधरो व्याली १.९८.५३
व्याघ्ररूपं समास्थाय १.९२.८०
व्याधयो धातुवैषम्यात् १.९.४
व्याधितो मुच्यते राजा २.२७.२८२
व्याधीनां नाशनं चैव २.४९.५
व्याध्यागमे शुचिर्भूत्वा १.८५.२०६
व्यानो व्यानामयत्यंगं १.८.६४
व्यापकस्त्वपवर्गाच्च १.८८.२८
व्याप्य सर्वा दिशो द्यां च १.२०.६२
व्यालकल्पो महाकल्पो १.९८.१०३
व्यालरूपी विलावासी १.६५.८५
व्यालात्मानः स्मृता बाला १.७०.२३०
व्यासशिष्य महाभाग २.२०.८
व्यासस्तु भविता नाम्ना १.२४.९१
व्यासाय कथितं तस्मा० १.८२.२
व्यासावताराणि तथा १.७.८
व्यासाश्चैव मुनिश्रेष्ठा १.७.३६
व्यासेन कथितः पूर्वं १.७९.३७
व्यासो युगे षोडशे तु १.२४.७२
व्यासो हि भविता ब्रह्म० १.२४.१०८
व्युत्थाने सिद्धयश्चैता १.९.५२
व्योमचारी व्योमरूपा २.२७.१५१
व्योमांगणस्थोऽथ हरिः १.६४.१९
व्योमात्मा भगवान्देवो २.१३.११
व्योमादीनि च भूतानि १.८६.१३९
व्योमैकमपि दृष्टं हि १.७५.२४
व्योम्नि कुर्यात्तथा लिंगं १.७६.६०

व्र

व्रतं कृत्वा च विधिना २.८.३०
व्रतं पाशुपतं प्रोक्तं १.८०.४९
व्रतं पाशुपतं योगं १.३४.११
व्रतं सुविपुलं पुण्यं १.८४.२४
व्रतमेतत्त्वया प्रोक्तं १.८१.१
व्रताधिपः परं ब्रह्म १.१५.१६८
व्रतानि वः प्रवक्ष्यामि १.८३.२
व्रतोपवासं मौनं च १.८.३०

श

शंकरश्चाप्रयत्नेन १.६.२२
शंकरस्य परस्यैव २.१५.१८
शंकराय वृषांकाय १.३१.४०
शंकरोऽपि तदा रुद्रै० १.६.२०
शंकिनी हालिनी चैव २.२७.९०
शंकुकर्णेन संभिन्नं १.४५.२१
शंखकूटो महाशैलो १.४९.५४
शंखचक्रगदापद्मं १.३७.२८
शंखचक्रगदाहस्ता १.६९.५२
शंखचक्रगदाहस्ता १.१००.२६
शंखपा द्वैरजश्चैव १.७.४०
शंखपालाय शंखाय १.१८.२०
शंखलोमा च नहुषो १.६३.३७
शंखहारांगगौरेण १.४४.२७
शभवे हैमवत्याश्च १.९५.४४
शंभोः प्रभववाच्यस्य २.९.५१
शंभोश्चत्वारि रूपाणि २.१६.२१
शंभोः षोडशधा भिन्ना २.१२.२१
शक्तयः षोडशैवात्र २.२७.५२
शक्तयश्च तथा सर्वा १.८८.६
शक्तयस्तु चतुस्त्रिंशत् २.२७.६०
शक्ति च परमात्मानं १.८५.६७
शक्तिका शक्तिगर्भा च २.२७.६६
शक्तिमानमितस्त्वं च १.९६.५४
शक्तिरूपं सुवर्णेन २.३१.५
शक्तिर्बीजेन कर्तव्या २.२९.१३
शक्तीनां सर्वकार्येषु २.४८.४
शक्ते स्वयं च सुतं बाल० १.६४.९५
शक्ते स्वयं च सुतं पश्य १.६४.५८
शक्ररूपं समास्थाय १.१०७.२५
शक्रश्च भगवान् वह्नि० १.१०२.१८
शक्राद्यैः सहितो भूत्वा १.९४.११
शतं पुत्रास्तु तस्येह १.६८.१३
शतं वै शंखमणिभिः १.८५.११०
शतं शतसहस्राणा० १.१६.२७
शतद्रोणसमं पुण्य० १.९२.१७७
शतनिष्काधिकं श्रेष्ठं २.२८.७९
शतमष्टोत्तरं तेभ्यः २.४४.७
शतमेकं सहस्राणां १.४९.१
शतयोजनविस्तीर्णं १.२०.८
शतरुद्राः समात्मानो १.७०.३१९
शतशृंगे पुरशतं १.५०.७९
शताक्षश्चैव पंचाक्षः १.७२.७९
शतानि त्रीणि मासानां १.४.१२
शतानि दशवर्षाणा० १.२०.८०
शतानि पंच चत्वारि १.६१.३७
शतारैश्च त्रिभिश्चक्रै० १.५६.२
शताष्टकेन वा कुर्यात् २.२८.४०
शत्रुघ्नो नाम सव्यश्च २.५.१४८
शत्रोरष्टमराशौ वा २.५०.४४
शनैश्चरं तथा राहुं २.२२.५९
शनैश्चरं तथा स्थानं १.६१.११
शनैश्चरं पुनश्चापि १.६०.२५
शनैश्चरदिने स्पृष्ट्वा १.८५.१९०
शनैश्चरो विरूपस्तु १.६१.१९
शप्तश्च सर्वगः शूली १.२९.६८
शब्दः स्पर्शं च रूपं च २.१८.५०
शब्दः स्पर्शस्तथा रूपं २.२०.४९
शब्दः स्पर्शो रसो गन्धो १.८८.२३
शब्दब्रह्मतनुं साक्षा० १.१.१९
शब्दस्पर्शं च रूपं १.७०.४६
शब्दस्पर्शस्वरूपाय १.१८.९
शब्दादिविषयं ज्ञानं १.७५.३
शब्दार्थं चिंतयेद्भूयः १.८५.१२२
शमं जगाम शनकैः १.१००.४२
शमीपिप्पलसंभूता० २.२५.८
शमीपुष्पं च विधिना १.९२.१७५
शमीपुष्पैर्बृहत्पुष्पै० १.७९.१७
शयनं देवदेवस्य १.४९.६६
शयनं बाहनं शय्यां २.२७.२७०
शरणं प्राप्य तिष्ठंति १.९३.१९
शरणागतधारी च १.८२.११९
शरावत्संस्थितत्वा० १.४८.३
शरीरस्थं च भूतानां २.१२.३८
शरीरस्थं च भूतानां २.१२.४०
शरीरस्था च भूतानां २.१२.३४
शरीरिणामशेषाणां २.१२.२०
शरीरिणां शरीरेषु २.१३.१९
शरीरे सति वै क्लेशः १.८६.११२
शरी शतघ्नी खड्गी च १.६५.६७
शरे व्यवस्थिताः सर्वे १.७२.११२

शर्वर्यते प्रकुरुते १.७०.१२१
शर्वर्यते प्रदृश्यंते १.७०.२६०
शर्वर्यते प्रसूतानां १.७०.२५९
शर्वश्चांडकपालस्थो १.७०.५७
शर्वादीनां च विप्राणां २.४५.८०
शर्वाय क्षितिरूपाय १.४१.३०
शर्वाय च नमस्तुभ्यं १.१८.२७
शवगंधि भवेद् गात्रं १.९१.१२
शशबिंदुस्तु वै राजा १.६८.२५
शशबिंदोस्तु पुत्राणां १.६८.२६

शा

शांडिल्यानां वरः श्रीमान् १.६३.५४
शांतं रणाजिरे विष्णो १.९८.१७२
शांतस्य समरे चास्त्रं १.९८.१७३
शांतात्मरूपिणे साक्षात् १.१०४.१८
शांतिः प्रशांतिर्दीप्तिश्च १.८.५८
शांतिधर्मेण चैकेन १.२५.२४
शांत्यतीतं मुनिश्रेष्ठ २.२१.५१
शांत्यतीतादिनिवृत्ति० २.२४.१३
शांत्या बीजांकुरानंत० २.२६.१३
शांबरी बंधुरा ग्रंथिः २.२७.१९८
शाकद्वीपे च गिरयः १.५३.१७
शाकुनं कथयाम्यद्य २.२७.१८७
शाकुनः कथितो व्यूहः २.२७.१९१
शाकमूलफलादीनां १.८९.६५
शाखानां विविधं कृत्वा २.३३.२
शाखामृगामनं दृष्ट्वा २.५.९४
शाखो विशाखो गोशाखः १.९८.४६
शातातपो वसिष्ठश्च १.३९.६६
शापः सत्याकृतो देवान् १.२.२३
शापव्याजेन विप्राणा० १.६९.८३
शाबस्तिश्च महातेजा १.६५.३४
शार्ङ्गचक्रगदापाणिः २.५.३१
शालंकायनपुत्रस्तु १.८२.२६
शालंकायनपुत्रो वै १.४३.५
शालके वा त्यजेत्प्राणां० १.७७.४२
शालिहोत्रोग्निवेशश्च १.७.४९
शालिमध्ये क्षिपेन्नीत्वा २.२९.६
शाल्मलस्येश्वराः सप्त १.४६.३८
शाल्मलेश्च वपुष्मंतं १.४६.२०
शास्त्रं शास्ता च सर्वेषा० १.७१.७४
शास्त्रमित्युच्यते भागं १.८६.१४

शि

शिक्षयस्व यथान्याय० २.३.८२
शिक्षयामास बहुश० २.३.९२
शिक्षाक्रमेण संयुक्त० २.३.५९
शिक्षितोसौ तदा देव्या २.३.१०२
शिखंडिनो वनं चापि १.२४.८८
शिखंडी कवची शूली १.९८.१५०
शिखायै च नमश्चेति २.२१.१३
शितांतशिखरे शक्रः १.५०.१
शिबिकां वैजयंतीं च २.२७.२६०
शिरश्चोत्तरतश्चैव १.१९.१२
शिरसोंगिरसश्चैव १.७०.१८७
शिरस्यंजलिमादाय १.४४.३७
शिरोभिः पतिता भूमिं १.७२.३०
शिरो विमर्शनः सर्व० १.६५.१४
शिलोद्भवानां बिम्बानां २.४८.४४३
शिवं च शंकरं रुद्रं २.८.६
शिवं सदाशिवं देवं २.२१.१५
शिवः समाप्य देवोक्तं १.१०३.६६
शिवक्षेत्रे मुनिश्रेष्ठाः १.७७.४७
शिवगायत्र्याशेषं २.२४.१६
शिवज्ञानं गुरोर्भक्ति० १.८.४१
शिवध्यानैकसंपन्नः १.८२.७
शिवध्यानैकसंपन्नः १.८२.१०
शिवध्यानैकसंपन्नः १.८२.११
शिवध्यानैकसंपन्नो १.८२.८४
शिवपूजां ततः कुर्या० २.२२.७९
शिवप्रणामसंपन्नाः १.८२.५५
शिवप्रणामसंपन्नाः १.८२.५७
शिवभक्तो न यो राजा २.११.३६
शिवमाहात्म्यमेकाग्रः २.१५.२
शिवमुद्दिश्य दातव्यं २.४२.५
शिववत् क्रीडते योगी १.७६.५
शिवविद्यागुरोस्तस्मा० १.८५.१६५
शिवलिंगं समुत्सृज्य २.११.३५
शिवसायुज्यमाप्नोति १.७७.५८
शिवस्नानं पुरा कृत्वा २.२३.२
शिवस्य महती पूजां १.८४.६३
शिवस्य सन्निधाने च १.८५.१०८
शिवस्यैव विकारोऽयं २.१६.२३
शिवस्यैव स्वरूपाणि २.१४.२
शिवाग्निकार्यं वक्ष्यामि २.२५.१
शिवाग्निरिति विप्रेंद्राः २.२५.५६
शिवाग्नौ कल्पयेद्दिव्यं २.२५.९५
शिवा देवी बुधैरुक्ता २.१३.१०
शिवामृतेन संपूतं २.२३.५
शिवाय दद्याद्विप्रेभ्यो २.३८.४
शिवाय दीपं यो दद्या० १.७९.३०
शिवाय रुद्ररूपाय २.२१.१६
शिवाय शिवतत्त्वाय १.७२.१२४
शिवार्चनप्रकारेण २.२८.१४
शिवार्चनरतः श्रीमान् १.८२.१३
शिवार्चनरतः साक्षात् १.८२.१२
शिवार्चना च कर्तव्या २.३०.११
शिवार्चना च कर्तव्या २.४४.९
शिवार्चना तेन हस्तेन २.२४.३
शिवालये निहत्यैक० १.७८.१४
शिवाविशेह मामीश १.८८.८७
शिवास्यजायै विद्महे २.४८.१७
शिवेन कथितं शास्त्रं २.२०.११
शिवेन दृष्टा प्रकृतिः १.३.११
शिवेनैकादशेनाद्रि० १.८५.२१४
शिवोऽग्निं जनयित्वैवं २.२५.९३
शिवो नो भव सर्वत्र १.२१.८८
शिशुर्गिरिस्तः सम्राट् १.९८.९२
शिष्टाचारविरुद्धश्च १.१०.२३
शिष्टाश्च नियतात्मानः १.१६.३९
शिष्यं च वासयेद् भक्तं २.२१.३७
शिष्यमूर्धनिविन्यस्य २.२१.४४
शिष्याः प्रशिष्याश्चैतेषां १.७.५३

शी

शीघ्रत्वं सर्वभूतेषु १.८८.१८
शीतरश्मिः समुत्पन्नः १.६१.४२
शीतांशुमंडलप्रख्यं १.१७.५३

शु

शुकी शुकानुलूकांश्च १.६३.३०
शुक्रं च वृत्तं विश्वेश १.९३.५६
शुक्रः शनैश्चरश्चैव १.८२.७४

शुक्रा तारा तथाज्ञाना० २.२७.२१९
शुक्रं गते परं धाम २.५४.१०
शुक्रेण च वरो दत्तः १.६७.७
शुक्रेण मे समादिष्टा १.६७.६
शुक्लः स्त्रीरूपसंपन्नः १.६५.११९
शुक्लदंताजिनाक्षाश्च १.४०.३४
शुक्लाख्या रश्मयस्तस्य २.१२.१०
शुक्लास्ता नामतः सर्वा० १.५९.२८
शुक्लो विशालः कमलो २.२७.११४
शुचिः सौरस्तु विज्ञेयः १.६.२
शुचौ देशे गृहे वापि १.८५.९४
शुद्धजांबूनदनिभं २.५.२४
शुद्धदीपशिखाकारं २.२३.३१
शुद्धस्फटिकसंकाशं १.१६.५
शुद्धस्फटिकसंकाशं १.१७.८३
शुद्धस्फटिकसंकाशः १.८२.४
शुद्धस्य सिद्धयो दुष्टा १.८.३७
शुद्धहस्ताय विद्महे २.४८.२२
शुद्धान्नं चैव मुद्गान्नं १.७९.१९
शुद्धान्नं वापि मुद्गान्न० १.८१.३९
शुद्धान्नं स्निग्धमश्नीयात् १.८५.१४५
शुद्धिं कृत्वा यथान्यायं १.२७.३५
शुद्धिर्बुद्धिर्धृतिः कांति० २.२७.१७७
शुद्धो विनयसंपन्नो २.२०.३३
शुभलक्षणसंपन्नं २.५.२०
शुभश्चन्द्रावलोकश्च १.६६.४१
शुभांगो लोकसारंगो १.९८.५१
शुभानना शुभश्रोणि० १.५५.३२
शुभावती तदा देवी १.७२.८९
शुश्रूषां कारयेद्यस्तु १.७२.४१
शुभावत्याः सखी शांता १.८२.१८

शू

शूद्रानभ्यर्च्चयंत्यल्प० १.४०.१६
शूद्रान्नं यातयामान्नं १.८५.१३९
शूद्रान्नभोजिनो वापि २.६.६८
शून्यं सर्वं निराभासं २.५५.१४
शूरश्च शूरवीरश्च १.६८.१८
शूलं कपालं पाशं च २.५०.२०
शूलं च विधिना कृत्वा १.८४.११
शूलं परशुखड्गं च २.२३.१०
शूलटंकगदाचक्र० १.९८.१६५
शूलशक्तिगदाहस्तान् १.७१.५८
शूलेन शूलिना प्रोतं १.९३.१२

शृ

शृंगारकेश्वरं नाम १.९२.१५५
शृंगेण पर्णपुटकैः १.२५.२२
शृंगेण पर्गपुटकैः २.२२.६
शृंगैश्चतुर्भिः संयुक्तं १.८४.५३
शृगालरूपः सर्वार्थो १.६५.६९
शृणुध्वं देवमातृणां १.६३.१४
शृणुध्वं यत्कृते यूय० १.४४.१५
शृणु नारद यद्वृत्तं २.३.२३
शृणु भूप यथान्यायं २.१.६
शृणु राजन् यथान्यायं २.४.४
शृणुष्वेतत् परं गुह्य० १.१६.२४
शृण्वंते कल्पे वाराहे १.७.१२
शृण्वंतु वचनं सर्वे २.७.४
शृण्वन्नास्ते स पद्माख्यः २.१.१५

शे

शेषमेव शुभं कोष्ठं २.२७.१५
शेषवासुकिकर्कोट० १.६३.३५
शेषाः पंच ग्रहा ज्ञेया १.६०.१
शेषाणां प्रकृतिं सम्यग् १.६०.२
शेषामिवाज्ञामादाय १.२९.५२
शेषाश्चाश्रमिणः सर्वे १.३४.१२

शै

शैत्यादेकार्णवे तस्मिन् १.७०.१३४
शैलं रसातलं विप्राः १.४५.१२
शैलं वा दारुजं वापि १.८१.२५
शैलजं प्रथमं प्रोक्तं १.७४.१४
शैलजं रत्नजं वापि १.७४.२६
शैलादिनः शुभं चास्ति १.४८.२९
शैलेंद्रः कार्मुकं चैव १.७२.२३
शैलेशं संगमेशं च १.९२.१०६
शैलेश्वरमिति ख्यातं १.९२.८६
शैवं संक्षिप्य वेदोक्तं २.२०.१५
शैवालशोभनाः केचित् १.३१.२४

शो

शोकाविष्टेन मनसा २.१.७७
शोकाविष्टेन मनसा २.१.७७
शोध्य भस्म यथान्यायं १.२६.३५

शौ-श्म

शौक्रं शुक्रोऽविशत्स्थानं १.६१.१०
शौचाचारगुणोपेता २.२०.३१
श्मशानवासी भगवान् १.६५.५७
श्मशानांगारमानीय २.५०.३३
श्मशाने मृतमुत्सृष्टं १.२४.१२८

श्य

श्यामाकान्नघृतक्षीरै० १.८३.२४

श्र

श्रद्धया च कृतं दिव्यं १.३६.१८
श्रद्धया परया युक्तो १.२९.३१
श्रद्धया सकृदेवापि १.७९.९
श्रद्धा च गतिरस्यैव १.७२.१३
श्रद्धा तवास्तु चास्माकं २.५५.४८
श्रद्धाद्याश्चैव कीर्त्यता० १.५.२३
श्रद्धासाध्योथ रुद्रस्तु १.२.३९
श्रद्धा स्वर्गश्च मोक्षश्च १.१०.५३
श्रद्धा ह्यस्य शुभा पत्नी १.९९.१३
श्रमार्थमाश्रमश्चापि १.८६.४६
श्राद्धमार्गक्रमं साक्षा० २.४५.४
श्राद्धे वा दैविके कार्ये १.२१.९१
श्रावकास्ते तथा प्रोचुः २.१.२८
श्रावयेच्च द्विजाञ्छुद्धान् १.८५.२३१
श्रावयेद्वा द्विजाञ्श्राद्धे १.१६.१७
श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या १.३६.२०
श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या १.३६.३५
श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या १.४२.३५
श्रावयेद्वा द्विजान् भक्त्या १.७२.१८१
श्रावयेद्वा द्विजान् विद्वान् १.२१.८९
श्रावयेद्वा द्विजान् सर्वान् १.९२.१९०
श्रावयेद्वा द्विजान् सर्वान् १.९५.३१
श्रावयेद्वा यथान्यायं १.९७.४३
श्रावयेद्वा यथान्यायं १.८९.१२२
श्राव्यं सर्वमुमारूपं २.११.२५
श्रियं पद्मां तथा श्रेष्ठां २.६.४
श्रीकंठस्याधिपत्यं वै १.५०.१८
श्रीकंठाधिष्ठितं विश्वं १.५०.२१
श्रीकंठाधिष्ठितान्यत्र १.५०.२०
श्रीदेवा शांतिदेवा च १.६९.४१
श्रीदेवीं वारुणे भागे २.२७.५४

श्रीदेवीमतुलां कृत्वा २.३६.२
श्रीपतेरुदरं भूयः १.२०.२८
श्रीपर्वतमनुप्राप्य १.९२.१४७
श्रीप्रदं रत्नजं लिंगं १.७१.७४
श्रीफलैरंशुपट्टानां १.८९.५६
श्रीमती नाम विख्याता २.५.५२
श्रीमत्सिद्धवटे चैव १.९२.१५३
श्रीमद्देवह्रदप्रांते १.९२.१६३
श्रीमन्मृगशिरश्चार्द्रा १.८२.७८
श्रीवत्सलक्षणं देवं १.३७.२९
श्रीवत्सवक्षसं देवं २.५.२५
श्रीव्यूहः कथितो भद्रं २.२७.८५
श्रुतमेतन्महाबुद्धे २.५.२
श्रुतयः श्रुतिसारं त्वां १.७१.१११
श्रुतायुरभवत्तस्मात् १.६६.४२
श्रुता वज्रेश्वरी विद्या २.५२.१
श्रुतिप्रकाशः श्रुतिमा० १.९८.१४६
श्रुतिमद्भिश्च विप्रेंद्रैः १.९२.१२३
श्रुतो मयायमर्थो वै २.३.३
श्रुत्वा च भक्त्या चतुराननेन १.७२.१६८
श्रुत्वा तु वचनं तेषां १.५९.३
श्रुत्वा निंदां भवस्याथ १.१०७.४१
श्रुत्वानुगृह्य तं विप्रो १.३६.७२
श्रुत्वानुमोदयेच्चापि १.७९.२७
श्रुत्वा प्रतिमकर्मा हि १.२०.३९
श्रुत्वा प्रभोस्तदा वाक्यं १.७१.१२०
श्रुत्वा भवोपि वचन० १.९३.२५
श्रुत्वा रुरोद सा वाक्यं १.६४.६६
श्रुत्वा वचस्ततस्तस्य १.४१.५२
श्रुत्वा वसिष्ठोऽपि पपात भूमौ १.६४.६७
श्रुत्वा वाक्यं क्षुपः प्राह १.३६.३२
श्रुत्वा वाक्यं तदा शंभो० १.९३.२३
श्रुत्वा वाक्यं दधीचस्य १.३६.४१
श्रुत्वा विगतमात्सर्यं १.२०.५०
श्रुत्वा शक्रेण कथितं १.३९.१
श्रुत्वैवं मुनयः सर्वे २.४७.२
श्रुत्वैवमखिलं ब्रह्मा २.२४.१
श्रूयतां परमं गुह्यं २.२८.४७
श्रूयतां पशुभावस्य १.७२.३८
श्रूयतां मुनिशार्दूला. २.५.५
श्रूयते ऋषिशापेन १.२९.२५
श्रेयोपि शैलराजेन १.१०३.४४
श्रेयोर्थिभिर्नरैर्नित्यं २.१२.४६
श्रोतव्यं च सदा नित्यं २.२.६
श्रोतव्यमस्ति भगवन् २.५.६६
श्रोत्रं जिह्वा ततः प्राण० २.१८.४८
श्रोत्रत्वक्चक्षुषी जिह्वा १.७०.४१
श्रोत्रं शृणोति तच्छक्त्या २.१०.१५
श्रोत्रच्छिद्रमथाहत्य २.१.६३
श्रोत्रियोऽश्रोत्रियो वापि २.४५.७
श्रोत्रे मनसि बुद्धौ च १.९१.४२
श्रोत्रैरेतैर्महामंत्रै० १.१०३.६०
श्रौत्रस्मार्तकृतानां च १.४०.८०
श्रौत्रस्मार्तप्रवृत्त्यर्थं १.१०३.४१
श्रौत्रस्मार्तविरुद्धं च १.७१.७६
श्रौत्रस्मार्तविरुद्धानां १.१०.४
श्रौत्रस्मार्तस्य धर्मस्य १.१०.८

श्व

श्वनीचदर्शनं निद्रा १.८५.१५८
श्वफल्कः काशिराजस्य १.६९.२०
श्वफल्कश्च महाराजो १.६९.१९
श्वभ्रे यो निपतेत्स्वप्ने १.९१.३१
श्वापदो द्विखुरो हस्ती १.७०.२४१
श्वेतं यदुत्तरं तस्मात् १.४७.९
श्वेतः श्वेतशिखंडी च १.७.३७
श्वेतकल्पो यदा ह्यासी० १.२३.२
श्वेतद्वीपे हृषीकेशं २.३.७६
श्वेतागरूद्भवं चैव १.८१.३४
श्वेतार्ककुसुमे साक्षा० १.८१.३५
श्वेतार्ककुसुमे साक्षा. १.८१.३५
श्वेतोस्थिः श्वेतरोमा च १.२३.३
श्वेतानापि गतेनास्यं १.३०.३७
श्वेतेनैवं जितो मृत्यु० १.२९.८३
श्वेतोदरे मुनिश्रेष्ठाः १.५०.११
श्वेतो नाम मुनिः श्रीमान् १.३०.२

ष

षट्चत्वारिंशदध्यायं २.५५.३७
षट्प्रकारं समभ्यस्य १.८६.१२०
षट्साहस्रमितं सर्वं १.६४.१२२
षडंगसहितान् वेदान् १.८१.६
षडंगानि न्यसेत्पश्चा० १.८५.७
षडर्धशुद्धिर्विहिता १.२०.४४
षडश्वं सप्तमातंगं २.६.५३
षडस्त्रं सर्वतो वापि २.२८.२२
षडास्यो द्वादशभुजः १.१०१.२८
षड्ढस्तमंतरं ज्ञेयं २.२८.२९
षड्भिः सहस्रैः पूषा तु १.५९.३६
षड्विधं लिंगमित्याहु० १.७४.१३
षण्मुखस्त्रिपुरध्वंसी २.११.१२
षण्मुखोपि सहसिद्धचारणैः १.७२.६४
षण्मुखो भगवान् देवो २.१३.८
षष्टिश्चैव सहस्राणि १.४.२३
षष्टिचैव सहस्राणि १.४.३०
षष्टसहितेन सद्येन २.२४.७
षष्ठेन भेदयेदात्म० २.२१.५७
षष्ठेन मृगमादाय २.२२.२
षष्ठेन ससद्येन २.२४.१०
षष्ठेनोल्लेखनं कुर्यात् २.२२.७१
षष्ठेनोल्लेखनं प्रोक्तं २.२५.६
षष्ठ्यां गम्या महाभागा १.८९.११२
षोडशस्वरवज्रांग० १.१०४.१६
षोडशात्मस्वरूपाय १.७०.१३१
षोडशैव तु अभ्यर्च्य २.२७.६५
षोडशैव समाख्याताः २.२७.८९

स

संकर्षण महाभाग १.३६.१२
संकर्षणस्य चोत्पत्तिः १.२.४२
संकल्पं चैव संकल्पात् १.७.१८५
संकल्पं चैव धर्मश्च १.५.१२
संकल्पा च मुहूर्ता च १.६३.१५
संकल्पाद्दर्शनात्स्पर्शात् १.६३.२
संकल्पायास्तु संकल्पो १.६३.१८
संकीर्णं तु दिवः पृष्ठं १.७१.१५२
संक्रमे देवमीशानं १.७७.६३
संक्षेपतः प्रवक्ष्यामि १.८.१
संक्षेपाद्विस्तराच्चैव १.५५.७९
संगमे देवनद्या हि १.९२.८९
संग्रामे विजयं लब्ध्वा २.५४.१४
संघट्टे च तथोत्थाने २.३.६४

संघातो जायते तस्मा० १.७०.३६
संजयस्य तु दायादो १.६८.६
संजातः शिखरेश्वत्थः १.४९.३२
संजीवयंत्यशेषाणि २.१०.२७
संजीविनी समस्तानां २.१२.३२
संज्ञा राज्ञी प्रभा छाया १.६५.३
संतप्तहृदयो भूत्वा १.६२.१०
संतप्यमानो भगवान् २.३.४
संताडयामास रुषा १.६५.७
संतोषस्तस्य सतत. १.८.३८
संत्यज्य देवदेवेशं १.७३.२
संत्यज्यापूजयन्साध्व्यो १.७१.८८
संत्यागं चैव वस्त्राणां १.८९.१०७
संत्याज्यं सर्वथा सर्व. १.९.२३
संत्यायतनमुख्यानि १.५०.१७
संध्यां शक्रप्रमाणं च १.२.२१
संध्या च ऋतवश्चैव १.९२.१३०
संध्यातिक्रमणाद्विप्रो १.८५.१३६
संध्यायां मैथुनं येषां २.६.७०
संध्यायामश्नुते ये वै २.६.६६
संध्यालोपे कृते विप्रः १.८९.४४
संनिहत्य कुरुक्षेत्रं १.९२.१२८
संपूजयेद् गां गायत्र्या २.३५.९
संपूजितस्तया तां तु १.२९.५४
संपूज्य चै त्रिदशेश्वराद्यैः १.३६.२१
संपूज्य देवदेवेशं १.७६.४६
संपूज्य पूज्यं त्रिदशेश्वराणां १.९२.३४
संपूज्य पूज्यं विधिनैवमीशं १.८१.५७
संपूज्य पूज्यं सहदेवसंघै. १.७२.५०
संपूज्य लक्षमुष्पेण २.१०.१४
संपूज्य वरदं देवं १.१०२.११
संपूज्य विन्यसेदग्रे २.२७.२३३
संपूज्य शिवसूक्तेन १.६४.७६
संपूज्य स्थंडिले वह्नौ २.४५.१२
संपूर्णैश्च गृहं वस्त्रै. १.८४.४१
संप्रस्थिता वनौकास्ते १.३१.२२
संप्राप्तश्च तदा सत्रं १.६४.११४
संप्राप्यं तुष्टुवुः सर्वं १.५.३२
संप्राप्य तुष्टुवुः सर्वे १.१०६.६
संप्राप्य सांप्रतं सर्वं १.९८.१८
संप्रेक्ष्य चांधकं पार्श्वे १.७६.५१
संप्रेक्ष्य नारीवृंदं वै १.२९.११
संप्रेक्ष्य भगवान्नंदी २.२०.१८
संप्रेक्ष्य सर्वकालेषु १.७.३०
संप्रोक्तं रुद्रगायत्र्या १.७९.३३
संबभूवुर्महात्मानो १.१२.९
संभवं च महादेव्या १.९९.४
संभवः सूचितो देव्या. १.९९.१
संभाराणि तथान्यानि १.४४.३०
संभाविता सा सकलामरेंद्रैः १.५३.६१
संभिन्नो मारुतो यस्य १.९१.१४
संभृतं त्वर्धमासेन १.५६.९
संभ्रांतमानसां तत्र २.५.१०३
संभ्रांतमानसा तत्र २.५.९५
संमार्जनादिभिर्वापि १.७७.३१
संमार्जने तथा नृणां १.७८.५
संमोहं त्यज भो विष्णो १.१९.१३
संयद्वसुरिति ख्यातो २.१२.१४
संयुज्य चाग्निं काष्ठेन २.२५.२३
संयुतं सर्वभूतेंद्रै. १.५१.१२
संयोग एव त्रिविधः १.८८.१४
संयोगी योगविद् ब्रह्मा १.९८.१३८
संरंभातिप्रसंगाद्वै १.१०६.२०
संलापालापकुशलैः १.८०.३१
संलापालापकुशलै १.४८.११
संवत्सरः कृतो मंत्रः १.६५.६३
संवत्सरकरो मंत्र १.९८.६४
संवत्सरत्रयं वाथ २.२०.२६
संवत्सरसहस्रांते २.५०.८
संवत्सरसहस्रैश्च १.७९.२
संवत्सरांते गोदानं १.८१.४७
संवत्सरांते विप्रेंद्रान् १.८३.९
संवर्तो भविता यश्च १.९२.५८
संवृतस्तमसा चैव १.७०.१४२
संवृता बहिरंतश्च १.७०.१५५
संवृतास्योपबद्धाक्ष १.८.८८
संशोध्य च शुभं लिंग १.७९.१०
संसारकालकूटाख्या० १.८६.१५४
संसारदर्शनं चैव १.९.४६
संसारबंधच्छेदार्थं १.२४.१३५
संसारविषतप्तानां १.८६.१४३
संसारान्मोक्तुमीशान १.४१.५९
संसारो द्विविधः प्रोक्तः १.८६.१०
संसिद्धः कार्यकरणे १.७०.८५
संसिद्धः कार्यकरणे १.७०.५७
संसृष्टैः क्वचिदुपलिप्त-
कीर्णपुष्पै. १.९२.२६
संस्कृते वेदिसंयुक्ते २.४७.२२
संस्तुता जननी तेषां १.८२.२३
संस्थितायांभसां मध्ये १.१८.११
संहतानां महाभागा १.८९.६३
संहरत्येश भगवान् १.३१.५
संहर्त्तुर्न हि संहारः १.९६.२७
संहर्त्रे च पिशंगाय १.३१.३८
संहिता ऋग्यजुःसाम्नां १.३९.५९
संहितामंत्रितं कृत्वा २.२२.३७
संहितामंत्रितेनैव २.२१.७५
संहृत्य कालकूटाख्यं १.८६.४
स आत्मानं निहत्यैव २.५०.४९
स एव जगतां कालः १.४९.६५
स एव तेजस्त्वोजस्तु १.५४.६३
स एव द्वीपपश्चार्धे १.५३.२४
स एव परमात्मासौ १.६९.४७
स एव परमेशानः १.१०२.७
स एव भगवान् रुद्रो १.३.२९
स एव भगवान् रुद्रो २.९.१७
स एव मुक्तः संसारा. १.८६.११४
स एव मोचकस्तेषां २.९.१४
स एव वैभवः प्रोक्तो १.५३.४
स एव सर्वदेवेशः १.७१.५२
स एव सुखवत्यां तु १.५४.७
स एवैकादशार्धेन १.७०.३२६
स एष स महारुद्रो २.१८.३०
सकलं मुनयः केचित् १.७५.३३
सकलदुरितहीनं सर्वदं
भोगमुख्यं १.८०.६
सकलदेवपतिर्भगवानजो २.४७.२
सकलध्यानं निष्कलस्मरणं २.२४.३५
सकलभुवनभर्ता १.९२.३२
सकुटुंबो महातेजा २.१.१४

सकूर्चेन सपुष्पेण १.२७.३९
सकूर्चेन सवस्त्रेण २.२७.७४
सकेतुर्दक्षिणे द्वीपे १.४९.३१
सगणं शिवमीशानं १.९३.२०
सगणः सर्वदः शर्वः १.१००.४३
सगणश्चाम्बया सार्धं २.१८.६५
संगणो गणसेनानी. १.७१.१४५
सगणो नंदिना सार्धं १.१०३.७१
सगर्भो गर्भ इत्युक्तः १.८.५१
सगुणे निर्गुणो वापि १.८५.१६६
सघृतं शंकरं पूज्य १.८३.४४
सघृतं सगुडं चैव १.८४.२०
सघृतेन तिलेनैव २.५३.३
स तं दृष्ट्वा महात्मान. १.१४.६
स तां गतिमवाप्नोति १.७९.२८
स तां जितात्मनां साक्षाद् १.१०.१
सतारकाक्षेण मायेन गुप्त १.७१.५६
सती ख्यात्यथ संभूतिः १.७०.२८७
सती संज्ञा तदा सा वै १.९९.१४
सत्त्वं कृतं रजस्त्रेता १.३९.६
सत्त्वमात्रात्मिकामेव १.७०.२०७
सत्त्वेन सर्वभूतानां १.३७.३१
सत्त्वोद्रेकात्प्रबुद्धस्तु १.७०.११८
सत्यं ऋतं तथा वायु. १.५४.६४
सत्यं ब्रह्मा महादेवं २.१८.३८
सत्यं शौचं दया शांतिः १.८१.४६
सत्यनेत्रो मुनिर्भव्यो १.५.४७
सत्यमस्तेयमपरं १.८.११
सत्यमानंदममृतं १.१७.६०
सत्यवाक् सत्यसंपन्नः १.६९.१६
सत्यवादी जितक्रोधः १.८३.१५
सत्यव्रतो महात्यागी १.९८.१४८
सत्रं ते विरमत्वेतत् १.६४.११२
सत्वरं सर्वयत्नेन १.१७.४५
सदसद्रूपमित्याहुः २.१५.३
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं १.६५.१५८
सदसद्व्यक्तिहीनाय १.९५.३९
सदाचाररताः शांताः १.८९.३१
सदाचारी जपन्नित्यं १.८५.१२७
सदा जयति यज्ञेन २.२१.८०
सदा तु चन्द्रकांतानां १.५२.२३
सदारतनयाः श्रांता १.३०.३४
सदारान् सर्वतत्त्वज्ञान् १.२६.१८
सदावगाह्यः सलिले १.८.३५
सदाशिवं स्मरेद्देवं २.२१.३०
सदाशिवाय शांताय १.७२.१४१
सदाशिवो भवो विष्णु. १.३.३८
सदुकूला शिवे रक्ता १.७२.९३
स देहन्यास इत्युक्तः १.८५.६१
स देवदेवो भगवां. १.२४.१४४
सद्भाववचनं ब्रूहि १.२०.५५
सद्भिः सह विनिश्चित्य १.९०.२३
सद्यं पश्चिमपत्रे तु २.२१.११
सद्यमष्टप्रकारेण २.२१.२१
सद्यमूर्तिं स्मरेद्देवं २.२१.२०
सद्याय सद्यरूपाय १.९५.४९
सद्येन गंधं वामेन २.२४.१५
सद्येन पश्चिमे होमः २.२७.२४८
सद्योजातं जपंश्चापि १.७९.२२
सद्योजातं ततो ब्रह्मा १.११.५
सद्योजातं ततो ब्रह्मा १.११.६
सद्योजातं तथा रक्ते १.१०.४५
सद्योजातं महादेवं २.१४.२५
सद्यो जाताह्वया शंभो २.१४.१०
सद्यो जातेति ब्रह्मैतद्. १.२३.६
सद्योपि लभते मुक्तिं १.२९.८१
सद्यो रात्र्यहनी चैव १.७०.२१६
सनंदनश्च भगवान् १.४६.११
सनंदी सगणः सोम. १.५३.१३
सनकः सनंदनश्चैव १.२४.३०
सनकः सनातनश्चैव १.२०.८६
सनकश्च सनंदश्च १.७.३९
सनत्कुमारं वरद० २.२८.५
सनत्कुमारः प्राहेदं २.२८.७
सनत्कुमारः सिद्धेस्तु १.४८.२७
सनत्कुमार संक्षेपात् २.१०.२२
सनत्कुमार सारंग १.१८.१९
सनत्कुमाराय शुभ १.२५.४
सनत्कुमारो भगवान् २.२८.११
सनत्कुमारो भगवान् २.५५.३४
सनातनं सतां श्रेष्ठं १.३८.१२
सनातनमजं विष्णुं १.१७.२१
सनारायणका देवाः १.१७.२४
सन्नतिं चानसूयां च १.५.२२
सन्नद्धश्च तु यो रश्मिः १.६०.२४
सन्नद्धैः सह सन्नह्य १.९७.११
सन्नामश्च शतेनैव १.१०३.२१
सपिंडता च पुरुषे १.८९.८६
स पौर्णमास्यां दृश्येत १.५५.७
सप्त जिह्वा प्रकल्प्यैव २.२५.५५
सप्ततंतुर्महादेवो २.११.५
सप्तद्वीपसमुद्राद्यैः २.३२.४
सप्तद्वीपां ययातिस्तु १.६७.१३
सप्तद्वीपा तथा पृथ्वी १.४६.१
सप्तद्वीपेषु सर्वेषु १.४६.३
सप्तधा चाष्टधा चैव १.३.५
सप्तपातालपादश्च १.८२.३२
सप्तपातालपादस्त्वं १.३६.१५
सप्तभागैकभागेन २.३२.६
सप्तमस्तस्य वक्ष्यामि १.७.२८
सत्य मेधातियेः पुत्राः १.४६.४२
सप्तमो मंदरः श्रीमान् १.५३.९
सप्तमो मानुषे विप्रा १.५.८
सप्तम्यां चैव कन्यार्थी १.८९.११४
सप्त राजन्यवैश्यानां २.१.१६
सप्तलोकाय पाताल० १.७२.१३३
सप्तवर्षा ततश्चार्वाक् १.८९.८३
सप्तविप्रान् समभ्यर्च्य २.३४.४
सप्त वै शाल्मलिद्वीपे १.५३.५
सप्त सप्त गणांश्चैव २.२२.६२
सप्त सप्तर्षिभिश्चैव १.४०.७७
सप्तस्वरांगनाः पश्यन् २.३.९३
सप्तांडावरणन्याहु. १.३.३३
सप्ताक्षरोयं रुद्रस्य २.८.४
सप्ताश्वस्यैव सूर्यस्य १.५७.२२
सफलं साधितं सर्वं १.१.१६
सबांधवान् क्षणादेव १.९८.२०

स बाहुरुद्यमस्तस्य १.१०२.३१
स बाह्याभ्यंतरं चैव १.१७.५५
स बिभ्रत्परमां मूर्ति १.९२.११३
सबीजसंपुटं मंत्रं १.८५.२२९
स बुद्ध्वा देवमीशानं १.१०२.४१
सब्रह्मकाः सशक्राश्च १.१०२.५८
सभा च सा भूमिपतेः समृद्धा २.५.८६
सभार्यस्त्वं गृहं तस्य २.६.३२
स भुक्ते विषयांश्चैव १.८८.२७
समं कुपित वृत्ताग्नि. १.९६.६९
समं चाघोरपूजायां २.२६.८
समंतात्समतिक्रम्य १.५२.१०
समं नयति गात्राणि १.८.६५
समं कायशिरोग्रीवो १.९१.३९
समक्षं यदि तत्सर्व १.८५.१६८
समजानुस्तथा धीमा. १.८.८७
समर्चनाय तत्त्वस्य २.२१.४९
समर्च्य स्थापयेल्लिंगं २.४७.१४
समस्तव्यक्तरूपं तु २.१५.९
समस्तव्यस्तयोगेन २.५५.१०
समाः सविंशतिः पूर्णा १.४०.५२
समागतं विलोक्याथ १.६२.३०
समागतानि चैतानि १.७१.१७
समागतो मया सार्धं १.१७.४७
समागमे च भेदे च १.५७.३५
समाधानाभिगम्याय १.७२.१५१
समाधिना यतिश्रेष्ठाः १.८.७७
समानजो वसिष्ठश्च १.७०.१८८
समायुक्तो निवृत्तात्मा १.९८.४९
समालिंग्य च दुःखार्तो १.४३.११
समालोक्य च तुष्टात्मा १.४३.२६
समावृत्य महादेवं १.७२.८४
समासतो मुनिश्रेष्ठाः १.५.१५
समासनस्थे योगांगा. १.८.८५
समासाद्वा प्रवक्ष्यामि. १.८४.२३
समासाद्विस्तराच्चैव १.७१.१
समासीनास्तु परितो २.३.१०
समाहितो ब्रह्मपरो प्रमादी १.८९.२९
समिदाज्यविधानेन २.३५.१०
समिदाज्याहुतीर्हुत्वा २.२३.२८
समिद्धुत्वा विधानेन २.३६.६
समीपस्थोप्यनुज्ञाप्य १.८५.१८२
समीरो दमनकारो १.६५.९२
समुत्थाप्य स्नुषां बाला. १.६४.३०
समुद्धृतायै विद्महे २.४८.१४
समुद्रतीरे देवह्रदे १.८५.१०७
समुद्रास्तस्य चत्वारो १.७२.१७
समुद्रेषु च सर्वेषु १.८७.२१
समुद्रेष्विह सर्वेषु १.४६.५
समुद्रो भगवानरुद्रो २.११.६
स मृगार्धशरीरेण १.९६.६७
सम्यग् विजयमाप्नोति १.८५.२२४
सम्यगविनीता ऋजव. १.१०.१५
सम्राट् च शतरूपा वै १.७०.२७४
सयमाश्च सरुद्राश्च १.१०२.५६
स याति दिव्यमतुलं २.७.३१
सयाति ब्रह्मणो लोके १.७८.४१
स याति ब्रह्मणो लोकं १.७९.३२
स याति ब्रह्मलोकं तु २.८.३६
स याति ब्रह्मसयुज्यं १.१७.२
स याति मम सायुज्यं १.९२.१७०
स याति मुनिशार्दूल १.८३.१९
स याति वायुसायुज्यं १.८३.४०
स याति शिवतां चैव १.७७.४८
स याति शिवतां योगी १.७७.४४
स याति शिवतां विप्रो १.१९.१७
स याति शिवसायुज्यं १.९३.१८
स याति शिवसायुज्यं १.७९.३६
स याति शिवसायुज्यं १.८४.६
स याति शिवसायुज्यं १.९१.७५
स योगी सर्वतत्वज्ञो १.७३.१८
सरथं विष्णुमादाय १.१०१.१३
स रथोधिष्ठितो देवै. १.५५.१७
सरस्वत्या महादेव्या १.८२.१०३
सरस्वत्याश्च नासाग्रं १.१००.३८
स राजा सर्वलोकेषु २.३.३७
सरित्सरस्तडागेषु १.२५.११
सरीसृपत्वाद्गच्छेद्वै १.८८.६८
स रुद्रत्वं समासाद्य १.९६.१२८
सर्गं विसृज्य चात्मान. १.४१.१९
सर्गः प्राधानिकः पश्चात् १.२.६
सर्गकर्ता त्वकाराख्यो १.१७.६२
सर्गकाले प्रधानस्य १.७०.८
सर्गस्तृतीयश्चैंद्रिय. १.५५.७
सर्गे च रजसा युक्तः १.३.३६
सर्पान् सृष्ट्वा ततः क्रुद्धः १.७०.२३२
सर्पा वहन्ति वै सूर्यं १.५५.६९
सर्वं प्रकृतिमापन्नं १.८५.८
सर्वं मम कृतं देव १.२२.१०
सर्वं लिंगमयं लोकं २.४६.१३
सर्वं व्याप्नोति यस्तस्मान् २.१८१६
सर्वं एव स्वयं साक्षा. १.२९.४८
सर्वकर्माणि भोगार्थं १.८.७२
सर्वकार्यविधिं कर्तुं. १.४४.३३
सर्वकार्याणि विधिना २.५२.८
सर्वकार्येणहेतुत्वात् २.९.२३
सर्वकुंडानि वृत्तानि २.४८.३
सर्वकुष्ठक्षयार्थं च २.४९.१३
सर्वगः सर्वदः शांतः १.८२.९
सर्वगः सर्वदृक् शर्वः १.८२.२७
सर्वगत्वाच्च देवानां १.७०.१०२
सर्वगत्वात्प्रधानस्य १.५३.४८
सर्वगुह्यपिशाचानां १.२१.२२
सर्वज्ञं सर्वगं देवं १.७६.१४
सर्वज्ञः समबुद्धिश्च १.२४.५८
सर्वज्ञः सर्वदेवादि १.९८.३०
सर्वज्ञः सर्वविज्ञानात् १.७०.९९
सर्वज्ञत्वं तथैशान्यं १.२७.२६
सर्वज्ञाः सर्वगा दीर्घा १.६.१५
सर्वतः पाणिपादं तत् १.८८.४३
सर्वतः पाणिपादं त्वां १.७१.१०७
सर्वतः पाणिपादाय १.२१.३८
सर्वतीर्थफलं तच्च १.८५.२१५
सर्वत्र प्राणिनामन्नं १.८६.९२
सर्वत्र सर्वदा ज्ञानं १.९.१८
सर्वत्राभिभवश्चैव १.९.४५
सर्वथा वर्तमानोपि १.३२.८

सर्वदा क्षुधितैश्चैव १.७१.३५
सर्वदाय शरण्याय १.७१.१५६
सर्वदुःखविनिर्मुक्तो २.४९.६
सर्वदुःखसमोपेताः २.५०.३८
सर्वदेवमयो चिंत्यो १.९८.११९
सर्वदेवमयो भूत्वा १.९१.६८
सर्वदेवेश्वरः श्रीमान् १.१०२.६
सर्वदेवैः परिवृतः १.६२.२९
सर्वद्रव्याभिषेकं च २.२७.२४४
सर्वद्वंद्वसहा धीरा २.२०.२९
सर्वद्वंद्वसहो धीरः १.८६.१४८
सर्वधान्यसमायुक्तं १.८४.५२
सर्वनाशकरं ध्यात्वा २.५०.१९
सर्वपर्वसु पुण्येषु १.९२.१२५
सर्वपापविनिर्मुक्तः १.६७.२८
सर्वपापविनिर्मुक्तः २.७.९
सर्वपापविनिर्मुक्तः २.२२.८१
सर्वपापविशुद्धात्मा १.३४.२५
सर्वपापविशुद्धयर्थं १.१८.४२
सर्वपापविशुद्धर्य. १.२५.१८
सर्वपापहरं चैव १.८५.५४
सर्वपापहरं दिव्यं १.९२.११८
सर्वपापहरं शुद्धं २.७.५
सर्वप्रणतदेहाय १.३२.३
सर्वप्रणयसंवादी १.९८.३४
सर्वप्रतिष्ठासंहार. १.१.२४
सर्वप्राणाय विद्महे २.४८.२३
सर्वभक्षरता नित्यं २.६.६४
सर्वभव्या च वेगाख्या २.२७.९७
सर्वभूतप्रसादश्च १.९४.७
सर्वभूतमयश्चैव १.७२.२
सर्वभूतस्य दमनी २.२१.७
सर्वभूतात्मभूतस्य १.६५.५३
सर्वभूतात्मभूताय १.२१.५७
सर्वभूतेषु सर्वत्र १.३५.२०
सर्वमंगलदं पुण्यं १.८१.७
सर्वमर्हति कल्याणं १.६७.९
सर्वमात्मनि संपश्येत् १.८६.६१
सर्वमासेषु कमलं १.८१.२३
सर्वमासेषु सामान्यं १.८१.१९
सर्वयज्ञतपोदान. १.७७.१३
सर्वयज्ञफलैस्तुल्य. १.९२.१४१
सर्वरत्नसमायुक्तं १.८४.३३
सर्वरूपा तथा चेमे १.२३.२६
सर्वरोगक्षयं चैव १.८१.३३
सर्वरोगैर्न बाध्येत १.७२.१८४
सर्वलक्षणसम्पन्नः २.२०.३५
सर्वलोकहितायैनं १.९५.५८
सर्वलोकाधिपत्यं च १.४३.५२
सर्वलोकेश्वरोऽहं त्वां २.५.२८
सर्वलोकैकसंहर्ता २.१४.३
सर्वविग्रहिणां देहे २.१४.१८
सर्वविघ्नाननिक्रम्य १.७६.३४
सर्ववेदान्सदस्याह २.७.२७
सर्ववेलामतिक्रम्य १.८३.१२
सर्वव्याधिहरं चैव १.८१.८
सर्वव्रतेषु संपूज्य १.८५.१
सर्वसंकल्पशून्याय १.१०४.२५
सर्वस्य जगतश्चैव १.८८.८९
सर्वांगरूपी मायावी १.६५.१२२
सर्वांल्लोकान् क्रमेणैव २.१८.२५
सर्वांस्तानग्रजान् दृष्ट्वा १.४१.४१
सर्वाकारौ स्थितावेतौ २.११.४१
सर्वातिशयसंयुक्तै० १.८४.५
सर्वात्मको महादेवो १.८१.४४
सर्वात्मनश्च तस्याग्रे १.४१.४८
सर्वात्मनात्मनि स्थाप्य १.४७.२२
सर्वात्मानं महात्मानं १.४५.५
सर्वात्मा सर्वविख्यातः १.६५.५५
सर्वान्कामानवाप्नोति १.८५.२०५
सर्वाभयप्रदानं च २.१३.३७
सर्वाभरणसंपन्न. २.५.९८
सर्वाभरणसंपूर्णा २.२७.२३०
सर्वाभरणसंयुक्तं २.१९.८
सर्वाभरणसंयुक्तं २.२६.१७
सर्वाभरणसंयुक्तं २.५.११५
सर्वाभरणसंयुक्त. १.१८.२५
सर्वाय च नमस्तुभ्यं १.९२.१४२
सर्वायतनमुख्यानि
सर्वायुधसमोपेतं २.३९.४
सर्वार्थज्ञाननिष्पत्ति. १.८.३
सर्वावरणदेवानां २.२५.१०३
सर्वावरणनिर्मुक्तो २.५५.१९
सर्वावर्तेषु रूपाणि २.४८.३१
सर्वावसुः पुनश्चान्यः १.६०.२१
सर्वावस्थां गतो वापि २.५४.३४
सर्वाशयः सर्वचारी १.६५.१३०
सर्वाश्च द्विभुजा देव्यो २.२७.२२९
सर्वाश्च ब्रह्मवादिन्यः १.७०.२८४
सर्वा सती विश्वरूपा २.२७.१३६
सर्वास्ताश्च महाभागाः १.७०.२८३
सर्वे तपस्विनस्त्वेते १.६.४
सर्वे ते जपयज्ञस्य १.८५.११८
सर्वे ध्रुवनिबद्धा वै १.५७.५
सर्वे पाशुपते ज्ञान० १.६६.४४
सर्वे प्रांजलयो भूत्वा १.३१.२०
सर्वे भवांशजा नूनं १.८७.२२
सर्वे लिंगमया लोकाः २.११.४०
सर्वे वणिग्जनाश्चापि १.४०.२७
सर्वे वयं हि निर्याताः २.१.७२
सर्वे विज्ञापयामासु. १.९४.७
सर्वे विद्युत्प्रभाः शांता. २.२२.५३
सर्वे शृण्वन्तु वचनं २.९.९
सर्वेश्वराय विद्महे २.४८.२५
सर्वेषां कलशं प्रोक्तं २.२७.२३५
सर्वेषां ब्राह्मणानां तु १.२५.२९
सर्वेषां शृणु यज्ञानां १.२६.२०
सर्वेषां सिद्धियोगाना. १.२१.७२
सर्वेषामपि देवानां २.४८.१
सर्वेषामापि भूतानां १.२६.१७
सर्वेषामेव भूतानां १.८९.१२१
सर्वेषामेव भूतानां १.१०४.१९
सर्वेषामेव भूताना. २.१६.१५
सर्वेषामेव मर्त्यानां १.७४.३०
सर्वेषामेव लोकानां २.१४.४
सर्वेषु सर्वदा सर्व. १.१०४.२७
सर्वेष्वेव शरीरेषु २.१४.१६
सर्वे सहस्रहस्ताश्च १.१०३.३२

सर्वे स्त्रीपुरुषाः प्रोक्ताः. २.११.२०
सर्वोपरि निकृष्टानि १.५७.१८
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं १.८.१०७
स लब्ध्वा गाणपत्यं च १.१०३.६८
सलोहगंधान्निर्मुक्त. १.६६.७७
सवनं ब्रह्मणश्चैव १.२.९
सवने स्यंदनेऽर्थे च १.६१.४
सवनानां सहस्रं तु १.४.४४
सविस्मयं वचः श्रुत्वा १.२०.१९
स वै भक्त इति ज्ञेयः २.४.९
स वै शरीरी प्रथमः १.७०.६३
स वै शरीरी प्रथमः १.७०.८६
स वै स्वायंभुवः पूर्वं १.७०.२७१
सशब्दस्पर्शरूपं च १.७०.४५
सशब्दे सभये वापि १.८.८०
सशरीरं तदा तं वै १.६६.१०
सशैवालं तथान्यैर्वा १.८९.५२
ससंध्यांशेषु हीयते १.४०.८५
ससमुद्रामिमां पृथ्वीं १.७०.१३७
ससर्ज च तदाविघ्न. १.१०५.२८
ससर्ज जीवितं क्षणाद् १.३०.२१
ससर्ज सकलं तस्मात् १.४१.१६
ससर्ज सकलं ध्यात्वा १.३७.१७
ससर्ज सर्गमन्यं हि १.७०.१५२
ससर्ज सृष्टिं तद्रूपां १.७०.१३९
ससर्जुः पुष्पवर्षाणि २.७.२८
ससर्जुरस्य मूर्ध्नि वै १.३०.२४
स सर्वकारणोपेत. २.१७.४
ससूत्रं सपिधानं च २.२१.३५
ससृजुः पुष्पवर्षाणि १.७१.१३३
ससृजुः पुष्पवर्षाणि १.९३.१४
सस्मार च तदा तत्र १.३५.१३
सस्मितं प्राह संप्रेक्ष्य १.३३.२४
सस्यचौरा भविष्यंति १.४०.३५
स स्वेच्छया शिवः साक्षाद्. १.७५.३६
सहंसेन यथान्यायं २.२१.५४
सहःसहस्यौ च तथा १.५५.२३
सहजागंतुकं पाप. १.८६.११६
सहजागंतुकानां च १.८.५९
स हत्वा देवसंभूतं १.६९.८१
स हत्वा सर्वशश्चैव १.४०.५४
सह देवा नमश्चक्रुः १.१०२.६३
सहसैव भयाद्विष्णुं १.९६.७३
सहस्रं वा तदर्धं वा १.२६.३
सहस्रं वा तदर्धं वा २.२२.६६
सहस्रं वा तदर्धं वा २.२८.५८
सहस्रकमलालाभे १.८१.२८
सहस्रकलशाद्यैश्च २.३२.७
सहस्रकलशैस्तत्र २.२८.८८
सहस्रकिरणः श्रीमा. १.५४.६५
सहस्रजित् सुतस्तद्व. १.६८.३
सहस्रनेत्रः प्रथमः सुराणां १.७२.५७
सहस्रनेत्रः सगणो २.५१.१४
सहस्रपादसौ वह्नि. १.५९.२२
सहस्राबाहुः सर्वज्ञः १.८२.९९
सहस्रबाहुः सर्वेशः १.९८.११५
सहस्रमूर्धा देवेंद्रः १.६५.१५५
सहस्रयुगपर्यंतं १.४१.३८
सहस्रशिरसे तुभ्यं १.७२.१३४
सहस्रशीर्षा पुरुषो १.७०.११७
सहस्रशीर्षा विश्वात्मा १.१७.११
सहस्रसूर्यप्रतिमं महांतं १.८०.११
सहस्रहस्तचरणं २.२१.२७
सहस्राक्षो विशालाक्षः १.६५.६१
सहस्रेण ज्वरो याति २.४९.८
सहाग्नि विविशुः सर्वाः १.६९.८९
सहिता वरयामासुः १.७१.१२
सहिरण्यं सबीजं च १.३१.१८
स हि रामभयाद्राजा १.६६.२९
सहे चैव सहस्ये च १.५५.६२
सहैव चारुह्य तदा द्विपं तं १.१०७.२६
सहैव ननृतुश्चान्ये १.७१.१३१
सहैव मरणं तेषां १.५२.२२
स होवाच परं ब्रूहि १.२०.५४
स होवाचैव याज्ञवल्क्यो २.९.५३

सा

सांगान्वेदान् यथान्याय. १.७७.९५
सांबः सनंदी सगणः १.९७.१३
साक्षात् सनत्कुमारेण २.५४.९
साक्षात्समरसेनैव १.८.११२
साक्षात्सर्वं विजानाति १.७०.२१
साक्षादधीतवेदाय २.४०.५
सागरा गिरयो मेघा १.१०३.९
सा गर्भं पालयामास १.६४.४५
सा च दृष्ट्वा महादेवं १.१०२.१०
सा च दृष्ट्वा महादेवी १.६४.८३
सा च देव्या महाभागा १.८४.२८
सा च सार्धं महादेव्या १.८४.३०
सा च सूर्यांशुसंकाशा १.८४.५०
स चैव प्रकृतिः साक्षात् १.६९.५०
सा ज्योतींष्यनुवर्तंती १.५२.५
साट्टहासैर्गणैर्वीरैः १.९६.५
सा तथोक्ता द्विधा भूता १.७०.३२९
सा तमोबहुला यस्मात्. १.७०.२०१
सात्त्वतः सत्यसंपन्नः १.६९.१
सा देवी नियुतं तप्त्वा १.७०.२७०
साधकानींद्रियाणि स्यु. १.७०.४०
साधको ज्ञानसंयुक्तः २.५५.२४
साधयंतो हि कार्याणि २.१.२२
साधर्म्येणावतिष्ठेते १.४.५२
साधर्म्येणावतिष्ठेते १.७०.७२
साधारणं स्मरंत्येनं २.६.५९
साधूनां विनिवृत्तिश्च १.४०.२३
साध्ये चित्तस्य हि गुरौ. १.९.७
सा निशम्य वचनं तदा शुभं १.६४.७०
सान्वयं च गृहीत्वेश १.४४.४४
सा पराशरमहो महामतिं १.६४.५६
सा प्रविष्टा तनुं तस्य १.१०६.१३
सा प्रबुद्धा फलं दृष्ट्वा २.५.१८
सा भवान्यास्तनुं गत्वा १.८४.७०
सामगेयः प्रियकरः १.९८.१२८
सामवेदस्तथाऽथर्वो १.८६.५२
सामशाखा सहस्रं च १.४३.६
सामर्थ्यं च सदा मह्यं १.७२.७५
सामर्थ्यात्परमेशानाः १.४६.१४
सा मातुरुदरस्था वै १.६९.२१
सामानि जगतीच्छद. १.७०.२४५

सामान्यं यजनं सर्व. २.२६.५
सामान्यं सर्वमार्गेषु २.२२.७७
सामान्यदेवः कोदण्डी १.९८.३८
सामान्यानि समस्तानि २.१६.१०
सामुद्रा वै समुद्रेषु १.७०.१२८
सा मेनातनुमाश्रित्य १.१०१.२
साम्नायेथ महाम्नाय १.६५.१४५
साम्यावस्थात्मको बोधः १.४०.७३
साम्ये लयो गुणानां तु १.४.५३
सायुज्यं चैवमाप्नोति १.८४.१४
सायुज्यं ब्रह्मणा याति १.१०.५
सायुधा द्वादशैवैते १.५५.४५
सारंगैः क्वचिदुपशोभितप्रदेशं १.९२.२५
सारं पश्चिमभागे च २.२८.६८
सारस्वतश्च मेघश्च १.२४.३८
सारस्वतस्तथा चित्र० २.१.२७
सारस्वतस्त्रिधामा च १.७.१५
सारस्वती भवेद्देवी १.८५.२०१
सार्धं दिव्यांबरा दिव्या १.१०६.१८
सार्धं प्रदक्षिणं कृत्वा १.९२.१८०
सार्धं ममैव देवेशं १.१०२.५१
सार्धत्रितालविस्तारः २.२८.४१
सार्वभौमो महातेजाः १.६२.३
सार्वभौमो महातेजाः २.५.१७
सावद्यं निरवद्यं च १.८८.११
सावित्री च तथा लक्ष्मी० २.२७.२७४
सा सदास्तु विरूपाक्ष० २.५५.४६
सा सा विश्वेश्वरी देवी २.११.२१
साहंकारमिदं श्रुत्वा १.९६.३६

सि

सिंदूरवर्णाय समंडलाय २.१९.३३
सिंहं मृगाणां वृषभं गवां च १.५८.१३
सिंहनादं महत्कृत्वा १.३०.३५
सिंहनादं महत्कृत्वा १.९७.४२
सिंहशार्दूलरूपाणा. १.६५.७२
सिंहाजिनांबरधर. २.२६.१६
सिंहात्ततो नरो भूत्वा १.९५.६२
सिंहारूढा महादेवी १.८२.१०७
सिंहासनं च परमं १.४४.४१
सिंहासने ह्यनंतादीन् २.४८.४९
सिंहासनैर्मणिमयैः १.५१.१०
सितं च अतलं तच्च १.४५.१३
सितपंकजमध्यस्थं २.१९.२०
सितमृत्पात्रकैश्चैव १.७७.८५
सितरक्तहिरण्याभ० २.२७.२३
सितातपत्रं रत्नांशू १.७२.९२
सितातपत्रं शैलादे० १.७१.१४६
सितैः सहस्रकमलैः १.८१.१२
सितैर्विकसितैः पद्मैः १.७७.८४
सितोदं पश्चिमसरो १.४९.३९
सिद्धक्षेत्रं महापुण्यं १.२४.७८
सिद्धक्षेत्रे महापुण्ये १.२४.८७
सिद्धमंत्रोऽन्यथा नास्ति २.५०.१५
सिद्धविद्याधराहींद्रै० १.७४.२३
सिद्धसंघानुगीताय १.२१.६५
सिद्धांतकारी सिद्धार्थ १.६५.१३३
सिद्धात्मानो मनुष्यास्ते १.७०.१५६
सिद्धियोगापहारी च १.६५.८३
सिद्धिर्माया क्रिया दुर्गा १.१०३.८३
सिद्धैर्देवैश्च पितृभि० १.५२.५०
सिद्धैर्देवैश्च संपूर्णं १.४८.२०
सिद्धैश्च यक्षगंधर्वै० १.८२.२८
सिसृक्षमाणो लोकान्वै १.८५.१२
सिसृक्षया चोद्यमानः १.३.१६

सु

सुंदरश्च प्रचंडेशो २.२७.१२४
सुंदोपसुंदतनयौ २.२७.२७७
सुकुमारं तृतीयं च १.४६.२७
सुकृतानि हरंत्येते १.८५.१५६
सुखं च दुःखमभवद् १.६४.५४
सुखदुःखैरसंस्पृश्यः २.९.४१
सुखमायुः स्वरूपं च १.४६.४७
सुखमायुर्बलं रूपं १.४०.८४
सुखासीनौ ह्यसंभ्रांतौ १.७१.९३
सुगंधस्तस्य लोकेस्मिन् २.५४.२३
सुग्रीवो मर्दकश्चैव १.८२.६०
सुतं विदर्भं सुभगा १.८२.३८
सुतशोको वसिष्ठस्य १.२.२८
सुताराय विशिष्टाय १.१८.१५
सुदर्शनप्रदं देवं १.७६.४८
सुदर्शनेन मुनिना १.२९.४४
सुदासस्तस्य तनयो १.६६.२६
सुदृढं च तुलामध्ये २.२८.३८
सुद्युम्न इति विख्याता १.६५.२०
सुधामां काश्यपश्चैव १.७.४४
सुधृतिस्तनयस्तस्य १.६८.४०
सुनंदो नंदनश्चैव १.११.७
सुनासं पद्महृदयं २.५.१०१
सुनिष्ठेत्यत्र कथिता १.२८.२५
सुनीतिरस्य या माता १.६२.२५
सुनीले रक्षसां वासाः १.५०.९
सुपुष्पितस्य वृक्षस्य २.५४.२१
सुप्त्वा भुक्त्वा च वै विप्राः १.८९.७२
सुप्रजाय सुमेधाय १.२१.४०
सुप्रभः सुप्रभस्यापि १.४६.४१
सुप्रसन्ने महाभागे २.२०.२५
सुप्रीतमनसं देवं १.४१.२८
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं १.४०.३७
सुमंतुर्जैमिनिश्चैव २.४६.८
सुमंतुर्बर्बरी विद्वान् १.७.४७
सुमतिर्दुर्मतिर्मेधा २.२७.१७६
सुमेधसे कुलालाय १.२१.५२
सुयशायाः सुनेत्रायाः १.४८.२९
सुयोगा च वियोगा च २.२७.२०६
सुरचितसुविचित्रकुण्डलाय १.३३.१८
सुरतांतस्तु विप्रेंद्र १.२९.६०
सुरभिः सर्वतोभद्रा १.८२.९०
सुरभिर्जनयामास १.६३.३९
सुरश्रेष्ठस्तदा श्रेष्ठं १.९८.२१
सुराणां संस्थितिर्यस्यां १.६५.२८
सुरुचिस्तं विनिर्धूय १.६२.६
सुरेंद्रबुद्ध्या संपूज्य २.३९.६
सुरेतरादिभिः सदा १.१०५.५
सुरेशः शरणं सर्वः १.९८.१५३
सुरेश्वरमुवाचेदं १.९७.१५
सुवर्चला स्मृता देवी २.१३.१४
सुवर्चसे च वीर्याय १.२१.२७
सुवर्णकृतसोपानान् १.८०.३८
सुवर्णदशनिष्केण २.३५.७
सुवर्णपुष्पं पटहं २.२८.८६

सुवर्णरिताः सर्वज्ञः १.६५.६४
सुवर्णवस्त्रसंयुक्तं १.८४.५१
सुवर्णाश्वं प्रदत्वा तु २.३९.७
सुवर्णेन मुनिश्रेष्ठा० १.४५.१६
सुवाहाय विवाहाय १.१८.२१
सुवृत्तं कल्पयेद् भूमौ २.२२.२४
सुवृत्तं मंडलं दिव्यं १.३१.१३
सुवृत्तं सुतरां शुभ्रं १.८०.२३
सुव्रते सुभ्रु सुभगे १.२९.४७
सुशीला शीलसंपन्ना १.८२.९१
सुशोभमानो वरदः १.७२.२९
सुश्वेताय सुवक्त्राय १.१८.१४
सुषुप्तं हृदयस्थं तु १.८६.६७
सुषुप्तः करणैर्भिन्न० १.८६.७१
सुषुप्तिस्वप्नजाग्रत० २.१६.१७
सुषुम्नो हरिकेशश्च १.६०.२०
सुषेणा इति विख्याता १.४६.९
सुष्वापांभसि यस्तस्मा० १.४.५९
सुसमे भूतले रम्ये २.३०.२
सुहोत्रः कंकणश्चैव १.७.३१
सुहोत्राय हविष्याय १.१८.१७

सू

सूक्ष्मं वदंति ऋषयो १.२८.१८
सूक्ष्मेण महता चाथ १.७०.९
सूक्ष्मो भूत्वा शरीराणि २.१८.१८
सूतकं च न संदेहः २.४५.८६
सूतकं प्रेतकं नास्ति १.८९.८१
सूत सुव्यक्तमखिलं १.४५.१
सूतिकाशौचसंयुक्तः १.८९.७६
सूत्यामेव च पुत्राणां १.६३.८
सूत्राव्याकृतरूपं तं २.१६.१२
सूत्रे तत्त्वत्रयोपेते २.४७.३२
सूत्रे नमः शिवायेति १.२७.६
सूर्यं नित्यमुपस्थाप्य १.८५.१९६
सूर्य एवं त्रिलोकेशो १.६०.८
सूर्यकोटिप्रतीकाशा १.१०३.३४
सूर्यकोटिप्रतीकाशै० १.७६.४
सूर्यकोटिप्रतीकाशै० १.८१.५०
सूर्यमंडलवद् दृष्टवा १.१७.५२
सूर्यमंडलसंकाशे १.६४.९३
सूर्यमंडलसंकाशै० १.७१.२६
सूर्यमंडलसंकाशै० १.७६.२०
सूर्यमाप्याययंत्येते १.५५.६७
सूर्यसोमाग्निसंबंधात् २.२१.९
सूर्याग्निजलदेवानां १.८५.१४९
सूर्याचन्द्रमसोर्दिव्ये १.६.१६
सूर्यात्मकस्य देवस्य २.१२.१७
सूर्ये वह्नौ च सर्वेषां १.२८.२६
सूर्योदये प्रत्युषसि १.९१.२१
सूर्योऽहमिति संचिंत्य २.२२.१८

सृ

सृंजय्यां भजनाच्चैव १.६९.३
सृजते ग्रसते चैव १.७०.१००
सृष्टा बुद्धिर्मया तस्यां १.७०.३०
सृष्ट्यंतरे पुनः प्राप्ते १.७६.२७
सृष्ट्यर्थं संस्थितं वह्नि १.८८.८०
सृष्ट्यर्थेन जगत्पूर्वं १.९६.४१
सृष्ट्वा चतुष्टयं पूर्वं १.७०.२४९
सृष्ट्वा पुनः प्रजाश्चापि १.७०.२१४
सृष्ट्वा सुरांस्ततः सो वै १.७०.२०२
सृष्ट्वा स्थितं हरि वामे १.७६.९

से

सेचयित्वाथ भगवान् १.२९.३२
सेचयेदर्चनस्थानं २.१७.८
सेंद्राः संगम्य देवेश० १.७१.६४
सेंद्रा देवा द्विजश्रेष्ठा १.७१.३८
सेनाजिच्च सुषेणश्च १.५५.५७
सेनास्तंभनकादीनि २.५२.४
सेवंते ब्राह्मणास्तत्र १.४०.१८
सेवमानोथ मध्ये वै २.१.४७
सेवां चक्रे पुरं हंतुं १.७२.६२
सेवावसरमालोक्य १.४०.१७
सेवितं गणगंधर्वैः १.९५.३४
सेवेत सततं धीमान् १.९१.७६
सेव्यासेव्यत्वमेवं च १.३३.२३

सै

सैहीं समानयन्योनिं १.९५.५४
सैषा भगवती देवी १.१६.३३

सो

सोग्निं सृष्ट्वाथ लोकादौ १.५९.९
सोतीव भवभक्तश्च १.४७.२२
सोऽथ नारायणः कृष्णः १.६९.७३
सोपवासं चतुर्दश्यां १.८३.२१
सोपि गोकर्णमाश्रित्य १.६५.९
सोऽपि तस्मै कुमाराय २.५५.४
सोपि तस्य मुखाच्छ्रुत्वा १.१०.२४
सोपि तस्यामरेशस्य १.३८.६
सोपि तारो महातेजा० १.१०१.११
सोपि तुष्टो महादेव १.१०१.३७
सोपि देवः स्वयं ब्रह्मा १.३७.८
सोपि दृष्ट्वा महादेव० १.६४.८९
सोपि नारायणः श्रीमान् १.७१.४०
सोपि पाशुपतो विप्रो २.१८.५६
सोपि याति शिवं स्थानं १.७७.६७
सोपि लब्ध्वा वरं तस्याः १.१०७.६१
सोपि विष्णोस्तथाभूतं १.९५.५
सोऽपि शिष्यः शिवस्याग्रे २.२१.७६
सोपि संचिन्त्य मनसा १.२९.३९
सोपि हृष्टो मुनिवरै० १.१.६
सोभिषिच्याथ ऋषभो १.४७.२१
सोमं सुतं भूमिजमग्निवर्णं २.१९.३८
सोममंगारकं चैव २.२२.५८
सोममंगारकं चैव २.२८.७०
सोममंगारकं देवं २.१९.२३
सोमधृक् सूर्यवाचश्च १.७२.७७
सोमर्क्षग्रहसूर्येषु १.६१.२१
सोमवंशाग्रजो धीमान् १.६५.२५
सोमश्च मंत्रसंयुक्तो १.२३.४०
सोमात्मको बुधैर्देवो २.१३.१५
सोमादिवृंदं च यथा क्रमेण २.१९.३१
सोमो गदां धनेशश्च १.१०२.३४
सोसृजद्वीरभद्रश्च १.१००.४
सोहमेवं जगत्सर्वं १.८६.९५

सौ

सौदामिनीं तथा कन्यां १.६३.३३
सौम्यानां वसुजातानां २.१२.१८
सौम्येन सौम्यं ग्रसति २.१८.१०
सौम्ये सौमम्य विपुला १.५४.३
सौम्यो बुधो धनिष्ठासु १.६१.४६
सौरं संक्षेपतो वक्ष्ये १.५५.१
सौरमग्निमयं स्थानं १.६१.२२
सौरस्तु ब्रह्मणा सृष्टो १.५५.२
सौराणि च प्रवक्ष्यामि २.२२.७

सौराणि च प्रवक्ष्यामि २.२३.१९
सौरोंगिराश्च वक्रश्च १.६१.३९
सौवर्णं पिंडिकं चापि १.१०८.१२
सौवर्णं राजतं सापि १.१०८.१४
सौवर्णं राजतं शैलं १.३१.१५
सौवर्णमभवच्चांड० १.१७.६६
सौवर्णी राजती वापि २.२५.४२

स्क

स्कंद तयोश्च मध्ये तु २.४७.३५
स्कंदमालिंग्य चाघ्राय १.७१.१३०
स्कंदस्य संभवं श्रुत्वा २.५४.११
स्कंदोमासहितं देवं १.७६.३
स्कंदोमासहितं देव० १.७६.२
स्कंधः स्कंधधरो धुर्यः १.९८.१४४
स्कंधे विपंचीमासाद्य २.३.८४

स्त

स्तंभयोस्तु प्रमाणेन २.२८.३०
स्तंभिता देवदेवेन १.१०२.३६
स्तंभिनी घोररक्ताक्षी २.२७.१६७
स्तंभैश्च वैडूर्यमयैः १.४४.२१
स्तनजेन तदा सार्धं १.१०६.२३
स्तनितं चेह वायव्यं १.५४.४५
स्तवेनानेन तुष्टोस्मि १.७२.१६९
स्तुतस्त्वेनं सुरैर्विष्णो० १.७१.११६
स्तुतेस्त्रैलोक्यनाथस्तु १.८२.२९
स्तुत्वा च देवमीशानं १.७९.२१
स्तुवंतं प्राह देवारिः १.९५.६
स्तेयादभ्यधिकः कश्चि० १.९०१२
स्तेयी सुवर्णस्तेयी च १.१५.२८
स्तोष्यामस्त्वां कथं भासि १.९५.२९

स्त्र

स्त्रियः सदा परित्याज्याः १.८.२१
स्त्रियश्चोत्पलवर्णाभा १.५२.१३
स्त्रीणां कुंडानि विप्रेंद्रा २.२८.२१
स्त्रीणां देवीमुमादेवीं १.५८.८
स्त्रीणामपि विशेषेण २.५०.९
स्त्रीधर्मं चाकरोत्स्त्रीणां १.७१.८३
स्त्रीधर्मे निखिले नष्टे १.७१.९५
स्त्रीपुंभावो विरिंचस्य १.२.११
स्त्रीपुंसोः संप्रयोगे हि १.८८.४८
स्त्रीबाधां बालबाधां च २.५०.६
स्त्रीलिंगमखिलं सा वै १.५.३०
स्त्रीवध्यौ दर्पितौ दृष्ट्वा १.९२.८२
स्त्रीशूद्राणां कथं वापि २.१९.४
स्त्रीशूद्राणां द्विजेंद्रैश्च २.२०.३
स्त्रीसंगमे तथा गीते २.३.६०
स्त्रीसंघैर्देवदेवस्य १.८०.३५
स्त्रीसहस्रैः समाकीर्णा १.४८.१२

स्थ

स्थंडिलात्कोटिगुणितं २.२६.२७
स्थंडिलेषु विचित्रेषु १.३१.२३
स्थलपद्मवनांतस्य० १.४९.६४
स्थाणुर्हरश्च दंडेशो २.२७.१०४
स्थाणोस्तत्पुरुषाख्या च २.१४.७
स्थाननाशो भवेत्तस्य २.५०.४५
स्थानपंचकसंस्थाय १.१०४.२३
स्थानाभिमानिनामेतत् १.५५.७७
स्थनाभिमाननो ह्येते १.५५.३८
स्थानार्थं कथितं मात्रा १.१०.४३
स्थाने तव महादेव १.७२.१०६
स्थाने पौत्रं मुनिश्रेष्ठ १.६४.७२
स्थाने संशयितुं विप्र १.३७.१६
स्थापयेदुत्सवं कृत्वा २.४८.२
स्थापयेद्देवगायत्र्या २.४८.२९
स्थापयेद्ब्रह्मलिंगं हि २.४७.३०
स्थापयेन्मध्यदेशे तु २.५०.२८
स्थापितं ब्रह्मणा चापि १.९२.८८
स्थापितं लिंगमेतत्तु १.९२.९३
स्थापिताः पूजिताश्चैव २.४७.६०
स्थाप्यात्मानममुं जीवं २.२१.५९
स्थावराणां पतिश्चैव १.६५.१६७
स्थावरेषु विपर्यासः १.७०.१५८
स्थितस्तत्पुरुषो देवः २.१४.१२
स्थिता स्वल्पावशिष्टासु १.४०.६३
स्थितिकाले तदा पूर्णे १.१७.७
स्थित्यर्थेन च युक्तोसि १.९६.१८
स्थित्वा स्वर्गे चिरं कालं २.४२.६
स्थूलं सूक्ष्मं सुसूक्ष्मं च १.९५.२३
स्थूलता ह्रस्वता वाल्य १.९.३०
स्थूलशीर्षानष्टदंष्ट्रान् १.७०.३०८
स्थूलाद्विर्विश्वतोत्यर्थं १.२०.६४
स्थूला ये हि प्रपश्यंति १.९६.५५
स्थूलैः सूक्ष्मैः सुसूक्ष्मैश्च १.७२.१८२

स्ना

स्नात्वा देवं नमस्कृत्य २.२८.१
स्नात्वार्धमासात्संशुद्धा १.८९.१०२
स्नानं विधानतः सम्यक् १.८.३३
स्नानमंगलहीनाश्च २.६.६३
स्नानमात्रेण वै शुद्धि० १.८९.८२
स्नानयागादिकर्माणि २.२२.१
स्नानयोगादयो वापि २.२०.१२
स्नानयोगेन विधिना २.२७.२७८
स्नानयोगोपचारं च १.२५.५
स्नानात्संवेदनाद्वापि १.९२.४७
स्नाने च संध्ययोश्चैव १.८५.१८७
स्नाने शौचं तथा गानं १.८९.१०४
स्नापयंति महाकुंभै० १.३२.१५
स्नापयामास च विभुः १.९८.१६०
स्नापयित्वा तु शिष्याय १.८५.९३
स्नापयेद्देवदेवेश १.२७.४६
स्नापयेद्विधिना रुद्रं १.२७.३२
स्नाप्य संपूज्य गंधाद्यै० १.९८.२३
स्नाप्यैव सर्वभूपैश्च २.२७.२७९
स्निग्धकंठस्वरास्तत्र २.३.११
स्नुषावाक्यं ततः श्रुत्वा १.६४.१५
स्नुषावाक्यं निशम्यैव १.६४.४३

स्प

स्पृशन्कराभ्यां ब्रह्माणं १.४१.५६
स्पृशेदथर्ववेदानां १.२६.२६
स्पृष्ट्वा प्रेतं त्रिरात्रेण १.८९.८८

स्फ

स्फाटिकं वरुणो राजा १.७४.४
स्फाटिकैर्मंडपैः शुभ्रै० १.८०.२४

स्म

स्मयन्नाह महादेवो १.२४.६
स्मरणादेव रुद्रस्य १.४४.१
स्मरामि बिंबानि यथाक्रमेण २.१९.३६
स्मरामि सव्यमभयं २.१९.३६
स्मृतिश्च तुष्टुवे पत्नी १.५.४५
स्मृतो यद् भवता जीव १.१०१.३४

स्त्र

स्रष्टव्यं वस्तुजातं तु २.११.२६
स्रष्टा भानुर्महातेजा १.५४.६२

स्रष्टुं च भगवांश्चक्रे १.३८.१०
स्रष्टुं तदा मतिं चक्रे १.४.६०
स्रष्ट्रे नमः सर्वसुरासुराणां १.७२.१५९
स्रुक्स्रुवसंस्कारमथो २.२५.७९

स्व

स्वं देवश्चाद्भुतं दिव्यं १.४३.४२
स्वः स्वाहा २.४५.७७
स्वः स्वाहा २.४५.६९
स्वकर्मण परं स्थानं १.६२.१५
स्वच्छंदतः स्वच्छंदांसि १.७०.२३६
स्वदारे विधिवत्कृत्वा १.८.१८
स्वदेशरक्षणं दिव्यं २.४३.२
स्वदेहपिंडं जुहुयाद्यः १.७७.४६
स्वधनं सकलं चैव १.२९.७६
स्वधां चैव पितृभ्यस्तु १.७०.२९२
स्वपतिं चाभिषिच्यैव २.२७.१२
स्वपुत्रं च स्मरन् दुःखात् १.६४.२६
स्वप्ने च विपुलान् भोगान् १.७५.२८
स्वप्ने दृष्टं यत्पदार्थं ह्यलक्षं १.७२.१६५
स्वभावो भासते यत्र २.५५.१६
स्वभृत्यान् ब्राह्मणा ह्येते २.१.३०
स्वमेवं चन्द्रदिग्भागे २.२८.७८
स्वयं ज्योतिरनुज्योति १.९८.९३
स्वयंभुवोपि वृत्तस्य १.७०.१०७
स्वयंभूते तथा देवे १.७७.४५
स्वयंभूर्भगवांस्तत्र १.५०.८
स्वयंवरं तदा देव्या १.१०२.१७
स्वयं वा जुहुयादग्नौ २.२७.२५६
स्वयंवेद्यमवद्यं त० १.८.१०६
स्वयं शक्र इवासीन० २.५.२७
स्वयमाचरते यस्तु २.२०.२०
स्वरकल्पास्तु तत्रस्थाः २.३.९१
स्वराडिति समाख्यातः २.१२.१६
स्वरात्मनः समाख्याता० १.७.२७
स्वरूपमेव भगवा० १.१०७.५०
स्वर्गपाताललोकांता० २.११.३३
स्वर्गापवर्गफलदं १.८८.३१
स्वर्णोदकेन तामाह १.४३.४६
स्वर्भानुं नुदते यस्मात् १.६१.३२
स्वर्लीनेश्वर इत्येव १.९२.७८
स्वल्पषट्सिद्धिसंत्यागात् १.९.१६
स्ववशः सवशः स्वर्गः १.९८.१२३
स्वशाखाध्ययनं विप्रा १.२६.१६
स्वशिष्यैस्त्वं महाप्राज्ञा २.१.५५
स्वसंवेद्ये परे तत्त्वे २.२०.३६
स्वस्ति तेऽस्तु महाप्राज्ञ २.३.७५
स्वस्तिरित्यादिभिश्चादा० २.२८.७६
स्वस्त्यस्तु ते गमिष्यामि १.२२.१५
स्वस्त्यात्रेया इति ख्याता १.६३.७५
स्वस्थौ भवंतो तिष्ठेतां २.५.११२
स्वागतं स्वागतं वत्स १.१७.१८
स्वातेः पथ इवाभाति १.२१.७३
स्वात्मानमपि देवाय १.१०३.४९
स्वदूदकेनोदधिना १.५३.२७
स्वाध्यायनिरतः पश्चा० १.४७.१३
स्वाध्यायस्तु जपः प्रोक्तः १.८.३९
स्वाध्यायेन च योगेन १.३५.२४
स्वान्प्राणाननपेक्षंतो १.४०.६६
स्वायंभुवः प्रसूतिं च १.७०.२७७
स्वायंभुव शृणु व्यूहं २.२७.१९५
स्वायंभुवसुतायां तु १.७०.२८२
स्वायंभुवात्तु वै राज्ञी १.५.१६
स्वायंभुवेंतरे पूर्वे: १.६३.४६
स्वायंभुवे तदर्धं स्यात् १.७७.३५
स्वाहांतं पुरुषेणेह २.२७.२४६
स्वाहांतं प्रणवेनैव २.२८.५५
स्वाहाकारैः पृथग् हुत्वा १.८८.८४
स्वाहाकारो वषट्कारो २.६.२५
स्वाहा स्वधा मतिर्बुद्धि० १.१०३.६
स्वाहा स्वधा महाविद्या १.७०.३३०
स्विष्टांतं सर्वकर्माणि २.२८.५६
स्वेच्छया ह्यवतीर्णोपि १.१०८.३
स्वेच्छयैव नरो भूत्वा १.३५.११
स्वेषु स्वेषु च पक्षेषु २.४६.१६
स्वैः स्वैर्भावैः स्वनाम्ना च २.२२.६१
स्वोदरं दुःखिता भूमौ १.६४.२९
स्वोपभोग्यानि कन्यायां १.६९.८२

ह

हंत ते कथयिष्यामि २.११.२
हंत ते कथयिष्यामि २.१२.२
हंतीति श्रूयते लोके २.५.३
हंतुं चराचरं सर्वं १.९७.२१
हंस हंसेति यो ब्रूयात् १.१७.३९
हंसाख्यं च ततो ब्रह्म १.८६.१३७
हंसानां पक्षवातप्रचलित-कमल० १.९२.२४
हकार आत्मरूपं वै १.१७.८१
हतानां च तदा तेषां १.१००.४४
हत्वा दग्ध्वा च भूतानि १.७१.४७
हत्वा भित्त्वा च भूतानि १.७३.२६
हत्वा भित्त्वा च भूतानि २.५४.३५
हत्वा हत्वा तु संप्रप्तान् १.५४.२४
हन्यते तात कः केन १.६४.१०
हयशीर्षा पयो धाता १.२१.७९
हयाननानां मुख्यानां १.५०.४
हरं यजंति सर्वेशं १.५२.३६
हरयश्चाप्यसंख्याता० १.४.५५
हरव्यूहः समाख्यातो २.२७.१५२
हरश्च बहुरूपश्च १.६३.२१
हरहारलतामध्ये १.९६.४७
हरिकेशाय देवाय १.९५.४३
हरितो लोहितस्याथ १.६६.१२
हरिमित्रं समाहूय २.३.४२
हरिमित्रो कृतं पापं २.३.४०
हरिमित्रो विमानेन २.३.४८
हरिवक्त्राय विद्महे २.४८.११
हरिश्च हरिणाक्षश्च १.६५.५६
हरिस्तद्दर्शनादेव १.९६.७०
हरेः पितामहस्याथ १.२.५३
हरेः सर्वमितीत्येवं २.४.११
हरेरग्रे महाभागा २.५.१५
हरेरन्यमपींद्रं वा २.१.२६
हरेस्तदर्धं विस्तीर्णं १.४८.२३
हर्तारः परवित्तानां १.४०.३२
हर्म्यप्रासादसंबाधं १.८०.१५
हर्यश्वात्तु दृषद्वत्या १.६५.४५
हलाहलस्य दैत्यस्य १.२.५१
हलैश्च फालैर्मुसलैर्भुशुंडै० १.७२.७२
हविर्जुहोमि वह्नौ तु १.१०३.५६
हविषाकृष्णवर्त्मेव १.६७.१७
हव्यं वहति देवानां २.१०.२५
हसंतं मा समालोक्य २.५.१०२
हस्तं देवस्य देव्याश्च १.१०४.५९

हस्तमात्रं भवेत्कुंडं २.२५.४
हस्तविक्षेपभावेन २.३.६२
हस्तश्चित्रा तथा स्वाती १.८२.७९
हस्ताभ्यां क्रियमाणस्तु १.८८.५०
हस्ताभ्यां नासिकं पात्र. १.८९.६९
हस्ताभ्यां नासिकं पात्र० २.२५.१८
हस्तिनां चरितं चैव १.४३.७
हस्ते खड्गं खेटकं पाशमेक २.२६.१९

हा

हा पुत्र पुत्र पुत्रेति १.६४.५
हा पुत्र पुत्र पुत्रेति १.६४.२५
हारकुंडलकेयूर० १.१०३.३३
हा रुद्र रुद्र रुद्रेति १.६४.८१
हा वसिष्ठ सुत कुत्रचिद्गतः १.६४.५७
हाहाहूहूर्मुनिश्रेष्ठा १.५५.३०
हाहाहूहूश्च गंधर्वौ २.३.८७

हि

हिंसया ते प्रवर्तते १.८५.११७
हिंसा सदा गृहस्थानां १.७८.६
हिताय चाश्रमाणां च १.१०२.२
हिताय सर्वजन्तूनां १.५४.३४
हिताय सर्वदेवानां १.८०.३
हित्वा पुत्रांश्च दारांश्च १.४०.६८
हिमघ्नाय च तीक्ष्णाय १.२१.६०
हिमप्रायस्तु हिमवान् १.४९.१८
हिमवंतं गिरीणां तु १.५८.९
हिमवच्छिखरे रम्ये १.२४.४९
हिमवच्छिखरे रम्ये १.२४.९२
हिमवत्पर्वतं प्राप्य १.१०७.२०
हिमवान् यक्षमुख्यानां १.५२.४८
हिमशैले कृते भक्त्या १.७७.१८
हिमोद्वहाश्च ता नाड्यो १.५९.२६
हिरण्मयस्य गर्भोऽभू० १.७०.१०६
हिरण्मया इवात्यर्थ. १.५२.१५
हिरण्मयात् परं चापि १.४९.१०
हिरण्यकशिपुं हत्वा १.९५.५३
हिरण्यकशिपोः पुत्रः १.९५.२
हिरण्यकशिपोर्भ्राता १.९४.३
हिरण्यगर्भ तं देवो १.९९.१०
हिरण्यगर्भ पुरुषं २.१६.६
हिरण्यगर्भं रुद्रोसौ १.२८.१०
हिरण्यगर्भ इत्येव १.९२.७६
हिरण्यगर्भः कर्तास्य २.१६.७
हिरण्यगर्भसर्गश्च १.५३.४७
हिरण्यगर्भे चंद्रेशे १.१.४
हिरण्यगर्भे नंदीशे १.७७.४३
हिरण्यगर्भो भगवां २.१.४२
हिरण्यगर्भो रजसा १.१७.१२
हिरण्यगर्भो हरिणः १.९८.१३७
हिरण्यनाभः कौशल्यो १.२४.९३
हिरण्यनेत्रतनयं १.९३.२१
हिरण्यबाहवे तुभ्यं २.६.२२
हिरण्यबाहवे साक्षा० १.९५.३८
हिरण्यबाहुर्भगवान् २.१८.३१
हिरण्यबाहुश्च तथा १.६५.१३८
हिरण्यरेतसे चैव १.१०४.१२
हिरण्यरेतास्तरणि० १.९८.५२
हिरण्यवर्णो ज्योतिष्मान १.९८.९९
हिरण्यवृषदानं च २.४१.१
हिरण्याक्षी सुवर्णाक्षी २.२७.१९६
हिरण्याय महेशाय १.९५.४५
हिरण्याश्वप्रदानं च २.३९.१

हु

हुंकारः प्रणवश्चैव १.१०३.१०
हुतशेषं च विप्रेंद्रान् १.८३.४१
हुताशनसहायश्च १.६५.८०
हुत्वाघोरेण देवेशं १.१५.२५
हुत्वा च तावत्पालाशै० १.८५.१९८
हुत्वा चाष्टसहस्रं तु १.८५.२०२
हुत्वा तिलाद्यैर्विधैस्तथाग्नौ २.१९.३५
हुत्वा त्रियंबकेनैव १.४३.१४
हुत्वा दशसहस्रं तु १.८५.१९३
हुत्वा पंचाहुतीः सम्यक् १.८८.८१

हृ

हृत्पुंडरीकमध्यस्थं २.५.२३
हृतपुंडरीकसुषिरे १.७०.१०४
हृदयं तद्विजानीया० २.२३.६
हृदयस्यास्य मध्ये तु १.८६.६३
हृदयांतर्वहिर्वापि १.८५.२२८
हृदये गुह्यके चैव १.८५.७२
हृदये मे सदा गावो २.३८.८
हृदिस्थं चिंतयेदग्नि० २.२५.१०७
हृदिस्था देवताः सर्वा २.१८.११
हृष्टपुष्टास्तया सिद्ध्या १.३९.२९

हे

हेतुरस्याथ जगतः १.२०.७०
हेमंते ताम्रवर्णश्च १.५९.४०
हेमंते शिशिरे चैव १.५९.३१
हेमकूटं च तद्वर्षं १.४७.७
हेमकूटे तु गंधर्वा १.५२.४५
हेमताम्रादिभिश्चैव १.८४.६७
हेमतोरणकुंभैश्च २.२७.२६४
हेमप्राकारसंयुक्तं १.५१.९
हेमरत्नचिते दिव्ये १.३७.२६
हेमरत्नमयं वापि २.४७.७
हेमलिंगाय हेमाय १.१८.६
हेमसोपानसंयुक्तै० १.४८.१३
हेमांगुलीयकं दत्त्वा २.३७.७

है

हैमं च राजतं दिव्यं १.७१.३
हैमं च राजतं धेनुं २.४५.८१
हैमंतिके महादेवं १.८१.२६
हैममद्भिः शुभं पात्रं १.८९.५९
हैममेवं शुभं कुर्यात् २.२९.३
हैमीकृतो महेशस्य १.४८.४
हैमेन चित्ररत्नेन २.२७.४७
हैमो हेमकरो यज्ञः १.६५.८८
हैरण्मया महाभागा १.५२.१७
हैरण्ये राजते चैवं १.७१.२२
हैहयश्च हयश्चैव १.६८.४

हो

होतारं लिंगसूक्तं च १.६४.७८
होतारेणाथ शिरसा १.२७.४२
होमयेदंगमंत्रेण २.२१.५०
होमश्च पूर्ववत्सर्वो २.२६.२२

ह्र

ह्रस्वदीर्घप्लुतादीनां १.९.१९
ह्रस्वा तु प्रथमा मात्रा १.९१.५८


**श्रीलिङ्गमहापुराणम् श्लोकानुक्रमणी समाप्तम्।**

# विषयानुक्रमणिका

## ( श्रीलिङ्गमहापुराण में वर्णित विषयों की अनुक्रमणिका पृष्ठ संख्या निर्देश सहित )


**अ**

अंधक कथानक ५३०
अखण्ड ब्रह्माण्ड ९
**अग्नि**
—कार्य ७३६
—भेद २५२
**अघोर**
—अर्चन ७४६
—आराधना ८२०
—उत्पत्ति ५७
—जप ८२०
—पूजा ७४६
—प्रतिष्ठा ८१८
—मन्त्र ८२०
—होम ८२०
**अघोरेशमाहात्म्य** ५९
**अणिमादि** ४८४
**अभिषेक विधि** ७४९
**अम्बरीषचरित** ६३५
**अरिष्ट कथन** ५०६
**अलक्ष्मी का कथानक** ६४८
**अष्टलोकपाल दान** ७९८
**अष्टसिद्धि** ४०
**अष्टांग योग** ३०
**अष्टाक्षर मंत्र** ६५९

**आ**

आचमन विधि ११४
आवास
—शिव के २१९
—शक्रादि २१७

**इ**

इन्द्र वाक्य १८३
इलावर्त २१२

**ई**

ईशान माहात्म्य ६२

**उ**

उमापति माहात्मय ६६७
**उत्पत्ति**
—अघोर ५७
—अघोरेश ५७
—ईशान ६२
—कल्कि १७५
—कृष्ण ३१३
—गंगा २२२
—नन्दिकेश्वर १८९
—पराशर २७५
—पार्वती ५८१
—ब्रह्मा ८८
—रुद्र ९६,१०३
—वराह ५३३
—विनायक ५९७,६००
—शिलाद १८९
—शिवलिंग ६६
—शिवा ५७५
—सद्योजात ९९
**उपमन्युचरित** ६०६
**उमा तपस्या** ५८५
**उमा महेश्वर व्रत** ४४२
**उमा स्वयंवर** ५८५

**ऋ**

**ऋषि वाक्य** १४७

**ऐ**

ऐतरेय कथा ६५६

**क**

कन्यादान ७९४
कल्प ९९
काम दाह ५८१
कालमान ९,१३
**कृष्ण**
—उत्पत्ति ३१३
—दीक्षा ६१२
—पाशुपत व्रत ज्ञान ६१२
**कैलास वैभव** ४१६
**कौशिक वृत्त** ६१५
**क्षुप**
—पराजय १५३
—विवाद १५६

**ग**

**गणेश**
—उत्पत्ति ५९७,६००
—वर प्राप्ति ६००
**गणेशेश दान** ७८६
**गान काल** ६२२
—उपदेश ६२३
**गायत्री**
—उपाख्यान ५५
—प्रकार ८१४
—मंत्र ८१४
—महिमा ६२,९९

गोसहस्त्र दान ७९२
ग्रह-ऋक्ष
—गति २४७
—संचार २४७
—संख्या २५९
—स्थान २५९
—स्थिति २५९

च

चक्र सुदर्शन ५६०,५५५
चतुर्युग
—धर्म १६९
—परिमाण १७५
—लोकवृत्ति १६९,१७५

ज

जम्बू द्वीप ४७
जय अभिषेक ७४९
जलंधर वध ५५५
जीवत्श्राद्ध विधि ८०१
ज्योतिष्चक्र २३२

त

तत्पुरुषमाहात्म्य ५५
तत्त्वों का समर्पण ७१७
तिलधेनुदान ७९०
तिल पर्वत दान ७८१
तुला पुरुष दान ७७०
त्रिअंबक
—ध्यान के प्रकार ८३०
—महामन्त्र विधि ८३१
त्रिपुरदाह ३५१
दक्ष
—यज्ञ विध्वंस ५७७
दान
—आठ लोकपाल ७९८
—कन्या ७९४
—कल्प पादप ७८५
—गज ७९७
—गणेशेश ७८६
—तिलधेनु ७९०
—तिल पर्वत ७८१
—तुला पुरुष ७७०
—लक्ष्मी ७८९
—विष्णु ८००
—सहस्त्रधेनु ७९२
—सुवर्ण धेनु ७८७
—सुवर्णमेदिनी ७८४
—स्वर्ण वृषभ ७९५
—स्वर्ण अश्व ७९३
—सूक्ष्म पर्वत ७८३
—हिरण्यगर्भ ७७९
दारुक ६०३
दारुवन कथा १३०
दीक्षा विधि ७१०
देवताओं की स्थापना ८१४
देव निवास २१७
देव वसिष्ठांत सृष्टि वर्णन २६८
देव स्तुति ५९७
देवी संभव ५७५
देवों के निवास २१७
द्वादशाक्षर मंत्र ६५६
द्वीप द्वीपेश्वर २०३

ध

ध्यान यज्ञ ४६८
ध्रुव
—कथा २३२
—संक्रमण २३२
—संस्थान २६४
—स्थानप्राप्ति २६४

न

नरक वर्णन २२७
नन्दिकेश्वर
—अभिषेक १९७
—उत्पत्ति १८९
—वाक्य ३५९
नारद
—गान विद्या प्राप्ति ६२२
—मोह ६३५
नारसिंह ५३७
निवास/आवास
—देवों का २१७
नृसिंह
—दमन ५३७

प

पंचब्रह्म कथन ६८२
पंच यज्ञ विधान ११७
पंचाक्षर मन्त्र ४४८
पर्वत २०९
पर्वत मुनि ३५९
—मोह भंग ६३५
पशु मोचन संस्कार ४२२
पाताल वर्णन २०१
पार्वती तपस्या ५८५
पार्वती विवाह ५९०
पाशुपत व्रत ४२६,६९५
—माहात्म्य ६१२
—संस्कार ६६२
पाशविमोचन व्रत ४२२
प्रायश्चित्त
—यतियों का ९०

प्रार्थना
—शुद्धि के लिये ४२७
—व्यमोहन स्तव ४२७
प्लक्ष द्वीप २२७

ब

ब्रह्म प्रबोधन ८०
ब्रह्मा विष्णु महेश मूर्त्तिदान ८००
ब्रह्मस्तव ( पुरदाह ) ३६७
ब्रह्मा
—उत्पत्ति ८८
—वर प्रदान १६३
—विष्णु स्तुति ८८

भ

—भक्ति भाव कथन ४६,४०१
भस्म स्नान १५०
भरतवर्ष वर्णन २०७
भूलोकादि २२७

म

मन्त्र
—अष्टाक्षर ६५९
—द्वादशाक्षर ६५६
—पंचाक्षर ४४८
मदन दाह ५८१
मनु
—मन्वन्तर १७५
माया शमन ४८१
माहात्म्य
—अघोर ५७
—अघोरेश ५९
—अष्टाक्षर ६५९
—अहिंसा ४०९
—ईशान ६२
—उमापति ६६७
माहात्म्य
—तत्पुरुष ५५
—द्वादशाक्षर ६५६
—ध्यान यज्ञ ४६८
—पंचाक्षर ४४८
—पाशुपत व्रत ४१६,६१२
—प्रणव ५०६
—लिंग पूजा १२१,१२६
—वस्त्रपूत जल ४०९
—वामदेव ५३
—वाराणसी ५१३
—विष्णु ६२२
—वैष्णव ६३२
—शक्ति ५९०
—शिव २२७,६८५
—श्रीशैल ५१३
—सद्योजात ५१
—सूर्य २५६
मुनिमोहशमन ४८१
मृत्युंजय अनुष्ठान ८२१
मृत्युंजय जप विधि ८२९
मृत्यु पर विजय १२६
मेघ वृष्टि भेद २३२
मेरु पर्वत २०९

य

यति प्रायश्चित्त ५०३
ययाति कथा २९९
ययाति चरित ३०६
युगधर्म १६९
युग परिणाम १७५
योग
—विघ्न ४०
—स्वरूप ४०
योगाचार्य २५
योगी प्रशंसा १५०

र

रुद्र
—उत्पत्ति ९६
—सहस्रनाम २८६
रैवतक ६२३

ल

लक्ष्मीदान ७८९
लिंग ३८४,४२
—अर्चन विधि १२१
—उद्भव ६६
—पूजा १२१,१२६
—भेद ३८७
—श्रेष्ठता ८०७
—स्थापन ८०७,८०९
वंश ३८७
—आग्नीध्र २०३
—ज्यायमघ ३०९
—भरत २०७
—यदु ३१३
—सात्वत ३०९
—सूर्य २९९
—सोम २९९,३१३

व

वज्र वाहनिका विद्या ८२५
—विनियोग ८२७
—वज्रेश्वरी विद्या ८२५
वरदान
—उपमन्यु ६०६
—गणेश ६००
—जलन्धर ५५५
—पुलस्त्य २७५

—ब्रह्मा ९६,१६३
**वरदान**
—विद्युन्माली ३५१
—विष्णु ९९
—शिलाद १८९
**वराह अवतार** ५३३
**वसिष्ठ कथा** ६४
**वामदेव माहात्म्य** ५३
**वासिष्ठ कथन** २७५
**विनायक**
—उत्पत्ति ६००
**विवाह**
—नन्दिकेश्वर १९७
—पार्वती ५९०
—शिव ५९०
**विश्व का भूगोल** २२२-२३७
**विष्णु**
—अष्टाक्षर मन्त्र ६५९
—आराधना १५६
—द्वादशाक्षर मन्त्र ६५६
—प्रबोधन ७८
—भक्त वर्णन ६३३
—माहात्म्य ६२२
—स्तोत्र १५६
**वीरभद्र** ६४३
**वैष्णव कथन** १६२
—गीत कथन ६२३
—भक्त ६३३
**व्यपोहनस्तव** ४२७
**व्यास** २५
**व्रत**
—उमा महेश्वर ४४२
—नक्त (रात्रि) द्वादश मास ४२२
**शरभ प्रादुर्भाव** ५४३
**शिव** २५
—अग्निहोत्र ७३६
—अद्वैत आराधना, पूजा ३९०
—अर्चनाविधि १२६,४१२
—का ब्रह्माण्ड रूप ३९४,५१३ ६७९,१२६,३९८,७००
—की पूजा विधि ७००,७२५,७२९
—की महत्ता ६९१
—की अष्टमूर्ति का वर्णन ६७५
—की महिमा ६७९
—की विभूतियाँ ६७१
—के अवतार १०३
—के क्षेत्र ४००
—के ध्यान विधि ८३३
—के मन्दिर ४००
—के रूप ६८८
—के पूजा के साधन ७०५
—ताण्डव ६०३
—त्रियंबक मंत्र से पूजा ८३०
—द्वारा दर्शन उपमन्यु को ६०६
—पशुपाश विमोचन ६६३
—प्रतिष्ठापन ३९४
—प्रार्थना १४५
—बन्धन मुक्त ६६७
—भक्ति महिमा ३९४
—मूर्त्ति प्रतिष्ठा ३९४
—लिंग भेद ३८७
—व्रत ४३६
—रात्रि ४३६
—सहस्त्रनाम (रुद्र) २८६
—सहस्त्रनाम ५६०
**शिव स्तुति**
—नृसिंह कृत ५३७
—ब्रह्मा कृत ३७७
—ब्रह्मा विष्णु कृत ८८
—मुनिगण कृत १४१,१४५
—विष्णु कृत ७४
—शिलाद कृत १८९
**शिवालय**
—उपलेपन ४००
—निर्माण ४००
—पूजा ४०९
**श्रीकृष्ण**
—जीवन ३१३
—वंश ३१३
**श्रीमती की कथा** ६३५
**श्रीशैल माहात्म्य** ५१३
**स**
संध्या आदि नित्य कर्म ११७
संसार विष कथन ४६८
सदाचार कथन ४९२
सद्योजात माहात्म्य ५१
सप्तद्वीप वर्णन २०३
नाग मास, मुनि आदि २३८
सिद्ध पद ४८९
सुखावह ३०६
सुवर्णधेनु दान ७८७
सुवर्णमेदिनी दान ७८४
**सूर्य**
—अभिषेक २५०
—किरण स्वरूप २५२
—गति २३२
—मंडल २५६
—माहात्म्य २५६

**सूर्य**
—स्वभाव २५६
**सूर्य ग्रहादिवर्णन** २५६
**सूर्य रथ** २३८
**सृष्टि**
—प्रजा की १८
—ऋषि देवादि १८
—देवों की पितृ की २६८
—प्रारम्भिक ब्रह्मादि ९
—प्राकृत ९,१३
**सृष्टि**
—विस्तार ३२०
**सोम ( चन्द्र )**
—क्षय-वृद्धि २४५
—स्पन्दन २४५
—वर्णन २४५
**सोमवंश** ३१३
**स्नान की क्रिया** ११७
**स्नान विधि** ११४
**स्तुति**
—विष्णु ७४
—ब्रह्मा ३६७
—ब्रह्मा विष्णु ८८
—सहस्रनाम २८६,५६०

ह

हिरण्यकशिपु ५३७
हिरण्यअश्वदान ७९३
हिरण्यगर्भदान ७७९